१ ओं सतिगुर प्रसादि ।।

स्री

दसम ग्रंथ साहिब

(चौथी सेंची)

[हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण]

अनुवाद—

डॉ० जोधसिंह

एम० ए०, पीएच्० डी०, साहित्य रत्न

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

मौसमबाग (सीतापुर रोड), लखनऊ-२२६ ०२०

एकाक्षरी नाम। उच्चारण-संस्थान के अनुसार अक्षरों का कवर्ग, चवर्ग आदि में वर्गीकरण। फिर प्रत्येक वर्ग के अक्षरों का क्रम से एक ही संस्थान में थोड़ा-थोड़ा ऊपर उठते हुए अनुनासिक तक पहुँचना, आदि-आदि ऐसे अनेक गुण हैं जो अभारतीय लिपियों में एकत्र, एकसाथ नहीं मिलते। किन्तु ये गुण समान रूप से सभी भारतीय लिपियों में मौजूद हैं, अतः वे सब नागरी के समान ही विश्व की अन्य लिपियों की अपेक्षा 'सर्वाधिक वैज्ञानिक' हैं। सब ब्राह्मी लिपि से उद्भूत हैं। ताड़पत्र और भोजपत्र की लिखाई तथा देश-काल-पात्र के अन्य प्रभावों के कारण विभिन्न भारतीय लिपियों के अक्षरों के रूप में यत्र-तत्र परिवर्तन, हिन्दी वाली 'नागरी लिपि' को कोई श्रेष्ठता प्रदान नहीं करता। भारत की मौलिक सब लिपियाँ 'नागरी लिपि' के समान ही श्रेष्ठ हैं।

नागरी लिपि को 'भी' अपनाना श्रेयस्कर क्यों ?

"नागरी लिपि" की केवल एक विशेषता है कि वह कमोबेश सारे देश मे प्रविष्ट है, जबकि अन्य भारतीय लिपियाँ निजी क्षेत्रों तक सीमित है। वहीं यह भी सत्य है कि नागरी लिपि में प्रस्तुत और विशेष रूप से खड़ी बोली का साहित्य, अन्य लिपियों में प्रस्तुत ज्ञानराशि की अपेक्षा कम और नवीनतर है। अतः समस्त भाषाओं की ज्ञानराशि को, सर्वाधिक फैली लिपि "नागरी" मे अधिक से अधिक लिप्यन्तरित करके, क्षेत्रीय स्तर से उठाकर सबको सारे राष्ट्र में, यहाँ तक कि विश्व में ले आना परम धर्म है। विश्व की सब भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान (सत्साहित्य) तो है आत्मा, और 'नागरी लिपि' होना चाहिए उसका पर्यटक शरीर।

अन्य लिपियों को बनाये रखना भी कर्तव्य है।

वस्तुतः यह परम धर्म है कि समस्त सदाचार साहित्य को नागरी मे तत्परता से प्राचुर्य में लिप्यन्तरित करना। किन्तु साथ ही यह भी परम धर्म है कि देशी-विदेशी अन्य सभी लिपियों को उत्तरोत्तर उन्नति के साथ बरक़रार रखना। यह इसलिए कि सबका सब कभी लिप्यन्तरित नहीं हो सकता। अतः अन्य लिपियों के नष्ट होने और नागरी लिपि मात्र के ही रह जाने से विश्व की समस्त अ-लिप्यन्तरित ज्ञानराशि उसी प्रकार लुप्त-सुप्त होकर रह जायगी जैसे पाली, प्राकृत और अपभ्रंश, सुरयानी आदि का वाङ्मय रह गया। जगत् तो दूर, राष्ट्र का ही प्राचीन आप्तज्ञान विलुप्त हो जायगा।

नागरी लिपि वालों पर उत्तरदायित्व विशेष !

इन दोनों परम धर्मों की पूर्ति का सर्वाधिक भार नागरी लिपि वालों पर है, इसलिए कि उनको 'सम्पर्क लिपि' का श्रेष्ठ आसन प्रदत्त है। मैं कह सकता हूँ कि उन्होंने अपने कर्तव्य का, जैसा चाहिए था, वैसा निर्वाह नहीं किया। परन्तु उसकी प्रतिक्रिया में अन्य लिपि वालों को भी ' के बदले में अपराध" नहीं करना चाहिए। कोयला' बिहार का है

अथवा सिंहभूमि का है, इसलिए हम उसको नहीं लेंगे, तो वह हमारे ही लिए घातक होगा। कोयले की क्षति नहीं होगी। अपनी लिपियों को समुन्नत रखिए, किन्तु नागरी लिपि को 'भी' अवश्य अपनाइए।

उपर्युक्त परिवेश में नागरी लिपि का पठन और समग्र श्रेष्ठ साहित्य का नागरी में लिप्यन्तरण तो आवश्यक है ही, किन्तु अन्य लिपियाँ भी अपनी लिपि में दूसरी भाषाओं के सत्साहित्य को लिप्यन्तरित तथा अनूदित कर सकती हैं। 'अधिकस्य अधिकं फलम्।' ज्ञान की सीमा नहीं निर्धारित है। 'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने भी अवधी के रामचरितमानस को ओड़िआ भाषा में गद्य एवं पद्य अनुवाद-सहित, ओड़िआ लिपि में लिप्यन्तरित किया है। परन्तु सम्पर्क और एकीकरण की दृष्टि से 'नागरी लिपि' अनिवार्य है।

नागरी लिपि की वैज्ञानिकता मानव मात्र की सम्पत्ति है।

अब एक क़दम आगे बढ़िए। भारतीय लिपियों की सर्वाधिक वैज्ञानिकता, युगों की मानव-श्रृंखला के मस्तिष्क की उपज है। क्या मालूम इस अनादि से चल रहे जगत् में कब, क्या, किसने उत्पन्न किया? भारत संयोग से इस समय इस विज्ञान का कस्टोडियन् है, स्रष्टा नहीं। भारत भी न जाने कब, कहाँ तक और कितना था? अतः हम भारतीयों को नागरी लिपि के स्वामित्व का गर्व नहीं होना चाहिए। वह आज के मानव के पूर्वजों की देन है, सबकी सम्पत्ति है, सकल विश्व उसका समान गौरव से उपयोग कर सकता है। हमारा 'अहम्' उस लिपि की उपयोगिता को रुद्ध कर देगा, जिसके हम सँजोये रखनेवाले मात्र हैं। किन्तु विदेशों में बसने वाले बन्धुओं को भी नागरी लिपि के गुणों को अपने ही पूर्वजों की उपज मान कर परखना चाहिए। ये गुण इस निबन्ध के प्रथम अनुबन्ध में अधिकांशतः वर्णित हैं। न परखने पर उनकी क्षति है, विश्व की क्षति है। अरब का पेट्रोल हम नहीं लेंगे, तो क्षति किसकी होगी? पेट्रोल की नहीं, अपनी ही।

फिर याद दिला देना जरूरी है कि क, प आदि रूपों में वैज्ञानिकता नहीं है। बे, क़ाफ़, पे और के, पी, जैसे ही रूप रख सकते हैं, किन्तु लिपि में 'अनुबन्ध प्रथम' में ऊपर दिये हुए गुणों और क्रम को अवश्य ग्रहण करें। और यदि एक बनी-बनाई चीज को ग्रहण करके सार्वभौम सम्पर्क में समानता और सरलता के समर्थक हों, तो 'नागरी लिपि' के क्रम को अपनी पैतृक सम्पत्ति मानकर, ग़ैर न समझकर, मौजूदा रूप में भी ग्रहण कर सकते हैं। वह भारत की बपौती नहीं है। आज के मानव के पूर्वजों की वह सृष्टि है। इससे विश्व के मानव को परस्पर समझने का मार्ग प्रशस्त होगा।

नागरी लिपि में अनुपलब्ध विशिष्ट स्वर-व्यञ्जनों का समावेश।

हर शुभ काम में कमी निकालनेवाले एक दूर की कौड़ी यह भी लाते हैं कि 'नागरी लिपि सर्वाधिक वैज्ञानिक होते हुए भी अपूर्ण है और अनेक स्वर-व्यञ्जनों को अपने में नहीं रखती उनको लिपि में कहाँ तक और कैसे समाविष्ट

किया जाय ? यह मात्र तिल का ताड़ है। मौजूदा कर्तव्य को टालना है।

अलबत्ता अन्य भाषाओ मे कुछ व्यंजन ऐसे हैं जो नागरी मे नहीं है— किन्तु अधिक नही। भारतीय भाषा उर्दू की क़ ख़ ग़ ज़ फ़, ये पांच ध्वनियां तो बहुत समय से नागरी लिपि में प्रयुक्त हो रही हैं। दुःख है कि आज़ादी के बाद से राष्ट्रभाषा के पक्षधर ही उनको ग़ायब करने पर लगे हैं। इसी प्रकार मराठी ळ है। इनके अतिरिक्त अ़रबी, इब्रानी आदि के कुछ व्यञ्जन हैं, किन्तु उनको नागरी की दैनिक लिपि में अनिवार्यतः रखना आवश्यक नहीं। विशिष्ट भाषाई कार्यों में, ज़रूरी मानकर, उन विशिष्ट भाषाई स्वर-व्यंजनों को चिह्न देकर दरसाया जा सकता है।

तदर्थ अ़रबी लिपि का आदर्श सम्मुख।

और यह कोई नयी बात नहीं। नितान्त अपरिवर्तनशील कहे जाने वालों की लिपि 'अ़रबी' में केवल २७-२८ अक्षर होते हैं। भाषा के मामले मे वे भी अति उदार रहे। "ख़िल्म चीन (अर्थात् दूर से दूर) से भी लाओ"— यह पैग़म्बर(स०)का कथन है। जब ईरान में, फ़ारसी की नई ध्वनियों च, प, ग, आदि से सामना पड़ा तो उन्होंने उनको अ़रबी-पोशाक— चे, पे, गाफ़ पहना दी। जब हिन्दोस्तान आये तो ट, ड, ड़ आदि से सामना पड़ने पर अ़रबी ही जामे में टे, डाल, ड़े आदि तैयार कर लिये। यहाँ तक कि सिन्धी में नागरी के सब महाप्राण और अनुनासिक, तथा सिन्धी के विशिष्ट अन्तःस्फुट अक्षरों को भी अ़रबी का लिबास पहना दिया गया। फिर 'नागरी' वाले तो औदार्य का दावा करते हैं, उनको परेशानी क्या है? और नागरी में भी तो परिवर्तन होते रहे हैं। ऋग्वेद के प्रथम मंत्र में प्रयुक्त ळ को छोड़ चुके हैं, और ड़, ढ़ आदि को अवर्गीय दशा में जोड़ चुके है। नागरी लिपि में कुछ ही व्यंजनों का अभाव है। उनमें से कुछ को स्थायी तौर पर और कुछ को अस्थायी प्रयोग के लिए गढ़ सकते हैं। 'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने यह सेवा बड़ी सरलता, सफलता और सुन्दरता से की है।

नागरी और यूरोपीय स्वर-व्यञ्जन।

एक ओझल तत्त्व को प्रकाश में लाना है कि तीन चौथाई यूरोपीय भाषाओं की ध्वनियाँ प्राचीन वैदिक भाषा के तुल्य हैं। ईरान और अ़रब की ध्वनियाँ भी। वैदिक में, टवर्ग ऋग्वेद के बाद, कहीं से प्रविष्ट होकर संस्कृत में स्थायित्व पा गया। अलबत्ता 'ण' का प्रयोग है, किन्तु यह टवर्ग से पृथक्, ळ (ड़) का अनुनासिक है। 'ळ' (ड़) ऋग्वेद के प्रथम मंत्र से मौजूद है, बाद को किसी समय लिपि से लुप्त हो गया। ध्वनि क़ायम रही जो कालान्तर में ड़ के रूप में पुनः प्रविष्ट हुई। ओड़िया, मराठी, गुजराती, राजस्थानी, तेलुगु, मलयाळम, कन्नड और तमिळ में ळ अब भी मौजूद है।

स्वर और प्रयत्न (लहजा) का अन्तर।

अब रहे स्वर। जान लीजिए कि प्रमुख स्वर तीन ही हैं— अ, इ, उ— उनसे दीर्घ, संयुक्त (डिप्थांग) आदि बनते हैं। अतिदीर्घ, प्लुत, लघु, अतिलघु आदि फिर अनेक हैं जो विश्व में अनेक रूपों में बोले जाते हैं। भारतीय वैदिक एवं संस्कृत व्याकरण में अनेक हैं। वे स्वतंत्र स्वर नहीं हैं, प्रयत्न हैं, लहजा हैं। वे सब न लिखे जा सकते हैं, न सब सर्वत्र बोले जा सकते है। डायाक्रिटिकल मार्क्स कोशों में छाप-छापकर चमत्कार भले ही दिखा दिया जाय, प्रयोग में तो, "एक ही रूप में", अपने निजी शब्द निजी देशों में भी नहीं बोले जाते। स्वर क्या, व्यंजन तक। एक शब्द "पहले" को लीजिए। सब जगह घूम आइए, देखिए उसका उच्चारण किन-किन प्रकार से होता है। एक बिहार प्रदेश को छोड़कर कहीं भी "पहले" का शुद्ध उच्चारण सुनने को नहीं मिलेगा। पंजाब, बंगाल, मद्रास के अंग्रेजी के उद्भट विद्वान् अंग्रेजी में भाषण देते हैं—उनके लहजे (प्रयत्न) बिलकुल भिन्न होते हैं। फिर भी न उनका उपहास होता है, न अंग्रेजी भाषा का ह्रास।

शास्त्र पर व्यवहार को वरीयता (तर्जीह)।

शास्त्र और विज्ञान से हमको विरोध नहीं। लिपि की रचना, शोध, परिमार्जन, देश-काल-पात्र के अनुसार करते रहिए, परन्तु व्यवहारिकता को अवरुद्ध मत कीजिए। खाद्यपदार्थ के तत्त्वों का गुण-दोष, परिमाण, संतुलन, न्यूनाधिक्य, और खानेवाले की शक्ति के साथ उनका समन्वय, यह सब स्तुत्य है, कीजिए। किन्तु ऐसा नहीं कि उस शोध-समीक्षा के पूर्ण होने तक कोई भूखा रहकर मर ही जाय। थाली रखी है, उसे भोजन करने दीजिए। आज सबसे जरूरी है राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक का एक-दूसरे की ज्ञानराशि को समझने के लिए एक सम्पर्क लिपि की व्यापकता।

'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने स्थायी और मुक़ामी तौर पर अनेक स्वर-व्यंजनों की सृष्टि की है। दक्षिणी वर्णमालाओं में एकार तथा ओकार की ह्रस्व, दीर्घ —दोनों मात्राएँ हम बोलते हैं, किन्तु पृथक् लिखते नहीं। पढ़ने दीजिए, बढ़ने दीजिए। समस्त भाषाओं के ज्ञान-भण्डार को निजी क्षेत्रों से उठाकर धरातल पर नागरी लिपि के माध्यम से पहुँचाइए। नागरी लिपि मानव के पूर्वज की सृष्टि है, मानव मात्र की है। यहाँ से योरोप तक उसकी पहुँच है। यूरोपियों की लिपि-शैली नागरी थी। अक्षरों के रूप कुछ भी रहे हों। किन्हीं कारणों से सामीकुलों में भटककर अलफ़ा-बीटा के क्रम को थोड़े अन्तर के साथ अपना लिया। फिर पुराने संस्कारों से याद आया, तो स्वर-व्यंजन पृथक् कर दिये। किन्तु उनके क्रम-स्थान जैसे के तैसे मिले-जुले रहे। सामीकुल की भाषाओं ने भी प्रमुख स्वर तीन ही माने हैं, ज़बर-ज़ेर-पेश (अ इ उ)।

ै और ौ का उच्चारण अरबी, संस्कृत, अवधी और अपभ्रंश का एक जैसा है—(अई, अऊ)। किन्तु खड़ी बोली हिन्दी-उर्दू के अं, और औ, ऐनक, औरत जैसे। यह स्वरों की भिन्नता नहीं है, वरन् लहजा (प्रयत्न) की भिन्नता है।

पूर्ण वैज्ञानिक कोई वस्तु मनुष्य के पल्ले नहीं पड़ सकती। "पूर्ण विज्ञान" भगवान् का नाम है। सा-रे-ग-म-प-ध-नि, ये सात स्वर; उनमें मध्य, मन्द, तार; कुछ में तीव्र, कोमल—बस इतने में भारतीय संगीत बँधा है। उनमें भी कुछ तो अदा नहीं हो सकते, अनुभूति मात्र हैं। किन्तु क्या इतने ही स्वर हैं? संगीत के स्वरों का इनके ही बीच में अनंत विभाजन हो सकता है। जैसे अणु से परमाणु का, और उसमें भी आगे। किन्तु शास्त्र एक वस्तु है, व्यवहार दूसरी। व्यवहार में उपर्युक्त षडज से निषाद तक को पकड़ में लाकर संगीत क़ायम है, क्या उसको रोककर इनके मध्य के स्वरों को पहले तलाश कर लिया जाय? तब तक संगीत को रोका जाय, क्योंकि वह पूर्ण नहीं है? क्या कभी वह पूर्ण होगा? पूर्ण तो 'ब्रह्म' ही है। "बेस्ट् इज़् द ग्रेटेस्ट् ऐनिमी ऑफ़् गुड्।" (Best is the greatest enemy of Good) इसलिए शग़ल और शोब्दों की आड़ न ली जाय। नागरी लिपि पर्याप्त सक्षम है।

विश्व-व्यापकता के संदर्भ में नागरी लिपि के स्वरों का रूप।

लिखने के भेद— यदि नागरी को हिन्दी क्षेत्र की ही लिपि बनाये रखना है तो इ, उ, ए, ऐ, लिखने के अपने पुरानेपन के मोह में मुग्ध रहिए। और यदि उसे राष्ट्रलिपि अथवा विश्व तक में, यहाँ तक कि सामीकुल में भी आसानी से ग्राह्य बनाना चाहते हैं तो गुजराती लिपि की भाँति अि, अु, अे, अै लिखिए। किन्तु कोई मजबूर नहीं करता। विनोबा जी ने भी इसका आग्रह नहीं रखा। आकार और रूप का मोह व्यर्थ है। पुराने ब्राह्मी-शिलालेखों को देखिए। आपके मौजूदा रूप वहाँ जैसे के तैसे कहाँ हैं?

संस्कृत के तिरस्कार से भाषा-विघटन।

मेरा स्पष्ट मत है कि "संस्कृत" को राष्ट्रभाषा होना चाहिए था। वह होने पर, यह भाषा-विवाद ही न उठता। सबको ही (हिन्दी-भाषी को भी) समान श्रम से संस्कृत सीखने पर, स्पर्धा-कटुता का जन्म न होता, संस्कृत का अपार ज्ञान-भण्डार सबको प्रत्यक्ष होता, और हिन्दी की पैठ में भी प्रगति ही होती। उर्दू-हिन्दी की अपेक्षा, अन्य सभी भारतीय भाषाएँ, संस्कृत के अधिक समीप हैं। इसलिए कि प्रायः सभी भारतीय लिपियों में संस्कृत भाषा उसी प्रकार अबाध गति से लिखी जाती है जिस प्रकार नागरी लिपि में। संस्कृत ही एक भाषा है जिसकी अनेक लिपियाँ अपनी हैं। वह देश-काल-पात्र के प्रभाव से मुक्त अव्यय (कभी न बदलनेवाली),

सकल विश्व में एक मात्र सदाबहार भाषा है। अन्य सब भाषाएँ देश-काल-पात्र के प्रभाव का शिकार होती रहती हैं।

'संस्कृत कठिन है' —यह प्रमाद।

'संस्कृत कठिन है', यह दूर से देखने पर रस्सी का साँप है। वह गणित के समान नियमबद्ध अति सरल भाषा है। कभी न बदलनेवाली, अपने में पूर्ण। कुछ गणित जैसे नियम जान लेने पर कोई चूक की गुंजाइश नहीं। इब्रानी (हिब्रू) जैसी भूली-बिसरी भाषा जब इज्राईल देश में अनिवार्य भाषा का स्थान ले सकती है तब संस्कृत तो जीती-जागती आदिम देवभाषा है।

धर्मतंत्र

संस्कृत का पुरातन वाङ्मय नाम-भेद से रहित 'एक धर्मतंत्र' शासन-व्यवस्था से युक्त है। वहाँ अधर्म की पैठ नहीं, पैठ है तो उसका विनाश निश्चित है। प्रजातंत्र, गणतंत्र, राजतंत्र, अधिनायक-तंत्र, ये सब उस धर्मतंत्र के सुधाभाण्ड से यत्र-तत्र गिरी बूँदें हैं। सब शुद्ध हैं, सब अशुद्ध हो जाते हैं। एक के अशुद्ध होने पर दूसरा आता है, और कालान्तर में वह भी अशुद्ध होकर दूसरे में बदल जाता है। 'धर्मतंत्र' किसी क्षेत्र का, व्यक्ति का, समुदाय का चेहरा नहीं देखता। उसकी दृष्टि में प्राणिमात्र, बिना भेद-भाव के, एक समान है।

यूनाइटेड नेशन्स फ़ेल क्यों ?

इसलिए कि 'यूनाइटेड' में विभाजन और अलगाव तो पहले से ही मौजूद है। वह कभी यूनाइटेड नहीं हो सकता। 'रेलीजन' शब्द लैटिन है। उसका अर्थ 'जुड़ने' से है। जुड़ो, सब जुड़ो, सकल सृष्टि से जुड़ो, सकल सृष्टि से जुड़े कि मानो सर्वव्यापी परमात्मा से जुड़ गये। अलग नहीं होना। स्वर्ग चलेंगे तो सब साथ-साथ। अन्यथा सब साथ ही साथ नरक में विलास करेंगे। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।' 'संस्कृत' भारत की राष्ट्रभाषा होती तो उसके वाङ्मय से संसार चकित होता। और भारत से उदित धर्मतंत्र के धुरे पर धरातल पर धर्मतंत्र स्थापित होता। यह मानवमात्र 'यूनाइटेड नेशन्स' न होकर, मात्र 'नेशन' होता।

अब तो प्रस्तुत राष्ट्रभाषा ही सर-माथे पर

अब "हिन्दी" ही राष्ट्रभाषा सबको मान्य होना चाहिए। यह इसलिए कि अन्य भारतीय भाषाओं में हिन्दी ही एक भारतीय भाषा है जो देश के हर स्थल में कमोबेश प्रविष्ट है।

हिन्दी-भाषियों का अहम्।

'हिन्दी' (खड़ी बोली) कदाचित् थोड़े वोटों के नाम मात्र के बहुमत पर ही राष्ट्रभाषा चुनी गई थी। वह भी इस विशेषता पर कि उसकी पैठ कमोबेश हर भाषाई क्षेत्र में है। वह गर्व से अपने को माला का सुमेरु न समझकर, माला की मणियों (गुरियों) को परस्पर जोड़नेवाला धागा समझे। सारी भाषाओं को जोड़े, सारे देश में फैलाये। यह समझना अज्ञान है कि वह अपेक्षाकृत अतिश्रेष्ठ है। अन्य भाषाओं का साहित्य कहीं अधिक समृद्ध और प्राचीन है। किन्तु दुर्भाग्य से ऐसा नही हुआ। हिन्दीवालो ने विजय-दुन्दुभी बजाई। 'अब झख मार कर सबको हिन्दी सीखना पड़ेगी', ऐसा अहम् उनसे मुखरित हुआ। आज के भाषाई विवाद का यह एक बड़ा कारण है।

अन्य भारतीय भाषाभाषी भी भटक गये।

वे हिन्दी के विपक्ष में अपनी क्षेत्रीय भाषा की गोट न बिठाने की स्थिति में थे। वे सब स्वयं विभक्त हो जाते। अतः उन्होंने रोमन लिपि का जवाबी मुहरा बिठाया। फलस्वरूप वे विफल हुए, हिन्दी की विजय हुई। यदि उन्होने डॉ० काटजू और श्री विश्वनाथ दास के संस्कृत वाले पक्ष का अनुमोदन किया होता तो उनकी विजय होती। भारत संस्कृतमय होता। विश्व को 'यूनाइटेड नेशन्स' के बजाय 'धर्मतंत्र' का मार्गदर्शन मिलता। और हिन्दी-सहित सभी भारतीय भाषाओं की भी उत्तरोत्तर स्वतः उन्नति होती।

अंग्रेजी भाषा और रोमन लिपि।

अंग्रेजी भाषा का तो हम आदर करते हैं। अंग्रेजी साम्राज्यवाद मे उन्होंने उदारता बरती और जगत का वाङ्मय अपने में समेटा। विश्व मे वह पैठ गई। परन्तु रोमन जैसी नितान्त पंगु, नितान्त अपाहिज लिपि को भारत में अपनाने का क्या औचित्य है? जहाँ डब्लू में तीन अक्षर, चार मात्राओ में कहीं भी उसकी वास्तविक ध्वनि 'व' का संकेत तक नहीं!

उर्दू भाषा

उर्दू और हिन्दी एक ही भाषा हैं। केवल लिपि-भेद है। मुझको उस विवाद में कुछ नहीं कहना है। किन्तु इतना अवश्य कहूँगा कि उर्दू के पक्षधरों ने उर्दू को जितनी हानि पहुँचाई है, वह अपार है। उर्दू लिपि में विशाल साहित्य है। हज़ारों की संख्या में नाना काव्यग्रन्थ, बग़दाद के स्वर्णयुग में लिखा पूरा यूनानी चिकित्सा-शास्त्र, ज्योतिष, गणित, तर्कशास्त्र, धर्मशास्त्र (फ़िक़ः व मसला-मसाइल) नागरी लिपि में न आने से भारत मे लुप्त हुए जा रहे हैं। पाण्डुलिपि के लिए प्रतियों का प्राप्त होना दूभर हो रहा है। इन बेशवहा ग्रन्थों को डूबने न दीजिए। यथासाध्य उर्दू में खूब लिखिए, छापिए और पढ़िए। लेकिन नागरी लिपि में उनको आने का रास्ता खोलिए —इसको 'उर्दू की उन्नति' का रास्ता तस्लीम कीजिए। नही तो ग़जब हो जायगा। वह सब नायाब इल्म फिर न नसीब होगा।

आज क्या करना है ?

सार यह कि हुज्जत कम, काम होना चाहिए। शास्त्र पर व्यवहार प्रबल है। समय बड़ा बलवान है, वह आवश्यकतानुसार ढलाई कर देता है। हिन्दी-क्षेत्र में ही घूम-घूमकर प्रतिमा-अनावरण, हिन्दी का महिमा-गान, अनुवादों की धूम, अमुक भाषा की हिन्दी को यह देन, अमुक भाषा में हिन्दी की यह छाप— यह सब दिशाविहीनता, क़िलेबन्दी और अभियान त्यागकर, नागरी लिपि में विश्व का साहित्य लाइए। टूटी-फूटी ही सही, हिन्दी बोलना भी— ("ही" नहीं बल्कि "भी") बोलने का अभ्यास कीजिए। लिपि और भाषा की सार्थकता होगी। मानवमात्र का कल्याण होगा। हमारी एकराष्ट्रीयता और विश्वबन्धुत्व चरितार्थ होगा।

—नन्दकुमार अवस्थी (पद्मश्री)

मुख्यन्यासी सभापति, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ।

"भाषासेतु संस्थान" — स्थापन विधि

भागीरथी प्रवहमान है, एक घाट आप भी स्थापित कीजिये ।

'भाषासेतु संस्थान" की रूपरेखा संलग्न पत्रक "विश्वभाषा से
स्थान" में स्पष्ट है । अब स्थल-स्थल पर "भाषासेतु संस्थान" कि
कार संस्थापित हों, इसकी विधा इस प्रकार है :—

१ इस प्रकार एक 'शिलापट्ट' का आरोपण :—

भाषासेतु संस्थान
[स्थल का नाम व पता]
सम्पर्क-स्रोत — भुवन वाणी ट्रस्ट, मौसमबाग, सीतापुर रोड, लखनऊ—२०

२ उक्त संस्थान पर किसी साधु-सन्त, अवकाश-प्राप्त निश्चि
द्गृहस्थ, अथवा समाजसेवी विद्वान् को ग्राम-स्थविर की भाँति प्रतिष्ठि
रना चाहिए । वे ग्राम-स्थविर यदि स्वावलम्बी नहीं हैं, तो उस बस्त
निवासी अथवा सम्पन्न जन उनके जीवन-निर्वाह की व्यवस्था करें ।

३ नागरी लिपि में अन्य भाषाओं का लिप्यन्तरित और राष्ट्रभा
अनूदित सत्साहित्य का यथासाध्य संग्रह करें ।

४ ग्राम-स्थविर दैनिक अथवा सामयिक अवसरों पर विभिन्न भाषा
दाचार ग्रन्थों के पाठ-पारायण द्वारा वहाँ के जन-समुदाय में ज्ञानवर्धन करें
ांतीय भेद-भाव को दूर करें । नाना ग्रन्थों में वर्णित नये-नये आख्या
ो सुनकर जनता का ज्ञानवर्धन के साथ-साथ पवित्र मनोरञ्जन होगा ।

५ विभिन्न भाषाओं की मूल पदावलियों को उनके सही उच्चारण
ागरी लिपि के माध्यम से पाठ सुननेवालों को यह जानकर आश्चर्य होगा ि
ेवल लिपि का परदा हटते ही वे भाषाएँ एक-दूसरे के कितनी सन्निकट है

६ ज्ञात रहे कि ये "भाषासेतु-संस्थान" स्वैच्छिक, स्वतन्त्र और स्वा
म्बी होंगे । भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ उनका केवल प्रेरणास्रोत मात्र है

७ इस वाणीयज्ञ के पुण्यवान होताओं अथवा यजमानों को 'भुव
ाणी ट्रस्ट' द्वारा "मानद अलंकरण" से समलङ्कृत किया जायगा ।

एक-दो भाषासेतु संस्थान स्थापित करने पर 'भाषासेतु रत्न', क्षेत्री
ार्य करने 'भाषासेतु रत्नाकर' और राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय स्तर प
ार्य करनेवाली विभूतियों को 'भाषासेतु चक्रवर्तिन्' उपाधि से समलङ्कृ
र भुवन वाणी ट्रस्ट अपने को गौरवान्वित समझेगा ।

नन्दकुमार अवस्थी (पद्मश्री)

मुख्य न्यासी सभापति भुवन वाणी ट्रस्ट लखनऊ

अनुवादकीय

प्रस्तुत चतुर्थ सैंची में मूलग्रंथ के एक सौ अट्ठाईस चरित्रोपाख्यानों के बाद के सम्पूर्ण उपाख्यान और ज़फ़रनामा आदि रचनाओं का अनुवाद प्रस्तुत है। चरित्रोपाख्यानों में हम स्पष्टतः पाते हैं कि कवि की उत्कट इच्छा 'काम' और 'व्यवहार' में सामंजस्य दिखाने की है। इनके माध्यम से कामोन्माद एवं उससे प्रसूत अल्पदृष्टि, प्रवंचना और धूर्तताओं को प्रदर्शित करते हुए मानव मात्र को स्थान-स्थान पर चेतावनियाँ दी गई है। चरित्रोपाख्यान जीवन के विभिन्न आयामों को प्रतिबिंबित करनेवाले दु.साहसिक एवं दुष्वृत्ति वाले चरित्रों और कामासक्ति के निर्बुद्धिपूर्ण क्षणों के प्रति सावधान करनेवाली कृति है, जिसे शुद्ध उपयोगितावाद को दृष्टि में रखकर लिखा गया है।

ज़फ़रनामा मूल रूप में फ़ारसी में लिखा गुरु गोबिंद सिंह का वह पत्र है जो उन्होंने आनन्दपुर छोड़ने के बाद सन् १७०६ में औरंगज़ेब को लिखा था। यह पत्र भाई दयासिंह और भाई धर्मसिंह के हाथों औरंगज़ेब को अहमदनगर (दक्षिण) में भिजवाया गया था, जिसे पढ़कर बादशाह अत्यन्त प्रभावित हुआ था। अत्यन्त विकट परिस्थितियों में लिखा गया यह पत्र स्पष्ट रूप से सिद्ध करता है कि चारों पुत्रों, माता, हज़ारों सिक्ख सैनिकों के मारे जाने के बावजूद गुरु गोबिंदसिंह अपने उद्देश्य के प्रति तनिक भी हतोत्साहित नहीं हुए थे। ज़फ़रनामा के लेखक का स्वर एक विजेता का स्वर है, जिसमें किसी प्रकार के विषाद एवं कुंठा की झलक दिखाई नहीं पड़ती। अत्यन्त ओजस्वी भाषा में गुरु गोबिंद सिंह सम्राट् औरंगज़ेब की तमाम अच्छाइयों को दिखाते हुए भी डटकर लिखते हैं कि "तुम धर्म से कोसों दूर हो।" इसी पत्र में गुरु गोबिंद सिंह सम्राट् को और उसके फौजदारों को उनकी खाई झूठी कसमों की याद दिलाते हैं और सम्राट को स्वयं पंजाब आने का निमन्त्रण देते हैं ताकि उसे वस्तुस्थिति और स्पष्ट हो

सके। इस महान् ऐतिहासिक कृति में गुरु गोबिंद सिंह यह स्थापित करते हैं कि सार्वजनिक एवं व्यक्तिगत व्यवहार में नैतिकता ही अच्छे और बुरे का मानदंड होनी चाहिए। लड़ाई की जीत-हार को भी नैतिक मूल्यों के आधार पर ही परखा जाना चाहिए। ज़फ़रनामा के बाद में दी गई हिकायतों का ज़फ़रनामा के साथ कोई सम्बन्ध नहीं माना जाता है और ये रचनाएँ भी कृतित्व के दृष्टिकोण से विवादास्पद ही हैं।

दशम ग्रंथ के अनुवाद की प्रस्तुत चौथी और अन्तिम सैंची की छपाई का कार्य इतनी शीघ्रता से पूर्ण करने के लिए पद्मश्री नन्दकुमार अवस्थी जी निश्चित रूप से साधुवाद के पात्र हैं। आपने सिक्खधर्म के दो महान् ग्रंथों श्री गुरुग्रंथ साहिब और दशम ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद पाठकों तक पहुँचाकर निस्संदेह जहाँ ट्रस्ट के कार्य को आगे बढ़ाया है, वहीं साथ ही साथ सिक्खधर्म और हिन्दी-जगत् के बीच एक संवाद की स्थिति लाने का गुरुतर कार्य भी किया है। मैं व्यक्तिगत रूप से आपका आभारी हूँ।

सिक्ख विश्वकोष विभाग
पंजाबी यूनिवर्सिटी
पटियाला

जोध सिंह
एम. ए. (दर्शन, अंग्रेजी एवं हिन्दी), पीएच. डी.,
साहित्यरत्न

प्रकाशकीय प्रस्तावना

विषय-प्रवेश ।

दशम गुरुग्रन्थ की चौथी सैंची भी भगवत्कृपा से प्रकाशित हो गई। एक अलौकिक ग्रन्थ सम्पूर्ण हुआ। ग्रन्थ के विषय में पिछली तीन सैंचियों मे बहुत कुछ लिखा जा चुका है। आर्ष ग्रन्थों पर अकिञ्चन-जैसे को अधिक लिखने की सामर्थ्य ही क्या ?

प्रस्तुत सैंची में एक प्रमुख अंश 'ज़फ़रनामा' है। यह फ़ारसी-प्रधान भाषा में एक पत्र है, जो दशमेश श्री गुरु गोविन्दसिंह जी ने मुग़ल शाहंशाह औरंगजेब को लिखा था। इस पत्र में अन्यायी का अन्याय, अत्याचार पर अत्याचार, किन्तु उतने पर भी, सदैव धर्म की विजय और अधर्म का नाश ही होता रहा है —ऐसा वर्णन है। ऐसा प्रतीत होता है कि ज़फ़र-नामा का एक-एक शब्द शर-स्वरूप होकर दशमेश के कोदण्ड से निकलकर सीधे शाह के वक्षस्थल पर लग रहा है।

और हुआ भी वही। गुरु तो परमधाम को सिधारे, परन्तु शाह की सल्तनत भी अधिक चल न सकी। वह यमधाम के हवाले हुई।

एक अनोखा वैचित्र्य ।

भुवन वाणी ट्रस्ट ने अनेक देशी-विदेशी भाषाओं के श्रेष्ठ ग्रन्थ को नागरी लिपि में लिप्यन्तरित कर हिन्दी अनुवाद-सहित प्रकाशित किया—अब तक लगभग ५५ ग्रन्थ। किन्तु सानुवाद लिप्यन्तरण का उद्देश्य और उसका जीता-जागता प्रत्यक्ष सुबूत, जैसा दशम गुरुग्रन्थ के प्रकाशन में प्राप्त हुआ वैसा दुर्लभ है।

वैचित्र्य यह है कि दशम गुरुग्रन्थ की लिपि तो पंजाबी (गुरमुखी) है, किन्तु उसकी भाषा ठेठ ब्रजभाषा हिन्दी है। परिणाम यह कि पंजाबी लिपि में ही अब तक प्रकाशित होने के कारण, पंजाबी पाठक, अपवादों को छोड़कर, इस ग्रन्थ को पढ़ते समय उसका आशय नहीं समझ पाता था; क्योंकि वह ब्रजभाषा से अनभिज्ञ रहा।

उसी भाँति हिन्दी पाठक, जो ब्रजभाषा बखूबी समझ सकता है, पंजाबी लिपि न पढ़ पाने के फलस्वरूप, इस अनुपम ग्रन्थ से अनभिज्ञ रहा। हिन्दीभाषी और पंजाबीभाषी दोनों ही प्रायः इस रहस्य को समझ ही न पाये। केवल ग्रन्थ और दशमेश के प्रति श्रद्धावनत होकर ही संतोष पाते रहे आज लिपि का हटते ही यह रहस्य खुल गया सारा

राष्ट्र उत्सर्गमय समस्त जीवन बितानेवाले दशमेश की वाणी का साक्षात् कर सका।

अनावश्यक संशय।

दो पंक्तियां लिखना आवश्यक है। प्रायः लोग ग्रन्थ के किन्हीं अंशों के प्रक्षिप्त होने का सन्देह करते हैं। कोई-कोई दशमेश के दार्शनिक विचारों को स्थापित करने में लगते है। इनमें कई पक्ष हैं। मेरा उन सबसे नम्र निवेदन है कि परमपवित्र आत्मा को इस दलदल में न घसीटें। धार्मिक विवेचनों, उनकी छानबीन, मान्य-अमान्य का निर्णय —इसका उनको जीवन में अवसर ही कब मिला ? पिता शहीद हुए। चारों बच्चे शहीद हुए। सारा जीवन उनका उत्सर्ग, बलिदान और जूझने में बीता, और अन्ततः विलय को प्राप्त हो गये। उन्होंने एक मात्र भारतीय संस्कृति की रक्षा और आततायी के संहार में सारा समय लगाया। उनका ग्रन्थ "नेति-नेति" से आरम्भ होता है, और सभी को बिना भेदभाव के धर्मोन्मुख करता है। धरातल की सभी जमातों में यह निर्विवाद वचन है कि अिलम (ज्ञान) बिना गुरु के प्राप्त नहीं होता। अतः मैं अतीव श्रद्धा और समर्पित भाव से दशमेश के आगे नत होता हुआ इस ध्यान को दुहराता हूँ :—

> 'गुरुर्ब्रह्मागुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः।
> गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः॥'

कामना :—

> हे भगवन् !
> 'नत्वहं कामये राज्यं, नस्वर्गं, नापुनर्भवम्।
> कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम्॥'
>
> 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।'

आभार-प्रदर्शन।

सर्वप्रथम हम सरदार डॉ० जोधसिंह जी के कृतज्ञ हैं, जिन्होंने निस्पृह भाव से ट्रस्ट के अनुरोध पर श्री दशमेश कृत पुण्यग्रन्थ के अनुवाद जो जटिल और गहन कार्य को राष्ट्रहित में अति श्रम एवं तत्परता से ग्रहण किया, वहन किया। सर्वाधिक श्रेय उन्हीं को है।

सदाशय श्रीमानों और उत्तर प्रदेश शासन के प्रति भी हम आभारी हैं, जिनकी सहायता से भाषाई सेतुकरण के अन्तर्गत अनेक ग्रन्थों का प्रकाशन चलता रहता है

सौभाग्य की बात है कि भारत सरकार के राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) तथा शिक्षा एवं संस्कृति मंत्रालय ने राष्ट्रभाषा हिन्दी-सहित सभी भाषाओं की समृद्धि और व्यापकता के लिए एक जोड़लिपि 'नागरी' के प्रसार पर उपयुक्त बल दिया। उनकी उल्लेखनीय सहायता से हमको विशेष बल मिला है और उपर्युक्त सबके फलस्वरूप गुरमुखी— श्री दसम गुरूग्रन्थ साहिब की चौथी सैंची का प्रकाशन प्रस्तुत वर्ष में सम्पूर्ण हो सका। ग्रन्थ चार सैंचियों में सम्पूर्ण हो गया।

विदित हो—

विदित हो कि पुत्र-जन्म पर उसका नाम लखपति साह रख देने से वह लखपती नहीं बन सकता, वह दस-बीस लाख का स्वामित्व पाकर ही लक्षाधीश चरितार्थ होगा। राष्ट्रभाषा की स्थापना तो हो गई परन्तु अभी वह इस रूप में चरितार्थ तो नहीं हुई। भारत में अधिक फैली होने ही के एक मात्र कारण से, प्रचलित हिन्दी (खड़ी बोली) को, राष्ट्रभाषा और परम वैज्ञानिक भारतीय लिपियों में से सर्वाधिक प्रसरित लिपि 'नागरी' को उनकी प्रतिनिधिस्वरूपा होकर राष्ट्र का एकात्मभाव सदैव की भाँति दृढ़ बनाये रखने के लिए, सेवा सौंपी गई। अतः प्रथम कर्तव्य है राष्ट्रलिपि और राष्ट्रभाषा को न केवल भारतीय वरन् विश्व के वाङ्मय के सानुवाद लिप्यन्तरण द्वारा भर दिया जाय, लखपति साह को वस्तुतः लक्षाधीश बना दिया जाय।

विश्ववाङ्मय से निःसृत अगणित भाषाई धारा।
पहन नागरी पट सबने अब भूतल-भ्रमण बिचारा॥
अमर भारती सलिला की 'गुरमुखी' सुपावन धारा।
पहन नागरी पट, 'सुबेधि' ने भूतल-भ्रमण बिचारा॥'

दिनांक १५-१०-१९८५

—नन्दकुमार अवस्थी (पद्मश्री)

मुख्यन्यासी सभापति, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ–२

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

य पृष्ठ

विषय

१ ओं स्री वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

अथ

श्री दसम गुरुग्रंथ साहिब

(नागरी लिपि में)

हिन्दी व्याख्या सहित

अथ इक सौ उनानवों चरित्र कथन ॥

॥ दोहरा ॥ भूपकला नामा रहै सुता शाह की एक । अधिक दरब ताके रहै दासी रहै अनेक ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ मिसरी को हीरा तिन लियो । डबिया बिखै डारि करि दियो । शाहजहाँ जह सभा बनाई । बहल बैठि तिह ओर सिधाई ॥ २ ॥ अरध बजार बिखै जब गई । सुंदर नरि क बिलोकत भई । अधिक दरबु दै निकटि बुलायो । निज गाडी के साथ लगायो ॥ ३ ॥ चलित चलित रजनी परि गई । सूरज छप्यो चंद्र दुति भई । बहल बिखै गहि बाँह

एक सौ नवासीवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ शाह की भूपकला नामक एक पुत्री थी, जिसके पास अत्यधिक द्रव्य और अनेकों दासियाँ रहती थीं ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसने मिश्री की डली को हीरे के तौर पर लिया और डिब्बी में बंद कर दिया । जहाँ शाहजहाँ सभा लगाकर बैठा था, उस ओर वह बैलगाड़ी लेकर चल पड़ी ॥ २ ॥ जब वह बाजार के बीचोबीच गई तो एक सुन्दर पुरुष को उसने देखा । उसे अत्यधिक धन देकर उसने पास बुलाया और अपनी गाड़ी के साथ लगा लिया ॥ ३ ॥ चलते-चलते रात हो गई और सूर्यास्त होकर चन्द्रमा की चाँदनी फैल गई उसे उसने बाँह पकड़कर गाड़ी में चढ़ा लिया

चढ़ायो । कामकेल तिह संग उपजायो ॥ ४ ॥ ज्यों ज्यों बहल हिलोरे खावै । उछरे बिना काज ह्वै जावै । लखै लोग गाडी कर मारै । भेद अभेद न कोऊ बिचारै ॥ ५ ॥ भाखि बैन ते बहल धवाई । काम रीति करि प्रीति उपजाई । भरि करि भोग बाम सौ कीनो । बीच बजार न किनहूँ चीनो ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ केल करत इह चंचला तहाँ पहूची आइ । शाहजहाँ बैठो जहाँ नीकी सभा बनाइ ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ मिसरी के हीरा कर लियो । लै हजरति के हाजर कियो । शाहजहाँ तिह कछू न चीनो । तीस हजार रुपैया दीनो ॥ ८ ॥ इल छल सौ शाहहि छलि गई । उठी सभा आवत सोऊ भई । पंद्रह सहस्र आपु तिय लीनो । पंद्रह सहस्र मीत को दीनो ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ शाहजहाँ छलि मीत सौ काम कलोल कमाइ । धाम आनि पहुचत भई सक्यो न कोऊ पाइ ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे इक सौ उनानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ १८९ ॥ ३५८७ ॥ अफजूं ॥

और कामक्रीड़ा की ॥ ४ ॥ जैसे-जैसे गाड़ी हिचकोले खाती थी तो उनका काम बिना उछले ही हो जाता था । जो भी देखता था उसे गाड़ीवान समझता था और रहस्य का विचार कोई भी नहीं करता था ॥ ५ ॥ बोल-बोलकर वह गाड़ी चला रही थी और कामरीति के अनुरूप उसने प्रेमक्रीडा की । उसने भी जी भरकर स्त्री से विलास किया और भरे बाजार में उन्हें कोई पहचान न सका ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ केलिक्रीड़ा करते हुए यह स्त्री वहाँ आ पहुँची जहाँ शाहजहाँ सुन्दर सभा बनाकर बैठा था ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ अब उसने मिश्री की डली को हीरे के रूप में लिया और बादशाह के सम्मुख हाजिर कर दिया । शाहजहाँ ने भी कुछ नहीं पहचाना और उसे तीस हजार रुपया दे दिया ॥ ८ ॥ इस प्रपंच से उसने बादशाह को भी छल लिया और सभा से उठकर चली आई । पंद्रह सहस्र उस स्त्री ने लिया और पंद्रह सहस्र अपने मित्र को दिया ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ शाहजहाँ को छलकर मित्र के साथ कामक्रीड़ा कर वह अपने घर पर आ पहुँची और कोई भी उसके रहस्य को न समझ सका ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में एक सौ नवासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ १८९ ॥ ३५८७ ॥ अफजूं ॥

अथ इक सौ नबवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ इक दिन बाग चंचला गई। हसि हसि बचन बखानत भई। स्री निसिराज प्रभा त्रिय तहाँ। ऐसी भाँति उचार्यो उहाँ ॥ १ ॥ जौ राजा तें बारि भिराऊँ। अपनी झाँटैं सभै मुँडाऊँ। तब त्रिय होइ सकल तुम हारहु। निजु नैनन इह चरित निहारहु ॥ २ ॥ यौ कहिकै सुभ भेस बनायो। देव अदेवन को बिरमायो। चरित्र सिंघ राजा जब आयो। सुनि इह बचन चंचला पायो ॥ ३ ॥ बैठ झरोखा दई दिखाई। राजा रहे रूप उरझाई। एक बार इह को जौ पाऊँ। जनम (पृ०ग्रं०१०८१) सहस्र लगै बलि जाऊँ ॥ ४ ॥ पठै सहचरी लई बुलाई। प्रीति सहित रस रीतुपजाई। अबला तब मुरछित ह्वै गई। पानि पानि उचरत मुख भई ॥ ५ ॥ उठ करि आपु राव तब गयो। ताकह पानि पयावत भयो। पानि पिए बहुरो सुधि भई। राजै फिरि चुंबन तिह लई ॥ ६ ॥ जब सुधि मै अबला कछु आई।

एक सौ नब्बेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ एक दिन बाग़ में स्त्रियाँ गईं और हँस-हँसकर आपस में वार्तालाप करने लगीं। चन्द्रप्रभा नामक एक स्त्री ने वहाँ कहा ॥ १ ॥ यदि राजा से पानी भरवा दूँ और उसी से अधोभाग की रोमावलि मुँड़वा लूँ तब तुम सब मुझसे शर्त हार जाओगी। हे स्त्रियो! तुम अपनी आँखों से इस चरित्र को देखो ॥ २ ॥ यह कहकर उसने सुन्दर वेश बनाया और देव-अदेव सबको भ्रम में डाल दिया। चरित्रसिंह राजा जब आया तो इन स्त्रियों को पता लग गया ॥ ३ ॥ वह झरोखे में बैठ गई और राजा भी रूप में उलझ गया। वह सोचने लगा कि यदि एक बार इसको पा जाऊँ तो हज़ारों जन्म न्योछावर कर दूँ ॥ ४ ॥ उसने दासी भेजकर बुला लिया और प्रेमपूर्वक रस-रीति का निर्वाह किया। तब वह स्त्री मूर्च्छित हो गई और पानी-पानी पुकारने लगी ॥ ५ ॥ राजा तब स्वयं उठकर गया और उसे पानी पिलाने लगा। पानी पीकर जब फिर होश में आई तो राजा ने फिर उसका चुंबन लिया ॥ ६ ॥ जब वह स्त्री ज़रा होश में आई तो फिर काम-क्रीड़ा की धूम मचाई दोनों ही जवान थे कोई भी नहीं हार रहा था और

बहुरि काम की केल मचाई। दोऊ तरन न कोऊ हारै। यौ राजा तिह साथ बिहारै ॥ ७ ॥ बहुरि बाल इह भाँति उचारी। सुनो राव तुम बात हमारी। त्रिय की झाँटि न मूँडी जाई। बेद-पुरानन मै सुनि पाई ॥ ८ ॥ हसि करि राव बचन यौ ठान्यो। मैं अपुने जिय साच न जान्यो। तैं त्रिय हम सो झूठ उचारी। हम मूँडैगे झाँटि तिहारी ॥ ६ ॥ तेज असतुरा एक मँगायो। निज कर गहिकै राव चलायो। ताँ की मूँडि झाँटि सभ डारी। दैकै हसी चंचला तारी ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ पानि भरायो राव ते निजु कर झाँटि मुँडाइ। होड जीत लेती भई तिन अबलान दिखाइ ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे इक सौ नववों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ १६० ॥ ३५१८ ॥ अफजूं ॥

अथ इक सौ इकयानवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ एक लहौर छत्रिजा रहै। राइ प्रबीन ताँहि जग कहै। अप्रमान तिह प्रभा बिराजै। देव जननि को

इस प्रकार वह राजा इसके साथ रमण कर रहा था ॥ ७ ॥ पुनः वह स्त्री बोली कि हे राजन्! तुम मेरी बात सुनो। मैंने वेद-पुराणों में सुना है कि स्त्री की अधोभाग-रोमावलि मूँड़ी नहीं जाती है ॥ ८ ॥ हँसकर राजा ने यह कहा कि मैं इसे सत्य नहीं मानता। हे स्त्री! तूने मुझे झूठ कहा है। लाओ यह कार्य मैं करूँगा ॥ ६ ॥ राजा ने तेज़ उस्तरा मँगाया और अपने हाथ से पकड़कर चलाने लगा। उसकी समस्त रोमावलि मूँड़ दी और इसी के साथ वह स्त्री ताली बजाकर हँस पड़ी ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ राजा से पानी भरवाया और बाल मुँड़वाए। इस प्रकार उन स्त्रियों से बाज़ी जीत ली ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में एक सौ नब्बेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ १६० ॥ ३५६८ ॥ अफजू ॥

एक सौ इक्यानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ लाहौर में एक क्षत्रिय स्त्री रहती थी, जिसे संसार रायप्रवीण कहता था। उस पर अप्रमाण प्रभा थी जिसे देखकर अप्सराएँ भी लज्जित होती थी ॥ १ ॥ एक मुगल उस नहाती को देखकर रीझ उठा

लखि मनु लाजै ॥ १ ॥ एक मुगल तिह न्हात कै रीझ्यो अंग निहारि । गिर्‌यो मूरछना ह्वै धरनि बिरहा तन ग्यो मारि ॥ २ ॥ ॥ चौपई ॥ धाम आन इक सखी बुलाई । बात सभै तिह तीर जताई । जौ मोकौ तूँ ताहि मिलावै । अपुने मुख माँगै सो पावै ॥ ३ ॥ तब सो सखी धाम तिह गई । ऐसो बचन बखानत भई । माता तोरि बुलावत तो कौ । ताते पठै दयो ह्याँ मोको ॥ ४ ॥ यौ जब बचन ताहि तिह कहियो । मिलब सुता माता सौ चहियो । डोरी बिखै ताँहि बैठार्‌यो । दर परदन द्रिड़ ऐंचि सवार्‌यो ॥ ५ ॥ ताकौ द्रिशटि कछू नहि आवै । कुटनी चहै जहाँ लै जावै । मात नाम लै ताहि सिधाई । लैकै धाम मुगल के आई ॥ ६ ॥ परदा तहीं उघारा जाई । तासबेग जह सेज सुहाई । बहिया (मू०ग्रं०१०८२) आनि मुगल तब गही । चित मै चक्रित चंचला रही ॥ ७ ॥ मेरो धरम लोप अब भयो । तुरक अंग सौ अंग भिटयो । ताँ ते कछू चरित्र बनाऊँ । जाते छूटि मुगल ते जाऊँ ॥ ८ ॥ अब आइसु तुमरो जौ पाऊँ । सभ सुंदर शिंगार बनाऊँ । बहुरि आइ तुम साथ बिहारों । तुमरे चित को शोक निवारों ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ हार शिंगार

और विरह से मारा हुआ धरती पर गिर पड़ा ॥ २ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसने अपने घर एक सखी को बुलाया और उसे सारी बात बताई। यदि तुम मुझे उससे मिला दो तो मुँह माँगा इनाम पाओगी ॥ ३ ॥ तब वह सखी उसके घर गई और उससे कहने लगी कि तुम्हारी माँ तुम्हें बुला रही है, इसीलिए उसने मुझे भेजा है ॥ ४ ॥ यह बात जब उसने उससे कही तो पुत्री ने भी माँ से मिलना चाहा। उसे डोली में बैठाया और पर्दों से दरवाजे बन्द कर दिए ॥ ५ ॥ उसे कुछ नज़र नहीं आ रहा था, ताकि कुटनी जहाँ चाहे ले जा सके। माँ का नाम लेकर चली और उसे मुगल के घर ले आई ॥ ६ ॥ उसने परदा वहीं खोला जहाँ तासबेग शय्या पर शोभायमान था। तब मुगल ने आकर बाँह पकड़ ली और वह स्त्री मन में चकित रह गई ॥ ७ ॥ मेरा तो अब धर्म लुप्त हो गया और तुर्क से मेरा अंग छू गया। इसलिए अब कुछ प्रपंच करना चाहिए, जिससे मैं इस मुगल से छूट जाऊँ ॥८॥ उसने कहा कि यदि तुम्हारी आज्ञा हो तो सुन्दर शृंगार करूँ फिर तुम्हारे साथ रमण करूँ और तुम्हारे चित्त का शोक दूर करूँ ९ दोहा हार-

बनाइकै केल करौ तव संग । बहुरि तिहारे ग्रहि बसौ ह्वै तुम त्रिय अरधंग ॥ १० ॥ ॥ चौपई ॥ यौ कहि बचन तहाँ ते गई । ग्रहि कौ आगि लगावत भई । कुटनी सहित मुगल कौ जार्‌यो । बाल आपनो धरम उबार्‌यो ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे इक सौ इकयानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ १९१ ॥ ३६०९ ॥ अफजूं ॥

अथ इक सौ बानवों चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ तेज सिंघ राजा बडो अप्रमान जिह रूप । गानकला ताकी सखी रति के रहै सरूप ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ राजा को तासौ हित भारो । दासी ते रानी करि डारो । जैसे करँ रसाइन कोई । ताँबै सौ सोना सो होई ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ रैनि दिना तिह धाम रावजू आवई । कामकेल निस दिन तिस संग कमावई । दास एक पर सो दासी अटकति भई । हो पति की प्रीति बिसारि तबै चित तें दई ॥ ३ ॥ तिल चुगना पर गानकला अटकत भई । त्रिप की प्रीति बिसारि तुरत चित ते दई । जो दासी सौ प्रेम

श्रृंगार करके तुम्हारे साथ केलिक्रीड़ा करूँगी और फिर तुम्हारे घर ही तुम्हारी अर्धांगिनी बनकर बस जाऊँगी ॥ १० ॥ ॥ चौपाई ॥ यह कहकर वह वहाँ से चली गई और उसने घर को आग लगा दी । उस कुटनी-सहित मुगल को जलाकर उस बालिका ने अपना धर्म बचाया ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में एक सौ इक्यानबेवे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ १९१ ॥ ३६०९ ॥ अफजूं ।

एक सौ बानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ तेजसिंह अपरिमित रूपवान राजा था । जिसकी दासी गानकला रति के समान सुन्दर थी ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजा को उससे अनन्य प्रेम था और उसने उसे दासी से रानी वैसे ही बना दिया और कोई रसायन (अचानक) ताँबे को सोना बना देता है ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ रात-दिन राजा उसके घर आता और उसके साथ कामक्रीड़ा करता । वह दासी एक सेवक से उलझ गई और उसने पति की प्रीति चित्त से तुरन्त भुला दी ३ तिलचुगना नामक दास पर गानकला रीझ गई और उसने उसके

पुरखु कोऊ ठानई। हो ध्रिग ध्रिग ताकौ सभ ही लोग बखानई ॥ ४ ॥ संग दासी कै दास रह्यो मुसकाइकै। संग हमारे चलो प्रीति उपजाइकै। कामकेल करि जीहैं कछू न लीजियै। हो गानकला जू बचन हमारो कीजियै ॥ ५ ॥ उठ दासी संग चली प्रीति उपजाइकै। न्रिप की ओर निहारि न रही लजाइकै। जो दासी सौ प्रेम पुरख उपजावई। हो अंत स्वान की म्रितु मरै पछुतावई ॥ ६ ॥ चारि पहर मै चारि कोस मारग चल्यो। जौ कंद्रप को द्रप हुतो सभही दल्यो। चहूँ ओर भ्रमि भ्रमि ते ही पुर आवही। हो गानकला तिल चुगन न पैंडो पावही ॥ ७ ॥ अधिक स्रमित ते भए हारि गिरिकै परै। जनुक घाव बिनु कीए आप ही ते मरै। अधिक छुधा जब लगी दुहुनि (मू०ग्रं०१०८३) कौ आइकै। हो तब दासी सौ दास कह्यो दुख पाइकै ॥ ८ ॥ गानकला तुम परो सु बुरि अपुनी करो। खरि को टुकरा हाथ हमारे पै धरो। दास जबै खैबै कौ कछू न पाइयो। हो अधिक कोप तब चित के बिखै बढाइयो ॥ ९ ॥ मार कूटि दासी को दयो बहाइकै। आप लग्यो फल चुगन महाबल जाइकै। बेर

लिए राजा की प्रीति तुरन्त भुला दी। जो कोई भी दासी से प्रेम ठान लेता है उसे सब लोग धिक्कारते हैं ॥ ४ ॥ उस दासी को उस दास ने मुस्कुरा कर कहा कि मेरे साथ प्रेमपूर्वक चल निकलो। हमें कुछ नहीं चाहिए केवल कामक्रीड़ा में ही मस्त रहेंगे। अतः हे गानकला! तुम मेरी बात मान लो ॥ ५ ॥ वह दासी प्रेमवश साथ चल पड़ी और लज्जावश उसने राजा की तरफ़ देखा भी नहीं। जो व्यक्ति नौकरानी से प्रेम-क्रीड़ा करता है, वह अन्त में कुत्ते की मौत मरता है ॥६॥ चार प्रहर में वे चार कोस मार्ग तय कर गए और उनका काम-गर्व सभी चूर हो गया। चारों ओर भ्रमण करने पर वे नगर में आए और गानकला तथा तिलचुगना को रास्ता नहीं मिल रहा था ॥ ७ ॥ अत्यधिक थककर वे हारकर गिर पड़े। मानों वे बिना घाव के स्वयं ही मर गए हों। जब दोनों को अत्यधिक भूख लगी तो दास ने दासी से दुखपूर्वक कहा ॥ ८ ॥ गानकला तुम अपनी झोली इधर करो और खाने का टुकड़ा मुझे दो। परन्तु दास को जब खाने को कुछ न मिला तो उसने मन में अत्यधिक गुस्सा किया ९ उसने मार-पीटकर दासी को नदी मे बहा दिया और आप घोर वन में फल आदि के लिए जा घुसा उसे बेर

भखत ताको हरि जच्छ निहारियो । हो तिल चुगना को पकर भच्छ करि डारियो ॥ १० ॥ बहत बहत दासी सरिता महि तहि गई । जहाँ आइ स्वारी त्रिप की निकसत भई । निरखि प्रिया राजा तिह लियो निकारिकै । हो भेद अभेद न मूरख सक्यो बिचारिकै ॥ ११ ॥ ॥ चौपई ॥ दासी काढ नदी ते लियो । बैठ तीर ऐसे बच कियो । किह निमित कै ह्याँ तै आई । सो कहियै मुहि प्रगट जताई ॥ १२ ॥ जब तुम अखेटकहि सिधाए । बहु चिर भ्यो ग्रहि कौ नहि आए । तुम बिनु मै अतिहि अकुलाई । ताते बन गहिरे मो आई ॥ १३ ॥ जब मैं अधिक त्रिखातुर भई । पानि पिवन सरिता ढिग गई । फिसल्यो पाव नदी मो परी । अधिक क्रिपा कर तुमहि निकरी ॥ १४ ॥ ॥ दोहरा ॥ नीच संग कीजै नही सुनहो मीत कुमार । भेड पूछि भादौ नदी को गहि उतर्यो पार ॥ १५ ॥ पानी उदर ताँको भर्यो दास नदी म्यो डारि । बिनु प्रानन अबला भई सक्यो न त्रिप बीचारि ॥ १६ ॥ फल भच्छत जच्छन गह्यो दास दास को कीन । दासनि कै संग दोसती मति करियहु मति हीन ॥ १७ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे इक सौ बानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ १९२ ॥ ३६२६ ॥ अफजूं ॥

खाते शेर ने देखा और उसे खा डाला ॥ १० ॥ बहती-बहती वह दासी वहाँ चली गई जहाँ राजा की सवारी आ निकली थी । राजा ने प्रिया को देखकर निकाल लिया और वह मूर्ख भी भेद-अभेद को न पहचान सका ॥ ११ ॥ ॥ चौपाई ॥ दासी को उसने नदी से निकाल लिया और किनारे पर बैठकर उससे वार्तालाप किया । तुम यहाँ कैसे आयी यह तुम मुझे बताओ ॥ १२ ॥ जब तुम आखेट को गए और बहुत समय तक नहीं आए । तुम्हारे बिना मैं अत्यन्त व्याकुल हो उठी, इसलिए गहरे वन में चली आयी ॥ १३ ॥ जब मुझे अत्यधिक प्यास लगी तो मैं नदी पर पानी पीने आई । मेरा पाँव फिसल गया जिससे मैं नदी में फिसल गई । आपने कृपा की जो मुझे निकाल लिया ॥१४॥ ॥ दोहा ॥ हे कुमार मित्र ! नीच व्यक्ति का कभी भी संग नहीं करना चाहिए, क्योंकि भेड़ की पूँछ पकड़कर भी भला कोई भादों की उफनती नदी को पार कर सकता है ॥ १५ ॥ दास के नदी में गिराने से पानी उसके पेट में भर गया था । अब वह स्त्री निष्प्राण हो गई थी परन्तु राजा भी भेद न जान सका १६ फल खाते हुए उस दास को शेर ने

मार डाला। इसलिए हे मतिहीन ! दासों के साथ कभी दोस्ती मत करना ॥ १७ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में एक सौ बानवेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ १९२ ॥ ३६२६ ॥ अफजू ॥

अथ इक सौ तिरानवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ तिरदसि कला एक बर नारी । चोरन की अति ही हितकारी । जहाँ किसू का दरबु तकावै । हींग लगाइ तहाँ उठि आवै ॥ १ ॥ हींग बास तसकर जह पावैं । तिसी ठौर कह साँधि लगावैं । तिह ठाँ रहै शाहु इक भारी । त्रिदसिकला ताहू सो बिहारी ॥ २ ॥ हींग लगाइ त्रिय चोर लगाए । करते केल शाहु चित आए । तासौ तुरत खबरि त्रिय करी । मीत तिहारी माता हरी ॥ ३ ॥ चोर चोर तब शाहु पुकार्यो । अरध आपनो दरबु उचार्यो । दुहू (मू०ग्रं०१०८४) अन ताहि हितू करि मान्यो । मूरख भेद न काहू जान्यो ॥४॥ अरध बाँटि चोरन तिह दीनो । आधो दरबु शाहु ते लीनो । दुहूँअन ताहि लख्यो हितकारी । मूरख किनूँ न बात बिचारी ॥ ५ ॥ चोर लाइ पाहरू जगाए ।

एक सौ तिरानवेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ तिरदसकला नामक एक सुन्दर नारी चोरों की अत्यन्त हितकारिणी थी। वह जहाँ भी किसी का द्रव्य देखती थी हींग लगाकर वहाँ से चली आती थी ॥ १ ॥ हींग की गंध चोर जहाँ देखते उसी स्थान पर सेंध लगा देते थे। उस स्थान पर एक भारी शाह रहता था और तिरदस-कला उसके साथ भी रमण करती थी ॥ २ ॥ हींग लगाकर स्त्री ने चोर लगा दिये जो प्रसन्न मन से शाह के पास आ पहुँचे। इधर शाह को स्त्री ने तुरन्त खबर कर दी कि हे मित्र ! तुम्हारे यहाँ चोरी हो रही है ॥ ३ ॥ शाह तब चोर-चोर पुकार उठा और अपने आधे द्रव्य के बारे में भी बता गया। दोनों ने इस स्त्री को मित्र माना और दोनों में से कोई भी मूर्ख भेद न जान सका ॥ ४ ॥ शाह से लूटा आधा माल चोरों ने उसे दे दिया और इस प्रकार दोनो ने उसे अपना हितैषी माना और किसी भी मूर्ख ने बात पर

इह चरित्र ते दोऊ भुलाए। तसकर कहैं हमारी नारी। शाहु लख्यो मोरी हितकारी ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ चंचलान के चरित कौ सकत न कोऊ पाइ। वह चरित्र ताकौ लखै जाके स्याम सहाइ ॥ ७ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप सबादे इक सौ तिरानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ १९३ ॥ ३६३३ ॥ अफजूं ॥

अथ इक सौ चुरानवों चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ देवरान हंडूर को राजा एक रहै। नारा को होछा घनो सभ जग ताँहि कहै ॥ १ ॥ एक दिसारिन सौ रहै ताकी प्रीति अपार। तिन न बुलायो धाम को आपु गयो बिसंभार ॥२॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जब आयो न्रिप धाम दिसारिनि जानियो। निजु पति सौ सभही तिन भेद बखानियो। खात बिखै राजा को गहि तिन डारियो। हो पकरि पान्हही हाथ बहुत बिधि मारियो ॥ ३ ॥ प्रथम केल करि न्रिप कौ धाम बुलाइयो। बनी न तासौ पति सो भेद जताइयो। पन्हिन

विचार नहीं किया ॥ ५ ॥ "चोर को लगाया और पहरेदार को जगाया" के प्रपंच से दोनों को भ्रम में डाल दिया। चोर सोचते थे यह स्त्री हमारी है और शाह सोचता था कि मेरी हितैषिणी है ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ स्त्रियों के चरित्रों को कोई भी नहीं जान सकता है। इन्हें तो वही जानें जिसकी भगवान सहायता करें ॥ ७ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में एक सौ तिरानवेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ १९३ ॥ ३६३३ ॥ अफजू ॥

एक सौ चौरानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ हंडूर का राजा देवराज था, जिसे सभी लोग जानते थे कि यह लँगोट का ढीला था अर्थात् कामी था ॥ १ ॥ उसकी एक परदेसन से घनी प्रीति थी। उसने उसे तो घर बुलाया नहीं अपितु स्वयं उसके पास गया ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जब विदेशी स्त्री ने राजा को घर में आ चुके देखा तो उसने अपने पति से सारा रहस्य कह दिया। उसने राजा को पकड़कर खड्डे में डाल दिया और जूता पकड़कर उसे बहुत मारा ॥ ३ ॥ पहले तो क्रीडा कर राजा को घर पर बुलाया। जब उससे ठीक नहीं बनी

मारि खत डार उपर कांटा दए। हो चित मौ त्रास बिचारि पुरखु त्रिय भजि गए॥ ४॥ ॥ चौपई॥ प्रात सभै खोजन न्रिप लागे। रानिन सहित शोक अनुरागे। खतिया परे रावजू पाए। तह ते काढि धाम लै आए॥ ५॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे इक सौ चुरानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ १९४॥ ३६३८॥ अफजूं॥

अथ इक सौ पचानवों चरित्र कथनं॥

॥ दोहरा॥ नौकोटी मरवार को जसवंतसिंघ नरेस। जाकी मानत आनि सभ रघुबंसीस्वर देस॥ १॥ ॥ चौपई॥ मानमती तिह की बर नारी। जनुक चीर चंद्रमा निकारी। बितन प्रभा दूजी तिह रानी। जा सम लखी न किनूँ बखानी॥ २॥ काबल दरो बंद जब भयो। लिखि ऐसे खाँ मीर पठयो। अवरंग बोलि जसबंतहि लीनो। तवनै ठौर भेजिकै दीनो॥३॥ ॥ अड़िल्ल॥ छोरि जहानाबाद तहाँ जसवंत गयो। जो कोऊ याकी भयो सँघारत तिह भयो।

तो पति को भेद बता दिया। जब उसे जूतों से मारकर खड्डे में डालकर ऊपर से काँटे डाल दिए और फिर डरते हुए वह स्त्री भाग गई॥ ४॥ ॥ चौपाई॥ प्रात: सभी राजा को ढूँढ़ने लगे और रानियों-सहित शोकपीड़ित हो उठे। उन्होंने खड्डे में पड़े राजा को देखा और उसे निकालकर घर ले आए॥ ५॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में एक सौ चौरानवेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ १९४॥ ३६३८॥ अफजू॥

एक सौ पंचानवेवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा॥ नौकोटी मारवाड़ का राजा जसवंतसिंह था, जिसे सारा देश रघुवंशी मानकर उसकी अधीनता स्वीकार करता था॥ १॥ ॥ चौपाई॥ उसकी सुन्दर नारी मानमती थी जो मानों चन्द्रमा को चीरकर निकाली गई थी। बितनप्रभा उसकी दूसरी रानी थी, जिसके समान कोई अन्य स्त्री देखी-सुनी नहीं गई थी॥ २॥ काबुल का दर्रा जब बन्द हो गया तो मीर खाँ ने लिख भेजा तब औरंगजेब ने जसवंतसिंह को बुलाया और उस स्थान की ओर भेज दिया ३ अड़िल्ल जब छोड़

आइ मिल्यो (सू०पं०१०८५) ता कौ सो लियो उबारिकै। हौ डंडिया बंगसतान पठान सँघारिकै ॥ ४ ॥ जीव अनमनो कितक दिनन ता को भयो। ताते जसबंतसिंघ न्रिपति सुर पुर गयो। द्रुमति दहन अधिकतमप्रभा तह आइकै। हो तरुनि इत्यादिक त्रिय सभ जरी बनाइकै ॥ ५ ॥ डीक अगनि की उठी रानियन यौ कियो। नमशकार करि सपत प्रदच्छिन कौ दियो। कूदि कूदि करि परी नरेर नचाइकै। हो जनुक गंग के मांझ अपछरा आइकै ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ बिपनकला दुति मान मति चली जरन के काज। दुरगदास सुनि गति तिसै राख्यो कोटि इलाज ॥ ७ ॥ मेड़तेस थारे उदर सुनि रानी मम बैन। मैनि मिलौ हजरति तनैं जासाँ अपने ऐन ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ तब हाडी पति सौ नहि जरी। लरिकन की आसा जिय धरी। छोरि पिशौर दिल्ली कौ आए। शहिर लहौर पूत दो जाए ॥ ९ ॥ जब रानी दिल्ली मौ गई। हजरति को ऐसी सुधि भई। सोऊअन कह्यो इनै मुहि दीजै। तुम मनसब जसवंत को लीजै ॥ १० ॥ रनियन कौ सऊअन नहि दयो। हजरति सैन पठावत भयो। रन

कर जसवंतसिंह वहाँ गया और जो सामने अड़ा उसे मारता गया। जो उससे आ मिला उसे उसने बचा लिया और डंडिया, बंगस्तान के पठानों का संहार किया ॥ ४ ॥ कई दिनों बाद जसवंतसिंह का मन अनमना हो गया और वह स्वर्गपुरी सिधार गया। द्रुमतिदहन और अधिकतमप्रभा वहाँ आकर अन्य तरुण स्त्रियों-समेत सब जल मरीं ॥ ५ ॥ आग की लपटें उठी, रानियों ने प्रणाम कर सात फेरे लगाए और नारियल नचाती हुई वे इस प्रकार अग्नि में कूद पड़ीं मानों गंगा में अप्सराएँ कूद गई हों ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ बिपनकला और मानमती भी जलने के लिए चलीं, परन्तु दुर्गादास ने सैकड़ों उपाय कर उन्हें रोका ॥ ७ ॥ उसने कहा कि तुम्हारे गर्भ में मेड़ता का (भावी) नरेश है, पर वह कहने लगी कि मैं बादशाह से नहीं मिलूँगी और अपने घर जाऊँगी ॥ ८ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब हाड़ी रानी पति के साथ नहीं जली और मन में पुत्रों की आशा लगायी। वे पेशावर छोड़कर दिल्ली की तरफ़ आए और लाहौर शहर में दो पुत्रों को जन्म दिया ॥ ९ ॥ जब रानी दिल्ली पहुँची तो बादशाह को पता लगा। शाह ने कहा कि इनको मेरे हवाले कर दो और जसवंतसिंह का मनसब तुम ले लो १० उस दुर्गादास ने रानियाँ शाह का न्‍ही दी और शाह ने सेना चढ़ा दी तब

छोरै इह भाँति उचारो। नर को भेस सभै तुम धारो॥ ११॥ खान पुलाद जबै चढ़ि आए। तब रनियन यौ बचन सुनाए। हमै नगज सैना मौ दीजै। हिंदू धरम राखि करि लीजै॥१२॥ नावन कौ सुभ वारो दियो। बालन सहित देस मगु लियो। रजपूतन रूमाल फिराए। हम मिलने हजरति कौ आए॥ १३॥ तिनकौ किनी न चोटि चलाई। इह रानी हजरति पह आई। तुपक तले तें जबै उबरे। तबही काढि क्रिपानै परे॥ १४॥ जौनै सूर सरोही बहैं। जेबो टिकै न बखतर रहैं। एकै तीर एक असवारा। एकै घाइ एक गज भारा॥ १५॥ जा पर परैं खड़ग की धारा। जनुक बहे बिरछ पर आरा। कटि कटि सुभट धरनि पर परहीं। चट पट आनि अपच्छरा बरहीं॥ १६॥ ॥ दोहरा॥ रन छोरैं रघुनाथसिंघ कीनो कोप अपार। शाह झरोखा के तरे बाहत भे हथियार॥१७॥ ॥भुजंग छंद॥ कहूँ धोप बाँकै कहूँ बान छूटैं। कहूँ बीर बानीन के (मू०ग्रं०१०८६) बकत्र टूटैं। कहूँ बाज मारे गजाराज जूझे। कटे कोटि

रणछोड़ ने यह कहा कि तुम सब पुरुष-वेश धारण करो॥ ११॥ फ़ौलादी खान वीर जब चढ़ आए तो रानियों ने कहा कि हमें श्रेष्ठ सेना के साथ रखो और हिन्दू-धर्म की रक्षा करो॥ १२॥ नाउन (नाई-स्त्री) को खूब धन देकर और बालकों-सहित अपने देश का रास्ता पकड़ा दिया। तब राजपूतों ने रूमाल हिलाए कि हम बादशाह से भेंट करने आए हैं॥ १३॥ उन पर किसी ने वार नहीं किया और इस तरह ये रानियाँ बादशाह के पास आ पहुँचीं। जब वीर बंदूक़ से बचता है तभी हाथ से कृपाण निकाल पाता है॥ १४॥ अब शूरवीरों की तलवारें चलने लगीं, जिसमें न तो वीर और न उसका जिरह-बख्तर टिकता था। एक तीर एक सवार के लिए और एक वार एक हाथी के लिए काफ़ी था॥ १५॥ जिस पर खड़ग की धार पड़ती थी ऐसा लगता था मानों वृक्ष पर आरा चला हो। वीर कट-कटकर धरती पर गिरते थे और शीघ्र ही अप्सराएँ उनका वरण कर लेती थीं॥१६॥ ॥ दोहा॥ रघुनाथसिंह क्रुद्ध हो युद्ध छोड़ रहा था। शाह झरोखे में बैठा था और बाहर शस्त्र चल रहे थे॥ १७॥ ॥ भुजंग छंद॥ कहीं बंदूक़, कहीं बाण छूट रहे थे और बाण-चालकों के मुँह फूट रहे थे। कहीं अश्व मारे गए और कहीं हाथी जूझ गए अनेकों ही योद्धा कट गए उनकी गिनती

जोधा नहीं जात बूझे ॥ १८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ खाइ टाँक आफूऐ राज सभ रिसि भरे। पोसत भाँग शराब पान करि अति लरे। शाह झरोखा तरै चरित्त दिखाइकै। हो रन छोरा सुरलोक गए सुख पाइकै ॥ १९ ॥ रन छोरहि रघुनाथ निरखि करि रिसि भर्‌यो। ताते तुरै धवाइ जाइ दल मै पर्‌यो। जाकौ बहै सरोही रहै न बाज पर। हो गिरै मूरछना खाइ तुरत सो भूमि पर ॥ २० ॥ धनि धनि औरंग शाह तिनै भाखत भयो। घेरहु इनको जाइ दलहि आइस दयो। जो ऐसे दो चार और भट धावही। हो बंक लंकगढ़ जीति छिनिक मो ल्यावही ॥२१॥ हाँकि हाँकि करि महाँबीर सूरा धए। ठिला ठिली बरछिन सौ करत तहाँ भए। कड़ा कड़ी मैदान मचायो आइ कर। हो भाँति भाँति बादित्र अनेक बजाइ कर ॥ २२ ॥ तुमल जुद्ध मच्चत तह भयो। लै रघुनाथ सैन समुहयो। भाँति भाँति सो बजे नगारे। खेति मंडि सूरमा हकारे ॥ २३ ॥ गहि गहि शस्त्र सूरमा धाए। देव अदेव बिलोकन आए। जा पर दोइ करंधर धरैं। एक सुभट ते दो दो करै ॥ २४ ॥ जाकै अंग सरोही बही।

नहीं हो सकती थी ॥ १८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सब राजा अफ़ीम का सेवन कर क्रुद्ध हो उठे। वे पोस्त, भाँग, शराब आदि का पान कर खूब लड़े। शाह को झरोखे के नीचे अपना चरित्र दिखाते हुए रणछोड़ सुखपूर्वक सुरलोक पहुँच गए ॥ १९ ॥ रणछोड़ को (मृत) देखकर रघुनाथ क्रुद्ध हो उठा और घोड़ा दौड़ाकर दल में जा घुसा। जिसे सिरोही नामक तलवार लग जाती थी वह घोड़े पर नहीं रहता था और मूर्च्छित हो तुरन्त भूमि पर गिर पड़ता था ॥ २० ॥ औरंगज़ेब भी उन्हें धन्य-धन्य कहता था और अपनी सेना को आदेश देता था कि इनको तुरन्त घेरो। यदि दो-चार ऐसे अन्य वीर हों तो क्षण भर में लंका जीतकर आ जायँ ॥ २१ ॥ शूरवीर ललकार-ललकारकर आगे बढ़ रहे थे और बर्छियों से ठेल-ठाल कर रहे थे। वहाँ अनेकों प्रकार के वाद्य बजाकर उन्होंने कड़कड़ाहट के साथ युद्ध शुरू कर दिया ॥ २२ ॥ वहाँ भीषण युद्ध हुआ और रघुनाथ सेना लेकर सामने आ डटा। वहाँ भाँति-भाँति के नगारे बज उठे और युद्धस्थल में घेरा डालकर शूरवीर ललकारने लगे ॥ २३ ॥ शस्त्र पकड़-पकड़कर शूरवीर दौड़े और देव-अदेव सब उन्हें देखने आए जिस पर दो हाथ पड़ते थे वह वीर एक से दो टुकड़ों में बँट जाता था २४ जिसके अंग पर सिरोही कृपाण गिर जाती थी उसकी

ता की ग्रीव संग नहि रही । जाके लग्यो कुह कतो बाना । पलक एक मै तजे पराना ॥ २५ ॥ जाके घाइ गुरज को लाग्यो । ता को प्रान देह तजि भाग्यो । हाहाकार पखरिया करही । राठौरन के पाले परही ॥२६॥ ॥ सवैया ॥ आनि परे रिसि ठानि रठौर चहूँदिसि ते कर आयुध लीने । बीर करोरिन के सिर तोरि सु हाथन को हलकाहनि दीने । रुंड परे कहूँ तुंड त्रिपान के झुंड हयान के जात न चीने । कंबर के बहु टंबर अंबर अंबर छीनि दिगंबर कीने ॥ २७ ॥ ॥ चौपई ॥ ऐसी भाँति सुभट बहु मारे । रघुनाथो सुरलोक सिधारे । स्वामि काज के प्रनहि निबाह्यो । हडियहि पुरे जोध पहुचायो ॥ २८ ॥ ॥ दोहरा ॥ अति बरिकै भारी जुझ्यो तनक न मोर्‌यो अंग । सु कबि काल पूरन भयो तब ही कथा प्रसंग ॥ २९ ॥ १ ॥ (मू०ग्रं०१०८७)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे इक सौ पचानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ १९५ ॥ ३६६७ ॥ अफजूं ॥

गर्दन साथ नहीं रहती थी । जिसको साँय-साँय करता एक बाण लग जाता था वह एक ही पल में प्राण छोड़ देता था ॥ २५ ॥ जिसको गदा का वार लगा उसके प्राण भी देह छोड़कर भाग जाते थे । सब घुड़सवार हाहाकार कर रहे थे, क्योंकि उनका पाला राठौरों से पड़ गया था ॥ २६ ॥ ॥ सवैया ॥ राठौर चारों दिशाओं से क्रुद्ध हो शस्त्र हाथ में लेकर आ टूट पडे । उन्होंने अनेकों वीरों के सिर तोड़ दिए और अनेकों को हाथों से काट दिया । कहीं राजाओं के सिर पड़े थे और घोड़ों के झुंड के झुंड पड़े पहचाने नहीं जा रहे थे । कंबलों के समान मोटे वस्त्र छीन-छीनकर फ़ौजी वस्त्र-विहीन किये जा रहे थे ॥ २७ ॥ ॥ चौपाई ॥ इस प्रकार अनेक वीरों को मारकर रघुनाथ भी सुरलोक सिधार गए । स्वामी के कार्य के लिए उसने प्रण निभाया और हाडी रानी को जोधपुर पहुँचाया ॥ २८ ॥ ॥ दोहा ॥ वह अत्यन्त बल से जूझा और उसने तनिक भी अंग नहीं मोड़ा । इस प्रकार कवि के कथनानुसार यह प्रसंग पूर्ण हुआ ॥ २९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में एक सौ पंचानबेवें चरित्र की सुभ सत समाप्ति ॥ १९५ ॥ ३६६७ ॥ अफ्जू ॥

अथ इक सौ छिआनवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ चंद्रपुरी नगरी इक सुनी। अप्रतिमकला रानी बहु गुनी। अंजनराइ बिलोक्यो जबही। हरअरि सर मार्यो तिह तबही ॥ १ ॥ ता को धाम बोलि करि लियो। कामकेल तासौ द्रिड़ कियो। बहुरि जार इह भाँति उचारो। जिनि मति लखि पति हनै तुमारो ॥ २ ॥ ॥ त्रियो वाच ॥ तुम चित्त मै नहि त्रास बढावो। हम सौ द्रिड़ करि केल कमावो। मैं तुहि एक चरित्र दिखैहौ। ताते तुमरो शोक मिटैहौ ॥ ३ ॥ ॥ दोहरा ॥ पति देखत तो सौ रमौ ग्रहि को दरबु लुटाइ। न्रिप को सीस झुकाइहौ पगन तिहारे लाइ ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ तुम सभ जोग भेस कौ करो। मोरी कही कान मै धरो। मूक मंत्र कछु याहि सिखावहु। जाते याको गुरू कहावहु ॥ ५ ॥ तब तिन काम जार सोऊ कियो। मूक मंत्र राजा को दियो। आपन ता को गुरू कहायो। भेद अभेद राव नहि पायो ॥ ६ ॥ जब राजा अंतहपुर आए। तब रानी यौ बचन सुनाए।

एक सौ छियानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ चन्द्रपुरी नामक नगरी में अप्रतिमकला गुणज्ञ रानी थी। उसने जब अंजनराय को देखा तो कामदेव ने तुरन्त उसे बाण मार दिया ॥ १ ॥ उसे उसने घर बुला लिया और उससे कामक्रीड़ा की। फिर उस यार ने कहा कि कहीं तुम्हारा पति देखकर मुझे मार न डाले ॥ २ ॥ ॥ त्रिया उवाच ॥ तुम मन में डरो मत और हमसे दृढ़तापूर्वक केलिक्रीड़ा करो। मैं तुम्हें एक प्रपंच दिखाऊँगी और तुम्हारा शोक दूर करूँगी ॥ ३ ॥ ॥ दोहा ॥ मैं पति के देखते-देखते द्रव्य लुटाकर तुमसे रमण करूँगी और राजा का सिर झुकाकर तुम्हारे चरणों पर रखूँगी ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ तुम मेरी बात सुनो और योगी का वेश धारण करो। कुछ गुप्त मंत्र सिखा दो और फिर इसके गुरू कहलाओ ॥ ५ ॥ तब उस यार ने वही काम किया और राजा को एक गुप्त मंत्र दिया। वह स्वयं उसका गुरु कहलाने लगा और राजा इस भेद-अभेद को नहीं समझ सका ६ जब राजा अन्तःपुर में आया तो रानी ने कहा कि गुरु यदि भ्रम में भी डाले तो भ्रम नहीं करना

गुर जु भ्रमावै राइ न भ्रमियै। भली बुरी गुर करै सु छमियै ॥ ७ ॥ जो गुर ग्रहि को दरब चुरावै। सौक त्रिया तन केल कमावै। जौ कुपि करै खड़ग को वारा। जो सिख भ्रमत लहै सो मारा ॥ ८ ॥ जिन नै मंत्र कछू जिह दयो। तिन गुर मोल सिक्ख कौ लयो। भगनि मात जौ रमत निहरीयै। सीस झुकाइ रोस नहि करियै ॥ ९ ॥
॥ दोहरा ॥ सभा परब भीतर सुनी जम की कथा रसाल। ब्यासासिन सुक बकत्र ते सो तुहि कहौ उताल ॥ १० ॥
॥ दोहरा ॥ जम राजा रिखि एक को घर मै कियो पयान। मात भगनि रिखि बाल सौ रति मानी रुचि मान ॥ ११ ॥
॥ चौपई ॥ जब रिखि चलि अपुने ग्रहि आयो। त्रिय सौ रमत पुरख लखि पायो। धरम बिचार न तिह कछु कहियो। तिह पग माथ छुआवन चहियो ॥ १२ ॥ सिर सौ चरन छुअत धर रहियो। धन्य धन्य ता कौ जम कहियो। मैहौ काल जगत जिह घायो। तेरो धरम बिलोकन आयो ॥ १३ ॥ सुनत हुतौ तैसो तुहि देख्यो। धरम सकल तुमरौ अवरेख्यो।

चाहिए और यदि कुछ बुरा-भला भी करे तो उसे नज़रअंदाज़ करना चाहिए ॥ ७ ॥ जो गुरु घर का द्रव्य भी चुरा ले, स्त्री के साथ केलिक्रीड़ा भी कर ले, खड़ग से वार भी कर दे और शिष्य भ्रम में पड़ जाय तो समझो मारा गया ॥ ८ ॥ जिसनें किसी को कोई मंत्र दे दिया है तो उस गुरु ने तो मान लो शिष्य को मोल ले लिया है। उसे यदि माँ-बहन के साथ रमण करते भी देख लिया जाय तो सिर झुका लेना चाहिए और रुष्ट नहीं होना चाहिए ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ सभापर्व में यम की मनोहर कथा है, जिसे व्यास गद्दी पर बैठनेवाले कथावाचक से सुना है, उसे मैं तुमसे कहती हूँ ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ यमराज एक ऋषि के घर गया और वहाँ माता, बहन और बालिका से रुचिपूर्वक रतिक्रीड़ा की ॥ ११ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब ऋषि अपने घर आया तो उसने पत्नी से रमण करते एक पुरुष को देखा। उसने धर्म का ध्यान कर उसे कुछ नहीं कहा और उसके चरण माथे से लगाने चाहे ॥ १२ ॥ चरणों को सिर में लगाकर वह बैठा रहा। यम ने भी उसे धन्य-धन्य कहा और बताया कि मैं काल हूँ जिसने जगत् को नष्ट कर डाला है। मैं तेरा धर्म देखने आया था ॥ १३ ॥ मैंने जैसा तुम्हें सुना था वैसा ही पाया और तुम्हारे धर्म का अवलोकन किया है तेरे मन में कोई कपट

तोरे बिखै कपट कछु नाही। यौ मैं लह्यो साचु मन माही ॥ १४ ॥ ॥ दोहरा ॥ निरख सत्तता बिप्र की मन मै मोद बढाइ। जियन मुकति ता कौ दियो काल दान बर दाइ ॥ १५ ॥ (मू०ग्रं०१०८८) न्रिप कौ प्रथम प्रबोध करि जारहि लयो बुलाइ। प्रगट खाट डसवाइकै भोग कियो सुख पाइ ॥ १६ ॥ ॥ चौपई ॥ तब लौ आप राव जू आयो। त्रिय सौ रमत जार लखि पायो। कथा सँभारि वहै चुप रहियो। तिनकौ कोप बचन नहि कहियो ॥ १७ ॥ चरन छुअन ता के चित चहियो। वैसहि जार भजत त्रिय रहियो। तब यौ जारि काढि करि दियो। मूरख सीस न्याइ करि गयो ॥ १८ ॥ जढ़ जान्यो मुहि गुरू भ्रमायो। भेद अभेद कछू नहि पायो। इह चरित्र अबला छलि गई। रति करि माथ टिकावत भई ॥ १९ ॥ ॥ दोहरा ॥ पति देखत रति मानकै न्रिप को माथ टिकाइ। धन दीनो सभ प्रीतमहि ऐसो चरित दिखाइ ॥ २० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे इक सौ छिआनवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ १९६ ॥ ३६८७ ॥ अफजूं ॥

नहीं है, यह मैंने सत्य रूप में मान लिया है ॥ १४ ॥ ॥ दोहा ॥ विप्र की सत्यता देखकर मन में प्रसन्न होकर काल ने उसे जीवन-मुक्त का वरदान दिया ॥ १५ ॥ इस प्रकार राजा को पहले समझाकर फिर उसने प्रेमी मित्र को बुला लिया और सबके सामने पलंग बिछवाकर सुखपूर्वक उससे संभोग किया ॥ १६ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब तक राजा स्वयं आ गया और उसने पत्नी के साथ उसके प्रेमी को रमण करते देखा। वह कथा को स्मरण कर चुप लगा गया और उसे कोई भी क्रुद्ध वचन नहीं कहा ॥ १७ ॥ वह भी मन में उसके चरण छूने की इच्छा करने लगा और वह यार वैसे ही स्त्री के साथ रमण करता रहा। तब उस प्रेमी ने उसे बाहर निकाल दिया और मूर्ख (राजा) सिर झुकाकर चला गया ॥ १८ ॥ उस मूर्ख ने समझा कि मुझे गुरु ने भ्रम में डाला है (और मेरी परीक्षा की है)। वह भेद-अभेद कुछ नहीं समझ सका। इस प्रपंच से अबला छल गई और रतिक्रीड़ा कर शीश झुकवा दिया ॥ १९ ॥ ॥ दोहा ॥ पति के देखते-देखते रतिक्रीड़ा की, राजा का सिर झुकवाया और प्रपंच बनाकर अपने प्रियतम को धन दे दिया ॥ २० ॥ १ ॥

श्री के त्रिया चरित्र के मन्त्री भूप-सवाद में एक सौ चरित्र की शुभ सत समाप्ति १९६ ३६८७ । अफजू ।

अथ इक सौ सतानवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ त्रिय रनरंगमती इक रहियै । ता सम अवर न रानी लहियै । अप्रमान तिह प्रभा बिराजै । जाको निरख चंद्रमा लाजै ॥ १ ॥ एक दुरग तिन बडौ तकायो । यहै रानियहि मंत्रुपजायो । डोरा पाँच सहंस्र सवारे । ता मै पुरख पाँच सै डारे ॥ २ ॥ कछू आपकौ त्रास जतायो । एक दूत द्रुगशाहि पठायो । ठउर कबीलन कौ ह्याँ पाऊँ । मैं तुरकन सौं खड़्ग बजाऊँ ॥ ३ ॥ ते सुनि बैन भूलि ए गए । गढ़ मै पैठन डोरा दए । कोट द्वार के जबै उतरे । तबही काढि क्रिपानै परे ॥ ४ ॥ समुह भयो तिनसै सो मार्यो । भाजि चल्यो सो खेदि निकार्यो । इह चरित्र दुरगति द्रुग लियो । तिह ठाँ हुकम सु अपनो कियो ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे इक सौ सतानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ १९७ ॥ ३६९२ ॥ अफजूं ॥

एक सौ सत्तानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ रणरंगमती नामक एक स्त्री थी जिसके समान अन्य कोई रानी नहीं थी। उसकी अपरिमित रूप से विराजमान शोभा को देखकर चन्द्रमा भी लज्जित होता था ॥ १ ॥ उसने एक बड़ा सा क़िला देखा और मन में (उसे लेने का) विचार किया। उसने पाँच हज़ार डोलियाँ सजायी और उनमें पाँच सौ पुरुष बैठा दिए ॥ २ ॥ कुछ अपनी मुसीबत की बात कह उसने एक दूत दुर्गपति के पास भेजा और कहलवाया कि अपने कबीले के लिए यदि यहाँ जगह पा जाऊँ तो मैं मुगलों से लोहा लेने में सक्षम हूँ ॥३॥ वे यह बातें सुनकर भ्रम में आ गए और क़िले में डोलियाँ बैठाने की आज्ञा दे दी। जब ये मुख्य द्वार से अंदर उतरे तो इन सबने कृपाणें निकाल लीं ॥ ४ ॥ जो सामने आया उसे मार डाला और जो भागा उसे खदेड़ निकाला। इस प्रपंच से दुर्गति ने दुर्ग ले लिया और उस स्थान पर अपना आदेश चलाया ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में एक सौ सत्तानबेवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति १९७ । ३६९२ अफज़ू

अथ इक सौ अठानवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ संख कुअर सुंदरिक भनिज्जे । एक राव के साथ रहिज्जे । एक बोलि तब सखी पठाई । सोत नाथ सो जात जगाई ॥ १ ॥ ताहि जगता नाथ तिह जाग्यो । पूछन तवन दूतियहि लाग्यो । याहि जात लै कहाँ जगाई । तब तिन यौ तिह साथ जताई ॥ २ ॥ मोरे नाथ जनाने गए । चौकी हितहि बुलाबत भए । ताते मै लैने इह आई । (मू०ग्रं०१०८१) सो तुम सौ मैं भाखि सुनाई ॥ ३ ॥ ॥ दोहरा ॥ सोत जगायो नाथ तिह भुज ताकी गहि लीन । आनि मिलायो न्रिपति सौ सक्यो न जड़ कछु चीन ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे इक सौ अठानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ १९८ ॥ ३६९६ ॥ अफजूं ॥

अथ इक सौ निनानवों चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ रतनसैन राना रहै गड़ि चितौर के माँहि । रूप सील सुचि ब्रतन मै जा सम कह जग नाहि ॥ १ ॥

एक सौ अट्ठानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ शंखकुँवरि नामक एक सुन्दरी थी जो एक राजा के साथ रहती थी। एक सखी ने उसे बुलाया और पति के साथ सोती हुई को जा जगाया ॥ १ ॥ उसे जगाते ही पति भी जग गया और उस दूती से पूछने लगा कि इसे जगाकर कहाँ ले जा रही हो ? तब उसने उत्तर दिया ॥ २ ॥ मेरे स्वामी (राजा) जनानखाने में गए हैं और इसे पहरे के लिए बुलवाया है। इसीलिए मैं लेने आई हूँ और तुम्हें मैंने बता दिया है ॥ ३ ॥ ॥ दोहा ॥ उसकी भुजा पकड़कर (वह ले गई) और पति को भी सोते से जगा दिया। उसे आकर राजा से मिला दिया और वह मूर्ख कुछ न समझ सका ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में एक सौ अट्ठानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ १९८ ॥ ३६९६ ॥ अफजू ॥

एक सौ निन्नानबेवाँ चरित्र-कथन

दोहा राजा रतनसेन चित्तौड़ में रहता था और रूप शील व्रत

॥ चौपई ॥ अधिक सुआ तिन एक पड़ायो । ताहि सिंगला दीप पठायो । तह ते एक पदमिनी आनी । जाकी प्रभा न जात बखानी ॥ २ ॥ जब वह सुंदरि पान चबावै । देखी पीक कंठ मै जावै । ऊपर भवर भ्रमहि मतवारे । नैन जान दोऊ बने कटारे ॥ ३ ॥ ता पर राव असकति अति भयो । राज काज सभही तजि दयो । ताकी निरखि प्रभा को जीवै । बिनु हेरे तिह पान न पीवै ॥ ४ ॥ ॥ दोहरा ॥ राघौ चेतनि दो हुते मंत्री ताहि अपार । निरखि राव तिह बसि भयो ऐसो कियो बिचार ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ ता की प्रतिमा प्रथम बनाई । जा सम देव अदेव न जाई । जंघहु ते तिल तिह लिखि डर्‍यो । अतिभुत करम मंत्रियन कर्‍यो ॥ ६ ॥ जब बचित्र न्रिप चित्र निहारै । बैठि सभा कछु काज सवारै । ता के तिलहि बिलोक्यो जबही । भरम बढ्यो राजा के तबही ॥ ७ ॥ तब न्रिप तिन मंत्रिन गहि मार्‍यो । इन रानी सौ काज बिगार्‍यो । दिब्य द्रिशटि इन के कत होई । केल करे बिनु लखै न कोई ॥ ८ ॥ जब मंत्री दोऊ न्रिप

पूजा में उसके समान अन्य कोई नहीं था ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसने एक तोते को अत्यधिक सिखाया और सिंहलद्वीप भेजा । वहाँ से एक पद्मिनी (स्त्री) लाया जिसकी प्रभा का वर्णन नहीं किया जा सकता ॥ २ ॥ जब वह सुन्दरी पान चबाती थी तो पीक उसके गले में दिखाई पड़ती थी । उस पर भौंरे मतवाले होकर मँड़राते रहते थे और उसकी आँखें मानों कटारियाँ थीं ॥ ३ ॥ राजा उस पर अत्यन्त आसक्त हो गया और उसने राज-काज सभी त्याग दिया । वह उसी के रूप को देखकर जीवित रहता और बिना उसे देखे पानी न पीता ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ राघव और चेतन दो उसके मंत्री थे । उन्होंने राजा को उसके वशीभूत देखकर यह विचार किया ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ पहले उसकी प्रतिमा बनाई जो देव-अदेव सबसे सुन्दर थी । उन्होंने उसकी जंघाओं पर एक तिल भी बना डाला । मंत्रियों ने यह अद्‌भुत कार्य किया ॥ ६ ॥ राजा ने जब वह विचित्र चित्र देखा तो उस समय राजा दरबार में राजकाज कर रहा था । उसने जब तिल देखा तो उसका संदेह बढ़ गया ॥ ७ ॥ तब राजा ने उन मंत्रियों को यह सोचकर मार डाला कि इनका रानी के साथ कोई ग़लत संबंध है । इनको दिव्य-दृष्टि कहाँ से हो सकती है केलिक्रीड़ा किये बिना भला यह तिल कोई कैसे देख सकता है ८ जब मंत्री ने दोनो मंत्रियो को मार डाला तो

मार्‌यो । शाह तनै तिन पूत पुकार्‌यो । एक चित्त उर पदुमिनि नारी । जा सम कान सुनी न निहारी ॥ ९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तनिक भनक पदुमिनि जब शह कानन परी । अमिल सैन लै संग चढ़त तित कौ करी । गड़हि गिरद करि जुद्ध बहुत भातिन कर्‌यो । हो जैन लावदी तबै चित्त मै रिसि भर्‌यो ॥१०॥ ॥ चौपई ॥ निजु करि लाइ आँब तिन खाए । गढ़ चितौर हाथ नहि आए । तब तिन शाह दगा यौ कियो । लिखिकै लिखो पठै इक दियो ॥ ११ ॥ सुनु राजा जी मैं अति हारो । अब छोडत हौ दुरग तिहारो । एक स्वार सौ मैं ह्याँ आऊँ । गड़िहि निहारि घरहि (पू०पृ०१०६०) उठि जाऊँ ॥ १२ ॥ राना बात तबै यह मानी । भेद अभेद की रीति न जानी । एक स्वार संग लै तह गयो । ता कौ संग अपने करि लयो ॥ १३ ॥ जो जो द्वार उतरत गढ़ आवै । तही तही सिरपाउ बधावै । सपत द्वार उतरत जब भयो । तबही पकरि नराधिप लयो ॥ १४ ॥ ऐसी भाँति शाहि छल कीनो । मूरख भेद अभेद न चीनो । जब लंघि सभ द्रुग

उनके पुत्र बादशाह के पास पुकार लगाने लगे कि पद्मिनी चित्तौड़ में रहने वाली इतनी सुन्दर नारी है कि जिसके समान न कान से सुना गया होगा और न आँख से देखा गया होगा ॥ ९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जब पद्मिनी की थोड़ी सी भनक भी शाह के कानों में पड़ी तो उसने अपरिमित सेना लेकर उस ओर चढ़ाई कर दी । गढ़ के आस-पास उसने भीषण युद्ध किया और मन मे अत्यन्त क्रुद्ध हो उठा ॥ १० ॥ ॥ चौपाई ॥ अपने हाथों के रोपे पौधों मे उसने आम खाने शुरू कर दिये अर्थात् कितना ही समय बीत गया परन्तु चित्तौड़ उसके हाथ नहीं लगा । तब उस शाह ने एक छल किया और एक पत्र लिखकर भेजा ॥ ११ ॥ हे राणा ! सुनो, मैं हार गया हूँ और अब तुम्हारा क़िला छोड़ रहा हूँ । मैं एक सवार के साथ आऊँगा और क़िला देखकर वापस चला जाऊँगा ॥ १२ ॥ राणा ने यह बात मान ली और भेद-अभेद की बात नहीं समझी । वह एक सवार को लेकर वहाँ गया और उसे अपने साथ रखा ॥१३॥ अब जब वह वापस क़िले के द्वारों से उतरता, जिस-जिस द्वार से जाता उसका सम्मान होता । जब वह (राजा-सहित) सातवें दरवाज़े से उतरा तो उसने राजा को पकड़ लिया ॥ १४ ॥ इस प्रकार शाह ने छल किया और इस मूर्ख ने रहस्य को नहीं जाना । जब वह सब दुर्ग-द्वारों को पार कर गया तो साथ साथ राजा को भी बाँधकर ले गया १५

द्वारन आयो । तबही बाधि तवन कौ ल्यायो ॥ १५ ॥
॥ दोहरा ॥ जब राना छल सौ गह्यो कह्यो हनत है तोहि ।
नातर अपनी पदुमिनी आनि दीजियै मोहि ॥ १६ ॥
॥ चौपई ॥ तब पदुमिनि इह चरित्र बनायो । गोरा बादिल
निकट बुलायो । तिन प्रति कह्यो कह्यो मुरि कीजै ।
हजरति साथ ज्वाब यौ दीजै ॥ १७ ॥ अशट सहस पालकी
सवारो । अशट अशट ता मै भट डारो । गढ़ लगि लिआइ
सभन तिन धरो । तुम हजरति सौ ऐस उचरो ॥ १८ ॥
एक बस्त्र हमरो तुम लीजै । प्रथम पालकी मै धरि दीजै ।
ताँ पर भवर गुँजारत जैहैं । भेद अभेद लोक नहि पैहैं ॥१९॥
तब गोरै बादिल सोई कियो । जिह बिधि मंत्र पदुमिनी
दियो । गढ़ के लहत डोरिका धरी । पदुमिनि अग्र पालकी
करी ॥ २० ॥ ॥ दोहरा ॥ पदमिनि के पट पर घने भवर
करैं गुंजार लोग सभै पदुमिनि लखै बस्त्र न सकै
बिचारि ॥ २१ ॥ ॥ चौपई ॥ ता मै डारि लुहारिक लयौ ।
ता को बस्त्र तवन पर दयो । छैनी और हथौरा लए । वा
बढई के कर मो दए ॥ २२ ॥ दूत दिलीसहि बचन उचारे ।

॥ दोहा ॥ जब राजा को छल से पकड़ लिया तो कहा कि मैं तुम्हें अभी मार डालूँगा अन्यथा अपनी पद्मिनी मुझे दे दो ॥ १६ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब पद्मिनी ने भी प्रपंच किया और गोरा-बादल नामक वीरों को पास बुलाया। उनसे कहा कि मेरा कहना मानो और बादशाह को यह उत्तर दो ॥ १७ ॥ आठ सहस्र पालकी सँवारो और प्रत्येक में आठ-आठ शूरवीर डाल दो। क़िले के पास लाकर सबको रख दो और तुम शाह से ऐसे कहो ॥ १८ ॥ तुम मेरा एक वस्त्र ले लेना और पहली पालकी में रख देना। उन वस्त्रों पर भौंरें गुजार करेंगे और लोग रहस्य को नहीं समझ पाएँगे ॥ १९ ॥ तब गोरा-बादल ने वही किया जैसे पद्मिनी ने कहा था। क़िले के साथ ही पालकियाँ रख दीं और पद्मिनी की पालकी सबके आगे रख दी ॥२०॥ ॥दोहा॥ पद्मिनी के वस्त्रों पर भौंरें गुंजार कर रहे थे। लोग सभी वहाँ पद्मिनी समझ रहे थे और वस्त्रों को नहीं समझ पा रहे थे ॥ २१ ॥ ॥ चौपाई ॥ उस पालकी में एक लोहार को डाल दिया था और अपने वस्त्र उसी पर डाल दिए थे उस लोहार बढई) के हाथ में छैनी और हथौड़ा था २२
दूत ने दिल्लीश्वर खिल्जी को कहा कि पद्मिनी तुम्हारे

ग्रहि आवत पदुमिनि तिहारे। राना साथ प्रथम मिलि आऊ। बहुरि तिहारी सेज सुहाऊ ॥ २३ ॥ यौ कहि बढी तहा चलि गयो। ता की कटत बेरियै भयो। तिह पालकी प्रथम बैठायो। इह ते ओहि डोरी पहुचायो ॥ २४ ॥ इक ते निकरि अवर मो गयो। अनत तहाँ ते निकसत भयो। इह छल तहाँ पहूँच्यो जाई। तबै दुरग मै बजी बधाई ॥ २५ ॥ गढ़ पर जबै बधाई भई। सऊअन काढि क्रिपानै लई। जा पर पहुच्चि खड़ग कह झार्‌यो। एकै घाइ मारही डार्‌यो ॥ २६ ॥ धुकि धुकि परे धरनि भट भारे। जनुक करवत्तन (मू०ग्रं०१०९१) बिरछ बिदारे। जुझि जुझि मरे अधिक रिसि भरे। बहुरि न दिखयत ताजियन चरे ॥ २७ ॥ ॥ दोहरा ॥ जैन्हलावदी शाह कौ तब ही दयो भजाइ। रतनसैन राना गए गढ़ इह चरित दिखाइ ॥ २८ ॥ गौरा बादिल कौ दियो अति धन छोरि भंडार। ता दिन तै पदुमिनि भए बाढी प्रीति अपार ॥ २९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे इक सौ निंनानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ १९९ ॥ ३७२५ ॥ अफजूं ॥

घर आ रही है। उसने कहा है कि पहले मैं राणा से मिल आऊँ, फिर तुम्हारी शय्या की शोभा बढ़ाती हूँ ॥ २३ ॥ यह कहकर वह लोहार (लोहा काटनेवाला) वहाँ चला गया और राजा की बेड़ियाँ काटने लगा। फिर उसे पहली पालकी में बैठाया और पहुँचा दिया ॥ २४ ॥ वह एक से दूसरी डोली में होता हुआ वहाँ से अन्यत्र निकल गया और छलपूर्वक वहाँ (अपने क़िले में) आ पहुँचा। उसी क्षण दुर्ग में बधाई के वाद्य बज उठे ॥२५॥ गढ़ पर जब बधाई बजी तो सैनिकों ने तुरन्त कृपाणें निकाल लीं और जिस पर खड़ग से वार किया उसे एक ही वार में मार डाला ॥ २६ ॥ धरती पर बड़े-बड़े वीर गिरने लगे मानों आरा से वृक्ष काटे गए हों। वे अत्यन्त क्रुद्ध एक-दूसरे से जूझ-जूझकर मारे गए और फिर घोड़ों पर चढे दिखाई नहीं पड़े ॥ २७ ॥ ॥ दोहा ॥ जैनुलाबादी शाह को उन्होंने भगा दिया और यह छल दिखाकर राणा रत्नसेन अपने क़िले में वापस चले गए ॥ २८ ॥ उन्होंने गोरा-बादल को विपुल धन-सम्पत्ति दी और उस दिन से पद्मिनी मे उसकी प्रीति और बढ़ गई ॥ २९ ॥ १ ॥

श्री चरित्रो के त्रिया चरित्र के मन्त्री भूप सवाद म एक सौ f चरित्र की शुभ सत समाप्ति । १९९ ३७२५ । अफजू ।

अथ दोइ सौ चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ त्रिगति देस एस्वर बडो द्रुगतिसिंघ इक भूप । देग तेग पूरो पुरख सुंदर काम सरूप ॥ १ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ उडगिंद्रप्रभा इक ता की त्रिया । दिन रैनि भजै मुख जासु पिया । बिसुनाथप्रभा त्रिय और रहै । अति सुंदर ताकह जगत कहै ॥ २ ॥ बिसुनाथप्रभा तन प्रीति रहै । उडगिंद्रप्रभा इक बैन चहै । दिन रैनि बितीत करै इहके । कबहूँ ग्रहि जात नही तिहके ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ ता पर शत्र तवन को धायो । द्रुगतिसिंघ दलु लै समुहायो । मच्यो जुद्ध अति बजे नगारे । देव अदेव बिलोकत सारे ॥ ४ ॥ उमडे सूर सिंघ जिमि गाजहि । दोऊ दिसन जुझउआ बाजहि । गोमुख संख निशान अपारा । ढोल म्रिदंग मुचंग नगारा ॥५॥ तुरही नाद नफीरी बाजहि । मंदल तूर उतंग बिराजहि । मुरली झाँझ भेर रन भारी । सुनत नाद धुनि हठे हकारी ॥६॥ जुगनि दैत अधिक हरखाने । गीध सिवा फिकरहि अभिमाने । भूत प्रेत नाचहि अरु गावहि । कहूँ रुद्र डमरू डमकावहि ॥७॥

दो सौवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ त्रिगति नामक ऐश्वर्यवान देश में द्रुगतिसिंह एक राजा था, जो देग और तेग में पूर्ण था तथा कामदेव के सदृश सुन्दर था ॥ १ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ उड़गिंद्रप्रभा उसकी पत्नी थी जिसे प्रियतम दिन-रात स्मरण किया करता था। उसकी एक अन्य स्त्री विश्वनाथप्रभा थी जिसे संसार अत्यन्त सुन्दर मानता था ॥ २ ॥ राजा की विश्वनाथप्रभा के साथ प्रीति थी और उड़गिंद्रप्रभा तो एक बोल ही चाहती थी। राजा दिन-रात उसके साथ व्यतीत करता था, परन्तु इसके घर भी नहीं जाता था ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजा पर उसके शत्रु ने आक्रमण कर दिया और द्रुगतिसिंह भी दल लेकर सम्मुख आ गया। युद्ध छिड़ गया और देव-अदेव सभी देखने लगे ॥ ४ ॥ वीर सिंह की तरह उमड़कर गरजने लगे और दोनों ओर रण-वाद्य बजने लगे। वहाँ गोमुख, शंख, नगाड़े, ढोल, मृदंग, मुचंग आदि बज रहे थे ॥ ५ ॥ तुरही, नाद, नफीरी, मंदल, तूर, उतंग, मुरली, झाँझ, भेरी आदि की ध्वनि सुनकर हठी वीर और क्रोधित हो उठे ६ योगिनियाँ दैत्य प्रसन्न हो उठे और गिद्ध गर्वपूर्ण होकर लाशों में विचरण करने लगे

अचि अचि रुधर डाकनी डहकहि। भखि भखि अमिख काक कहूँ कहकहि। जंबुक गीध मासु लै जाहीं। कछु कछु शबद बिताल सुनाहीं॥ ८॥ झमकैं कहूँ असिन की धारा। भभकहि रुंड मुंड बिकरारा। धुकि धुकि परे धरनि भट भारे। झुकि झुकि बडे पखरिया मारे॥ ६॥ ठिला ठिली बरछिन सौ माची। कढा कढी करवारिन राची। कटा कटी कहूँ भई कटारी। धरनी अरुन भेस भई सारी॥ १०॥ काढे दैंत दाँत कहूँ फिरैं। बरि बरि कहूँ बरंगन बरैं। भीखन भए नाद (मू०ग्रं०१०१२) कहूँ भारे। भैरवादि छबि लखन सिधारे॥ ११॥ ॥ दोहरा॥ भकभकाहि घायल कहूँ कहकैं अमित मसान। बिकटि सुभट चटपट कटे तन ब्रिन बहे क्रिपान॥१२॥ ॥ चौपई॥ भैरव कहूँ अधिक भवकारैं। कहूँ मसान किलकटी मारैं। भाँ भाँ बजे भेर कहूँ भीखन। तनि धनु तजहि सुभट सर तीखन॥ १३॥ ॥अड़िल्ल॥ चाबि चाबि करि ओसठ दुबहिया धावहीं। बज्र बान बिछुअन के

भूत-प्रेत नाचने-गाने लगे और कहीं रुद्र डमरू डमकाने लगे॥ ७॥ चल्लू भर-भरकर डाकिनियाँ रुधिर पीने लगीं और कौवे मांस खा-खाकर काँव-काँव करने लगे। गीदड़-गिद्ध मांस ले जा रहे थे और बैतालों की आवाजें भी सुनाई पड़ रही थीं॥ ८॥ तलवारों की धाराएँ कहीं चमक रही थी और रुंड-मुंड विकराल रूप से भभक रहे थे। धरती पर बड़े-बड़े वीर धकेले जा रहे थे और झुक-झुककर बड़े अश्वारोहियों को मारा जा रहा था॥ ६॥ बर्छियों की ठेल-ठाल मची हुई थी और तलवारों की "निकाल-मार" चल रही थी। कटारों से कटा-कटी इतनी भीषण हुई कि सारी धरती लाल हो गई॥ १०॥ कहीं दैत्य दाँत निकालकर घूम रहे थे और कहीं अप्सराएँ वरण कर रही थीं। कहीं भीषण घनघोर नाद हो रहे थे और भैरवादि छवि देखने के लिए आ पहुँचे॥ ११॥ ॥ दोहा॥ अनेकों प्रेत भभक रहे और क़हक़हे लगा रहे थे। अनेकों सुभट शीघ्र ही कट मरे और शरीरों पर कृपाणों के घाव लग रहे थे॥ १२॥ ॥ चौपाई॥ कहीं भैरव अत्यधिक गरज रहे थे और कहीं प्रेत किलकारियाँ मार रहे थे। कहीं भाँय-भाँय स्वर में भेरी बज रही थी और तीक्ष्ण बाणों की मार से शूरवीर प्राण त्याग रहे थे॥ १३॥ ॥ अड़िल्ल॥ ओंठ चबा-चबाकर वीर टूट पड रहे थे और वज्र-बाण बिच्छुओं के घाव लगा रहे थे वे खड-खड होकर गिर रहे थे

ब्रिनन लगावहीं। टूक टूक ह्वै गिरै न मोरै नैक मन। हो तनिक तनिक लगि गए असिन की धार तन ॥ १४ ॥ मोरि बाग बाजन की नैक न भाजही। खरे खेत के माँझ सिंघ ज्यों गाजही। खंड खंड ह्वै गिरे खंडिसन खंड करि। हो खंडे खड़ग की धार गए भवसिंध तरि ॥१५॥ ॥दोहरा॥ भकभकाहि घायल कहूँ रुंड मुंड बिकरार। तरफराहि लागे कहूँ छत्री छत्रन धारि ॥ १६ ॥ ॥ चौपई ॥ हाँकि हाँकि भट तुरै धवावहि। गहि गहि असनि अरिन ब्रिण लावहि। चटपट सुभट बिकट कटि मरे। चुनि चुनि ऐन अपच्छरा बरे ॥१७॥ ॥ अड़िल्ल ॥ द्रुगतिसिंघ के सूर सकल भाजत भए। न्रिप जूझे रन माहि सँदेसा अस दए। सुनि बिसुनाथप्रभा चित भीतरि चकि गई। हो स्री उडगिंद्रप्रभा जरबे कह उदित भई ॥१८॥ जो धनु ता को हुतो सु दियो लुटाइकै। चली जरन के हेत म्रिदंग बजाइकै। प्राननाथ जित गए तही मै जाइहौ। हो जियत न आवत धाम मरे ते पाइहौ ॥ १९ ॥ स्री बिसुनाथ-प्रभा जरिबे ते डरि गई। मर्‌यो न्रिपति सुनि कान अधिक

पर मन को युद्ध से हटा नहीं रहे थे और वीरों के शरीर टुकड़े-टुकडे होकर कृपाणों से लग गए ॥ १४ ॥ घोड़ों की लगाम मोड़कर वे तनिक भी भाग नहीं रहे थे और युद्ध में खड़े होकर शेर की तरह गरज रहे थे। खड़गो की मार से वीर टुकड़े-टुकड़े होकर गिर पड़े थे और खड़ग-धार पर भवसिंधु पार गए ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥ कहीं शरीर रुंड-मुंड एवं घायल हो भभक रहे थे। कहीं क्षत्रिय एवं छत्रधारी तड़फड़ा रहे थे ॥१६॥ ॥चौपाई॥ वीर हाँक-हाँककर घोड़े दौड़वा रहे थे और तलवारें हाथ में पकड़-पकड़कर घाव लगा रहे थे। वीर शीघ्र ही कट-मर रहे थे और अप्सराएँ तुरन्त उनका वरण कर रही थीं ॥ १७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ द्रुगतिसिंह के समस्त शूरवीर भागने लगे और आकर उन्होंने संदेश दिया कि राजा युद्ध में जूझ गया। विश्वनाथप्रभा यह सुनकर चकित रह गई और उड़गिंद्रप्रभा तो जलने के लिए तैयार हुई ॥ १८ ॥ जो धन उसके पास था वह उसने लुटा दिया और मृदंग बजाकर जल मरने के लिए चल पड़ी। जहाँ प्राणनाथ गए मैं भी वहाँ जाऊँगी। मेरे जीवित रहते तो वे मेरे घर नहीं आते थे, अब मैं मरकर उन्हें प्राप्त करूँगी ॥१९॥ विश्वनाथप्रभा जलने से डर गई। उसने जब राजा की मृत्यु का कान से सुना तो अत्यधिक सिर पीटने

पीटत भई। तब लौ अग्नि बिदारि गयो न्रिप आइकै। हो हेरि सती की मीचि रह्यो बिसमाइकै ॥ २० ॥ जब उडगिंद्रप्रभा की सुधि कानन परी। बिरह तिहारे बाल अगनि मो जरि मरी। तब पिय तबहीं तहा पहूच्यो आइकै। हो तरल तुरंगन मांझ तुरंग धवाइकै ॥ २१ ॥
॥ दोहरा ॥ न्रिप आवत लौ मूरखन दीनी चिता जराइ। जियत मरे पति की कछू सुधि नहि लई बनाइ ॥ २२ ॥
॥ अड़िल्ल ॥ त्रिय को लै लै नामु न्रिपति पीटत भयो। मुहि कारन इह बाल अगनि महि जिय दयो। बरत (मू०पं०१०६३) बाल कौ अब ही ऐंचि निकारिहौ। हो नातर जरि याही संग स्वरग सिधारिहौ ॥ २३ ॥ ॥ चौपई ॥ अब ही तुरंग अगनि मै डारौ। जरत प्रिया कहु ऐंचि निकारौ। कै हमहूँ याही चित जरिहैं। सुरपुर दोऊ पयानो करिहैं ॥ २४ ॥
॥ दोहरा ॥ खड़ग काढ कर मै लयो मोहि न पकर्‌यो कोइ। कै काढो इह कै जरै करता करै सु होइ ॥ २५ ॥
॥ अड़िल्ल ॥ खड़ग काढि कर माझ धवावत है भयो। जरत जहाँ त्रिय हुती चिता मै पति गयो। पकर भुजा ते ऐंचि

लगी। तब तक शत्रु को मारकर राजा आ गया और सती के मृत्यु के बारे में सुनकर चकित रह गया ॥ २० ॥ जब उसने उड़गिंद्रप्रभा की बात कान से सुनी कि वह मेरे विरह में जल मरी है, तब प्रिय (राजा) तेज़ घोड़ों को दौड़ाकर वहाँ तुरन्त पहुँच गया ॥ २१ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा के आते तक मूर्खों ने उसकी चिता को जला दिया और उसे पति के जीवित होने या मरने की कुछ भी खबर नहीं ली ॥ २२ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ उस स्त्री का नाम लेकर राजा (सिर) पीटने लगा कि मेरे कारण ही इस स्त्री ने अग्नि में प्राण दे दिये। मैं अभी जलती स्त्री को खींच निकालूँगा अथवा इसी के साथ जलकर स्वर्ग चला जाऊँगा ॥ २३ ॥ ॥ चौपाई ॥ अभी घोड़ा अग्नि में डालता हूँ और जलती हुई प्रियतमा को खींच निकालूँगा। अथवा मैं भी इसी चिता में जलकर दोनों ही स्वर्ग के लिए प्रस्थान करेंगे ॥ २४ ॥ ॥ दोहा ॥ खड़ग निकाल हाथ में पकड़कर उसने कहा कि मुझे कोई न पकड़े अथवा इसे जलती हुई को निकालो; जो ईश्वर को मंजूर होगा वही होगा ॥ २५ ॥
अड़िल्ल खड़ग हाथ में लेकर राजा अग्नि में घुस पड़ा जहाँ चिता में स्त्री जल रही थी वहाँ पति आ पहुँचा बाह से पकड़कर तरुण राजा ने

तरुन तरुनी लियो। हो राजसिंघासन पाव बहुरि अपनो दियो ॥ २६ ॥ ॥ दोहरा ॥ निरख राव तन कहि उठे धन्य धन्य सभ सूर। मरे स्वरग बासा तिनैं जीवत बाचा पूर ॥ २७ ॥ ॥ चौपई ॥ सभ रानिन ऐसे सुनि पायो। ताँहि जरत न्रिप आपु बचायो। मरत हुती जीवत सो भई। जीवत हुती म्रितक ह्वै गई ॥ २८ ॥ अब हम कौ न्रिप चित न ल्यैहै। वाही के ह्वैकै बसि जैहै। अब कछु ऐस उपाइ बनाऊँ। या सौ पति की प्रीति मिटाऊँ ॥ २९ ॥ देखहु इह रावहि क्या कहियै। मन मै समुझि मौनि ह्वै रहियै। जो लै मूरति जार की जरी। ताके हेत इती इन करी ॥ ३० ॥ यह लै मूरति जार की जरी। ह्वैहै अरध जरी हूँ परी। जौ ताकौ इह राव निहारै। अबही याकौ जिय ते मारै ॥ ३१ ॥ यौ जब बैन राव सुनि पायो। हेरन तवन चिता कह आयो। अरधजरी प्रतिमा लहि लीनी। प्रीति जु बढी हुती तजि दीनी ॥ ३२ ॥ तब बानी नभ तैं इह होई। उडगप्रभा महि दोसु न कोई। बिसुसिप्रभा यहि

तरुणी को निकाल लिया और फिर राजसिंहासन पर आ बैठा ॥ २६ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा को देखकर सभी वीर धन्य-धन्य कह उठे। ऐसे वीर मरने पर स्वर्ग पाते हैं और जीवित बचने पर पूर्ण मनुष्य के रूप में आदर्श बनते है ॥ २७ ॥ ॥ चौपाई ॥ रानी ने सुना कि उस जलती हुई को राजा ने स्वयं बचाया है। अब जो मर रही थी वह जीवित हो उठी और जो जीवित थी वह मर गई ॥ २८ ॥ अब राजा मुझ पर ध्यान नहीं देगा और उसी का होकर रह जायगा। अब कुछ ऐसा उपाय किया जाय जिससे पति की प्रीति इस पर समाप्त हो जाय ॥ २९ ॥ (उसने कहना शुरू कर दिया कि) राजा को क्या कहा जाय, मन में समझकर चुप रहना ही ठीक है। जो यार की मूर्ति के साथ जल मरी उसके लिए राजा ने इतना किया (यह ठीक नहीं किया) ॥ ३० ॥ यह यार की जो मूर्ति साथ ले जली थी वह भी अभी आधी जली पड़ी होगी। यदि राजा देख ले तो अभी इसे मार डाले ॥ ३१ ॥ जब राजा ने यह सुना तो वह ढूँढ़ने के लिए चिता पर गया। उसने अधजली प्रतिमा वहाँ से पा ली और जितना प्यार उसके लिए बढा था वह सब त्याग दिया ३२ तब हुई कि में कोई दोष नही है यह प्रपच भा ने किया है और तुम्हारे चित्त को

चरित बनायो । ताते चित तुमरो डहकायो ॥ ३३ ॥ जिह लिय तुम तन जर्‌यो न गयो । तवनि बाल असि चरित बनयो । जिनि त्रिप की यासौ रुचि बाढै । जीयत हमै छोरि करि छाडै ॥ ३४ ॥ तब राजै ऐसे सुनि पाई । साची ही साची ठहराई । उडगप्रभा तन अति हित कीनो । वासौ त्यागि नेह सभ दीनो ॥ ३५ ॥ ॥ दोहरा ॥ स्री उडगिंद्र प्रभा भए राज कर्‌यो सुख मान । बिसुसि प्रभा संग दोसती दीनी त्याग निदान ॥ ३६ ॥ १ ॥ (मू०ग्रं०१०६४)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २०० ॥ ३७६१ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ इक चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ रूम शहिर के शाह की सुता जलीखाँ नाम । किधौ काम की कामनी किधौ आप ही काम ॥ १ ॥ अति जोबन ताँकै दिपै सभ अंगन के साथ । दिन आशिक दिनपति रहै निसु आशिक निसनाथ ॥ २ ॥ सहसानन सोभा भनै लिखत सहस भुज जाहि । तदिप जलीखाँ की प्रभा बरनि न

भ्रम में डाला है ॥ ३३ ॥ जिस स्त्री मे तुम्हारा व्यवहार सहन नहीं हुआ उसी ने यह चरित बनाया है ताकि राजा की इससे प्रीति न बढ़ जाय और हमें जीवित ही भुला न दे ॥ ३४ ॥ तब राजा ने यह सुनकर सच्ची को ही सच्ची ठहराया । तब उसने उड़गप्रभा से अत्यन्त स्नेह किया और उससे एकदम प्रेम त्याग दिया ॥ ३५ ॥ ॥ दोहा ॥ उड़गिंद्रप्रभा के साथ उस राजा ने सुखपूर्वक राज किया और विश्वनाथप्रभा से मैत्री का त्याग कर दिया ॥ ३६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २०० ॥ ३७६१ ॥ अफजूं ॥

दो सौ पहला चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ रूम शहर के शाह की पुत्री का नाम जुलैख़ाँ था । वह मानों काम की स्त्री रति थी अथवा स्वयं ही कामदेव थी ॥ १ ॥ उसके सारे अगों मे यौवन था और दिन मे सूर्य उसका आशिक रहता था तथा रात में चन्द्रमा उसका प्रेमी था २ सन्त्रा मख से कही जाय और

आवत ताहि ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ मिसर शाह को पूत भणिज्जै । यूसफ खाँ तिह नाम कहिज्जै । जो अबला तिह नैकु निहारै । चट दै लाज बस्त्र कौ फारै ॥ ४ ॥ ॥ दोहरा ॥ ताँके तन मै अति प्रभा आपि करी करतार । पैगंबर अंबर तिसै कहत सु बुद्धि बिचारि ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ ताँके भ्रात सकल रिसि धारै । हम क्योंहूँ यूसफ कौ मारै । हमरो रूप कर्‌यो घट करता । याको रूप दुखन को हरता ॥ ६ ॥ ताँको लै अखेट करि गए । बहु बिधि म्रिगन सँघारत भए । अधिक प्यास जब ताहि सतायो । एक रूप भ्रातान तकायो ॥ ७ ॥ तह हम जाइ पानि सभ पीयै । शोक निवारि सुखी ह्वै जीयै । यूसफ बात न पावत भयो । जह वह कूप हुतो तह गयो ॥ ८ ॥ चलि बन मै जब कूप निहार्‌यो । गहि भइयन ता मै तिह डार्‌यो । घर यौ आनि संदेसो दयो । यूसफ आजु सिंघ भखि लयो ॥ ९ ॥ खोजि सकल यूसफ को हारे । असुख भए सुख सभै बिसारे । तहा एक सौदागर आयो । कूप बिखै ते ताकह पायो ॥ १० ॥

सहस्रों भुजाओं से लिखी जाय तो भी जुलैखाँ के सौंदर्य का वर्णन नहीं हो सकता ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ मिस्र देश के शाह का पुत्र यूसुफ़ खाँ कहा जाता था । जो स्त्री उसे देख लेती थी, तुरन्त लज्जा छोड़ निर्वस्त्र हो जाती थी ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ स्वयं उसके तन की अनुपम शोभा खुदा ने बनाई थी, जिसका वर्णन सदैव पैगम्बरादि किया करते हैं ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसके भाई उससे ईर्ष्या करते थे कि हम कैसे भी यूसुफ़ को मार दें । हमारा रूप परमात्मा ने कम बनाया है और इसका रूप-सौंदर्य दुखों का नाश करनेवाला है ॥ ६ ॥ उसको लेकर वे शिकार खेलने गए और वहाँ उन्होंने अनेकों मृगों को अनेकों प्रकार से मारा । जब उसे अत्यधिक प्यास लगी तो भाइयों ने उसे एक कुआँ दिखाया ॥ ७ ॥ वहाँ हम सब चलकर पानी पीते हैं और शोक का निवारण कर सुखी होते हैं । यूसुफ़ बात को समझा नहीं और जहाँ वह कूप था वहाँ चला गया ॥ ८ ॥ जब बन में कुआँ देखा तो भाइयों ने उसे पकड़कर उसमें डाल दिया । घर में आकर बता दिया कि यूसुफ़ को शेर खा गया है ॥ ९ ॥ सभी यूसुफ़ को खोजकर हार गए और सुखों से विहीन हो दुखी हो उठे । वहाँ एक सौदागर आया और उसने कुएँ में उसे देखा १० उसे उसने साथ ले लिया और रूम के शाह के पास बेचने

ताकह संग अपुने करि लयो । बेचन शाह रूम के गयो । अधिक मोल.कोऊ नहि लेवै । ग्रहि को काढि सकल धनु देवै ॥ ११ ॥ ॥ दोहरा ॥ जबै जलीखाँ यूसफहि रूप बिलोक्यो जाइ । बसु असु दै ताको तुरत लियो सु मोल बनाइ ॥ १२ ॥ ॥ चौपई ॥ मुख माँग्यो ताको धनु दियो । यूसफ मोल अमोलक लियो । भाँति भाँति सेती तिह पार्‍यो । बडो भयो इह भाँति उचार्‍यो ॥ १३ ॥ चित्रसाल ताकौ लै गई । नाना चित्र दिखावत भई । अधिक यूसफहि जबै रिझायो । तब तासो यौ बचन सुनायो ॥ १४ ॥ हम तुम आजु करै रति दोऊ । हैं न इहाँ ठाढो जन कोऊ । कवन लखैं कासो कोऊ कहिहै । ह्याँ को आनि रमत हम गहिहै ॥ १५ ॥ ॥ दोहरा ॥ मै तरुनी तुमहूँ तरुन दुहूँअन रूप अपार । (मू०ग्रं०१०६५) शंक त्यागि रति कीजियै कत जकि रहे कुमार ॥ १६ ॥ तै जु कहत नहि कोऊ निहारै । आँधर ज्यों तैं बचन उचारै । साखी सात संग के लहिहैं । अब ही जाइ धरम तन करिहैं ॥ १७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ धरमराइ की सभा जबै दोऊ जाइहैं । कहा बदन लै तासे उत्र दिवाइ हैं ।

के लिए चल पड़ा । उसकी अधिक क़ीमत तो कोई नहीं लगाता था, बस घर का सारा धन निकालकर दे देता था ॥ ११ ॥ ॥ दोहा ॥ जब ज़ुलेखाँ ने यूसुफ़ का रूप जाकर देखा तो फिर किसी न किसी प्रकार इसने उसका मोल-भाव बना लिया ॥ १२ ॥ ॥ चौपाई ॥ मुँह माँगा उसको धन दिया और यूसुफ़ को अमूल्य मानकर ले लिया । भाँति-भाँति से उसका भरण-पोष । किया और उसे बड़ा व्यक्ति बना दिया ॥ १३ ॥ उसे चित्रशाला में ले गई और उसे अनेकों चित्र दिखाए । जब उसने यूसुफ़ को अत्यधिक प्रसन्न कर लिया तो उससे कहा ॥ १४ ॥ आओ आज हम-तुम दोनों रतिक्रीडा करें, यहाँ कोई भी नहीं है । कौन यहाँ देखेगा, किससे कोई कहेगा और कौन रमण कर रहे हम लोगों को पकड़ लेगा ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥ मैं तरुणी हूँ, तुम तरुण हो और दोनों का रूप अपार है । इसलिए हे कुमार ! क्यों आश्चर्य में पड़े हो; निःशंक होकर रतिक्रीड़ा करो ॥ १६ ॥ तुम जो कह रही हो कि कोई नहीं देखता, यह तुमने अंधों की तरह कहा है । जो सात साक्षी साथ हैं उन्हें कौन हटा देगा और वे अभी धर्मराज से जाकर कहेंगे १७ अड़िल्ल जब हम दोनों धर्मराज की सभा में जायेंगे

इन बातन कौ तैं त्रिय कहा बिचारई। हो महाँ नरक के बीच न मोकौ डारई॥ १८॥ सालग्राम परमेस्व इही गति ते भए। दस रावन के सीस इही बातन गए। सहस भगन बासव याही ते पाइयो। हो इन बातन ते मदन अनंग कहाइयो॥ १६॥ इन बातन ते चंद्र कलंकित तन भए। सुंभ असुंभ असुरिंद्र सदन जम के गए। इही काज क्रीचक क्रीचकन खपाइयो। हो धरमराट दासी सुत बिदुर कहाइयो॥ २०॥ सुनि सुंदरि तव संग भोग मो ते नहि होई। शिव सनकादिक कोटि कहैं मिलिकै सभ कोई। यौ कहिके भजि चल्यो बाल ठाढी लह्यो। हो गहिकै करि सो ऐंचि ताहि दामन गह्यो॥ २१॥ ॥ दोहरा॥ कर दामन पकर्यो रह्यो गयो सु यूसफ भाजि। कामकेल तासौ न भ्यो रही चंचला लाजि॥ २२॥ ॥ अड़िल्ल॥ अवर कथा जो भई कहा लौ भाखियै। बात बढन की करि चित ही मै राखियै। तरुन भयो यूसफ अबला ब्रिधित भई। हो ताको चित ते रीति प्रीति की नहि गई॥ २३॥ मारि म्रिगन यूसफ तह इक दिन

तो क्या मुँह लेकर जायँगे और क्या मुँह लेकर उसे उत्तर देंगे। इन बातों को हे स्त्री! तुम कहाँ विचार कर रही हो और कहाँ मुझे महानरक में डाल रही हो॥ १८॥ परमेश्वर इसी कारण पत्थर के शालिग्राम बने, रावण के दस सिर इसी कारण गए, इन्द्र को सहस्र भग (छिद्र) इसी कारण प्राप्त हुए और कामदेव को इसी कारण जलना पड़ा॥ १६॥ चन्द्रमा भी इन्हीं बातो के कारण कलंकित हुआ। शुंभ, निशुंभ एवं महिषासुर इसी बात के कारण यमलोक जा पहुँचे। इसी कारण कीचक अनेकों कीचकों-सहित नष्ट हुआ और राजा को दासी-सुत विदुर कहलाना पड़ा॥ २०॥ हे सुन्दरी! यदि शिव-सनकादि अनेकों भी मुझसे कहें तो मुझसे तुम्हारे साथ रतिक्रीड़ा नहीं होगी। यह कहकर वह स्त्री को खड़ी देखकर भाग चला तो उसने हाथ से खींचकर उसका दामन पकड़ा॥ २१॥ ॥ दोहा॥ हाथ से दामन पकड़ा रह गया और यूसुफ़ भाग गया। स्त्री की रतिक्रीड़ा उससे न हो सकी और वह लज्जित हो रह गई॥ २२॥ ॥ अड़िल्ल॥ अब और क्या हुआ क्या बताएँ। बात बढ़ने को समझकर अब उसे मन में ही रखा जाय। यूसुफ जवान हो गया और वह स्त्री वृद्ध हो गई, पर फिर भी उसकी प्रीति उसके मन से नहीं गई॥ २३॥ एक दिन मृग (जानवर) मारकर यूसुफ वहाँ

आइयो । पूछन के मिसु ताको हाथ लगाइयो । बाज ताज सुत बस्त्र बिरह बाला जरियो । हो सो अंतर बसि रह्यो जु याते उबरियो ॥ २४ ॥ हेरि बाल को रूप चक्रित यूसफ भयो । जो तिह मनोरथ हुतो वहे ताको दयो । बसत्र बाज को जारि गलीखाँ तिह छर्‌यो । हो मित्र पुत्र ज्यों पाइ तबै ताको बर्‌यो ॥ २५ ॥ ॥ दोहरा ॥ जिह पाछे बाला परै बचन न ताको कोइ । सभ छल सों ताको छलै शिव सुरपति कोऊ होइ ॥ २६ ॥ १ ॥ (मू०ग्रं०१०९६)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ इक चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २०१ ॥ ३७८७ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ दो चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ उग्र सिंघ राजा बडो कासिकार को नाथ । अमित दरबु ताको सदन अधिक चढ़त दल साथ ॥ १ ॥ चपलकला ताको सुता सभ सुंदर तिह अंग । कै अनंग की आतमजा कै आपै आनंग ॥ २ ॥ सुंदर ऐंठी सिंघ लखि तबही लयो बुलाइ । कामकेल चिर लौ कियो ह्रिदै हरख

आया और पूछने के बहाने उसने उसे छू दिया । उसका घोड़ा, ताज, वस्त्र आदि उसके विरहाग्नि में जल उठा । यह तो जिसमें जाग पड़ा वह उसी के वश में हो गया ॥ २४ ॥ उस स्त्री का रूप देख यूसुफ़ चकित हो गया और अब उसने वही किया जो उसका मनोरथ था । जुलखाँ ने उसे छल लिया और पुत्र के समान मित्र को पाकर उसका वरण किया ॥ २५ ॥ ॥ दोहा ॥ जिसके पीछे औरत पड़ जाय फिर उसका बचाव नहीं हो सकता । चाहे कोई शिव हो अथवा इन्द्र, यह सबको छल से छल लेती है ॥ २६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ पहले चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २०१ ॥ ३७८७ ॥ अफजू ॥

दो सौ दूसरा चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ काशिका का राजा उग्रसिंह था, जिसके पास अपरिमित द्रव्य और सेना थी ॥ १ ॥ उसकी सुन्दर अंगों वाली कन्या चपलकला थी । वह लगती थी मानों कामदेव की पुत्री हो अथवा स्वयं ही काम हो ॥ २ ॥ उसने सुन्दर ऐंठीसिंह को देखकर उसे तुरन्त बुला लिया और हृदय में

उपजाइ ।। ३ ।। ।। चौपई ।। नितप्रति तासो केल कमावै । छैलहि छैल न छोर्‌यो भावै । एकै सदन माँझ तिह राख्यो । काहू साथ भेद नहि भाख्यो ।। ४ ।। केतिक दिनन ब्याहि तिह भयो । ताको नाथ लैन तिह अयो । कामकेल तासो उपजायो । सोइ रह्यो अति ही सुख पायो ।। ५ ।। त्रिय कौ त्रिपति न ताँते भई । छोरि सँदूक जार पैं गई । अधिक मित्र तब ताहि रिझायो । कामकेल चिर लगे कमायो ।। ६ ।। ।। दोहरा ।। कहा भयो बलवंत भ्यो भोग न चिर लौ कीन । आप न कछु सुख पाइयो कछु न तरुन सुख दीन ।। ७ ।। ।। चौपई ।। सो तरुनी को पुरख रिझावै । बहुत चिर लगे भोग कमावै । ताको ऐंचि आपु सुख लेवै । अपनो सुख अबला को देवै ।। ८ ।। ऐसे बली कैस कोऊ होई । ता पर त्रिया न रीझत कोई । जो चिर चिमटि कलोल कमावै । वहै तरुनि को चित्त चुरावै ।। ९ ।। ।। दोहरा ।। चिमटि चिमटि तिह मीत सौ गरे गई लपटाइ । स्रवन चटाको नाथ सुनि जाग्यो नींद गवाइ ।। १० ।। लपटि लपटि अति रति करी जैसी करै न कोइ । स्रमित भए तरुनी

प्रसन्न हो उससे केलिक्रीड़ा की ।। ३ ।। ।। चौपाई ।। नित्य वह उससे केलि-क्रीड़ा करती थी और इस प्रकार उस छैल सुन्दरी से छैला को छोड़े नहीं बनता था । उसे एक मकान में रखा और किसी को भी यह रहस्य नहीं बताया ।। ४ ।। उसके विवाह को काफ़ी दिन हो गए थे और उसका पति उसे लेने के लिए आ पहुँचा । उससे उसने कामक्रीड़ा की और सुखपूर्वक सो रहा ।। ५ ।। स्त्री की तृप्ति उससे नहीं हुई और वह अपने मित्र के पास गई । मित्र ने उसे अत्यधिक रिझाया और काफ़ी देर तक कामक्रीड़ा करता रहा ।। ६ ।। ।। दोहा ।। बलवान होने से भी क्या होता है, यदि रमण देर तक नहीं किया; न खुद सुख पाया और न स्त्री को सुख दिया ।। ७ ।। ।। चौपाई ।। तरुणी को वही पुरुष पसंद आता है जो उससे अत्यधिक समय तक भोग करे । उसको खींचकर आप सुख ले और अपना सुख उस स्त्री को दे ।। ८ ।। वैसे कोई कितना ही बली हो उस पर स्त्री रीझती नहीं । जो देर तक चिमट-चिमटकर आमोद-प्रमोद करे वही तरुणी का चित्त चुराता है ।। ९ ।। ।। दोहा ।। वह चिमट-चिमटकर मित्र के गले से लिपट गई और इधर पति भी चटखारे की सुनकर जग गया १० लिपट

तरुन रहे तहा ही सोइ ॥ ११ ॥ ॥ चौपई ॥ जब तिय जार सहित स्वै गई । परे परे तिह नाथ तकई । पकरे केस छुटे लहलहे । जानुक सरप गारुड़ गहे ॥ १२ ॥
॥ दोहरा ॥ अंगरेजी गहिकै छुरी ताकी ग्रीव तकाइ । तनिक दबाई इह दिसा उहि दिसि निकसी जाइ ॥ १३ ॥
॥ चौपई ॥ छुरकी भए जार कौ घायो । निजु नारी तन कछु न जतायौ । ताको तपत रुधिर जब लाग्यो । तब ही कोपि नारि को जाग्यो ॥ १४ ॥ छुरकी वहै हाथ मै लई । पति के पकरि कंठ मो दई । अज ज्यों ताहि जिबै करि डार्‍यो । बार दुहन इह भाँति पुकार्‍यो ॥ १५ ॥ ॥ दोहरा ॥ मोरे नाथ बिरक्त ह्वै बन को कियो (मू०ग्रं०१०९७) पयान । बारि सकल घर उठि गए शंका छाडि निदान ॥ १६ ॥
॥ चौपई ॥ ताँ ते कछू उपाइ बनैयै । खोजि नाथ बन ते ग्रहि ल्यैयै । ता को हेरि पानि मैं पीवौ । बिनु देखै नैना दोऊ सीवौ ॥ १७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ खोजि खोजि बन लोग सभै आवत भए । कहै तिया तव नाथ न हाथ कहूँ अए । आइ

लिपटकर उन्होंने अभूतपूर्व रतिक्रिया की और वे तरुण-तरुणी दोनों पसीना-पसीना हो गए ॥ ११ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब स्त्री मित्र के साथ सो गई तो उस पड़ी को उसके स्वामी (राजा) ने देखा। उसके केशों को (हल्के से) पकड़ा। वे ऐसे लग रहे थे मानों गर्वीले सर्प हों ॥ १२ ॥ ॥ दोहा ॥ तेज छुरी लेकर उस (मित्र) की गर्दन को निशाना बनाकर इधर से दबा दिया जो दूसरी ओर जा निकली ॥ १३ ॥ ॥ चौपाई ॥ छुरी से यार को मार दिया और अपनी स्त्री को कुछ भी पता न चलनें दिया। जब उसका गर्म खून (देह को) लगा तो नारी का क्रोध भड़क उठा ॥ १४ ॥ उसने वही छुरी पकड़कर पति के गले पर चला दी। उसे बकरे की तरह क़त्ल कर डाला। बाद में वह इस तरह चिल्लाने लगी ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥ मेरे स्वामी संन्यास धारण कर बन को चले गए हैं। इस प्रकार सभी लोग जाग गए ॥ १६ ॥
॥ चौपाई ॥ इससे कुछ उपाय करना चाहिए और स्वामी को वन से खोजकर घर लाना चाहिए। मैं उन्हें ढूँढ़कर ही पानी पीऊँगी और उन्हें देखे बिना तो मैं अपने नयन सी लूँगी ॥ १७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सभी लोग वन से खोज-खोजकर आ गए और कहने लगे कि तुम्हारा स्वामी कहीं नहीं मिला सब

निकटि ताकौ सभ ही समुझावही । हो भूले लोक अजान मरम नहि पावही ॥ १८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ दो चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २०२ ॥ ३८०५ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ तिन चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ नरकासुर राजा बडो गुआहटी को राइ । जीति जीति राजान की दुहिता लेत छिनाइ ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ तिन इक बिवत जग्य को कीनो । एक लच्छ राजा गहि लीनो । जौ इक और बंद न्रिप परै । तिन न्रिपमेध जग्य करि बरै ॥ २ ॥ प्रथम कोट लोहा को राजै । दुतिय ताँब्र के दुरग बिराजै । तीजो अशट धात गढ़ सोहै । चौथ सिका को किलो करोहै ॥ ३ ॥ बहुरि फटक को कोट बनायो । जिह लखि रुद्राचल सिर न्यायो । खशटम दुरग रुकम के सोहै । जाके तीर ब्रहमपुर को है ॥ ४ ॥ सपतम गड़ सोनाँ को राजै । जा कौ लंक बंक लखि लाजै । ता के मध्य आपु न्रिप रहै । आनि न मानै जो तिह गहै ॥ ५ ॥ जौ न्रिप

उसे आकर समझाने लगे और भूले हुए मूर्ख लोग रहस्य को नहीं समझ पा रहे थे ॥ १८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ दूसरे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २०२ ॥ ३८०५ ॥ अफजू ।

दो सौ तीसरा चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ नरकासुर गौहाटी का बड़ा राजा था जो राजाओं की [पु]त्रियाँ जीत-जीतकर छीन लेता था ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसने एक यज्ञ का आयोजन किया और एक लाख को पकड़ लिया। इसके बाद एक अन्य राजा को पकड़ा क्योंकि उसे नृपमेध यज्ञ करना था ॥ २ ॥ उसका पहला केला लोहे का था, दूसरा ताँबे का, तीसरा अष्टधातु का और चौथा सिक्के [क]ा था ॥ ३ ॥ फिर स्फटिक का क़िला बनवाया जिसे देखकर रुद्राचल पर्वत भी सिर झुकाता था। छठवाँ क़िला चाँदी का शोभायमान था जिसके समक्ष [ब्र]ह्मपुरी भी कुछ नहीं थी ॥ ४ ॥ सातवाँ क़िला सोने का था जिसे देखकर [लं]का भी लज्जित होती थी उसमें राजा स्वय रहता था और जो उसकी

और हाथ तिह आवै । तब वहु सभ राजा कह घावै । सोरह सहस रानियन बरै । नरामेध न्रिप पूरन करै ॥ ६ ॥ इक रानी यौ बचन उचारा । द्वारावति उग्रेसुजिआरा । जौ तूं ताहि जीति कै ल्यावैं । तब यह होम जग्य न्रिप पावैं ॥ ७ ॥ ॥ दोहरा ॥ यौ कहिकै राजा भए पतिया लिखी बनाइ । जहाँ क्रिशन बैठे हुते दीनो तहा पठाइ ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ बैठे कहा क्रिशन बडभागी । तुम सौ डीठि हमारी लागी । इह न्रिप घाइ न्रिपान छुरैयै । हम सभहिनि बरि घर लै जैयै ॥ ९ ॥ जौ जब बैन क्रिशन सुनि पायो । गरुड़ चड़े गरुड़ाध्वज आयो । प्रथम कोट लोहा को तोर्यो । समुहि भए ताको सिर फोर्यो ॥ १० ॥ बहुरौ दुरग तांब्र को लीनो । अशट धात पुनि गढ़ बसि कीनो । बहुरि शिवा को कोट छिनायो । (मू०ग्रं०१०६८) बहुरि फटक को किलो गिरायो ॥ ११ ॥ जब ही रुकम कोट कौ लाग्यो । तब न्रिप सकल शस्त्र गहि जाग्यो । सकल सैन लीने संग आयो । महा कोप करि नादि बजायो ॥ १२ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ काढि काढि करि खड़ग पखरिया धावही । महाँ खेत मै खली खिग

सर्वोपरिता को नहीं मानता था उसको पकड़ लेता था ॥ ५ ॥ अब यदि उसके हाथ राजा लगता तो वह सब राजाओं को मार डालता । तब वह सोलह सहस्र रानियों का वरण करता और नरमेध यज्ञ पूरा करता ॥ ६ ॥ एक रानी ने कहा कि द्वारिका में उग्रसेन राजा है । यदि तुम उसे जीतकर ले आओ तो यह होमयज्ञ पूरा हो ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ यह कहकर राजाओं ने पत्र लिखा और जहाँ कृष्ण बैठे थे वहाँ पहुँचा दिया ॥ ८ ॥ ॥ चौपाई ॥ हे बड़भागी कृष्ण ! तुम कहाँ बैठे हो ? हम सबकी दृष्टि तुम्हारी ओर ही लगी हुई है । इस राजा को मारकर राजाओं को छुड़ाओ और हमारा वरण कर हमें घर ले जाओ ॥ ९ ॥ जब यह बात कृष्ण ने सुनी तो गरुड़ पर सवार होकर गरुड़ध्वज आ पहुँचा । पहले लोहे का क़िला तोड़ा और जो सामने आया उसका सिर फोड़ा ॥ १० ॥ फिर ताँबे का दुर्ग विजय किया और अष्टधातु के दुर्ग को वश में किया । फिर शिवजी के किले को छीना और बाद में स्फटिक का दुर्ग गिरा दिया ॥ ११ ॥ जब चाँदी के दुर्ग पर (चोटें) लगी तो राजा शस्त्र पकडकर जग उठा वह समस्त सेना साथ लेकर महाक्रुद्ध हो वाद्य बजाने लगा १२ अडिल्ल खडग निकाल निकालकर

नचावई। खंड खंड ह्वै गिरे खगिस के सर लगे। हो चले खेत को छाडि क्रोध अति ही जगे॥ १३॥ ॥ भुजंग छंद ॥ मंडे आनि मानी महाँ कोप ह्वै कै। किते बाढ वारीन को बाँधि कै कै। कितै पानि माँगै किते मारि कूकै। किते चारि ओरान ते आन ढूकै॥ १४॥ किते शस्त्र अस्त्रान लै कै पधारैं। किते बाढ वारी किते बान मारैं। किते हाक कूकैं किते रूह छोरैं। किते छिप्र छत्रीन के छत्र तोरैं॥ १५॥ भए नाद भारे महाँ कोप कै कै। किते बाढवारीन को बाढ दै कै। हन्यो क्रिशन क्रोधी भटं त्रिणत घायो। भजे सूरमा रुकम कोटं गिरायो॥ १६॥ ॥ दोहरा ॥ रुकम कोट कौ जीति कै तहाँ पहूच्यो जाइ। जहाँ दुरग कलधोत कौ राख्यो द्रुगत बनाइ॥ १७॥ ॥ भुजंग छंद ॥ तही जाइ लागो मच्यो लोह गाढो। महाँ छत्रधारीन कौ छोभ बाढो। किते फाँस फाँसे किते मारि छोरे। फिरै मत्त दंती कहूँ छूछ गोरे॥ १८॥ ॥ चौपई ॥ जुझि जुझि सुभट सामुहे मरैं। चुनि चुनि किते बरंगनिन बरैं। बरत

घुडसवार दौड़ने लगे और महायुद्ध में क्षत्रिय खड्ग नचाने लगे। खगेश (श्रीकृष्ण-विष्णु) के बाण लगने से वीर खंड-खंड हो गिर पड़े और अत्यन्त क्रुद्ध हो युद्धस्थल को छोड़ चले॥ १३॥ ॥ भुजंग छंद ॥ मानी राजा ने अत्यन्त क्रुद्ध हो युद्धमंडित कर दिया और तलवारों का मानों बाँध खड़ा कर दिया। कितने पानी माँग रहे थे और कितने मार-मार चिल्ला रहे थे। कितने ही चारों ओर से उमड़ पड़े थे॥ १४॥ कितने ही लोग अस्त्र-शस्त्र लेकर पहुँचे और कितने कृपाणें तथा बाण मार रहे थे। कितने ललकार रहे थे और कितने प्राण त्याग रहे थे। अनेकों ही क्षत्रियों के छत्रों को शीघ्रता से तोड़ रहे थे॥ १५॥ कहीं महाक्रुद्ध हो भारी नाद हो रहे थे और कहीं कृपाणों से कटाई हो रही थी। क्रुद्ध कृष्ण ने वीरों को घायल कर मार दिया और चाँदी के दुर्ग के गिरते वीर भाग खड़े हुए॥ १६॥ ॥ दोहा ॥ चाँदी के क़िले को जीतकर (कृष्ण) वहाँ जा पहुँचा जहाँ सोने का दृढ़ क़िला बना रखा था॥ १७॥ ॥ भुजंग छंद ॥ वह वहाँ जा भिड़ा और भीषण युद्ध शुरू हो गया। महाछत्रधारियों का क्षोभ बढ़ गया। कही पाशों से मार डाले, कहीं मारकर गिरा दिये और कहीं मदमस्त हाथी छूँछ [illegible] झूल रहे थे १८ चौपाई। वीर जूझ [illegible] सम्मुख हो मर रहे

बरंगनिन जु नर निहारैं। लरि लरि मरैं न सदन सिधारैं ॥ १६ ॥ ॥ दोहरा ॥ क्रिशन जीति सभ सूरमा राजा दए छुराइ। नरकासुर कौ घाइयो अबला लई छिनाइ ॥ २० ॥ इह चरित्र तन चंचला राजा दए छुराइ। क्रिशन नाथ सभहूँ करे नरकासुरहि हनाइ ॥ २१ ॥ ॥ चौपई ॥ सोरह सपत क्रिशन तिय बरी। भाँति भाँति के भोगन भरी। कंचन को सभ कोट गिरायो। आनि द्वारिका दुरग बनायो ॥ २२ ॥ ॥ सवैया ॥ ग्रहि काहू के चौपरि मंडत है तिय काहू सों फाग मचावत हैं। कहूँ गावत गीत बजावत ताल सु बाल कहूँ दुलरावत हैं। गनिकान के खयाल सुनै कतहूँ कहूँ बस्त्र अनूप बनावत हैं। सुभ चित्रन चित्त सुबित्त हरे (मू०ग्रं०१०६६) कोऊ ताकौ चरित्र न पावत है ॥ २३ ॥ १ ॥

॥ इति स्त्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ तिन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २०३ ॥ ३८२८ ॥ अफजूं ॥

थे और कितने ही चुन-चुनकर अप्सराओं द्वारा वरण किये जा रहे थे। अप्सराओं द्वारा वरण किये जा रहे (वीरों) को जो व्यक्ति देखता था वह घर नहीं जाता था और लड़ मरता था ॥ १६ ॥ ॥ दोहा ॥ कृष्ण ने जीतकर शूरवीर राजाओं को छुड़ा दिया और नरकासुर को मारकर स्त्रियों को छीन लिया ॥ २० ॥ स्त्रियों ने यह चरित बनाकर राजाओं को छुड़ा दिया और नरकासुर को मारकर सबने कृष्ण का वरण कर लिया ॥ २१ ॥ ॥ चौपाई ॥ कृष्ण ने सोलह सौ स्त्रियों का वरण किया और भाँति-भाँति से रतिक्रीड़ा की। सोने के क़िले को गिराकर द्वारिका में आकर अन्य दुर्ग तैयार किया ॥ २२ ॥ ॥ सवैया ॥ किसी के घर में चौपड़ का खेल बना है, कहीं स्त्रियाँ होली खेल रही हैं। कहीं गीत गाकर ताल बजा रही हैं और कहीं बच्चों को दुलार रही हैं। कहीं गणिकाओं के गीत सुन रहे हैं और कहीं अनुपम वस्त्र बजाए जा रहे हैं। शुभ चित्र बने हैं और उनके मर्म को समझा नहीं जा रहा है ॥ २३ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ तीसरे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति २०३ । ३८२८ । अफजू

अथ दोइ सौ चार चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ इक कैलाश मती रहै रानी रूप अपार । जाते जगत नरेश बिधि सीखी जुद्ध मझार ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ सिंघ सु बीर नाथ इक ताको । रूप बेस भाखत जग वाको । अप्रमान तिह प्रभा बिराजै । निसिसि दिनिसि निरखत मनु लाजै ॥ २ ॥ ॥ चौपई ॥ रैनि दिवस बैरियन बिदारैं । शाह के रोज परगने मारैं । एक जहाज जान नहि देवै । लूटि लूटि सभहिन को लेवै ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ लूटि फिरंगी लए सकल इकठे भए । शाहजहाँ जू जहाँ तही सभ ही गए । सभै लगे दीवानि पुकारे आइकै । हो हमरो न्याइ करो इह हनौ रिसाइकै ॥ ४ ॥ ॥ शाह बाच ॥ कहो लूटि किन लए तिसी को मारियै । ताही कौ इह ठौर सु नाइ उचारियै । ता पैं अब ही अपनी फौज पठाइहैं । हो ताते तुमरो सभ ही माल दिलाइ हैं ॥ ५ ॥ ॥ फिरंगी बाच ॥ ॥ दोहरा ॥ जहाँ कमछया को भवन तिसी ठौर के राइ । अधिक फिरंगी मारिकै लीनो माल छिनाइ ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ ऐसे जब हजरति

दो सौ चौथा चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ कैलाशमती एक अपार रूपवाली रानी थी, जिससे राजा जगत्नरेश ने युद्धकला युद्धक्षेत्र में सीखी ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसका स्वामी वीरसिंह था, जिसके रूप-वेश की चर्चा जग करता था। उसकी प्रभा अप्रमाण थी जिसे देखकर चाँद-सूर्य लज्जित होते थे ॥ २ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह रात-दिन शत्रुओं को मारता था और शाह के परगनों को हथियाता था। वह एक भी जहाज़ जाने नहीं देता था और सबको लूट लेता था ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सभी लुटे हुए फ़िरंगी एकत्र हुए और सभी शाहजहाँ के पास गए। सभी दरबार में आकर पुकारने लगे कि हमारा न्याय कीजिए और इसे मार डालिए ॥४॥ ॥ शाह उवाच ॥ बताओ किसने लूटा है ? उसे मार डालूँ। मुझे इसी स्थान पर उसका नाम बताओ। मैं तुरन्त उस पर अपनी फौज चढ़ा दूँगा और तुम लोगों का लुटा हुआ माल वापस दिला दूँगा ॥ ५ ॥ ॥ फ़िरंगी उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ जहाँ कामाख्या का मंदिर है, उसी स्थान के राजा ने अनेकों फिरंगियों को मारकर माल छिनवा लिया है ६

सुनि पाई। फौजें अति ही तहाँ पठाई। उमडि अनी चलि आवै तहाँ। राजत भवन कमछ्या जहाँ॥ ७॥ ॥ अड़िल्ल॥ तब लौ सिंघ सु बीर लोक दिव के गयो। रानी दयो जराइ न लोगन भाखियो। कह्यो अनमनो राव कछुक दिन ह्वै रह्यो। हो राज साज लै हाथ आपु असि कौ गह्यो॥ ८॥ जब लगि राजा नाइ तब लगे जाइ हौं। इन बैरिन के सिर पर खड़ग मचाइहौं। सकल बैरियन घाइ पलटि घर आइकै। हो करिहौ आइ प्रनाम पतिहि मुसकाइकै॥ ९॥ सुनि ऐसे बच सूर सभै हरखत भए। भाँति भाँति के शस्त्र सभन हाथन लए। कछु भट दलहि दिखाइ ल्याए लाइकै। हो बडी फौज महि आनि दए सभ घाइकै॥ १०॥ दस सहस्र निसि को लिय बैल मँगाइकै। द्वै द्वै सींगन बधी मसाल जराइकै। इह दिसि दलहि दिखाइ आइ ओहि दिसि परी। (मू॰ग्रं॰११००) हो बडे बडे न्रिप घाइ मार क्रीचक करी॥ ११॥ जब हो दूजो दिवस पहूच्यो आइकै। भरि गोनैं पन्हियन की दई चलाइकै। लोग खजानो जानि टूटि तापै परे। हो उहि दिसि

॥ चौपाई॥ जब बादशाह ने यह सुना तो असंख्य सेना वहाँ भेज दी। फौज वहाँ उमड़कर चली आ रही थी जहाँ कामाख्या-मंदिर था॥ ७॥ ॥ अड़िल्ल॥ उधर वीरसिंह क्रीड़ा हेतु गया हुआ था परन्तु रानी ने मन में इस बात को छुपाये रखा और किसी से कुछ न कहा। यह कह दिया कि राजा की तबियत कुछ दिनों से खराब है। यह कहकर उसने कृपाण हाथ में पकड़ ली और राजकाज का काम करने लगी॥ ८॥ जब तक राजा नहीं आता मैं जाऊँगी और इन शत्रुओं के सिर पर तलवार चलाऊँगी। समस्त शत्रुओं को मारकर एवं वापस आकर मैं मुस्कुराती हुई पति को प्रणाम करूँगी॥ ९॥ यह वचन सुनकर सभी शूरवीर प्रसन्न हो उठे और भाँति-भाँति के शस्त्र उन्होंने हाथों में ले लिये। कुछ वीर उसे सेना दिखाकर लाये। वह फ़ौज को मारती फ़ौज में घुस पड़ी॥ १०॥ उसने रात को दस सहस्र बैल मँगाये और उनकी सींगों पर दो-दो मशालें जलाकर बाँध दीं। उन्हें एक दिशा में चला दिया और आप दूसरी दिशा में टूट पड़ी और बडे-बडे राजाओं को मारकर मिट्टी में मिला दिया॥ ११॥ जब दूसरा दिन आया तो इसने बोरों में जूते भरकर चला दिए। लोग ख़ज़ाना समझकर उस पर लूटने के लिए टूट पड़े उसी दिन उस स्त्री ने राजाओं के धन का

तैं उन बाल त्रिपति धन जुत हरे ॥ १२ ॥ दिन दूजो गयो दिवस तीसरो आइयो । तब रानी दुंदभि इक ठौर बजाइयो । लोग दिरबु लै भजे जु तिह मगु आइयो । हो लूटिधनी सभ लिए न जानिक पाइयो ॥ १३ ॥ दिवस चतथे दीनी आगि लगाइकै । आपु एकठाँ थिर भई दलहि दुराइकै । सभ राजन के लोग बुझावन लागए । हो जो पाए त्रिप रहे मारि अबला दए ॥ १४ ॥ दिवस पाँचवें अपनी अनी सुधारिकै । मद्धि सैन के परी मसाले जारिकै । मारि कूटि त्रिप सैन निकसि आपुन गई । हो पिता पूत सिर तेग पूत पितु के दई ॥ १५ ॥
॥ दोहरा ॥ रैंन समैं तिन ही बिखै माच्यो लोह अपार । भट जूझे पितु पूत हनि पूत पिता को मार ॥ १६ ॥ रैनि समै तवनै कटक लोह पर्यो बिकरार । ऊच नीच राजा प्रजा घायल भए सुमार ॥ १७ ॥ ॥ चौपई ॥ पितु लै खड़गु पूत को मार्यो । पूत पिता के सिर पर झार्यो । ऐसो लोह पर्यो बिकरारा । सभ घायल भे भूप सभारा ॥ १८ ॥
॥ अड़िल्ल ॥ दिवस खशटमौ जबै पहूच्यो आइकै । दो दो मरद लौ खाई गई खुदाइकै । गडि सूरी जल ऊपर दए बहाइकै ।

हरण किया ॥ १२ ॥ दूसरा दिन बीता और तीसरा दिन आया। तब रानी ने एक स्थान पर दुदुंभि बजायी तो लोग अपना धन-दौलत लेकर भागे और यह उसी रास्ते पर आ खड़ी हुई। उसने सब धनिकों को लूट लिया ॥ १३ ॥ चौथे दिन उसनें आग लगा दी और सेना लेकर एक स्थान पर छुप गई। राज्य के सभी लोग आग बुझाने लगे और इधर रानी ने जिन राजाओं को पाया मार दिया ॥ १४ ॥ पाँचवें दिन अपनी सेना को सुधार कर वह मशाल जलाकर वह (शत्रु) सेना में कूद पड़ी। राजा की सेना को मारती-काटती स्वयं निकल गई। पिता ने पुत्र और पुत्र ने पिता के सिर पर तलवार चला दी ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥ रात के समय उनमें भीषण युद्ध हुआ; पिताओं को पुत्र और पुत्रों को पिता मारकर वीर वहाँ जूझ गए ॥१६॥ रात्रि के समय उनका भीषण युद्ध हुआ और ऊँच-नीच, राजा-प्रजा अनेको घायल हो गए ॥१७॥ ॥ चौपाई ॥ पिता ने खड़ग लेकर पुत्र को मारा और पुत्र ने पिता के सिर पर खड़ग से वार कर दिये। ऐसा भीषण युद्ध हुआ कि सभी राजा घायल हो गए ॥ १८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जब छठवाँ दिन आ पहुँचा तो उसने दो-दो आदमी की ऊंचाई की गहरी खाई खुदवायी उसमें नीचे शूल

हो बद्यो खलन सो जुद्ध खिग खुनसाइकै ॥ १९ ॥ पराबंधि करि फौज दोऊ ठाढी भई। तीर तुपक तरवारि मारि चिर लौ दई। भाजि चली तिय पाछे कटक लगाइकै। हो पछे पखरिया परै तुरंग नचाइकै ॥ २० ॥ ॥ दोहरा ॥ एक बार सोरह सहस स्वार जुझे बरबीर। बहुरि आनि अबलापुरी हने तुपक कै तीर ॥ २१ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जबै सपतवौ दिवस पहूच्यो आइ करि। सभ पकवानन मौ दई जहर डराइ करि। खलन खंड कछु चिर लौ लोह बजाइकै। हो और ठौर चलि गई निशानु दिवाइकै ॥ २२ ॥ मारि परनि ते रही सिपाहिन यौ कियौ। सरकि सरकि कर शकति निकर तिह को लियो। झूमि परे चहूँ ओर दुरग के दुआर पर। हो लई मिठाई (मू०ग्रं०११०१) छीनि गठरियै बाँधि करि ॥ २३ ॥ ॥ दोहरा ॥ बैठि बैठि सो सो पुरख जो जु मिठाई खाँहि। मद बिखु के तिन तन चरै तुरतु तरफि मरि जाँहि ॥ २४ ॥ चारि पाँच घटिका बिते बाल परी असि धार। जो बिखु ते घूमत हुते सभ ही दए सँघारि ॥ २५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ बहुरि मिलन तिय बद्यो सु दूत पठाइकै। चली आपनी आछी अनी

गाड़कर ऊपर पानी भर दिया और शत्रु को क्रुद्ध हो युद्ध के लिए ललकार दिया ॥ १९ ॥ एक-दूसरे को बाँधकर फ़ौजें खड़ी हो गई और देर तक तीर, बंदूक़, तलवारों की मार चलती रही। स्त्री भी सेना को पीछे लेकर टूट पड़ी और घोड़ों को नचाते हुए उसने अश्वारोहियों को घायल कर दिया ॥२०॥ ॥ दोहा ॥ एक ही वार में सोलह सहस्र वीर जूझ उठे। पुन: उस स्त्री ने बंदूक़, तीरों से सेना को मार गिराया ॥ २१ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जब सातवाँ दिन आ पहुँचा तो उसने सब पकवानों में जहर डलवा दिया। उस शत्रु-नाशिनी ने कुछ देर युद्ध करके झंडा गड़वाकर अन्य स्थान को प्रस्थान किया ॥ २२ ॥ सिपाही मार से बचते हुए सरक-सरककर शक्तिपूर्वक बढ़े और झूमकर दुर्ग के द्वार पर जा टूटे। वहाँ उन्होंने सब मिठाइयों की गठरियाँ छीन ली ॥२३॥ ॥ दोहा ॥ वहाँ बैठकर जो-जो पुरुष मिठाई खाते थे, उन्हें ज़हर चढ़ जा रहा था और वे तड़फ-तड़फकर मर रहे थे ॥ २४ ॥ चार-पाँच घड़ियाँ बीतने पर वह स्त्री कृपाण लेकर टूट पड़ी और जो विष के प्रभाव से बेहोश-से पड़े थे उन सबको मार डाला ॥२५॥ ॥अड़िल्ल॥ रानी ने दूत भेजा और फिर भिड़ने की योजना बनाई और अपनी अच्छी सेना

बनाइकै। तुपक चोट कौ जबै सैन लाँघत भई। हो परी तुरंग धवाइ क्रिपानै कढि लई॥ २६॥ ॥ दोहरा॥ सभ राजन कौ मारिकै सैना दई खपाइ। जीति जुद्ध ग्रहि को गई जै दुंदभी बजाइ॥ २७॥ ताही ते जगतेश न्रिप सीखे चरित्र अनेक। शाहिजहाँ के बीर सभ चुनि चुनि मारे एक॥ २८॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ चार चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ २०४॥ ३८५६॥ अफजूं॥

अथ दोइ सौ पाँच चरित्र कथनं॥

॥ चौपई॥ भूप बडो गुजरात बखनियत। बिजै कुअरि ताको त्रिय जनियत। छत्री एक तहाँ बडभागी। ताँ तन द्रिशटि कुअरि की लागी॥ १॥ ॥ अड़िल्ल॥ रैनि परी ताको त्रिय लयो बुलाइकै। रति मानी चिर लौ अति रुच उपजाइकै। लपटि लपटि उर जाइ न छोर्यो भावई। हो भाँति भाँति के आसन करत सुहावई॥ २॥ ॥ दोहरा॥ रानी मीतहि संग लै बागहि गई लवाइ। काम भोग तासौ कर्यो ह्रिदै हरख उपजाइ॥ ३॥ जहाँ बाग मों

लेकर चल पड़ी। तोपों की मार को जब सेना पार कर गई तो यह भी घोड़े दौड़ाकर कृपाणें निकालकर टूट पड़ी॥ २६॥ ॥ दोहा॥ सब राजाओं को मारकर सेना को नष्ट कर दिया और दुदुंभियाँ बजाती युद्ध को जीतकर वापस अपने घर को गई॥ २७॥ उसी से जगतेश राजा ने अनेकों चरित्र सीखे और शाहजहाँ के अनेकों वीरों को चुन-चुनकर मार दिया॥ २८॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ चौथे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ २०४॥ ३८५६॥ अफजू॥

दो सौ पाँचवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई॥ वृहद् गुजरात में एक राजा था जिसकी स्त्री विजयकुँवरि जानी जाती थी। वहाँ एक भाग्यशाली क्षत्रिय था जिससे कुँवरि की नजर लड़ गई॥ १॥ ॥ अड़िल्ल॥ रात में स्त्री ने उसे बुला लिया और रुचि पूर्वक उससे रतिक्रीडा की। लिपट-लिपटकर उसे सीने से लगाया और भाँति-भाँति के सु आसनों को २ दोहा रानी मित्र

जार सौं रानी रमत बनाइ। ताको न्रिप कौतक लमिति तह ही निकस्यो आइ ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ लखि राजा रानी डरपानी। मित्र भए तिह भाँति बखानी। मेरी कही चित्त मै धरियहु। मूढ़ राव ते नैकु न डरियहि ॥ ५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ इक गडहा मे दयो जार को डारिकै। तखता पर बाघंबर डारि सुधारिकै। आपु जोग को भेस बहिठी तहाँ धर। हो राव चल्यो दिय जान न आन्यो द्रिशटि तर ॥ ६ ॥ राइ निरखि तिह रूप चक्रित चित मै भयो। कवन देस को एस भयो जोगी कह्यो। याके दोनो पाइन परियै जाइकै। हो आइसु कौ लइयै चित बिरमाइकै ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ जब राजा ताँके ढिग आयो। जोगी उठ्यो न बैन सुनाइयो। इह दिसि ते उहि (मू०पं०११०२) दिसि प्रभ गयो। तब राजै सु जोर कर लयो ॥ ८ ॥ नमशकार जब तिह न्रिप कियो। तब जोगी मुख फेरि सु लियो। जिह जिह दिसि राजा चलि आवै। तह तह ते त्रिय आँखि चुरावै ॥ ९ ॥ यह गति देखि न्रिपति चकि रह्यो। धंनि धंनि मन मे तिह कह्यो। यह मारी परवाहि न राखै। ताते मोहि न मुख ते भाखै ॥ १० ॥

साथ ले बाग में आई और वहाँ प्रसन्न हो उससे कामक्रीड़ा की ॥ ३ ॥ जहाँ बाग में रानी मित्र के साथ रमण कर रही थी वहाँ राजा कौतूहलवश आ निकला ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजा को देखकर रानी डर गई और मित्र से कहा कि मेरा कहा करना और मूर्ख राजा से तनिक न डरना ॥ ५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ अपने मित्र को एक खड्डे में डाल दिया और ऊपर तख्ते पर बाँधकर (योगियों का कपड़ा) डाल दिया। स्वयं योगी का वेश धारण कर वहाँ बैठ गई और ऐसा किया कि मानो राजा को देखा ही न हो ॥६॥ राजा उसका रूप देखकर चकित हो गया और सोचने लगा कि यह कौन देश का योगी है। इसके तो चरणों में पड़ जाना चाहिए और इसका मन प्रसन्न कर इससे आशीर्वाद लेना चाहिए ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब राजा उसके पास आया तो योगी न तो उठा और न ही बोला। राजा इस दिशा से उस दिशा में गया और फिर उसने हाथ जोड़ लिये ॥ ८ ॥ राजा ने जब प्रणाम किया तो योगी ने मुँह फेर लिया। जिस ओर राजा जाता था, स्त्री उधर से आँख चुरा लेती थी ॥ ९ ॥ यह देखकर राजा चकित रह गया और मन में धन्य-धन्य कहने लगा। वह सोचने लगा कि इसे मेरी परवाह नहीं है इसीलिए

अनिक जतन राजा करि हार्यो । क्योहूं नहि रानीयहि निहार्यो । करत करत इक बचन बखानो । मूरख राव न बोलि पछानो ॥ ११ ॥ बातैं सौ त्रिप सों कोऊ करै । जो इच्छा धन की मन धरै । राव रंक हम कछू न जानै । एकै हरि को नाम पछानै ॥ १२ ॥ बातैं करत निसा परि गई । त्रिप सभ सैन बिदा कर दई । ह्वै एकल रह्यो तह सोई । चिंता करत अरध निसि खोई ॥ १३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सोइ त्रिपति लहि गयो त्रिय मीतहि उचरियो । कर भे दूँबि जगाइ भोग बहु बिधि करियो । जात तहाँ ते भए यहै लिखि खात पर । हो स्वरग देखि भूअ देखि सु गए पतार तर ॥ १४ ॥ ॥ चौपई ॥ भई प्रात राजा सुधि लयो । तिनै न तहाँ बिलोकत भयो । गडहा पर को लिख्यो निहार्यो । मंत्रिन जुति इह भाँति बिचार्यो ॥ १५ ॥ ॥ दोहरा ॥ या जोगीस्वर लोक लखि बहुरि लख्यो यह लोक । अब पतार देखन गयो ह्वैकै ह्रिदै निशोक ॥ १६ ॥ ॥ चौपई ॥ सिद्ध सिद्ध सभ ताहि उचारैं । भेद अभेद न मूड़ बिचारैं । इह

मुख से नहीं बोल रहा है ॥ १० ॥ राजा अनेक यत्न कर हार गया और किसी ने भी रानी को नहीं पहचाना । यही करते-करते उसने मुँह से एक वचन कहा तब भी मूर्ख राजा उसकी आवाज़ नहीं पहचान सका ॥ ११ ॥ उसने कहा कि राजा से बातें तो वह करे जिसे मन में धन आदि की इच्छा हो । हम तो राजा-रंक को कुछ नहीं जानते और केवल एक परमात्मा के नाम को ही पहचानते हैं ॥ १२ ॥ बातें करते-करते रात हो गई और राजा ने सभी सेना को विदा कर दिया । वहाँ वह अकेला रह गया और चिंतन करते-करते आधी रात बीत गई ॥ १३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजा सो गया और स्त्री ने मित्र को पुकारा और हाथ से चिकोटी भरकर उसे जगाकर उससे विभिन्न प्रकार से रतिक्रीड़ा की । वे वहाँ खड्डे पर यह लिखकर चलते बने कि स्वर्ग एवं धरती देखने के बाद अब हम पाताल देखने जा रहे हैं ॥१४॥ ॥ चौपाई ॥ सुबह जब राजा जगा तो उन्हें वहाँ नहीं पाया । खड्डे पर लिखे को पढ़कर उसने मंत्रियों से विचार किया ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥ यह योगीश्वर उस लोक और इस लोक को देखने के बाद अब शोकरहित हो पाताललोक देखने के लिए गया है १६ चौपाई उसे सब सिद्ध-सिद्ध' कहने लगे और कोई भी मूर्ख भेद-अभेद को न विचार सका इस

चरित्र त्रिय जार बचायो । राजा तें गडहा पूजायो ।। १७ ।। गडहा की पूजा त्रिप करै । ताकी बात न चित्त मै धरै । स्वरग छोरि जो पयार सिधारो । नमशकार है ताहि हमारो ।। १८ ।। १ ।।

।। इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ पाँच चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ।। २०५ ।। ३८७४ ।। अफजूं ।।

अथ दोइ सौ छठवों चरित्र कथनं ।।

।। चौपई ।। सुधरावती नगर इक सुना । सिंघ बिशेस्वर राव बहु गुना । इशकमती ताकी बर नारी । खोजि लोक चौदहूँ निकारी ।। १ ।। ।। दोहरा ।। अप्रमान ताकी प्रभा जल थल रही समाइ । सुरी आसुरी किंन्नी हेरि रहत सिर न्याइ ।। २ ।। ।। अड़िल्ल ।। नौ जोबन (मू०ग्रं०११०३) राइक सुत शाहु निहारियो । रमौ तवन के संगि इह भाँति बिचारियो । पठै अली इक लीनो भवन बुलाइकै । हो रीति प्रीति की करी हरख उपजाइकै ।। ३ ।। भाँति भाँति मितवा को गरे लगाइयो ।

प्रपच से स्त्री ने अपने मित्र को बचा लिया और राजा से खड्डे की पूजा करवा दी ।। १७ ।। राजा खड्डे की पूजा करने लगा और उसकी बातों को नही विचार रहा था । जो स्वर्ग छोड़कर पाताल में गया है, उसे मेरा प्रणाम है ।। १८ ।। १ ।।

।। श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ पाँचवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ।। २०५ ।। ३८७४ ।। अफजू ।।

दो सौ छठवाँ चरित्र-कथन

।। चौपाई ।। सुधरावती नगर में विशेश्वरसिंह एक गुणवान राजा था । उसकी सुन्दर स्त्री इश्क़मती थी जिसे मानों चौदह लोकों मे से (सुन्दरतम) ढूंढ़ निकाला गया हो ।।१।। ।। दोहा ।। जल, स्थल सर्वत्र उसकी प्रभा अप्रतिम थी और सुर-स्त्रियाँ, असुर-स्त्रियाँ एवं किन्नरनियाँ भी उसके रूप-सौंदर्य के सामने सिर झुका लेती थीं ।।२।। ।। अड़िल्ल ।। उसने शाह के पुत्र नवयौवनराय को देखा और विचारा कि उसके साथ रमण किया जाय । उसे एक सखी भेजकर महल में बुलवा लिया और प्रसन्नतापूर्वक प्रीतिक्रीड़ा की ३ विभिन्न प्रकार से मित्र को गले लगाया और लिपट-लिपटकर

लपटि लपटि करि काम केल उपजाइयो। आसन चुंबन बहु बिधि करे बनाइकै। हो निजु प्रीतम के चित को लयो लुभाइकै ॥ ४ ॥ हाव भाव बहु भाँति दिखाए मीत को। छिन भीतरि बसि कियो तवन के चीत को। लपटि लपटि ललता उर गई बनाइकै। हो स्त्री नवजोबन राइ लयो ललचाइकै ॥ ५ ॥ ॥ दोहरा ॥ रावत जोबनि रैनि दिन इशकमती के संग। रति मानत रुचि मानिकै ह्वै प्रमुदित सरबंग ॥ ६ ॥ ॥ सवैया ॥ पौढि त्रिया के प्रजंक लला को लै सुंदरि गीत सुहावत गावैं। चुंबन और अलिंगन आसन भाँति अनेक रमै लपटावैं। जो त्रिय जोबनवंत जुबा दोऊ काम की रीति सो प्रीतुपजावैं। छाडिकै शोक त्रिलोकी के लोक बिलोकि प्रभा सभही बलि जावैं ॥ ७ ॥ कोक की रीति सो प्रीति करै सुभ काम कलोल अमोल कमावैं। बारहि बार रमैं रुचि सो दोऊ हेरि प्रभा तन की बलि जावैं। बीरी चबाइ शिंगार बनाइ सु नैन नचाइ मिलैं मुसकावैं। मानहु बीर जुटे रन मै सित तानि कमानन बान चलावैं ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ ऐसी

कामक्रीड़ा की। विभिन्न प्रकार के आसन-चुंबनादि किये और इस प्रकार प्रियतम को प्रसन्न किया ॥ ४ ॥ मित्र को अनेकों हाव-भाव दिखाए और क्षण भर में उसका मन मोह लिया। वह लिपट-लिपटकर उसके गले में लिपटी और इस प्रकार नवयौवनराय को ललचा लिया ॥ ५ ॥ ॥ दोहा ॥ यौवनराय रात-दिन इश्कमती के संग रहने लगा और परमप्रमुदित होकर उससे रतिक्रीड़ा करने लगा ॥ ६ ॥ ॥ सवैया ॥ स्त्री, प्रिय को पलंग पर लेकर सुन्दर सुहावने गीत गाती थी। आसन, आलिंगन, चुंबनादि के माध्यम से लिपटती और रमण करती थी। स्त्री भी युवती और वह भी युवा था, दोनों ही काम की रीति से प्रीतिपूर्वक सुखवृद्धि करते थे। उनकी प्रभा को त्रिलोकी के लोग शोक-विहीन होकर देखते थे और उन पर न्यौछावर जाते थे ॥ ७ ॥ कोकशास्त्र की रीति से प्रीति करते थे और काम की रीति से क्रीड़ा कर दोनों बार-बार रमण करते थे और उनके तनों की प्रभा पर लोग न्यौछावर होते थे। वे (पान का) बीड़ा चबाते, शृंगार करके नैन नचाते हुए मिलकर मुस्कुराते थे। वे ऐसे लगते थे मानों दो वीर युद्धस्थल में भिडे हों और तान-तानकर बाण चला रहे हों ८

चौपाई उन दोनो मे ऐसा प्रम हुआ कि उन्हें लोक-लाज भी विस्मृत

स्वरग सिधैहैं। तुम धन ते वै जियते जैहैं ॥ १६ ताँते क्यो न दरबु अति लोजै। तिहूँ जियन की रच्छा कीजै। जड़न कुकट को चरित निहार्यो। जार सहित रानियहि न मार्यो ॥ १७ ॥ ॥ दोहरा ॥ इशकमती इह छल भए कुकट कुकटियहि घाइ। प्रान उबार्यो प्रिय सहित त्रिप डर जड़न दिखाइ ॥ १८ ॥ ॥ चौपई ॥ तिन इह भाँति बिचार बिचारे। रानी मरत मीत के मारे। रानी मरत राजा मरि जैहै। हमरे कहा हाथ धनु ऐहै ॥ १६ ॥ अति ही लोभ रच्छकन कियो। राजा संग भेद नहिं दियो। सहित जार रानियहि न मार्यो। धन के लोभ बात को टार्यो ॥ २० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ छठवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २०६ ॥ ३८६४ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ सात चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ राजा कौच बिहार को बीरदत्त तिह नाम। अमित दरबु ताके रहै बसतु इंद्रपुर ग्राम ॥ १ ॥

तुम लोग भी धन के विना रह जाओगे ॥ १६ ॥ इससे क्यों न तुम अत्यधिक धन लो और तीनों जीवों की रक्षा करो। मूर्खों ने मुर्गे वाला प्रपंच देखा और मित्र-समेत रानी को नहीं मारा ॥ १७ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार मुर्गा-मुर्गी को मारकर इश्कमती ने प्रपंच दिखाया और राजा का भय दिखाकर प्रियतम-समेत अपने प्राण बचाए ॥ १८ ॥ ॥ चौपाई ॥ उन्होंने यह सोचा कि प्रेमी के मारने से रानी मर जायगी, रानी के मरने से राजा मर जायगा। फिर धन हम लोगों के हाथ कैसे लगेगा ॥ १६ ॥ रक्षकों ने लोभ किया और राजा को रहस्य नहीं बताया। मित्र-समेत रानी को नहीं मारा और धन के लोभ में बात को टाल दिया ॥ २० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ छठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २०६ ॥ ३८६४ ॥ अफजू ॥

दो सौ सातवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ कूच बिहार का राजा वीरदत्त था जो अपरिमित द्रव्य के साथ इन्द्रपुर गाँव में रहता था १ चौपाई उसकी सुन्दर स्त्री

॥ चौपई ॥ मुशकमती ताकी बर नारी । जनु रति पति के भई कुमारी । कामकला दुहिता तिह् सोहै । देव अदेवन को मन मोहै ॥ २ ॥ जो पुर चहै तिसी कौ मारै । अकबर की कछु कानि न धारै । देसतलह्टी बसन नहिं देवहि । लूटि कूटि सौदाग्रन लेवहि ॥ ३ ॥ अकबर शाहि कोप अति आयो । तिन पै बैरिन ओघ पठायो । जोरि सैनि सूरा सभ धाए । पहिरि कौच दुंदभी बजाए ॥ ४ ॥ ॥ दोहरा ॥ जब ही कौच बिहार के निकट पहूँचे आइ । लिखि पतिया ऐसे पठी रणदुंदभी बजाइ ॥ ५ ॥ कै हम कौ मिलु आइकै पतीआ लिखी सुधारि । कै पगु परु कै अनत टरु कै लरु शस्त्र सँभारि ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ जब त्रिप के स्रवनन यौ परियो । भाजि चलत भयो धीर न धरियो । मुशकमती जब ही सुनि पाई । बाँधि त्रिपहि दुंदभी बजाई ॥ ७ ॥ भाँति भाँति ते सैनि सँभारी । मारे (मू०ग्रं०११०५) सूरबीर हंकारी । राजा किते बाँधि करि लीने । जाइ भवानी के बलि दीने ॥ ८ ॥ ॥ दोहरा ॥ दलदल एक तकाइकै दयो दमामो जाइ । सुनत नाद सूरा सभै तहीं परे अरराइ ॥ ९ ॥ ॥ चौपई ॥ जौ

मुश्कमती थी जो ऐसी लगती थी मानों कामदेव की पुत्री हो । उसकी कन्या कामकला थी जो देव-अदेव सबका मन मोहनेवाली थी ॥ २ ॥ वह नगर में जिसे चाहती थी मार देती थी और अकबर की भी परवाह नहीं करती थी । देश की तलहटी में किसी को बसने नहीं देती थी और सौदागरों को लूट लेती थी ॥ ३ ॥ अकबर अत्यन्त कुपित हुआ और उसने उन पर शत्रुओं के झुंड को चढ़ा भेजा । शूरवीर सेना लेकर और कवच पहन दुंदुभि बजाते चल पड़े ॥४॥ ॥ दोहा ॥ जब वे कूच बिहार के पास आ पहुँचे तो उन्होंने रणदुंदुभि बजाते हुए यह पत्र लिखा ॥ ५ ॥ पत्र में लिखा कि या तो हमसे आकर मिलो और हमारे चरण पकड़ो या भाग जाओ या फिर शस्त्र सँभालो और लड़ो ॥ ६ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब राजा ने यह सुना तो उसने धैर्य खो दिया और भाग खड़ा हुआ । मुश्कमती ने जब यह सुना तो राजा को बाँधकर उसने दुंदुभि बजा दी ॥ ७ ॥ उसने विभिन्न प्रकार से सेना को सँभाला और अहंकारी शूरवीरों को मार डाला । उसने कितने ही राजाओं को बाँध लिया और भवानी के सामने बलि चढ़ा दी ॥८॥ ॥ दोहा ॥ उसने एक दलदल देखकर वहाँ नगाड़ा बजा दिया और नाद को सुनकर वीर

धाए फसि फसि ते गए। गहि गहि तरुनि तुरत ते लए। सकल कालिका की बलि दीने। बाज ताज सभहिन के छीने ॥ १० ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक भ्रित तिह भीतर पठ्यो बनाइकै। तासौ च्वित की बात कही समुझाइकै। मह गहिर बन भीतर तिन तुम ल्याइयो। हो धसें निरखि परबत मो मोहि जताइयो ॥ ११ ॥ सुनत मनुख इह बात तहाँ ते तह गयो। तुमै बतावत राह भाखि ल्यावत भयो। सकल सूर च्वित माँझ अधिक हरखत भए। हो भेद अभेद न लह्यो सकल बन मै गए ॥ १२ ॥ धस्यो कटक बन माँझ दूत लखि पाइकै। भेद दयो रानी कह तब तिन आइकै। बंद द्वार परबत के करि दोऊ लए। हो काटि काटि कै नाक जान ग्रहि कौ दए ॥ १३ ॥ बिमन भए बहु बीर भाजि रन तें चले। सैयद मुगल पठान सेख सूरा भले। डारि डारि हथियार भेख त्रिय धारही। हो लीजै प्रान उबारि इह भाँति उचारही ॥ १४ ॥ भले बीर तह ते इकठाँ उतरत भए। मुशकमती रानियहि निरखि सभ ही लए। काटि नदी तिह ऊपर दई चलाइकै।

बिलबिलाकर वहाँ जा पहुँचे ॥ ९ ॥ ॥ चौपाई ॥ जो वहाँ गए तुरन्त फंस गए और इस तरुणी ने तुरन्त उन्हें पकड़ लिया। सबको कालका के सामने बलि दे दिया और घोड़े तथा मुकुट सबके छीन लिये ॥१०॥ ॥अड़िल्ल॥ एक सेवक को (शत्रु-) सेना में भेजा और उसे रहस्य समझा दिया कि तुम इन्हे गहन वन के भीतर ले आओ। इन्हें पर्वत आदि दिखाकर वन में धँसा लाओ और फिर मुझे बताओ ॥ ११ ॥ वह व्यक्ति यह बात सुनकर वहाँ से गया और यह कहकर कि मैं तुम लोगों को रास्ता दिखाता हूँ, उन्हें ले आया। सभी वीर मन में प्रसन्न हो उठे और बिना किसी भेद-अभेद को समझे वन मे घुस पड़े ॥ १२ ॥ वन में घुसी सेना को जब दूत ने देखा तो उसने रानी को आकर बता दिया। उन्होंने पर्वत के दोनों रास्ते बंद कर दिये और सबकी नाक काटकर उन्हें वापस घर जाने दिया ॥ १३ ॥ बहुत से वीर हताश हो युद्ध से भाग गए। इन सबमें सैयद, मुगल, पठान और शेख शूरवीर भी थे। हथियार डालकर स्त्री-वेश बनाकर वे कहने लगे कि किसी भी तरह प्राण बचा लो ॥ १४ ॥ वहाँ से भागकर वीरों ने एक स्थान पर पड़ाव डाला। रानी मुश्कमती ने उन्हें देख लिया। उसने नदी को काटकर उन पर छोड़ दिया और घोड़ों मुकुटों-समेत राजाओं को बहा दिया १५

हो बाज ताज राजन जुत दए बहाइकै ॥ १५ ॥ मारि फौज इक दीनो दूत पठाइकै । जान खान जू बरो सु ताको आइकै । हम हजरति के संग न रन कीनो बनै । हो सभ मंत्रिन अर मोर रुचित यौही मनै ॥ १६ ॥ जैनखान मूरख सुनि ए बच फूलि गयो । सूरबीर लै संग भले तित जात भयो । ताकी दुहिता ब्याहि अबै घर आइहौ । हो इनै बांह अपनी हजरतहि मिलाइहौ ॥ १७ ॥ ॥ चौपई ॥ तब रानी दारू बहु लियो । तरै बिछाइ भूमि के दियो । ऊपर तनिक बारूअहि डार्‌यो । सो जरि जात न नैकु निहार्‌यो ॥ १८ ॥ एक लौंडिया बोलि पठाई । खारन पर कहि सुता बिठाई । पठ्यो मनुख खान अब आवै । याहि बयाहि धाम लै जावै ॥ १९ ॥ सैन सहित मूरख तह गयो । भेद अभेद न पावत भयो । (मू०ग्रं०११०६) जब रानी जान्यो जड़ आयो । दारूअहि तुरतु पलीता द्‌यायो ॥ २० ॥ ॥ दोहरा ॥ लगे पलीता सूर सभ भ्रमे गगन के मांहि । उडि उडि परे समुंद्र मै बच्यो एकऊ नाहि ॥ २१ ॥ इह चरित्र इन चंचला लीनो देस बचाइ । जैनखान सूरन सहित इह बिधि दयो उडाइ ॥ २२ ॥ १ ॥

॥ इति श्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ सात चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २०७ ॥ ३९१६ ॥ अफजूं ॥

फौज को मारकर उसने एक दूत भेज दिया कि हे जानखान ! तुम आकर मेरी पुत्री का वरण कर लो। मैंने और मेरे सब मंत्रियों ने यही मन में विचार किया है कि बादशाह के साथ हमें युद्ध नहीं करना चाहिए ॥ १६ ॥ जैनखान यह बात सुनकर फूल गया और शूरवीरों को साथ लेकर उस ओर चल पड़ा। उसने सोचा कि राजा की पुत्री ब्याहकर अभी घर ले आऊँगा और इन्हें अपना दोस्त बनाकर बादशाह से मिलवा दूंगा ॥ १७ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब रानी ने बहुत-सा बारूद लिया और उसे भूमि पर बिछा दिया। ऊपर उसने हल्का-सा बालू डाल दिया जो ज्वलनशील था और जिसे उसने नहीं देखा ॥ १८ ॥ एक दासी को बुलाया और मंडप में पुत्री को बिठाया। तब एक व्यक्ति को भेजा कि खान को कहो कि आये और ब्याह कर इसे घर ले जाय ॥ १९ ॥ वह मूर्ख भेद-अभेद को समझे बिना सेना-सहित वहाँ चला गया। जब रानी ने देखा कि मूर्ख आ गया है तो उसने तुरन्त बारूद को पलीता लगा दिया ॥ २० ॥ ॥ दोहा ॥ पलीते को आग लगते ही शूरवीर मे घूमने लगे और समुद्र मे छिटक छिटककर जा गिरे कोई भी

नहीं बचा ॥ २१ ॥ इस प्रपंच से स्त्री ने देश को बचा लिया और जनखान को वीरों-सहित उड़ा मारा ॥ २२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ सातवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २०७ ॥ ३९१६ ॥ अफजू ॥

अथ दोइ सौ आठवों चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ एक राव की पुत्रिका अटपल देवी नाम । ब्याही एक नरेश कौ जाते पूत न धाम ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ राजा जतन करत बहु भयो । पूत न धाम बिधातै दयो । तरुन अवसथहि सकल बितायो । बिरधापनो अंत गति आयो ॥ २ ॥ तब तरुनी रानी सो भई । जब ज्वानी राजा की गई । तासौ भोग राव नहि करई । याते अति अबला जिय जरई ॥ ३ ॥ ॥ दोहरा ॥ एक पुरख सौ दोसती रानी करी बनाइ । कामभोग तासौ करै नितिप्रति धाम बुलाइ ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ ताकौ धरम भ्रात ठहरायो । सभ जग महि इह भाँति उडायो । भाइ भाइ कहि रोज बुलावै । कामकेल रुचि मान कमावै ॥ ५ ॥ जौ याते मोकौ सुत होई । न्रिप को पूत लखै सभ कोई । देस बसै सभ लोग रहैं सुख । हमरो मिटे चित्त को सभ दुख ॥ ६ ॥

दो सौ आठवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ एक राजा की पुत्री का नाम अटपलदेवी था। वह एक राजा को ब्याही थी परन्तु उनके घर पुत्र नहीं था ॥१॥ ॥ चौपाई ॥ राजा ने बहुत प्रयत्न किया पर विधाता ने उन्हें पुत्र न दिया। इस प्रकार तरुणाई बीती और वृद्धावस्था आ गई ॥ २ ॥ जब राजा की जवानी बीत गई तो रानी भरपूर जवान हो गई। अब राजा उससे कामक्रीड़ा नहीं करता था, जिससे रानी मन ही मन कुढ़ती थी ॥ ३ ॥ ॥ दोहा ॥ रानी ने एक पुरुष से दोस्ती बना ली और उसे रोज़ घर पर बुलाकर उससे कामभोग कमाने लगी ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसे धर्मभाई कहकर सारे जग में यही बात उड़ा दी। उसे भाई-भाई कहकर रोज बुलाती थी और रुचिपूर्वक उससे केलिक्रीड़ा करती थी ॥ ५ ॥ वह सोचती थी जो पुत्र इससे होगा वह राजा का पुत्र देश बसे लोग सुखी रहें और हमारे भी चित्त का शोक दूर

।। अड़िल्ल ।। भाँति भाँति के भोग करत तासो भई। त्रिप की बात बिसारि सभै चित्त तें दई। लपटि लपटि गई नैनन नैन मिलाइकै। हो फसत हिरन ज्यों हिरिन बिलोकि बनाइकै ।। ७ ।। इतक दिनन राजा जू दिव के लोक गे। नशट राज लखि लोग अति आकुल होत भे। तब रानी मितवा कौ लयो बुलाइकै। हो दयो राज को साज जु छत्र फिराइकै ।। ८ ।। ।। चौपई ।। पूत न धाम हमारे भए। राजा देवलोक कौ गए। राज इह भ्रात हमारो करे। याके सीस छत्र सुभ ढरे ।। ९ ।। मेरो भ्रात राज इह करो। अत्र पत्र याके सिर ढरो। सूरबीर आग्या सभ कैहै। जहाँ पठैयै तह ले जैहै ।। १० ।। ।। दोहरा ।। रानी ऐसो बचन कहि दयो जार कौ राज। मितवा कौ राजा किया फेरि छत्र दै साज ।। ११ ।। ।। चौपई ।। सूरबीर सभ पाइ लगाए। (मू०ग्रं०११०७) गाँउ गाँउ चौधरी बुलाए। दै सिर पाउ बिदा करि दीने। आपन भोग जार सौ कीने ।। १२ ।। मेरो राज सुफल सभ भयो। सभ धन राज मित्र कौ दयो। मित्र अरु मो मै भेद न होई। बाल ब्रिध जानत सभ

हो ।। ६ ।। ।। अड़िल्ल ।। वह उससे भाँति-भाँति के भोग करने लगी और राजा को उसने लगभग मन मे भुला दिया। वह नयनों से नयन मिलाकर ऐसे लिपटती थी जैसे हिरण हिरणी को देखकर उसी में अटक जाता है ।। ७ ।। इतने समय में ही राजा भी स्वर्गवासी हो गया और लोग राज्य को नष्ट होता देख अत्यन्त व्याकुल हो गए। तब रानी ने मित्र को बुला लिया और उसे छत्र धारण करा राज्य दे दिया ।। ८ ।। ।। चौपाई ।। हमारे घर में पुत्र नहीं है और राजा देवलोक को चले गए हैं। अब मेरा भाई राज्य करेगा और इसके सिर पर छत्र झूलेगा ।। ९ ।। मेरे भाई ! तुम यह राज्य करो और छत्र-चँवर तुम्हारे ऊपर झूलेगा। तुम शूरवीरों को आज्ञा करोगे और ये जहाँ कहोगे वहीं जायँगे ।। १० ।। ।। दोहा ।। यह कहकर रानी ने मित्र को राज्य दिला दिया। मित्र को छत्र-साज देकर राजा बना दिया ।। ११ ।। ।। चौपाई ।। सब शूरवीरों को पाँव में गिराया और गाँव-गाँव से चौधरियों को बुलाया। उन्हें सम्मान देकर विदा कर दिया और स्वयं अपने मित्र से रमण किया ।। १२ ।। मेरा राज्य सफल हो गया है। उसने सब धन और राज्य मित्र को दे दिया। मुझमें और इस (मित्र) में कोई अन्तर नहीं; इसे बालक वृद्ध सभी जान लो १३ सारी प्रजा यह आपस मे कह-सुन रही

कोई ॥ १३ ॥ सकल प्रजा इह भाँति उचारैं । बैठि सदन मै मंत्र बिचारैं । नशट राज रानी लखि लयो । ताते राज भ्रात को दयो ॥ १४ ॥ ॥ दोहरा ॥ केल करत रीझी अधिक हेरि तरनि तरुनंग । राज साज ताते दयो इह चरित्र के संग ॥ १५ ॥ नशट होत त्रिय राजि लखि कियो भ्रात को दान । लोग मूड़ ऐसे कहैं सकैं न भेद पछान ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ आठवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २०८ ॥ ३९३२ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ नौ चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ धारा नगरी को रहै भरथरि राव सुजान । दो द्वादस बिद्या निपुन सूरबीर बलवान ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ भानमती ताके बर नारी । पिंगुल देइ प्राननि ते प्यारी । अप्रमान भा रानी सोहै । देव अदेव सुता ढिग कोहै ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ भानमती की अधिक छबि जल थल रही समाइ । देव दिवाने लखि भए दानव गए बिकाइ ॥ ३ ॥

थी कि रानी ने राज्य को नष्ट होने से बचा लिया और भाई को राज्य दे दिया ॥ १४ ॥ ॥ दोहा ॥ तरुणी तरुण का अंग-संग पाकर अत्यधिक मोहित हो उठी । उसने इस प्रपंच के साथ राज्य उसे दे दिया ॥ १५ ॥ राज्य को नष्ट होता देखकर स्त्री ने उसे भाई को दान कर दिया । सभी मूर्ख यह कह रहे थे और कोई भी रहस्य को पहचान नहीं सका ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ आठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २०८ ॥ ३९३२ ॥ अफजूं ॥

दो सौ नौवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ धारा नगरी का सुजान राजा भरथरी (भर्तृहरि) था । वह चौदह विद्याओं में निपुण और शूरवीर बलवान् था ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसकी एक श्रेष्ठ रानी भानुमती थी और पिंगलदेवी भी उसकी प्राणप्रिया थी । रानियों की शोभा अपरिमित थी और इनके सामने देव-अदेव भला क्या थे ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ भानुमती की सौंदर्य-चर्चा जल-थल में थी । उस पर देवगण दीवाने थे और अदेव तो मानो बिके हुए थे ३ पिंगलमती की शोभा भी अनुपम थी विधि ब्रह्मा उसे

और पिंगुलामती की सोभा लखी अपार। गढ़ि चतुरानन तवन सम और न सक्यो सुधार ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ एक दिवस न्रिप गयो शिकारा। चित भीतर इह भाँति बिचारा। बस्त्र बोरि स्रोनतहि पठाए। कहियो सिंघ भरथर हरि घाए ॥ ५ ॥ बसत्र भ्रित लै सदन सिधार्यो। उचर्यो आजु सिंघ न्रिप मार्यो। रानी उदित जरन को भई। हाइ उचरि पिंगुल मरि गई ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ त्रिया न तवन सराहियहि करत अगनि मै प्यान। धन्य धन्य अबला तेई बधत बिरह के बान ॥ ७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ खेलि अखेटक जब भरथरि घरि आइयो। हाइ करत पिंगुला मरो सुनि पाइयो। डारि डारि सिर धूरि हाइ राजा कहै। हो पठे बस्त्र जिह समै समो सो ना लहै ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ कै मैं आजु कटारी मारौ। ह्वै जोगी सभ ही घर जारौ। ध्रिग मेरो जियबो जग माही। जाके नारि (मू०ग्रं०११०८) पिंगुला नाही ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ जो भूखन बहु मोल के अंगन अधिक सुहाँहि। ते अब नागिन से भए काटि काटि तन खाँहि ॥ १० ॥

बनाकर पुनः अपनी कृति में और कोई सुधार नहीं कर सका ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ एक दिन राजा शिकार को गया और उसने मन में कुछ विचार किया। उसने वस्त्र रक्त में भिगोकर भेज दिये और कहलवा दिया कि भरथरी को शेर खा गया ॥ ५ ॥ सेवक वस्त्र लेकर महल में गया और बोला कि आज शेर ने राजा को मार डाला है। रानी जल मरने के लिए तैयार हुई और पिंगला ने तो मात्र हाय कहकर प्राण त्याग दिये ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ उस स्त्री की प्रशंसा नहीं की जानी चाहिए जो जलने को तैयार होती है। वह स्त्री धन्य है जो विरह-बाण से ही मर जाती है ॥ ७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ शिकार खेलकर जब राजा घर आया तो पिंगला को मरी सुनकर 'हाय-हाय' पुकार उठा। सिर में मिट्टी डाल-डालकर राजा हाय-हाय करने लगा कि वह समय मेरे हाथ नहीं आता, जब मैंने वस्त्र रक्त में भिगोकर भेजे थे ॥८॥ ॥ चौपाई ॥ या मैं आज कटारी मारकर मर जाऊँगा अथवा योगी बनकर घर जला दूँगा। मेरा जीना इस संसार में धिक्कार है, जिसके पास आज उसकी रानी पिंगला नहीं है ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ जो अमूल्य आभूषण अंगों पर अत्यन्त शोभा पाते थे वे अब नागिन बन गए थे और काट-काटकर अंगों को खा रहे थे १० सवैया। बीन बाँके के समान

।। सवैया ।। बाँक सो बीन शिंगार अँगार से ताल म्रिदंग क्रिपान कटारे । ज्वाल सी जौनि जुडाई सी जेब सखी घनसार किसार के आरे । रोग सो राग बिराग सो बोल बबारिब बूँदन बान बिसारे । बान से बैन भाला जैसे भूखन हारन होहि भुजंगन कारे ।। ११ ।। बाँक से बैन बिलाप से बारन ब्याध सी बाँस बियार बहीरी । काक सी कोकिल कूक कराल म्रिनाल कि ब्याल घरी किछु रीरी । भार सी भौन भयानक भूखन जौन की ज्वाल सौ जात जरीरी । बान सी बीन बिना उहि बाल बसंत को अंतकि अंत सखीरी ।। १२ ।। बैरी सी ब्यार बिलाप सौ बोल बबान सी बीन बजंत बिथारे । जंग से जंग मुचंग दुखंग अनंग कि अंकसु आँक किआरे । चाँदनी चंद चिता चहूँ ओर सु कोकिला कूक की हूक सी मारे । भार से भौन भयानक भूखन फूले न फूल फनी फनियारे ।। १३ ।। ।। चौपई ।। हो हठि हाथ सिधौरा धरिहो । पिंगुल हेत अगनि महि जरिहो । जो इह आज चंबला जीयै । तब भरथरी

श्रृंगार अंगारों समान और ताल-मृदंग कृपाण-कटारी के समान थे । चाँदनी ज्वाला के समान शीतलता और शोभा बढ़ानेवाला कपूर मानों केशों पर आरे चलाता था । राग रोग के समान, बोल वैराग्य के समान और वर्षा की बूँदें बाण के समान लगती थीं । बातें तीरों के समान, आभूषण भालों के समान और गले के हार मानों काले सर्पों के समान थे ।। ११ ।। तलवार जैसी बातें हैं, जल मानों रोग के समान और वायु बाँस के समान चुभनेवाली है । कोयल की बोली कौए के समान और कमलनाल मानों सर्प के समान हो । सारा संसार मानों गहनों के रूप में बोझ बन गया हो और चाँदनी की ज्वाला में जला जा रहा हूँ । बीन बाण के समान लगती है और उस स्त्री के बिना तो मानों वसंतऋतु का अंत आ गया हो ।। १२ ।। हवा भी शत्रु हो गई, बोलना मानों विलाप-सदृश और वीणा मानों ऐसे लग रही है जैसे मृतक के लिए शोकमय संगीत हो । मुचंग आदि लग रहा है जैसे रणवाद्य हों और अंग-अंग काम के अं श से और आरो से चीरा जा रहा है । चाँद की चाँदनी की चिता चारों ओर दिखाई दे रही है और कोकिला की कूक मन में हूक-सी मार रही है । आभूषण बोझ बन गए हैं और फूल नहीं फूले हैं मानो सर्पों ने फन फैला दिए हो १३

चौपाई मैं तो हाथ मे सिंधौरा लेकर पिंगला के लिए हठपूर्वक अग्नि में

पानि कौ पीयै ॥ १४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तब तह गोरखनाथ पहूँच्यो आइकै । न्रिप प्रति कह्यो अदेसु सु नाद बजाइकै । रानी दई जिवाइ सरूप अनेक धरि । हो सुनहो भरथरि राव लेहु गहि एक कर ॥ १५ ॥ ॥भरथरि बाच॥ ॥दोहरा ॥ काँह गहौ कौनै तजौ चित मै करै बिबेक । सभै पिंगुला की प्रभा रानी भई अनेक ॥ १६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ यौ कहि गोरखनाथ तहाँ ते जात भयो । भानमती को चित चंडार इक हर लियो । ता दिन ते राजा कौ दियो भुलाइकै । हो रानी नीच के रूप रही उरझाइकै ॥ १७ ॥ ॥ दोहरा ॥ दूतमती दासी हुती तब ही लई बुलाइ । पठै देत भी नीच सौ परम प्रीति उपजाइ ॥ १८ ॥ ॥ चौपई ॥ जब दूती तह ते फिरि आई । यो पूछो रानी तिह जाई । कहु अलि मीत कबै ह्याँ ऐहै । हमरे चित को ताप मिटैहै ॥ १९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ कहु न सहचरी साचु सजनु कब आइहै । जोर नैन सो नैन कबै मुसकाइहै । (मू०पं०११०९) लपटि लपटि करि जाउ लला सौ तौन छिन । हो कहो सखी मुहि मीत कबै है कवन दिन ॥ २० ॥ बार बार गज मुतियन गुहौ बनाइकै । अपने

जल मरूँगा । अब यदि वह स्त्री जीवित हो उठे तभी भरथरी पानी पीएगा ॥ १४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तब वहाँ गोरखनाथ आ पहुँचा और उसने अपना नाद बजाकर राजा से कहा । उसने रानी को अनेकों स्वरूपों में जीवित कर दिया और राजा से कहा कि इनमें से कोई एक ले लो ॥ १५ ॥ ॥ भरथरी उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ किसे पकड़ूँ और किसे छोड़ूँ मैं यही सोच रहा हूँ । क्योंकि पिंगला के रूपवाली तो ये अनेकों रानियाँ हो गई हैं ॥१६॥ ॥ अड़िल्ल ॥ यह कहकर गोरखनाथ वहाँ से चल पड़ा और इधर एक चांडाल ने भानुमती का चित्त चरा लिया । उसने उस दिन से राजा को भुला दिया और उस नीच के रूपजाल में उलझकर रह गयी ॥ १७ ॥ ॥ दोहा ॥ तब उसने दूतमती दासी को बुलाया और उस नीच को उसके साथ भेज दिया ॥ १८ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब दूती वापस आयी तो रानी ने उसे जाकर पूछा कि हे सखी ! बताओ मेरा मित्र फिर यहाँ कब आएगा और मेरा तन-ताप मिटाएगा ? ॥१९॥ ॥ अड़िल्ल ॥ हे सखी ! सच बताओ कि मेरा सजन कब आएगा और कब मुझसे आँखें मिलाकर मुस्कुराएगा ? उसी क्षण मैं प्रिय से लिपट-लिपटकर जाऊँगी । कहो सखी ! मित्र किस दिन आएगा ? ॥ २० ॥ मैं बार-बार मोतियों की माला बना रही हूँ और अपने प्रिय को क्षण भर मे

लला को छिन मै लेउ रिझाइकै । टूक टूक तन होइ न मोरो नैक मन । हो कासी करवत लियो प्रिया की प्रीत तन ॥ २१ ॥ बिहसि बिहसि कब गरे हमारे लागिहैं । तब ही सभ ही शोक हमारे भागिहैं । चटक चटक दै बातैं मटकि बताइहै । हो ता दिन सखी सहित हम बलि बलि जाइहै ॥ २२ ॥ जौ ऐसे झरि मिलै सजन सखि आइकै । मो मन कौ लै तब ही जाइ चुराइकै । भाँति भाँति रति करौ न छोरो एक छिन । हो बीतै मास पचासन जानौ एक दिन ॥ २३ ॥ मचकि मचकि कब कहिहैं बचन बनाइकै । लचकि लचकि उर साथ चिमटिहै आइकै । लपटि लपटि मै जाउ प्रिया के अंग तन । हो मेल मेल करि राखौ भीतर ताहि मन ॥ २४ ॥ ॥ सवैया ॥ खंजनहूँ न बद्यो कछु कै करि कंजु कुरंग कहाँ करि डारे । चारु चकोर न आने हिदै पर झुंड झखीनहु को झझकारे । मैन रह्यो मुरछाइ प्रभा लखि सार सभै सभ दास बिचारे । अंतक सोचन धीरज मोचन लालची लोचन लाल तिहारे ॥ २५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सुनत सहचरी बचन तहाँ ते तह गई । चातुरता बहु भाँति सिखावत तिह

रिझा लूँगी । मेरा तन टुकड़े-टुकड़े हो रहा है और मन मेरे वश में नहीं रहा है । मैंने तो प्रिय से प्रीति लगाकर मानों काशी में करवत (आरे) को अपने ऊपर चलवा लिया है ॥ २१ ॥ कब हँस-हँसकर मेरे गले लगेगा ? तभी मेरा सारा शोक दूर होगा । वह चटक-मटककर बातें करेगा । उसी दिन सखी ! मैं तो न्योछावर हो जाऊँगी ॥२२॥ हे सखी ! यदि मेरा सजन ऐसे मिल जाय तो मेरे मन को तत्क्षण चुरा लेगा । मैं भाँति-भाँति से उससे रतिक्रीड़ा करूँगी और एक क्षण भी उसे नहीं छोड़ूँगी और पचासों महीने बीतने पर भी एक दिन मानूँगी ॥ २३ ॥ कब वह मुझे मचक-मचककर बातें सुनाएगा और लचक-लचककर मेरे सीने के साथ आ चिपकेगा । मैं भी लिपट-लिपटकर प्रिय के शरीर से लगूँगी और अन्दर ही अन्दर अपना मन उससे मिला लूँगी ॥ २४ ॥ ॥ सवैया ॥ मैं तो अब खंजन, कमल, हिरण आदि को भी कुछ नहीं समझ रही हूँ । चकोर और मछलियों के झुंड भी अब मेरे हृदय पर कोई प्रभाव नहीं डालते । तन की प्रभा देखकर तो कामदेव मूर्च्छित होकर गिर पड़ा है और सभी मेरे दास हो गए हैं । हे प्रिय ! तुम्हारे नेत्र चिंताओं को समाप्त करनेवाले और धैर्य को छुड़ा देनेवाले हैं २५ अड़िल्ल दासी बात सुनकर वहाँ से उसके मित्र के पास

भई । बस्त्र मलीन उतारि भले पहिराइकै । हो तह ल्यावत तिह भई सु भेस बनाइकै ।। २६ ।। मन भावत जब मीत तरुनि तिन पाइयो । भाँति भाँति ताकौ गहि गरे लगाइयो । आसन चुंबन करे हरख उपजाइकै । हो तवन सखी को दारिद सकल मिटाइकै ।। २७ ।। निजिक द्रुगा की पूजा करी रिझाइयो । ताके कर ते एक अमर फल पाइयो । तिनि लै कै भरथरि राजा जूको दियो । हो जब लौ प्रिथी अकाश न्रिपत तब लै जियो ।। २८ ।। दुरग दत्त फल अमर जबै न्रिप कर पर्यो । भानमती को देउ इहै चित्त मै कर्यो । त्रिय किय मनहि बिचार कि मित्रहि दीजियै । हो सदा तरुन सो रहै केल अति कीजियै ।। २९ ।। मन भावंता मीत जदिन सखि पाइयै । तन मन धन सभ वारि वहुरु बलि जाइयै । मो मन लयो चुराइ प्रीतमहि आजु सभ । हो रहै तरुन चिरु जियै (मू०ग्रं०१११०) दियो फल ताँहि लभ ।। ३० ।। ।। चौपई ।। न्रिप को चित रानी हर लयो । अबला मनु ताके कर दयो । वह अटकत बेस्वा पर भयो । फल लै कै ताके कर दयो ।। ३१ ।। ।। अड़िल्ल ।। रही तरुनि सो

चली गई और उसे बहुत कुछ चतुरता सिखा दी, उसके मैले वस्त्र उतरवाकर उसे सुन्दर वस्त्र धारण करवाए और उसे सुन्दर वेश में वहाँ ले आई ।। २६ ।। जब मनभावन मित्र उस युवा स्त्री ने प्राप्त किया तो उसे भाँति-भाँति से गले लगाया । आसन-चुंबनादि हर्षपूर्वक दिये और उस दासी की भी सारी दरिद्रता दूर कर दी ।। २७ ।। पास ही में दुर्गा मंदिर में देवी की पूजा की और उससे एक अमरफल प्राप्त किया । वह लेकर उसने राजा भरथरी को दे दिया ताकि राजा पृथ्वी-आकाश जितनी आयु प्राप्त कर सके ।। २८ ।। दुर्गा द्वारा फल जब राजा के हाथ लगा तो उसने सोचा कि इसे भानुमती को दे दिया जाय । स्त्री ने सोचा कि मित्र को दे दिया जाय जिससे वह सदैव तरुण बना रहे और उससे केलिक्रीड़ा की जा सके ।। २९ ।। जब मनपसंद मित्र मिल जाय तो हे सखी ! तन-मन-धन सब न्यौछावर कर देना चाहिए । मेरा मन तो इस प्रियतम ने चुरा लिया है । वह सदैव तरुण बना रहे । यह सोच उसने वह फल उसे दे दिया ।। ३० ।। ।। चौपाई ।। राजा का चित्त तो रानी ने चुराया था और रानी ने अपना मन उस चांडाल के हाथों में दे दिया था वह आगे एक वेश्या मे उलझा हुआ था उसने वह फल

रीझि अंग त्रिप के निरखि। चारु किए चख रहैं सरूप अमोल लखि। फल सोई लै हाथ रुचित रुचि सौ दियो। हो जब लौ प्रिथी अकाश त्रिपति तब लौ जियो ॥ ३२ ॥ लै बेस्वा फल दियो त्रिपति कौ आनिकै। रूप हेरि बसि भई प्रीति अति ठानिकै। लै राजै तिह हाथ चित चित मै कियो। हो यह सोई द्रुम जाहि जु मै त्रिय कौ दियो ॥ ३३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ भाँति भाँति तिह लीनो सोध बनाइकै। तिह बेस्वा को पूछ्यो निकटि बुलाइकै। साच कहो मुहि यह फल तैं कह ते लह्यो। हो हाथ जोरि तिन बचन त्रिपति सौ यौ कह्यो ॥ ३४ ॥ तुम अपने चित जिह रानी के कर दियो। ताकौ एक चंडार मोहि करि मनु लियो। तवन नीच मुहि ऊपर रह्यो बिकाइकै। तब त्रिय तिह दिय तिन मुहि दयो बनाइकै ॥ ३५ ॥ मै लखि तुमरो रूप रही उरझाइकै। हरअरि सर तन बधी सु गई बिकाइकै। सदा तरनि ताको फलु हम ते लीजियै। हो कामकेल मुहि साथ हरख सो कीजियै ॥ ३६ ॥ तुम तिह त्रिय जु दयो फल अति रुचि मानिकै। तिन लै दियो चंडारहि अति हितु ठानिकै। उन

उसे ले जाकर दे दिया ॥ ३१ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ वह वेश्या राजा के अंगों पर मोहित थी, उसके सुन्दर नेत्र सदैव उसकी प्रभा को देखा करते थे। उसने वह फल लेकर राजा को दे दिया और कहा कि जब तक धरती-आकाश है, राजन् ! तुम जियो ॥ ३२ ॥ वेश्या ने राजा को आकर फल दे दिया, क्योंकि वह भी उसका रूप देखकर उसके वश में हो चली थी। राजा ने उसे हाथ में लेकर सोचा कि यह तो वही फल है जिसे मैंने पत्नी को दिया था ॥ ३३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तब उसनें विभिन्न प्रकार से पता किया और उस वेश्या को पास बुलाकर पूछा कि मुझे सच बताओ यह फल तुमने किससे लिया है ? उसने हाथ जोड़कर राजा से कहा ॥ ३४ ॥ तुमने अपने मन से जिस रानी के हाथ दिया था उसका मन एक चांडाल ने मोह लिया है। वह नीच मेरे पर बिका हुआ है। तुम्हारी स्त्री ने उसे दिया और उसने मुझे दिया है ॥ ३५ ॥ मैं तुम्हारे रूपजाल में उलझी हुई हूँ और कामासक्त हो तुम पर बिकी हुई हूँ। सदा यौवनवाला यह फल मुझसे लो और प्रसन्नतापूर्वक मेरे साथ कामक्रीडा करो ३६ तुमने जो अत्यन्त रुचिपूर्वक यह फल उसे दिया किन्तु उसने प्रेमपूर्वक वह चाण्डाल को दे दिया उसने मुझे और

मुहि मै तुहि दियो सु बिरहा की दही। हो निरखि तिहारी प्रभा दिवानी ह्वै रही ॥ ३७ ॥ है तव प्रभा बिलोकि रही उरझाइकै। ग्रहि सिगरे की संग्या दई भुलाइकै। अमर अजर फल तुमकौ दीनौ आनि करि। हो ताते मदन संताप त्रिपति हमरो प्रहरि ॥ ३८ ॥ धन्य धन्य ताकौ तब त्रिपति उचारियो। भाँति भाँति सौ ताके संग बिहारियो। लपटि लपटि बेस्वा हूँ गई बनाइकै। हो अप्रमान दुति हेरि रही उरझाइकै ॥ ३९ ॥ मन भावंतो मीत जवन दिन पाइयै। तवन घरी के पल पल बलि बलि जाइयै। लपटि लपटि करि तासौ अधिक बिहारियै। हो ततखिन द्रप कंद्रप को सकल निवारियै ॥ ४० ॥ ॥ सवैया ॥ बाल को रूप बिलोक कै लाल कछू हसिकै अस बैन उचारे। तैं अटकी सुनि सुंदरि मो पर ऐसे न सुंदर अंग हमारे। (मू०पं०११११) जीबो घनो सिगरो जग चाहत सो न रुच्यो चित माँझि तिहारो। आनि जरारि दयो हम कौ फलु दास भए हम आजु तिहारे ॥ ४१ ॥ ॥ बेस्वा वाच ॥ नैन लगे जब ते तुम सौ तब ते तव हेरि प्रभा बलि जाऊँ। भौन भंडार सुहात न मोकह सोवत हूँ बिझ के बरराऊँ। जेतिक आपनी आरबला सभ मीत के ऊपर वारि

मैंने विरहाकुल हो तुम्हें दे दिया है। मैं तो तुम्हारा सौंदर्य देखकर दीवानी हो गई हूँ ॥ ३७ ॥ मैं तुम्हारी प्रभा देखकर उलझी पड़ी हूँ और मैंने घर का भी होश भुला दिया है। अमर-अजर फल मैंने तुमको दिया है, इसलिए हे राजन् ! मेरा कामसंताप दूर करो ॥ ३८ ॥ राजा ने उसे धन्य-धन्य कहा और विभिन्न प्रकार से उससे कामक्रीड़ा की। वह वेश्या भी उससे लिपट-लिपट गई और उसकी अपार रूपशोभा में उलझ गई ॥३९॥ जब मनभावन मित्र मिल जाय उसी पल न्यौछावर हो जाना चाहिए। उससे लिपट-लिपट कर रमण करना चाहिए और उसी क्षण कामदेव का गर्व चूर कर देना चाहिए ॥ ४० ॥ ॥ सवैया ॥ उस स्त्री का रूप देखकर प्रिय ने हँसकर कहा कि हे सुन्दरी ! सुनो। तुम मुझ पर मोहित हो, ऐसे तो मेरे अंग सुन्दर नहीं हैं। सारा संसार अत्यधिक जीना चाहता है, पर तुम्हें वह भी अच्छा नहीं लगा और तुमने यह जरा का शत्रु फल मुझे दे दिया है। मैं तुम्हारा दास हो गया हूँ ॥ ४१ ॥ ॥ वेश्या उवाच ॥ जबसे तुमसे आँख लगी है तभी से तुम्हारा सौंदर्य देखकर मैं न्यौछावर हूँ। भवन भंडारादि मुझे अच्छे नहीं लगते और मैं सोती हुई तो हूँ मेरी जितनी आयु है, वह मैं तो

बहाऊँ। केतिक बात जरारि सुनो फल प्रान दै मोल पिया कह ल्याऊँ॥ ४२॥ तै जु दियो तिय को फल थो दिज तैं करि कोटि कुपाइ लियो। सोऊ लैकर जार कौ देत भई तिन रीझि कै मो पर मोहि दियो। न्रिप हौ अटकी तव हेरि प्रभा तन को तनिकै नहि ताप कियो। तिह खाहु हमै सुख देह दियो न्रिप राज करो जुग चार जियो॥ ४३॥ भरथरि बाच॥ ॥ अड़िल्ल॥ ध्रिग मुहि कौ मै जु फलु त्रियहि दै डारियौ। ध्रिग तिह दियो चंडार जु ध्रम न बिचारियो। ध्रिग ताको तिन त्रिय रानी सी पाइकै। हो दयो बेस्वहि परम प्रीति उपजाइकै॥ ४४॥ ॥ सवैया॥ आधिक आपु भख्यो न्रिप लै फल आधिक रूपमती कह दीनो। यार कै टूक हजार करे गहि नारि भिट्यार तिनै बधि कीनो। भौन भंडार बिसार सभै कछु राम को नामु ह्रिदै द्रिड़ चीनो। जाइ बस्यो तब ही बन मै न्रिप भेस को त्याग जुगेस को लीनो॥ ४५॥ ॥ दोहँरा॥ बन भीतर भेटा भई गोरख संग सुधार। राज त्याग अंम्रित लयो भरथरि राजकुमार॥ ४६॥ ॥ सवैया॥ रोवत है सु

प्रिय पर ही न्यौछावर कर दूँ। यह अमरफल क्या है, मैं तो प्राण देकर भी प्रिय को प्राप्त करूँगी॥ ४२॥ तूने जो फल स्त्री को दिया था वह अनेकों उपाय करके प्राप्त किया गया था। उसने वही अपने मित्र को दे दिया, जिसनें रीझकर मुझे दिया है। हे राजन्! मैं तो तुम्हारी प्रभा देखकर अटक गई हूँ और मुझे कोई संताप नहीं है। तुम उसे खाओ और हमें सुख दो तथा हे राजन्! चारों युगों तक जीवित रहो॥ ४३॥ ॥ भरथरी उवाच॥ ॥ अड़िल्ल॥ मुझे धिक्कार है जो मैंने उस स्त्री को फल दिया। उसको धिक्कार है जिसनें धर्म नहीं विचारा और चांडाल को दे दिया। उसको धिक्कार है जिसने रानी जैसी स्त्री पाकर भी उसे वेश्या को दे दिया। मुझे उस बेश्या ने प्रेमपूर्वक दे दिया है॥ ४४॥ ॥ सवैया॥ राजा ने आधा फल स्वयं खाया और आधा रूपमती को दे दिया। उस यार के हज़ारों टुकड़े कर दिए और उस कुलटा स्त्री को भी पकड़कर मार डाला। उसनें भवन-भंडार आदि, सबका त्याग किया और मन में राम-नाम दृढ़ कर लिया। वह वन में बस गया और उसने राजा का वेश त्यागकर योगी का वेश धारण कर लिया ४५ दोहा वन में उसकी भेंट गोरखनाथ से हुई और उस भरथरी ने राज को त्यागकर उससे दीक्षा ली ४६ सवैया नगर

कहूँ पुर के जन बौरे से डोलत ज्यों मतवारे। फारत चीर सु बीर गिरे कहूँ जूझे हैं खेत मनो जुझियारे। रोवत नार अपार कहूँ बिसंभारि भई करि नैनन तारे। त्याग कै राज समाज सभै महाराज सखी बिन आजु पधारे॥ ४७॥ निजु नारि निहारि कै भरथकुमारि बिसारि सँभारि छकी मन मै। कहूँ हार गिरै कहूँ बार लसै कछु नैकु प्रभा न रही तन मै। सख केतक बानन पीड़त भी मन जाइ रह्यो मन मोहन मै। मनो दीपक भेद सुनो सुरनाद त्रिगो गन जानु बिधी मन मै॥ ४८॥ ॥ दोहरा॥ अनिक जतन करि करि त्रिया हारत भई अनेक। बन ही को त्रिप जात भ्यो मानियो बचन न एक॥ ४९॥ जब राजा बन मै गए गोरख गुरू बुलाइ। (पृ०ग्रं०१११२) बहुरि भांति सिछ्या दई ताहि सिख्य ठहराइ॥ ५०॥ ॥ भरथरी बाच॥ कवन मरै मारे कवन कहत सुनत कह कोइ। को रोवै कवनै हसै कवन जरा जित होइ॥ ५१॥ ॥ चौपाई॥ हसि गोरख इमि बचन उचारे। सुनहु भरथहरि राज हमारे। सत्ति झूठ मूओ हंकारा। कबहू मरत न बोलनहारा॥ ५२॥

के लोग रोते हैं और बौराकर मतवाले हो दौड़ रहे हैं। कपड़ों को फाड़ते हुए वे गिरे हुए ऐसे लग रहे हैं-मानों वीर युद्ध में जूझ रहे हों। अनेकों स्त्रियाँ रो रही हैं और उनकी आँखें फटी-सी रह गई हैं क्योंकि आज राज-समाज को छोड़कर राजा वन को प्रस्थान कर गए हैं॥ ४७॥ भरथरी की स्त्रियाँ देखकर होश भूल गईं। कहीं उनके हार गिरे हुए थे, कहीं केश फँसे हुए थे और उनके शरीर में तो तनिक भी प्राण न रहे। कई तो कामासक्त थीं और उनका मन अपने प्रिय मनमोहन में लगा हुआ था। वे ऐसी लग रही थीं मानों मृगियाँ नाद सुनकर उसमें बिंध गई हों॥ ४८॥ ॥ दोहा॥ स्त्रियाँ अनेकों यत्न करके हार गईं परन्तु राजा वन को चला ही गया और उसने एक भी नहीं मानी॥ ४९॥ जब राजा वन में गया तो गुरू गोरखनाथ ने बुलाकर उसे बहुत रात तक शिक्षा-दीक्षा दी॥ ५०॥ ॥ भरथरी उवाच॥ कौन मरता है कौन मारता है! कहता और सुनता कौन है! कौन रोता है, कौन हँसता है और वृद्धावस्था को जीतनेवाला कौन है!॥५१॥ ॥चौपाई॥ गोरख ने हँसकर ऐसे कहा कि हे मेरे भरथरी! सुनो। सत्य झूठ में से अहंकार मरता है और बोलनेवाला (आत्मा) कभी नहीं मरता ५२ दोहा काल मरता है काया मरती है और काल ही

॥ दोहरा ॥ काल मरै कायाँ मरै कालै करत उचार । जीभै गुन बखयानहीं स्रवनन सुनत सुधार ॥ ५३ ॥ ॥ चौपई ॥ काल नैन ह्वै सभन निहरई । काल बकत ह्वै बाक उचरई । काल मरत काल ही मारै । भूला लोग भरम बीचारै ॥ ५४ ॥ ॥दोहरा॥ काल हसत कालै रोवत करत जरा जित होइ । काल पाइ उपजत सभै काल पाइ बध होइ ॥५५॥ ॥ चौपई ॥ कालै मरत काल ही मारै । भ्रमि भ्रमि पिंड अवारा पारै । काम क्रोध मूओ हंकारा । एक न मर्यो सु बोलणहारा ॥ ५६ ॥ आसा करत सकल जग मरई । कौन पुरखु आसा परहरई । जो नर कोऊ आस कौ त्यागै । सो हरि के पाइन सौ लागै ॥ ५७ ॥ ॥ दोहरा ॥ आसा की आसा पुरखु जो कोऊ तजत बनाइ । पाप पुन्य सर तरि तुरतु परम पुरी कह जाइ ॥ ५८ ॥ ज्यों समुंदहि गंगा मिलत सहंस धार कै साज । त्यों गोरख रिखिराज सियों आजु मिल्यो म्रिपराज ॥ ५९ ॥ ॥चौपई॥ याते मैं बिसथार न करौ । ग्रंथ बढन ते अति चित डरौ । ताते कथा न अधिक बढाई । भूल परी तह लेहु बनाई ॥ ६० ॥

बोलता है । जिह्वा तो मात्र गुणों का बखान करती है और कान मात्र सुनते हैं ॥ ५३ ॥ ॥ चौपाई ॥ काल ही नयन बनकर सबको देखता है और काल ही मुँह बनकर बात करता है । काल ही मरता है और काल ही मारता है, भूले हुए लोग भ्रम में अनेकों प्रकार से विचार करते हैं ॥ ५४ ॥ ॥ दोहा ॥ काल ही हँसता है, काल ही रोता है और काल ही जरा को जीतनेवाला है । काल के प्रभाव से लोग पैदा होते हैं और काल के अनुसार ही मरते हैं ॥ ५५ ॥ ॥ चौपाई ॥ काल में ही मरता है और काल ही मारता है और शरीर भ्रम में पड़कर भटकता है । काम, क्रोध और अहंकार तो मर जाता है केवल एक वही (आत्मा) नहीं मरता जो सदैव बोलने की शक्ति है ॥ ५६ ॥ आशाएँ करता समस्त संसार मर जाता है । कोई ऐसा पुरुष है जो आशाओं का त्याग करे । जो व्यक्ति आशाओं को त्याग देता है, वही परमात्मा के चरणों में विराजमान होता है ॥ ५७ ॥ ॥ दोहा ॥ आशा की आशा का जो कोई व्यक्ति त्याग कर देता है, वह पाप-पुण्य के सागर को तैरकर परमधाम को तुरन्त चला जाता है ॥ ५८ ॥ जैसे गंगा समुद्र को सहस्र धाराओं के साथ मिलती है वैसे ही ऋषिराज गोरखनाथ को आज राजा मिल गया है ॥ ५९ ॥ ॥ चौपाई ॥ अब मैं और विस्तार नहीं करूँगा, क्योंकि मैं ग्रंथ के बढ़ जाने से डरता हूँ इसलिए मैंने कथा को ज्यादा नहीं बढ़ाया है जहाँ

गोरख सो गोशटि जब भई। राजा की दुरमति सभ गई। सीखत ग्यान भली बिधि भयो। जल ह्वै ज्यों जल मै मिलि गयो ॥ ६१ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक मूँड भरथरि घ्रित चुअत निहारियो। हसि हसि तासो बचन इह भाँति उचारियो। जिनको लगे कटाछ राज ते खोवही। हो तुहि कर लागे तै क्यों मूढ न रोवही ॥ ६२ ॥ ॥ चौपई ॥ बीतत बरख बहुत जब भए। भरथरि देस आपने गए। चीनत एक चंचला भई। निकट रानियन के चलि गई ॥ ६३ ॥ ॥ दोहरा ॥ सुनि रनियन ऐसो बचन राजा लियो बुलाइ। भाँति भाँति रोदन करत रही चरन लपटाइ ॥ ६४ ॥ ॥ सोरठा ॥ मासा रह्यो न (मू०पं०१११३) मास रकत रंच तन ना रह्यो। स्वास न उड्यो उसास आस तिहारै मिलन की ॥६५॥ ॥ चौपई ॥ जोग कियो पूरन क्यो न्रिप बर। अब तुम राज करो सुख सौ घर। जौ सभहिन हम प्रथम सँघारो ता पाछे बन ओर सिधारो ॥ ६६ ॥ ॥ भरथरि बाच ॥ ॥ दोहरा ॥ जे रानी जोबन भरी अधिक तबै गरबाहि। ते अब रूप रहित भई रह्यो गरब कछु

भूल हो गई हो वहाँ स्वयं सुधार बना लेना ॥ ६० ॥ जब गोरख से गोष्ठी हुई तो राजा की सारी दुर्मति नष्ट हो गई। उसने भलीभाँति ज्ञान सीखा और गोरख से ऐसे मिल गया जैसे जल जल से मिल जाता है ॥ ६१ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ भरथरी ने एक खोपड़ी में से घी को रिसते (चूते) देखा और हँस-हँसकर उससे कहा कि जिनको ज़रा सा कटाक्ष भी लग जाता है वे राज खो देते हैं, फिर हे मूर्ख ! तुम भला ऐसा करके क्यों नहीं रोते हो ॥ ६२ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब बहुत वर्ष बीत गए तो भरथरी अपने देश को गया। उसे एक स्त्री ने पहचान लिया और वह रानियों के पास चली गई ॥ ६३ ॥ ॥ दोहा ॥ रानियों ने यह सुनकर राजा को बुलाया और विभिन्न प्रकार से विलाप करती हुई उसके चरणों से लिपट गई ॥ ६४ ॥ ॥ सोरठा ॥ तनिक भी मांस नहीं रहा और रक्त भी शेष नहीं बचा। तुम्हारे मिलने की आशा में साँस भी समाप्त नहीं हुई ॥ ६५ ॥ ॥ चौपाई ॥ हे राजा ! तुमने योग पूरा कर लिया है और अब तुम सुखपूर्वक राज करो। अब तो तुम पहले यदि हम सबको मार दो तो बाद में वन को प्रस्थान करो ॥ ६६ ॥ ॥ भरथरी उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ जब रानियाँ यौवनपूर्ण थीं तभी उनमें गर्व था अब वे रूपविहीन थीं और उनमें गर्व समाप्त हो चुका था ६७

नाहि ॥ ६७ ॥ ॥ चौपई ॥ अबला हुती तरुनि ते भई । तरुनि जु हुती ब्रिद्ध ह्वै गई । बिरधनि ते कोऊ लह्यो न जावै । चित को इहै असचरज आवै ॥ ६८ ॥ जे रानी जोबन की भरी । ते अब भई जरा की धरी । जे अबला सुंदर गरबाही । तिन को रह्यो गरब कछु नाही ॥ ६९ ॥ ॥ दोहरा ॥ जो मन मै गरबत तबै अधिक चंचला नारि । ते अब जीति जरा लई सकत न देह सँभारि ॥७०॥ ॥चौपई॥ जे जे त्रिया तबै गरबाही । तिन को रह्यो गरब कछु नाही । तरुनी हुती बिरध ते भई । ठौरै ठौर और ह्वै गई ॥ ७१ ॥ केसन प्रभा जात नहि कही । जानुक जटन जानुवी बही । कैधो सकल दुगध सौ धोए । ताते सेत बरन कच होए ॥ ७२ ॥ ॥ दोहरा ॥ मुकतन हीरन के बहुत इन पर किए शिंगार । ताते तिन की छबि भए तरुनि तिहारे बार ॥ ७३ ॥ जो तब अति सोभित हुते तरुनि तिहारे केस । नील मनी की छबि हुते भए रुकम के भेस ॥ ७४ ॥ ॥ चौपई ॥ कैधो सकल पुहप गुहि डारे । ताते कच सित भए तिहारे । ससि को जोनि

॥ चौपाई ॥ जो छोटी थीं वे जवान हो गयीं; जो जवान थीं वे वृद्ध हो गयीं। वृद्धाओं में अब कोई नजर नहीं आ रही थी और यही मन को आश्चर्य है ॥६८॥ जो रानियाँ यौवन से पूर्ण थीं वे अब वृद्धावस्था में पड़ी हुई थीं। जो स्त्रियाँ सुन्दरता का गर्व करनेवाली थीं अब उनका गर्व समाप्त हो चुका था ॥ ६९ ॥ ॥ दोहा ॥ जो स्त्रियाँ अधिक गर्व किया करती थीं उन्हें अब वृद्धावस्था ने जीत लिया था और अपना तन भी नहीं सँभाल पा रही थीं ॥ ७० ॥ ॥ चौपाई ॥ उस समय गर्व करनेवाली स्त्रियों का कुछ भी गर्व नहीं रह गया था। जो युवती थीं वे वृद्धा हो गई और देखते-देखते और की और हो गई थीं ॥ ७१ ॥ अब उनके केशों की छवि बयान नहीं की जा सकती। ऐसा लग रहा था मानों जटाओं में से श्वेत गंगा बह रही हो। ऐसा लगता था मानों दूध से धोए हो इसलिए बाल सफ़ेद हो गए थे ॥ ७२ ॥ ॥ दोहा ॥ इन पर मोती-हीरों के बहुत श्रृंगार किए हुए थे, इसीलिए हे तरुणी ! तुम्हारे केश इसी छटा के हो गए हैं ॥ ७३ ॥ हे तरुणी ! जो तुम्हारे केश नीलमणि के समान थे अब चाँदी के रंग के वेश के हो गए हैं ॥ ७४ ॥ ॥ चौपाई ॥ ऐसा लग रहा था मानों सारे पुष्प गूँथ दिए हों इसी से काले बाल सफेद हो गए हैं। लगता है चन्द्रमा की चाँदनी अधिक पड़ गई है जिससे

अधिकपौ परी। ताते सकल स्यामता हरी ॥ ७५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ इक रानी तब कह्यो न्रिपहि समझाइकै। मुहि गोरख कहि गए सुपन मै आइकै। जब लौ त्रिय ए जियत राज तब लौ करो। हो जब ए सभ मरि जैहै तब पग मग धरो ॥ ७६ ॥ सुनि रनियन के बचन न्रिपहि करुणा भई। तिनकै भीतर बुद्ध कछुक अपुनी दई। जो कछु पिंगुल कह्यो मान सोई लियो। हो राज जोग घर बैठ दोऊ अपने कियो ॥ ७७ ॥ ॥ दोहरा ॥ मानि रानियन को बचन राज कर्‌यो सुख मानि। (मू०ग्रं०१११४) बहुरि पिंगुल के मरे बन कौ कियो पयान ॥ ७८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ नौवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २०९ ॥ ४०१० ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ दस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ मगध देस को राव इक सरस सिंघ बड-भाग। जाके त्रासै सूर सभ रहैं चरन सौ लागि ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ चंचलकुअरि तवन की नारी। आप हाथ जगदीस

इनका कालापन हर लिया गया है ॥ ७५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तब एक रानी ने राजा से समझाकर कहा कि मुझे गोरखनाथ सपने में आकर कह गए हैं कि जब तक ये स्त्रियाँ जीवित हैं तब तक तुम राज करो। जब ये सब मर जाएँ तो तुम इस (योग) मार्ग पर पाँव रखो ॥ ७६ ॥ रानियों की बातें सुनकर राजा को दया आई। उसने अपना थोड़ा सा ज्ञान उनको दिया। जो पिंगला ने कहा वही मान लिया और घर बैठकर ही राजयोग की साधना की ॥ ७७ ॥ ॥ दोहा ॥ रानियों की बात मानकर सुखपूर्वक राज किया और पिंगला के मरने पर पुनः वन को प्रस्थान किया ॥ ७८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ नौवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २०९ ॥ ४०१० ॥ अफजूं ।

दो सौ दसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ मगध देश का राजा सरससिंह था, जिससे सभी वीर डरते थे और उसके चरणों में लगे रहते थे ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसकी रानी चंचलकुँवरि थी जिसे ने स्वयं बनाया था उसका सौंदर्य अपरिमित

सवारी। अप्रमान तिह प्रभा बिराजै। जनु रति पति की प्रिया सुराजै ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक राव को भ्रित अधिक सुंदर हुतो। इक दिन ताँहि बिलोक गई रानी सुतो। ता दिन ते सुकुमार रही उरझाइकै। हो क्रोरि जतन करि ताको लियो बुलाइकैं ॥ ३ ॥ जबै कुअरि तिन लख्यो सजन घर आइयो। चंचलकुअरि बचन इह भाँति सुनाइयो। काम भोग मुहि साथ करो तुम आइ करि। हो चित को सभ ही दीजै शोक मिटाइ करि ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ तवन पुरख इह भाँति बिचारी। रम्यो चहत मोसो न्रिप नारी। काम भोग यासौं मैं करिहौ। कुंभी नरक बीच तब परिहौ ॥ ५ ॥ नाहि नाहि तिन पुरख बखानी। तोसो रमत मैं नही रानी। ऐसे ख्याल बाल नहि परियै। बेगि बिदा ह्याँ ते मुहि करियै ॥ ६ ॥ नहीं नहीं पियरवा ज्यों करै। त्यों त्यों चरन चंचला परै। मैं तुमरी लखि प्रभा बिकानी। मदन ताप ते भई दिवानी ॥ ७ ॥ ॥ दोहरा ॥ मैं रानी तुहि रंक के चरन रही लपटाइ। कामकेल मोसो तरुन क्यों नहि करत बनाइ ॥ ८ ॥ ॥अड़िल्ल॥ अधिक मोल को रतनु जु क्योंहूँ पाइयै। अनिक जतन भे राखि न

था। वह मानों कामदेव की पत्नी रति हो ऐसी लगती थी ॥ २ ॥ अड़िल्ल ॥ राजा का एक नौकर बहुत सुन्दर था। एक दिन रानी उसको देखा और उसी दिन से उस नवयुवक में उलझकर रह गई। उ[illegible] अनेकों प्रयत्न करके उसने बुला लिया ॥ ३ ॥ जब चंचलकुँवरि ने देखा कि प्रिय घर आ गया है तो उसने यह सुनकर कहा : तुम मेरे साथ कामक्रीड़ा करो और चित्त का सभी शोक मिटाकर करो ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ उस व्यक्ति ने यह सोचा कि राजा की पत्नी मुझसे रमण करना चाहती है। यदि मैं इससे कामक्रीड़ा करूँगा तो कुंभीपाक नर्क में पड़ूँगा ॥ ५ ॥ उस पु[illegible] ने "नहीं-नहीं" कहा और बता दिया कि हे रानी ! मैं तुमसे रमण न करूँगा। ऐसा विचार हमें नहीं करना चाहिए और तुम मुझे तुरन्त वि[illegible] करो ॥ ६ ॥ जैसे-जैसे प्रिय नहीं-नहीं करता था वैसे-वैसे वह स्त्री उस[illegible] चरणों में गिरने लगी। मैं तो तुम्हारी सुन्दरता पर बिक गई हूँ और का[illegible] ताप से दग्ध हूँ ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ मैं रानी होकर तुम्हारे रंक के चर[illegible] लिपट रही हूँ। हे युवक ! तुम मुझसे कामक्रीड़ा क्यों नहीं करते हो ॥ ८ ॥ अड़िल्ल यदि कहीं से बहुमूल्य रत्न मिल जाय तो उसे यत्नपूर्वक

ब्रिथा गवाइयै। ताँहि गरे सो लाइ भली बिधि लीजियै। हो ग्रहि आवत निध नवो किवार न दीजियै॥ ९॥ तुमरी प्रभा बिलोक दिवानी मैं भई। तब ते सकल बिसारि सदन की सुधि दई। जोरि हाथ सिर न्याइ रही तव पाइ पर। हो कामकेल मुहि साथ करो लपटाइ करि॥१०॥ ॥चौपई॥ मूरख कछू बात नहि जानी। पाइन सों रानी लपटानी। मान हेत बच मानि न लयो। अधिक कोप अबला को भयो॥ ११॥ ॥अड़िल्ल॥ सुनु मूरख मै तोको प्रथम सँघारहो। (मू०ग्रं०१११५) ता पाछे निज पेट कटारी मारिहो। यहै कूप तव काल जानि जिय लीजियै। हो नातर हम सो आनि अबै रति कीजियै॥१२॥ ॥ चौपई॥ ताकी कही न मूरख मानी। तब रानी अति ह्रिदै रिसानी। फांस डारि ताको बध कियो। बहुरो डारि कूप महि दियो॥ १३॥ हाइ हाइ करि राव बुलायो। पर्‌यो कूप तिह ताँहि दिखायो। तबै न्रिपति अस बचन उचारे। सो मैं कहत हौ सुनहु पयारे॥ १४॥ ॥ दोहरा॥ याको. इतनो आरबला

कर रखना चाहिए और व्यर्थ नहीं गँवाना चाहिए। उसे भली प्रकार गले से लगा लेना चाहिए। घर में नौ निधियाँ आ रही हों तो दरवाज़ा बन्द नहीं करना चाहिए॥ ९॥ तुम्हारी सुन्दरता देखकर मैं दीवानी हो गई हूँ और तभी से मैंने घर की सारी सुधि विस्मृत कर दी है। मैं हाथ जोड़कर तुम्हारे पाँव पड़ रही हूँ कि मुझसे लिपटकर कामकेलि करो॥ १०॥ ॥ चौपाई॥ मूर्ख ने कुछ नहीं समझा कि रानी पैरों से लिपटी पड़ी है। उसका मान रखने के लिए उसने कहना मान नहीं लिया। स्त्री अत्यधिक क्रुद्ध हो उठी॥ ११॥ ॥ अड़िल्ल॥ (उसने कहा) हे मूर्ख! सुनो, मैं पहले तुम्हें मार डालूँगी और फिर अपने पेट में कटारी मार लूँगी। इस कुएँ को अपना काल समझो अन्यथा मुझसे आकर अभी रतिक्रीड़ा करो॥ १२॥ ॥ चौपाई॥ मूर्ख ने उसकी नहीं मानी और रानी हृदय में अत्यधिक रुष्ट हो गई और पाश गले में डालकर उसका वध कर दिया तथा उसे कुएँ में डाल दिया॥ १३॥ हाय-हाय करके उसने राजा को बुलाया और उसे कुएँ में पड़े हुए को दिखाया। तब राजा ने कहा कि मेरी बात सुनो। हे प्रिय! जो मैं कहता हूँ उसे ध्यान से सुनो १४ दोहा विधाता ने इसकी

बिधना लिखी बनाइ। ताले परि कूए मर्यो क्या कोऊ करै उपाइ ॥ १५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ दस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २१० ॥ ४०२५ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ गिआरह चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ नैपाली के देस मै रुद्रसिंघ न्रिप राज। सूरबीर जा के घने सदन भरे सभ साज ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ तिह अरिकुतुम प्रभा त्रिय रहै। अति सुंदरि ताकौ जग कहै। स्री तड़िताक्रित प्रभ दुहिता तिह। जीति लई ससि अंस सकल जिह ॥ २ ॥ लरिकापन ताको जब गयो। अंग अंग जोबन झमकयो। आनि मैन तिह जबै संतावै। मीत मिलन को समो न पावै ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ कंजमती इक सहचरि लई बुलाइकै। ता सौ चित की बात कही समुझाइकै। छैलकुअरि कौ तै मुहि आन मिलाइदै। हो जवन बात तुहि रुचै सु मोहौ आइलै ॥ ४ ॥ ॥ दोहरा ॥ कंजमती तिह कुअरि के अति

इतनी ही आयु लिखी थी। इसीलिए यह कुएँ में गिरकर मर गया। अ भला कोई क्या उपाय करे ॥ १५ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ दसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २१० ॥ ४०२५ ॥ अफजू ॥

दो सौ ग्यारहवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ नेपाल देश में रुद्रसिंह राजाधिराज था। उसके प अनेकों शूरवीर थे और उसके घर में भंडार भरे हुए थे ॥ १ । चौपाई ॥ उसकी स्त्री अत्यन्त लाल रंग की थी और सारा संसार अत्यन्त सुन्दर कहता था। ईश्वर की बनाई श्री तड़िता नामक उसकी पुत्री थी जिसने मानों चन्द्र-किरणों को भी जीत लिया हो ॥२॥ जब उ बचपन बीत गया तो उसके अंग-अंग में जोबन झलकने लगा। जब काम सताता था तो किसी भी मित्र से उसका मिलन नहीं हो पाता था ॥ । अड़िल्ल ॥ उसने कंजमती नामक एक सहचरी को बुलाया और उसे की बात समझाई। तुम मुझे छैलकुँवर से मिलवा दो और जो मन मुझसे माँग लो ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ कंजमती उस राजकुमारी के विरह

आतुर सुनि बैन । छैलकुअर के ग्रहि गई त्याग तुरतु निज ऐन ।। ५ ।। ।। अड़िल्ल ।। छैलकुअर कौ दियो तुरतु तिह आनिकै । रमी कुअरि तिह साथ अधिक रुचि मानिकै । छैल छैलनी छके न छोरहि एक छिन । हो जनुक नवौ निधि रांक सु पाई आजु इन ।। ६ ।। गहि गहि ताके गरे गई लपटाइकै । आसन चुंबन बहु ब्रिधि किए बनाइकै । टूटि खाट बहु गई न छोर्यो मीत कौ । हो तिह कर दियो उठाइ सु अपने चीत कौ ।। ७ ।। ।। चौपई ।। केल करत तरुनी अति रसी । जनु करि प्रेम फांस ज्यों फसी । मन मै कह्यो इसी के बरिहौ । नातर मारि कटारी मरिहौ ।। ८ ।। ।। अड़िल्ल ।। अधिक भोग प्रीतम कर दियो उठाइकै । (मू०ग्रं०१११६) आपु सोइ आंगन रही खाट डसाइकै । चमकि ठाढि उठ भी पितु आयो जानि करि । हो अधिक रोइ गिरि परी तौनही खाट तरि ।। ९ ।। ।। राजा बाच ।। ।। चौपई ।। ताहि तबै पूछ्यो न्रिप आई । क्यों रोवत दुहिता सुखदाई । जो आग्या मुहि देहु सु करिहो । तै कोपी जिह पर तिह हरिहो ।। १० ।। ।। सुता बाच ।। सोवत हुती सुपन मुहि भयो । जानक राव रांक कौ दयो । हो नहि

वचनों को सुनकर तुरन्त अपना घर छोड़कर छैलकुँवर के पास पहुँची ।। ५ ।। ।। अड़िल्ल ।। वह तुरन्त छैलकुँवर को ले आई और राजकुमारी रुचिपूर्वक उसके साथ रमण करने लगी। उस छैल को वह छैलनी एक क्षण के लिए भी नहीं छोड़ रही थी। उसे ऐसा लग रहा था मानों किसी निर्धन को नौ निधियाँ मिल गई हों ।। ६ ।। उसके गले लग-लग उससे लिपट-लिपटकर रह गई। और उससे विभिन्न प्रकार के आसन-चुंबनादि किये। पलंग टूट गया पर उसने मित्र को नहीं छोड़ा और प्रसन्नतापूर्वक उसे हाथों में उठा लिया ।। ७ ।। ।। चौपाई ।। केलिक्रीड़ा में स्त्री इतनी रम गई कि मानों वह प्रेम के पाश में फँस गई हो। मन में उसने सोच लिया कि मैं इसी का वरण करूँगी नहीं तो कटारी मारकर मर जाऊँगी ।। ८ ।। ।। अड़िल्ल ।। अत्यधिक भोग-विलास के बाद उसने प्रियतम को उठा दिया और स्वयं आँगन में पलंग पर सो रही। पिता को आता जान हड़बड़ाकर उठ खड़ी हुई और अधिक रोकर खाट पर गिर पड़ी ।। ९ ।। ।। राजा उवाच ।। ।। चौपाई ।। तब राजा ने आकर पूछा कि पुत्री ! तुम क्यों रो रही हो ? तुम मुझे जो कहो मैं करूंगा। तुम्हारा क्रोध जिस पर हो मैं उसे मार डालूँगा ।। १० ।।

सुता उवाच मुझ सोती हुई को सपना आया कि राजा ने मुझे किसी

जोग्य हुती पितु ताके । तैं ग्रहि दयो सुपन मै जाके ॥ ११ ॥ ॥ दोहरा ॥ जानुक आगि जराइकै लईं भावरैं सात । बाँह पकरि पितु तिहु दई सुता दान करि मात ॥ १२ ॥ ॥ सोरठा ॥ मैं तिह हुती न जोग जाकौ मुहि राजै दियो । ताँते भई सु सोग रोवत हौ भरि जल चखन ॥ १३ ॥ ॥ चौपई ॥ अब मोरे परमेसर ओहू । भला बुरा भाखौ जन कोऊ । प्रानन लगत तवन कौ बरिहौ । नातरि मारि कटारी मरिहौ ॥ १४ ॥ ॥ दोहरा ॥ सुपन बिखै माता पिता जिह मुहि दियो सुधारि । मन बच क्रम करकै भई मैं ताही की नारि ॥ १५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ कै मरिहौ बिख खाइ कि वाही कौ बरौ । बिनु देखे मुख नाथ कटारी हनि मरौ । कै मोकउ वह दीजै अबै बुलाइकै । हो नातर हमरी आसा तजहु बनाइकै ॥ १६ ॥ कहि कहि ऐसे बचन मूरछना ह्वै गिरी । जनु प्रहार जमधर के किए बिना मरी । आनि पिता तिह लियो गरे सौ लाइकै । हो कुअरि कुअरि कहि धाइ पई दुख पाइकै ॥ १७ ॥ जो सुपने तैं बर्यो सु हमै बताइयै । करियै वहै उपाइ मनै सुखु पाइयै । बहु चिर द्रिगन पसारि पिता की

निर्धन को सौंप दिया है। हे पिता! क्या मैं तुम्हारे (घर के) योग्य नहीं हूँ जो तुमने मुझे सपने में (इस प्रकार) दे दिया है ॥ ११ ॥ ॥ दोहा ॥ आग जलाकर सात फेरे लिये और माता-पिता ने बाँह पकड़कर मुझे दान कर दिया है ॥ १२ ॥ ॥ सोरठा ॥ मैं तुम्हारे योग्य नहीं हूँ, इसीलिए हे राजन्! मुझे तुमने दे दिया। इसी से मैं दुखी हूँ और आँखों में पानी भरे रो रही हूँ ॥ १३ ॥ ॥ चौपाई ॥ अब मेरा तो वही परमेश्वर है, मुझे कोई भला-बुरा न कहे। अब तो प्राणों के रहते उसी का वरण करूँगी अथवा कटारी मारकर मर जाऊँगी ॥ १४ ॥ ॥ दोहा ॥ सपने में माता-पिता ने जिसे मुझे सोच-समझकर दे दिया है, मैं तो अब मन-वचन एवं कर्म से उसी की स्त्री हो गई हूँ ॥ १५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ मैं विष खाकर मर जाऊँगी अथवा उसी का वरण करूँगी। नाथ को देखे बिना मैं कटारी मारकर मर जाऊँगी। मुझे तो तुरन्त उसे बुलाकर दो अथवा मेरी आशा छोड़ दो ॥ १६ ॥ वह यह कहती-कहती मूर्च्छित होकर गिर पड़ी। ऐसा लगा मानों तलवार का वार किये बिना ही वह मर गई हो। पिता ने आकर उसे गले से लगा लिया और माता भी कुँवरि-कुँवरि कहकर दुखपूर्वक गिर पडी ॥ १७ ॥ जो तुमने सपने में वरण किया है वह मुझे बताओ हम उसी का उपाय करेंगे

ओहि चहि । कछु कहबे कौ भई गई ना ताहि कहि ॥ १८ ॥ करत करत बहु चिर लौ बचन सुनाइयो । छैलु कुअरि को सभहिन नाम सुनाइयो । सुपन बिखै पितु मात सु मुहि जाको दियो । हो वहै आपनो नाथ मानिकै मैं लियो ॥ १९ ॥ ॥ चौपई ॥ धन्य धन्य तब राव उचार्यो । इह पतिब्रता सुता बीचार्यो । जो इह चहै वहै इह दीजै । तिह करि राव राँक ते लीजै ॥ २० ॥ न्रिपबर बोल तबन कह लियो । छोरि भंडार अमित धन दियो । रंक हुतो राजा ह्वै गयो । लेत सुता राजा की भयो ॥ २१ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ छैल (मू०पं०१११७) कुअरि कौ न्रिपबर लियो बुलाइकै । बेद बिधन सौ दुहिता दई बनाइकै । छैल छैलनी इह छल छल्यो सुधारि करि । हो भेद न किनहूँ मूरख समझ्यो चित्त धरि ॥ २२ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल सौ तिह छैलनी छैल बर्यो सुख पाइ । मुख बाँए सभ को रह्यो लह्यो न भेद बनाइ ॥ २३ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ गिआरह चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २११ ॥ ४०४८ ॥ अफजूं ॥

और सुख प्राप्त करेंगे । काफ़ी देर तक आँखें फैलाकर वह पिता की ओर देखती रही और कुछ कहना चाहकर भी न कह सकी ॥ १८ ॥ धीरे-धीरे उसने बातचीत शुरू की और छैलकुँवर का नाम सबको सुना दिया । सपने में जिसे मुझे मेरे माता-पिता ने दे दिया है उसे ही मैंने अपना नाथ मान लिया है ॥ १९ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजा ने उसे धन्य-धन्य कहा और अपनी उस पुत्री को पतिव्रता माना । उसने सोचा कि जो इसे चाहिए वही दिया जाना चाहिए । आओ राजा से वह निर्धन ले लो ॥ २० ॥ राजा ने उसे बुलाया और भंडार खोलकर उसे अपरिमित धन दिया । रंक था राजा हो गया और उसने राजा की पुत्री ग्रहण कर ली ॥ २१ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ छैलकुँवर को राजा ने बुलाया और वैदिक विधि से पुत्री का विवाह उससे कर दिया । छैल और छैलनी ने इस प्रकार सबको ठगा और कोई भी मूर्ख इस भेद को समझ नहीं सका ॥ २२ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार छल से उस छैलनी ने छैल का वरण कर लिया । सभी मुँह बाये खड़े रहे कोई भी भेद न समझ सका ॥ २३ ॥ १ ॥

श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ ग्यारहवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति । २११ । ४०४८ । अफजूं

अथ दोइ सौ बारह चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ शहिर बुखारा मै रहै एक राव मुचकंद । सूरत के भीतर गड्यो जनु दूजो बिधि चंद ॥ १ ॥ हुसनजहाँ ताकी त्रिया जाको रूप अपार । स्री सुकुमारमती रहै दुहिता तिह सुभ कार ॥ २ ॥ एक पूत ताते भयो स्री सुभ करन सुजानु । सूरबीर सुंदर सरस जानत सकल जहान ॥ ३ ॥ चलन चातुरी के बिखै चंचल चार प्रबीन । जनुक चित्र की पुत्रका गढ़ि बिधि और न कीन ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ तरुन भ्रात भगनी भे दोऊ । राज करत न्रिप मरि ग्यो सोऊ । हुसनजहाँ बिधवा रहि गई । पति बिनु अधिक दुखातुर भई ॥ ५ ॥ मिलि साऊअन इह भाँति उचारो । राज करो सुत तरुन तिहारो । मन को शोक निवारन कीजै । हेरि हेरि सुत की छबि जीजै ॥ ६ ॥ केतिक दिवस बीति जब गए । राज करत सुख सौ ते भए । सुत सुंदर माता लखि पायो । राजा को चित ते बिसरायो ॥ ७ ॥ ॥ दोहरा ॥ नरी गंध्रबी नागनी प्रभा बिलोकत आइ । सुरी आसुरी किंन्रनी हेरि रहत

दो सौ बारहवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ बुखारा शहर में मुचकंदराव नामक व्यक्ति रहता था, जिसे विधाता ने मानों दूसरा चन्द्रमा बनाया था ॥१॥ उसकी स्त्री हुस्नजहाँ थी जो अपार रूपवती थी और उसकी पुत्री सुकुमारमती थी ॥ २ ॥ उसका एक पुत्र था जिसका नाम शुभकर्ण था जिसे सारा संसार सुन्दर और रसिक के रूप में जानता था ॥ ३ ॥ वह चतुर, चंचल और प्रवीण था और ऐसा लगता था मानों सुन्दर चित्र हो और उसे बनाने के बाद विधाता ने किसी अन्य को न बनाया हो ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ दोनों भाई-बहिन जवान हुए और राज करता-करता राजा मर गया । हुस्नजहाँ विधवा होकर पति के बिना अत्यन्त दुखी हुई ॥ ५ ॥ मंत्रियों ने कहा कि अब तुम्हारा जवान पुत्र राज करेगा । मन का शोक दूर करो और पुत्र की छवि देखकर जीवन व्यतीत करो ॥ ६ ॥ जब राज करते कितने ही वर्ष बीत गए तब माता ने सुन्दर पुत्र को देखा और राजा को मन से भुला दिया ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ नारियाँ, गंधर्व-नाग-स्त्रियाँ सुर असुर एवं किन्नर-स्त्रियाँ उसकी प्रभा को देखकर उसी में उलझ रही थी ८ कुंवर की सुन्दरता देखकर सभी अन्य-अन्य कहती

उरझाइ ॥ ८ ॥ हेरि कुअर की छबि सभै धंनि धंनि कहै पुकारि । मनि मोती कुंडल कनक देत तवन पर वारि ॥ ९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ ऐसो कुअर एक दिन जौ सखि पाइयै । जनम जनम इह ऊपर बलि बलि जाइयै । उर भए लेहि लगाइ न न्यारो कीजियै । हो निरखि निरखि छबि अमित सजन की जीजियै ॥ १० ॥ जिको तरुनि पुरि नारि कुअरि की छबि लहै । उड लपटों इह संग यहै चित्त मै कहै । एक बार इह छैल चिकनियहि पाइयै । हो जनम जनम जुग क्रोरि सु बलि बलि जाइयै ॥११॥ अधिक कुअर की प्रभा बिलोकहि आइकै । जोरि जोरि द्रिग रहैं कछू (मू०पं०१११८) मुसकाइकै । परम प्रीति तन बिधी दिवानी ते भई । हो लोक लाज की बात बिसरि चित तें गई ॥ १२ ॥ नरी सुरी किन माँहि आसुरी गंध्रबी । कहाँ किंन्रनी कूर जच्छनी नागनी । लछमि आदि दुति हेरि रहै उरझाइकै । हो बिनु दामन कै दिए सु जात बिकाइकै ॥ १३ ॥ रही चंचला रीझयति प्रभा निहारिकै । प्रानन लौ धन धाम देत सभ वारिकै । हसि हसि कहैं कुअर जौ इक दिन पाइयै । हो बहुर न न्यारो करियै हिये

थीं और मोती, मणि, कनक-कुंडल सब उस पर न्योछावर कर दे रही थी ॥ ९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ हे सखी ! ऐसा कुँवर यदि कभी मिल जाय तो जन्म-जन्म तक इस पर बलिहार जाया जाय । उसे सीने से लगा लें और कभी अलग न करें और ऐसे प्रिय की छवि देख-देखकर ही जीवित रहें ॥१०॥ नगर की जो भी तरुणी उस कुँवर की छवि देखती उससे उड़कर लिपटने की चाह मन में रखती । वह सोचती कि ऐसा चिकना छैला यदि एक बार पा जायें तो करोड़ों जन्मों तक उस पर बलिहार जायँ ॥ ११ ॥ अनेकों उस कुंवर की शोभा आकर देखती थी और नेत्र उसी पर गड़ाकर मुस्कुराती थी । उसकी परमप्रीति में वे दीवानी हो गयी और सभी लोक-लाज भी उनके मन से भूल गई ॥ १२ ॥ नारी, सुर-स्त्री, असुर-गंधर्व-स्त्री, किन्नरनी, यक्षिणी एवं नाग-स्त्रियाँ आदि सभी उसकी छवि देखकर उलझ गई थीं और बिना दाम के ही उसके हाथों बिक गई थीं ॥ १३ ॥ स्त्रियाँ उसकी प्रभा देखकर रीझ रही थीं और धन-प्राण आदि न्योछावर कर रही थीं । सभी हँस-हँस कर कहती थीं कि यदि एक दिन कुँवर को पा जायें तो फिर उसे अपने से अलग नहीं करेंगी और उसे हृदय से लगाकर रखेंगी १४

लगाइयै ॥ १४ ॥ ॥ दोहरा ॥ स्री सुकुमारमती बहनि ताकी राजकुमारि । अप्रमान छबि भ्रात की रीझत भई निहारि ॥१५॥ ॥ चौपई ॥ निसु दिन यौ मन माहि बिचारै । किह बिधि मौसौ कुअर बिहारै । भ्रात लाज मन महि जब धरै । लोक लाज की चिंता करै ॥ १६ ॥ लाज करै अरु चित्त चलावै । क्योहूँ कुअर हाथ नहि आवै । इक चरित्र तब बचित बिचार्यो । जाते धरम कुअर को टार्यो ॥ १७ ॥ बेस्वा रूप आपनो करियो । बार बार गजमोतिन जरियो । हार शिगार चारु तन धारे । जन ससि तीर बिराजत तारे ॥ १८ ॥ पान चबात सभा मै आई । सभ लोगन कौ लयो लुभाई । न्रिप कह अधिक कटाछ दिखाए । जानुक बिना साइकन घाए ॥१९॥ हेरत न्रिपत रीझि छबि गयो । घाइल बिना साइकन भयो । आजु निसा इह बोल पठैहो । कामभोग रुकि मानि कमैहो ॥ २० ॥ बीत्यो दिवस निसा जब भई । निकटि बुलाइ कुअर वहु लई । कामभोग तिह साथ कमायो । भेद अभेद कछू नहि पायो ॥ २१ ॥ ॥ दोहरा ॥ लपटि लपटि

॥ दोहा ॥ उसकी बहिन राजकुमारी सुकुमारमती थी जो भाई की अपरिमित छवि देखकर रीझ गई थी ॥ १५ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह दिन-रात यही सोचती थी कि कैसे भी कुँवर मुझसे रमण करे । भाई मन में लज्जित होता था और वह भी लोक-लाज की चिंता करती थी ॥ १६ ॥ लाज लगती थी पर चित्त भी चंचल था । किसी भी प्रकार कुँवर हाथ नहीं लग रहा था । तब उसने एक प्रपंच किया जिससे कुँवर का धर्म भ्रष्ट कर दिया ॥ १७ ॥ उसने अपना वेश्या-रूप बनाया और हीरे-मोती के जड़ाऊँ वस्त्र धारण किये । उसने तन पर सुन्दर हार-शृंगार धारण किया और ऐसी लग रही थी मानों तारों में चन्द्रमा हो ॥ १८ ॥ पान चबाती वह सभा में आयी और सब लोगों को उसने लुभा लिया । राजा को अधिक कटाक्ष दिखाए और मानों उसे बिना बाणों के ही घायल कर दिया ॥ १९ ॥ राजा छवि देखकर मुग्ध हो गया और मानों बिना बाणों के ही घायल हो गया । उसने सोचा कि आज रात को इसे बुलाऊँगा और कामक्रीड़ा रुचिपूर्वक करूँगा ॥ २० ॥ दिन बीतने पर जब रात हुई तो उसने उस कुँवरि को पास बुलाया । उसके साथ उसने रतिक्रीड़ा की और भेद-अभेद कुछ भी नहीं जाना ॥ २१ ॥ दोहा कुवर ने उससे लिपट-लिपटकर रमण किया और इस प्रकार

तासो कुअरि रति मानी रुचि मानि । भ्रात भगनि के भेद को सकल न भयो पछान ॥ २२ ॥ ॥ सोरठा ॥ रमत भयो रुचि मानि भेद अभेद पायो न कछु । छैली छल्यो निदान छैल चिकनिया राव को ॥ २३ ॥ ॥ चौपई ॥ बेस्वा के भूखन जब धरै । निस दिन कुअर कलोलै करै । जब भगनी के भूखन धरई । लहै न को राजा को करई ॥ २४ ॥ १ ॥ (मू०ग्रं०१११६)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ बारह चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २१२ ॥ ४०७२ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ तेरवाँ चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ राजा खंड बुंदेल को रुद्रकेत तिह नाम । सेव रुद्र की रैनि दिन करते आठहूँ जाम ॥१॥ ॥चौपई॥ स्री क्रितु क्रितमती त्रिय ताकी । और न बाल रूप सम वाकी । तासो नेह त्रिपति को भारो । निजु मन कर ताके दै डारो ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ स्री म्रिग नैन सरूप अति दुहिता ताकी एक । लहि न गई राजा बडे चहि चहि रहे अनेक ॥३॥

भाई बहिन के रहस्य को न जान सका ॥ २२ ॥ ॥ सोरठा ॥ रुचिपूर्वक रमण किया और भेद-अभेद कुछ नहीं जाना । इस प्रकार उस छैली ने सुन्दर राजा को छल लिया ॥ २३ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब वह वेश्या के आभूषण धारण कर लेती थी तो रात-दिन रतिक्रीड़ा करती थी और जब बहिन के वस्त्र-आभूषण पहनती थी तो उसकी तरफ़ कोई भी नहीं देखता था और किसी को पता भी नहीं लगता था ॥ २४ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ बारहवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २१२ ॥ ४०७२ ॥ अफ़ज़ू ॥

दो सौ तेरहवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ बुंदेलखंड का राजा रुद्रकेतु था जो आठों प्रहर रुद्र की पूजा किया करता था ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ कृतकृत्यमती उसकी रानी थी जिसके समान अन्य कोई रानी नहीं थी । राजा का उससे अपार प्रेम था और उसने अपना मन उसे दे रखा था ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ मृग की आँखों वाली उसकी एक पुत्री थी जिसे बड़े-बड़े राजा भी चाहने पर नहीं पा सके ३ उस चक्षमती ने इन्द्रकेत नामक एक क्षत्रिय देखा और

इंद्रकेतु छवी हुतो चचछुमती लहि लीन । अपनो तुरत निकारि मनु बेचि तवन कर दीन ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ रैनि दिवस तिह रूप निहारै । चित्त मै इहै बिचारु बिचारै । ऐसो छैल कैसहूँ पैयै । कामभोग करि गरे लगैयै ॥ ५ ॥ एक सखी कह निकट बुलायो । मन भावन के सदन पठायो । सहिचरि ताहि तुरतु लै आई । आनि कुअर कह दयो मिलाई ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ मन भावंत मीत कुअर जब पाइयो । द्रिढ़ गहि गहि करि ताकौ गरे लगाइयो । अधरन को करि पान सु आसन बहु किए । हो जनम जनम के शोक बिसारि सभै दिए ॥ ७ ॥ शिव मंदरि में जाइ भोग तासौ करै । महांरुद्र की कानि न कछु चित मै धरै । ज्यों ज्यों जरकै खाट सु घंट बजावहीं । हो पूरि तवन धुनि रहै न जड़ कछु पावही ॥ ८ ॥ एक दिवस पूजत शिव न्रिप ग्यो आइकै । सुता सहचरी पितु प्रति दई उठाइकै । जाइ राव के तीर सखी तुम यौ कहौ । हो हम पूजा ह्याँ करत घरी द्वै तुम रहौ ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ स्री शिव की पूजा करत हमरी सुता बनाइ । घरी द्वैकु हम बैठि ह्याँ बहुरि पूज है जाइ ॥ १० ॥ ॥ चौपई ॥ उतै मीत तिन

अपना मन तुरन्त उसके सामने बेच दिया ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ रात-दिन वह उसकी छटा देखती और मन में विचार करती कि कैसे ऐसा छैला पा जाऊँ और कामभोग कर उसे कैसे गले लगाऊँ ॥ ५ ॥ उसने एक सखी को पास बुलाया और अपने मनभावन के घर भेजा । सखी उसे तुरन्त ले आई और उसने उसे कुँवरि से मिला दिया ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जब मनभावन कुँवर उसे मिल गया तो उसने उसे दृढ़तापूर्वक पकड़-पकड़कर गले लगाया । अधरपान और बहुत से आसन किए तथा जन्म-जन्म के शोकों को मन से दूर कर दिया ॥ ७ ॥ वह शिव-मंदिर में जाकर रोज़ उससे कामक्रीड़ा करती और शिव की भी कुछ परवाह न करती । जैसे-जैसे पलंग चीख़ता तो वह घंटा बजाती और सभी मूर्ख उस आवाज़ को सुनकर कुछ भी भेद न समझ पाते थे ॥ ८ ॥ एक दिन राजा पूजा के लिए आ गया तो पुत्री ने अपनी दासी को उसके पास भेजा कि हे सखी ! तुम जाकर राजा से कह दो कि मैं यहाँ पूजा कर रही हूँ, इसलिए तुम दो घड़ी रुक जाओ ॥९॥ ॥दोहा॥ राजा ने सोचा कि मेरी पुत्री पूजा कर रही है इसलिए मैं दो घड़ी रुककर फिर पूजा कर लूंगा १० चौपाई इधर उसने मित्र को बुला लिया और

लियो बुलाई । कामरीति करि प्रीतुपजाई । करि करि कुवति सेज चरकावै । एक हाथ तन घंट बजावै ॥ ११ ॥ भाँति भाँति ताकौ रति कीनी । न्रिप जड़ धुनि घंटा की चीनी । भेद अभेव कछू नहि पायो । इह दुहिता कस करम कमायो ॥ १२ ॥ तासौ भोग बहुत बिधि कीनो । लपटि लपटि आसन कह दीनो । चुंबन आलिगन कीने तिन । भेद न लह्यो मूढ़ राजै इन ॥ १३ ॥ कामकेल तासौ बहु कियो । बहुरो छोर द्वार कह दियो । पठै सहचरी पिता बुलायो । मन मै अधिक जार दुख पायो ॥ १४ ॥ (मू०ग्रं०११२०) याको पिता मोहि गहि लैहै । बहुरि हमै जमपुरी पठैहै । चिंतातुर थरहरि कंपावै । ज्यों कदली कह बात डुलावै ॥ १५ ॥ ॥चौपई॥ ॥ जार बाच ॥ मोरो प्रान राखि अब लीजै । नाहक मुहि न अजाएँ कीजै । मोरो मूंडि काट न्रिप देहै । कापरबी के कंठ चढ़ैहै ॥ १६ ॥ ॥ सुता बाच ॥ ॥चौपई॥ तिन कहियो तरुन न चिंता करो । धीरज चित्त आपने धरो । तेरो अब मै प्रान उबरिहौ । पित हेरत तोकौ पति करिहौ ॥ १७ ॥ आप पिता तन जाइ उचरी । मो पर क्रिपा अधिक शिव करी ।

उसके साथ प्रेमपूर्वक कामक्रीड़ा की। अब इधर शय्या कड़कड़ाने लगी और वह एक हाथ से घंटा बजाने लगी ॥ ११ ॥ भाँति-भाँति से उसने रति-क्रिया की और राजा घंटे की ध्वनि ही समझता रहा। इस पुत्री ने कैसा कर्म किया है, इस रहस्य को वह नहीं समझ सका ॥ १२ ॥ उससे उसने अनेक विधियों से भोग किया और लिपट-लिपटकर आसन लगाए। उधर उसने चुंबन-आलिंगन किए और इधर इस मूर्ख राजा ने कोई भेद नही जाना ॥ १३ ॥ उससे अत्यधिक रतिक्रीड़ा कर उसे द्वार पर छोड़ दिया। अब उसने दासी को भेजकर पिता को बुलाया जिससे उस मित्र को मन में अत्यन्त दुख हुआ ॥ १४ ॥ इसका पिता मुझे पकड़ लेगा और मारकर यम-लोक पहुँचा देगा। वह चिंतातुर होकर ऐसे काँपने लगा मानों कदली को हवा हिला रही हो ॥ १५ ॥ ॥ चौपाई ॥ ॥ मित्र उवाच ॥ अब मेरे प्राण बचाओ और नाहक ही मेरी जान मत गँवाओ। राजा मेरा सिर काट लेगा और शिव के गले में डाल देगा ॥१६॥ ॥ सुता उवाच ॥ ॥ चौपाई ॥ उसने कहा कि हे तरुण ! चिंता मत करो और अपने चित्त में धैर्य रखो। मैं अभी तुम्हारे प्राण बचाऊँगी और पिता के देखते-देखते तुम्हें पति के रूप में वरण करूँगी १७ स्वयं पिता के पास जाकर कहने लगी कि मेरे पर शिव ने

निजु कर पकरि मोहि पति दीनो। हम पर अधिक अनुग्रहु कीनो ।। १८ ।। चलहु पिता तह ताँहि दिखाऊँ। तासौ बहुरि सु ब्याह कराऊँ। बाँहि पकरि राजा कौ ल्याई। आनि जार सौ दियो दिखाई ।। १९ ।। धन्य धन्य ताकौ पितु कहियो। कर सौ करि दुहिता कौ गहियो। क्रिपा कटाछ अधिक शिव कीनो। ताते बर उतम तुहि दीनो ।।२०।। तुम पर क्रिपा जु शिवजू कीनो। हमहूँ आजु ताहि तुहि दीनो। बोलि दिजन कह ब्याह करायो। भेद अभेद मूड़ नहि पायो ।। २१ ।। ।। दोहरा ।। इह चरित्र तह चंचला ब्याह जार सो कीन। पितु हूँ लै ताको दई सक्यो न छल जड़ चीन ।। २२ ।। १ ।।

।। इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ तेरवाँ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ।। २१३ ।। ४०९४ ।। अफजूँ ।।

अथ दोइ सौ चौदस चरित्र कथनं ।।

।। चौपई ।। चाँदा शहिर बसत जह भारो। धरनीतल महि अति उजियारो। बिसुनकेत राजा तह रहई। करम

अत्यन्त कृपा की है। उसने स्वयं अपने हाथों से मुझे पति दिया है और मुझ पर अत्यन्त कृपा की है ।। १८ ।। हे पिता ! चलो मैं तुम्हें दिखाती हूँ और उसी से ब्याह रचाती हूँ। वह बाँह पकड़कर राजा को ले आयी और आकर उसने अपना मित्र दिखा दिया ।। १९ ।। पिता ने धन्य-धन्य कहा और पुत्री का हाथ पकड़ा। शिव ने अत्यधिक कृपा की है और तुम्हें उत्तम वरदान दिया है ।। २० ।। तुम पर शिव ने कृपा की है, इसलिए मैं तो तुम्हें शिव को ही दान करता हूँ। ब्राह्मणों को बुलाकर विवाह किया और मूर्ख ने भेद-अभेद कुछ नहीं जाना ।। २१ ।। ।। दोहा ।। इस प्रपंच से उस स्त्री ने अपने मित्र से विवाह किया। पिता भी मूर्ख समझ न सका और स्वयं उसने उसे दे दिया ।। २२ ।। १ ।।

।। श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ तेरहवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ।। २१३ ।। ४०९४ ।। अफजूं ।।

दो सौ चौदहवाँ चरित्र-कथन

चौपाई चाँदा शहर एक भारी बस्ती थी जो धरती पर अत्यन्त स्थान था विष्णुकेतु वहाँ का राजा था जो कम धर्म शौच व्रत

धरम सुचि अत खग कहई ॥१॥ स्री बुंदेलमती ताको त्रिय। जा महि बसत सदा न्रिप को जिय। स्री गुलजारमती दुहिता तिह। कहूँ न तरुनि जगत मै सम जिह ॥२॥ ॥दोहरा॥ तिन इक तरुन बिलोक्यो अमित रूप की खानि। लीनो सदन बुलाइकै रमत भई रुचि मानि ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ तासौ लपटि करत रस भई। ग्रहि की सुधि सभहूँ तजि दई। निस दिन तासौ भोग कमावै। लपटि लपटि ताके उर जावै ॥ ४ ॥ ॥ दोहरा ॥ तरुन पुरख तरुनी तरुन बाढी प्रीति अपार। लपटि लपटि आसन करै हेरि हेरि मुख यार ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ रैनि दिवस तासौ रति करै (मू०ग्रं०११२१) मात पिता तें चित मै डरै। पिय मुहि कह्यो संगि कर लीजै। अवरै देस पयानो कीजै ॥ ६ ॥ द्वै बाजन आरूढ़ित ह्वैहैं। पितु को सकल खजानो लैहैं। मनभावत तोसौ रति करिहौ। सकल द्रप कंद्रप को हरिहौ ॥ ७ ॥ भली भली तब ताँहि बखान्यो। ताँको बचन सत्य करि मान्यो। पितु को लेत खजाना भई। चाँदा छोरि दच्छिनहि गई ॥ ८ ॥ लेखत इहै भवन मै भई। हौ तीरथ न्हैबे को गई। मिलिहौ तुमै

एवं खड्ग का धनी था ॥१॥ बुंदेलमती उसकी स्त्री थी जिसमें राजा का मन हमेशा निवास करता था। उसकी पुत्री गुलजारमती थी जिसके समान अन्य कोई स्त्री नहीं थी ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ उसने अपरिमित रूप-सौंदर्यवाला एक युवक देखा। उसे उसने घर बुलवाया और रुचिपूर्वक रमण किया ॥३॥ ॥ चौपाई ॥ उससे लिपटकर रसरूप हो गई और घर की सुधि उसे भूल गई। रात-दिन उससे रतिक्रीड़ा करती थी और लिपट-लिपटकर उसके गले लगती थी ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ पुरुष भी तरुण और स्त्री भी तरुण थी, दोनों में अपार प्रीति बढ़ी। वह लिपट-लिपट और मित्र का मुख देख-देखकर उससे आसन करती थी ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ रात-दिन उससे रतिक्रीड़ा तो करती थी पर चित्त में माता-पिता से डरती थी। प्रियतम से उसने कहा कि मुझे साथ लेकर किसी अन्य देश को प्रस्थान कर जाओ ॥ ६ ॥ दो घोड़ों पर सवार होंगे और पिता का समस्त खज़ाना ले लेंगे। तुमसे मनचाही रतिक्रिया करूँगी और कामदेव का समस्त दर्प चूर कर दूंगी ॥ ७ ॥ उसने भले प्रकार से (अपने आगामी जीवन का) बखान किया और उस युवक ने भी उसकी बात को सत्य मान लिया वह पिता का खज़ाना लेकर चाँदा नगर छोड़कर दक्षिण में चली गई ८ घर में सबको यहा कहा कि तीर्थ-

जियत जो आई । जौ मरि गई त राम सहाई ॥ ९ ॥ ग्रहि को सकल दरबु संग लैकै । उधरि चली तासौ हित कैकै । लपटि लपटि तासौ रति करै । द्रप कंद्रप को सभ ही हरै ॥१०॥ बीतत बरख बहुत जब भए । सभ ही खाइ खजानो गए । भूखो मरन तरुनि जब लागी । तब ही छोरि प्रीतमहि भागी ॥११॥ ॥ अड़िल्ल ॥ बहुरि शहिर चाँदा मै पहुची आइकै । मात पिता के पगन रही लपटाइकै । मैं जु तीरथन धरम कर्‌यो सो लीजियै । हो अरध पुंन्य दै मोहि असीसा दीजियै ॥ १२ ॥ सुनि सुनि ऐसे बचन रीझि राजा रह्यो । धन्य धन्य दुहिता को नारि सहित कह्यो । तीरथ सकल अन्हाइ मिली मुहि आइकै । हो जनम जनम के पापन दयो मिटाइकै ॥१३॥ ॥दोहरा॥ भोग प्रथम करि जार तजि तही पहूची आइ । भेद मूड़ त्रिप ना लह्यो लई गरे सौ लाइ ॥ १४ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ चौदस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २१४ ॥ ४१०८ ॥ अफजूं ॥

स्नान करने चली हूँ। यदि जीवित रही तो तुम लोगों से मिलूँगी और मर गई तो राम भला करें॥ ९ ॥ घर का समस्त द्रव्य साथ लेकर वह उससे हित करके भाग चली। अब वह उससे लिपट-लिपटकर रतिक्रीड़ा कर रही थी और कामदेव के दर्प को चूर कर रही थी॥ १० ॥ जब बहुत वर्ष बीत गए और वे सारा खज़ाना खा गए; तरुणी भूखों मरने लगी तो वह प्रियतम को छोड़कर भाग खड़ी हुई॥ ११ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ पुन: वह चाँदा नगर में आ पहुँची और माता-पिता के चरणों से लिपट गई। मैंने जो तीर्थों पर पुण्य किया है उसे आप भी लीजिए और आधा भाग लेकर मुझे आशीर्वाद दीजिए॥ १२ ॥ राजा भी सब बातें सुनकर रीझ गया और पत्नी-समेत अपनी पुत्री को धन्य-धन्य कहा। यह समस्त तीर्थों का स्नान कर मुझसे मिली है और इसने मेरे जन्म-जन्म के पापों को मिटा दिया है॥ १३ ॥ ॥ दोहा ॥ पहले भोग-विलास किया, फिर यार को छोड़ा और घर आ पहुँची मूर्ख राजा ने रहस्य को नहीं समझा और उसे गले से लगा लिया॥ १४ ॥ १ ॥

अथ दोइ सौ पंदरह चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ दच्छिन को राजा बडो संभा नाम सु बीर । औरंग शाह जासों सदा लहत रहत रनधीर ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ संभापुर सु नगर इक तहाँ । राज करत संभा जू जहाँ । इक कबि कलस रहत ग्रहि वाके । परी समान सुता ग्रहि ताके ॥ २ ॥ जब संभा तिह रूप निहार्यो । इहै आपने चित्त बिचार्यो । याकौ भलीभाँति गहि तोरो । ब्राहमनी हम ना कछु छोरो ॥ ३ ॥ एक सहचरी तहाँ पठाई । तरुनि कुअरि तन बात जताई । आजु त्रिपति के सदन सिधारो । लपटि लपटि तिह संग बिहारो ॥ ४ ॥ तरुनि कुअरि मन मै यौ कही । हमरी बात धरम की रही । (मू०ग्रं०११२२) हाँ भाखौ तौ धरम गवाऊँ । नाहि करे बाँधी घर जाऊँ ॥ ५ ॥ ताँते जतन ऐस कछु करियैं । धरम राखि मूरख कह मरियैं । नाहि नामु पापी सुनि लैहै । खाटि उठाइ मँगाइ पठैहै ॥ ६ ॥ तब तिन कह्यो बचन सहचरि सुनि । पूजन कालि जाऊँगी

दो सौ पंद्रहवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ सम्भा नामक वीर दक्षिण का राजा था जिससे औरंगजेब सदैव योद्धा आदि लिया करता था ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ वहाँ पर सम्भापुर ही एक नगर था जहाँ सम्भा जी राज करता था। उसके घर में कलस नामक एक कवि रहता था जिसके घर में परी के समान एक पुत्री थी ॥ २ ॥ जब सम्भा ने उसका रूप-सौंदर्य देखा तो अपने चित्त में विचार किया। इसे भली प्रकार पकड़कर चूर करूँगा और ब्राह्मणी होने पर भी इसे नहीं छोड़ूँगा ॥ ३ ॥ उसने एक दासी को वहाँ भेजा जिसने उस तरुण कुँवरि को राजा के मन की बात जताई। आज तुम राजा के महल में चलो और लिपट-लिपटकर उससे रमण करो ॥ ४ ॥ तरुणकुँवरि ने मन में सोचा कि मेरी धर्म की बात कैसे रहेगी। यदि हाँ कहती हूँ तो धर्म गँवाती हूँ और नहीं कहती हूँ तो बाँधकर घर ले जाई जाऊँगी ॥५॥ तब तो कुछ ऐसा यत्न करना चाहिए कि धर्म को बचाकर मूर्ख को मार डालना चाहिए। यह पापी यदि नहीं सुन लेगा तो पलंग-समेत उठवा मँगाएगा ॥ ६ ॥ तब उसने दासी से कहा कि सुनो मैं कल पूजन करने के लिए जाऊँगी वहीं राजा आएं और

मै मुनि । तह ही आप न्रिपति तुम ऐयहु । कामभोग मुहि साथ कमैयहु ।। ७ ।। भोर भयो पूजन शिव गई । न्रिपहूँ तहाँ बुलावत भई । उतै दुशमनन दूत पठायो । संभहि स्रितु स्वान की घायो ।। ८ ।। जब ही फौज शत्र की धई । अबला सहित न्रिपति गहि लई । निरखि रूप ताको ललचायो । भोग करन तासौ चित भायो ।। ९ ।। ।। दोहरा ।। तरुनकला तरुनी तबै अधिक कटाछ दिखाइ । मूड़ मुगल कौ आतमा छिन मै लयो चुराइ ।। १० ।। ।। चौपई ।। अधिक कैफ तब ताहि पिवाई । बहु बिधि ताँहि गरे लपटाई । दोऊ एक खाट पर सोए । मन के मुगल सगल दुख खोए ।। ११ ।। ।। दोहरा ।। निरखि मुगल सोयो पर्यो काढि लई करवारि । काटि कंठ ताको गई अपनो धरम उबारि ।। १२ ।। चंचलान के चरित्र को चीनि सकत नहि कोइ । ब्रहम बिशन रुद्रादि सभ सुर सुरपति कोऊ होइ ।। १३ ।। १ ।।

।। इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ पंदरह चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ।। २१५ ।। ४१२१ ।। अफजूं ।।

मेरे साथ कामक्रीड़ा करें ।। ७ ।। प्रातः वह शिव-पूजा के लिए गई और राजा को उसने वहाँ बुला लिया । उधर शत्रुओं को दूत भेजकर बुला लिया और सम्भा को कुत्ते की मौत मार दिया ।। ८ ।। जब शत्रु की फ़ौज आई तो उसने सम्भा-समेत स्त्री को पकड़ लिया । (मुगल) शत्रु भी उसके रूप को देखकर ललचा गया और उससे भोग की इच्छा करने लगा ।। ९ ।। ।। दोहा ।। तब तरुणी तरुणकला ने अत्यधिक कटाक्ष दिखाकर उस मूढ़ मुगल का मन क्षण में जीत लिया ।। १० ।। ।। चौपाई ।। उसे अत्यधिक शराब पिलाई और विभिन्न प्रकार से उसके गले लिपट गई । दोनों एक ही पलंग पर सोये और मुगल ने भी अपने मन के समस्त दुख खो दिए ।। ११ ।। ।। दोहा ।। मुगल को सोया देखकर उसने तलवार निकाल ली और उसका गला काटकर अपने धर्म का बचाव करती हुई निकल गई ।। १२ ।। स्त्रियों के चरित्र को कोई नहीं पहचान सका है, चाहे कोई ब्रह्मा हो, विष्णु हो, रुद्र हो, देव हो अथवा देवराज इन्द्र हो ।। १३ ।। १ ।।

।। श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ पंद्रहवें चरित्र की शुभ मत समाप्ति २१५ ४१२१ अफजू

अथ दोइ सौ सोलहवाँ चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ जोगी इक गहबर बन रहई । चेटकनाथ ताहि जग कहई । एक पुरख पुर ते निति खावै । ताँते त्रास सभन चित आवै ॥ १ ॥ तहाँ कटाछि कुअरि इक रानी । जाकी प्रभा न जात बखानी । सुंदरि सकल जगत ते रहई । बेद शासत्र सिम्रित सभ कहई ॥ २ ॥ ताको नाथ अधिक डरु पावै । एक पुरख तिह नित्त खवावै । चित्त के बिखै त्रास अति धरै । मोरे भच्छ जुगिस मति करै ॥ ३ ॥ तब रानी हसि बचन उचारे । सुनु राजा प्रानन ते प्यारे । ऐसो जतन क्यों नहीं करियै । प्रजा उबारि जोगियहि मरियै ॥ ४ ॥ राजा तन इह भाँति उचार्यो । अभरन सकल अंग मै धार्यो । बलि की बहुत समग्री लई । अरध रात्रि जोगी पहि गई ॥ ५ ॥ भच्छ भोज तिह प्रथम खवायो । (मू०ग्रं०११२३) अधिक मद्य लै बहुरि पिवायो । बहुरि आपु हसि बचन उचारे । हौ आई हित भजन तिहारे ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ जिह बिधि तुम भच्छत पुरख सो मुहि प्रथम बताइ । बहुरि अधिक रुच मानि

दो सौ सोलहवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ घने जंगल में एक जोगी रहता था, जिसे संसार चेटकनाथ के नाम से जानता था। वह एक व्यक्ति रोज नगर में खाता था इससे लोग बुरी तरह भयभीत थे ॥ १ ॥ वहाँ कटाक्षकुँवरि नामक एक रानी थी जिसकी प्रभा वर्णनातीत थी। वह सारे संसार में सुन्दरतम थी और वेद-शास्त्र एवं स्मृतियों की ज्ञाता थी ॥ २ ॥ उसका स्वामी अत्यधिक डरता था और रोज एक आदमी (योगी को) खिला देता था। वह मन में अत्यधिक डरता था कि कहीं योगी मेरा भक्षण न कर जाय ॥ ३ ॥ तब रानी ने हँस कर कहा कि हे राजा! तुम मेरी बात सुनो। क्यों न ऐसा प्रयत्न किया जाय कि योगी को मारकर प्रजा का उद्धार करें ॥४॥ राजा को यह कहकर उसने अंगों में आभूषण धारण किये। बलि की उसने सामग्री ली और आधी रात को योगी के पास गई ॥ ५ ॥ उसे पहले भोज खिलाया और अधिक शराब लेकर उसे पिलाई। फिर हँसकर उसने उच्चारण किया कि आज मैं तुमसे रमण करने आयी हूँ ६ दोहा तुम लोगों को कैसे खाते हो पहले मुझे यह बताओ और फिर रुचिपूर्वक मुझसे भोग-विलास करो ७

करि भोग करो लपटाइ ॥ ७ ॥ जब जोगी ऐसे सुनियो फूल गयो मन माहि । आज बराबर सुख कहूँ प्रिथवीतल मै नाहि ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ भरभराइ ठाढा उठ भयो । रानियहि संग आपुने लयो । गहि बहियाँ मन मै हरखायो । भेद अभेद कछू नहि पायो ॥ ९ ॥ बडो कराह बिलोकत भयो । सात भाँवरनि ताँ पर लयो । रानी पकरि ताँहि तह डार्यो जीवत हुतो भूजि करि मार्यो ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ अपनो आपु बचाइकै भूँनि जोगियहि दीन । लीनी प्रजा उबारिकै चरित्त चंचला कीन ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ सोहलवाँ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २१६ ॥ ४१३२ ॥ अफजूँ ॥

अथ दो सौ सत्तरह चरित्र-कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ फैलकूस पतिशाह के सूर सिकंदर पूत । संबरारि लाजत निरखि सीरति सूरति सपूत ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ राज साज जब ही तिन धरियो । प्रथम जंग जंगिर सौ करियो ।

योगी यह सुनकर मन में फूल उठा और सोचने लगा कि आज के बराबर सारी धरती पर कहीं सुख नहीं है ॥ ८ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह भड़भड़ाकर उठ खड़ा हुआ और उसने रानी को साथ लिया । उसकी बाँह पकड़कर मन में प्रसन्न हो उठा और मूर्ख भेद-अभेद कुछ भी नहीं समझ सका ॥ ९ ॥ बड़ा कड़ाहा जो दिखाई दे रहा था उसकी उसने सात भाँवरें लीं । रानी ने उसे पकड़कर उसमें डाल दिया और जीवित को भूनकर मार दिया ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ उसने अपना आप बचाकर योगी को भून दिया और इस प्रकार स्त्री नें अपने प्रपंच से सारी प्रजा का उद्धार कर दिया ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ सोलहवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २१६ ॥ ४१३२ ॥ अफजू ॥

दो सौ सत्रहवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ फैंलकूस बादशाह का शूरवीर सिकन्दर नामक पुत्र था, जिसकी सूरत और सीरत को देखकर कामदेव भी था १
चौपाई जब उसने राजकाज सँभाला तो पहले उसने जगिर से युद्ध

ताको देस छीनि करि लीनो । नामु सिकंदर शाह को कीनो ॥२॥ बहुरि शाह दारा कौ मार्यो । हिंदुसताँ कौ बहुरि पधार्यो । कनक बजा एस्वर कौ जिनियो । सामुहि भयो ताँहि तिह भ्रिनियो ॥ ३ ॥ ॥ दोहरा ॥ प्रथम सुता रूमीन की कीयो ब्याह बनाइ । बहुरि कनौजिस की सुता बरी म्रिदंग बजाइ ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ बहुरि देस नैपाल पयानो तिन कियो । कसतूरी के म्रिगन बहुत बिधि गहि लियो । बहुरि बंगाला की दिसि आपु पधारियो । हो आनि मिल्यो सो बच्यो अर्यो तिह मारियो ॥ ५ ॥ जीत बंगला छाज करन पर धाइयो । तिनो जीति नागर पर अधिक रिसाइयो । एक पाद बहु हनै सूरसावत बने । हो जीति पूरबहि कियो पयानो दुच्छिने ॥ ६ ॥ ॥ छपै छंद ॥ झार खंडियन झारि चमकि चाँदियन सँघार्यो । बिद्रभ देसियन बारि खंडि बुंदेल दिबार्यो । खड्ग पान गहि खेत खुनिस खंडिसन बिहंड्यो । पुनि माराशट्र तिलंग द्रोड़ तिल तिल (मू०ग्रं०११२४) करि खंड्यो । म्रिप सूरबीर सुंदर सरस मही दई महि इसन गहि । दच्छनहि जीति पट्टन उपटिसु किय पयान पुनि

किया । उसका देश छीन लिया और अपना नाम सिकन्दर शाह रख लिया ॥२॥ फिर उसने दाराशाह को मारा और फिर वह हिन्दुस्तान आया । उसने कान्यकुब्ज (कन्नौज) के ऐश्वर्य को जीता और जो सामने आया उसे मार डाला ॥ ३ ॥ ॥ दोहा ॥ पहले उसने रूमी की कन्या का वरण किया और फिर ढोल बजाकर कन्नौज-नरेश की कन्या से विवाह किया ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ फिर उसने नेपाल देश को प्रस्थान किया और बहुत से कस्तूरी मृगों को पकड़ा । फिर वह बंगाल की ओर बढ़ा और जो उससे आ मिला वह बच गया तथा जो अड़ गया उसे मार डाला ॥ ५ ॥ बंगाल जीतकर उसने छाजकर्ण प्रदेश को जीता और जोतनागर पर क्रुद्ध हो उठा । उसने अनेकों सारस्वत वीरों को मार डाला और पूर्व को जीतकर दक्षिण दिशा में प्रस्थान किया ॥ ६ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ झारखंड के निवासियों को झाड़ फेंका और चाँदनगर वालों का भी संहार कर दिया । विदर्भ और बुंदेलखंड को भी दबा लिया । हाथ में खड्ग पकड़कर क्रुद्ध हो खड्गधारियों को मार डाला और फिर , तैलगाना द्रविड़ आदि को खंड-खंड कर दिया शूरवीर राजाओं ने उसे अपनी धरती दे दी और इस प्रकार दक्षिण

पसचमहि ॥ ७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ बरबरीन को जीति बाहु सालीन बिहंड्यो । गरब अरब को दाहि सरब दरबिन को दंड्यो । अरब खरब रिपु चरबि जरबि छिन इक मै मारे । हो हिंगुलाज हबशी हरेव हलबी हनि डारे ॥ ८ ॥ मगरबीन को जीति सरब गरबिन को मार्‌यो । सरब चरबियन चरबि गरबि गजनी को गार्‌यो । मालनेर मुलतान मालवा बसि कियो । हो दुंदभि जीत प्रतीची दिसि जै को दियो ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ तीनि दिशा को जीति कै उत्तर कियो पयान । सभ देसी राजान लै दंकै जीत निशान ॥ १० ॥ देस देस के एस सभ अपनी अपनी सैन । जोरि सिकंदरि से चढ़े सूर सरस सभ ऐन ॥ ११ ॥ ॥ भुजंग छंद ॥ चड़े उत्तरा पंथ के बीर भारे । बजे घोर बादित्र भेरी नगारे । प्रिथी चाल कीनो दसौ नाग भागे । भयो शोर भारो महाँ रुद्र जागे ॥ १२ ॥ ॥ चौपई ॥ प्रथमहि जाइ बलख को मार्‌यो । शहिर बुखारा बहुरि उजार्‌यो । तिबित जाइ तलब कौ दीनो । जीति देस अपने बसि कीनो ॥ १३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ काशमीर कसि कार कबुज काबल को कीनो । कशटवार कुलू कलूर कंठल कह

को जीतकर पाटन का समूल नाश कर वह पश्चिम की ओर चल पड़ा ॥ ७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ बर्बरों को जीतकर उसने शालिवाहनों को नष्ट किया और अरबों के गर्व को चूर कर सभी को दंडित किया । अनेकों शत्रुओं को क्षण भर मे चबा डाला । उसने हिंगलाजी, हब्शी, हरेबी, हल्लबी सभी को मार डाला ॥ ८ ॥ समस्त पश्चिम निवासियों को जीतकर गर्व करनेवालों को मार डाला । सभी चर्बीलि वीरों को चबा डाला और गजनी के गर्व को ग़र्क़ कर डाला । मालनेर, मुलतान, मालवा सभी वश में कर लिये और दुंदुभियाँ बजाकर पश्चिम दिशा को जीत लिया ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ तीन दिशाओं को जीतकर उसने उत्तर दिशा को प्रस्थान किया जहाँ सभी देशी राजाओं ने उसे विजयचिह्न प्रस्तुत किए ॥ १० ॥ देश-देशान्तरों के राजागण सेना जोड़कर शूरवीर सिकन्दर (सूर) पर चढ़ पड़े ॥ ११ ॥ ॥भुजंग छंद॥ उत्तर दिशा के भारी राजा चढ़ आए और भारी रणवाद्य नगाड़े आदि बजने लगे। पृथ्वी और दसों नाग भाग खड़े हुए और भारी शोर से महारुद्र भी जाग उठे ॥ १२ ॥ ॥ चौपाई ॥ पहले तो बलख शहर को मार लिया और फिर बुखारा को उजाड़ दिया तिब्बत पहुँचकर वेतन बाँटे और देश को जीत कर अपने वश में कर लिया १३ अड़िल्ल कश्मीर कबोज काबुल

लीनो। कांबोज किलमाक कठिन पल मै कटि डारे। हो कोटि चीन के कटक हने करि कोप करारे ॥ १४ ॥ ॥ दोहरा ॥ बहुरि चीन माचीन को दिसि कौ कियो पयान। लै लौंडी राजा मिल्यो शाह सिकंदरहि आनि ॥ १५ ॥ जीति चीन माचीन कौ बसि कीनी दिसि चारि। बहुरि समुंद मापन निमित मन मै कियो बिचारि ॥ १६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ वुलंदेजियन जीति अंगरेजियन को मार्यो। मछलीबंदर मारि बहुरि हुगलियहि उजार्यो। कोकबंदर कौ जीति गूआ-बंदर हूँ लीनो। हो हिजलीबंदर जाइ बिजै दुंदभि कह दीनो ॥ १७ ॥ सात समुंद्रन मापि प्रिथी तल को गयो। जीति रसातल सात स्वरग को मग लियो। इंद्र साथ हूँ लर्यो अधिक रिसि ठानिकै। हो बहुरि प्रिथीतल माझ प्रगटियो आनि कै ॥ १८ ॥ ॥ दोहरा ॥ लोक चौदहूँ बसि किए जीति प्रिथी सभ लीन। (मू०ग्रं०११२५) बहुरि रूस के देस की ओर पयानो कीन ॥ १९ ॥ ॥ चौपई ॥ बीरज सैन रूस को राजा। जाते महाँ रुद्र सो भाजा। जब तिन सुन्यो सिकंदर

को कस लिया और किश्टवाड़, कुल्लू, कहलूर, कैथल आदि इलाक़ों को ले लिया। दुर्गम प्रदेश कांबोज, किलमाक आदि को पलों में काट डाला और चीन की अनेकों सेनाओं को क्रुद्ध हो नष्ट कर दिया ॥ १४ ॥ ॥ दोहा ॥ फिर चीनमाचीन की दिशा में गया जहाँ का राजा दासियाँ लेकर सिकन्दर शाह से आ मिला ॥ १५ ॥ चीनमाचीन को जीतकर चारों दिशाएँ जीतकर वश में कर लीं और फिर समुद्र लाँघने का विचार बनाया ॥ १६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ डचों को जीतकर अंग्रेज़ों को मार डाला गया। फिर मछलीबंदर को फ़तह कर हुगलीबंदर को उजाड़ दिया गया। कोकबंदर जीत गोआ को ले लिया तथा हिजलीबंदर पर भी विजय-दुंदुभि बजा दी ॥ १७ ॥ सातों समुद्रों को लाँघकर वह पृथ्वीतल में गया और सातों रसातलों को जीतकर स्वर्ग का मार्ग लिया। वहाँ अत्यन्त क्रुद्ध होकर वह इन्द्र के साथ लड़ा तथा पुनः पृथ्वी तल पर प्रकट हुआ ॥ १८ ॥ ॥ दोहा ॥ उसने चौदह लोकों को वश में किया तथा समस्त पृथ्वी को जीत लिया। पुनः उसने रूस देश की ओर प्रस्थान किया ॥ १९ ॥ ॥ चौपाई ॥ वीर्यसेन रूस का राजा था जिसके सम्मुख महारुद्र भी भाग खड़ा हुआ था जब उसने सुना कि सिकन्दर शूर आया है तो उसने आगे पहुँचकर भीषण युद्ध मचा

आयो । आनि अगमनै जुध मचायो ॥ २० ॥ तहाँ जुध गाढ़ो अति माच्यो । बिनु ब्रिण एक सुभट नहि बाच्यो । हारि परे इक जतन बनायो । दैत हुतो इक ताँहि बुलायो ॥ २१ ॥ ॥ दोहरा ॥ कुहन पोसती तन धरे आवत भयो बजंग । जनुक लहरि दरियाव ते निकस्यो बडो निहंग ॥ २२ ॥ ॥ चौपई ॥ जो कबहूँ कर को बल करै । हाथ भए हीरा मलि डरै । जहाँ कूदि करि कोप दिखावै । तौनै ठौर कूप तरि जावै ॥ २३ ॥ ॥ दोहरा ॥ एक गदा कर मै धरै औरन फाँसी प्रास । पाँच सहस्र स्वार ते मारत ताकौ त्रासु ॥ २४ ॥ ॥ चौपई ॥ जाकौ ऐंच गदा की मारै ॥ ताको मूँड फोर ही डारै । रिस भरि पवन बेगि ज्यों धावै । पत्तन ज्यों छत्रियन भजावै ॥ २५ ॥ भाँति भाँति तिन बीर खपाए । मो पहि ते नहि जात गनाए । जौ तिनके नामन ह्याँ धरियै । एक ग्रंथ इनही को भरियै ॥ २६ ॥ मत करी ताके पर डार्‌यो । सो तिन ऐंचि गदा सो मार्‌यो । जो कोऊ सुभट तवन पर धावै । एक चोट जमलोक पठावै ॥ २७ ॥ रन ते एक पैग नहि भाजै । ठाढो बीर खेत मै गाजै । अधिक राव राजन कौ मार्‌यो ।

दिया ॥ २० ॥ वहाँ भीषण युद्ध हुआ और एक भी योद्धा बिना घावों के न बचा । हारकर एक काम किया गया और एक दैत्य को बुलाया गया ॥ २१ ॥ ॥ दोहा ॥ झूमता हुआ एक वज्र के समान अंगोंवाला (दैत्य) आया । ऐसा लग रहा था मानों दरिया की लहरों से कोई महान् शूरवीर निकला हो ॥ २२ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह यदि हाथ का बल दिखाता तो हाथों से हीरे को भी मल देता था । वह क्रोध से जहाँ कूदता था वहीं कुआँ बन जाता था ॥ २३ ॥ ॥ दोहा ॥ एक हाथ में गदा और एक में फाँसी-पाश लिये उसका डर पाँच हज़ार सवारों को मार डालता था ॥ २४ ॥ ॥ चौपाई ॥ जिसको तानकर गदा मारता था उसका तो सिर ही फोड़ डालता था । क्रुद्ध हो वह पवन वेग से दौड़ता था और क्षत्रियों को पत्तों की तरह उड़ा रहा था ॥ २५ ॥ उसने अनेकों वीर नष्ट कर दिये जिन्हें गिनना मेरे लिए असंभव है । यदि उनके नाम यहाँ रखे जायँ तो एक ग्रंथ ही भर जायगा ॥ २६ ॥ उस पर एक मस्त हाथी छोड़ा गया जिसे उसने गदा मारकर मार डाला । जो वीर उस पर टूट पड़ता उसे वह एक ही चोट से यमलोक पहुँचा देता २७ वह रणक्षेत्र से एक कदम नहीं भाग रहा था और युद्ध मे खड़ा गरज रहा था उसने अनेकों राजाओं

काँपि सिकंदर मंत्र बिचार्यो ॥ २८ ॥ ॥ दोहरा ॥ स्त्री दिन नाथ मती तरुनि शाह चीन के दीन । सो ता पर धावत भई भेस पुरख को कीन ॥ २९ ॥ ॥ चौपई ॥ पहिले तीर तवन की मारे । बरछा बहुरि कोप तन झारे । तमकि तेग को घाइ प्रहार्यो । गिर्यो भूमि जानु हनि डार्यो ॥ ३० ॥ भू पर गिर्यो ठाढि उठि भयो । ताको पकरि कंठ ते लयो । सुंदर बदन अधिक तिह चीनो । मारि न दई राखि तिह लीनो ॥ ३१ ॥ ताकह पकरि रूसियन दयो । आपु उदित रन को पुनि भयो । भाँति भाँति अरि अमित सँघारै । जनु द्रुम पवन प्रचंड उखारै ॥ ३२ ॥ ॥ सवैया ॥ काती क्रिपान कसे कटि मै भट भारो भुजान को भार भरे हैं । भूत भविख्य भवान सदा कबहूँ रनमंडल ते न टरे है । भीर परे नहि भीर भे भूपति लै लै भला भली भाँति अरे हैं । ते इन (मू०ग्रं०११२६) बीर महाँ रनधीर सु हाँकि हजार अनेक हरे हैं ॥३३॥ ॥चौपई॥ तब ही शाह सकंदर डरियो । बोलि अरसतू मंत्र बिचरियो । बली नास को बोलि पठायो । चित्त मै अधिक त्रास

को मार डाला । तब काँपकर सिकन्दर ने विचार किया ॥ २८ ॥ ॥ दोहा ॥ दिननाथमती नामक तरुणी, जो चीन के शाह के अधीन थी, पुरुष-वेश धारण कर उस पर टूट पड़ी ॥ २९ ॥ ॥ चौपाई ॥ पहले उसने तीर मारा, फिर कुपित हो बरछे से प्रहार किया । पुनः तमककर कृपाण से प्रहार किया, जिससे वह ऐसा भूमि पर गिर पड़ा मानों मार ही डाला गया हो ॥ ३० ॥ वह भूमि पर गिरा हुआ उठ खड़ा हुआ और उसने (उस पुरुष-वेश में स्त्री को) गले से पकड़ लिया । उसका अत्यधिक सुन्दर बदन देखकर उसे मारा नहीं और छोड़ दिया ॥ ३१ ॥ उसे पकड़कर दासियों को दे दिया तथा स्वयं पुनः युद्ध के लिए उद्यत हुआ । विभिन्न प्रकार से अनेकों शत्रुओं को ऐसे मार डाला मानों तीव्र पवन ने पौधों को उखाड़ फेंका हो ॥ ३२ ॥ ॥ सवैया ॥ कटारी, कृपाण कमर में कसे वीरों की भुजाओं में भारी बल भरा हुआ है । वे भूत-भविष्य और वर्तमान में कभी भी रणस्थल से नहीं हटे हैं । संकट में भी कभी वे वीर भयभीत नहीं हुए हैं और भली-भाँति अड़े रहे हैं । ऐसे हज़ारों वीरों को हाँक-हाँककर इस महाबली ने मार डाला है ॥ ३३ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब सिकंदर शाह ने डरकर अरस्तू को बुलाकर विचार किया चित्त में अत्यधिक डरकर उसने बलीनाश को बुला

उपजायो ॥ ३४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जो तुम हमकौ कहो तो ह्यां तै भाजियै । रूस शहिर के भीतरि जाइ बिराजियै । गोलब्याबानी सभ ही कौ मारिहैं । हो काटि काटि मूंडन के कोट उसारिहैं ॥ ३५ ॥ ॥ दोहरा ॥ बलीनास जोतक बिखै अधिक हुतो परबीन । धीरज दिया सकंदरहि बिजै आपनी चीन ॥३६॥ ॥ चौपई ॥ बलीनास हजरतिहि उचारो । तुमहूँ आपु कमंदहि डारो । तुमरे बिना जीति नहि होई । अमिति सुभट धावहि मिलि कोई ॥ ३७ ॥ ॥ दोहरा ॥ सुनत सिकंदर ए बचन कर्‍यो तैसोई काम । कमंद डारि ताको गरे बाँध लिआइयो धाम ॥ ३८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ भोजन शाहि भली बिधि ताहि खवाइयो । बंधन ताके काटि भले बैठाइयो । छूटत बंधन भज्यो तहाँ ही को गयो । हो आनि लौंडियहि बहुरि सिकंदर कौ दयो ॥ ३९ ॥ ॥ दोहरा ॥ ताको रूप बिलोकिकै हजरति रह्यो लुभाइ । लै अपुनी इसत्री करी ढोल म्रिदंग बजाइ ॥४०॥ बहुरि जहाँ अंम्रित सुन्यो गयो तवन की ओर । करि इस्त्री चेरी लई और बेगमन छोरि ॥ ४१ ॥ ॥ चौपई ॥ जु त्रिय रैनि कौ सेज सुहावै । दिवस बैरियन खड़ग बजावै । ऐसी तरुनि

भेजा ॥ ३४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ यदि तुम कहो तो मैं यहाँ से भाग जाऊं और रूस शहर के भीतर जा बैठूं । यह गोलब्याबानी (दैत्य) सबको मार डालेगा और सिर काट-काटकर सबका क़िला बना लेगा ॥३५॥ ॥ दोहा ॥ बलीनाश ज्योतिष-विद्या में अत्यधिक प्रवीण था उसने अपनी वि[illegible] का अनुमान कर सिकंदर को धैर्य बँधाया ॥ ३६ ॥ ॥ चौपाई ॥ बलीन[illegible] ने बादशाह को कहा कि तुम अपना कबंध फेंको । चाहे अनेकों वीर [illegible] पड़े पर तुम्हारे बिना जीत नहीं होगी ॥ ३७ ॥ ॥ दोहा ॥ सिकन्दर ने [illegible]र वैसे ही किया और उसके गले में कबंध डालकर उसे पकड़कर अपने [illegible] आया ॥ ३८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ शाह ने उसे भली प्रकार भोजन खिला[illegible]र उसके बंधन काटकर उसे भली प्रकार बैठाया । बंधन-मुक्त हो व[illegible]ा और उसने बहुत सी दासियाँ लाकर सिकन्दर को दीं ॥ ३९ ॥ [illegible]हा ॥ उसका रूप देखकर सिकन्दर मोहित हो गया और उसने ढोल [illegible]जाकर उनसे विवाह कर लिया ॥ ४० ॥ फिर उसने जहाँ अमृत हो[illegible] में सुना उस ओर गया । उसने अन्य बेगमों को छोड़कर दास-स्त्री [illegible] लिया ॥४१॥ चौपाई जो स्त्री रात को शय्या की शोभा [illegible] और दिन में

करन जौ परई । तिह तजि और कवन चित करई ।। ४२ ।।
भाँति भाँति तासो रति ठानी । चेरी ते बेगम करि जानी ।
ताकौ संग आपुने लयो । आबहयात सुन्यो तह गयो ।। ४३ ।।
।। दोहरा ।। जह ता कौ चशमा हुतो तहो पहुचो जाइ । मकर
कुंट जह डारियै मछली होइ बनाइ ।। ४४ ।। ।। चौपई ।। इंद्र
देव तब मंत्र बतायो । अंम्रित शाह सिकंदर पायो । अजर
अमर मनुख्य जो ह्वैहै । जीति सु लोक चौदहूँ लैहै ।। ४५ ।।
।। दोहरा ।। ताते याकी कीजियै कछु उपचार बनाइ । जित्यो
जरा तन जड़ रहै अंम्रित पियौ न जाइ ।। ४६ ।।
।। अड़िल्ल ।। रंभा नाम अपच्छरा दई पठाइकै । बिरध रूप
खग को धरि बैठी आइकै । एक पंख तन रह्यो (पृ०पं०११२७)
न ताकौ जानियै । हो जात न लख्यो न जाइ घ्रिणा जिय
ठानियै ।। ४७ ।। ।। दोहरा ।। जबै सिकंदर अम्रित को पीवन
लग्यो बनाइ । गलत अंग पंछी तबै निरखि उठ्यो मुसकाइ।।४८।।
।। चौपई ।। पूछ्यो ताहि पंछियहि जाई । क्यों तैं हस्यो
हेरि मुहि भाई । सकल बिथा वहु मोहि बतैयै । हमरे चित

शत्रुओं से लड़ती है, ऐसी स्त्री जब हाथ लग जाय तो भला उसे छोड़कर अन्य स्त्री को क्यों कोई चाहेगा ।। ४२ ।। उस स्त्री से भाँति-भाँति प्रकार से रति-क्रिया की और दासी से उसे बेगम बना लिया । उसे अपने साथ लिया और जहाँ आबेहयात (अमृत) था वहाँ गया ।। ४३ ।। ।। दोहा ।। वहाँ आ पहुँचा जहाँ इनका चश्मा था और मगरमच्छ एवं मछलियाँ तैर रही थीं ।। ४४ ।। ।। चौपाई ।। देवगणों ने इन्द्र को बताया कि शाह सिकन्दर ने अमृत प्राप्त कर लिया है । जो व्यक्ति अजर-अमर हो गया वह तो चौदह लोकों को जीत लेगा ।। ४५ ।। ।। दोहा ।। इससे इसका कुछ उपचार किया जाय जिससे इस जड़ का तन वृद्ध हो जाय और अमृत इससे पिया न जा सके ।। ४६ ।। ।। अड़िल्ल ।। उसने रम्भा नामक अप्सरा को भेजा जो बूढ़े पक्षी का रूप धारण कर बैठ गई । उसके तन पर एक भी पंख बाक़ी नहीं था और मारे घृणा के उसकी ओर देखा भी नहीं जा पा रहा था ।। ४७ ।। ।। दोहा ।। जब सिकन्दर अमृत पीने लगा तब बायीं ओर बैठा पक्षी उसे देखकर मुस्कुरा उठा ।। ४८ ।। ।। चौपाई ।। तब उसने पक्षी से पूछा कि भाई ! तुम मुझे देखकर क्यों हँसे हो ? तुम मुझे अपने दिल का हाल बताओ और मेरे मन का कष्ट दूर करो ४९ पक्षी उवाच दोहा मेरे शरीर पर एक भी

को ताप मिटैये ॥ ४९ ॥ ॥ पंछी बाच ॥ दोहरा ॥ पचछ एक तन ना रह्यो रकत न रह्यो सरीर । तरन न छूटत दुख सौ जियत जब ते पियो कुनीर ॥ ५० ॥ ॥ चौपई ॥ भला भयो अम्रित यह पीहैं । हमरी भाँति बहुत दिन जीहैं । सुनि ए बचन सिकंदर डरियो । पियत हुतो मधु पान न करियो ॥५१॥ ॥ दोहरा ॥ अछल छैल छैली छल्यौ इह चरित्र के संग । सुकबि काल तब ही भयो पूरन कथा प्रसंग ॥ ५२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ सत्रह चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २१७ ॥ ४१८४ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ अठारहवों चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ मसहद को राजा बडो चंद्रकेत रणधीर । द्वार परे जाके रहैं देस देस के बीर ॥ १ ॥ ॥अड़िल्ल॥ ससि धुज अरु रविकेतु पूत ताके भए । जिन सम सुंदर सूर न लोक तिहूँ ठए । रही प्रभा तिन अधिक जगत मै छाइकै । हो ह्वै ताके ससि सूर रहे मिडराइकै ॥२॥ ॥ दोहरा ॥ स्री दिन के

पख नहीं बचा और न ही शरीर में रक्त बचा है । जबसे मैंने यह बुरा जल पिया है, मेरा शरीर नहीं छूटता और दुखपूर्वक मैं जीवित हूँ ॥ ५० ॥ ॥ चौपाई ॥ अच्छी बात है यदि तुम यह अमृत पी लो तो मेरे समान बहुत दिन तक जीवित रहोगे । यह वचन सुनकर सिकन्दर डर गया और जिस जल को पीने जा रहा था उसे उसने नहीं पिया ॥ ५१ ॥ ॥ दोहा ॥ उस अछल को इस छलना ने प्रपंच से जीत लिया । इस प्रकार कवि के कथनानुसार यह कथा-प्रसंग पूर्ण होता है ॥ ५२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ सत्रहवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २१७ ॥ ४१८४ ॥ अफजूं ॥

दो सौ अठारहवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ मसहद का बड़ा रणधीर राजा चन्द्रकेतु था, जिसके दरवाज़े पर देश-देशान्तरों के वीर पड़े रहते थे ॥ १ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ शशिध्वज और रविकेतु उसके पुत्र थे जिनके समान तीनों लोकों में सुन्दर वीर नहीं था । उनकी प्रभा सारे संसार में अत्यधिक फैली हुई थी तथा सूर्य-चन्द्र भी उन पर मँडराते रहते थे २ दोहा राजा श्रीकेतुदिन को स्त्री अत्यन्त

तुम तीर है न्रिप की बाल अपार। अधिक तेज ताके रहै कोऊ न सकति निहारि ॥ ३ ॥ स्री रसरंग मती हुती ताकी और कुमारि। बसि राजा ताके भयो निजु तिय दई बिसारि ॥४॥ ॥ चौपई ॥ अधिक रोख रानी तब भई। जरि बरि आठ टूक ह्वै गई। इह न्रिप को छल सो गहि लीजै। राज्य पूत अपुने को दीजै ॥ ५ ॥ सोवत निरखि राव गहि लयो। गहि करि एक धाम मै दयो। स्री रसरंग मती जिय मारी। सभहिन लहत राव कहि जारी ॥ ६ ॥ भयो सूर राजाजू मरियो। हम को नाथ नाथ बिनु करियो। याको प्रथम दाह दै लीजै। चंद्रकेत को राजा कीजै ॥ ७ ॥ राजा मर्यो प्रजा सभ जान्यो। भेद अभेद किनूँ न पछान्यो। भलो बुरो कबहूँ न बिचार्यो। आतपत्र ससिधुज परढार्यो ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ इह चरित्र अबला पिय गहियो। दूजे कान भेद नहि लहियो। (मू०ग्रं०११२८) राजा कहि कर सवति जराई। निजु सुत को दीनी ठकुराई ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ अठारहवाँ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २१८ ॥ ४१९३ ॥ अफजूं ॥

सुन्दर थी और उसके अत्यधिक तेज को कोई भी नहीं सँभाल सकता था ॥३॥ रसरंगमती उसकी पुत्री थी। राजा (चन्द्रकेतु) उसके वश में हो गया और उसने अपनी स्त्री को भी भुला दिया ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब रानी अत्यधिक रुष्ट हो गई और जल-भुनकर आठ टुकड़े हो गई। उसने सोचा कि राजा को प्रपंच से जीता जाय और राज्य अपने पुत्र को दिया जाय ॥ ५ ॥ उसने राजा को सोते जानकर पकड़कर एक घर में बंद कर दिया। रसरंगमती को मार डाला और सबके देखते राज्य के आदेशानुसार उसे जला दिया ॥ ६ ॥ उसने यह भी कह दिया कि दर्द उठने से राजा भी मर गया और परमात्मा ने मुझे अनाथ कर दिया। पहले इसे जला दिया जाय और फिर चन्द्रकेतु को राजा बनाया जाय ॥ ७ ॥ सबने सोचा कि राजा मर गया है और भेद-अभेद को किसी ने नहीं पहचाना। किसी ने भला-बुरा नहीं विचारा और छत्र-चँवर शशिध्वज पर लहरा दिया ॥ ८ ॥ ॥ चौपाई ॥ इस प्रपच से रानी ने अपने राजा को पकड़ा जिसका कानोंकान किसी को पता नहीं चला। राजाज्ञा से सौतन को भी जला दिया और अपने पुत्र को राजगद्दी दे दी ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संबाद में दो सौ अठारहवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति २१८ ४१९३ अफजू।

अथ दो सौ उनीसवों चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ पीर एक मुलतान मै शरफदीन तिह नाउँ। खूँटा गड़ के तट बसै बादर ही महि गाउँ ॥ १ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक सिख्य की दुहिता पीर मँगाइकै। आनी अपने धाम अधिक सुख पाइकै। स्री चपलांगमती जिह जगत बखानई। हो ताहि रूप की रासि सभै पहिचानई ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ कितक दिनन भीतर तवन त्यागे पीर परान। स्री चपलांगमती बची पाछै जियत जवान ॥ ३ ॥ राइ खुशाल भए करी तिन त्रिय प्रीति बनाइ। भाँति भाँति तासौ रमी हिदै हरख उपजाइ ॥ ४ ॥ निति प्रति राइ खुशाल तिह निजु ग्रहि लेत बुलाइ। लपटि लपटि ताँसौ रमैं भाँग अफीम चढ़ाइ ॥ ५ ॥ रमत रमत त्रिय तवन को रहि गयो उदर अधान। लोगन सभहन सुनत ही ऐसे कह्यो सुजान ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ रैनि समै ग्रहि पीर हमारे आवई। रीति प्रीति की मोसौ अधिकुपजावई। एक पूत मै माँगि तबै ताँते लियो। हो नाथ क्रिपा करि मो पर सुत मोकौ दियो ॥ ७ ॥ केतिक

दो सौ उन्नीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ मुलतान के एक पीर का नाम शरफदीन था जो खूँटागढ के पास बंदरगाँव में रहता था ॥ १ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक शिष्य की पुत्री को पीर ने मँगवाकर सुखपूर्वक अपने घर रखा। उसे संसार चपलांगमती के नाम से जानता था और रूप की खान के तौर पर पहचानता था ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ कई दिनों बाद उस पीर ने प्राण त्याग दिये और चपलांगमती जवान पीछे बच रही ॥ ३ ॥ उस स्त्री ने खुशहालराय से प्रेम कर लिया और सुखपूर्वक उससे विभिन्न प्रकार से रमण करने लगी ॥ ४ ॥ वह रोज खुशहालराय को घर में बुला लेती थी और भाँग-अफ़ीम चढ़ाकर उससे लिपट-लिपटकर रतिक्रीड़ा करती थी ॥ ५ ॥ उससे रमण करते-करते उस स्त्री को गर्भ रह गया। तब उसने लोगों को यह सुनाकर कहा ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ रात में पीर मेरे घर में आता है और अत्यन्त प्रेमपूर्वक मुझसे प्रेम किया करता है। मैंने प्रार्थना करके उससे एक पुत्र माँग लिया है और उस कृपालु ने कृपापूर्वक वह मुझे दे दिया है ७ कई दिनों के बाद उसके

दिनन प्रसूत पूत ताके भयो। सत्ति पीर को बचन मानि सभहूँ लयो। धन्य धन्य अबलाहि खादिमनुचारियो। हो भेद अभेद न किनहूँ मूरख बिचारियो ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ उनीसवाँ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २१९ ॥ ४२०१ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ बीस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ आसफ खाँ उमराव के रहत आठ सै तीय। नितिप्रति रुचि मानों घने अधिक मान सुख जीय ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ रोशन जहाँ तवन की नारी। आपु हाथ जनु कीस सवारी। आसफ खाँ तासौ हित करै। वहु त्रिय रस ताके नहि ढरै ॥ २ ॥ मोती लाल शाहु को इकु सुत। ताको रूप दियो बिधना अति। इह त्रिय ताँहि बिलोक्यो जबही। लागी लगन नेह की तबही ॥ ३ ॥ सखी एक तिन तीर बुलाई। जानि हेत की कै समुझाई। मेरी कही मीत सौ कहियहु। हमरी (मू०ग्रं०११२९) ओर निहारत रहियहु ॥४॥ ॥सवैया॥ शीशे

यहाँ पुत्र हुआ जिसे पीर के वचन के कारण सबने सत्य माना। नौकरों ने भी उस स्त्री के लिए धन्य-धन्य कहा और किसी भी मूर्ख ने रहस्य को नहीं जाना ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ उन्नीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २१९ ॥ ४२०१ ॥ अफजूं ॥

दो सौ बीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ आसफ़ खाँ उमराव के पास आठ सौ स्त्रियाँ रहती थीं। वह अत्यन्त सुख मानकर उससे नित्य रुचिपूर्वक क्रीड़ा किया करता था ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ रोशनआरा उसकी पत्नी थी जिसे मानों भगवान ने अपने हाथों से बनाया हो। आसफ़ खाँ उससे प्रेम करता था परन्तु वह स्त्री इस पर मेहरबान नहीं होती थी ॥ २ ॥ राजा का एक लड़का मोतीलाल था जिसे विधाता ने रूप-सौंदर्य दिया था। इस स्त्री ने जब उसे देखा तभी उसकी नेह-लगन उससे लग गई ॥ ३ ॥ उसने एक सखी को बुलाया और अपनी हितैषिणी मान उसे कहा कि मेरा संदेश मित्र को दे दो कि कृपापूर्वक मेरी तरफ देखते रहो ४ सवैया शीशे में शराब है कि गुलाब का फूल

शराब कि फूल गुलाब कि मत्त कियौ मदरा कि से प्यारे। बानन से म्रिग बारन से तरवारन से कि बिखी बिखियारे। नारिन को कजरान्न के दुख टारन हैं किधौ नीद निदारे। नेह जगे कि रँगे रँग काहू के मीत के नैन सखी रसियारे॥ ५॥ ॥ अड़िल्ल ॥ चंद चाँदनी राति सजन जौ पाइयै। गहि गहि ताके अंग गरे लपटाइयै। पल पल बलि बलि जाउँ न छोरो एक छिन। हो बीतहिं बरस पचास न जानो एक दिन॥ ६॥ पल पल बलि बलि जाउ पिया को पाइकै। निरखि निरखि दोऊ नैन रहों उरझाइकै। करि अधरन को पान अजर ह्वै जग रहों। हो अपने चित की बात न काहू सौ कहो॥ ७॥ मरिकै होइ चुरैल लला को लागिहों। टूक कोटि तन होइ न तिह तजि भागिहैं। बिरह सजन के बधी दिवानी ह्वै मरों। हो पिय पिय परी कबर के बीच सदा करों॥ ८॥ काजी जहाँ अलह ह्वै न्याइ चुकाइहै। सभ रूहन को अपुनै निकट बुलाइहै। तहाँ ठाढो ह्वै ज्वाब निडर ह्वै मै करों। हो इशक तिहारे पगी न कानि कछू धरों॥ ९॥ निरखि लला को रूप दिवाने हम भए। बिन दामन के दए सखी बिकि कै

है अथवा मदोन्मत्त हैं; ये बाणों के समान हैं कि मृग के बच्चे के समान है अथवा तलवारों या बाणों के समान हैं। कजरारी स्त्रियों की नींद और दुखों को नष्ट करनेवाले, स्नेहपूर्ण हे सखी! मेरे मित्र के नयन हैं॥ ५॥ ॥ अड़िल्ल ॥ चाँदनी रात में यदि सजन से मुलाक़ात हो जाय तो उसे पकड़ कर उसके गले से लिपट जाया जाय। हर क्षण उस पर न्यौछावर जाऊँ और उसे एक पल भी नहीं छोड़ूँ। पचास वर्ष ऐसे ही बीत जायँ पर मैं उन्हें मात्र एक दिन ही मानूँ॥ ६॥ प्रिय को पाकर उस पर हर पल न्यौछावर होऊँ। उसके दोनों नयनों को देखकर उसमें ही उलझी रहूँ। उसके अधरों को पान करके मैं संसार में सदैव जवान बनी रहूँ और अपने मन की बात किसी से भी न कहूँ॥ ७॥ मरकर भी चुड़ैल बनकर प्रियतम को लग जाऊँ। तन के करोड़ों टुकड़े हो जायँ फिर भी उसे न छोड़ूँ। सजन के विरह में दीवानी होकर मैं मर जाऊँगी और क़ब्र में पड़ी-पड़ी भी सदैव प्रिय-प्रिय किया करूँगी॥ ८॥ क़ाज़ी जहाँ अल्लाह के सम्मुख हिसाब चुकाएगा और सब रूहों को अपने पास बुलाएगा; मैं वहाँ भी खड़ी होकर निडर जवाब दूँगी और बिना परवाह किये कहूँगी कि मैं तुम्हारे प्रेम में डूबी हुई हूँ॥ ९॥ प्रियतम का रूप देखकर हम तो दीवाने हो गए हैं और बिना

गए । करियो वहै उपाइ जु मिलियै जाइकै । हो सभ सखि तेरो दारिद देउँ बहाइकै ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ लखि आतुरता को सखी चली तहाँ ते धाइ । मन भावंता नानतौ दीनो मीत मिलाइ ॥ ११ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ मन भावंता मीत कुअर जब पाइयो । सकल चित्त को सुंदरि शोक मिटाइयो । ताके भोगन भरी तरुनि ताकी भई । हो आसफ खान बिसारि ह्रिदै ते भेद ही ॥ १२ ॥ किय बिकार कित किह बिधि पिय कउ पाइयै । आसफ खाँ के घर ते किह बिधि जाइयै । भाखि भेद ताकौ ग्रहि दयो पठाइकै । हो सूर सूर करि भूमि गिरी मुरछाइकै ॥ १३ ॥ सूर सूर करि गिरी जनुक मरि कै गई । डारि संदूकिक मांझ गाडि भुअ मै दई । काढि सजन लै गयो तहाँ ते आनिकै । हो लै अपुनी तिय करी अधिक रुचि मानिकै ॥ १४ ॥ ॥ दोहरा ॥ भेद अभेद न मूड़ कछू ताको सक्यो (मू०ग्रं०११३०) पछानि । जान्यो प्रानन छाडि कै कियो सु भिसत पयान ॥ १५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ वीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २२० ॥ ४२१६ ॥ अफजूं ॥

दाम के ही हे सखी ! बिक गए हैं । हे सखी ! कुछ उपाय करो जिससे उससे मिलन हो । मैं तेरी सारी निर्धनता दूर कर दूंगी ॥१०॥ ॥ दोहा ॥ उसकी आतुरता को देखकर वह सखी वहाँ से दौड़ चली और उसने वह मनभावन उसे मिला दिया ॥ ११ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जब वह मनभावन कुँवर उसे मिल गया तो उसके चित्त का समस्त दुख दूर हो गया । उसके भोग में लिप्त वह सुन्दरी उसी की हो गई और आसफ़ खाँ को उसने मन से भुला दिया ॥ १२ ॥ उसने तब यह विचार किया कि कैसे प्रियतम को (पूर्णरूप से) प्राप्त किया जाय और आसफ़ खाँ के घर से कैसे कूच किया जाय । उसे समझाकर उसने घर भेज दिया और "दर्द-दर्द" चिल्लाती हुई वह भूमि पर मूर्च्छित होकर गिर पड़ी ॥ १३ ॥ 'दर्द-दर्द' कहती वह ऐसे गिरी मानों मर गई हो । उसे संदूक में बन्द कर भूमि में गाड़ दिया गया । वहाँ से वह सजन उसे निकालकर ले गया और उसे रुचिपूर्वक अपनी स्त्री बना लिया ॥ १४ ॥ ॥ दोहा ॥ वह मूर्ख (आसफ़ खाँ) उसके रहस्य को तनिक भी नहीं जान सका और मानने लगा कि वह प्राण त्याग जन्नत में चली गई है ॥ १५ ॥ १ ॥

। श्री चरित्र के त्रिया चरित्र के मन्त्री भूप सवाद म दो सौ बीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति २२० । ४२१६ । अफजूं

अथ दो सौ इकीस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ ईसफजैयन मौर है संमन खान पठान। तुमन पठानन के तिसै सीस झुकावत आनि ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ स्री स्रिगराजमती ताकी त्रिय। बसी रहै राजा के निति जिय। परम रूप तन ताहि बिराजै। पसुपति रिपु निरखत दुति लाजै ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ शादी खान तहाँ हुतो इक पठान को पूत। अधिक प्रभा ताकी दिपै निरखि रहित पुरहूत ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तिह रानी ताको ग्रहि लियो बुलाइकै। लपटि लपटि तिह साथ रमी सुख पाइकै। तब ही लोकहि कहियो त्रिपति सौ जाइ करि। हो खड़ग हाथ गहि राव पहूच्यो आइ करि ॥ ४ ॥ त्रिप करि खड़ग बिलोकि अधिक अबला डरी। चित्त अपनै के बीच इहै चिंता करी। गहि क्रिपान ततकाल मीत को मारिकै। हो टूक टूक करि दियो देग मै डारिकै ॥ ५ ॥ डारि देग तर आग दई औटाइकै। बहुरि सगल तिह भखि गई मासु बनाइकै। सगरो सदन निहारि चक्रित राजा रहियो। हो भेददाइकह

दो सौ इक्कीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ यूसुफ़ज़ई पठानों में सम्मन खान पठान सिरमौर था जिसे पठानों के झुंड सिर झुकाते थे ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसकी स्त्री राजमती थी जो राजा के हृदय में बसी रहती थी। उसके परम रूप-सौंदर्य को देख कर कामदेव भी लज्जित होता था ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ वहाँ एक पठान का पुत्र शादी खाँ था। उसकी देदीप्यमान प्रभा को इन्द्र भी निहारा करता था ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ उस रानी ने उसे घर बुला लिया और लिपट-लिपटकर उसके साथ रमण करने लगी। उसी समय लोगों ने राजा से जा कहा और वह हाथ में खड़ग लेकर वहाँ आ पहुँचा ॥ ४ ॥ राजा के हाथ में खड़ग देखकर रानी अत्यधिक डर गई और उसने मन में कुछ सोचा और निश्चय किया। उसने हाथ में कृपाण पकड़कर मित्र को मारकर टुकड़े-टुकड़े करके उसे देग में डाल दिया ॥ ५ ॥ देग में डालकर उसने नीचे आग देकर उसे खौला दिया और उसके मांस का भक्षण कर गई राजा सारा महल देखकर चकित रह गया और उसने झूठ बोलने के

हन्यो झूठ इन मुहि कहियो ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ प्रथम भोग करि भखि गई भेददाइकह घाइ। राजा तें साची रही इह छल छिद्र बनाइ ॥ ७ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ इकीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २२१ ॥ ४२२३ ॥ अफजूँ ॥

अथ दोइ सौ बाईस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ काबल मै अकबर गए एक बिलोक्यो बाग। हरी भई आँखैं निरखि रोशन भयो दिमाग ॥ १ ॥ भोगमती इक भामनी अकबर के ग्रिहि माहि। ताकी सम तिहूँ लोक मै रूपवती कहूँ नाहि ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक शाह को पूत गुलमिहर भाखीयै। ताकी प्रभा समान कहो किह राखिऐ। अप्रमान तिह प्रभा जगत मै जानियै। हो आसुरेस दिन नाथ कि ससि करि मानियै ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ भोग मती निरखत तिह भई। मन बच क्रम करि बसि ह्वै गई। चित के बिखै (मू०ग्रं०११३१) बिचारि बिचार्यो। एकहि दूतन प्रगट उचार्यो ॥ ४ ॥ ॥ दोहरा ॥ सुनह सखी गुलमिहर

रे भेड़िये को मार डाला ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ पहले भोग किया, फिर मारकर खा गई और पुनः भेड़िये को मरवा डाला। वह स्त्री राजा से यह प्रपंच बनाकर सच्ची बनी रही ॥ ७ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ इक्कीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २२१ ॥ ४२२३ ॥ अफजू ॥

दो सौ बाईसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ काबुल में जाने पर अकबर ने एक बाग देखा, जिसे देखकर उसकी आँखें ठंडी हो गईं और दिमाग़ रौशन हो गया ॥ १ ॥ अकबर के महल में भोगमती नामक एक स्त्री थी, जिसके समान रूपवती तीनों लोकों में कोई नहीं थी ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ गुलमुहर एक शाह का पुत्र था। उसके समान प्रभायुक्त भला अन्य कौन था। उसे भला असुरराज, सूर्य अथवा चन्द्र कहा जाय (कुछ समझ में नहीं आता) ॥३॥ ॥चौपाई॥ भोगमती ने उसे देखा और मन, वचन एवं कर्म से उसके वश में हो गई। उसने मन में विचार किया और एक दूत को बुलाया और प्रकट में उससे कहा ४

कौ दीजै मोहि मिलाइ। जनम जनम दारिद्र तव दैहो सकल मिटाइ ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ ऐसे बचन सुनत सखी भई। ततछिन दौरि तहाँ ही गई। भाँति भाँति ताकौ समुझायो। आन हितू कह मीत मिलायो ॥ ६ ॥
॥ दोहरा ॥ मन भावंता मीत सुभ तरुनि तरुन कौ पाइ। रस ताके रसती भई अकबर दयो भुलाइ ॥ ७ ॥ त्रिय चिंता चित मै करी रहौ मीत के साथ। अकबर घर ते निकसियै कछु चरित्र के साथ ॥ ८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ कह्यो मीत सौ नारि तवनि समझाइ करि। प्रगट रह्यो पिय साथ चरित्र दिखाइ करि। आपुन में स्वै इक द्रुम माँझ गडाइहों। हो तह ते निकसि सजन तुमरे ग्रहि आइहों ॥ ९ ॥ ॥ चौपई ॥ मीत बिहसि यौ बचन उचारे। तुम ऐहो किह भाँति हमारे। तनिक भनक अकबर सुनि लैहै। मुहि तुहि को जमलोक पठैहै ॥ १० ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ अकबर बपुरो कहा छलहि छलि डारिहों। भेद पाइ निकसौगी तुमैं बिहारिहों। या मूरख के सीस जूतियन झारिकै। हो मिलिहौ तुहि पिय आइ चरित्र दिखारिकै ॥ ११ ॥ जानिक बडे चिनार तरे सोवत भई।

॥ दोहा ॥ हे सखी ! मुझे गुलमोहर से मिला दो मैं तुम्हारे जन्म-जन्मांतरों का दारिद्र्य मिटा दूँगी ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ सखी ने यह सुना और तत्क्षण दौड़कर वहाँ गई। उसे भाँति-भाँति से समझाया और आकर मित्र को मिलवा दिया ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ तरुणी ने मनभाता तरुण मित्र पाकर उसके रस में लीन हो अकबर को भुला दिया ॥ ७ ॥ अब स्त्री ने सोचना शुरू किया कि मित्र के साथ रहा जाय और अकबर के घर से कुछ प्रपंच-पूर्वक निकल जाना चाहिए ॥ ८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ उसने मित्र को समझाया और प्रकट में प्रपंचपूर्ण होकर कहा कि मैं अपने को एक पेड़ के नीचे गड़वाऊँगी और वहीं से निकलकर तुम्हारे घर आ जाऊँगी ॥ ९ ॥ ॥ चौपाई ॥ मित्र ने हँसकर कहा कि तुम मेरे पास कैसे आओगी ! यदि अकबर को तनिक भी भनक लग गई तो वह तुम्हें और मुझे दोनों को यमलोक भेज देगा ॥ १० ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ अकबर बेचारा क्या है मैं तो साक्षात् छल को भी भ्रम में डाल दूँगी और अवसर पाकर निकल कर आऊँगी और तुम्हारे साथ विहार करूँगी। इस मूर्ख के सिर पर जूता मार कर मैं प्रपच दिखाकर तुमसे आ मिलूँगी ११ वह जान बूझकर चिनार

लखि अकबर सौ जागि न टरि आगे गई। या द्रुम की मुहि छाहि अधिक नीको लगी। हो पौढि रही सुख पाइ न तजि निंद्रा जगी ॥ १२ ॥ ॥ दोहरा ॥ आपे अक्बर बाँह गहि जो मुहि आइ जगाइ। हौ इह ही सोई रहौ पन्हहिन्न ताहि लगाइ ॥ १३ ॥ ॥ चौपई ॥ ऐसी बात शाह सुनि पाई। लै पनही तिह ओर चलाई। जूती वहै हाथ तिन लई। बीसक झारि अकबरहि गई ॥ १४ ॥ हजरति कोप अधिक तब भरियो। वहै ब्रिछ महि गडहा करियो। ता मै ऐंचि तरुनि वह डारी। मूरख बात न कछू बिचारी ॥ १५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ ताँहि ब्रिछ महि डारि आपु दिल्ली गयो। आनि उकरि द्रुम मीत काढ ताकौ लयो। मिली तरुन पिय साथ चरित्र बनाइ (मू०ग्रं०११३२) करि। हो अकबर के सिर माझ जूतियन झारि करि ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ बाईस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २२२ ॥ ४२२९ ॥ अफजूं ॥

के एक बड़े वृक्ष के नीचे सो गई और अकबर को देखकर भी नहीं जागी और पड़ी रही। मुझे इस पेड़ की छाया अच्छी लगी है, इसी से मैं नींद त्यागकर नहीं जगी और पड़ी हूँ ॥ १२ ॥ ॥ दोहा ॥ यदि अकबर स्वयं भी मुझे बाँह पकड़कर जगाए तो मैं उसे जूती मारकर फिर यहीं सोती रहूँ ॥ १३ ॥ ॥ चौपाई ॥ शाह ने जब यह सुना तो जूता खींचकर उसे दे मारा। उसने भी वही जूता हाथ में लिया और लगभग बीस जूते अकबर को झाड़ दिये ॥ १४ ॥ बादशाह अत्यधिक क्रुद्ध हो उठा और उसने उसी वृक्ष के नीचे गड़हा खुदवाया। उस स्त्री को खींचकर उसमें धकेल दिया और मूर्ख ने मन में तनिक भी विचार नहीं किया ॥ १५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ उसे उसी वृक्ष के नीचे डाल आप दिल्ली चला गया और मित्र आकर पेड़ के नीचे से खोदकर उसे निकाल लिया। वह स्त्री अकबर के सिर में जूते झाड़कर प्रपंच दिखाती हुई उस तरुण से आ मिली ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ बाईसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २२२ ॥ ४२२९ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ तेईस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ राधावती नगर इक भारो । आपु हाथ जनु ईस सवारो । क्रूरकेत राजा तह रहई । छत्रपती रानी जग कहई ॥ १ ॥ ताको अधिक रूप उजियारो । आपु ब्रहम जनु करन सवारो । ता सम तीनि भवन त्रिय नाही । देव अदेव कहै मन माही ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ हीरामनि इक शाह को पूत हुतो तिह ठौर । तीनि भवन भीतर बिखै ता सम हुतो न और ॥ ३ ॥ छत्रमती तिह लखि छकी छैल छरहरो ज्वान । रूप बिखै सम तवन को तीनि भवन नहि आन ॥ ४ ॥ ॥ सोरठा ॥ ताको लियो बुलाइ रानी सखी पठाइकै । कह्यो मीत मुसकाइ शंक त्यागि मोकौ भजहु ॥ ५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जो रानी तिह कह्यो न तिन बच मानियो । पाइ रही पर मूढ़ न किछु करि जानियो । हाइ भाइ बहु भाँति रही दिखराइ करि । हो रम्यो न तासो मूरख हरखुपजाइ करि ॥ ६ ॥ करम काल जो लाख मुहर कहूँ पाइयै । लीजै हाथ उचाइ त्यागि नह जाइयै । जो रानी सो नेह भयो लहि लीजियै ।

दो सौ तेईसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ राधावती नामक एक बड़ा नगर था जिसे मानों ईश्वर ने स्वंयं बनाया था। क्रूरकेतु वहाँ का राजा था जिसकी स्त्री छत्रमती थी ॥ १ ॥ उसका उजाले के समान स्वरूप मानों ब्रह्मा ने अपने हाथों से बनाया था। देव-अदेव सभी मन में कहते थे कि उसके समान अन्य किसी का सौंदर्य नहीं था ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ एक शाह का हीरामन नामक एक पुत्र था जिसके समान तीनों लोकों में अन्य कोई नहीं था ॥ ३ ॥ छत्रमती उस छरहरे जवान को देखकर तृप्त हो गई, क्योंकि रूप में उसके समान तीनों भुवनों में दूसरा कोई नहीं था ॥ ४ ॥ ॥ सोरठा ॥ रानी ने सखी को भेज कर उसे बुला लिया और मित्र को मुस्कुराकर कहा कि शंका को त्यागकर मुझसे रमण करो ॥ ५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ रानी ने जो कहा वह उसने नही किया। वह उसके पाँव भी पड़ी पर मूर्ख नहीं माना। वह उसे अनेकों हाव-भाव दिखाने लगी पर उस मूर्ख ने प्रसन्न होकर उससे रमण नहीं किया ॥ ६ ॥ भाग्य से यदि कभी लाख मुहरें मिल जायँ तो उन्हें ले लेना चाहिए और त्यागना नहीं चाहिए। रानी से स्नेहपूर्वक जो मिले ले लेना चाहिए और जो वह कहे निस्संकोच करना चाहिए ७ रानी ने उसस

हो जो वहु कहै सु करियै शंक न कीजियै ॥ ७ ॥ भजु रानी तिह कह्यो न तिह ताकौ भज्यो । कामकेल हित मान न तिह तासो सज्यो । नाँहि नाँहि सो करत नासित की तह भयो । हो तब अबला कै कोप अधिक चित मै छयो ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ तरुनी तबै अधिक रिसि भरी । कठिन क्रिपान हाथ मै धरी । ताको तमकि तेग सौ मार्यो । काटि मूँड छित ऊपर डार्यो ॥ ९ ॥ टूक अनेक तवन कौ कीनो । डारि देग के भीतर दीनो । निजु पति बोलि धाम मै लयो । भच्छ भाखि आगे धरि दयो ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ मदरा माँझ चुआइ तिह मद करि प्यायो पीय । लहि बारुनि मूरखि पियो भेद न समझ्यो जीय ॥ ११ ॥ हाडो तुचा गिलोल कै दीनो डारि चलाइ । रहत मासु दाना भए अस्वन दयो खवाइ ॥ १२ ॥ ॥ चौपई ॥ तासों रति जिन जानि न करी । ता पर अधिक कोप त्रिय भरी । है त्रिप को तिह मास खवायो । (मू०ग्रं०११३२) मूरख नाहि नाहि कछु पायो ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ तेईस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २२३ ॥ ४२४५ ॥ अफजूं ॥

केलिक्रीड़ा माँगी जो उसने नहीं मानी और कामकेलि के लिए तैयार नही हुआ । जब वह नाँह-नाँह ही करता रहा तो स्त्री के मन में अत्यधिक क्रोध भर उठा ॥ ८ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब तरुणी ने क्रुद्ध हो विकराल कृपाण को हाथ में पकड़ा । भड़ककर उसे कृपाण से मार डाला और उसका सिर काटकर धरती पर गिरा दिया ॥ ९ ॥ फिर उसके अनेकों टुकड़े किए और देग में डाल दिया । फिर उसने अपने पति को महल में बुला लिया और भोजन के रूप में उसके आगे रख दिया ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ उसे मदिरा का पेय बनाकर मदपूर्वक पिलाया और वह मूर्ख भी उसे वारुणि समझकर पी गया ॥ ११ ॥ हड्डी और त्वचा को हिलाकर बाहर डाल दिया और जो मास बचा उसे घोड़ों को खिला दिया ॥ १२ ॥ ॥ चौपाई ॥ जिसने उसके साथ रतिक्रीड़ा नहीं की वह स्त्री उस पर अत्यधिक क्रुद्ध हो गई । क्रुद्ध हो उसने राजा को मांस खिला दिया और इस मूर्ख पति को भी रहस्य का पता न चल सका ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ तेईसवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति २२३ ४२४५ अफजू

अथ दोइ सौ चौबीस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ बिशनकेत राजा बडो जूनागढ़ को ईस । इंद्र चंद्र सौ राज धौ अलकि सकै जगदीस ॥१॥ ॥चौपई॥ स्त्री त्रिपुरारि कला ताकी त्रिय । मन क्रम बसि राख्यो जिन करि पिय । अधिक तरुनि को रूप बिराजै । स्त्री त्रिपुरारि निरखि दुति लाजै ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ नवल कुअर इक शाहु को पूत रहै सु कुमार । रीझ रही त्रिपुरारि कल ताको रूप निहारि ॥३॥ ॥ अड़िल्ल ॥ नवल कुअरहि बिलोकि हियो ललचाइयो । पठै सहचरी निजु ग्रहि बोल पठाइयो । अधिक मानि रुचि रमी हरख उपजाइकै । हो कामरीति जुत प्रीतम अधिक मचाइकै ॥ ४ ॥ छैल छैलनी छकै अधिक सुख पावहीं । जोर जोर चखु चार दोऊ मुसकावहीं । लपट लपट करि जाँहि न छिन इक छोरही । हो करि अध्ररन को पान कुचान मरोरही ॥ ५ ॥ चौरासियन आसनन करत बनाइकै । काम कलोल मचाइ अधिक सुख पाइकै । कोकसार के भेद उचरैं बनाइ कर । हो निरखि प्रभा बलि जाहि दोऊ मुसकाइ करि ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ एक दिवस

दो सौ चौबीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ जूनागढ़ का महान राजा विष्णुकेतु था जो इन्द्र और कुबेर के समान अथवा स्वयं परमेश्वर (-सदृश) था ॥ १ ॥ ॥चौपाई॥ त्रिपुरारि-कला उसकी स्त्री थी जिसने मन, वचन एवं कर्म से अपने प्रिय को अपने वश में कर रखा था। उस तरुणी का अत्यधिक शोभायमान रूप-सौंदर्य देखकर कामदेव भी लज्जित होता था ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ नवलकुँवर एक राजा का सुकुमार पुत्र था। त्रिपुरारिकला उसके रूप को देखकर रीझ उठी ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ नवलकुँवर को देख उसका मन ललचा उठा। उसने सखी को भेज उसे अपने घर बुला भेजा। उससे प्रसन्नतापूर्वक अत्यधिक रुचि मानकर उसने रमण किया। उसने उसके साथ कामकलाओं की धूम मचा दी ॥ ४ ॥ छैला और छैलिनी सुख को छककर भोग रहे थे और सुन्दर नयनों को देखते हुए मुस्कुराते थे। वे एक-दूसरे से लिपट-लिपट जा रहे थे और एक क्षण भी एक-दूसरे को नहीं छोड़ते थे। वे अधरपान और कुचमर्दन करते थे ॥ ५ ॥ चौरासी आसन बनाकर वे काम-किल्लोल हर्षपूर्वक किया करते थे। कोकशास्त्र के भेदों का उच्चारण किया करते थे और दोनों (एक-दूसरे की) प्रभा देखकर न्योछावर हो मुस्कुराते थे ६ चौपाई एक

इमि जार उचारो। सुनु रानी तै कह्यो हमारो। जिनि तव नाथ बिलोकै आई। दुहूँअन हने कोप उपजाई॥ ७॥ ॥ त्रियो बाच॥ प्रथम राव तन भेद जताऊँ। बहुरि ढढोरो नगर दिवाऊँ। दै दुंदभि पुनि तोहि बुलैहौ। काम भोग रुचि मानि मचैहौ॥ ८॥ ॥ अड़िल्ल॥ अधिक भोग करि मीतहि दयो उठाइकै। आपु न्रिपति सौ काही बात समुझाइकै। शिव मोकौ इह भाँति कह्यो हौ आइ। करि हो तौहउ तुमरे तीर कहौ अब आइ धरि॥ ९॥ ॥ चौपई॥ जब दिन एक सभागा ह्वैहै। महादेव मेरे ग्रिहि ऐहै। निजु हाथन दुंदभी बजावै। कूकि अधिक सभ पुरहि सुनावै॥ १०॥ जब तुम ऐस शबद सुनि लैयहु। तब उठ धाम हमारे ऐयहु। भेद किसू औरहि नहि कहियहु। भोग समै लिय को भयो लहियहु॥ ११॥ (मू०ग्रं०११२४) ॥ दोहरा॥ तुरतु आनि मोको भजहु सुनु राजा सुखधाम। पल्यो परोसो होइ सुत मोहन रखियहु नाम॥ १२॥ यौ कहिकै न्रिप सों बचन ग्रिहि ते दियो उठाइ। पठै सहचरी जार को लीनो निकट बुलाइ॥ १३॥ ॥ चौपई॥ काम भोग प्रीतम सो कियो। द्रिड़ करि बहुत दमामो दियो। कूकि कूकि पर सकल सुनाइसि। भोग समै

दिन मित्र ने यह कहा कि हे रानी! तुम मेरी बात सुनो: कहीं तुम्हारा पति हम-दोनों को देख न ले और मार न डाले॥७॥ ॥त्रिया उवाच॥ पहले राजा को बताऊँगी, फिर नगर में ढिंढोरा पिटवाऊँगी, फिर दुंदुभि बजाकर तुम्हें बुलाऊँगी और पुनः रुचिपूर्वक भोग-विलास करेंगे॥ ८॥ ॥ अड़िल्ल॥ अत्यधिक भोग करके उसने मित्र को उठा दिया और स्वयं राजा को समझाकर कहा कि शिव जी ने मुझसे कहा है कि मैं अब तुम्हारे सामने एक दिन तुम्हारे घर आऊँगा॥ ९॥ ॥ चौपाई॥ जब कोई भाग्यशाली दिन आएगा तो महादेव मेरे घर आयेंगे। अपने हाथों से दुंदुभि बजाएंगे, जिसकी आवाज़ सारे नगर में सुनाई पड़ेगी॥ १०॥ जब तुम यह ध्वनि सुनो तो मेरे महल में चले आना। किसी अन्य से न कहना और स्त्री के भोग समय में आ जाना॥ ११॥ ॥ दोहा॥ फिर तुरन्त हे सुखधाम राजन्! तुम मेरे साथ रमण करना। तब पला-पलाया एक पुत्र मिलेगा जिसका नाम मोहन रखना॥ १२॥ यह कहकर उसने राजा को महल से उठा दिया और सखी भेजकर अपने मित्र को बुला लिया॥ १३॥ चौपाई। उसने कामभोग प्रियतम से किया और ज़ोर से नगाड़ा बजाय

रानी को आइसि ॥ १४ ॥ बचन सुनत राजा उठि धयो । भोग समो रानी को भयो । जो शिव बचन कह्यो सो ह्वैहै । पर्यो परोसो सुत ग्रहि देहै ॥ १५ ॥ आवत न्रिपति जार डरपानो । रानी सों यो बचन बखानो । निराप्राध मोकौ तै मार्यो । मै त्रिय कछु न तोरि बिगार्यो ॥ १६ ॥ शिव बच सिमरि तहाँ न्रिप गयो । भोग करत निजु त्रिय सो भयो । पीठि फेरि ग्रहि को जब धायो । तब त्रिय अपनो जार बुलायो ॥ १७ ॥ ॥ दोहरा ॥ कहा जात राजा कह्यो शिवसुत दीनो धाम । पलो पलोसो लीजियै मोहनि रखियै नाम ॥ १८ ॥ ॥ चौपई ॥ प्रथम जार को बोलि पठायो । दै दुंदभि पुनि राव बुलायो । बहुरि कूकि कै पुरहि सुनाइसि । मितवा को सुत कै ठहराइसि ॥ १९ ॥ ॥ दोहरा ॥ निसु दिन राखत जार को सुत सुत कहि कहि धाम । शिव बच लहि न्रिप चुप रह्यो इह छल छल्यो सु बाम ॥ २० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ चौबीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २२४ ॥ ४२७२ ॥ अफजूं ॥

जिसकी आवाज़ सबको सुनाई पड़ गयी। (कथनानुसार) रानी का केलि-क्रीड़ा का समय आ पहुँचा ॥ १४ ॥ आवाज़ सुनकर राजा उठ दौड़ा कि रानी का रमण-समय आ गया है। अब शिव के कथनानुसार होगा और पला-पलाया पुत्र प्राप्त होगा ॥ १५ ॥ राजा को आते देख यार डर गया और रानी से कहने लगा कि तुमने मुझे निरपराध ही मरवा दिया। मैंने भला तुम्हारा क्या बिगाड़ा था ॥ १६ ॥ शिव-वचन का स्मरण कर राजा वहाँ गया और अपनी स्त्री से रमण करने लगा। जब पीठ फेरकर वह वापस घर गया तो रानी ने तुरन्त अपने यार को बुला लिया ॥ १७ ॥ ॥ दोहा ॥ राजन् ! कहाँ जा रहे हो ? शिव ने घर में पुत्र दिया है। पला हुआ लो और इसका नाम मोहन रखो ॥ १८ ॥ ॥ चौपाई ॥ पहले यार को बुलाया, फिर दुंदुभि बजाकर राजा को बुलाया, पुनः ध्वनि सारे नगर में सुनाई और फिर मित्र को पुत्र बना लिया ॥ १९ ॥ ॥ दोहा ॥ अब वह रात-दिन पुत्र कहकर यार को अपने घर में रख रही थी। शिव के वचनों को स्मरण कर राजा चुप लगा गया और इस प्रकार प्रपंच से स्त्री ने उस राजा को छल लिया ॥ २० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया चरित्र के मंत्री भूप में दो सौ चौबीसवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति २२४ ४२७२ अफजूं

अथ दोइ सौ पच्चीसवाँ चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बाराणसी नगरिक बिराजै । जाके लखे पाप सभ भाजै । बिमलसैन राजा तह रहई । सभ दुरजन के दल को दहई ॥ १ ॥ सुनत कुअर त्रिप को इक सुत बर । अमित दरबु ताके भीतर घर । जो अबला तिह रूप निहारै । सभ ही दरबु आपनो वारै ॥२॥ ॥ दोहरा ॥ स्री चखुचारुमती रहै त्रिप की सुता अपार । कै रति पति की पुत्रका कै रति को अवतार ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जब चखुचारुमती तिह रूप निहारियो । यहै आपने चित के बिखै बिचारियो । क्योंहूँ ऐसो छैल जु इक छिन पाइयै । हो करो न न्यारो नैक सदा बलि जाइयै ॥ ४ ॥ ॥ दोहरा ॥ सहचरि एक बुलाइकै ता कै दई पठाइ । (मू०ग्रं०११३५) मोकौ मीत मिलाइयै करिकै कोटि उपाइ ॥ ५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ दीजै सखी मिलाइ सजन मुहि चाहियै । जाके बिरह बिसेख भए हिय दाहियै । जिह आवत उडि मिलै शंकि को छोरिकै । हो लोक लाज कुल कानि करोरिक ओरकै ॥ ६ ॥ स्यानी सखी बिसेख भेद तिह पाइकै ।

दो सौ पचीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ वाराणसी एक नगर है जिसके दर्शन से सभी पाप नष्ट होते (माने गए) हैं । विमलसेन वहाँ का राजा था जो सभी दुर्जनों के समूह को नष्ट करनेवाला था ॥ १ ॥ राजा का एक सुन्दर पुत्र था जिसके पास अपरिमित द्रव्य था । जो भी स्त्री उसका रूप देखती अपना समस्त द्रव्य न्यौछावर कर देती ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ चक्षुचारुमती राजा की पुत्री थी । वह कामदेव की पुत्री अथवा रति का अवतार ही लगती थी ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जब चक्षुचारुमती ने उसका रूप देखा तो अपने चित्त में यही विचार किया कि कैसे भी ऐसा छैला यदि एक दिन मिल जाय तो उसे कभी भी अलग न करूँ और सदैव उस पर न्यौछावर जाऊँ ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ एक दासी को बुलाकर उसे भेजा और कहा कि कोई भी उपाय कर मुझे मेरा मित्र मिला दो ॥ ५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ हे सखी ! मुझे सजन चाहिए, मुझे उसे मिला दो जिसके विरह-विशेष में हृदय जल रहा है; जिसको आते हुए को देखकर लोक-लाज को छोड़ निस्संकोच उड़कर मिलने को मन चाहता है ॥ ६ ॥ स्यानी सखी ने उसके भेद को समझकर उस प्रिया को प्रियतम मिला दिया

आनि प्रिया कह प्रीतम दयो मिलाइकै। निरखि कुअरि तिह अंग दिवानी सी भई। हो बिरह समुंद के मांझ मगन ह्वैकै गई ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ प्रीतम स्यों यौ प्रिया सुनायो। तैं मेरो मन आजु चुरायो। हौ हूँ ऐस जतन कछु करिहौ। सभहिन छोरि तोहि कौ बरिहौ ॥ ८ ॥ जो तुहि कहौ मित्र सो करियहु। मोर पिता ते नैक न डरियहु। सूरज नाम आपनो धरियहु। मोहि ब्याहि लै धाम सिधरियहु ॥ ९ ॥ तब अबला निजु पिता बुलायो। पकरि बाँह ते मित्र दिखायो। सुनु राजा सूरज इह आही। चाहत है तव सुता बियाही ॥१०॥ ॥ दोहरा ॥ प्रथम प्रतग्या लीजियै या की अबै बनाइ। पुनि मोको इह दीजियै सुनु राजन के राइ ॥ ११ ॥ जब लौ इह इह घर रहै चढ़ै न सूरज अकास। जब इह जाइ तहाँ चढ़ै जग मै होइ प्रकास ॥ १२ ॥ ॥ चौपई ॥ सत्य बात राजै इह जानी। भेद न लख्यो कछू अग्यानी। राजकुमारि मंत्र इक पढ़ियो। द्वै दिन लगे सूरज नहि चढ़ियो ॥ १३ ॥ ॥ दोहरा ॥ मंत्रन सो अभिमंत्र करि बरिया दई उडाइ। निसु नाइक सो जानियै गगन रह्यो थहराइ ॥ १४ ॥

कुँवरि उसको देखकर मानों दीवानी हो गई और ऐसा लगता था मानों विरह-समुद्र में मग्न हो गई हो ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ प्रियतम से प्रिया ने कहा कि तुमने तो आज मेरा मन चुरा लिया है। मैं कुछ ऐसा यत्न करूँगी कि सबको छोड़कर तुम्हारा वरण करूँगी ॥ ८ ॥ मेरे मित्र ! जो मैं तुमसे कहूँ तुम वही करना और मेरे पिता से तनिक नहीं डरना। अपना नाम सूर्य रख लो और मुझे ब्याहकर अपने घर की ओर चल दो ॥ ९ ॥ तब उस स्त्री ने अपने पिता को बुलाया और मित्र की बाँह पकड़कर उसे दिखा दिया। हे राजा ! सुनो, यही सूर्य है जो तुम्हारी पुत्री से विवाह करना चाहता है ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ पहले इससे अभी प्रण ले लो और फिर हे सम्राट् ! मुझे इसके हवाले करो ॥ ११ ॥ जब तक यह घर में रहता है, सूर्य आकाश में नहीं चढ़ता। यह जब बाहर जहाँ भी जाता है तो जगत् में प्रकाश हो जाता है ॥ १२ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजा ने उसे सत्य माना और वह अज्ञानी कुछ भी भेद न समझ सका। राजकुमारी ने एक मंत्र पढ़ा और दो दिन तक सूर्य न निकला ॥ १३ ॥ ॥ दोहा ॥ मंत्रों से अभिमन्त्रित कर उसने वाटिका उड़ा दिया और ऐसा लगा कि चन्द्रमा की रात में मानो थर

॥ चौपई ॥ जब राजैं इह भाँति निहार्यो । सत्य सूरज करि ताँहि बिचार्यो । तुरतु ब्याहि दुहिता तिह दीनी । भेद अभेद की बात न चीनी ॥ १५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ पच्चीसवाँ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २२५ ॥ ४२८७ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ छव्वीसवों चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ मालनेर के देस मै मालकौसपुर गाउँ । मानशाह इक चौधरी बसत सु तवनै ठाउँ ॥ १ ॥ रुसतम देई तवन की रहत सुंदरी नारि । रूप सील सुचि क्रिआ सुभ पति की अति हितकार ॥ २ ॥ ता को पति उमराव की करत चाकरी निति । (मू०ग्रं०११३६) शाहजहाँ के धाम को राखै दरबु अमिति ॥ ३ ॥ भाँग पियत बहु चौधरी और अफीम चढ़ाइ । आठ पहर घूमत रहै लोग हसैं बहु आइ ॥४॥ ॥चौपई॥ लोक सकल जिनि ताँहि बखानै । मूरख शाह कछू नहि जानै । जो नर भाँग अफीम चढ़ावै । ता कह सुधि कहो कब आवै ॥ ५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ शाह करी चित्त माँझ सु चिंत

हो ॥ १४ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब राजा ने देखा और उसे सत्यरूप से माना। तुरन्त उससे पुत्री का विवाह कर दिया और भेद-अभेद को कुछ नहीं जाना ॥ १५ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ पचीसवें चरित्र की शुभ मत् समाप्ति ॥ २२५ ॥ ४२८७ ॥ अफज् ॥

दो सौ छब्बीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ मालनेर देश में मालकौसपुर नामक गाँव था, जहाँ मानशाह नामक एक चौधरी रहता था ॥ १ ॥ रुस्तमदेवी उसकी सुन्दर नारी थी जो रूप और शील में पति की अत्यन्त हितकारिणी थी ॥ २ ॥ उसका पति उमराव की नौकरी करता था और शाहजहाँ के अपरिमित द्रव्य की रक्षा करता था ॥३॥ चौधरी भाँग पीकर और अफ़ीम चढ़ाकर आठों प्रहर हंसता रहता था और लोग उस पर हँसते रहते थे ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ सभी लोग उसी की बातें करते थे पर उस मूर्ख शाह को कुछ पता नहीं चलता था जो व्यक्ति भाँग अफीम का सेवन करता है उसको भला होश कहाँ रहेगी ५

बिचारिकै । सभ धन इन को हरौ चरित्र दिखारिकै । हजरति हूँ को दरबु सदन हरि ल्याइहौ । हो सभ सोफिन को मूँड मूँड कै खाइहौ ॥ ६ ॥ हजरति जू को प्रथम खज़ाना सभ लयो । पुनि सोफिन को दरबु धरो हरि धरत भयो । बहुरि अतिथ को भेस त्रियहि पहिराइकै । हो बनी कचहिरी भीतर दई पठाइकै ॥ ७ ॥ ॥ दोहरा ॥ हजरति को लोगन सहित लीनो दरबु चुराइ । भरि थैली ठिकरी धरी मुहरें करी बनाइ ॥ ८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ मानि शाह बहु भाँग अफीम चढ़ाइकै । घूमत घूमत तहाँ पहूँच्यो जाइकै । तब लौ कहियो अतिथ इक ठिकरी दीजियै । हो काजु हमारो आजु चौधरी कीजियै ॥ ९ ॥ दयो एक घट फोरि बहुत ठिकरी भई । तिन ते एक उठाइ अतिथ कै कर दई । लैकै जबै अतीत निरख ता को लयो । हो एक कचहिरी माँझ स्राप तरुनी दयो ॥१०॥ ठीक्रन ही को दरबु सकल ह्वै जाइहै । हजरति लोगन सहित न कछु धन पाइहै । काजि क्रोरि कुट्टवार खजानो तब लह्यो । हो सति स्राप भ्यो कह्यो अतिथ जैसो दयो ॥ ११ ॥ सभ सोफिन को मूँडि मूँडि अमली गयो ।

॥ अड़िल्ल ॥ मानशाह ने मन में विचार किया कि इन लोगों का प्रपंच द्वारा धन चुरा लेना चाहिए । (पहले तो) बादशाह का द्रव्य घर से चोरी करूँगा और फिर इन न पीनेवालों को मूँढ़-मूँढ़कर खाऊँगा ॥ ६ ॥ पहले तो उसने बादशाह का खज़ाना ले लिया और फिर न पीनेवालों का भी धन-धरोहर रख लिया । फिर स्त्री को साधु-वेश पहनाकर उसे भरी कचहरी में भेज दिया ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ उसने बादशाह-समेत लोगों का द्रव्य चुरा लिया और मोहरों के तौर पर उनके घड़ों में ठीकरियाँ भर दीं ॥ ८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ फिर मानशाह बहुत-सी भाँग और अफ़ीम चढ़ाकर घूमता-घूमता वहाँ आ पहुँचा । तब तक फ़क़ीर ने कहा कि हे चौधरी ! मेरा एक काम करो और मुझे एक ठीकरी दो ॥ ९ ॥ उसने एक घड़ा तोड़ा और बहुत-सी ठीकरियों में से एक ठीकरी उठाकर उस फ़क़ीर को दे दी । जब उस फ़क़ीर ने ठीकरी को देखा तो कचहरी में एक शाप दिया ॥ १० ॥ यह सारा धन ठीकरी हो जायगा और लोगों-समेत बादशाह को भी कुछ प्राप्त नहीं होगा । जब अनेकों कार्यवश कोतवाल ने खजाना देखा तो उसने देखा कि फक़ीर का कहा हुआ शाप सत्य हो गया है ११ वह नशेड़ी सब न

मुहरैं लईं निकारि ठीकरी दै भयो । आजु लगे ओहि देस अतिथ को मानियै । हो मसला इह मशहूर जगत मै जानियै ॥ १२ ॥ ॥ दोहरा ॥ वाके खाना नै लिख्यो हजरति जू को बनाइ । स्राप दयो इक अतिथ नै सभ धन गयो गवाइ ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ छब्बीसवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २२६ ॥ ४३०० ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ सताईसवों चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ देस मालवा के बिखै मदनसैन इक राइ । गढ़ तासौ राजा बिधिहि और न सक्यो बनाइ ॥ १ ॥ नाम रहै तिह तरुनि को (मू०ग्रं०११३७) स्रीमनि माल मतीय । मनसा बाचा करमना बसि करि राख्यो पीय ॥ २ ॥ पूत तहाँ इक शाहु को नाम राइ महबूब । रूप सील सुचि ब्रतन में गड़्यो बिधातै खूब ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ अमित तरुनि को रूप बिराजै । जिह मुख निरख चंद्रमा लाजै । सुंदर सम

पीनेवालों को लूट-लूटकर ले गया। उसने मुहरें निकाल लीं और ठीकरियाँ भर दीं। आज तक उस देश में उस साधु को माना जाता है और यह बात सारे जगत् में प्रसिद्ध हो गई है ॥ १२ ॥ ॥ दोहा ॥ उसके अधिकारी ने बादशाह को बनाकर लिखा कि एक फकीर के शाप से सब धन गँवाया जा चुका है ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ छब्बीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २२६ ॥ ४३०० ॥ अफजू ॥

दो सौ सत्ताईसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ मालवा देश में मदनसेन नामक एक राजा था, जिसे बनाकर फिर विधाता वैसा अन्य कोई नहीं बना सका ॥ १ ॥ उसकी स्त्री का नाम मणिमालमती था, जिसने मन-वचन एवं कर्म से प्रिय को वश में कर रखा था ॥ २ ॥ वहाँ एक शाह का पुत्र था जिसका नाम महबूबराय था। उसे शील, शुचिता और व्रत में विधाता ने खूब बनाया था ३ चौपाई उस युवक का रूप अपरिमित था और उसका मुख देखकर चन्द्रमा भी लज्जित होता था उसके समान कोई भी सुन्दर नहीं

ताँकी कोऊ नाही। रूपवंत प्रगट्यो जग माही ॥ ४ ॥ जब रानी वह कुअरि निहार्यो। इहै आपने ह्रिदै बिचार्यो। कै इह आजु बोलि रति करियै। कै उर मारि कटारी मरियै ॥ ५ ॥ लहि सहचरि इक हितू बुलाई। चित की ब्रिथा ताँहि समझाई। मेरी कही मीत सौ कहियहु। जो मुरि आस जियन की चहियहु ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ सुनि आतुर बच कुअरि के सखी गई तह धाइ। ताँहि भले समुझाइकै इह उहि दयो मिलाइ ॥ ७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ मन भावंता मीतु कुअरि जब पाइयो। लखि छबि लोल अमोल गरे सों लाइयो। लपटि लपटि दोऊ जाँहि तरुन मुसकाइकै। हो कामकेल की रीति प्रीति उपजाइकै ॥ ८ ॥ तब लौ राजा ग्रहि रानी के आइयो। आदर अधिक कुअरि करि मदरा प्याइयो। गिरयौ मत ह्वै न्रिपति खाट पर जाइकै। हो तबही तुरतहि लिय तिय जार बुलाइकै ॥ ९ ॥ न्रिप की छतिया ऊपर अपनी पीठि धरि। कामकेल द्रिड़ किय निजु मीतु बुलाइ करि। मदरा के मद छके न कछु राजै लह्यो। हो लेत पस्वारे भयो न कछु मुख तें कह्यो ॥ १० ॥ कामभोग

था। वही विश्व में प्रकट रूपवान था ॥ ४ ॥ रानी ने जब उस कुँवर को देखा तो अपने चित्त में विचार किया कि या तो इसे बुलाकर रतिक्रिया की जाय अथवा मैं कटार भोंककर मर जाऊँ ॥ ५ ॥ उसने अपनी हितैषिणी एक सखी बुलाई और उसे अपनी व्यथा कह सुनाई। यदि तुम मुझसे जीवित रहने की आशा करती हो तो मेरा संदेशा प्रिय से जा कहो ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ कुँवरि के आतुरतापूर्ण वचन सुनकर सखी दौड़कर वहाँ गई और उसे भली प्रकार समझाकर इसको उससे मिला दिया ॥७॥ ॥अड़िल्ल॥ जब कुँवरि ने मनभावन मित्र पाया तो उसकी लालिमापूर्ण छवि को देखकर उसे गले से लगाया। दोनों तरुण कामकेलि की रीति को निभाते हुए लिपट-लिपटकर मुस्कुरा रहे थे ॥ ८ ॥ तब तक राजा रानी के महल में आया। कुँवरि ने उसे आदरपूर्वक मदिरा-पान करवाया। राजा मस्त हो पलग पर गिर पड़ा और उसी समय स्त्री नें तुरन्त अपने प्रेमी को बुला लिया ॥ ९ ॥ राजा की छाती पर अपनी पीठ टिकाकर अपने मित्र को बुलाकर उसने दृढ़तापूर्वक केलिक्रीड़ा की। राजा ने मदिरा पिये होने के नाते कुछ भी नहीं कहा प्रत्युत करवटें बदलता रहा ॥ १० ॥ स्त्री ने कामभोग कर प्रिय को उठा दिया मूर्ख राजा कुछ भी भेद नहीं जान सका इस प्रकार

करि त्रिय पिय दयो उठाइकै । मूड़ राव कछु भेद न सकियो पाइकै । इह छल छैली छैल सु छलि पति को गई । हो सु कबि स्याम इह कथा तबै पूरन भई ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ सताईसवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २२७ ॥ ४३११ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ अठाईसवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ उत्तर देस न्रिपति इक रहई । बीरजसैन जाको जग कहई । बीरजमती तवन घर नारी । जानक रामचंद्र की प्यारी ॥ १ ॥ अधिक कुअर को रूप बिराजै । रति पति की रति की छबि लाजै । जो अबला ता को लखि जाई । लाज साज तजि रहत बिकाई ॥२॥ ॥ दोहरा ॥ एक शाह की पुत्रिका जाको रूप अपार । निरखि (मू०ग्रं०११३८) मदन जाको रहै न्याइ चलत सिर झारि ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक दिवस वहु राइ अखेट सिधाइयो । ऊच धौलहर ठाढि कुअरि लखि पाइयो । तरुनि शाहु की सुता रही उरझाइकै । हो हेरि न्रिपति की प्रभा सु गई बिकाइकै ॥ ४ ॥

वह छलना स्त्री पति को छल गई और श्याम कवि के कथनानुसार यह कथा पूर्ण हुई ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ सत्ताईसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २२७ ॥ ४३११ ॥ अफजू ॥

दो सौ अट्ठाईसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ उत्तर देश में वीर्यसेन नामक एक राजा रहता था, उसकी स्त्री वीर्यमती मानों सीता के समान थी ॥ १ ॥ उस कुँवर का रूप अत्यधिक सुन्दर था और उसके सामने कामदेव की रति का रूप भी लज्जित होता था । जो स्त्री उसको देख लेती थी वह सब लज्जा आदि छोड़कर उसी पर बिक जाती थी ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ एक शाह की पुत्री थी जिसके रूप-सौंदर्य को देखकर कामदेव भी सिर झुकाकर चलता बनता था ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक दिन वह राजा आखेट खेलने गया और उस शाह की पुत्री ने उसे ऊँचे महल पर चढ़कर देखा । शाह की पुत्री उसे देखकर उलझ गई और राजा की प्रभा देखकर उस पर बिक गई । ४ चौपाई वहीं

।। चौपई ।। तही ठाँहि इक चरित बनाइसि। डोरि बडी की गुडी चड़ाइसि। ता मै इहै संदेश पठावा। भेत चित्त कौ त्रिपहि जतावा ।।५।। ।। कबित्त ।। ताजी कूँ तुराइ कै असाड़ी ओड़ि राह पौणा जालिम जवाल दुहाँ नैनाँ नूँ नचावणा। अंजन दिवाइ बाड़ बिसिख चड़ाइकै खुसाली नूँ बड़ाइ नाले कैफाँ नूँ चड़ावणा। बदन दिखाणा सानूँ छाती नालि लाणा अते नैणाँनालि नैण जोड़ि वेहा नेहु लावणा। बाचे पत्र आणा मै ही मिले ब्यों न जाणा साँई यारो जी असाडे पास आवणा हो आवणा ।। ६ ।। ।। दोहरा ।। गुडीया बिखै संदेश लिखि दीनो कुअरि पठाइ। तनिक बार लागो नही त्रिपहि पहूँची जाइ ।। ७ ।। ।। चौपई ।। पतिया छोरि लखी प्रिय कहाँ। इह पठ्यो तरुनी लिखि उहाँ। या गुडिया पर बैठहु धाई। चित न करहु चित्त मै राई ।। ८ ।। कै गुडिया उपर चड़ि आवहु। ना तर टाँग तरे करि जावहु। जो तुहि गिरन धरन पर देऊँ। स्वरग साच करि बास न लेऊँ ।। ९ ।। ।। दोहरा ।। मात पच्छ सत सपत पितु परै नरक कुल सोइ। जौ गुडिया ते भूमि परि पतन तिहारो होइ ।। १० ।। ।। चौपई ।। तुम याकौ पिय डोरि न जानहु। लगूआ कै याकौ

खड़ी हो उसने एक चरित्र बनाया और एक लंबी डोरीवाली पतंग उड़ा दी। उसके साथ संदेश भेज दिया और राजा को मन का रहस्य बता दिया ।। ५ ।। ।। कवित्त ।। घोड़ा दौड़ाकर हमारी ओर आओ और अपनी जालिम आँखों को नचाना। अंजन डालकर बाण रूपी आँखों को चढ़ाकर मेरी प्रसन्नता बढ़ाना और खूब मद्य-पान करना। मुख दिखाना, हमें छाती से लगाना और नयनों से नयन जोड़कर हमें स्नेहपूर्वक छाती से लगाना। पत्र पढ़कर आना और हमसे मिले बिना न जाना। हे प्रिय ! मेरे पास तो अवश्य आना ।। ६ ।। ।। दोहा ।। कुँवरि ने पतंग में संदेश लिखकर भेज दिया जो ज़रा-सी हवा लगते ही राजा के पास जा पहुँची ।। ७ ।। ।। चौपाई ।। तरुणी ने पत्र में यह लिखकर वहाँ भेजा कि हे राजा ! मन में चिन्ता न करो और इस पतंग पर बैठ जाओ ।।८।। या तो तुम गुड़िया पर सवार हो जाओ अथवा इसे टाँगों में दबा लो। यदि मैं तुम्हें धरती पर गिरने दूँ तो मैं नर्क में जाऊँ ।। ९ ।। ।। दोहा ।। यदि तुम पतंग से गिर पड़ो तो मेरे माता-पिता के सात वंश नर्क में चले जायँ ।। १० ।। ।। चौपाई ।। हे प्रिय ! तुम इसे मात्र

पहिचानहु । तुमरो बाल बिघन नहि ह्वैहै । या मै देखि पाव धरि लैहै ।। ११ ।। ।। दोहरा ।। मंत्र सकति ते मै किया सगूआ याहि बनाइ । शंक त्यागि करि आइयै सुनु राजन के राइ ।। १२ ।। ।। चौपई ।। जब राजै ऐसी सुनि पाई । चित की शंक सगल बिसराई । हय ते उतरि डोरि पर चढियो । आनंद अधिक चित्त मै बढियो ।। १३ ।। ।। अड़िल्ल ।। कुअरि कुअरि के तीर पहूँच्यो आइकै । काम भोग कौ कियो हरख उपजाइकै । शाह तब लगे द्वार पहूँच्यो आइ करि । हो तबै तरुनि सौ बात कही पिय नैन भरि ।। १४ ।। अब त्रिय तुमरो शाह मैं गहि मारिहै । इहो धौलहर ऊपर ते (मू०ग्रं०११३६) मुहि डारिहै । टूक टूक ह्वै सभै पसुरियाँ जाइहै । हो तुहि भेटे हम आजु इहै फल पाइहै ।। १५ ।। त्रिप चिंता चित भीतर कछू न कीजियै । निरखि हमारो चरित्र अबै ही लीजियै । बार तिहारो एक न बाँकन पाइहै । हो हम सो भोग कमाइ हसत ग्रहि जाइहै ।। १६ ।। मंत्र सकति हुंडी आतिह कियो बनाइकै । पकरि कान ते पति को दियो दिखाइकै । बहुरि मेख भे बाँध्यो त्रिपहि बनाइ कहि । हो बहुरि तवन को कियो सुदेस उठाइ करि ।। १७ ।। शाह निरख

डोरी मत समझो बल्कि इसे झूला समझो । तुम इस पर पाँव रखकर देखो तुम्हारा बाल भी बाँका नहीं होगा ।। ११ ।। ।। दोहा ।। मैंने मंत्र-शक्ति से यह झूला बनाया है, इसलिए हे राजन् ! तुम शंका को त्यागकर चले आओ ।। १२ ।। ।। चौपाई ।। जब राजा ने यह पाया तो चित्त की समस्त शंकाओं का त्याग कर दिया। वह घोड़े से उतरकर डोरी पर सवार हो गया और उसके मन में आनन्द बढ़ गया ।। १३ ।। ।। अड़िल्ल ।। वह कुँवर उस कुँवरि के पास आ पहुँचा और उन्होंने हर्षपूर्वक कामक्रीड़ा का उपभोग किया। तब शाह भी दरवाजे पर आ पहुँचा, यह देखकर तरुणी से आँखों मे जल भरकर प्रिय ने कहा ।। १४ ।। हे प्रिये ! तुम्हारा शाह अब मुझे पकड़ कर मार डालेगा और इसी महल से नीचे फेंक देगा । मेरी सभी पसलियाँ टूट जायेंगी और तुम्हारे साथ रमण करने का यही फल मुझे आज मिलेगा ।। १५ ।। राजन् ! तुम चिन्ता मत करो और मेरा प्रपंच अभी देख लेना । तुम्हारा एक भी बाल बाँका नहीं होगा और तुम हमसे भोग कमा कर अभी हँसते हुए घर जाओगे ।। १६ ।। मंत्र की शक्ति से उसे मेंढ़ा बना दिया और कान से पकड़कर पति को दिखा दिया फिर राजा को खूँटे से

ते गुडिया दई चड़ाइकै। करिकै संग स्वार दयो त्रिपु डाइकै। पियहि निरखि ते मीत दयो पहुँचाइ घर। हो भेद अभेद न कछु जड़ सक्यो बिचार करि॥ १८॥ ॥ दोहरा॥ शाहु सुता निरखिति पतिहि गुडिया दई चड़ाइ। ताँ पर बधे बजंत्र थे बाजत भए बनाइ॥ १९॥ बिहसि नारि निज नाथ सो कह्यो पियहि पहुचाइ। मित्र हमारो शाह इह दए दमामो जाइ॥ २०॥ ॥ चौपई॥ इह छल मीत सदन पहुचायो। ता को बार न बाँकन पायो। निजु पति भेद अभेद न चीनो। कबि प्रसंग पूरन तब कीनो॥ २१॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ अठाईसवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ २२८॥ ४३३२॥ अफजूं॥

अथ दो सौ उनत्तीस चरित्र कथनं॥

॥ चौपई॥ पलवल देस छत्रिनी रहै। बुद्धिमती जाको जग कहै। जब तन ताँहि बिरधता आइस। तब तिन एक चरित्र बनाइस॥ १॥ द्वै संदूक जूतियन भरे। मुहरन

बाँध दिया और फिर उसे अपने देश में भेज दिया॥ १७॥ शाह के देखते-देखते उसने पतंग उड़ा दी और उस पर राजा को सवार कर दिया। अपने पति के देखते-देखते मित्र को पहुँचा दिया और वह जड़ (पति) कुछ भी भेद-अभेद न जान सका॥ १८॥ ॥ दोहा॥ पति के देखते-देखते शाह की पुत्री ने पतंग उड़ा दी। उस पर जो वाद्य बँधे थे वे बजने लगे॥ १९॥ प्रियतम को पहुँचाकर स्त्री ने अपने पति से हँसते हुए कहा कि हमारा तो राजा मित्र है जो नगाड़े बजा रहा है॥ २०॥ ॥ चौपाई॥ इस छल से मित्र को घर पहुँचा दिया और उसका बाल भी बाँका नहीं हुआ। उसके अपने पति ने तनिक भी भेद-अभेद को नहीं पहचाना और इस प्रकार कवि ने यह प्रसंग पूर्ण किया॥ २१॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ अट्ठाईसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ २२८॥ ४३३२॥ अफजू॥

दो सौ उन्तीसवाँ चरित्र-कथन

चौपाई पलवल नगर में बुद्धिमती नामक एक क्षत्राणी रहती थी जब उसका तन वृद्ध हो गया तो उसने एक चरित्र दिखाया १। दो सदूक

के कुलि सुनत उचरे । पुत्र पउत्र ता दिन ते ताके । उदित भए सेवा कह वाके ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ जु कछु कहै प्रिय मानही सेवा करहि बनाइ । आइसु मै सभही चलै दरबु हेत ललचाइ ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ जो आग्या तिय करै सु मानै । जूतिन को मुहरैं पहिचानैं । आजु कालि बुढिया मरि जैहै । सभ ही दरबु हमारो ह्वैहै ॥ ४ ॥ जब तिह निकटि कुटंब सभावै । तह बुढिया यौ बचन सुनावै । जियत लगे इह दरबु हमारो । बहुरि लीजियहु पूत तिहारो ॥ ५ ॥ जब वहु तिया रोगनी भई । काजी कुटवारहि कहि गई । करम धरम जो प्रथम करैहै । सो सुत बहुरि खजानो लैहै ॥६॥ (मू०ग्रं०११४०) ॥ दोहरा ॥ करम धरम सुत जब लगे करै न प्रथम बनाइ । तब लौ सुनत न दीजियहु हमरो दरबु बुलाइ ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ कितिक दिनन बुढिया मरि गई । तिनके ह्रिदन खुशाली भई । करम धरम जो प्रथम करैहै । पुनि इह बाँटि खजानो लैहै ॥ ८ ॥ ॥ दोहरा ॥ करम धरम ताके करे अति धनु सुनत लगाइ । बहुरि संदूक पन्हीन के छोरत भे मिलि आइ ॥ ९ ॥ ॥ चौपई ॥ इह चरित्र तिय सेव कराई ।

जूतियों के भरकर कहा कि ये सब मुहरों से भरे हैं। उस दिन से उसके पुत्र-पौत्र सेवा में हाजिर रहने लगे ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ वह जो कहती थी उसे प्रिय मानते थे और खूब उसकी सेवा करते थे। पैसे के लालच में सभी उसकी आज्ञा मानने के लिए उठ चलते थे ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह स्त्री जो आदेश करती थी उसे सब मानते थे और जूतियों को मुहरें मानते थे। वे सोचते थे कि बुढ़िया तो आज-कल में मर जायगी और तब यह सारा द्रव्य हमारा हो जायगा ॥ ४ ॥ जब सारा कुटुंब उसके पास एकत्र होता था तो वह बुढ़िया ऐसे कहा करती थी। मैं जब तक जीवित हूँ तो यह द्रव्य मेरा है और पुत्रो ! मरने के बाद यह सब तुम्हारा हो जायगा ॥ ५ ॥ जब वह स्त्री बीमार हुई तो वह क़ाज़ी-कोतवाल के पास गई और कहने लगी कि जो पुत्र मेरा धर्म-कर्म करेगा उसी को खज़ाना मिलेगा ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ जब तक मेरा धर्म-कर्म अच्छी तरह से न कर लें तब तक किसी पुत्र को बुलाकर मेरा द्रव्य मत देना ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ कुछ दिनों बाद बुढ़िया मर गई और वे (पुत्र-पौत्र) सब खुश हो गए कि जो धर्म-कर्म पहले करेगा वही खज़ाने का हक़दार हो जायगा ८ दोहा पुत्रों ने काफी धन धर्म किया और फिर आकर जूती का संदूक खोला ९ चौपाई इस

सुनत दरबु को लोभ दिखाई। तिन के अंत न कछु कर आयो। छल बल अपनो मूँड मुँडायो ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ उनतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २२९ ॥ ४३४२ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ तीसवों चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ मालनेर के देस मै मरगजपुर एक गाँउँ। शाह एक तिह ठाँ बसत मदनशाह तिन नाँउँ ॥ १ ॥ मदनमती ताकी त्रिया जाको रूप अपार। आपु मदन ठठके रहै तिह रति रूप बिचार ॥ २ ॥ चेलाराम तहाँ हुतो एक शाह को पूत। सगल गुनन भीतर चतुर सुंदर मदन सरूप ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ चेलाराम जबै त्रिय लहियो। ता को तबै मदन तन गहियो। तरुनि तरुन ते रहत लुभाई। निरखि सजन छबि रही बिकाई ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ दूती पठै ताहि ग्रहि बोलि पठाइयो। कामभोग तासौ बहु भाँति कमाइयो। सोइ शाह जब जाइ त ताँहि बुलावई। हो ताँहि

प्रपंच से सब पुत्रों को धन का लालच दिखाकर उसने खूब सेवा कराई। उनके हाथ अंत में कुछ नहीं लगा और छल-बल से उन्होंने स्वयं धोखा खाया ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोप ख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ उनतीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २२९ ॥ ४३४२ ॥ अफजू ॥

दो सौ तीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ मालनेर देश में मरगजपुर नामक एक गाँव था, वहाँ मदनशाह नामक एक साहूकार रहता था ॥ १ ॥ अपार स्वरूपवाली उसकी स्त्री मदनमती थी, जिसके रूप को देखकर कामदेव भी उसे रति मानकर ठिठक जाता था ॥ २ ॥ एक अन्य साहूकार का पुत्र चेलाराम वहाँ था जो स्वयं सब गुणों में पूर्ण और कामदेव के समान रूपवाला था ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ चेलाराम ने जब स्त्री को देखा तो तभी वह कामासक्त हो उठा, तरुणी भी उस युवक पर लुब्ध थी और सजन की छवि देख उस पर बिकी हुई थी ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक दूती भेजकर उसे घर बुलाया और विभिन्न प्रकार से उससे कामक्रीडा की जब शाह सो जाता तो वह उसे बुलाती

भए रस रीति प्रीति उपजावई ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ तरुनी उठत शाह हू जाग्यो । पूछन ताहि आपु यौ लाग्यो । जात हुती कह तरुनि बतावहु । हमरे चित्त कौ भरमु मिटावहु ॥६॥ सुनहु शाह मै बचन उचारो । तुमरे चित को भरम उतारो । मोहू टूटि कैफ जब गई । लेत तबै पसवारन भई ॥ ७ ॥ ॥ दोहरा ॥ ऐस निसा करि शाह की दीनो बहुरि सवाइ । तुरतु मीत पै चली गई यार भजी लपटाइ ॥८॥१॥ (मू०ग्रं०११४१)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ तीसवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २३० ॥ ४३५० ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ इकत्तीस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ देस बावनी के रहै मालव नाम गवार । मैनकला ताकी तरुनि जाको रूप अपार ॥ १ ॥ दीरघ देह ता को रहै पुशट अंग सभ ठौर । दिरघ पुशट ता सम तरुनि दुतिय न जग मै और ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ फौजदार इक गॉउ तवन के आइयो । प्यास घाम तें अधिक तवन दुख

था और रसपूर्वक उससे रमण किया करता था ॥५॥ ॥ चौपाई ॥ तरुणी के उठते ही शाह भी जग गया और उससे पूछने लगा कि तुम कहाँ जा रही हो ? मुझे बताओ और मेरा भ्रम निवारण करो ॥ ६ ॥ हे शाह ! सुनो ताकि तुम्हारे चित्त का भ्रम निवारण हो । मेरा अफ़ीम का नशा जब समाप्त हो गया है तो मैं उसे लेने पंसारी के पास जा रही हूँ ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार शाह को निरुत्तर कर सुला दिया और स्वयं तुरन्त मित्र के पास जाकर उससे लिपटकर रमण करने लगी ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ तीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २३० ॥ ४३५० ॥ अफजूं ॥

दो सौ इकतीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ बावनी देश में मालव नामक एक ग्रामीण रहता था, जिसकी स्त्री मैनकला अपार रूप वाली थी ॥ १ ॥ उसका शरीर बड़ा था और अंग पुष्ट थे । उसके समान सुडौल और पुष्ट स्त्री संसार में अन्य कोई नहीं थी ॥ २ ॥ ॥ अडिल्ल ॥ उनके गाँव में एक फ़ौजदार आया जो प्यास और गर्मी से अत्यन्त व्याकुल था उस ग्रामीण ने चाय-पानी उसे दिया

मुख रखित कहाऊँ करत हैं। हो देखहु लोग सभाइ पिया मुर मरत हैं ॥ ९ ॥ ॥ चौपई ॥ ज्यों उह चहत कि हाइ पुकारै। मोरि आनि कोऊ प्रान उबारै। त्यों तिय मूँदि मूँदि मुख लेई। निकस न स्वासन बाहर देई ॥ १० ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ स्वासाकुल ह्वै भूमि मूरछन ह्वै गिर्‌यो। ग्राम बासियन आनि धर्‌यो आँखिन हिर्‌यो। जियत कछू तिय जानि गई लपटाइकै। हो मलि दल चूलन सो पिय दयौ खपाइकै ॥ ११ ॥ अरध दुपहरी जिन कर पियहि सँघारियो। ग्राम बासियन ठाढे चरित निहारियो। मूँदि मूँदि मुख नाक हहा करि कै रही। हो बात रोग पति मरे न बैद मिल्यो दई ॥ १२ ॥ (मू०ग्रं०११०२) ॥ चौपई ॥ सभहिन देखत पति को मार्‌यो। ग्राम बासियन कछु न बिचार्‌यो। पति के ब्योग सदन तजि गई। ताके रहत जाइ ग्रहि भई ॥१३॥१॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ इकत्तीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २३१ ॥ ४३६३ ॥ अफजूं ॥

वे अपना मुँह बन्द किये रखे हैं। लोगो ! देखो मेरा पति मर रहा है ॥ ९ ॥ ॥ चौपाई ॥ जैसे-जैसे वह हाय-हाय पुकारता था कि कोई आकर मेरे प्राण बचाए वैसे-वैसे वह उसका मुँह बंद कर रही थी और उसकी साँसों को बाहर नहीं निकलने दे रही थी ॥ १० ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ स्वासाकुल हो वह मूर्च्छित हो भूमि पर गिर पड़ा जिसे ग्रामवासियों ने भी अपनी आँखों से आ देखा। स्त्री उसे कुछ जीवित मानकर उससे आ लिपटी और उसे अपने नितम्बों से दबाकर पूरी तरह मार डाला ॥ ११ ॥ आधी दुपहर में उसने प्रिय को मार डाला और ग्रामवासियों ने भी इस चरित्र को देखा। वह उसका नाक-मुँह मूँदकर हाय-हाय करने लगी कि वायुरोग से मेरा पति मर गया है और मुझे कोई वैद्य नहीं मिल पाया ॥ १२ ॥ ॥ चौपाई ॥ सबके देखते-देखते पति को मार डाला और ग्रामवासियों को तनिक भी पता न लग पाया। अब पति के वियोग में वह घर छोड़कर चली गई और उस (फ़ौजदार) के घर मे रहने लगी ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ इकतीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति २३१ ४३६३ अफसू

अथ दोइ सौ बत्तीस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ इक राजा मुलतान को बिप्रछत्र तिह नाम। बिरध देह ता को रहै जानत सिगरो ग्राम ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ ताके धाम पुत्र नहि भयो। राजा अधिक बिरध ह्वै गयो। एक नारि तब और बयाही। अधिक रूप जाके तन आही ॥ २ ॥ स्री बड ड्याछमती जग कहै। जिह लखि मदन थकित ह्वै रहै। सो रानी तरुनी जब भई। मदन कुमार निरखि कर गई ॥ ३ ॥ ता दिन ते हरि अरि बस भई। ग्रहि की भूलि सकल सुधि गई। पठै सहचरी ताँहि बुलायो। कामभोग रुचि मानि कमायो ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तरुन पुरख कौ तरुनि जदिन त्रिय पावई। तनिक न छोर्‌यो चहत गरे लपटावई। निरखि मगन ह्वै रहत सजन के रूप मै। हो जनु धनु चल्यो हराइ जुआरी जूप मै ॥ ५ ॥ ब्रिद्धछत्र तब लगं पहूच्यो आनि करि। रानी लयो दुराइ मित्र हित मानि करि। तरे खाट के बाँधि ताहि द्रिड़ राखियो। हो टरि आगे निजु पति को इह बिधि

दो सौ बत्तीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ मुलतान का वृहद्‌क्षत्र नामक एक राजा था। उसका शरीर वृद्ध हो गया था इसे सारा गाँव जानता था ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजा अत्यधिक वृद्ध हो गया पर उसके घर कोई पुत्र पैदा नहीं हुआ। तब उसने एक अन्य स्त्री से विवाह किया। जिसके तन का सौंदर्य अत्यधिक था ॥ २ ॥ ससार उसे श्रीवृहदाक्षमती के नाम से जानता था और कामदेव भी उसे देखकर लजाता था। जब वह रानी और जवान हुई तो उसे मदनकुमार ने देख लिया ॥ ३ ॥ उसी दिन से वह कामासक्त हो गई और उसे घर की सारी होश भूल गई। उसे उसने सखी भेजकर बुलाया और रुचिपूर्वक काम-क्रीड़ा की ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तरुण स्त्री को जिस दिन तरुण पुरुष मिल जाता है तो वह उसे तनिक भी नहीं छोड़ पाती और उसके गले लिपट जाती है। वह सजन के रूप में ऐसी मग्न हो जाती है मानो जुआड़ी जुआखाने मे धन हारकर चिंतामग्न चला जा रहा हो ॥ ५ ॥ तब तक राजा वृहद्‌क्षत्र आ पहुँचा रानी ने अपने मित्र को छुपा लिया उसे पलंग के नीचे बाँध स्वय आगे बढकर पति से यह कहा ६ चौपाई राजन् लगता

भाखियो ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ अनियत राव बिरध तुम भए। खिलत अखेट हुते रहि गए। तुम कौ आन जरा गहि लीनो। ताँते तुम सभ कछु तजि दीनो ॥ ७ ॥ सुनि त्रिय मैं न बिरध ह्वै गयो। जरा न आनि बियापक भयो। कहैं तु अबही जाउँ शिकारा। मारौ रोड़ रीछ झंखारा ॥ ८ ॥ यौ कहि बचन अखेटक गयो। रानी टार जार कौ दयो। निसु भै खेलि अखेटक आयो। भेद अभेद जड़ कछू न पायो ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ बत्तीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २३२ ॥ ४३७२ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ तेतीस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ शहिर बिचच्छनपुर बिखै सिंघ बिचच्छन राइ। मती बिचच्छन भारजा जाँहि बिचच्छन काइ ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ सरवर (मू०ग्रं०११४३) कूप जहाँ फुलवारी। बाइ बिलास भली हितकारी। सरिता निकटि नरबदा बहै। लखि छबि इंद्र थकित ह्वै रहै ॥ २ ॥ ॥ सवैया ॥ बाल हुती

है, तुम वृद्ध हो गए हो जिससे अब तुम शिकार खेलने से भी रह गए हो। अब तुम्हें वृद्धावस्था ने ग्रस लिया है, इसी से तुमने सब कुछ त्याग दिया है ॥ ७ ॥ हे स्त्री ! सुनो, न तो मैं बूढ़ा हुआ हूँ और न मुझे बुढ़ापे ने दबा रखा है। यदि तुम कहो तो मैं अभी शिकार को जाता हूँ और रीछ आदि मारता हूँ ॥ ८ ॥ यह कहकर वह आखेट खेलने गया और रानी ने अपने मित्र को भेज दिया। राजा रात भर शिकार खेलकर वापस पलटा और इस प्रकार वह जड़ मूर्ख कोई भी रहस्य न जान पाया ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ बत्तीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २३२ ॥ ४३७२ ॥ अफजूं ॥

दो सौ तेंतीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ विलक्षणपुर शहर में विलक्षणसिंह नामक एक राजा था। उसकी पत्नी विलक्षणमती थी जिसकी काया विलक्षण थी ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ जहाँ सरोवर, कुआँ और उद्यान था, वहाँ सुन्दर विलासपूर्ण हवा चल रही थी। पास में नर्मदा नदी बहती थी। इन्द्र भी छवि देखकर थक-थक जाता था २ सवैया वृषभानुकला एक सुन्दरी थी जिसका

ब्रिखभान कला इक रूप लसै जिह को जग भारी। खेर अखेटक आवत हूँ इन राइ कहूँ वहु नारि निहारी। ऐंचि बर्यो गहिकै बहियाँ तिन बात सुनी इन राजदुलारी। कोप भरी बिनु आगि जरी मुख न्याइ रही न उचावत नारी ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ तासौ ब्याहु न्रिपति जब कियो। भाँति भाँति ता को रसु लीयो। रैनि दिवस त्रिय धाम बिहारै। और रानियन कौ न निहारै ॥४॥ ॥दोहरा॥ तब रानी बिचछनमती कोप भरी मन माहि। पीत बरन तन को भयो पान चबावत नाहि ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ राजा सहित आजु हनि डरिहो। नाथ जानि त्रिय नैक न टरिहो। इन दुहूँ मारि पूत न्रिप कैहो। पानी पान तबै मुख दैहो ॥६॥ ॥ अड़िल्ल ॥ दाबि खाट तर गई गुडान बनाइकै। निजु नाथहि भोजन मै मकरी खवाइकै। रीझि रीझि वह मर्यो तबै त्रिय यौं कियो। हो जारि बारि करि नाथ सवत कह गहि लियो ॥ ७ ॥ इन राजा के गुडियन कीया बनाइकै। ताते मुर पति मर्यो अधिक दुख पाइकै। या कुतीया की अबही क्रिआ उघारियौ।

संसार में स्वरूप अत्यन्त छविमान था। शिकार खेलने आए इस राजा ने उस स्त्री को देखा। उसने बाँह पकड़कर इसको अंग से लगा लिया और वह राजकुमारी उसकी बातों को सुनती रही। वह क्रुद्ध हो बिना आग के ही जल उठी और बिना कुछ बोले मुँह नीचे किये खड़ी रही ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजा ने जब उससे विवाह किया तो विभिन्न प्रकार से रसास्वादन किया। वह रात-दिन उसी स्त्री के घर में विहार करता था तथा अन्य रानियों की तरफ़ देखता भी नहीं था ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ तब रानी विलक्षणमती मन में क्रुद्ध हो उठी। उसका रंग पीला पड़ गया और उसने पान चबाना भी छोड़ दिया ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ आज राजा-समेत इसे मार डालूंगी और पति मानकर तनिक भी नहीं डरूंगी। इन दोनों को मारकर पुत्र को राजा बना दूंगी और तभी पानी और पान मुँह से लगाऊँगी ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जब उसने गड़हा पलंग के नीचे खोदकर राजा का बुत दबा दिया और राजा को भोजन में मकड़ी खिला दी (और मार डाला)। जब वह तड़फ़-तड़फ़कर मरा तो रानी ने सौतन को पकड़ लिया ॥ ७ ॥ इसने राजा का गुड्डा बनाकर (तन्त्रविद्या से राजा को मारने के लिए) दबाया है इसी से मेरा पति अत्यधिक दुख पाकर मरा है। मैं इस कुतिया की करतूत अभी सबके सामने रखूंगी और इसका सिर मूँडकर

हो प्रथम मूँडिकै मूँड बहुरि इह मारिहौ ॥ ८ ॥ लए प्रजा सभ संग तही आवत भई । जहाँ खाट तट गाडि दोऊ गुडियन गई । सभन लहित खन भूमि लए ते काढिकै । हो मूँडि सवति को मूँड नाक पुनि बाढिकै ॥ ९ ॥ मूँडि मूँडि कटि नाक बहुरि तिह मारियो । उहि बिधि पति हनि इह छल याँकह टारियो । चंचलान के भेद नाहि किनहूँ लह्यो । हो शास्त्र सिम्रितऱु बेद पुरान न मै कह्यो ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति श्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ तेतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २३३ ॥ ४०१० ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ चौतीस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ शहिर टंकटोडा बिखै त्रिपतिकला इक बाल । कटि जाकी म्रिगराज सी म्रिग सै नैन बिसाल ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ त्रिपबर सैन तहाँ को त्रिपबर । अधिक दरबु सुनियत जाके घर । भाँति (मू०पं०११४८) भाँति के भोग कमावै । निरखि प्रभा देवेस लजावै ॥ २ ॥ ऐंडोराइ भाट को सुत तह । ताकै रूप न सम कोऊ महि मह । अधिक

इसे मारूँगी ॥ ८ ॥ वह सब प्रजा को साथ ले वहाँ आ गई जहाँ पलंग के नीचे गड्ढे में बुत दबाया हुआ था । सबने भूमि को खोदकर उसे निकाला और उस सौतन का सिर मूँड़कर उसकी नाक काट लिया ॥ ९ ॥ उसकी नाक काट-काटकर उसे मारा । उसने विधि से पति को मारकर इसको भी दूर कर दिया । शास्त्रों, स्मृतियों, वेद, पुराणों में यह कहा गया है कि स्त्रियों के रहस्य को कोई नहीं समझ सकता है ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ तेंतीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २३३ ॥ ४०१० ॥ अफजूं ॥

दो सौ चौंतीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ शहर टंकटोड़ा में नृपतिकला नामक एक बालिका थी, जिसकी कमर शेर के समान पतली और नयन मृग के समान विशाल थे ॥१॥ ॥ चौपाई ॥ नृपवरसेन वहाँ का श्रेष्ठ राजा था, जिसके पास अत्यन्त द्रव्य था वह भाँति-भाँति के आमोद प्रमोद किया करता था और उसकी प्रभा को देखकर इन्द्र भी लज्जित होता था २ ऐंडोराय वहाँ एक भाट का

तरुन कौ रूप सुहावै । निरखि काँइ कंचन सिर न्यावै ॥ ३ ॥ जब त्रिय तिन तरुनी नर लहा । मन क्रम बच मन मै यौ कहा । पठै सहचरी याहि बुलाऊँ । कामभोग तिह साथ कमाऊँ ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ परम पाट की झूलनि एक सवारिकै । ता पर झूलति भई बिचार बिचारिकै । याही चढ़ि पीढ़ी पर पियहिं बुलाइहौ । हो अरध रात्रि गे घर कौ ताहि बहाइहौ ॥ ५ ॥ या पीढ़ी कह देहौ तरे बहाइकै । रेशम की द्रिड़ डोरै चार लगाइकै । सो जाको न्रिपहूँ कबहूँ लहि जाइहै । हो जानि पींघ चुपि रहिहै कहा रिसाइहै ॥ ६ ॥ अरध रात्रि पीढ़ी ग्रहि तरे बहाइकै । डोरहि खैंचि प्रीतमहि लेत चढ़ाइकै । रानी संग तिह आनि मिलावा देत करि । हो जानि केल की समैं सखी सभ जाँहि टरि ॥ ७ ॥ तवन भाट कौ नित प्रति लेत बुलाइकै । एक दिवस ग्रहि रहन न देहि बहाइकै । ऐंचि ऐंचि तिह लेत न छोरत एक छिन । हो आनि त्रिया के धाम सोयो न्रिप एक दिन ॥ ८ ॥ राव न लहियो चेरियन भाट बुलाइयो । बिन रानी के कहे सु जार

पुत्र था जिसके समान रूप-सौंदर्य में अन्य कोई नहीं था । उस तरुण का रूप अत्यधिक शोभायमान था और सोना भी उसके सामने सिर झुकाता था ॥ ३ ॥ जब उस स्त्री ने उस तरुण को देखा तो मन-वचन-कर्म से निर्णय किया कि दासी भेजकर इसको बुलाती हूँ और इसके साथ केलिक्रीड़ा करती हूँ ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक सुन्दर कपड़े का झूला उसने सँवारा और उस पर मस्ती से झूलने लगी । इसी झूले पर प्रिय को बुलाऊँगी और आधी रात गए उसे वापस घर भेजूँगी ॥ ५ ॥ इस पीढ़ा को मैं रेशम की मज़बूत रस्सी के साथ नीचे बाँध दूँगी । यदि कभी राजा देख भी लेगा तो झूला समझकर चुप रहेगा और क्रुद्ध नहीं होगा ॥ ६ ॥ अब वह आधी रात को वह पीढ़ा घर के नीचे डालती और डोरी से प्रिय को ऊपर खींच लेती थी । रानी के साथ उसका मिलन हो जाता और केलिक्रीड़ा का समय समझकर सभी सखियाँ भी वहाँ से टल जाती थीं ॥ ७ ॥ उस भाट को वह नित्य बुला लेती थी और उसे एक भी दिन घर में नहीं रहने देती थी । उसे खींच-खींचकर रखती थी और एक भी क्षण के लिए नहीं छोड़ती थी । एक दिन राजा उस स्त्री के घर में आ सोया ॥ ८ ॥ राजा को नहीं देखा और दासियों ने भाट को बुला लिया और रानी के बिना कहे ही यार को मँगवा दिया राजा कोई चोर

मँगाइयो। निरखि राइ तिह कहि तसकर जागत भयो। हो याहि न देहौ जानि काढि असि कर लयो ॥ ९ ॥ त्रिप जागत सभ जगे पकरि ताके लयो। आनि राव के तीर बाँधि ठाढो कयो। सुनत शोर त्रिय उठी नीद ते जागिकै। हो राजा ते डरपाइ मित्र हित त्यागकै ॥ १० ॥ ॥ रानी बाच ॥ ॥ दोहरा ॥ सुनु राजा आयो हुतो तोहि हनन इह चोर। अब ही याको मारियै होन न दीजै भोर ॥ ११ ॥ ॥ चौपई ॥ त्रिय को बचन चोर सुन पायो। त्रिपति भए कहि साच सुनायो। यह रानी मोरे संग रहई। अब मोको तसकर करि कहई ॥ १२ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जार चोर को बचन न साचु पछानियै। प्रान लोभ ते बकत सभन पर जानियै। इनके कहे न कोप किसू पर कीजियै। हो राव बचन यह साचु जानि जिय लीजियै ॥ १३ ॥ साचु साचु सुनि राव बचन भाखत भयो। प्रान लोभ ते नाम त्रिया को इन लयो। ता ते या तसकर कह अबही (मू०पं०११४५) मारियै। हो इही भोहरा भीतर गरिकै डारियै ॥ १४ ॥ प्रथमहि त्रिया सु तासौ भोग कमाइयो। भूल अबै वहु धाम त्रिपति के

समझकर जग गया और यह सोचकर कि इसे जाने नहीं दूंगा, उसने कृपाण निकाल ली ॥ ९ ॥ राजा के जगते ही सब जग गए और उसे पकड़ लिया और उसे बाँधकर राजा के पास ला खड़ा किया। शोर सुनकर वह स्त्री भी जग गई और मित्र का मोह त्यागकर राजा से डर गई ॥ १० ॥ ॥ रानी उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ हे राजन ! सुनो, तुम्हें मारने के लिए ही यह चोर आया है। इसे अभी मारो और सुबह मत होने दो ॥ ११ ॥ ॥ चौपाई ॥ स्त्री की बातों को चोर ने सुना तो उसने राजा से सच कह सुनाया। यह रानी मेरे साथ रमण किया करती थी और अब मुझे चोर कह रहा है ॥ १२ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ इस चोर के कथनों को सत्य मत मानो यह प्राणों के लोभ से इस तरह बक रहा है। इसके कहने से किसी पर क्रुद्ध मत होइए और हे राजन् ! मेरी बातों को सत्य करके मान लीजिए ॥ १३ ॥ "ठीक है, ठीक है" राजा कहने लगा। इसने प्राणों के मोह से ही इस स्त्री का नाम लिया है। इसलिए इस चोर को तुरन्त मार दिया जाय और इसी तहखाने में डाल दिया जाय १४ पहले स्त्री ने उससे भोग किया फिर

आइयो। जिय लज्जा के त्रास चोर तिह भाखियो। हो प्रीत पछानी चित न मारि तिह राखियो ॥ १५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ चौतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २३४ ॥ ४३६७ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ पैंतीस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ करमसिंघ राजा हुतो कसटवार कै देस। अछलमती ताकी तरुनि सुंदरि ज़ाके केस ॥ १ ॥ बज्रकेतु इक शाहु को पूत हुतो सु कुमार। नवौ ब्याकरन शास्त्र खट जिन द्रिड़ पड़े सुधार ॥ २ ॥ एक दिवस सुत तवन को निरख्यो अछलकुमारि। अब ही रति यासौ करौ यौ कहि भई सुमारु ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक सखी तह चतुरि पहूची आइकै। अछलमती को लयो गरे सों लाइकै। सींचि सींचि कै बारि जगावत जब भई। हो सकल चित्त की बात कुअरि की लहि गई ॥ ४ ॥ कुअर चित्त की बात सकल मुहि भाखियै। पीर पिया की गूढ़ न मन मै राखियै। जो तुमरे जिय रुचै सु मोहि कहीजियै। हो बिरह बिकल ह्वै प्रान हितू जिनि

जब वह भूलकर राजा के महल में आ गया तो लज्जा के भय से उसे चोर बना दिया। प्रेम को नहीं पहचाना और उसे मार डाला ॥ १५ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ चौंतीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २३४ ॥ ४३६७ ॥ अफजूं ॥

दो सौ पैंतीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ कष्टवार देश में करमसिंह नामक एक राजा था, जिसकी पत्नी अछलमती थी और उसके सुन्दर केश थे ॥ १ ॥ वज्रकेतु एक शाह का सुकुमार पुत्र था जिसने नौ व्याकरण, छः शास्त्र सुधारकर दृढ़तापूर्वक पढे थे ॥ २ ॥ एक दिन उसने अछलमती को देखा और निर्णय किया कि इससे अभी रतिक्रीड़ा की जाय ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक चतुर सखी वहाँ पहुँची और उसने अछलमती को गले से लगा लिया। जब अछलमती ने सखी को बार-बार कहा तो उसने कुँवरि के मन की बात समझ ली ॥ ४ ॥ उसने कहा कि कुंवर की बात जो तुम्हारे दिल में है मुझ पूरी तरह कहो और प्रिय की पीड़ा को मन में छपा कर मत रखो जो तुम्हारे मन को अच्छा

दीजियै ॥ ५ ॥ कहा कहो सखि तोहि कहन नहि आवई। हेरि मीत को रूप हिया ललचावई। वै वाको अबही मुहि आनि मिलाइयै। हो नातर मोर जिवन की आस चुकाइयै ॥ ६ ॥ जो कछु कहो सखि मोहि वहै कारज करो। प्रान लेत तव हेत न हिय मै मैं डरो। जो तुमरे चित चुभै सु हमै बताइयै। हो रोइ रोइ करि नीर न ब्रिथा गवाइयै ॥ ७ ॥ सुनहु मिलनी आजु जुगनि मैं होइ हौ। हेत सजन के प्रान आपने खोइ हौ। पिय दरशन की भीखि माँगि करि ल्याइहौ। हो निरखि लाल को रूप सखी बलि जाइहौ ॥ ८ ॥ बस्त्र भगौहे आजु सुअंगन मैं करौ। आँखिन की चिपीया अपने कर मै धरौ। बिरह मुद्रिका कानन दुहूँ सुहाइहो। हो पिय दरशन की भिच्छ्या माँग अघाइहो ॥ ९ ॥ सुनत सहचरी बचन चकित मन मै भई। अधिक कुअरि को नेह जानि करिकै गई। चलत तहाँ ते भई तवन पहि आइकै। हो कह्यो कुअरि सो ताहि कह्यो समझाइकै ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ ताहि भेद समझाइकै लै गई तहाँ (मू०ग्रं०११४६) लवाइ। जहाँ कुअरि ठाढी हुती भूखन बस्त्र बनाइ ॥ ११ ॥

लगे वह मुझसे कहो। हे मेरी हितैषिणी ! व्याकुल होकर अपने प्राण मत दो ॥ ५ ॥ हे सखी ! तुमसे क्या कहूँ कहा नहीं जाता। प्रिय का रूप देख कर मन ललचा गया है। उसे अब मुझे लाकर मिला दो अन्यथा मेरे जीवित रहने की आशा छोड़ दो ॥ ६ ॥ हे सखी ! जो तुम कहोगी मैं वही करूँगी और तुम्हारे हित में अपने प्राण लेने से भी संकोच नहीं करूँगी। जो तुम्हारे मन में खटक रहा है, वह मुझे बताओ और रो-रोकर अपना नयन-जल व्यर्थ मत गँवाओ ॥ ७ ॥ हे सखी ! सुनो, आज मैं तो जोगन बन जाऊँगी और अपने सजन के लिए प्राण गँवा दूँगी। प्रिय-दर्शन की भीख माँगकर ले आओ। हे सखी ! मैं तो प्रिय का रूप देखकर बलिहार जाऊँगी ॥ ८ ॥ मैं आज भगवे वस्त्र अंगों में धारण कर लूँगी और आँखों को खप्पर बनाकर रख लूँगी। विरह के कुंडल दोनों कानों में शोभायमान करूँगी और प्रिय दर्शन की भिक्षा माँगकर प्रसन्न हो रहूँगी ॥ ९ ॥ सखी वचन सुनकर मन में चकित रह गई और कुँवरि को अत्यधिक स्नेह देकर वहाँ से चली गई। वहाँ से चलकर वह उसके पास पहुँची और कुँवर से समझाकर कहने लगी १० दोहा उसे सब भेद समझाकर वहाँ लिवा ले गई जहाँ

॥ अड़िल्ल ॥ छैलकुअर कौ जबै कुअरि पावत भई। जनुक नवौ निधि महाँ निधन के घर गई। निरख तरुनि को रही तरुनि उरझाइकै। हो भाँति भाँति तिह साथ रमी लपटाइकै ॥१२॥ एक कुअरि तब जाइ न्रिपति सौ यौ कही। लपटि तिहारी नारि एक नर सो रही। करमसिंघ करि कोप तहाँ चलि आइयो। हो अछलमती यह भेद सकल सुनि पाइयो ॥ १३ ॥ पकरि न्रिपति की पगिया दई चलाइकै। कह्यो सखी बवरी भई गई वहु धाइकै। लरिकन की सी खेल करत तिह ठाँ भई। हो दुतिय सखी लै पाग चलाइ बहुरो दई ॥ १४ ॥ जब वहि दिसि न्रिप जाइ तौ वहि दिसि डारही। लरिकन को गिंदुआ जिमि पाग उछारही। धूरि आपने सीस नाथ के डारिकै। हो लहि हाइल तिन मित्रहि दयो निकारिकै ॥ १५ ॥ जब लगि पगिया लेन राइ चलि आइयो। तब लगि रानी मित्र सदन पहुचाइयो। मतवारी उन भाखि अधिक मारत भई। न्रिप की चिंता टारि सकल चित की दई ॥१६॥ तब राजै गहिकै त्रिय को कर राखियो। आपु बचन ताको ऐसी बिधि भाखियो। मतवारे मूरख सिसि

वह कुँवरि आभूषण-वस्त्र पहनकर खड़ी थी ॥ ११ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ छैल-कुवर को जब उस कुँवरि ने प्राप्त किया तो उसे ऐसा लगा मानों नवों निधियाँ उसके घर आ गई हों। उस तरुण को देखकर तरुणी उसी में उलझकर रह गई और लिपट करके उससे रमण करने लगी ॥ १२ ॥ एक तरुणी ने जब राजा से जाकर यह कह दिया कि तुम्हारी स्त्री एक व्यक्ति से लिपटी हुई है तो करमसिंह क्रुद्ध हो उस ओर आ गया। अछलमती ने इस समस्त भेद को सुन लिया ॥१३॥ उसने राजा की पगड़ी पकड़कर फेंक मारी। सखियाँ कहने लगीं कि यह बावली हो गई है। वह भी दौड़कर उस ओर चली गई। बच्चों की तरह वे सब खेल खेलने लगीं और दूसरी सखी ने पगड़ी पकड़कर फिर फेंक मारी ॥ १४ ॥ राजा जिस दिशा में जाता तो वह उस दिशा में डाल देती और लड़कों के गेंद की तरह पगड़ी को उछालने लगी। अपने स्वामी के सिर में धूल डालकर उस स्त्री ने अपने मित्र को निकाल दिया ॥ १५ ॥ जब तक राजा पगड़ी ले तब तक रानी ने मित्र को घर पहुँचा दिया। वह मतवाली-सी होकर उसे मारने लगी और यह सब देख राजा की समस्त चिंता जाती रही ॥१६॥ तब राजा ने स्त्री को अपने हाथ से पकड़ा और कहा कि मूर्ख शिशु को मारना नहीं चाहिए। जो होना था सो हुआ,

को नहि मारियै। हो होनहार मुहि भी इन कछु न उचारियै ॥ १७ ॥ ॥ दोहरा ॥ न्रिप की पाग उतारिकै दीनी प्रथम चलाइ। जार उबार्‌यो जड़ छल्यो चेरी लई बचाइ ॥ १८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ पैंतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २३५ ॥ ४४१५ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ छतीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ तिब्बत को इक राइ सुलच्छन। कबित काबि के बिखे बिचच्छन। स्री न्रिपराज कला तिह नारी। जानुक स्री बिशन की प्यारी ॥ १ ॥ ॥ दोहरा ॥ मती बिचच्छन पात्र तह तवन शहिर के माँहि। रूप बिखै ता सो तरुनि तीनि लोक मै नाहि ॥ २ ॥ ॥ चौपई ॥ मुजरा कौ बेस्वा जब आवै। हेरि रूप न्रिप को ललचावै। मन मै अधिक मसत ह्वै झूलै। निजु तन की ताकौ सुधि भूलै ॥ ३ ॥ चित मै चित रैनि (मू०ग्रं०११५७) दिन करै। न्रिप की आस सदा मन धरै। किह बिधि मो संग भोग कमावै। सो दिन मोहि

अब इसे कुछ मत कहना ॥ १७ ॥ ॥ दोहा ॥ पहले तो राजा की पगड़ी उतारी, फिर अपने यार को बचाया तथा पुनः दासी को भी बचा लिया ॥ १८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ पैंतीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २३५ ॥ ४४१५ ॥ अफजू ॥

दो सौ छत्तीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ तिब्बत का एक राजा सुलक्षण था, जो कि कवित्त एव काव्य में विलक्षण था। नृपराजकला उसकी स्त्री थी जो मानो साक्षात् लक्ष्मी थी ॥ १ ॥ ॥ दोहा ॥ विलक्षणमती एक वेश्या उस शहर में थी, जिसके समान रूपवती तरुणी तीनों लोकों में कोई नहीं थी ॥ २ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह वेश्या जब मुजरा करने आती थी तो राजा का रूप देखकर ललचा उठती थी। वह अत्यधिक मस्त हो झूमती थी और उसे अपने तन की सुधि भूल जाती थी ॥ ३ ॥ चित्त में रात-दिन वह सोचती थी और राजा की आशा मन मे लगाए रहती थी कैसे भी यह मेरे साथ रतिक्रीडा करे

कहो कब आवै ॥ ४ ॥ ॥ दोहरा ॥ राव न ता को हेरई त्रिय मन मै ललचाइ । जतन का करौ जो मुझै न्रिप मन भजै बनाइ ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ जब राजा दीवान लगावै । तवन समै तरुनी सुनि पावै । हाथ जोरि ठाढी ह्वै रहई । प्रेम आशकी ज्यों निरबहई ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ न्रिप जान्यो आशिक भई मो पर तरुनि बनाइ । कवन प्रभा याकौ लगी चित्त बिचार्यो राइ ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ कहा भयो आशिक त्रिय भई । मुहि लखि बिरह बिकल ह्वै गई । मै याकौ कबहूँ न बिहारो । लोकन औ परलोक बिचारो ॥ ८ ॥ अधिक जतन तरुनी करि हारी । राजा सो क्योंहू न बिहारी । और जतन तबही इक कियो । सात गुलन देही पर दियो ॥९॥ सात गुलन दे मास जलायो । अधिक कुगंध न्रिपहि जब आयो । हाइ हाइ करि गहि तिह लियो । जो भाख्यो सोई तिन कियो ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ जु तुम कहौ सो मैं करों निजु तन गुलन न खाहु । भाँति भाँति के भामिनी मोसौ भोग कमाहु ॥ ११ ॥ ॥ चौपई ॥ गुल खाए राजा ढुरि आयो । भाँति भाँति तिह त्रियहि बजायो । लपटि लपटि तासो रति

पता नहीं ऐसा दिन कब आएगा ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा उसे देखता भी नहीं था और स्त्री मन में ललचाती थी कि क्या करूँ जिससे यह राजा मेरे साथ रमण करे ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब राजा दरबार लगाता तो तरुणी को पता लग जाता । वह हाथ जोड़कर खड़ी रहती और प्रेम का निर्वाह करती ॥६॥ ॥ दोहा ॥ राजा भी जान गया कि यह तरुणी मुझ पर आशिक़ हो गई है । राजा ने सोचा, भला इसे क्या अच्छा लगा है ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ क्या हुआ जो यह स्त्री मुझ पर आशिक़ हो गई है और मुझे देखकर विरहाकुल हो गई है । परन्तु मैं लोक-परलोक का विचार कर इससे कभी रतिक्रीड़ा नहीं करूँगा ॥ ८ ॥ तरुणी भी अत्यधिक यत्न करके हार गई पर राजा के साथ कभी भी रतिक्रीड़ा न कर पाई । उसने एक यत्न और किया और देही पर लोहे से सात बार दाग दिया ॥९॥ सात बार उसने जब अपना मांस जलाया तो राजा को भी दुर्गंध आयी । उसने हाय-हाय कहकर उसे पकड़ लिया और उसने जो कहा वही किया ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ तुम अपने तन को मत दागो, तुम जो कहोगी मैं वही करूँगा । हे स्त्री ! तुम मुझसे भाँति-भाँति से रमण करो और भोग कमाओ ॥ ११ ॥ ॥ चौपाई ॥ दाग लगने से राजा पिघल गया और उसने विभिन्न प्रकार से उस स्त्री को काम-तृप्त किया

कीनी । बेस्वा की सुधि बुधि हरि लीनी ॥ १२ ॥ बेस्वा हूँ राजा बसि कीनो । भाँति भाँति के आसन दीनो । राइ सकल रानियै बिसारी । ताही को राख्यो करि नारी ॥ १३ ॥ ॥ दोहरा ॥ सभ रनियन को राइ के चित तें दयो बिसारि । गुल खाए राजा बर्यो ऐसौ चरित सुधारि ॥ १४ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ छतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २३६ ॥ ४४३६ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ सैंतीस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ प्रगट कमाऊँ के बिखै राजबहादुर राइ । सूरन की सेवा करै शत्रन देत खपाइ ॥१॥ ॥ अड़िल्ल ॥ बाज बहादुर जू यौ ह्रिदै संभारियो । बोलि बडे सुभटन को प्रगट उचारियो । करियै कवन उपाइ नगर स्री मारियै । हो ताते सभही बैठि बिचार बिचारियै ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ प्रात तहाँ नाचत हुती भोगमती छबि मान । प्रथम राइ सौं रति करी (मू०ग्रं०११४८) बहुरि कही यौ आनि ॥३॥ ॥अड़िल्ल॥ जो

लिपट-लिपटकर उससे रतिक्रिया की और वेश्या का होश भुला दिया ॥ १२ ॥ वेश्या ने भी राजा को वश में कर लिया और भाँति-भाँति के आसन लगाए। राजा ने भी सब स्त्रियों को विस्मृत कर दिया और उसे ही पत्नी बनाकर रखा ॥ १३ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा ने सब रानियों को मन से भुला दिया और इस प्रकार उस स्त्री ने दाग खाकर प्रपंच से राजा का वरण कर लिया ॥ १४ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ छत्तीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २३६ ॥ ४४३६ ॥ अफजू ॥

दो सौ सैंतीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ कुमायूँ में राजबहादुर राजा था जो शूरवीरों का सेवक और शत्रुओं का संहारक था ॥१॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजबहादुर ने मन में निर्णय लिया और प्रकट में बड़े-बड़े वीरों को कहा कि कोई उपाय किया जाय जिससे श्रीनगर को जीता जाय। सभी बैठकर विचार करें ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ वहाँ भोगमती नामक एक वेश्या नाचा करती थी। उसने पहले तो राजा से विहार किया और आकर उससे कहा ३ अड़िल्ल यदि तुम मुझसे

तुम कहो मुहि जाइ ताहि बिरमाइहों। सिरी नगर ते ऐंचि दीन मो ल्याइहों। जोरि कठिन तुम कटक तहाँ चढ़ि आइयो। हो लूटि कूटि कै शहिर सकल लै जाइयो॥ ४॥ यौ कहि बेस्वा बचन न्रिपहि तह को गई। सिरी नगर के शहिर बिखै आवत भई। हाव भाव बहु भाँति दिखाए आनिकै। हो भज्यो मेदनी शाह अधिक रुचि मानिकै॥ ५॥ न्रिपति मेदनी शाह आपने बसि कियो। ता को लै करि साथ दौन को मगु लियो। बाज बहादुर जोरि कटक आवत भयो। हो लूटि कूटि करि नगर सिरी को लै गयो॥ ६॥ मत्त पर्‍यो न्रिप रह्यो न कछु जानत भयो। सिरी नगर कौ लूटि कूटि कै कौ गयो। उतरि गयो मद जब कछु सुधि आवत भई। हो पीस दाँत चुप रह्यो बात कर ते गई॥ ७॥ ॥ दोहरा॥ इह छल से राजा छल्यो करी मित्र की जीत। देव अदेव न लहि सकति यह इसत्रियन की रीत॥ ८॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ सैंतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ २३७॥ ४४३७॥ अफजूं॥

कहो तो मैं (वहाँ के राजा को) वहाँ जाकर मोहित करूँ और उसे श्रीनगर से खींचकर दून में ले आऊँ। फिर तुम बड़ी सेना लेकर वहाँ चढ़ाई कर दो और सारे शहर को लूट-पाटकर ले आओ॥ ४॥ बेश्या राजा को यह वचन कहकर श्रीनगर में आ गई। उसने वहाँ मेदनी शाह से रुचिपूर्वक रमण किया॥ ५॥ राजा मेदनी शाह को उसने अपने वश में कर लिया और उसे अपने साथ लेकर दून का रास्ता पकड़ लिया। (बाज) राजबहादुर सेना एकत्र करके आ गया और श्रीनगर को लूट ले गया॥ ६॥ राजा इधर मदमस्त पड़ा था और उसे कुछ भी पता नहीं था कि श्रीनगर को कौन लूटकर ले गया है। जब नशा उतरा और कुछ होश आया तो दाँत पीसकर रह गया क्योंकि बात हाथ से निकल चुकी थी॥ ७॥ ॥ दोहा॥ छल से राजा को छला और मित्र को जिता दिया। देव और अदेव भी इन स्त्रियों की चालों को नहीं समझ सकते॥ ८॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ सैंतीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ २३७॥ ॥ ४४३७॥ अफजू॥

अथ दोइ सौ अठत्तीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बीरजकेत राजा इक नागर । सगल जगत के बिखैं उजागर । स्री छटछैलकुअरि ताकी त्रिय । मन बच क्रम बसि करि राख्यो पिय ॥ १ ॥ एक दिवस न्रिप चड्यो अखिट बर । संग लई सहचरी अमित करि । जब बन गहिर बिखैं प्रभ आयो । स्वानन ते बहु म्रिगन गहायो ॥ २ ॥ कहियो कि जिह आगै म्रिग आवै । वहै आपनो तुरै धवावैं । पहुचि सु तन तिह के ब्रिण करही । गिरन परन ते कछू न डरही ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ न्रिप त्रिय आगे म्रिगिक निकसियो आइकै । रानी पाछे परी तुरंग धवाइकै । भजत भजत हरिनो पति बहु कोसन गयो । हो एक न्रिपति सुत लहि ताको धावत भयो ॥ ४ ॥ ताजिहि ताजन मारि पहूँच्या जाइकै । एक बिसिख ही मार्यो म्रिगहि बनाइकै । निरखि तरुनि इह चरित रही उरझाइ करि । हो बिरह बान तन बिधी गिरत भई भूमि पर ॥ ५ ॥ बहुरि सुभट जिमि चेति तरुनि उठ ठाढि भई । घूमत घाइल न्याइ

दो सौ अड़तीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ वीर्यकेतु एक सभ्य राजा था जिसे सारा संसार जानता था। छटछैलकुंवरि उसकी प्रिय थी जिसने मनसा, वाचा, कर्मणा प्रिय को वश में कर रखा था ॥ १ ॥ एक दिन अनेकों दासियों को साथ लेकर वह श्रेष्ठ राजा आखेट के लिए गया। जब राजा गहरे वन में आया तो उसने कुत्तों से मृगों को हँकाया ॥ २ ॥ उसने कहा कि जिसके सामने मृग आए वही अपना घोड़ा दौड़ाए। वही आगे बढ़कर उसे घायल करे और गिरने-पड़ने से तनिक न डरे ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजा की पत्नी के सामने एक मृग आ निकला और रानी ने उसके पीछे घोड़ा दौड़ा लिया। भागता-भागता वह मृग अनेकों कोस निकल गया जहाँ एक राजा का लड़का भी उसे देखकर दौड़ पड़ा ॥ ४ ॥ घोड़े को पीटता-दौड़ाता वह (मृग के पास) पहुँच गया और उसने मृग को एक बाण निशाना साधकर मारा। यह खेल देखकर तरुणी उलझकर रह गई और विरह-बाण से बिधकर भूमि पर गिर पड़ी ॥ ५ ॥ फिर वीर की तरह (शीघ्र) होश में आकर वह खड़ी हो गई और घायल की तरह तड़फती सजन के पास चली आई घोड़ी से उतर

सजन तट चलि (मू०ग्रं०११४६) गई। उतरि हयन ते तह दोऊ रमे बनाइकैं। हो तब लौ तिह ठाँ सिंघ निकसियो आइकै ॥ ६ ॥ निरखि सिंघ कौ रूप तरुनि त्रासित भई। लपटि लला के कंठ भएँ अबला गई। ढीठ कुअर धनु तन्यो न तनिक आसन डिग्यो। हो हन्यो सिंघ तिह ठौर बिसिख बाँको लग्यो ॥ ७ ॥ मारि सिंघ राख्यो तिह भजयो बनाइकैं। आसन चुंबन करे त्रियहि लपटाइकैं। भाँति भाँति तिह रम्यो तरुनि सुख पाइ कर। हो बिनु दाम्मन अबलाहूँ रही बिकाइ करि ॥ ८ ॥ चित चिंता त्रिय कही इसी संग जाइहौ। निजु नाइक कौ दरसु न बहुर दिखाइहौ। ताते कछु चरित्र सो ऐसे कीजियै। हो जाते जसऊँ रहै अपजस न सुनीजियै ॥ ९ ॥ एक सखी प्रति कह्यो भेद समझाइकै। हरिन हेतु त्रिय डूबी कहियहु जाइकै। बैन सुनत सहचरी जाति तिह कौ भई। हो जु कछु कुअरि तिह कह्यो खबरि सो न्रिप दई ॥ १० ॥ आपु कुअरि के साथ गई सुख पाइकै। न्रिप सुनि डूबी नारि रह्यो सिरु न्याइकै। चंचलान को चरित न नर कोऊ लहै। हो शास्त्र सिम्रिति अरु बेद भेद ऐसे कहै ॥११॥ ॥चौपई॥ ताकौ

कर दोनों ने भलीभाँति रमण किया। तभी उधर से शेर आ निकला ॥ ६ ॥ शेर का विकराल रूप देखकर तरुणी भयभीत हो उठी और लिपटकर प्रिय के गले से लग गई। कुँवर ने दृढ़तापूर्वक धनुष ताना और तनिक भी आसन से हिला नहीं। बाँके बाण से शेर को मार डाला ॥ ७ ॥ सिंह को मारकर रुचिपूर्वक कामक्रीड़ा की और स्त्री से लिपटकर आसन-चुंबनादि किए। वह उस तरुणी से विभिन्न प्रकार से रमा और वह स्त्री भी मानों बिना दामों के ही बिक गई हो ॥ ८ ॥ स्त्री ने मन में विचारा कि मैं इसी के साथ जाऊँगी और अपने पति को फिर दिखाई भी नहीं दूँगी। इसीलिए कुछ ऐसा प्रपंच किया जाय जिससे यश भी बना रहे और बदनामी भी न हो ॥९॥ उसने एक सखी को समझाकर कह दिया कि तुम जाकर कह दो कि रानी हिरण के कारण ही डूब मरी है। दासी यह सुनकर वहाँ गई और जो रानी ने कहा था उसे राजा को कह सुनाया ॥ १० ॥ स्वयं तो वह कुँवर के साथ सुखपूर्वक चली गई और राजा रानी के डूब जाने का समाचार सुनकर सिर झुकाकर (दु:खी हो) बैठ गया। स्त्रियों के प्रपंचों को कोई व्यक्ति नहीं जान सकता, यही तथ्य शास्त्र, स्मृतियाँ और वेद भी बतलाते हैं ॥ ११ ॥

चौपाई उसे वह नवयुवक साथ ले गया और भाँति भाँति प्रकार से उससे

तरुन संग लै गयो । भाँति भाँति कै भोगत भयो । इन जड़ कछु न बात लहि लई । जानी डूबि चंचला गई ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ अठतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २३८ ॥ ४४४६ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ उनतालीस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ शहिर सिरौज बिखैं हुतो राजा सुभ्र सरूप । कामकेल मै अति चतुर नरसिंघ रूप अनूप ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ ताके चारि पुत्र सुभ कारी । सूरबीर बाँको हंकारी । रानी और ब्याहि जो आनी । सोऊ गरभवती ह्वै ब्यानी ॥ २ ॥ एक पुत्र ताहू को भयो । रानी बीरमती तिह जयो । ब्याघ्रकेतु तिह नाम भरत भे । दिजन दरिद्र खोइ कै कै भे ॥ ३ ॥ चारौ पुत्र राज अधिकारी । इहै शोक अबला के भारी । जो कोऊ उन चारों को घावै । तब सुत राज पाँचवो पावै ॥ ४ ॥ जेसट पुत्र तन मनुख पठायो । यौ कहियहु तुहि राइ बुलायो । राजकुअर आवत जब भयो । तब ही मारि कोठरी दयो ॥५॥ इही भाँति ते दुतिय बुलायो ।

भोग-विलास करने लगा । इस मूर्ख ने कुछ भी नहीं समझा और मान लिया कि स्त्री डूब गई है ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ अड़तीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २३८ ॥ ४४४६ ॥ अफजू ॥

दो सौ उनतालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ सिरोज शहर में शुभ्रस्वरूप राजा था, जो कामक्रीड़ा मे चतुर और शेर के समान बहादुर था ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसके चार सुन्दर पुत्र थे जो शूरवीर, बाँके एवं स्वाभिमानी थे । वह एक अन्य स्त्री विवाह कर ले आया और वह भी गर्भवती होकर शिशुवती हुई ॥ २ ॥ उस रानी बीरमती के भी एक पुत्र हुआ । उसका नाम व्याघ्रकेतु रखा और ब्राह्मणे के दुख-दरिद्र दूर किये ॥ ३ ॥ उस स्त्री को यही चिन्ता सताती थी कि ये चारों पुत्र ही राज के अधिकारी होंगे । यदि ये चारों पुत्र मार डाले जाएँ तभी मेरे पुत्र को राज्य मिल सकता है ॥ ४ ॥ उसने बड़े लड़के के पास एक व्यक्ति को भेजा और कहलाया कि तुम्हे राजा ने बुलाया है राजकुमा

बही खड़ग ते ता कह घायो । (मू०ग्रं०११५०) इही भाँति तिन दुहूँ बुलैकै । डारत भई भोहरे घै कै ॥६॥ ॥ दोहरा ॥ चारि पुत्र प्रथमैं हने पुनि पति लयो बुलाइ । इह बिधि सौ बिनती करी नैनन नीरु बहाइ ॥ ७ ॥ सुन राजा तव पुत्र दो लरे राज के हेतु । जूझि मरै छित पर परे तब मैं भई अचेतु ॥८॥ असिन भए अति जुध करि जब जूझे दोऊ बीर । बस्त्र फारि द्वै पुत्र तव तबही भए फकीर ॥ ९ ॥ ॥ चौपई ॥ तब न्रिप पूत पूत कहि रोयो । सुधि सभ छाडि भूमि पर सोयो । पाचे कहु टीका करि परियो । भेद अभेद जड़ कछु न बिचरियो ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संवादे दो सौ उनतालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २३९ ॥ ४५४९ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ चालीस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ देस कलिंजर के निकट सैन बिचच्छन राइ । स्री रुचि राजकुअरि तरुन जाकी अति सुभ काइ ॥१॥

जब आ रहा था तो उसे मारकर कोठरी में डाल दिया ॥ ५ ॥ इसी प्रकार दूसरे को बुलाया और उसे भी खड़ग से मार डाला । इसी प्रकार उन दोनों को भी बुलाकर मारकर तहखाने में डाल दिया ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ चारों पुत्रों को पहले मारकर फिर उसने पति को बुलाया और रोती हुई प्राथना करने लगी ॥ ७ ॥ हे राजा ! तुम्हारे दो पुत्र राज्य के लिए आपस में लड़ मरे हैं । जब वे धरती पर गिरे तो मैं बेहोश हो गई ॥ ८ ॥ जब तलवारें हाथ में पकड़कर दोनों वीर जूझ गए तो बाक़ी दोनों वस्त्र फाड़कर तत्क्षण साधु हो निकल गए ॥ ९ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब राजा पुत्र-पुत्र कहकर रो पड़ा और होश गँवाकर धरती पर गिर पड़ा । पाँचवें को तिलक दे दिया और उस मूर्ख ने भेद-अभेद कुछ भी नहीं जाना ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ उनतालीसवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति । २३९ ४५४९ । अफजूं

।। चौपई ।। सपत और रानी तिह रहई। तिनहूँ सौ हित न्रिप निरबहई। बारी बारी तिनै बुलावै। लपटि लपटि करि भोग कमावै ।। २ ।। स्री रुचिराजकुअरि जो रानी। सो मन भीतर अधिक रिसानी। मन महि कह्यो जतन किया करियै। जाते इन रनियन कौ मरियै ।। ३ ।। ।। अड़िल्ल ।। प्रथम रानियन सौ अति नेह बढाइयो। ऐसी करी परीति जु पति सुनि पाइयो। धन्य धन्य रुचि राजकुअरि कह भाखियो। हो जिन कलि मै सवतिन सौ अति हित राखियो ।। ४ ।। नदी तीर इक रच्यो तिनालै जाइकै। आप कह्यो सवतिन सौ बचन बनाइकै। सुनहु सखी हम तहाँ सकल मिल जाइहै। हो हम तुम मन भावत तह भोग कमाइहै ।। ५ ।। लै सवतिन कौ संग तिनालै मौ गई। राजा पै इक पठै सहचरी देत भी। नाथ क्रिपा करि अधिक तहीं तुम आइयो। हो मन भावत रानिन सो भोग कमाइयो ।। ६ ।। सवति सखिन के सहित तहाँ सभ ल्याइकै। रोकि द्वारि पावक कौ दयौ लगाइकै। किसू काज के हेत गई त्रिय आपु टरि। हो इह छल सभ रानिन कौ दिया जराइ करि ।। ७ ।। ।। चौपई ।। दौरत आपु न्रिपति पह आई। रोइ रोइ बहु बिथा जताई। बैठो कहा

रानियाँ थीं जिनसे राजा अत्यंत प्रेम करता था। उन्हें बारी-बारी से बुलाता था और लिपट-लिपटकर भोग-विलास करता था ।। २ ।। रुचिराजकुँवरि जो रानी थी वह मन में अत्यंत क्रुद्ध हुई। उसने सोचा कि क्या किया जाय जिससे इन रानियों को मार डाला जाय ।। ३ ।। ।। अड़िल्ल ।। पहले तो उसने रानियों से अत्यन्त प्रेम बढ़ाया। उनसे इतनी प्रीति बढ़ाई कि राजा भी जान गया। वह रुचिराजकुँवरि को धन्य-धन्य कहता था जिसने कि इस कलियुग में भी सौतों से प्रेम बनाकर रखा था ।। ४ ।। उसने नदी के किनारे एक हरम बनवाया और सभी सौतनों को कहा कि हे सखियो ! हम सब वहाँ चलें और मनचाहा भोग करें ।। ५ ।। सौतनों के साथ वह उस हरम में गई और राजा के पास एक दासी भेज दी। राजा से कहलवाया कि हे नाथ ! कृपा कर आ जाइए और रानियों के साथ मनचाहा विहार करें ।। ६ ।। सौतनों को सखियों-सहित वहाँ लाकर दरवाज़े बंद कर आग लगा दी और स्वयं बहाना बनाकर वह स्त्री पीछे रह गई। इस छल से उसने सब रानियों को जला दिया ७ चौपाई स्वय वह दौड़ती

देव के हरे। तोरे हरम आजु सभ जरे ॥ ८ ॥ (मू०ग्रं०११५१) तुम अब तहाँ आपु पगु धारहु। जरत अगनि ते त्रियन उबारहु। बैठन सौ कछु हेतु न कीजै। मोरी कही कान धरि लीजै ॥ ९ ॥ वै उत जरत तिहारी नारी। तुम हो बैठ गरब करि भारी। राइ उठहु तिन ऐंच निकारहु। साच झूठ मुर बचन बिचारहु ॥ १० ॥ बैन सुनत मूरख उठि धयो। भेद अभेद न पावत भयो। तजि बिलंब अबिलंब सिधार्यो। भसम रानियन जाइ निहार्यो ॥ ११ ॥ ॥ दोहरा ॥ सखिन सहित सबतैं जरी जियत न उबरी काइ। याकौ भेद अभेद जो त्रिपति जतावै जाइ ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ चालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २४० ॥ ४४७६ ॥ अफजूँ ॥

अथ दोइ सौ इकतालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ किलमाखन इक देस त्रिपति बर। बिरहमंजरी नारि तवन घर। अधिक तरुनि को रूप

हुई राजा के पास आयी और रोकर सब व्यथा सुनाई। भाग्य के मारे हुए राजा तुम यहाँ क्या बैठे हो ? तुम्हारे तो सभी जल गए हैं ॥ ८ ॥ तुम अब स्वयं वहाँ चलो और जलती हुई स्त्रियों को स्वयं बचाओ। बैठने से कुछ नहीं सँवरेगा। तुम मेरा कहना सुनो और मान लो ॥ ९ ॥ उधर तुम्हारी स्त्रियाँ जल रही हैं और इधर तुम मान किए बैठे हो। राजन् ! उठो और उन्हें खींचकर निकाल लो और मेरे इस सच्चे-झूठे कथन पर विचार करो ॥ १० ॥ बात सुनते ही मूर्ख उठकर दौड़ा और रहस्य को न समझ सका। वह अविलम्ब दौड़ पड़ा और भस्म हो चुकी रानियों को देखा ॥११॥ ॥ दोहा ॥ सखियों-सहित सौतनें जल मरी और एक भी जीवित न बची। इस भेद-अभेद को भला राजा को कौन समझाए ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ चालीसवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति। २४० ४४७६ अफजू।

बिराजै। सुरी आसुरिन को मन लाजै ॥ १ ॥ सुभटकेत इक सुभट बिचच्छन। जाके बने बती सौ लच्छन। रूप तवन को लगत अपारा। रविन लयो जनु कोटि उज्यारा ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ बिरहमंजरी जब वहु पुरख निहारियो। बिरह बान कसि अंग तवन के मारियो। बिरह बिकल ह्वै बाल गिरत भी भूमि पर। हो जनुक सुभट रन माहि प्रहार्यो बान करि ॥ ३ ॥ पाँचिक बीती घरी बहुरि जाग्रत भई। नैनन सैन बुलाइ सहचरी ढिग लई। ता कह चित की बात कही समुझाइकै। हो त्यागहु हमरी आस कि मीत मिलाइदै ॥ ४ ॥ जु कछु कुअरि तिह कह्यो सकल सखि जानियो। तिह ते किया पयान तहाँ पगु ठानियो। बैठ्यो जहाँ पियरवा सेज डसाइकै। हो इशकमंजरी तही पहूँची जाइकै ॥ ५ ॥ बैठ्यो कहा कुअर सु अबै पगु धारियै। लूटि तरुनि मन लीनो कहा निहारियै। काम तपत ताकी चलि सकल मिटाइयै। हो कहियो मानि जिनि जोबन ब्रिथा बिताइयै ॥ ६ ॥ बेगि चलो उठि तहाँ न रहो लजाइकै। बिरह तपत ताकी कह देहु बुझाइकै। रूप भयो तौ कहा ऐंठ

उसके सामने लज्जित होती थीं ॥ १ ॥ सुभटकेतु एक विलक्षण वीर था जिसमें बत्तीसों शुभ लक्षण मौजूद थे। उसका रूप अपार था और ऐसा लगता था मानों सूर्य ने भी उजाला लिया हो ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ विरह-मजरी ने जब उस पुरुष को देखा तो विरह ने मानों कसकर उसे बाण मार दिया हो। विरह में व्याकुल हो वह स्त्री ऐसे भूमि पर गिर पड़ी मानों युद्ध में बाण लगने से वीर गिर पड़ा हो ॥ ३ ॥ लगभग पाँच घड़ी के बाद वह होश में आयी तो उसने नयनों के इशारों से दासी को पास बुलाया। उसे मन की बात समझाई और कहा कि या तो मित्र मिला दो अथवा मेरे जीवित रहने की आशा छोड़ दो ॥ ४ ॥ सखी ने कुंवरि की कही बात को समझ लिया और इश्क़मंजरी वहाँ से चलकर वहाँ (मित्र के पास) आ पहुँची जहाँ प्रिय पलंग बिछवाकर बैठा था ॥ ५ ॥ हे कुंवर! यहाँ क्या बैठे हो? अभी चलो तुमने तरुणी का मन लूट लिया है। अब क्या देख रहे हो? उसके काम-कष्ट का चलकर निवारण करो। मेरा कहा मानो और यौवन को वृथा न जाने दो ॥ ६ ॥ वहाँ शीघ्र चलो और लजाओ मत। चलो और उसकी विरहाग्नि को शान्त करो रूप-सौंदर्य होने से अकड़ना नहीं

न प्रमानियै । हो धन जोबन दिन चारि पाहुनो जानियै ॥७॥ या जोबन (मू०पं०११५२) कौ पाइ अधिक अबलन कौ भजियै । या जोबन कौ पाइ जगत के सुखनन तजियै । जब पिय ह्वै हौ बिरध कहा तुम लेहुगे । हो बिरह उपासन साथ सजन जिय देहुगे ॥ ८ ॥ या जोबन कौ पाइ जगत सुख मानियै । या जोबन कह पाइ परम रस ठानियै । या जोबन कह पाइ नेह जग कीजियै । हो नाहक जग के माँझ न जियरा दीजियै ॥ ९ ॥ नेह बिना भ्रिप ह्वैहै गए बखानियै । खड़ग दान बिन किए न जग मै जानियै । नेह क्रिशन जू कियो आजु लौ गाइयै । हो निरखि जगत के नाथ नारि निहुराइयै ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ मधुरी मूरति मित्त की बसी चित्त मै चीन । बहुरि निकासे जाहि नहि नैना भए रंगीन ॥ ११ ॥ मन भावन के नैन दोऊ चुभे चित्त के माँहि । सेलन ज्यों सर कै परे नाहि निकारे जाँहि ॥ १२ ॥ नैन पिया के पारधी मन मै किया निवास । काढि करेजा लेहि जनु याते अधिक बिस्वास ॥ १३ ॥ नैन पिया के पालने करि राखे करतार । जिन महि जनु झूलहि घने हम से बैठि हजार ॥ १४ ॥ नैन रसीले रस भरे झलक रसन की देहि ।

चाहिए, क्योंकि धन-यौवन चार दिन का ही मेहमान होता है ॥ ७ ॥ जवानी पाकर अत्यधिक स्त्रियों से रमण करो और यौवन को पाकर संसार के किसी भी सुख को न त्यागना । हे प्रिय ! जब तुम वृद्ध हो जाओगे तो क्या पाओगे; उलटे विरह की साँसें गिनते अपने प्राण दे दोगे ॥ ८ ॥ जवानी पाकर जगत के सुखों को भोगो और परम रस प्राप्त करो । जोबन को पाकर संसार से प्रेम करो और संसार में व्यर्थ ही जान मत दो ॥ ९ ॥ प्रेम के बिना अनेकों राजा हो गुजरे हैं । संसार में खड़ग दान दिए विना कोई भी नहीं जाना जाता । श्रीकृष्ण ने प्यार किया और वह आज तक जाना जाता है । जगत् के नाथ ने भी स्त्री को देखा और गर्दन नीची कर ली ॥१०॥ ॥ दोहा ॥ मित्र की मधुर मूर्ति चित्त में बसी पहचानकर ये रंगीन नयन मन से निकाले नहीं निकलते ॥ ११ ॥ मनभावन के दोनों नयन चित्त में गड़ गए हैं । वे शूल के समान धँस गए हैं और निकालने से भी नहीं निकलते हैं ॥ १२ ॥ प्रिय के नयन शिकारी हैं, जिन्होंने मन में आवास बना लिया है । मुझे अत्यधिक विश्वास है कि मेरा कलेजा निकालकर ले जायँगे ॥ १३ । प्रिय के नयन झूले के समान हैं जिसमें हमारे जैसे हजारों लोग बैठकर झूलते हैं १४

चंचलान के चित्त कौ चमकि चुराए लेहि ॥ १५ ॥ ॥ सोरठा ॥ भयो सकल तन पीर रही सँभारि न चीर की। बहियो रकत ह्वै नीर प्रेम पिया की पीर तें ॥ १६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ परदेसिन सौ प्रीति कही काहूँ नहि करनी। परदेसिन के साथ कही नहि बात उचरनी। परदेसिन तिय साथ कहो क्या नेह लगैयै। हो टूटि तरक दै जात बहुरि आपन पछुतैयै ॥ १७ ॥ परदेसी सौ प्रीति करी एकै पल नीकी। परदेसी सौ बैन भली भाखी हसि ही की। परदेसी के साथ भयो पिय नेह लगायो। हो परम प्रीति उपजाइ ब्रिथा जोबन न बितायो ॥ १८ ॥ हम शाहुन के पूत देस परदेस बिहारैं। ऊच नीच कोऊ होइ सकल अखियनन निहारैं। कहो कुअरि हम साथ नेह करिकै कस करिहौ। हो हम जैहैं उठि कही बिरह बाँधी तुम जरिहौ ॥ १९ ॥ ॥ रानी बाच ॥ हम न तजैं पिय तुमै कोटि जतनन जौ करिहौ। हसि हसि बात अनेक कछू की कछू उचरिहौ। हम राची तव रूप रीझि मन मैं रहो। हो इशक तिहारे जरी जुगिनि ह्वैहैं कही ॥ २० ॥ (मू०ग्रं०११५३) कसि करि

रसीले नयन सब रसों की झलक देते हैं और चमककर चंचलाओं के चित्त को चुरा लेते हैं ॥ १५ ॥ ॥ सोरठा ॥ सारे तन में पीड़ा होने लगी है और वस्त्रों की सँभाल भी नहीं रही है। प्रिय के प्रेम की पीड़ा में रक्त आँसू बनकर बह रहा है ॥ १६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ परदेसियों से किसी को प्रीत नहीं करनी चाहिए। परदेसियों से बातें भी नहीं करनी चाहिए। परदेसी स्त्री के साथ भला क्या नेह लगाया जाय जो तड़ाक से टूट जायगा और फिर स्वयं पछताना पड़े ॥ १७ ॥ परदेसी से तो एक ही पल का प्यार काफी है और उसमें तो बस थोड़ी हँसी ही पर्याप्त है। हे प्रिय ! परदेसी के साथ स्नेह करो और प्रेम लगाओ। व्यर्थ ही यौवन को नष्ट न करो ॥ १८ ॥ हम साहूकारों के पुत्र हैं जो देश-विदेशों में जाते हैं और समस्त ऊँच-नीच को अपनी आँखों से देखते हैं। बताओ कुँवरि ! हमारे साथ प्रेम करके क्या पाओगी ? हम लोग तो चल देंगे और तुम व्यर्थ ही विरह में जलती रहोगी ॥ १९ ॥ ॥ रानी उवाच ॥ हे प्रिय ! हम तुम्हें नहीं छोड़ेंगी चाहे तुम अनेकों यत्न कर लो और हँस-हँसकर भला कोई की कोई बात बना लो। हम तुम्हारे रूप पर मोहित हैं और तुम्हारे इश्क़ में जल गई हैं अन्यथा हम जोगिन हो जायँगी २० क्यों गर्व कर रहे हो ? उठकर जल्दी

रहे गुमान बेगि उठकै चलो। हार शिगार बनाइ भेख सजि हैं भलो। जानत है सखी आजु जु पियहि न पाइहै। हो बीस बिस्वे वहु तरुनि तरफि मरि जाइहै ॥ २१ ॥ सुनत तरुनि को बचन कुअर मोहित भयो। सखी जितै लै गई चल्यो तित कौ गयो। बिरहमंजरी जह थी साज सुधारकै। हो निजु हाथन सेजिया फूलन कह डारकै ॥ २२ ॥ लए गुरज कह हाथ कुअरि आवत भयो। भाँति भाँति रानी सौ भोग कमात भयो। चौरासी आसन द्रिड़ करे बनाइ करि। हो कामकला की रीत सु प्रीत रचाइ कर ॥ २३ ॥ तब लग ता कौ न्रिपत निकस्यो आइ करि। कर्यो गदा को घाइ सु कुअर रिसाइ करि। एक चोट भें मारि जबै राजा लियो। हो तब अबला तिन चरित कहो जिह बिध कियो ॥ २४ ॥ गिरे महल के तरें न्रिपत कह डारकै। उठी ऊच सुर भए कूक कह मारकै। कर कर रोदन अधिक धरन गिर गिर परी। हो मर्यो हमारो राज दैवगति का करी ॥ २५ ॥ मर्यो न्रिपति सुनि लोग पहूँच्यो आइकै। खोदि महल ते देखें कहा उचाइकै। टूट टाटि सिर गयो न इक असतु

चलो। हम श्रृंगारादि करके सुन्दर वेश धारण करेंगी। यदि हमारी सखी आज प्रिय को प्राप्त नहीं कर पाएगी तो यह पूर्ण सत्य है कि वह तरुणी तड़फ-तड़फकर मर जाएगी ॥ २१ ॥ युवती के वचन सुनकर कुँवर मोहित हो गया और वह दासी जहाँ ले गई वहाँ चला गया, जहाँ विरहमंजरी अपने हाथों से शय्या पर फूल बिछाकर श्रृंगार किए खड़ी थी ॥ २२ ॥ गदा हाथ मे लेकर कुंवर आया और उसने भाँति-भाँति से रानी से रमण किया। उसने कामकला की रीति को प्रीतिपूर्वक अपनाकर चौरासी आसनों का प्रयोग किया ॥ २३ ॥ तब तक उसका राजा उधर आ निकला। कुँवर ने क्रुद्ध होकर गदा से वार कर उसे मार दिया। एक ही चोट से राजा को मारकर बाद में उस स्त्री ने क्या प्रपंच किया सो कहता हूँ ॥ २४ ॥ एक टूटे महल के नीचे राजा को फेंककर वह ऊँचे स्वर में चीखने-पुकारने लगी। अत्यधिक रुदन कर वह धरती पर गिर पड़ने लगी और कहने लगी कि दैव ने यह क्या किया, मेरे राजा को मार डाला ॥ २५ ॥ राजा की मृत्यु के बारे में सुनकर लोग आ पहुँचे और महल खोदकर देखने लगे उसका सिर टूट-फूट गया था और एक भी हड्डी नही बची थी देखो स्त्री के प्रपच

उबरियो । देखहु नारि चरित्र कहा इह ठा करियो ।। २६ ।। धाम तरे दबि मर्‌यो सभन न्रिप जानियो । भेद अभेद न किनहूँ मूड़ पछानियो । परजा पटुकन बाँधि सिरन पर आइकै । हो रानी नितप्रति भज्यो मित्र सुख पाइकै ।। २७ ।। १ ।।

।। इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ इकतालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ।। २४१ ।। ४४८६ ।। अफजूं ।।

अथ दोइ सौ ब्यालीस चरित्र कथनं ।।

।। चौपई ।। सुभटावती नगर इक दच्छिन । छत्रकेतु न्रिपराज बिचच्छन । रूपमंजरी ताकी रानी । सुंदरि सकल भवन मै जानी ।। १ ।। ।। अड़िल्ल ।। अधिक न्रिपति कौ रूप जगत मै जानियै । इंद्र चंद्र सूरज कै मदन पछानियै । जो तरुनी ताकह भरि नैन निहारई । हो लोग लाज भुल कानि सु सकल बिसारई ।। २ ।। इक छबि मानमंजरी दुहिता शाहु को । जानुक जग के माँझ प्रगटि छबि माह को । छत्रकेतु राजा जब तवनि निहारियो । हो जानुक तानि (मू०ग्रं०११५४)

ने इस स्थान पर क्या कर दिया ।। २६ ।। सबने समझा कि राजा महल के नीचे दबकर मर गया है और किसी भी मूर्ख ने रहस्य को न समझा । लोगो ने आकर सिरों पर पट्टियाँ बाँधी और इधर रानी अब नित्यप्रति अपने मित्र के साथ सुखपूर्वक रमण करने लगी ।। २७ ।। १ ।।

।। श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ इकतालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ।। २४१ ।। ४४६८ ।। अफजू ।।

दो सौ बयालीसवाँ चरित्र-कथन

।। चौपाई ।। दक्षिण में सुभटावती नामक एक नगर था जहाँ का विलक्षण राजा छत्रकेतु था । उसकी रानी रूपमंजरी थी जो सारे भुवनों में सुन्दर मानी जाती थी ।। १ ।। ।। अड़िल्ल ।। राजा भी संसार में अत्यधिक रूपवान समझा जाता था । वह इन्द्र, चन्द्र, सूर्य अथवा कामदेव माना जाता था । जो स्त्री उसकी तरफ़ नज़र भरकर देख लेती थी वह समस्त लोक-लाज को विस्मृत कर देती थी ।। २ ।। छविमानमंजरी शाह की एक पुत्री थी । जो मानो संसार में साक्षात सौंदर्य की प्रतिमा प्रकट थी । छत्रकेतु राजा को जब उसने देखा तो ऐसा लगा मानो कामदेव ने धनुष

कमान मदन सर मारियो ॥ ३ ॥ निरखि त्रिपति को रूप मदन के बसि भई। लोक लाज कुल कानि बिसरि सभ ही गई। बधी बिरह के बान रही बिसमाइकै। हो जनुक फूल पर भवर रह्यो उरझाइकै ॥ ४ ॥ प्रथम त्रिपति को हेरि पान बहुरो करै। रहै चखन करि चारि न इत उत कौ टरै। आशिक की ज्यों ठाढि बहुत ह्वै चिर रहै। हो मोहि भजै त्रिपराज चित्त मै यौ कहै ॥ ५ ॥ एक दिवस त्रिपराज तवनि त्रिय को लह्यो। मुहि ऊपर अटकी त्रिय यौ चित मै कह्यो। जो इच्छा इह करै सु पूरन कीजियै। हो जौ माँगै रति दान तौ सोई दीजियै ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ इह सभ बात त्रिपति पहिचानी। वा त्रिय सौ नहि प्रगट बखानी। भूपति बिनु अबला अकुलाई। एक सहचरी तहाँ पठाई ॥ ७ ॥ हम बेधे तव बिरह त्रिपति बर। मोरि बिनत सुनि लेहु स्रवनि धरि। लपटि लपटि मोसौ रति करियै। काम तपति पिय मोर निवरियै ॥ ८ ॥ जब इह भाँति त्रिपति सुनि पाई। पत्री त्रिय प्रति बहुरि पठाई। जौ तूँ प्रथम नाथ कह मारै। तिह पाछे मुहि साथ बिहारै ॥ ९ ॥ जु कछु कह्यो तिह त्रिप

खींचकर उसे कामबाण मार दिया हो ॥ ३ ॥ राजा का स्वरूप देखकर वह कामवश हो गई और लोक-लाज, कुल-मर्यादा उसने भुला दी। विरह-बाण से बिंधी वह आश्चर्यचकित हो उठी। ऐसा लग रहा था मानो फूल पर भौंरा उलझकर रह गया हो ॥ ४ ॥ पहले वह राजा को देखती थी और फिर कुछ खाती थी और उससे नज़र मिलाकर वह इधर-उधर नहीं हिलती थी। वह सच्चे आशिक़ की तरह अत्यधिक समय तक खड़ी रहती थी और सोचती थी कि राजा मेरे साथ रमण करे ॥ ५ ॥ एक दिन राजा ने उस स्त्री को देखा और मन में सोचा कि यह स्त्री तो मेरे पर ही अटक गई है। यह जो इच्छा करे इसे दिया जाना चाहिए और यदि रतिदान भी माँगे तो इसे मिलना चाहिए ॥ ६ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजा ने यह समझ लिया परन्तु उस स्त्री से नहीं कहा। राजा के बिना अब वह स्त्री व्याकुल हो उठी और उसने एक दासी को वहाँ भेजा ॥ ७ ॥ हे राजन् ! मैं तो तुम्हारे विरह में बिंधी हूँ, मेरी प्रार्थना सुनो। मुझसे लिपट-लिपटकर रतिक्रीड़ा करो और मेरी कामाग्नि को शान्त करो ॥ ८ ॥ जब राजा ने यह सुना तो पत्र उसको भेजा कि यदि तुम पहले अपने पति को मार डालो तब मेरे साथ विहार करो ९ राजा ने उसको जो वही उस सखी ने

समझाई। सु कछु कुअरि सौ सखी जताई। जौ तूं प्रथम शाहु कह मारै। तौ राजा के साथ बिहारै॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ यौ न्रिप बर मोसो कह्यो प्रथम नाथ कौ घाइ। बहुरि हमारी नारि ह्वै धाम बसहु तुम आइ॥ ११ ॥ ॥ चौपई ॥ जब इह भाँति तरुनि सुनि पाई। चित के बिखै इहै ठहराई। मैं इह प्रथम शाह कै मारौ। न्रिप त्रिय ह्वै न्रिप साथ बिहारौ॥ १२ ॥ वा राजा कौ धाम बुलाइसि। अधिक प्रानि हित भोग कमाइसि। गहि द्रिड़ दुहूँ जाँघ महि धरै। लपटि लपटि तासौ रति करै॥ १३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ रमत न्रिपति को देखि शाहु क्रुद्धित भयो। गहि करि पान क्रिपान समुहि धावत भयो। नागरि कुअर अधिक मन कोप बिचारियो। हो गहिर नदी के माँहि पकरि तिह डारियो॥ १४ ॥ ॥ चौपई ॥ इह बिधि नारि शाहु कह मार्यो। आपु रोइ सुर ऊच पुकार्यो। दै दै मूँड भूम पर मार्यो। लोगन सौं यौ प्रगट उचार्यो॥ १५ ॥ फिसल्यो (मू०ग्रं०११५५) पाव नदी पति परे। हा हा दैव न किनहूँ धरे। तरिया हुते न मरते बूडि करि। कह गति

आकर कुँवरि को बता दिया। यदि तुम पहले शाह को मार दो तो फिर राजा के साथ रमण कर सकती हो॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ राजा ने कहा है कि पहले तुम अपने पति को मार डालो, फिर मेरे घर में मेरी पत्नी के रूप में आकर रहो॥ ११ ॥ ॥ चौपाई ॥ तरुणी ने जब यह सुना तो मन में यह निर्णय किया कि पहले मैं अपने पति को मारूँगी और फिर राजा की पत्नी बनकर उसके साथ रमण करूँगी॥ १२ ॥ उसने राजा को घर में बुलाया और अत्यधिक स्नेहपूर्वक उसमे संभोग किया। दोनों जंघाओं को दृढ़ता से पकड़कर लिपट-लिपटकर उसने रतिक्रीड़ा की॥ १३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजा को भोग-संलग्न देखकर शाह क्रुद्ध हो उठा और कृपाण हाथ में पकड़कर सामने की तरफ़ लपका। उस कुँवरि ने मन में अत्यधिक क्रुद्ध हो उसे (मारकर) पकड़कर गहरी नदी में फेंक दिया॥ १४ ॥ ॥ चौपाई ॥ इस प्रकार उस स्त्री ने शाह को मार डाला और रोकर ऊँचे स्वर में पुकारना शुरू किया। वह धरती पर सिर पटकने लगी और लोगों से कहने लगी॥ १५ ॥ पाँव फिसलने से मेरा पति नदी में गिर पड़ा है। हाय! दैव किसी को भी नहीं छोड़ता है यदि तैराक होते तो डूबकर न मरते

कौन बिलोकहु सुर हरि ॥ १६ ॥ हौ किसहूँ फिरि मुख न दिखैहौ । बैठि इकांत तपस्या कैहौ । यौ कहि जात सदन इक भई । रैनि परे न्रिप के ग्रहि गई ॥१७॥ ॥दोहरा॥ इह बिधि न्रिप के घर गई भवन किवार चढ़ाइ । लोग लहैं उपमा करैं सदन न बदन दिखाइ ॥ १८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ निज नाइक कह मारि न्रिप के घर गई । लोग लखैं ग्रहि मांझ तरुनि इसथित भई । किसू नाथ के शोक न बदन दिखावई । हो बैठी ग्रहि के मांझ गुबिंद गुन गावई ॥ १९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ ब्यालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २४२ ॥ ४५१७ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ तेतालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुघरावती नगर इक सोहै । सुघरसैन राजा तह को है । चित्रमंजरी ताकी रानी । जानुक छीर सिंध मथि आनी ॥ १ ॥ ॥ दोहरा ॥ चारि सवति ताकी रहै ससि की सोभ समान । इंद्रकेत तिन को तनुज रवि के

परमात्मा ने देखो मेरी क्या गति बना दी है ॥ १६ ॥ मैं अब किसी को मुँह नहीं दिखाऊँगी और एकान्त में बैठकर तपस्या करूँगी । यह कहकर एक घर में चली गई और रात होने पर वहाँ से राजा के महल में आ गई ॥ १७ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार घर बंद करके वह राजा के पास आ गई और लोग समझने लगे कि वह किसी के सामने नहीं आ रही है और तपस्या कर रही है ॥ १८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ अपने पति को मारकर राजा के घर चली गई । लोग समझने लगे कि तरुणी घर में बैठी है और पति के शोक में संतप्त किसी को मुँह नहीं दिखा रही है तथा घर में बंद गोविंद का गुणगान कर रही है ॥ १९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ बयालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २४२ ॥ ४५१७ ॥ अफजूं ॥

दो सौ तेंतालीसवां चरित्र-कथन

रूप प्रमान ॥ २ ॥ चित्रमंजरी बाम के पुत्र एक ग्रहि नाहि। ताँहि चितै चौगुन चपै सोचि पचै मन माहि ॥ ३ ॥ सोतनीन कौ सुत सहित अति प्रताप लखि नैन। बुडी सोच सर मै रहै प्रगट न भाखै बैन ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ जासौ प्रीति न्रिपति की जानी। पुत्र रहत सोऊ पहिचानी। तासौ अधिक प्रीति उपजाई। हितू जानि करि करी बडाई ॥ ५ ॥ जब वहु राज कुअरि ग्रिहि आवै। बिखि भोजन लै ताँहि खवावै। जिय तै खोइ तवन कौ डार्यो। आपु न्रिपति सौ जाइ उचार्यो ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ गाढो अमली ना हुतो गाढ रहै हठवान। सोफी थो त्रिय कहत लौ पल मै तजै परान ॥७॥ ॥ चौपई ॥ त्रिय चित अधिक शोक करि भारो। उठत गिरत पति भए उचारो। थर थर करत कहै नहिं आवै। तऊ बचन तुतरात सुनावै ॥ ८ ॥ कहो तु न्रिप इक सैन सुनाऊँ। राज नशट ते अधिक डराऊँ। भानछटा तव सुत बिखि द्याई। ताँते मै धावत ह्याँ आई ॥ ९ ॥ मेरो नामु न तिह कहि दीजै। निजु सुत की रच्छाऊ कीजै। जो सुनि भानछटा इह जावै। चित (पू०ग्रं०११५६) कौ हित हम सौ

थी और उनका पुत्र इन्द्रकेतु सूर्य के समान रूपवान था ॥ २ ॥ चित्रमंजरी के घर में एक भी पुत्र नहीं था जिससे वह सोच-सोचकर चिंतातुर बनी रहती थी ॥ ३ ॥ सौतनों के पुत्र-सहित ऐश्वर्ययुक्त देखकर चिन्ता के सरोवर मे वह डूबी रहती थी और चुप लगाए रहती थी ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजा की प्रीति जिसके साथ अत्यधिक थी पुत्र-विहीना ने उसे पहचान लिया। उसने उससे अत्यधिक प्रीति पैदा कर ली और उसकी प्रशंसा की ॥ ५ ॥ जब वह राजकुमार घर आता था तो उसे भोजन में विष खिला देती थी। उसे जान से मार डाला और स्वयं राजा से जा कहा ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ वह अधिक नशे को पचाने में असमर्थ था, इसलिए उस नौसिखिए ने तुरन्त प्राण त्याग दिये ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ स्त्री ने अधिक शोकाकुल हो गिरते-पड़ते जाकर पति से कहा। थरथर काँपते कहते नहीं बनता था, इससे हकलाते हुए उसने कहा ॥ ८ ॥ राजन्! कहो तो एक इशारा तुम्हें करूँ, क्योंकि मैं राज्य के नष्ट होने से बहुत घबराती हूँ। भानुछटा ने तुम्हारे पुत्र को जहर दे दिया है इसी से मैं डरते हुए यहाँ आई हूँ ॥ ९ ॥ मेरा नाम उससे मत कहना और अपने पुत्र की रक्षा करो। यदि भानुछटा को पता

बिसरावै ॥ १० ॥ सुनत बचन उठि न्रिपति सिधारा । म्रितक पूत छित पर्यो निहारा । रोवै लाग अधिक दुख पाइसि । दै दै पाग धरनि पटकाइसि ॥ ११ ॥ ॥ दोहरा ॥ सूरन थो कैफीन थो जियत रहैं ऐंठाइ । भखत सूम सोफी मर्यो बिखहि न सक्यो पचाइ ॥ १२ ॥ तब राजा गहि केस ते रानी लई मँगाइ । साचु झूठ समझ्यो न कछु जमपुर दई पठाइ ॥ १३ ॥ सुत मार्यो सवतिहि सहित न्रिप सौ किया पयार । ब्रहम बिशन लहि ना सकै त्रिया चरित्र अपार ॥ १४ ॥ ॥ रानी बाच ॥ राज नशट ते मैं डरी सुनु मेरे पुरहूत । कहा भयो जौ सवति को तऊ तिहारो पूत ॥ १५ ॥ ॥ चौपई ॥ जब इह भाँति राव सुनि पावा । ताकौ सतिवंती ठहिरावा । तासौ अधिक प्रीति उपजाइसि । और त्रियहि सभ कौ बिसराइसि ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ तेतालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २४३ ॥ ४५३३ ॥ अफजूं ॥

लग गया तो उसका स्नेह मुझसे समाप्त हो जायगा ॥ १० ॥ बात सुनते ही राजा चल पड़ा और उसने मृतक पुत्र को धरती पर पड़े देखा । अधिक दुख पाकर वह रोने लगा और धरती पर सिर पटकने लगा ॥ ११ ॥ ॥ दोहा ॥ जो नशे के शूरवीर हैं वे ऐंठकर भी जीवित बने रहते हैं । परन्तु न पीनेवाला पीकर मर गया और विष को न पचा सका ॥ १२ ॥ तब राजा ने केशों से पकड़कर रानी को मँगा लिया । उसने सत्य-झूठ तो कुछ समझा नहीं और उसे मारकर यमलोक पहुँचा दिया ॥ १३ ॥ सौतन-सहित पुत्र को मार दिया और राजा से प्यार किया । ब्रह्मा, विष्णु भी स्त्री के अपार चरित्र को नहीं समझ सकते हैं ॥ १४ ॥ ॥ रानी उवाच ॥ हे मेरे इन्द्रदेव ! मैं तो राज्य नष्ट होने की संभावना से डर गई थी । क्या हुआ जो सौतन का था फिर भी तुम्हारा पुत्र तो था ॥ १५ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब राजा ने यह सुना तो उसे सत्यवती माना । उससे अधिक प्यार किया तथा अन्य सब स्त्रियों को भुला दिया ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ तेंतालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २४३ ॥ ४५३३ ॥ अफजू ॥

अथ दोइ सौ चौआलीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ पदमसिंघ राजा इक सुभमति । दुरजनांत दुख हरन बिकट अति । बिक्रम कुअरि तवन की नारी । बिधि सुनार साँचे जनु ढारी ॥ १ ॥ सुंभकरन ताँको सुत अति बल । अरि अनेक जीते जिह दलि मलि । अप्रमान तिह रूप कहत जग । निरखि नारि ह्वै रहत थकित मग ॥ २ ॥ जात जितै रितु पति जिमि भयो । ह्वै उजारि पाछे बन गयो । पुरजन चलहि संगि उठि सबही । जानुक बसे नाहि पुर कबही ॥ ३ ॥ जित जित जात कुअरि मग भयो । जानुक बरखि क्रिपाबुंद गयो । लोगन नैन लगे तिह बाटै । जानुक बिखित अंम्रित कहि चाटैं ॥ ४ ॥ ॥ दोहरा ॥ जिह जिह मारग के बिखै जात कुअर चलि सोइ । नैन रँगीलो सभन के भूम छवीली होइ ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ ब्रिखधुज नगर शाह इक ताके । नागरि कुअरि नारि ग्रहि जाके । नागरिमती सुता तिह सोहै । नगरनि के नगरक कह मोहै ॥६॥

दो सौ चौवालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ शुभमति का स्वामी राजा पदमसिंह दुर्जनों का नाश करनेवाला तथा दुःखों को समाप्त करनेवाला था । उसकी स्त्री विक्रमकुँवरि थी जो मानों विधि सुनार ने साँचे में ढालकर बनाई हो ॥ १ ॥ उसका बलवान पुत्र शुभकरण था, जिसने अनेकों शत्रुओं को मारकर जीता था । वह अपरिमित रूप से सौंदर्यशाली था । स्त्रियाँ उसकी राह देख-देखकर थक जाती थीं ॥ २ ॥ वह वसंतऋतु की तरह जहाँ भी जाता था उसके पीछे प्रकाश भी चलता था । सभी नगरनिवासी भी उसके साथ ऐसे चल पड़ते थे मानों कभी नगर में रहे ही न हों ॥ ३ ॥ वह राजकुँवर जिस-जिस ओर चला जाता था मानों उसी ओर कृपादृष्टि हो जाती थी । लोगों की नजरें उसी ओर लगी रहती थीं, जैसे विष अमृत की प्रतीक्षा किया करता है ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ वह कुँवर जिस-जिस मार्ग पर निकल जाता था वहाँ सबके नेत्र रँगीले और वहाँ की सब धरती छबीली हो जाती थी ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ उस नगर में वृक्षध्वज नामक एक शाह रहता था जिसकी स्त्री नागरकुँवरि थी । उसकी पुत्री नागरमती थी जो नगर के सभी लोगों के मन को मोहनेवाली थी ६ उसने उस कुँवर को देख लिया और लज्जा

तिन वहु कुअरि द्रिगन लहि पावा। छोरि लाज कहु नेहु लगावा। मन मै अधिक मत ह्वै झूली। मात पिता की सभ सुधि भूली ॥ ७ ॥ जवन (मू०ग्रं०११५७) मारग न्रिप सुत चलि आवै। तही कुअरि सखियन जुत गावै। चारु चारु करि नैन निहारै। नैन सैन दै हसै हकारै ॥ ८ ॥ ॥ दोहरा ॥ इशक मुशक खाँसी खुरक छिपत छपाए नाहि। अंत प्रगट ह्वै जग रहहि त्रिशटि सकल के माहि ॥ ९ ॥ ॥ चौपई ॥ प्रचुर बात इह भई नगर मै। चलत चलत सु गई तिह घर मै। तह ते हटकि मात पितु राखी। कटु कटु बात बदन तें भाखी ॥ १० ॥ राखहि हटकि जानि नहि देही। भाँति भाँति सौ रच्छ करेही। ताते तरुनि अधिक दुख पावै। रोवतहीं दिन रैनि गवावै ॥ ११ ॥ ॥ सोरठा ॥ अरी बरी यह प्रीति निसु दिन होत खरी खरी। जल सफरी की रीति पीय पानि बिछुरे मरत ॥ १२ ॥ ॥ दोहरा ॥ जे बनिता बिरहिन भई पंथ बिरह को लेहि। पलक बिखै पिय के निमित प्रान चटक दै देहि ॥ १३ ॥ ॥ भुजंग छंद ॥ लिखी प्रेम पत्री सखी बोलि आछी। लगी प्रीति लाला भए राम

का त्याग कर उससे नेह लगा लिया। वह मन में मस्त हो उठी और उसे माता-पिता की भी सुधि भूल गई ॥ ७ ॥ जिस रास्ते पर राजा जा रहा था वहीं वह कुँवरि सखियों-समेत गीत गाने लगी। वह सुन्दर-सुन्दर नयनों से देखने लगी और आँखों के संकेतों से हँसने लगी ॥ ८ ॥ ॥ दोहा ॥ प्यार, गध, खाँसी और खुजली छिपाए नहीं छिपतीं और अंत में सारे जग में जाहिर हो जाती हैं ॥ ९ ॥ ॥ चौपाई ॥ सारे नगर में बात फैल गई और चलते-चलते वह उसके घर तक भी पहुँच गई। माता-पिता ने उसे मना करके रखा और उसे कड़वे वचन भी कहे ॥ १० ॥ वे उसे जाने नहीं देते थे और विभिन्न प्रकार से उसकी रखवाली करने लगे। इससे तरुणी अत्यधिक दुखी थी और रोते-रोते ही दिन-रात बिताती थी ॥ ११ ॥ ॥ सोरठा ॥ यह प्रेम की रीति ही ऐसी है कि यह रात-दिन बढ़ती ही जाती है। यह तो जल और मछली की रीति है कि प्रियतम पानी से बिछुड़ने पर मछली मर ही जाती है ॥ १२ ॥ ॥ दोहा ॥ यदि स्त्री विरह में विरहिणी का रास्ता अपना ले तो प्रिय के विरह में पलक झपकते ही प्राण भी दे देती है ॥ १३ ॥ ॥ भुजंग छंद ॥ उसने सखी को बुलाया और प्रेम पत्र लिखा कि हे प्रिय ! राम साक्षी है मुझे तुमसे प्रेम हो गया है यदि मैं आज तुम्हें नहीं देखगी

साछो । कह्यौ आजु जौ मैं न तोकौ निहारौं । घरी एक मै वारि प्रानानि डारौं ॥ १४ ॥ करो बाल बेलंब ना आजु ऐयै । इहाँ ते मुझै काढि लै संग जैयै । कबै मानु मानी कहा मान कीजै । महाराज प्रानान को दान दीजै ॥ १५ ॥ रची बाल लाला सभै रूप तेरे । मिलौ आजु मोकौ सुनो प्रान मेरे । कहा मान माते फिरो ऐंठ ऐंठे । लयो चोरि मेरो कहा चित्त बैठे ॥ १६ ॥ करो हार सिंगार बागो बनावो । किए चित मै ओपि बीरा चबावो । उठो बेगि बैठे कहाँ प्रान मेरे । चलो कुंज मेरे लगे नैन तेरे ॥ १७ ॥ ॥ दोहरा ॥ बचन बिकाने कुअरि के कहे कुअरि के संग । एक न मानी मंदमति रस के उमगि तरंग ॥ १८ ॥ ॥ चौपई ॥ नाहि नाहि मति मंद उचारो । भलो बुरो जड़ कछु न बिचारो । बचन मानि ग्रहि ताहि न गयो । शाहु सुता कह भजत न भयो ॥ १९ ॥ ॥ कबियो बाच ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ कामातुर ह्वै जु त्रिय पुरख प्रति आवई । घोर नरक महि परै जु ताहि न रावई । जो पर त्रिय पर सेज भजत है जाइ करि । हो पाप कुंड के माहि परत सो धाइ करि ॥ २० ॥ नाहि नाहि पुनि कुअर

तो वहीं घर में प्राण न्योछावर कर दूँगी ॥ १४ ॥ हे प्रिय ! अविलम्ब यहाँ आओ और मुझे यहाँ से निकालकर ले जाओ । तुम महामानी हो, पर मान मत करो और मुझे प्राणों की भिक्षा दो ॥ १५ ॥ सभी स्त्रियाँ तुम्हारे रूप मे लीन हैं । मेरे प्राणप्रिय मुझे आज आकर मिलो । हे मदमाते प्रिय ! क्यों अकड़कर बैठे हो ? तुमने तो बैठे-बैठे मेरा चित्त चुरा लिया है ॥ १६ ॥ हार-शृंगार कर वस्त्र पहनकर और मन में प्रसन्न होकर पान का बीड़ा चबाओ । शीघ्र उठो हे मेरे प्रिय ! मेरे घर में चले आओ । तुम्हारी ओर मेरी आँखें लगी हुई हैं ॥ १७ ॥ ॥ दोहा ॥ कुंवरि के ये वचन कुँवर से कहे गए, परन्तु उस मंदमति ने रस-तरंग से उछल के वचन नही माने ॥ १८ ॥ ॥ चौपाई ॥ उस मंदमति ने "नाहि-नाहि" ही कहा और भले-बुरे का कुछ विचार नहीं किया । बात मानकर उसके घर नहीं गया और शाह की पुत्री से रमण नहीं किया ॥ १९ ॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जो स्त्री कामातुर हो पुरुष के पास आए और वह उसके साथ केलिक्रीड़ा न करे तो ऐसा पुरुष घोर नरक में जाता है, परन्तु जो पर-स्त्री को परशय्या पर जाकर भोगता है वह भी दौडकर पापकुंड में जा पड़ता है ॥ २० ॥ पुन वह कुँवर 'नाह-नाह' कहने लगा परन्तु सज धजकर उस तरुणी के घर चला गया

ऐस उचरत भयो। बनि तनि सजिन शिंगार तरुनि के ग्रहि गयो। बाल अधिक रिस भरी चरित्र बिचार्यो। (मू०ग्रं०११५८) हो मात पिता के सहित मित्र हनि डारियो॥ २१॥
॥ कबियो बाच॥ ॥ दोहरा॥ कामातुर ह्वै जो तरुनि मुहि भजि कहै बनाइ। ताहि भजै जो नाहिं जन नरक परै पुनि जाइ॥ २२॥ ॥ अड़िल्ल॥ कुअरि कटारी काढ़ि सु कर भीतर लई। पितु के उर हनि काढ़ि मात के उर दई। खंड खंड निज पान पिता के कोटि करि। हो भीति कुअरि के तीर जात भी गाड करि॥ २३॥ पहिर भगौहे बस्त्र जात न्रिप पै भई। सुत की इह बिधि भाख बात तिह तितु दई। राबि पूत तव मोरि निरखि छबि लुभयियो। हो ताते मेरो तात बाधि करि बद्धि कियो॥ २४॥ खंड खंड करि गाडि भीति तर राखियो। बचन अचानक इह बिधि न्रिप सौ भाखियो। राइ न्याइ करि चलिकै आपि निहारियै। हो निकसे हनियै याहि न मोहि संघारियै॥ २५॥ ॥ दोहरा॥ पति मारे की जब सुनी मोरि मात धुनि कान। मारि मरी जमधर तबै सुरपुर किअसि पयान॥ २६॥ सुनि राजा ऐसो बचन ब्याकुल उठ्यो रिसाइ। भीत तरें ते

स्त्री ने अत्यधिक क्रुद्ध हो प्रपंच किया और माता-पिता-समेत उस मित्र को मार डाला॥ २१॥ ॥ कवि उवाच॥ ॥ दोहा॥ जो कामातुर स्त्री कहे कि मेरे साथ रमण करो और फिर भी उसके साथ कामक्रीड़ा न की जाय तो ऐसा व्यक्ति नरक में जाता है॥ २२॥ ॥ अड़िल्ल॥ कुँवरि ने कटार निकालकर हाथ में पकड़ी और पिता की छाती में मारकर निकालकर माँ के पेट में दे मारी। अपने पिता के अनेकों टुकड़े कर उन्हें धरती में गाड़कर वह डरे हुए कुँवर के पास गई॥ २३॥ अब वह भगवे वस्त्र धारण कर राजा के पास चली गई और उसके पुत्र के बारे में उससे इस प्रकार कहने लगी। राजन्! तुम्हारा पुत्र मेरी छवि देखकर मोहित हो उठा और इसी लिए उसने मेरे पिता को बाँधकर मार डाला है॥ २४॥ इसने उसके टुकडे-टुकड़े करके उसको दीवार के नीचे दबा दिया है। इस प्रकार उसने राजा को बताया। हे राजन्! स्वयं चलकर देखो, यदि वह निकल आए तो इसे अन्यथा मुझे ही मार दीजिए॥ २५॥ ॥ दोहा॥ पति के मरने की बात जब मेरी माँ ने सुनी तो वह भी कटार मारकर तुरन्त मरकर स्वर्ग सिधार गई २६ राजा यह वचन सुनकर व्याकुल हो उठा और दीवार

शाहु को म्रितक निकास्यो जाइ ॥ २७ ॥ ॥ चौपई ॥ टूक बिलोकि चक्रित ह्वै रह्यो । साचु भयो जो मुहि इन चह्यो । भेद अभेद न कछू बिचार्यो । सुत को पकरि काटि सिर डार्यो ॥ २८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ प्रथम मात पितु मारि बहुरि निजु मीत संघार्यो । छल्यो मूढ़ मति राइ जतन नहि न्याइ बिचार्यो । सुनी न ऐसी कान कहूँ आगे नहि होई । हो त्रिय चरित्र की बात जगत जानत नहि कोई ॥ २९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संवादे दोइ सौ चौआलीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २४४ ॥ ४५६२ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ पैंतालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ प्राची दिसा प्रगट इक नगरी । खंभावति सभ जगत उजगरी । रूपसैन राजा तह केरा । जाके दुशट न बाचा नेरा ॥ १ ॥ मदनमंजरी नारि तवन की । ससि की सी छबि लगति जवन की । म्रिग के नैन दोऊ हरि लीने । सुक नासा कोकिल बच कीने ॥ २ ॥ राजा पियत अमल सभ

के नीचे से मृतक शाह को जा निकलवाया ॥ २७ ॥ ॥ चौपाई ॥ टुकडे देखकर वह चकित रह गया और सोचने लगा कि जो इसने कहा है वह निश्चित रूप से सत्य है । उसने भेदाभेद को कुछ नहीं समझा और पुत्र को पकड़कर उसका सिर काट दिया ॥ २८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ पहले माता-पिता को मारा, फिर मित्र को मारा और फिर मूर्ख राजा को भी छल लिया, क्योंकि उसने भी न्यायपूर्वक विचार नहीं किया । किसी ने तो ऐसा सुना था और न ही आगे ऐसा होगा । स्त्री के प्रपंच को संसार में कोई नहीं जान सकता ॥ २९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ चवालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २४४ ॥ ४५६२ ॥ अफजू ॥

दो सौ पैंतालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ पूर्व दिशा में, जगतविख्यात खंभावती नगर था, जिसका राजा रूपसेन था और उसके पास कोई भी दुष्ट वच नहीं सकता था ॥ १ ॥ उसकी स्त्री मदनमंजरी चन्द्रमा की-सी छविवाली थी । उसने तो मानों मृग के दोनों नयनों को चुरा लिया था उसकी नासिका तोते के समान थी और

भारी । भाँति भाँति सौ भोगत नारी । पोसत भाँग अफीम चढ़ावै । प्याले पी पचासइक जावै ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ भाँति भाँति रनयनि सौ भोग कमावई । (मू०ग्रं०११५९) आसन चुंबन करत न गनना आवई । चारि पहर रति करै अधिक सुख पाइकै । हो जो रानी तिह रमै रहै उरझाइकै ॥ ४ ॥ स्त्री रस तिलकमंजरी त्रियिक बखानियै । अधिक जगत के माँझ धनवती जानियै । जावित्री जाइफरन शाहु चबावई । हो सोफी सूम न भूलि भाँग कौ खावई ॥ ५ ॥ शाहु आपु कौ स्यानो अधिक कहावई । भूलि भाँग सुपनेहूँ न घोटि चढ़ावई । पियै जु रानी भाँग अधिक तासौ लरै । हो कौडी कर ते दान न शोकातर करै ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ पियत भाँग काहू जो हेरै । ठाढो होत न ताके नेरै । भयो सदन तिह कहै उजारा । जाकै कूँडा बजै दुआरा ॥ ७ ॥ ताको होत उजारि कहै घर । भाँग अफीम भखत है जो नर । सोफी सकल बुधि बल रहै । अमलिन को कछू कै नहि कहै ॥ ८ ॥ यह रस तिलकमंजरी सुनी । गई

वाणी कोयल के समान थी ॥ २ ॥ राजा भारी नशा कर विभिन्न प्रकार से स्त्रियों से रमण किया करता था । पोस्त, भाँग और अफ़ीम के लगभग पचास प्याले पी जाता था ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ रानियों से भाँति-भाँति प्रकार से संभोग करता था और अगणित आसन, चुंबनादि किया करता था । चार प्रहर तक सुखपूर्वक रतिक्रिया किया करता था और जिस रानी से भी रमण करता था उसे उलझाकर रख लेता था ॥ ४ ॥ रसतिलकमंजरी नामक एक स्त्री थी जो अत्यधिक धनवान जानी जाती थी । शाह जावित्री, जायफल आदि खाता था और वह कंजूस भूलकर भी भाँग नहीं खाता था ॥ ५ ॥ शाह अपने आपको अत्यधिक चतुर कहलाता था और भूलकर सपने में भी भाँग घोटकर नहीं चढ़ाता था । रानी जब भाँग पीती थी तो उससे लड़ता था और वह सदैव शोकाकुल रहनेवाला कभी एक कौड़ी भी दान नहीं करता था ॥ ६ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह किसी को भाँग पीते यदि देख लेता था तो उसके पास खड़ा नहीं होता था । जिसके यहाँ भाँग घोटने का सिल-लोढ़ा बजता वह कहता कि इसका घर वर्बाद हो जाएगा ॥७॥ जो व्यक्ति भाँग, अफ़ीम खाता वह उसके लिए कहता कि इसका घर उजड़ जायगा । न पीनेवाले बुद्धि-बल के स्वामी होते हैं और भँगेड़ियों के पास यह सब कुछ नही होता ८ री ने यह सुना तो सिर

पास हसि मूँडी धुनी। कहा बकत है परयो मंद मति। बाहत सोफि सीतला की गति ॥ ९ ॥ ॥ छंद ॥ अमल पियहि छितिपराज अधि इसत्रीयन बिहारैं। अमल सूरमा पियहि दुजन सिर खड़ग प्रहारैं। अमल भखहि जोगीस ध्यान जदुपति को धरही। चाखि तवन को स्वाद सूम सोफी क्या करही ॥ १० ॥ ॥ शाह बाच ॥ अमल पियत जे पुरख परे दिन रैनि उघावत। अमल जु धरी न पियहि ताप तिन कह चढ़ि आवत। अमल पुरखु जो पीयै किसु कारज के नाही। अमल खाइ गढ़ रहै म्रितक ह्वै कै घर माही ॥ ११ ॥ ॥ त्रियो बाच ॥ स्याने सोचित रहै राज कौ किये कमावैं। सूम संचि धन रहै सूर दिन एक लुटावै। अमल पिए जसु होइ दान खंडि नहि होनो। अंत गुदा के पैंड सूम सोफी जिय दीनो ॥ १२ ॥ भाँग पुरख वै पियहि भगत हरि की जे करही। भाँग भखत वै पुरख किसू की आस न धरही। अमल पियत ते बीर बरत जिन लिन मसतक पर। ते क्या पीवहि भाँग रहै जिनके तकरी कर ॥ १३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सदा सरोही ऊपर कर जिनको रहै। सिर मो खाइ क्रिपान जु तिह कटु बच कहै। निबूआ

झटकती और हँसती हुई वह उसके पास गई। वह बोली, तुम क्या गधे की तरह बक-बक कर रहे हो? ॥ ९ ॥ ॥ छंद ॥ राजाओं को नशा प्यारा होता है, क्योंकि इसी से वे अधिक स्त्रियों के साथ रमण करते हैं। शूरवीरों को भी यह प्रिय है। इसी से वे दुर्जनों पर खड़ग से प्रहार करते हैं। योगी भी यही नशा खाकर भगवान का ध्यान करते हैं। परन्तु न पीनेवाले कंजूस उसके बारे में क्या कहेंगे? ॥ १० ॥ ॥ शाह उवाच ॥ नशा पीनेवाले दिन-रात ऊँघते हैं और नशा घड़ी भर न मिलने से उन्हें ज्वर-सा हो जाता है। नशेवाला व्यक्ति किसी काम का नहीं होता, क्योंकि वह नशा पीकर मृतक के समान घर में ही पड़ा रहता है ॥ ११ ॥ ॥ त्रिया उवाच ॥ चतुर जानते हैं कि राजा नशा ही करता है। कंजूस एकत्र करते रहते है और शूरवीर एक दिन में ही लुटा देते हैं। नशा पीने से यश होता है और दान खंडित नहीं होता है। न पीनेवालों के प्राण अन्त में गुदा के रास्ते से निकलते हैं ॥ १२ ॥ भाँग वे पीते हैं जो प्रभु की भक्ति करते हैं। भाँग वे पाते हैं जो किसी से कोई आशा नहीं करते। नशा वे पीते है जिन्होंने कोई व्रत ले रखा होता है। वे भला क्या भाँग पिएंगे जो तराजू हाथ में पकड़े रहते है १३ अड़िल्ल जिनका हाथ सदा तलवार पर रहता है और सिर

गंध्रब सभै तिह नर कौ हसि हसि कहहि ॥ १९ ॥ ॥ छंद ॥ सो नर पियत न भाँग रहै कौडी महि जिह चित। सो नर अमल न पियै दान मैं नहि जाको हित। स्यानो अधिक कहाइ काक की उपमा पावहि। अंत स्वान ज्यों मरै दीन दुनिया पछुतावहि ॥ २० ॥ ॥ दोहरा ॥ अंत काक की म्रितु मरैं मन भीतर पछुताँहि। खंडा गह्यो न जस लियो कछू जगत के माँहि ॥ २१ ॥ ॥ शाह बाच ॥ ॥ चौपई ॥ सुन शाहुनि तैं कछू न जानत। सोफिन सौ अमलिन कह ठानत। सोफी रंक दरबु उपजावै। अमली न्रिपहूँ धाम लुटावै ॥ २२ ॥ ॥ त्रियो बाच ॥ ॥ छंद ॥ जे अमलन कह खाइ खता कबहूँ नहि खावैं। मूँडि अवर नहि जाहि आपु कबहूँ न मुँडावैं। चंचलान को चित्त चोर छिन इक महि लेहीं। भाँति भाँति भामिननि भोग भावत मन देहीं ॥ २३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ भजहि बाम कैफियै केल जुग जाम मचावहि। हरिणा जिमि उछलहि नारि नागरिन रिझावहि। सौफी चड़तहि काँपि धरनि ऊपर परैं। हो बीरज खलत ह्वै जाहि कहाँ जड़ रति करैं ॥ २४ ॥ बीरज भूमि गिरि परै तकै मुख बाइकै। निरखि नारि की ओर

ही क्यों ॥ १९ ॥ ॥ छंद ॥ जो व्यक्ति भाँग नहीं पीता और जिसका मन सदैव पैसे में ही लगा रहता है; जो नशा नहीं पीता और दान नहीं करता वह व्यक्ति कौए के समान सयाना तो कहलवाता है, पर अंत में कुत्ते की मौत मरता है और दीन-दुनिया में पछताता है ॥ २० ॥ ॥ दोहा ॥ अंत में कौवे की मौत मरकर वह पछताता है कि न तो मैंने खड्ग पकड़ा और न ही यश अर्जित किया ॥ २१ ॥ ॥ शाह उवाच ॥ ॥ चौपाई ॥ सुन स्त्री, तुम कुछ नहीं जानती हो और सूफियों (न पीनेवालों) से नशे की बात करती हो। सूफ़ी निर्धन भी धन पैदा करता है और नशेड़ी राजा भी घर लुटा देता है ॥ २२ ॥ ॥ स्त्री उवाच ॥ ॥ छंद ॥ जो नशा पीता, खाता है वह कभी धोखा नहीं खाता। वह दूसरों को तो मूढ़ लेता है पर खुद कभी नहीं मूढ़ा जाता। स्त्रियों का चित्त वह एक क्षण भर में चुरा लेता है और भामिनियों को भाँति-भाँति के भोग-क्रियाएँ देता है ॥ २३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ नशा पीनेवाले स्त्रियों के साथ रमण करते दो प्रहर तक केलिक्रीड़ा करते रहते हैं और हिरणके समान उछल-उछल कर नारियों को रिझाते हैं। सूफी तो प्रारम्भ करते ही काँप कर धरती पर आ गिरते हैं वे स्खलित हो जाते हैं वे मूर्ख भला रतिक्रिया क्या करेंगे २४ वीर्यपात होने पर वे मुँह फैलाकर देखते रहते हैं और स्त्री

रहै सिर न्याइकै । शरमनाक (मू०ग्रं०११६१) ह्वै हिदै बचन हसि हसि कहै । हो कामकेल की समैं न पसु कौडी लहै ॥ २५ ॥ तमकि साँग संग्रहहि तुरै पर दलहि नचावै । टूक टूक ह्वै गिरहि तऊ सामुहि हथि धावैं । असि धारन लग जाहि न चितहि डुलावहीं । हो ते नर बरत बरंगनि सुरपुर पावहीं ॥ २६ ॥ सुक्रित सुघर जिन आइ जगत मै जस कौ पायो । बहुरि खलन कह खंडि खेत जै शबद कहायो । अमल पान सुभ अंग धनख सर जिन लयो । हो सो नर जीवत मुकति जगत भीतर भयो ॥ २७ ॥ कबहूँ न खाए पान अमल कबहूँ नहि पीयो । कबहूँ न खेल अखेटन सुख सुरधन कह दीयो । कबहूँ न सौंधा लाइ राग मन भाइयो । हो कर्यो न भामिन भोग जगत क्यों आइयो ॥ २८ ॥ नाद गंध सुभ इसत्रिन जिन नर रस लिए । अमल पान आखेट द्रुजन दुखित किए । साधु सेवि सुभ संग भजत हरि जू भए । हो ते दै जस दुंदभी जगत याते गए ॥ २९ ॥ चतुरि नारि बहु भाँति रही समुझाइ करि । मूरख नाह न समुझ्यो उठ्यो रिसाइ करि । गहिकै

को निहार सिर नीचा किए रहते हैं। मन में शर्म खाकर परन्तु ऊपर से हँस-हँसकर बातें करते हैं और वे पशु कामकेलि की रीति को तनिक भी नहीं जानते ॥ २५ ॥ वे तमककर भाला पकड़ते हैं और घोड़े को पराई फौज पर नचाते हैं। टुकड़े-टुकड़े होकर भी गिर जायँ तो भी सामने की तरफ़ ही दौड़ते जाते हैं। तलवार धारण करते समय ज़रा भी चित्त को नही डुलाते। वे ही व्यक्ति अप्सराओं का वरण कर स्वर्ग जाते हैं ॥ २६ ॥ जिसकी अच्छे काम करनेवाले सुघड़ व्यक्ति ने संसार में यश प्राप्त किया और अनेकों दुष्टों को मारकर जय-जयकार करवाया। उसने ही नशे का सेवन कर धनुष-बाण पकड़ा है और वही व्यक्ति संसार में जीवन-मुक्त हो गुजरा है ॥ २७ ॥ जिसने कभी पान नहीं खाया, कभी नशा नहीं किया, कभी आखेट खेलकर देवगणों को प्रसन्न नहीं किया, कभी राग में रस नहीं लिया और स्त्री से रमण वह भला इस जगत में क्यों आया ॥ २८ ॥ नाद में, गंध में, और अच्छी स्त्रियों में जिसने रस लिया; नशा किया, आखेट किया और दुर्जनों को दु खी किया; जिसने साधु-सेवा की और शुभ संगत की, हरि का स्मरण किया वे इस संसार में यश की दुंदुभि बजाकर ही गए हैं ॥ २९ ॥ वह चतुर स्त्री अनेकों प्रकार से समझाती रही पर मूख पति समझा नही और क्रुद्ध हो उठा

तरुनि तुरंत तरलता जन मर्‌यो । हो तब त्रिय ठाड चरित तही इह बिधि कर्‌यो ॥ ३० ॥ छित पर खाइ पछार परी मुरछाइ करि । हाइ हाइ कहि शाहु लई उर लाइ करि । लाख लहे तुम बचे कहो क्या कीजियै । हो कह्‌यो त्रिप सहित भोजन सभ कह दीजियै ॥ ३१ ॥ ॥ दोहरा ॥ शाहु तबै भोजन करा नाना बिधन बनाइ । ऊच नीच राजा प्रजा सभही लए बुलाइ ॥ ३२ ॥ ॥ चौपई ॥ पाँति पाँति लोगन बैठायो । भाँति भाँति भोजनहि खवायो । इतै त्रिपति सौ नेह लगाइसि । बातन सौ ताकौ उरझाइसि ॥ ३३ ॥ ॥ दोहरा ॥ भोजन तिनै खवाइयो भाँग भोज मै पाइ । राजा को पति के सहित छल सौ गई सुवाइ ॥ ३४ ॥ भाँगि खाइ राजा जग्यो सोफी भयो अचेत । मित्र भए तिह नारि को तब ही बन्यो संकेत ॥ ३५ ॥ ॥ चौपई ॥ लोग जिवाइ बचन इमि भाखा । सिगरो दिवस राइ हम राखा । साँझ परे राजा घर ऐहै । तुमहूँ तबै बुलाइ पठैहै ॥ ३६ ॥ ॥ भुजंग छंद ॥ मिल्यो जान प्यारा लगे नैन ऐसे । मनो फाँध फाँधे म्रिगी राट जैसे । लयो मोहि राजा मनो मोल (मू०ग्रं०११६२) लीनो ।

उसने लोहे की छड़ से उसे पीटा और उस स्त्री ने भी तत्क्षण एक प्रपंच किया ॥ ३० ॥ वह मूर्च्छित होकर धरती पर पछाड़ खाकर गिर पड़ी । शाह ने "हाय-हाय" कहकर उसे उठा सीने से लगा लिया । तुम बच जाओ और बताओ मैं क्या करूँ ? तो उसने कहा कि राजा-समेत सबको भोजन खिलाओ ॥ ३१ ॥ ॥ दोहा ॥ शाह ने तब नाना प्रकार का भोजन बनवाया और ऊँच-नीच, राजा-प्रजा सबको बुला लिया ॥ ३२ ॥ ॥ चौपाई ॥ पंक्तियों में सबको बैठाया और भाँति-भाँति का भोजन खिलाया । यहाँ उसने राजा से नेह लगा लिया और उसे बातों में उलझा लिया ॥ ३३ ॥ ॥ दोहा ॥ भोज में भाँग डालकर उन्हें भोजन खिलाया और इस प्रकार राजा को पति-समेत छल से सुला दिया ॥ ३४ ॥ भाँग खाकर राजा तो जागता रहा पर वह शाह (सूफी) अचेत हो गया । तब उस मित्र बनी नारी में इशारा हुआ ॥ ३५ ॥ ॥ चौपाई ॥ लोगों को खिलाकर यह कहा कि आज सारा दिन राजा को यहीं रखा जायगा । राजा संध्या को घर आयगा, तब तुम लोगों को फिर बुला लिया जायगा ॥ ३६ ॥ ॥ भुजंग छंद ॥ वह प्राण-प्यारा मिला और उससे ऐसी अँखियाँ लगीं मानों मृगों का राजा हिरण फाँस में फँस गया हो । राजा को ऐसे मोह लिया मानो उसे मोल न लिया हो और तब उसने स्त्री स

तही भावतो भामनी भोग कीनो ॥ ३७ ॥ रह्यो शाहु डार्यो कछू न बिचार्यो । मनो लात के साथ शैतान मार्यो । पसूहा न भाखै उठै ना उघावै । इतै नारि कौ राज बाँको बजावै ॥ ३८ ॥ ॥ दोहरा ॥ शाहु पालकी कै तरे बाँधि डारि करदीन । जु कछु धाम महि धन हुतो घालि तिसीमहि लीन ॥ ३९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ आपु दौरि ताँही पर चढ़ी बनाइकै । रमी त्रिपति के साथ अधिक सुख पाइकै । लै नारी कह राइ आपने घर गयो । हो सूम सोफियहि बाँधि पालकी तर लयो ॥ ४० ॥ जब पहुचे दोऊ जाइ सुखी ग्रहि नारि नर । कह्यो कि देहु पठाइ पालकी शाहु घर । बधे शाहु तिह तरे तहीं आवत भए । हो जह राजा धन सहित बाल हरि लै गए ॥ ४१ ॥ ॥ चौपई ॥ बीती रैनि भयो उजिआरा । तबै शाहु दुहूँ द्रिगन उघारा । मोहि पालकी तर किह राखा । बचन लजाइ ऐस बिधि भाखा ॥ ४२ ॥ मैं जु कुबोल नारि कह कहे । ते बच बसि वाँके जिय चहे । लछमी सकल नारि जुत हरी । मोरी बिधि ऐसी गति करी ॥ ४३ ॥ ॥ कबियो बाच ॥ ॥ दोहरा ॥ फलत भाग ही

मनचाहा रमण किया ॥ ३७ ॥ शाह तो गिरा रहा और कुछ भी न विचार सका । वह ऐसे पड़ा था मानों शैतान को लातें मारकर गिरा फेंका हो । वह पशु न तो बोल रहा था और न ही ऊँघ रहा था और इधर स्त्री को बाँका राजा भोग रहा था ॥ ३८ ॥ ॥ दोहा ॥ शाह को पालकी के नीचे बाँध लिया और जो कुछ घर में धन-दौलत थी, उसे उसी में डाल लिया ॥ ३९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ आप दौड़कर उसी पर जा चढ़ी और अत्यधिक सुखपूर्वक राजा के साथ रमण किया । स्त्री को लेकर राजा अपने घर ले गया और उस कंजूस सूफी (न पीनेवाले) को पालकी के नीचे बाँध दिया ॥ ४० ॥ जब दोनों स्त्री-पुरुष सुखपूर्वक अपने घर पहुँच गए तो उन्होंने कहा कि पालकी को शाह के घर वापस भेज दो । शाह उसी के नीचे बंधा वहीं आ गया जहाँ से राजा धन-समेत स्त्री का हरण करके ले गया था ॥ ४१ ॥ ॥ चौपाई ॥ रात बीती और जब उजाला हुआ तो शाह ने दोनों आँखें खोलीं । वह लज्जित हो कहने लगा कि मुझे पालकी के नीचे किसने रखा है ? ॥ ४२ ॥ मैंने जो दुर्वचन स्त्री से कहे वे ही उसके हृदय में लग गये । स्त्री-समेत मेरी सम्पदा का हरण हो गया; विधाता ने मेरी ऐसी गति बना दी ॥ ४३ ॥ ॥ कवि उवाच ॥ दोहा कोई कुछ कर ले पर हमेशा भाग्य ही फलित होता है ।

सरबदा करो कैसियै कोइ । जो ब्रिधना मसतक लिखा अंत तैसियै होइ ।। ४४ ।। ।। अड़िल्ल ।। सुधि पाई जब शाहु न्याइ मसतक रह्यो । दूजे मनुखन पास भेद मुख तै कह्यो । भेद अभेद को बात चीनि पसु ना लई । हो लख्यो दरबु लै न्हान तीरथन कौ गई ।। ४५ ।। १ ।।

।। इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ पैंतालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ।। २४५ ।। ४६०७ ।। अफजूं ।।

अथ दो सौ छयालीस चरित्र कथनं ।।

।। चौपई ।। पूरब दिसि इक तिलक न्रिपत बर । भानमंजरी नारि तवन घर । चित्तबरन इक सुत ग्रहि वाके । इंद्र चंद्र छबि तुल्ल न ताके ।। १ ।। ।। अड़िल्ल ।। जे तरुनी न्रिप सुत की प्रभा निहारईं । लोक लाज तजि तन मन धन कह वारईं । बिरह बान तन बिधो मगध ह्वै झूलहीं । हो मात पिता पति सुत की सभ सुध भूलहीं ।। २ ।। ।। दोहरा ।। छेम करन इक शाहु को सुता रहै सुकुमारि । उरझि रही मन मै धनो निरखत राज दुलारि ।। ३ ।।

विधाता ने जो माथे पर लिख दिया वही अंत में होना है ।। ४४ ।। ।। अड़िल्ल ।। शाह को जब पूरा पता लग गया तो वह सिर झुकाकर रह गया और उसने दूसरे किसी व्यक्ति को भी भेद नहीं कहा । वह पशु भेद-अभेद के रहस्य को न समझ सका और उसने मान लिया कि वह द्रव्य लेकर तीर्थ नहाने गई है ।। ४५ ।। १ ।।

।। श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ पैंतालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ।। २४५ ।। ४६०७ ।। अफजू ।।

दो सौ छियालीसवां चरित्र-कथन

।। चौपाई ।। पूर्व दिशा में तिलक नामक एक श्रेष्ठ राजा था, जिसकी स्त्री भानुमंजरी थी । उसके घर चित्रवरण एक पुत्र था जिसकी छवि के तुल्य इन्द्र भी नहीं था ।। १ ।। ।। अड़िल्ल ।। जो स्त्री राजा के पुत्र का रूप देखती वह लोक-लाज को त्याग उस पर तन-मन-धन न्योछावर कर देती थी । वह विरह-बाण से बिधकर मुग्ध हो झूम उठती थी और माता पिता-पति आदि सबकी होश खो देती थी ।। २ ।। ।। दोहा ।। एक शाह की पुत्री क्षमकरण नामक

॥ अड़िल्ल ॥ स्वरनिमंजरी (मू०ग्रं०११६३) अटकी कुअर निहारि करि । रुकममंजरी सहचरि लई हकारि करि । निजु मन को तिह भेद सकल समझाइकै । हो चित्रबर न्रिप सुत पहि दई पठाइकै ॥ ४ ॥ निज नारी मुहि कर्यो कुअरि कह आइ करि । भाँति भाँति सौ भजे परम सुख पाइ करि । भूप तिलक की कानि न चित महि कीजियै । हो मनसा पूरन मोरि सजन करि दीजियै ॥५॥ ॥ कुअर बाच ॥ ॥ चौपई ॥ इक ठाँ सुने अनूपम हम हैं । शेरशाहि लीने द्वै है हैं । राहु सुराहु नाम हैं तिनके । अंग सुरंग बने हैं जिनके ॥ ६ ॥ जौ ताँते द्वै है हरि ल्यावै । बहुरि आइ मुरि नारि कहावै । तब हम शंक त्याग तुहि बरही । भूप तिलक की कानि न करही ॥ ७ ॥ शाहु सुता जब यौ सुनि पावा । चंडारिनि को भेस बनावा । कर मो धरत बुहारी भई । शेरशाहि के महलन गई ॥ ८ ॥ ॥ दोहरा ॥ हजरति के घर मो धसी ऐसो भेस बनाइ । राहु सुराहु जहाँ हुते तही पहूँची जाइ ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ बँधे हुते जह द्वैहै झरोखा के तरै । जहाँ न चीटी पहुचै पवन न संचरै । तही तरुनि इह भेस पहुची जाइ करि । हो अरध

थी । वह राजकुमार को देखकर मन ही मन उससे उलझ गई ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ स्वर्णमंजरी राजकुमार को देखकर उसी में अटक गयी और उसने रुकममंजरी नामक सहचरी को पुकारकर बुलाया । उसे मन का सारा भेद समझाकर राजा के पुत्र चित्रवर के पास भेज दिया ॥ ४ ॥ मुझे आकर अपनी स्त्री बनाओ और विभिन्न प्रकार से मेरे साथ रमण करो । राजा तिलक की परवाह मत करो और हे सजन !मेरी इच्छा पूरी कर दो ॥ ५ ॥ ॥ कुँवर उवाच ॥ ॥ चौपाई ॥ हमने एक जगह सुना है कि शेरशाह के पास दो अनुपम घोड़े हैं । उनका नाम राहु और सुराहु है और उनके अंग-प्रत्यंग अत्यन्त सुन्दर बने हैं ॥ ६ ॥ यदि तुम वहाँ से दोनों घोड़ों को चुरा लाओ, तब आकर मेरी स्त्री कहलाओ । तब मैं निस्संकोच तुम्हारा वरण करूँगा और राजा तिलक की परवाह नहीं करूँगा ॥ ७ ॥ शाह की पुत्री ने जब यह सुना तो चांडालिन की पुत्री का वेश बनाया । हाथ में झाड़ लिया और शेरशाह के महलों में जा पहुँची ॥ ८ ॥ ॥दोहा॥ बादशाह के महल में यह वेश बनाकर घुस गई और वहाँ आ पहुँची जहाँ राहु-सुराहु बँधे थे ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ वे वहाँ झरोखे के नीचे बँधे थे जहाँ न तो चींटी पहुँच सकती थी और न हवा ही जा सकती थी । वहीं यह तरुणी वेश बदलकर जा पहुँची और आधी रात के समय घोड़ा खोल

रात्रि भै छोरा बाज बनाइ करि ॥ १० ॥ ॥ चौपई ॥ छोरि अगारि पछारि उतारी । आनन बिखै लगामी डारी । ह्वै असवार चाबुकिक मारिसि । शाहु झरोखा भए निकारिसि ॥ ११ ॥ ॥ दोहरा ॥ शाह झरोखा के भए परी तुरंग कुदाइ । शंका करी न जान की परी नदी मो जाइ ॥ १२ ॥ ॥ चौपई ॥ झरना महि ते बाज निकारिसि । गहिरी नदी बिखै लै डारिसि । जिय अपने का लोभ न करा । इह छल राहु अस्व कह हरा ॥ १३ ॥ जब बाजी हजरति को गयो । सभहिन को बिसमै जिय भयो । जहाँ न सकत प्रवेस पवन करि । तह ते लयो तुरंगम किन हरि ॥ १४ ॥ प्रात बचन हजरति इम कियो । अभै दान चोरहि मै दियो । जो वह मोकह बदन दिखावै । बीस सहस्र अशरफी पावै ॥ १५ ॥ अभै दान ताकौ मै द्यायो । खाई सपत कुरान उचायो । तब त्रिय भेस पुरख को धरा । शेरशाह कह सिजदा करा ॥ १६ ॥ ॥ दोहरा ॥ पुरख भेख कह पहिर त्रिय भूखन सजे सुरंग । शेरशाह सौ इमि कहा मै तव हरा तुरंग ॥ १७ ॥ (पृ०पं०११६४) ॥ चौपई ॥ जब हजरति ताकौ लखि लयो । हरखत भयो

दिया ॥ १० ॥ ॥ चौपाई ॥ इसने आगे की तरफ़ को छोड़कर उसे पीछे की ओर उतारा और मुँह में लगाम डाल दी । सवार होकर उसे चाबुक मारी और शाह के झरोखे से उसे निकाल लिया ॥ ११ ॥ ॥ दोहा ॥ शाह के झरोखे से उसने घोड़ा कुदाया और जान की परवाह न करते हुए, नदी में आ पडी ॥ १२ ॥ ॥ चौपाई ॥ झरने में से घोड़ा निकालकर उसने गहरी नदी मे डाल दिया । अपने प्राणों का लालच नहीं किया और इस प्रकार राहु नामक अश्व को चुरा लिया ॥ १३ ॥ जब बादशाह का घोड़ा चला गया तो सबको आश्चर्य हुआ । जहाँ हवा भी नहीं प्रवेश कर सकती है, वहाँ कौन आकर घोड़ा ले गया ॥ १४ ॥ प्रातः राजा ने कहा कि मैं चोर को अभय दान देता हूँ । यदि वह मुझे आकर अपना मुँह दिखाए तो मैं उसे बीस हजार अशर्फ़ी दूँगा ॥ १५ ॥ उसने अभयदान और क़ुरान उठाकर क़सम खाई ; तब उस स्त्री ने पुरुष-वेश धारण किया और शेरशाह को प्रणाम किया ॥ १६ ॥ ॥ दोहा ॥ अंगों पर गहने और पुरुष-वेश धारण कर उस स्त्री ने शेरशाह से कहा कि मैंने तुम्हारा घोडा चुराया है ॥ १७ ॥ ॥ चौपई जब बादशाह ने उसे देखा तो क्रोध मिटाकर प्रसन्न हो उठा

कोप मिटि गयो। निरखि प्रभा उपमा बहु कीनी। बीस सहस्र अशरफी दीनी ॥ १८ ॥ ॥ दोहरा ॥ हसि हजरति ऐसे कहा सुनु तसकर सुंद्रंग। सो बिधि कहो बनाइ मुहि किह बिधि हरा तुरंग ॥ १६ ॥ ॥ चौपई ॥ जब अबला आइसु इमि पावा। मुहर राखि मेखन लै आवा। सरिता मो त्रिण गूल बहाइसि। रच्छपाल ता पर ठहक्काइसि ॥ २० ॥ ॥ दोहरा ॥ बहुरि नदी भीतर परी जात भई तरि पारि। शाहि झरोखा के तरे लागत भई सुधारि ॥ २१ ॥ ॥ चौपई ॥ जब घरियारी घरी बजावै। तब वह मेखिक तहाँ लगावै। बीता दिवस रजनि बडि गई। तब त्रिय तहाँ पहूचत भई ॥ २२ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तैसहि छोरि तुरंग झरोखा बीच करि। जल मो परी कुदाइ जात भी पार तरि। सभ लोकन कौ कौतक अधिक दिखाइकै। हो शेरशाह सौ बचन कहे मुसकाइकै ॥ २३ ॥ इही भाँति सो प्रथम बाज मुरि कर पर्‌यो। दुतिय अस्व तव निरखत इह छल सौ हर्‌यो। शेरशाहि तब कह्यो कहा बुधि को भयो। हो राहा थो जहा तही सु राहा हूँ गयो ॥ २४ ॥ शाह सहित सभ लोग चरित्र बिलोकि बर। दाँत दाँत सो काटि कहै है दयो कर। कहैं

उसकी शोभा को देखकर उसकी प्रशंसा की और उसे बीस हज़ार अशर्फ़ियाँ प्रदान कीं ॥ १८ ॥ ॥ दोहा ॥ तब बादशाह नें हँसकर कहा कि हे सुदृढ़ अगों वाले चोर! मुझे बताओ कि तुमनें यह घोड़ा कैसे चुराया? ॥ १६ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब स्त्री ने यह आज्ञा सुनी तो मुहरों को रखकर वह कील ले आई। नदी में सरकंडे बाँधकर बहा दिये और-उन पर रक्षक तैनात कर दिया ॥ २० ॥ ॥ दोहा ॥ फिर नदी में कूदकर पार चली गई और बादशाह के झरोखे के नीचे जा लगी ॥ २१ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब घड़ियाल घंटा बजाता था तो उसी क्षण यह कील ठोंकती थी। दिन बीत गया और रात हो गई तब यह स्त्री वहाँ पहुँच गई ॥ २२ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तब वैसे ही घोड़ा छोड़कर झरोखे में से कूदकर वह तैरकर नदी पार पहुँच गई। सब लोगों को कौतूहल में भर कर उसने शेरशाह से मुस्कुराकर कह सुनाया ॥ २३ ॥ इसी तरह से पहला घोड़ा मेरे हाथ लगा था और दूसरा घोड़ा तुम्हारे देखते-देखते मैंने छल से हर लिया है। शेरशाह ने तब कहा कि मेरी बुद्धि को भला क्या हो गया जहाँ राहु गया था सुराहु भी वहीं चला गया ॥ २४ ॥ बादशाह समेत सभी इस चरित को देखकर दाँतो से अपने हाथ काटकर रह

हमारी मतिहि कवन कारन भयो । हो राहा तसकर हर्‌यो सुराहा हम दयो ॥ २५ ॥ ॥ दोहरा ॥ स्वरनमंजरी बाज हरि मित्रहि दए बनाइ । चित्र बरन सुत त्रिप बरा ह्रिदै हरख उपजाइ ॥ २६ ॥ भाँति भाँति ताँको भजै ह्रिदै हरख उपजाइ । शेरशाहि दिलीस कह त्रिया चरित्र दिखाइ ॥ २७ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ छयालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २४६ ॥ ४६३४ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ सैंतालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बीरतिलक इक त्रिपति बिचच्छन । पुहपमंजरी नारि सुलच्छन । तिनकी हम ते कहि न परत छबि । रति तिह रहत निरखि रति पति दबि ॥ १ ॥ स्री सुरतान सिंघ तिह पूता । जनु बिधि गढ़ा दुतिय पुरहूता । जब वहु तरुन भयो लखि पायो । तब पित ताको ब्याह रचायो ॥ २ ॥ काशमीर इक त्रिपति रहत बल । रूप (मू०ग्रं०११६५) मान धनमान रणाचल । ताके धाम सुता इक सुनी । सकल

गए। यह हमारी बुद्धि को क्या हो गया कि शाहु तो चोर ने चुराया और सुराहु हमने खुद उसे दे दिया ॥ २५ ॥ ॥ दोहा ॥ स्वर्णमंजरी ने घोड़े चुरा कर मित्र को दिए और चित्रवरण ने भी उसका हर्ष-सहित वरण किया ॥ २६ ॥ शेरशाह दिल्लीश्वर को स्त्री ने प्रपंच दिखाकर चित्रवरण के साथ विभिन्न प्रकार से सुखपूर्वक रमण किया ॥ २७ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ छियालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २४६ ॥ ४६३४ ॥ अफजू ॥

दो सौ सैंतालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ वीरतिलक एक विलक्षण राजा था, जिसकी सुलक्षणा रानी पुष्पमंजरी थी। उसकी छवि का वर्णन मैं नहीं कर पा रहा हूँ, रति उसे कामदेव के रूप में देखा करती थी ॥ १ ॥ सुल्तान सिंह उसका ऐसा पुत्र था जिसे मानों विधि ने दूसरा इन्द्र बनाया हो। जब पिता ने उसे जवान होते देखा तो उसका ब्याह रचाया ॥ २ ॥ काश्मीर में एक बलशाली राजा था जो रूप मान धन में और युद्ध करने मे अडिग एव महान था उसके घर

गुनन के भीतर गुनी ॥ ३ ॥ बोलि द्विजंबरन्न घरी सुधाई । न्रिप सुत के संग करी सगाई । अधिक सु दरबु पठै दिय ताकौ । ब्याह बिचारि बुलायो वाकौ ॥ ४ ॥ सुता को ब्याह जबै तिन दियाइसि । हाट पाट बस्त्रन सभ छाइसि । घर घर गीत चंचला गावत । भाँति भाँति बाद्रित्त बजावत ॥ ५ ॥ सकल ब्याह की रीति करहि ते । अधिक दिजन कह दान करहि वे । जाचक सभै भूप ह्वै गए । जाचत बहुरि न काहू भए ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ सकल रीति करि ब्याह की चढ़े जनेत बनाइ । भाँति भाँति सो कुअर बलि प्रभा न बरनी जाइ ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ काशमीर भीतर पहुचे जब । बाजन लगे बदित्र अमित तब । नाचत पात्र अपार अनूपा । कंचनि हुरकुनि रूप सरूपा ॥ ८ ॥ हाट पाट सभ बस्त्रन छाए । अगर चंदन भे मगु छिरकाए । सभ घर बाँधी बंधन वारै । गावत गीत सुहावत नारै ॥ ९ ॥ अगुआ लेन अगाऊ आए । आदर सौ कुअरहि ग्रहि ल्याए । भाँति भाँति ले करैं बडाई । जानुक राँकनि धनि निधि पाई ॥ १० ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तब जस

में एक पुत्री सुनी जाती थी जो समस्त गुणों से युक्त थी ॥ ३ ॥ ब्राह्मणों को बुलाकर मुहूर्त निकलवाया और राजा के पुत्र के साथ उसकी सगाई करा दी । उसे अत्यधिक द्रव्य दिया और विवाह के लिए आमंत्रित किया ॥ ४ ॥ जिस दिन उसने पुत्री का विवाह निश्चित किया उस दिन सारे घर, बाजार आदि सजा दिए । घर-घर में स्त्रियाँ गीत गाने लगीं और भाँति-भाँति के वाद्य बजानें लगीं ॥ ५ ॥ उन्होंने विवाह की समस्त रीतियों को निभाया और द्विजों को अत्यधिक दान दिया । सभी भिखारी (दान पाकर) राजा बन गए और द्विजों को दान देने लगे ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ विवाह की समस्त रस्में पूरी करके बारात बनाकर चल पड़े । कुँवरों ने भाँति-भाँति से अपने-आपको सजाया । शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब वे काश्मीर में पहुँचे तो अनेकों वाद्य बजने लगे । स्वर्णमयी सुन्दर स्वरूपों वाली वेश्याएँ नाचने लगीं ॥ ८ ॥ गली-बाजारों को वस्त्रों से सजाया गया और मार्ग पर इत्र-चन्दन की सुगन्धियाँ छिड़की गईं । सभी घरों पर बंदनवार बाँधे गए और सुन्दर स्त्रियाँ सुन्दर गीत गाने लगीं ॥ ९ ॥ अगवानी करनेवाले आगे आये और आदरपूर्वक कुँवर को घर ले गये । वे भाँति भाँति से बडाई करनें लगे ऐसे लग रहे थे मानो निर्धनों को कोई निधि हाथ लग गई हो १० अड़िल्ल तब धर्मा को

तिलकमंजरी लई बुलाइकै। ब्याह दई न्रिप सुत के साथ बनाइकै। दाज अमित धन दियो बिदा करिकै दए। हो बिरजबती नगरी प्रति ते आवत भए॥ ११ ॥ ॥ चौपई ॥ एक शाह के सदन उतारे। ग्रहि जैहैं लखिहै जब तारे। कुअरि शाह को पूत निहारा। तिह तन तानि मदन सर मारा॥ १२ ॥ ॥ दोहरा ॥ निरखित रही लुभाइ छबि मन मै किया बिचार। न्रिप सुत संग न जाइ हौ इहै हमारो यार॥ १३ ॥ ॥ चौपई ॥ बोलि लिया ताको अपुने घर। रति मानी तासौ हसि हसि करि। आलिंगन चुंबन बहु लए। बिबिध बिधन सौ आसन दए॥ १४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ बिहसि बिहसि दोऊ कुअर कलोलन कौ करै। बिबिध बिधन कोकन के मत कौ उच्चरै। भाँति भाँति के आसन करहि बनाइकै। हो लपटि लपटि दोऊ जाँहि परम सुख पाइकै ॥ १५ ॥ केल करत स्वै जाँहि बहुरि उठि रति करै। भाँति भाँति चातुरता मुख ते उच्चरै। तरुन तरुनि जब मिलै न कोऊ (मू०ग्रं०११६६) हारही। हो बेद शास्त्र सिम्रिति इह भाँति उचारही॥ १६ ॥ ॥ त्रिया बाच ॥ ॥ चौपई ॥ मै न न्रिप सुत के संग जैहौ। बिनु

बुलाया गया और राजपुत्र के साथ उसका भली प्रकार विवाह कर दिया गया। दहेज और अपरिमित धन देकर उन्हें विदा किया और वे वीर्यवती नगरी से चल पड़े॥ ११ ॥ ॥ चौपाई ॥ उन्हें एक शाह के घर में ठहराया गया ताकि वे जब तारा दिखाई दे तो शुभ मुहूर्त में घर जा सकें। कुँवरि ने शाह के पुत्र को देखा और काम-बाण से कामासक्त हो गई॥ १२ ॥ ॥ दोहा ॥ उसकी छवि को देखकर वह लुब्ध हो उठी और उसने विचार किया कि यही मेरा मित्र है, मैं राजा के पुत्र के साथ नहीं जाऊँगी॥ १३ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसे अपने घर बुलाया और हँस-हँसकर उसके साथ रतिक्रिया की। बहुत से आलिगन-चुंबन लिये और त्रिविध प्रकार से उसे आसन दिये॥ १४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ दोनों तरुण हँस-हँसकर किल्लोल करने लगे और कोक के मत पर विचार-विमर्श करने लगे। भाँति-भाँति के आसन करने लगे और सुख-पूर्वक लिपट-लिपटकर एक-दूसरे मे मिलने लगे॥ १५ ॥ केलिक्रीड़ा करते सो जाते थे, फिर उठकर रतिक्रिया करने लग जाते थे और भाँति-भाँति से चातुर्य-पूर्ण वचन मुख से बोलते थे। तरुण को जब तरुण मिलता है तो कोई भी नही हारता है यह वेद शास्त्र और स्मृतियो का भी मत है १६ त्रिया उवाच चौपाई मै राजा के पुत्र के साथ नही जाऊँगी और बिना दामों के ही

बामन इह हाथ बिकैहौ । धाइ सुता तब कुअर हकारी । तवन पालकी भीतर डारी ॥ १७ ॥ दिवसराज असताचल गयो । प्राची दिसि ते ससि प्रगटयो । न्रिप सुत भेद पछान्यो नाही । तारन की समझी परछाही ॥ १८ ॥ अनत त्रिया कौ लै ग्रहि गयो । भेद न पसु पावत कछु भयो । धाइ भेद सुनिअति हरखानी । मोरी सुता करी बिधि रानी ॥ १९ ॥ ॥ दोहरा ॥ राजकुअरि सुत शाह के सदन रही सुख पाइ । घाल पालकी धाइ की दुहिता दई पठाइ ॥ २० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ सैंतालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २४७ ॥ ४६५४ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ अठतालीस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ नदी नरबदा को रहै न्रिपति चित्ररथ नाम । देस देस के एस जिह जपत आठहूँ जाम ॥१॥ ॥चौपई॥ चित्र-मंजरी ताकी त्रिय बर । जानुक प्रभा बिपति किरणाधर । चारि पुत्र ताके सुंदर अति । सूरबीर बलवान

इन (तुम्हारे) हाथों बिक जाऊँगी। तब कुँवरि ने अपनी धाय की पुत्री को बुलाया और उस पालकी में उसे डाल दिया ॥ १७ ॥ सूर्य अस्त हो गया और पूर्व दिशा से चन्द्रमा भी प्रकट हो गया। राजा के पुत्र ने भेद नहीं पहचाना और तारों की परछाईं का अनुभव किया ॥ १८ ॥ वह अन्य स्त्री को घर ले गया और मूर्ख कुछ भी भेद नहीं समझ सका। धाय को जब यह पता लगा तो वह खुश हो गई कि मेरी पुत्री को विधाता ने रानी बना दिया है ॥ १९ ॥ ॥ दोहा ॥ राजकुमारी शाह के घर सुखपूर्वक रहने लगी और उसने धाय की पुत्री को पालकी में डालकर रवाना कर दिया ॥ २० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद के दो सौ सैंतालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २४७ ॥ ४६५४ ॥ अफजूं ॥

दो सौ अडतालीसवाँ चरित्र-कथन

बिकट मति ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ चित्रकेत बचित्र धुज ससिधुज रविधुज सूर । जिनके धनुख टंकोर धुनि रहत जगत मै पूर ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ नवल शाह इक रहत नगर तिह । ससि आभावति दुहिता घर जिह । अमित प्रभा जनियत जाकी जग । सुर आसुर थकि रहत निरख मग ॥४॥ ॥दोहरा॥ चारि पुत्र जे त्रिपति के ताकी प्रभा निहारि । रीझि रहत भे चित्त बिखै मन क्रम बचन बिचारि ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ त्रिप सुत दूतिक तहाँ पठाइसि । भाँति भाँति तिह तियहि भुगाइसि । इही भाँति चारौ उठि धाए । चारों चलि ताँके ग्रहि आए ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ शाह सुता अति पतिब्रता अधिक चतुर मतिवान । जारहु पठ्यो संदेस लिखि चित चरित्र इक आन ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ जुदो जुदो लिखि चहुँन पठायो । किस को भेद न किसू जतायो । सखी भए इह भाँति सिखाइसि । राजकुमारन बोलि पठाइसि ॥ ८ ॥ ॥ शाहु सुता बाच सखी सो ॥ ॥दोहरा॥ जिमि (मू०ग्रं०११६७) जिमि त्रिप सुत आइहैं उत्तम भेख सु धारि । तिमि तिमि पगन खराक तैं कियो मेरै द्वार ॥ ९ ॥ प्रथम पुत्र जब त्रिपति को आयो भेख सु धारि । पाइन को खटको कियो आनि सखी तिह

॥ दोहा ॥ चित्रकेतु विचित्रध्वज, शशिध्वज और रविध्वज ऐसे शूरवीर थे कि उनके धनुष की टंकार की ध्वनि सारे जगत में पूरित हो जाती थी ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ उस शहर में नवलशाह रहता था जिसकी पुत्री चन्द्रमा की आभा के समान थी । संसार में उसकी अपरिमित प्रभा जानी जाती थी और देव-दानव भी उसका रास्ता देखते थक जाते थे ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा के चारों पुत्र उसकी प्रभा को देखकर मन-वचन-कर्म से उस पर मोहित थे ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजा के पुत्रों ने एक दूत उसके पास भेजा जिसने विभिन्न प्रकार से उनको उस स्त्री के साथ रमण करवाया । चारों उठे और उसके घर आ पहुँचे ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ शाह की पुत्री अत्यन्त पतिव्रता और चतुर थी । उसने एक प्रपंच बनाकर चारों को सँदेशा लिखकर भिजवा दिया ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ चारों को अलग-अलग लिख भेजा और किसी का भेद किसी को नहीं बताया । उसने सखी को इस भाँति सिखाया और राजकुमारों को बुलवा लिया ॥ ८ ॥ ॥ शाहसुता उवाच सखी के प्रति ॥ ॥ दोहा ॥ जैसे-जैसे राजा के पुत्र उत्तम वेश धारण कर आएँगे तुम वैसे-वैसे पाँव द्वारा मेरे दरवाज़े पर आवाज़ करना ॥ ९ ॥ राजा का जब पहला लड़का आया तो सखी ने पाँ

द्वार ॥ १० ॥ ॥ चौपई ॥ हाहा पद तब तरुनि उचारो । हाथन कौ छतिया पर मारो । कोऊ आहि द्वार मुरि ठाढा । ताते अधिक त्रास मुहि बाढा ॥ ११ ॥ न्रिप सुत कह्यो जतन इक करो । चारि संदूक हैं इक मै परो । एक संदूक माँझ रहियो दुरि । जैहैं लोक बिलोक बिमुख घर ॥ १२ ॥ इमि संदूक भीतर तिह डारो । दुतिय न्रिपति को पुत्र हकारो । पग खटको सहचरि तब कीनो । दुतिय संदूक डारि तिह दीनो ॥ १३ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल न्रिप के चारि सुत चहूँ संदूकन डारि । तिन पितु ग्रहि प्यानो कियो उतिम भेख सुधारि ॥ १४ ॥ ॥ चौपई ॥ चारि संदूक संग लीने कर । पहुचत भई न्रिपति के दर पर । जब राजा को रूप निहार्‌यो । ताँ पर बारि नदी तिन डार्‌यो ॥ १५ ॥ ॥ दोहरा ॥ वारि संदूक न्रिपाल पर दए नदी मै डारि । सभ छत्रिन छिन मो छला कोऊ न सका बिचार ॥ १६ ॥ ॥ चौपई ॥ धन्य धन्य सभ लोक बखानै । भेद अभेद न मूरख जानै । भूप भगति तिह अधिक बिचार्‌यो । न्रिप पर दरबु इतो जिन वार्‌यो ॥ १७ ॥ तब राजै इह भाँति उचार्‌यो । शाह सुता

से दरवाज़े पर आवाज़ की ॥ १० ॥ ॥ चौपाई ॥ तब तरुणी ने हाय ! हाय ! चिल्लाना शुरू किया और हाथों से छाती पीटना शुरू किया । मेरे दरवाजे पर कोई खड़ा है, इसी से मैं अत्यधिक भयभीत हूँ ॥ ११ ॥ राजा के लड़के से कहा कि तुम एक काम करो, चारों संदूकों में से एक में घुस जाओ । तुम एक संदूक में छिप जाओ, लोग स्वयं ही देखकर विमुख हो लौट जायँगे ॥१२॥ इस प्रकार उसे संदूक में डाला और राजा के दूसरे पुत्र को बुलाया । सहचरी ने फिर पैर की आवाज़ की और दूसरे को भी संदूक में डाल दिया ॥ १३ ॥ ॥ दोहा ॥ इस छल से राजा के चारों पुत्र चार संदूकों में डाल दिये और उत्तम वेश बनाकर उसने उनके पिता के घर की ओर प्रस्थान किया ॥ १४ ॥ ॥ चौपाई ॥ चारों संदूकों को साथ लेकर वह राजा के घर पर जा पहुँची । जब राजा को देखा तो उस ओर से घुमाकर उस पर न्योछावर कर संदूकों को नदी में डाल दिये ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥ संदूक उस पर न्योछावर कर उन्हें नदी में डाल दिया । उसने क्षण भर में क्षत्रियों को छल लिया कोई भी जान न सका ॥ १६ ॥ ॥ चौपाई ॥ सभी धन्य-धन्य कहने लगे और कोई भी मूर्ख भेद-अभेद को न जान सका । राजा ने यह सोचा कि यह कोई परम श्रद्धालु हो जिसने इतना धन न्योछावर कर दिया ॥ १७ ॥ तब राजा ने मंत्री से

जेतो धन वार्यो । छोरि भंडार तितो तिह दीजै । मंत्रन कहा बिलंब न कीजै ॥ १८ ॥ चारि संदूक अशरफी दीनी । शाहु सुता सम ही सो लीनो । न्रिप के चारौ पूत डुबाई । लै धनु अमित बहुरि घर आई ॥ १९ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल सो सुति न्रिपति के चारौ दए डुबाइ । आनि धाम बहुरो बसी ह्रिदै हरख उपजाइ ॥ २० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ अठतालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २४८ ॥ ४६७४ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ उनचास चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बतिसु लच्छन नगर इक सोहै । जाके तट अमरावति को है । सैन सुलच्छन न्रिप तह सुभ मति । सूरबीर बलवान बिकट मति ॥ १ ॥ मंत्रि बिचच्छनि नारि तवनि बर । पढ़ी (मू०ग्रं०११६८) ब्याकरन शास्त्र कोक सर । सोभा अधिक तवन की सोहत । सुर नर नाग असुर मन मोहत ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक शाह को पूत तहाँ सुंदर

यह कहा कि शाह की पुत्री ने जितना धन न्योछावर किया है उसे भंडार खोलकर अविलम्ब दे दिया जाय ॥ १८ ॥ उसे चार संदूक अशर्फ़ियाँ दी गई जिन सबको शाह की पुत्री ने ले लिया । राजा के चारों पुत्र डुबाकर एवं बहुत-सा धन लेकर वह पुनः घर आ गई ॥ १९ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार छल से राजा के चारों लड़के डुबा दिये और सुखपूर्वक अपने घर में आकर बस गई ॥ २० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ अड़तालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २४८ ॥ ४६७४ ॥ अफजूं ॥

दो सौ उनचासवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ बत्तीस लक्षणों में पूर्ण एक नगर था जिसके सामने अमरावती भी क्या है । वहाँ सुलक्षणसेन शुभमति वाला राजा था जो विकट रूप से शूरवीर एवं बलशाली था ॥ १ ॥ विचक्षणमंजरी उसकी सुन्दर स्त्री थी जो व्याकरण, कोकशास्त्र एवं अन्य शास्त्रों की ज्ञाता थी । उसकी अत्यधिक शोभायमान सुन्दरता पर सुर-असुर, नाग, नर सभी मोहित थे ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ शाह का अत्यन्त सुन्दर एक पुत्र वहाँ था जो मानो

घनो। जनु औतार मदन को या जग भो बनो। बितनकेत तिह नाम कुअर कै जानियै। हो जा सम सुंदर अवर न कतहु बखानियै ॥ ३ ॥ नैन हरिन के हरे बैन पिक के हरे। जनुक सानि पर बिसिख दोऊ बाढिन धरे। बिना प्रहारे लगत न काढे जात हैं। हो खटकत हिय के माँझ सदा पिय रात हैं ॥ ४ ॥ निरखि तवन को रूप तरिनि मोहित भई। लोक लाज कुल कानि त्यागि तबही दई। आशिक की त्रिय भाँति रही उरझाइकै। हो सक्यो न धीरज बाँधि सु लियो बुलाइकै ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ भेदि पाइ त्रिय ताहि बुलाइसि। भाँति भाँति भोजनहि खवाइसि। केल करन तासौ चित चहा। लाजि बिसारि प्रगट तिह कहा ॥ ६ ॥ बितनकेत जब यौ सुनि पायो। भोग न कियो नाक ऐठायो। सुनि अबला मैं तोहि न भजिहौ। नारि आपनी कौ नहि तजिहौ ॥७॥ ॥दोहरा॥ जौ उपाइ कोटिक करहु लछिक करहु इलाज। धरम आपनो छाडि तुहि तऊ न भजहौ आज ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ रानी जतन कोटि करि रही। एकै नाँहि मूढ़ तिह गही। कोप भयो त्रिय को जिय भारो। ताको बाँधि भोहरे डारो ॥ ९ ॥ ताकौ

कामदेव का अवतार था। उस कुंवर का नाम बितनकेतु था और उसके समान अन्य कोई भी सुन्दर नहीं बताया जाता था ॥ ३ ॥ उसने नयन हिरण के और वाणी कोयल की चुराई थी। दोनों (नयन) मानों काट डालनेवाले बाण हों। वे बिना चलाए ही आ लगते हैं और फिर बाहर नहीं निकलते। हे प्रिय ! वे दिन-रात हृदय में खटकते रहते हैं ॥ ४ ॥ उसका स्वरूप देखकर तरुणी मोहित हो गयी और उसने समस्त लोकलाज, कुल की मर्यादा का तुरत त्याग कर दिया। वह स्त्री एक आशिक़ की तरह उलझकर रह गई। धैर्य उसे बाँधकर न रख सका और उसने उसे बुला लिया ॥ ५ ॥ ॥चौपाई॥ पता लगाकर स्त्री ने उसे बुलाया और उसे भिन्न प्रकार के भोजन खिलाए। अब उससे रमण करने को मन चाहने लगा। इस इच्छा को उसने लज्जा त्यागकर प्रकट में कह दिया ॥ ६ ॥ बितनकेतु ने जब यह सुना तो भोग नहीं किया और नाक सिकोड़ लिया। हे स्त्री ! सुनो, मैं तुम्हारे साथ रमण नहीं करूँगा और अपनी स्त्री को नहीं छोड़ूँगा ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ यदि तुम अनेकों उपाय और इलाज करो, तब भी अपना धर्म त्यागकर मैं तुम्हें आज नहीं भोगूँगा ॥८॥ ॥ चौपाई ॥ रानी लाखों उपाय कर हटी पर उस मूर्ख ने तो केवल एक नाँह ही पकड़े रखा स्त्री अत्यन्त क्रुद्ध हो उठी और उसे बाँधकर

बाँधि भोहरा डारा। मूआ शाहु सुत जगत उचारा। सौदा काज कह्यो कहूँ गयो। चोरन मारि लूटि धन लयो॥ १०॥ भेस अनूप तरुनि तिन धरा। अभरन अंग अंग मै करा। बितनकेत के ढिग चल गई। भाँति अनेक निहोरत भई॥ ११॥ ॥ अड़िल्ल ॥ ग्रीव अंचरा डारि रही सिर न्याइकै। पकरि कुअर के पाइ रही लपटाइकै। एक बार डर डारि आनि पिय रति करो। हो सकल काम को ताप हमारो अब हरो॥ १२॥ ॥ चौपई ॥ मरि मरि जनम कोटि तुम धरो। बार हजार पाइ किन परो। तौ को तऊ न भजो निलज तब। कहि दैहो तव पति प्रति बिधि सब॥ १३॥ अधिक जतन रानी करि हारी। पाइ परी लातन जड़ मारी। चलु कूकरी निलज्ज मूड़ मति। काम भोग चाहत मोसो कत॥ १४॥ कुबच सुने त्रिय भई बिमन (मू०ग्रं० ११६१) मन। अमित कोप जागा ताके तन। जिह पति को मुहि त्रास दिखारै। तौ मै जौ सोई तुहि मारै॥ १५॥ यौ कहिकै तिह पकरि निकार्यो। पठै सहचरी नाथ हकार्यो।

तहखाने में डाल दिया॥ ९॥ उसको बाँधकर तहखाने में डाल दिया और लोगों को यह जता दिया कि शाह का पुत्र मर गया है। वह कहीं व्यापार करने गया था, चोरों ने उसे मारकर उसका धन लूट लिया॥ १०॥ अब उस तरुणी ने अनुपम वेश बनाया; अंग-अंग में गहने धारण कर वह बितनकेतु के पास गई और अनेकों प्रकार से मिन्नत करने लगी॥ ११॥ ॥ अड़िल्ल ॥ गले में आँचल डालकर वह सिर झुकाकर खड़ी रही और कुँवर के पाँव पकड़ उससे लिपट गई। हे प्रिय! एक बार भय का त्यागकर मुझसे रतिक्रिया करो और मेरी कामनाओं का ताप दूर करो॥ १२॥ ॥चौपाई॥ तुम मर-मरकर चाहे अनेकों जन्म धारण करो और चाहे हजारों बार पाँव क्यों न पड़ो पर हे निलज्ज! तुमको मैं नहीं भोगूँगा और सब कुछ तुम्हारे पति को बता दूँगा॥ १३॥ रानी अत्यधिक यत्न करके हार गई। उस पाँवों पर पड़ी हुई को उस मूर्ख ने लातों से मारा और कहा कि कुतिया यहाँ से चली जा, तुम मुझसे क्यों काम-क्रीड़ा करना चाहती हो॥ १४॥ दुर्वचनों को सुनकर स्त्री मन में खिन्न हो उठी और उसका क्रोध जाग उठा। तुम जिस पति का मुझे भय दिखा रहे हो वही पति आकर तुरन्त तुम्हें मार डालेगा॥ १५॥ यह कहकर उसे पकड़कर निकाल दिया और दासी को भेजकर पति को बुलाया। उसे भूत बताकर उसे दिखाया जिससे राजा के मन में चिंता पैदा

भूत भाखि तिह दियो दिखाई। न्रिप के अति चित चिंत उपजाई॥ १६॥ ॥ दोहरा॥ सुन राजा जो तसकरन हन्यो शाह को पूत। सो मेरे ग्रहि प्रगटियो हेरहु ह्वै करि भूत॥ १७॥ ॥ चौपई॥ न्रिप तब कही गाडि इह डारो। याहि न राखो तुरतु सँघारो। पावक भए पलीता जरियहि। शाहु पुत्र के सिर पर डरियहि॥ १८॥ हाहा शबद बहुत करि रह्यो। भेद अभेद न्रिप मूढ़ न लह्यो। निरखहु का त्रिय चरित सुधार्यो। शाह पूत करि भूत सँघार्यो॥ १६॥ तरुनिन कर हियरो नहि दीजै। तिन को चोरि सदा चित लीजै। त्रिय को कछु बिस्वास न करियै। त्रिय चरित्र ते जिय अति डरियै॥ २०॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ उनचास चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ २४६॥ ४६६५॥ अफजूं॥

अथ दोइ सौ पचास चरित्र कथनं॥

॥ चौपई॥ अजितावती नगर इक सोहै। अजितसिंघ राजा तह को है। अजितमंजरी ग्रहि जाके त्रिय। मन क्रम

हो गई॥ १६॥ ॥ दोहा॥ हे राजन्! सुनो, जिस शाह के पुत्र को चोरों ने मार डाला था वही आज भूत बनकर मेरे घर में प्रकट हुआ है॥ १७॥ ॥ चौपाई॥ तब राजा ने कहा कि इसे गाड़ दो और जीवित न रखकर तुरत मार डालो। आग से जलता पलीता शाह के पुत्र के सिर पर डाल दो॥१८॥ वह हाय-हाय कहने लगा। मूर्ख राजा भी भेद-अभेद न जान सका। देखो उस स्त्री ने कैसा प्रपंच किया कि शाह के पुत्र को भूत बनाकर मार डाला॥ १६॥ स्त्री को कभी दिल नहीं देना चाहिए और उसका दिल चुरा लेना चाहिए। स्त्री का कभी बिश्वास मत करो और उसके प्रपंच से हमेशा डरो॥ २०॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ उनचासवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति २४६ ४६६५ अफजूं

बच जिन बसि कीना पिय ॥ १ ॥ भुजंगमती ताकी दुहिता इक । पढ़ी कोक ब्याकरन शास्त्रनिक । भागवान सुंदरि अति गुनी । जा सम लखी न कानन सुनी ॥ २ ॥ शाह पुत्र ब्रिखभ धुजि इक तहि । रूप सील सुचि ब्रतता जा महि । तेजमान बलवान बिकट मति । अलख करम लखि ताँहि रिस्यो रति ॥ ३ ॥ वहै कुअर न्रिप सुता निहारा । सूरबीर बलवान बिचारा । हितू सहचरि इक निकटि बुलाइसि । भेद भाखि तिह तीर पठाइसि ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ पवन भेस करि सखी तहाँ तुम जाइयहु । भाँति भाँति करि बिनती ताँहि रिझाइयहु । कै अबहीं तै हमरी आस न कीजियै । हो नातर मोहि मिलाइ राजनकौ दीजियै ॥ ५ ॥ पवन भेस ह्वै सखी तहाँ ते तह गई । भाँति अनेक प्रबोध करत ताकौ भई । उत्तिम भेस सुधार लयाई तिह तहाँ । हो भुजंग मती न्रिप सुता बहिठी थी जहाँ ॥ ६ ॥ उठि सुकुअरि तिन लीन गरे सौ लाइ करि । आलिंगन (मू०ग्रं०११७०) करि चुंबन हरख उपजाइ करि । भाँति भाँति तिह भजा परम रुचि मानिकै । हो प्रानन ते प्यारो सजन पहिचानकै ॥ ७ ॥ ॥ दोहरा ॥ भाँति भाँति तरुनी

कर रखा था ॥ १ ॥ उसकी पुत्री भुजंगमंजरी थी जो व्याकरण एवं शास्त्र आदि पढ़ी हुई थी । वह सुन्दरी अत्यन्त भाग्यवान थी, जिसके समान न तो कोई देखी गई थी और न ही कोई सुनी गई थी ॥ २ ॥ वृषभध्वज वहाँ एक शाह का पुत्र था जिसमें प्रभूत मात्रा में शील-शुचिता एवं व्रतता थी । वह अत्यन्त तेजवान एवं बलवान था । रति भी उसे देखकर (अपने पति से अधिक सुन्दर होने के कारण) उससे ईर्ष्या करती थी ॥ ३ ॥ उसी कुँवर को राजा की पुत्री ने देखा और समझा कि वह शूरवीर एवं बलवान है । उसने अपनी एक हितैषिणी सखी को पास बुलाया और रहस्य समझाकर उसे उसके पास भेजा ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ हे सखी ! तुम पवन वेग से वहाँ जाओ और भाँति-भाँति प्रकार से विनती करके उसे रिझाओ । या तो तुम मुझे सजन से मिला दो अथवा फिर मेरी (जीवित रहने की) आशा को छोड़ दो ॥ ५ ॥ पवन वेग से वह सखी वहाँ से चली और अनेक प्रकार से उसे समझाने लगी । वह उसे उत्तम वेश पहनाकर वहाँ ले आयी जहाँ राजा की पुत्री भुजंगमती बैठी थी ६ कुँवरि ने उठकर उसे गले से लगा लिया और हर्षपूर्वक आलिगन-चुंबन किया भाति भाँति से परम रुचिपूर्वक उसके साथ रमण

तरन भर्यो परम सुख पाइ । इही बिखै ताको पिता तही निकसियो आइ ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ पितु आवत अंचर मुख डरा । लागि गरे रोदन बहु करा । कह्यो दरसु बहु दिन मो पायो । ताते मोर उमगि हिय आयो ॥ ९ ॥ जब ते मै ससुरारि सिधाई । तह ते जाइ बहुरि घर आई । तब तैं अब मैं तात निहारा । ताँते उपजा मोह अपारा ॥ १० ॥ अजित सिंघ जब यौ सुनि लयो । रोदन करत गरे मिलि भयो । तब तिह घात भली कर आई । सखी दयो ग्रहि मीत पठाई ॥ ११ ॥ ॥ दोहरा ॥ पितु के अंचर डारि सिर आँखैं लई दुराइ । मोहित भ्यो रोवत रह्यो मीत दिया पहुचाइ ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ पचास चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २५० ॥ ४७१० ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ इक्यावन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बिकटकरन इक हुतो न्रिपति बर । जनुक प्रिथी तल दुतिय दिवाकर । स्री मकराछ कुअरि बनिता तिह ।

किया और उसे प्राणों से भी प्रिय सजन माना ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ वे तरुण-तरुणी भाँति-भाँति के सुखों से जब पूर्ण हो रहे थे तो उसी क्षण उधर से पिता आ निकला ॥ ८ ॥ ॥ चौपाई ॥ पिता के आते ही उसने मुँह पर आँचल डाल लिया और उसके गले लगकर रोने लगी । वह कहने लगी कि आपको बहुत दिनों बाद देखा है इससे मेरा हृदय उमड़ पड़ा है ॥ ९ ॥ जब से मै ससुराल गई और वहाँ से वापस घर आई हूँ तब से मैंने आज पिता को देखा, इसीलिए मुझमें भारी मोह पैदा हुआ है ॥ १० ॥ अजीतसिंह ने जब यह सुना तो वह भी रोता हुआ गले से लग गया । तब उसने अवसर देखा और सखियों ने मित्र को घर भेज दिया ॥ ११ ॥ ॥ दोहा ॥ पिता के गले में आँचल डालकर आँखें छिपा लीं, जिससे वह मोहित हो रोने लगा और इसने मित्र को पहुँचवा दिया ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ पचासवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २५० ॥ ४७१० ॥ अफजूं ॥

दो सौ इक्यावनवा चरित्र-कथन

प्रगट चंद्र सी प्रभा लगत जिह ॥१॥ ॥दोहरा॥ त्री जलजाछ सुता तवनि जाको रूप अपार। गढ़ि तासी तरुनी बहुरि गढ़ि न सका करतार ॥ २ ॥ ॥ चौपई ॥ कलप ब्रिछ धुज तह इक न्रिप बर। प्रगट भयो जनु दुतिय किरन धर। अधिक रूप जनियत जाको जग। थकित रहत जिह निरख तरुनि मग ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजकुअरि निरखन उपबन इक दिन चली। लीने बीस पचास सहचरी संग भली। उठत कनूका धूरि उठाए पाइ तन। हो जनुक चले ह्वै संग प्रजा के सकल मन ॥ ४ ॥ ॥ दोहरा ॥ कलपब्रिछ धुज कुअर को निरखि गई ललचाइ। ठग नाइक से नैन द्वै ठग जिउ रही लगाइ ॥ ५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राज सुता तिह रूप अलोक बिलोकि बर। अंग अनंग तबही गयो बिसिख प्रहार करि। काटि काटि कर खाइ बसाइ न कछू तिह। हो पंखनि बिधना दए मिलै उडि जाइ जिह ॥ ६ ॥ यो लिखि एक सँदेसा ताहि (मू०ग्रं०११७१) पठाइयो। भाँति भाँति कहि भेद तिसै ललचाइयो। डारि लयो डोरा महि किनूँ न कछु लह्यो। हो परी लै गई ताँहि सु तहि पित लिय कयो ॥ ७ ॥

था। मकराक्षकुँवरि उसकी स्त्री थी जो चन्द्र की आभा के समान थी ॥ १ ॥ ॥ दोहा ॥ जलजाक्ष. अपार रूप वाली उसकी पुत्री थी जिसे बनाने के बाद विधाता दुबारा दूसरी स्त्री न बना सका ॥ २ ॥ ॥ चौपाई ॥ कल्पवृक्षध्वज नामक एक श्रेष्ठ राजा था जो कि मानों दूसरा सूर्य था। वह संसार मे अत्यधिक रूपवान माना जाता था और जिसकी राह देखते स्त्रियाँ थक जाती थीं ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजकुँवरि एक दिन पचास के लगभग सखियों-सहित उद्यान देखने चली। धूल के बगूले उठ रहे थे। ऐसा लग रहा था मानों सारी प्रजा का मन भी साथ-साथ चल रहा हो ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ वह कल्पवृक्षध्वज को देखकर ललचा गई और उस ठगनायक से उसे ठगने के लिए नयन लड़ा दिये ॥ ५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजकुमारी उसके रूप को देखकर कामदेव के बाणों से अंगों में प्रहारित हो उठी। उसे सब कुछ काट-काटकर खा रहा था और कुछ भी सुहाता नहीं था। वह सोचती थी कि परमात्मा उसे पंख दे दे तो वह उड़कर उससे जा मिले ॥ ६ ॥ उसने लिखकर उसे एक सदेसा भेजा और विभिन्न प्रकार के भेदों से [illegible] उसे [illegible] उसने उसे डोली मे डाल लिया और किसी ने भी उसे न देखा

॥ चौपई ॥ रोइ पीटि ताको पितु हारा। किनूँ न ताको सोध उचारा। ताकी बधू न्रिपति पहि गई। परी हरत पति मुहि कह भई ॥ ८ ॥ न्रिप भाखी तिह सोध करीजै। शाह पूत कह जान न दीजै। खोजि थके नर नगर नदी मै। दुहिता भेद न जाना जी मै ॥ ९ ॥ एक बरख राखा ता कौ घर। दुतिय कान किनहूँ न सुना नर। भाँति भाँति के भोगन भरी। बिबिध बिधन तन क्रीड़ा करी ॥ १० ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ नट आसन करि प्रथम बहुरि ललितासन लेई। बहुरि रीति बिपरीत करै बहु बिधि सुख देई। ललितासन कौ करत मदन को मद हरहि। हो रम्यो करत दिन रैनि त्रास न रंच करहि ॥ ११ ॥ ॥ दोहरा ॥ भाँति अनिक भामा भजत पायो अधिक अरामु। छिन छिन छतिया सौ लगै तजत न आठो जाम ॥ १२ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ बिकट करन इक दिवस तहाँ चलि आइयो। गहि बहिया तिह पीय पितहि दिखराइयो। जोरि हाथ सिरु न्याइ कह्यो मुसकाइ करि। हो परी डारि इह गई हमारे आजु घर ॥ १३ ॥ ॥ चौपई ॥ सत्ति सत्ति

स्त्रियों ने पिता से कह दिया कि उसे परी ले गई है ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ रो-पीटकर पिता हार गया लेकिन किसी ने भी कोई खबर नहीं दी। उधर उस (शाह-पुत्र) की वधू राजा के पास गई और उसने कहा कि मेरे पति को परी ले गई है ॥ ८ ॥ राजा ने कहा कि उसको खोज करो और शाह के पुत्र को जाने मत दो। लोग नगर, नदी सब जगह खोज हारे पर उस कन्या का कहीं पता न चला ॥ ९ ॥ उसने उसे एक वर्ष तक घर रखा और किसी को कानोंकान खबर न हुई। विभिन्न प्रकार के भोगों से भरी उसने विविध प्रकार की क्रीड़ाएँ कीं ॥ १० ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ पहले नट-आसन और फिर ललितासन किया, फिर विपरीत रति से विविध सुख लिये। ललितासन करके वह कामदेव का गर्व चूर कर रहा था और बिना किसी भय के रात-दिन उससे रमा रहता था ॥ ११ ॥ ॥ दोहा ॥ अनेकों प्रकार से स्त्री के साथ रमण करते उसे बहुत सुख मिला। वह उसे प्रत्येक क्षण छाती से लगाए रहता था और आठों प्रहर उसे छोड़ता नहीं था ॥ १२ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक दिन विकटकर्ण वहाँ आ निकला तो उस स्त्री ने प्रिय का हाथ पकड़कर उसे पिता को दिखाया। हाथ जोड़कर और सिर झुकाकर उसने कहा कि इसे आज एक परी मेरे घर छोड़ गई है ॥ १३ ॥
चौपाई पिता ने सत्य-सत्य का किया और कहा कि मैंने

तिह तात उचारा । स्रोन सुना सो नैन निहारा । मनुख संग दै ग्रहि पहुचायो । भेद अभेद न कछु जढ़ पायो ।। १४ ।। १ ।।

।। इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ इक्यावन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ।। २५१ ।। ४७२१ ।। अफजूं ।।

अथ दोइ सौ बावनों चरित्र कथनं ।।

।। चौपई ।। हंसधुजा राजा इक अति बल । अरि अनेक जीते जिन दलि मलि । सुखदमती ताकी रानी इक । जाकी प्रभा कहत बनिता निक ।। १ ।। ताकी सुता सुखमती सुनी । जा सम और न अबला गुनी । जोबन अधिक तवन को राजत । जिह मुखि निरखि चंद्रमा लाजत ।। २ ।। नागर कुअर नगर को राजा । जा सम दुतिय न बिधना साजा । करत शिकार कैसहूँ आयो । त्रिप दुहिता ग्रहि तर ह्वै धायो ।। ३ ।। राजकुअरि निरखति ताकी छबि । मद करि मत्त रही छबि तर दबि । पान पीक ताके पर डारी । मोसौ करै कैसहूँ यारी (मू०ग्रं०११७२) ।। ४ ।। नागर कुअर पलटि

जो कानों से सुना उसे आज आँखों से देख लिया । उसे मनुष्य साथ देकर घर पहुँचा दिया और यह जड़ किसी भी भेद-अभेद को न समझ सका ।। १४ ।। १ ।।

।। श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ इक्यावनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ।। २५१ ।। ४७२१ ।। अफजूं ।।

दो सौ बावनवाँ चरित्र-कथन

।। चौपाई ।। हंसध्वज एक बलवान राजा था जिसने अनेकों शत्रुओं को जीता था । सुखदमती उसकी एक रानी थी जिसकी प्रभा का स्त्रियाँ वर्णन किया करती थीं ।। १ ।। उसकी एक सुखमती नामक पुत्री थी जिसके समान गुणवाली दूसरी अन्य कोई स्त्री नहीं थी । उसके शोभायमान यौवन और मुख को देखकर चन्द्रमा भी लज्जित होता था ।। २ ।। नगरकुँवर उस नगर का राजा था जिसके समान विधाता ने अन्य किसी का सृजन नहीं किया था । वह शिकार खेलता उधर आया और राजा की लड़की के महल के नीचे से निकला ।। ३ ।। राजकुमारी उसकी छवि देखकर मदमस्त हो गई पान की पीक उसने उस पर फेंकी ताकि वह कैसे भी उससे मित्रता करे ४

तिह लहा। ताँहि बिलोक उरझि करि रहा। नैनन नैन मिले दुहूँअन के। शोक संताप मिटे सभ मन के ॥ ५ ॥ रेशम रसी डारि तर दीनी। पीड़्ही बाँधि तवन सौ लीनी। ऐंचि ताहि निज धाम चढ़ायो। मन बांछत प्रीतम कह पायो ॥ ६ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ पिय धाम चढ़ाइ लयो जबही। मन भावत भोग किया तबही। दुति रीझि रही अवलोकति यो। त्रिय जोरि रही ठग की ठग ज्यों ॥ ७ ॥ पुनि पौढि रहैं उठि केल करैं। बहु भाँति अनंग को ताप हरैं। उर लाइ रही पिय कौ त्रिय यौं। जनु हाथ लगे निधनी धन ज्यों ॥ ८ ॥ मदनोदित आसन कौ करिकैं। सभ ताप अनंगहि को हरि कै। ललितासन बार अनेक धरैं। दोऊ कोक की रीति सौ प्रीति करैं ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ भाँति भाँति आसन करैं चुंबन करत अपार। छैल छैलनी रस पगे रही न कछू सँभार ॥ १० ॥ ॥ चौपई ॥ हसि हसि केल दोऊ मिलि करैं। पलटि पलटि प्रिय कौ त्रिय धरैं। हेरि रूप ताको बलि जाई। छैलनि छैल न तज्यो सुहाई ॥ ११ ॥ तब तह ताहि पितावत भयो। राज सुता जिय मै दुख पयो।

नगरकुँवर ने पलटकर उसे देखा और उसी में उलझकर रह गया। नयनों से नयन मिले और मन के शोक-संताप मिट गए ॥ ५ ॥ उसने रेशम की रस्सी से पीढ़ा बाँधकर नीचे लटका दिया। उसे खींचकर अपने घर में चढ़ा लिया और इस प्रकार मनचाहा प्रियतम प्राप्त किया ॥ ६ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ प्रिय को जैसे ही घर पर चढ़ाया उससे मनचाहा भोग किया। उसकी छवि को देखकर वह मोहित हो उठी और ठगी की ठगी रह गई ॥ ७ ॥ कभी लेट जाते थे कभी उठकर केलिक्रीड़ा करते थे और अनेकों प्रकार से कामदेव का ताप निवारण करते थे। प्रियतमा प्रिय को ऐसे हृदय से लगाए रहती थी मानों निर्धन के हाथ धन लग गया हो ॥ ८ ॥ मदनोदित आसन को करके कामदेव का ताप दूर करके फिर वे अनेकों बार ललितासन धारण करते थे और दोनों कोक की रीति से प्रीति कर रहे थे ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ भाँति-भाँति के आसन और चुंबन करके छैला और छैलनी सुध-बुध खोए हुए रस में डूबे हुए थे ॥ १० ॥ ॥ चौपाई ॥ हँस-हँसकर दोनों केलिक्रीड़ा कर रहे थे और पलट पलटकर स्त्री प्रेमी को पकड रही थी। उसका रूप देखकर वह बलिहार जा रही थी और छैला को छोडना प्रिया को अच्छा नही लगता

चित मै कही कवन बिधि कीजै। जाते पति पितु ते इह लीजै ॥ १२ ॥ आपि पिता के आगू गई। इह बिधि बचन बखानत भई। बिजिया एक न्रिपति बहु खई। ताँ ते बुद्धि ताकी सभ गई ॥ १३ ॥ ॥ दोहरा ॥ बिजिया खाए ते तिसै रही न कछू सँभार। आनि हमारे ग्रहि धसा अपनो धाम बिचारि ॥ १४ ॥ ॥ चौपई ॥ तब मै हेरि तिसै गहि लीना। कछु भोजन खैबे कह दीना। अब सु करो तुम जु मुहि उचारो। जियत तजो कै जिय ते मारो ॥ १५ ॥ जो चलि ग्रहि दुशमन हू आवै। जो ता को ग्रहि कै न्रिप घावै। नरक बिखैं ता कौ जम डारै। भला न ताकह जगत उचारै ॥ १६ ॥ ॥ दोहरा ॥ जो आवै निजु धाम चलि धरम भ्रात तिह जानि। जो कछु कहै सु कीजियै भूलि न करियै हानि ॥ १७ ॥ ॥ चौपई ॥ तब न्रिप ताकौ बोलि पठायो। निकट आपने तिह बैठायो। दुहिता वहै तवन कह दीनी। जासो रति आगे जिन कीनी ॥ १८ ॥ ॥ दोहरा ॥ लै दुहिता ताकौ दई चित मै भयो (मू०ग्रं०११७२) असोग। दुहिता को कछु ना लहा गूड़ अगूड़ प्रयोग ॥ १९ ॥ ॥ चौपई ॥ मन

मन में उसने सोचा कि कौन-सी विधि अपनाई जाय जिससे पिता से इस पति को माँग लिया जाय ॥ १२ ॥ स्वयं पिता के पास गई और उसे कहने लगी कि एक राजा ने ज्यादा भाँग पी ली थी इससे उसकी सुधि जाती रही है ॥ १३ ॥ ॥ दोहा ॥ भाँग खाने से उसे कुछ भी होश नहीं रहा और वह मेरे घर को अपना घर समझकर मेरे घर में आ घुसा है ॥ १४ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब मैंने उसे देखकर पकड़ा और खाने को कुछ भोजन दिया। अब तुम मुझे बताओ, मैं क्या करूँ ? इसे जीवित रहने दिया जाय या मार दिया जाय ॥ १५ ॥ घर में यदि दुश्मन भी चलकर आ जाय और राजा यदि उसे पकड़कर मार डाले तो यम उसे नर्क में डाल देता है और संसार भी उसे भला नहीं कहता ॥ १६ ॥ ॥ दोहा ॥ जो घर में चला आए उसे धर्म भाई समझना चाहिए; वह जो कहे करना चाहिए और भूलकर भी उसका नुक्सान नहीं करना चाहिए ॥ १७ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब राजा ने उसे बुलाया और अपने पास बैठाया। उसे वही पुत्री दे दी जिसके साथ उसने पहले ही रति-क्रीड़ा की थी ॥ १८ ॥ ॥ दोहा ॥ वही पुत्री उसे दे दी; मन में प्रसन्न हो उठा परन्तु पुत्री का रहस्यात्मक प्रयोग समझ नहीं सका १९

भावत पावत पति भई। इह छल सो पितु कह छलि गई। भेद अभेद किनहूँ नहि पायो। लै नागर सिध धाम सिधायो॥ २०॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ बावनों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ २५२॥ ४७४१॥ अफजूं॥

अथ दोइ सौ तिरपन चरित्र कथनं॥

॥ चौपई॥ छत्रानी इस्त्री इक रहै। जीयो नाम ताहि जग कहै। मानिकचंद तवन कह बरा। भाँति भाँति के भोगन भरा॥ १॥ वह जड़ एक जाटनी सौ रति। कछू न जानत मूढ़ महामति। लंबोदर पसु को अवतारा। गरधभ जोनि डरा करतारा॥ २॥ लोगन ते अति तवन लजावै। ताते धाम न ताकौ ल्यावै। ताते और गाव त्रिय राखी। ससि सूरज ताके सभ साखी॥ ३॥ आप अरूड़ि तुरा ह्वै जावै। काहू की लाजै न लजावै। जीयो जिय भीतर अति जरै। बाढी एक साथ रति करै॥ ४॥ ॥ दोहरा॥ जब वहु अस्व अरूड़ ह्वै गाँव तवन कौ जात। जियो अति जिय बाढिअहि

॥ चौपाई॥ उसे इस छल से पिता को छलने के बाद मनवाञ्छा पति मिल गया। भेद-अभेद को कोई नहीं जान सका और नागर उसे लेकर अपने घर को चलता बना॥ २०॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ बावनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ २५२॥ ४७४१॥ अफजूँ॥

दो सौ तिरपनवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई॥ एक क्षत्राणी स्त्री थी जिसे जुगिया जीयो कहती थी। मानिकचन्द्र ने उससे शादी की और भाँति-भाँति से भोग किये॥ १॥ वह जड़ एक जाटनी से भी अनुरक्त था जो महा मूढ़मति थी। पशु के समान उसका लम्बा पेट था और उस गर्दभ-सदृश आकार से भगवान भी डरता था॥ २॥ वह लोगों की लज्जा मानता था इससे उसे घर नहीं लाता था। चाँद-सूरज सभी जानते थे कि उसने अन्य गाँव में स्त्री रखी हुई थी॥ ३॥ वहाँ वह निस्संकोच घोड़े पर सवार होकर जाता था। जीओ भी मन में कुढ़ती थी और एक बढ़ई के साथ रति क्रीडा करती थी॥ ४॥ दोहा जब वह

अपने धाम बुलात ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ तिह तिय होइ ननद सौ यारी। बिहसित इह भाँतिन उचारी। सु मैं कहत हौ तीर तिहारे। सुनहु स्रवन धरि कथा पयारे ॥ ६ ॥ पति देखत कह्यो भोग कमैहौ। ब्रहम भोज ताँते करवैहौ। जियोमती तबहूँ तुम जनियहु। मोरी साच कही तब मनियहु ॥ ७ ॥ यौ कहि बचनन बहुरि उचारा। पति गयो जबही अनत सिधारा। तब बाढी तिह बोलि पठायो। काम भोग तिह संग कमायो ॥ ८ ॥ जाटिनि भोग जबै जड़ आयो। आन रमत लखि त्रियहि रिसायो। काढि क्रिपान महाँ रसु धयो। कर ते पकरि सहचरी लयो ॥ ९ ॥ जार एक उठि लात प्रहारी। गिरत भयो पसु प्रिथी मँझारी। देहि छीन तैं उठि न सकत भयो। जारपतरि भाजि जात भ्यो॥ १० ॥ उठत भयो मूरख बहु काला। पाइन आइ लगी तब बाला। जौ पिय मुर अपराध बिचारो। काढि क्रिपान मार ही डारो ॥ ११ ॥ जिन निरभै तुहि लात प्रहारी। वहि आगै मैं कवन बिचारी। तुम भुअ गिरे जवन के मारे। खाइ

घोडे पर सवार हो उसके गाँव में जाता तो इधर जीओमती उस बढ़ई को अपने घर बुला लेती थी ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ उस स्त्री की ननद के साथ शर्त लग गई और हँसते-हँसते बातें हुईं कि मेरी बात सुनो और कान लगाकर मेरी कथा को श्रवण करो ॥ ६ ॥ पति के देखते रति-क्रीड़ा की जाय और ब्रह्मभोज करवाया जाय। (ननद ने कहा) मेरा कहा भी सच करके दिखा दो तभी मैं तुमको जीओमती मानूँगी ॥ ७ ॥ इस प्रकार बहुत सी बातें हुईं। जब उसने पति को गए देखा तो बढ़ई को बुला लिया और उसके साथ काम-क्रीडा की ॥ ८ ॥ जाटनी से रमण करके जब वह मूर्ख आया तो अपनी पत्नी को अन्य के साथ रत देखकर क्रुद्ध हो उठा। कृपाण निकालकर वह दौड़ा पर एक दासी ने हाथ से पकड़ लिया ॥ ९ ॥ तब तक यार ने उठकर लात से प्रहार किया और वह पशु धरती पर गिर पड़ा। उसकी देह कमजोर थी और वह उठ न सका और यार भाग खड़ा हुआ ॥ १० ॥ थोड़ी देर बाद वह उठ खड़ा हुआ तो वह स्त्री उसके पैरों में आ पड़ी। हे प्रिय ! यदि मेरा दोष देखो तो मुझे कृपाण निकालकर मार ही डालो ॥ ११ ॥ जिसने निर्भय होकर आपको लात से मारा उसके आगे मैं वेचारी भला क्या हूँ। जिसके मारे हुए तुम धरती पर गिर पड़े हो और लुढ़ककर सँभल नहीं सके हो (मैं भला उसके सामने क्या हूँ ॥ १२ ॥ दोहा ॥ जो व्यक्ति तुमसे नहीं डरा

लोटनी कछु न सँभारे (मू०ग्रं०११७४) ॥ १२ ॥ ॥ दोहरा ॥ जो नर तुम ते ना डरा लातन किया प्रहार । ताके आगे हेरु मैं कहा बिचारी नारि ॥ १३ ॥ ॥ चौपई ॥ जब मेरो तिन रूप निहारा । सर अनंग तब ही तिह मारा । जोराबरी मोहि गहि लीना । बल सौ दाबि रान तर दीना ॥ १४ ॥ मोर धरम प्रभु आपु बचायो । जाते दरसु तिहारो पायो । जौ तूँ अब इह ठौर न आतो । जोराबरी जार भजि जातो ॥ १५ ॥ अब मुरि एक परीछा लीजै । जाते दूरि चित्त भ्रमु कीजै । मूत्र जरत जौ दिया निहारो । तब हसि हसि मुहि साथ बिहारो ॥ १६ ॥ पात्र एक तह मूतयो जाई । जा मै राख तेल को आई । पिय मुर चित तोसौं अति डरा । ताते लघु अति ही मैं करा ॥ १७ ॥ लघ के करँ पात्र सभ भरा । बाकी बचत मूत्र भुअ परा । तुमरो त्रास अधिक बलवाना । जाँ ते डरत हमारे प्राना ॥ १८ ॥ वही तेल मै दीप जगायो । पति देखत जिह लघु ठहरायो । भेद अभेद जड़ कछू न जाना । सीलवती इस्त्री कर माना ॥ १९ ॥ रीझि बचन इह भाँति उचारो । मैं तेरो सत साचु निहारो । अब चेरा मैं भयो तिहारा । कहो सु करौ काज बहु हारा ॥ २० ॥ मूत्र भरे

और उसने लातों से प्रहार किया। तुम भला देखो उसके आगे मैं बेचारी स्त्री क्या हूँ ॥ १३ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसने जब मेरा रूप देखा तो कामासक्त हो उठा। ज़बर्दस्ती उसने मुझे पकड़ लिया और जाँघों के नीचे बलपूर्वक दबा लिया ॥ १४ ॥ मेरा धर्म तो प्रभु ने स्वयं बचाया कि तुम्हारे दर्शन हो गए। यदि तुम इस समय न आ जाते तो यह यार तो मुझे बलात् भोग जाता ॥ १५ ॥ अब तुम मेरी एक परीक्षा ले लो और चित्त का भ्रम दूर करो। यदि मेरे मूत्र का दिया जल जाए तो (मुझे पवित्र समझकर) मेरे साथ हँस-हँसकर रमण करो ॥ १६ ॥ उसने एक पात्र में पेशाब किया और उसी में तेल रख आई। (कहने लगी) प्रिय मैं तो तुमसे अधिक ही डर गई हूँ, इसलिए मैंने थोड़ा ज्यादा ही पेशाब कर दिया है ॥ १७ ॥ लघुशंका करने से ही पात्र भर गया है और बाकी बचा हुआ मूत्र भूमि पर गिर पड़ा है। तुम्हारा भय तो अधिक बलवान है जिससे मेरे प्राण भयभीत हैं ॥ १८ ॥ उसी तेल से दीपक जलाया जिसे पति को पेशाब के तौर पर दिखाया था। मूर्ख कुछ भी रहस्य न समझ सका और उसने उसे शीलवती स्त्री समझा ॥ १९ ॥ खुश होकर उसने कहा कि मैंने तुम्हारा सतीत्व सत्य पाया है। अब तो मैं तुम्हारा दास हो गया

तै दीप जगायो । चमत्कार इह हमैं दिखायो । पटुका डारि ग्रीव पग परा । घरी चारि लगि नाक रगरा ॥ २१ ॥ ॥ दोहरा ॥ एक रिसालू निरखियो आँखिन ऐस चरित्र । कै हम आजु बिलोकियो आज कहूं त्रिय मित्र ॥२२॥ ॥चौपई॥ अब तूं कहैं जु सुहि सोई करौ । हूं कर दास नीर तव भरौ । हसि हसि त्रिय कौ गरे लगावै । भेद कछू मूरख नहि पावै ॥ २३ ॥ बिहसि नारि इह भाँति उचारा । ब्रहम भोज करु नाथ सभारा । भली भाँति दिज प्रथम जिवावो । बहुरो सेज हमारी आवो ॥ २४ ॥ कछू न लखा दैव के मारे । ब्रहम भोज कह किया सवारे । भली भाँति दिज प्रथम जिवाए । बहुरि नारि की सेज सिधाए ॥ २५ ॥ जो त्रिय कही वहै गति कीनी । सति होड ननदी ते लीनी । तेल मूत्र कहि दीप जगायो । ब्रहम दंड पति ते करवायो ॥ २६ ॥ अधिक हरीफ कहावत हुतो । भूलि न भाँगहि पीवत सुतो । इह चरित्र करि द्विगन दिखायो । इह छल सौ वहि त्रिय (मू०ग्रं०११७५) उहकायो ॥ २७ ॥ प्रथम भोग पिय लखत कमायो । जारि

हूँ, मुझे जो काम बताओ मैं करूँ ॥ २० ॥ मूत्र से तूने दीपक ;जलाकर मुझ एक चमत्कार दिखाया है । उसने गले में कपड़ा डालकर गर्दन पैरों पर रखकर चार घड़ी तक नाक रगड़ा ॥ २१ ॥ ॥ दोहा ॥ एक रसिक ने आँखों से यह सब प्रपंच देखा और कहने लगा कि मैंने सच में आज स्त्री-मित्र को देख लिया है ॥ २२ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह (मानिकचन्द्र) कहने लगा कि अब तुम जो कहो वही मैं करूँगा और तुम्हारा गुलाम होकर तुम्हारा पानी भरूँगा । वह हँस-हँसकर स्त्री को गले लगा रहा था और मूर्ख कुछ भी भेद नहीं समझ पा रहा था ॥ २३ ॥ तब स्त्री ने हँसकर कहा कि हे नाथ ! सम्हाल कर ब्रह्मभोज कराओ । पहले भली प्रकार ब्राह्मणों को खिला दो फिर हमारी शय्या पर पदार्पण करो ॥ २४ ॥ उस भाग्य के मारे हुए ने कुछ नहीं देखा और भली प्रकार ब्रह्मभोज किया । अच्छी तरह पहले ब्राह्मणों को खिलाया और फिर पत्नी की शय्या की तरफ बढ़ा ॥२५॥ जो स्त्री ने कहा वही कर दिखाया और अपनी ननद से बाजी जीत ली । तेल रूपी मूत्र से दीपक जला दिया और पति से ब्रह्मभोज करवा दिया ॥ २६ ॥ वह जो अधिक चतुर अपने आपको मानता था फिर कभी भूलकर भी भाँग आदि पीकर नहीं सोया (और उसने कोई बुरा कर्म नहीं किया) । उस स्त्री ने यह प्रपंच करके दिखा दिया और उसे छल लिया ॥ २७ ॥ पहले तो उसने प्रिय के देखते-देखते यार से

मूत्र के दीप दखायो। ब्रहमभोज उलटो ता पर करि। पति जानी पतिब्रत त्रिया घर ॥ २८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ तिरपन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २५३ ॥ ४७६६ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ चौअन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बेस्वा एक ठौर इक सुनी। पात्रकला नामा बहु गुनी। अधिक तरुनि की दिपति बिराजै। रंभा को निरखत मन लाजै ॥ १ ॥ बिशनकेत इक राइ तहाँ को। पातिशाह जानियत जहाँ को। बिशनमती रानी ताके घर। प्रगट कला जनु भई निसाकर ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ बिशनकेत बेस्वा भए निस दिन भोग कमाइ। बिशनमती त्रिय के सदन भूलि न कबहूँ जाइ ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ रानी सखी पठी बेस्वा पहि। दँ धनु अधिक भाँति ऐसी कहि। बिशनकेत कौ जौ तूँ मारैं। बिशनमती दारिद तव टारैं ॥ ४ ॥ सहचरि जब ऐसी बिधि कही। बेस्वा बैन सुनत चुप रही। धन सराफ के घर मै

रमण किया। फिर मूत्र जलाकर दीपक दिखा दिया। उस पर फिर ब्रह्म-भोज किया तथा पति ने भी स्त्री को पतिव्रता माना ॥ २८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ तिरपनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २५३ ॥ ४७६६ ॥ अफजूं ॥

दो सौ चौवनवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ एक स्थान पर पात्रकला नामक एक बहुत गुणों वाली वेश्या थी। उस तरुणी की अत्यधिक दीप्ति थी, जिसे देखकर रम्भा भी लजाती थी ॥ १ ॥ वहाँ विशनकेतु एक राजा था जिसे सभी बादशाह के रूप में जानते थे। विशनमती उसकी एक रानी थी जो मानों चन्द्रमा की कला के समान प्रकट थी ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ बिशनकेतु वेश्या के साथ दिन-रात रमण करता था और स्त्री बिशनमती के पास भूलकर भी नहीं जाता था ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ रानी ने एक सखी को बहुत-सा धन देकर और यह कहकर भेजा कि यदि तू बिशनकेतु राजा को मार दे तो बिशनमती तुम्हारी सारी दरिद्रता दूर कर देगी ४ सखी ने जब यह कहा तो वेश्या सुनकर चुप रह गई उसने धन एक सर्राफ़ के यहाँ रख दिया और कह दिया

राखो । काम भए दीजै मुहि भाखो ॥ ५ ॥ सूरज छपा रैनि ह्वै आई । तब बेस्वा न्रिप बोलि पठाई । बस्त्र अनूप पहिरि तह गई । बहु बिधि ताहि रिझावत भई ॥ ६ ॥ ॥अड़िल्ल॥ भाँति अनिक न्रिप संग सु केल कमाइकै । सोइ रही तिह साथ तरुनि लपटाइकै । अरध राति जब गई उठी तब जागि करि । हो प्रीति रीति राजा की चित तैं त्यागि करि ॥ ७ ॥ लै जमधर ताही को ताहि प्रहारिकै । उठि रुदिन किय आपि किलकटी मारिकै । निरखहु सभ जन आइ कहा कारन भयो । हो तसकर कोऊ सँघारि अबै न्रिप को गयो ॥ ८ ॥ धूम नगर मौ परी सकल उठि जन धए । म्रितक न्रिपति कह आनि सकल निरखत भए । हाइ हाइ करि गिरह धरनि मुरछाइ करि । हो धूरि डारि सिर गिरहि धरनि दुख पाइ करि ॥ ९ ॥ बिसनमती हूँ तहाँ तबै आवत भई । निरखि राइ कह म्रितक दुखाकुलि अधिक भी । लूटि धाम बेस्वा को लिया सुधारिकै । हो तिसी कटारी साथ उदर तिह फारिकै ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ बहुरि कटारी काढि सो हनन लगी उर माँहि । बाँह सहचरी गहि लई (मू०ग्रं०११७६) लगन दई तिह नाहि ॥ ११ ॥ ॥ चौपई ॥ प्रथम मारि पति पुनि तिह मारा । भेद अभेद किनूं

कि जब मुझे ज़रूरत होगी तो दे देना ॥ ५ ॥ सूर्य छिप गया और रात हो गई तब राजा ने वेश्या को बुलवाया । वह अनुपम वस्त्र पहनकर वहाँ गई और अनेक प्रकार से उसे रिझाने लगी ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजा के साथ अनेकों प्रकार से केलिक्रीड़ा करके वह लिपटकर उसके साथ सो रही । जब आधी रात हुई तो राजा की प्रीति को चित्त से विस्मृत कर वह उठ खड़ी हुई ॥ ७ ॥ उसी की तलवार से उसको मारकर वह चीखकर रुदन कर उठी । हे लोगो ! आकर देखो कि कोई चोर अभी राजा को मारकर चला गया है ॥ ८ ॥ नगर में धूम मच गई और सभी लोग दौड़े आये और मृतक राजा को देखने लगे । वे हाय-हाय कहकर धरती पर गिरने लगे और सिर में धूल डालकर मूर्च्छित होने लगे ॥ ९ ॥ तभी बिशनमती भी वहाँ आ गई और राजा को मृत देखकर अत्यधिक दुखित हो गई । उसने उसी कटारी के साथ वेश्या का पेट फाड़कर उसका घर भी लूट लिया ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ फिर कटार निकालकर अपने सीने में मारने को उद्यत हुई तब तक सहचरी ने उसकी बाँह पकड़ ली और उसे लगने नहीं दी ११ चौपाई पहले पति को

न बिचारा। राजपुत्र अपने कौ दीना। ऐसो चरित चंचला कीना ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ चौअन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २५४ ॥ ४७८१ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ पचपन चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ दौला को गुजराति मै बसत सु लोक अपार। चारि बरन तिह ठाँ रहै ऊच नीच सरदार ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ मती लहौर तहाँ त्रिय सुनी। छत्रानि बुधि बहु बिधि गुनी। एक पुरख तब ताँहि बरत भ्यो। अनिक भाँति के भोग करत भ्यो ॥ २ ॥ तिह वहु छाडि पिता ग्रहि आयो। और ठौर कह आप सिधायो। मलक नाम तिह के घर रहा। केल करन तासौ त्रिय चहा ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ भाँति भाँति तासौ त्रिय भोगु कमाइयो। लपटि लपटि तिह साथ अधिक सुख पाइयो। जब तिह रहा अधान तबै त्रिय यौ कियो। हो जहाँ हुतो तिह नाथ तही को मगु लियो ॥ ४ ॥

मारकर फिर उस (वेश्या) को मारा और किसी ने भी भेद-अभेद को नहीं विचारा। अपने पुत्र को राज दे दिया और इस प्रकार का प्रपंच उस स्त्री ने किया ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ चौवनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २५४ ॥ ४७८१ ॥ अफजूं ॥

दो सौ पचपनवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ दौला के गुजरात में अपार लोग रहते थे, जिसमें ऊँच-नीच चारों वर्ण थे ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ वहाँ लाहौरमती एक क्षत्राणी स्त्री थी जो बहुगुणज्ञ थी। एक पुरुष ने उसके साथ विवाह किया और अनेकों प्रकार से रति-क्रीड़ा की ॥ २ ॥ उसे वह पिता के घर में छोड़ आया और आप अन्य स्थान के लिए रवाना हो गया। उसके घर में मलिक नामक व्यक्ति था जिससे उस स्त्री ने रति-क्रीड़ा करनी चाही ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ उसके साथ लिपट-लिपटकर उसने अत्यधिक सुख प्राप्त किया और जब उसको गर्भ रह गया तो उस स्त्री ने ऐसा किया कि जहाँ उसका स्वामी रहता था वहीं का रास्ता पकड़ा ४ चौपाई बिना प्रिय के मैंने अत्यधिक दुख पाया है

॥ चौपई ॥ बिनु पिय मैं अति ही दुख पायो । ताँते मुर तन अधिक कुलायो । बिनु पूछे ताँते मैं आई । तुम बिनु मो ते रह्यो न जाई ॥ ५ ॥ त्रिय आए पति अति सुख पायो । भाँति भाँति तासौ लपटायो । तब तासौ ऐसे तिन कहा । तुहि ते गरभ नाथ मुहि रहा ॥ ६ ॥ तुमरे पीय प्रेम मै पागी । इशक तिहारे सौ अनुरागी । तिह ठाँ मो ते रहा न गयो । ताते तोर मिलन पथ लयो ॥ ७ ॥ अब जो कहो करौ मै सोई । महाराज कह जिय सुख होई । काढि क्रिपान चहौ तौ मारो । आपन ते मुहि जुदा न डारो ॥ ८ ॥ यह जड़ बचन सुनत हरखयो । भेद अभेद न पावत भयो । या कह हम तें रहा अधाना । मन महि ऐसे किया प्रमाना ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ नव आसन बीते सुता जनत भई त्रिय सोइ । जड़ अपनी दुहिता लखी भेद न पायो कोइ ॥ १० ॥ १ ॥ (मू०ग्रं०११७७)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ पचपन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २५५ ॥ ४७९१ ॥ अफजूं ॥

और इसी से मेरा तन बहुत दुखी हो उठा है। मैं तुमसे बिना पूछे इसलिए आ गई हूँ कि तुम्हारे बिना मुझसे रहा नहीं जाता ॥ ५ ॥ स्त्री के आ जाने से पति बहुत सुखी हुआ और विभिन्न प्रकार से उससे लिपटा। तब उससे उसने ऐसे कह दिया कि हे नाथ ! तुमसे मुझे गर्भ रह गया है ॥ ६ ॥ हे प्रिय ! मै तुम्हारे प्रेम में पगी तुम्हारे ही इश्क़ में अनुरक्त हूँ। उस स्थान पर मुझसे रहा नहीं गया, इसीलिए तुमसे मिलने के वास्ते मैं राह पकड़कर चली आई हूँ ॥ ७ ॥ अब मुझसे जो कहो मैं करूँ ताकि मेरे स्वामी को सुख प्राप्त हो। अब चाहे कृपाण निकालकर मुझे मार दो पर मुझे अपने से अलग मत करो ॥८॥ वह जड़ यह बातें सुनकर प्रसन्न हो उठा और भेद-अभेद कुछ न समझ सका। वह मानने लगा कि गर्भ मुझी से रह गया है, क्योंकि वह ऐसा ही कह रही थी ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ नौ महीनों के बाद उस स्त्री ने एक पुत्री को जन्म दिया। इस मूर्ख ने बिना भेद समझे उसे अपनी पुत्री मान लिया ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद के दो सौ पचपनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २५५ ॥ ४७९१ ॥ अफजूँ ॥

अथ दो सौ छपन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ भनियत एक न्रिपति की दारा । चित्र-मंजरी रूप अपारा । कान न सुनी न आँखिन हेरी । जैसी प्रभा कुअरि तिह केरी ॥ १ ॥ अघटसिंघ तिह ठाँ को राजा । जा सम और न बिधना साजा । वाकी प्रभा वही कह सोही । लखि दुति सुरी आसुरी मोही ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ नरी नागनी किन्नरी सुरी आसुरी बारि । अधिक रूप तिह राइ को अटकत भई निहार ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ आखेटक सौ ताको अति हित । राज साज महि राखत नहि चित । जात हुतो बन म्रिग उठि धावा । ता पाछे तिन तुरै धवावा ॥ ४ ॥ जात जात जोजन बहु गयो । पाछा तजत न म्रिग न्रिप भयो । महाँ गहिर बन तह इक लहा । घोर भयानक जात न कहा ॥ ५ ॥ साल तमाल जहाँ द्रुम भारे । निबू कदंप सु घट जटियारे । नारंजी मीठा बहु लगे । बिबिध प्रकार रसन सौ पगे ॥ ६ ॥ पीपर धार खजूरैं जहाँ । सेंबल सार सिरारी तहाँ । जुगल जामनूं जहाँ बिराजैं । नरियर नार नागरी

दो सौ छप्पनवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ एक राजा की अपार रूपवती स्त्री चित्रमंजरी नाम से जानी जाती थी । उसकी ऐसी छवि थी जो न तो कानों से सुनी गई थी और न आँखों से देखी गई थी ॥ १ ॥ वहाँ का राजा अघट सिंह था जिसके समान विधि ने अन्य किसी को नहीं बनाया था । उसकी प्रभा उसी की थी और सुर-असुर स्त्रियाँ सभी उस पर मोहित थीं ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ नर, नाग, किन्नर, सुर एवं असुर-स्त्रियाँ सभी उस राजा का रूप देखकर उसमें उलझी हुई थीं ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसका मन आखेट में अधिक लगता था और राज-काज में उसका मन नहीं था । वह जंगल में जा रहा था कि मृग आगे दौड़ पड़ा । इसने भी घोड़ा उसके पीछे डाल दिया ॥ ४ ॥ भागते-भागते वह अनेकों योजन चला गया पर राजा ने उसका पीछा नहीं छोड़ा । उसने एक अत्यन्त गहरा जंगल देखा जिसकी भयानकता के बारे में बताया नहीं जा सकता ॥ ५ ॥ वहाँ साल, तमाल, निंबू, कदम्ब एवं बड़ वृक्षों जैसी जटाओं वाले वृक्ष थे । नारंगी और मीठे फलों के वृक्ष विविध प्रकार के रसों से सिक्त थे । ६ ॥ पीपल खजूर सेमल जामुन आदि के वृक्ष वहाँ लगे थे और

राजैं ॥ ७ ॥ ॥ दोहरा ॥ नरगिस और गुलाब के फूल फुले जिह ठौर । नंदन बन सौ निरखियै जा सम कहूँ न और ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ सरिता बहुत बहत जिह बन मै । झरना चलत लगत सुख मन मै । सोभा अधिक न बरनी जावै । निरखे ही आभा बनि आवै ॥ ९ ॥ तह ही जात भया सो राई । जाकी प्रभा न बरनी जाई । मरत भयो म्रिगहि लै तहाँ । देव दैंत जा निरखत जहाँ ॥१०॥ ॥दोहरा॥ देव दानवन की सुता जिह बन सेवत नित्य । सदा बसायो राख ही ताहि चित्त ज्यो नित्य ॥ ११ ॥ ॥ चौपई ॥ जच्छ गंध्रबी अति उनमदा । सेवत हैं तिह बन कौ सदा । नरी नागनी को चित ल्यावै । नटी त्रितका कौन गनावै ॥ १२ ॥ ॥ दोहरा ॥ तिनकी दुति तिनही बनी को कबि सकत बताइ । लखे लगन लागी रहैं पलक न जोरी जाइ ॥ १३ ॥ ॥ चौपई ॥ राजकुअरि तिन को जब लहा । मन महि अतिहि बिसम ह्वै रहा । चित भरि चौप डीठ इमि जोरी । जनुक चंद्र के साथ चकोरी ॥ १४ ॥ ॥ दोहरा ॥ या राजा को रूप लखि अटकि रही वै बाल । ललना के लोइन निरखि सभ ही

नारियल, अनार आदि भी शोभायमान थे ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ नरगिस और गुलाब के फूल जहाँ खिल रहे थे, वह नंदन वन के समान अद्वितीय वन लग रहा था ॥ ८ ॥ ॥चौपाई॥ उस वन में नदियाँ बहुत थीं और झरने भी सुख-दायक चल रहे थे। उसकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता, वह तो देखते ही बनता है ॥ ९ ॥ वहीं वह अवर्णनीय शोभा वाला राजा जा पहुँचा। मृग उसे वहाँ ले जाकर मर गया। देव-दैत्य यहाँ सब देख रहे थे ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ देव-दानवों की कन्याएँ इस वन का सदैव प्रयोग करती थीं और इस वन को मित्र के समान सदैव चित्त में बसाये रहती थीं ॥ ११ ॥ ॥ चौपाई । यक्षिणी, गंधर्व-स्त्रियाँ उन्मत्त हो सदैव इसी वन में विहार करती थीं। मनुष्य, नागिनी, नटी और नृत्यांगनाओं की तो गिनती ही नहीं की जा सकती ॥ १२ ॥ ॥ दोहा ॥ उनकी शोभा तो उन्हें ही सुहाती थी; कौन कवि भला उसका वर्णन कर सकता है। उन्हें देखते ही प्रेम हो जाता है और पलकें बन्द करते नहीं बनता था ॥ १३ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजकुँवर ने उनको जब देखा तो मन में अत्यन्त विस्मित हो उठा। चित्त में चौंककर उसने नज़रें ऐसे जोड़ लीं मानों चन्द्रमा को चकोरी देख रही हो १४ दोहा इस इस राजा का रूप देखकर वह बालिका उसी में उलझ गई और प्रिय के नयन

भई गुलाल ॥ १५ ॥ ॥ चौपई ॥ अटकत भई लाल लखि बाला । (मू०ग्रं०११७८) जैसे मनि लालन की माला । कह्यो चहत कछु तऊ लजावै । चलि चलि तीर कुअर के आवै ॥ १६ ॥ कै कुरबान लला मन डारैं । भूखन चीर पटंबर वारैं । फूल पान कोऊ लै आवै । भाँति भाँति सो गीतन गावै ॥ १७ ॥ ॥ दोहरा ॥ निरखि न्रिपत की अति प्रभा रीझि रही सभ नारि । भूखन चीर पटंब्र सभ देइ छिनिक महि वार ॥ १८ ॥ जनु कुरंगनि नाद धुनि रीझि रही सुनि कान । त्यों अबला बेधी सकल बधी बिरह के बान ॥ १९ ॥ सभ रीझी लखि राइ छबि दिति यादिति कुमारि । किंन्रनि जच्छ भुजंग जा मोहि रही सभ नारि ॥ २० ॥ ॥ चौपई ॥ सभ अबला इह भाँति बिचारैं । जोर डीठ न्रिप ओर निहारैं । कै हम आजु इही कह बरिहैं । ना तर इही छेत्र पर मरिहैं ॥ २१ ॥ कहत दैत जा हम हीं बरिहैं । देव सुता भाखैं हम करिहैं । जच्छ किंन्रजा कहि हम लैहैं । नातर पिय कारन जिय दैहैं ॥ २२ ॥ ॥ दोहरा ॥ जच्छ गंध्रबी किंन्रनी लखि छबि गई बिकाइ ।

देखकर रक्ताभ हो उठी ॥ १५ ॥ ॥ चौपाई ॥ प्रिय को देखकर स्त्री उलझ कर ऐसे गुलाबी हो गई जैसे मणि और लालों की माला हो । वह कुछ कहना चाहती थी पर लजाती थी और चल-चलकर उस कुँवर के पास खिसकती आती थी ॥ १६ ॥ प्रिय पर उसने मन, आभूषण, वस्त्रादि सब न्योछावर कर दिए । कोई उसके लिए फूल, कोई पान ले आ रही थी और भाँति-भाँति के गीत गा रही थी ॥ १७ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा की अत्यन्त शोभा देखकर सभी स्त्रियाँ मोहित हो रही थीं और सबने आभूषण, वस्त्र आदि क्षण भर मे न्योछावर कर दिये ॥ १८ ॥ जैसे हिरणी नाद के बाण से बिंध जाती है उसी प्रकार सभी अबलाएँ विरह के बाण से बिंधकर मोहित हो उठीं ॥ १९ ॥ राजा की छवि देखकर सभी देव-दानव-स्त्रियाँ रीझ उठीं । किन्नर, यक्ष, भुजंग आदि की सभी स्त्रियाँ मोहित हो उठीं ॥ २० ॥ ॥ चौपाई ॥ सभी स्त्रियाँ इस प्रकार विचार कर रही था और नज़र गड़ाकर राजा को ओर देख रही थीं । या तो हम आज इसका वरण करेंगी अथवा इसी स्थल पर मर जायँगी ॥ २१ ॥ दैत्य-कन्याएँ कहने लगीं, हम वरण करेंगी और देव-स्त्रियाँ कहने लगीं, हम वरण करेंगी । यक्ष और किन्नर-कन्याएँ कहने लगीं कि हम विवाह करेंगी अन्यथा प्रिय के कारण प्राण दे देंगी २२ दोहा यक्ष

सुरी आसुरी नागनी नैनन रही लगाइ ॥ २३ ॥ ॥ चौपई ॥ इक त्रिय रूप बिशन को धरा। एकन रूप ब्रहमा को करा। इक त्रिय भेस रुद्र को धार्यो। इकन धरम को रूप सुधार्यो ॥ २४ ॥ एकै भेस इंद्र को किया। एकन रूप सूरज को लिया। एकन भेस चंद्र को धार्यो। मनहु मदन को मान उतार्यो ॥ २५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सात कुमारी चली भेस इह धारकै। वा राजा कह दरशन दिया सुधारिकै। सात सुता राजा हमरी ए बरु अबै। हो राज पाट पुनि करहु जीति खल दल सबै ॥ २६ ॥ ॥चौपई॥ जब राजै उन रूप निहरा। सतपटाइ पाइन पर परा। धक धक अधिक ह्रिदै तिह भई। चटपट सकल बिसरि सुधि गई ॥ २७ ॥ धीरज धरा जबै सुधि आई। पुनि पाइन लपटाना धाई। धंनि धंनि भाग हमारे भए। सभ देवन दरशन मुहि दए ॥ २८ ॥ ॥ दोहरा ॥ पापी तें धरमी भयो चरन तिहारे लाग। रंक हुतो राजा भयो धंन्य हमारे भाग ॥ २९ ॥ ॥ चौपई ॥ मै सुई करो जु तुम मुहि भाखौ। चरनन ध्यान तिहारे राखौ। नाथ सनाथ अनाथहि किया।

गंधर्व, किन्नर-स्त्रियाँ छवि देखकर बिक गईं और सुर, नाग, असुर-स्त्रियाँ भी नयनों को जोड़कर स्थित हो गईं ॥ २३ ॥ ॥ चौपाई ॥ एक स्त्री ने विष्णु का और एक ने ब्रह्मा का रूप धारण किया। एक ने रुद्र का रूप बनाया और एक ने धर्मराज का रूप धारण कर लिया ॥ २४ ॥ एक ने इन्द्र का, एक ने सूर्य का, एक ने चन्द्रमा का ऐसा सुन्दर रूप धारण किया कि मानो कामदेव का भी मान-मर्दन कर दिया हो ॥२५॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सात कुमारियाँ यह वेश धारणकर चल पड़ीं और उस राजा को आ दिखाई दीं। हे राजन्! हमारी सात कन्याओं के साथ अभी विवाह करो और शत्रुओं को नष्ट कर राज करो ॥ २६ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब राजा ने उनका स्वरूप देखा तो घबराकर शीघ्र उनके चरणों में जा पड़ा। उसका हृदय अत्यधिक धक-धक करने लगा और शीघ्र ही उसकी सारी सुधि भूल गई ॥ २७ ॥ धैर्य धारण करने पर जब उसे होश आया तो वह पुनः चरणों में लिपटने के लिए दौड़ा। मेरे धन्य भाग्य हैं, जो आज मुझे सब देवताओं ने दर्शन दिये हैं ॥ २८ ॥ ॥ दोहा ॥ मैं आपके चरणों से लगकर पापी से धार्मिक हो गया हूँ। मैं निर्धन था आज राजा हो गया मेरे धन्य भाग्य हैं २९ चौपाई मैं वही करूँगा जो आप कहेंगी मैं तो सदैव आपके चरणो मे ध्यान लगाए रखूगा हे

अथ दोइ सौ सतावन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ नीलकेत राजा इक भारो । पुहपवती जिह नगरु जियारो । मंत्रि बचित्र तवन की दारा । रति पति की त्रिय को अवतारा ॥ १ ॥ स्री अलिगुंजमती दुहिता तिह । छबि जीती ससि पुंजन की जिह । तेज अपार कहा नहि जाई । आपु हाथ जगदीस बनाई ॥ २ ॥ स्री मनि तिलकु कुअरि इक राजा । राज पाट वाही कह छाजा । अप्रमान दुति कही न जाई । लखि छबि भान रहत उरझाई ॥ ३ ॥ ॥ बिजै छंद ॥ स्री अलिगुंज मती सखि पुंज लिए इक कुंज बिहारन आई । रूप अलोक बिलोकि महीप को शोक निवारि रही उरझाई । देखि प्रभा सकुचै जिय मै तऊ जोरि रही द्रिग बाँधि ढिठाई । धाम गई मन हुआही रह्यो जनु जूप हराइ जुआरी की न्याई ॥ ४ ॥ धामन जाइ सखी इक सुंदरी नैन की सैनन तीर बुलाई । काढ दयो अति ही धनवा कह भाँति अनेकन सौ समुझाई । पाइ परी मनु हारि करी भुज हाथ धरी बहुतैं घिघिआई । मीत मिलाइ

दो सौ सत्तावनवाँ चरित्र कथन

॥ चौपाई ॥ पुष्पावती नगर का उजाला राजा नीलकेतु एक बड़ा राजा था। विचित्रमंजरी उसकी स्त्री थी जो रति का अवतार थी ॥ १ ॥ अलिगुंजमती उसकी पुत्री थी जिसने मानों चन्द्र-किरणों की भी छवि जीत रखी हो। उसका अपरिमित तेज अवर्णनीय था। उसे मानों परमात्मा नै स्वयं बनाया था ॥ २ ॥ मणितिलक कुँवर एक राजा था जिसका अपार राजपाट था। उसकी छवि अपरिमित थी और उसके सौंदर्य को देखकर सूर्य भी ठिठक जाता था ॥ ३ ॥ ॥ विजय छंद ॥ अलिगुंजमती सखियों का झुंड लेकर एक कुंज में विहार करने गई। राजा का सुन्दर स्वरूप देखकर वह शोक का निवारण कर उलझकर रह गई। उसका सौंदर्य देखकर वह हृदय मे लज्जा से भर उठी और फिर भी ढीठतापूर्वक आँखें लड़ाकर देखती रही। वह घर तो चली गई पर उसका मन हारे हुए जुआरी की भाँति वहीं रह गया ॥ ४ ॥ घर जाकर उसने आँख के इशारे से एक सखी को बुलाया। धन निकालकर उसके सम्मुख रख दिया और उसे अनेकों प्रकार से समझाया उसके पाव पड़ गई उसकी मिन्नत की और उसके सामने बहुत घिघियाई

कि मोहु न पाइ हैं जिय जु हुती कहि तोहि सुनाई ।। ५ ।। जोगिन ह्वै बसिहौ बन मै सखि भूखन छोरि बिभूति चड़ैहौ । अंगन मै सजिहौ भगवे पट हाथ बिखै गडूआ गहि लैहौ । नैनन की पुतरीन के पत्तन बाकी बिलोकनि माँगि (मू०ग्रं०११८०) अघैहौ । देहि छुटो क्यों न आयु घटो पिय ऐसी घटान मै जान न दैहौ ।। ६ ।। एकत बोलत मोर करोरिन दूसरो कोकिलका कुहकारैं । दादर बाहत है हिय को अरु पानी परै छित मेघ फुहारैं । झिग्र करै झरना उर माँझ क्रिपान कि बिद्दलता चमकारैं । प्रान बचे इह कारन ते पिय आस लगै नहि आज पधारैं ।। ७ ।। ।। अड़िल्ल ।। अति ब्याकुल जब कुअरि सु घरि सहचरि लही । कान लागि कै बात बिहसि ऐसे कही । चतुरि दूतिका तह इक अबै पठाइयै । हो स्रीमनि तिलक कुअर कौ भेद मँगाइयै ।। ८ ।। सुनत मनोहर बात अधिक मीठी लगी । बिरहि अगनि की ज्वाल कुअरि के जिय जगी । चतुरि सखी इक बोलि पठाई मीत तन । हो जिय जानौ मुहि राखि जानि पिय प्रान धन ।। ९ ।। ।। दोहरा ।। सुनत बचन सहचरि चतुरि तहा पहूची जाइ । जह मनि तिलक न्रिपति

मुझे या तो मित्र को मिला दो अथवा तुम मुझे नहीं पाओगे। मेरे मन में जो था वह मैंने तुम्हें कह सुनाया है ।। ५ ।। हे सखी, मैं योगिनी होकर वन मे बस जाऊँगी और आभूषणों को छोड़कर भभूत मल लूँगी। अंगों पर भगवे वस्त्र धारण कर लूँगी और हाथ में लोटा ले लूँगी। नैनों की पुतलियों के पात्र बना लूँगी और माँगकर ही तृप्ति पा लूँगी। चाहे मेरी आयु घट जाय या शरीर ही टूट जाय पर मैं प्रिय को ऐसे ही जाने न दूँगी ।। ६ ।। एक तो अनेकों मोर बोल रहे हैं और दूसरे कोयलें कूक रही हैं। मेंढक हृदय को जला रहे हैं और बादलों की फुहारें धरती पर पड़ रही हैं। झींगुर हृदय में छेद किये दे रहे हैं और बिजली कृपाण की तरह चमक रही है। मेरे प्राण प्रिय की आशा लगाए हुए ही बचे हुए हैं। पर प्रिय आज नहीं आए ।। ७ ।। ।। अड़िल्ल ।। जब सहचरी सखी ने कुँवरि को अत्यन्त व्याकुल देखा तो हँसकर उसके कान में यह बात कही। एक चतुर दूती को अभी वहाँ भेजो और श्री मणितिलक कुँवर को बुलवाइए ।। ८ ।। मनोहर बात सुनकर उसे अच्छा लगा और कुँवरि के हृदय में विरह की ज्वाला जल उठी। उसने मित्र के पास एक चतुर सखी को भेजा और कहलवाया कि जैसे भी चाहो हे प्रिय! मुझे बचा लो ९ दोहा वह दासी सखी वहा आ पहुँची जहाँ मणितिलक

चढ़ा आखेटकहि बनाइ ॥ १० ॥ ॥ चौपई ॥ सहचरि तहा पहूँचित भई। न्रिप आगमन जहाँ सुनि लई। अंग अंग सुभ सजे सिंगारा। जनु निसपति सोभित जुत तारा ॥ ११ ॥ सीस फूल सिर पर त्रिय धारा। करन फूल दुहूँ करन सु धारा। मोतिन की माला के धरा। मोतिन ही सो मांगहि भरा ॥ १२ ॥ सभ भूखन मोतिन के धारे। जिन महि बज्र लाल गुहि डारे। नील हरित मनि प्रोई भली। जनु ते हसि उडगन कह चली ॥ १३ ॥ जब राजै वा त्रिय को लहा। मन महि अधिक चक्रित ह्वै रहा। देव अदेव जच्छ गंध्रबजा। नरी नागनी सुरी परीजा ॥ १४ ॥ ॥ दोहरा ॥ न्रिप चित्यो इह पूछियै क्यों आई इह देस। सूरसुता कै चंद्रजा कै दुहिता अलिकेस ॥ १५ ॥ ॥ चौपई ॥ चल्यो चल्यो ताके तट गयो। लखि दुति तिह अति रीझत भयो। रूप निरखि रहियो उरझाई। कवन देव दानो इह जाई ॥ १६ ॥ मोतिन माल बाल तिन लई। जिह भीतर पतिया गुहि गई। कह्यो कि जैसी मुझहि

राजा शिकार के लिए पहुँचा हुआ था ॥ १० ॥ ॥ चौपाई ॥ दासी वहाँ पहुँच गई जहाँ उसने राजा का आना सुना। उसने अंग-अंग को सजा रखा था और ऐसा लग रहा था जैसे तारागणों से युक्त चन्द्रमा शोभायमान हो ॥ ११ ॥ स्त्री ने शीशफूल सिर पर सजाया और कर्णफूल दोनों कानों में पहने। मोतियों की माला पहनी और मोतियों से ही माँग भरी ॥ १२ ॥ सब आभूषण उसनें मोतियों के धारण किये और उनमें कठोर लाल भी गूँथ दिये। नीली, हरी मणियाँ पिरोईं। ऐसा लग रहा था मानों तारागण हँस कर उड़ रहे हों ॥ १३ ॥ राजा ने जब उस स्त्री को देखा तो वह मन में अत्यधिक चकित हुआ। यह देव, अदेव, यक्ष अथवा गन्धर्व-कन्या है। यह नर, नाग अथवा सुर-स्त्री है या फिर परी है ॥ १४ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा ने सोचा कि इससे पूछा जाय कि क्यों इस देश में आई है। यह सूर्य की पुत्री, चन्द्र की कन्या अथवा कुबेर की पुत्री है ॥ १५ ॥ ॥ चौपाई ॥ चलता-चलता वह उसके पास पहुँचा और उसकी छवि देखकर अत्यन्त मोहित हो उठा। उसका रूप देखकर वह उलझकर रह गया और सोचने लगा कि यह किस देव अथवा दानव की पुत्री है ॥ १६ ॥ उस स्त्री ने मोतियों की माला ली और उसी में पत्र गूँथ दिया उसे कहा कि तुम जैसी मुझे देख रहे हो उससे उस

निहारहु । तैसियै तिह न्रिप सहस बिचारहु ॥ १७ ॥
॥ दोहरा ॥ न्रिप बर बाल बिलोकि छबि मोहि रहा सरबंग ।
सुध ग्रहि की बिसरी सभै चलत भयो तिह संग ॥ १८ ॥
॥ चौपई ॥ लाल माल (मू०ग्रं०११८१) कौ बहुरि निकारा ।
पतिया छोरि बाँचि सिर झारा । जो सरूप दीयो बिधि याके ।
तैसी सुनी सात सतबाँके ॥ १९ ॥ किह बिधि वाको रूप
निहारौ । सफल जनम करि तदिन बिचारौ । जो ऐसी
भेटन कह पाऊँ । इन रानिन फिरि मुख न दिखाऊँ ॥ २० ॥
वही बाट ते उही सिधायो । तवनि तरुनि कह रथहि
चड़ायो । चलत चलत आवत भयो तहाँ । अबला मगहि
निहारत जहाँ ॥ २१ ॥ ॥ दोहरा ॥ राज साज सभ त्यागि
करि भेख अतिथ बनाइ । तवनि झरोखा के तरे बैठ्यो
धूँआँ लाइ ॥ २२ ॥ ॥ चौपई ॥ राज सुता भिच्छा लै आवै ।
ताकह अपने हाथ जिवावै । निसि कह लोग जबै स्वै जाँही ।
लपटि लपटि दोऊ भोग कमाँहीं ॥ २३ ॥ इह बिधि कुअरि
अधिक सुख लीए । सभ ही लोग बिस्वासित कीए । अतिथ
लोग कहि ताँहि बखानै । राजा करि कोऊ न पछानै ॥ २४ ॥

हज़ार गुना मानों ॥ १७ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा उस बाला की छवि देखकर सर्वांग रूप से मोहित हो उठा । उसे घर की सुधि भूल गई और वह उसी के साथ चल पड़ा ॥ १८ ॥ ॥ चौपाई ॥ लालों की माला को उसने निकाला और पत्र को खोल-पढ़कर अपना सिर धुना । विधाता ने जो स्वरूप इस स्त्री को दिया है तो इस हिसाब से उसके बारे में इसका कहना सत्य ही होगा ॥ १९ ॥ किस प्रकार उसका रूप देखूँ और अपने जन्म को सफल करूँ । यदि ऐसी स्त्री कहीं मिल जाय तो इन रानियों को तो वापस मुँह न दिखाऊँ ॥ २० ॥ उसी रास्ते से उस ओर चल पड़ा और उस तरुणी को रथ में बिठा लिया । चलता-चलता वह वहाँ आ गया जहाँ वह बालिका उसका रास्ता देख रही थी ॥ २१ ॥ ॥ दोहा ॥ राजसाज सब त्याग कर और फ़क़ीर का वेश बनाकर उसके झरोखे के नीचे धुआँ लगाकर बैठ गया ॥ २२ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजकन्या भिक्षा लेकर आती थी और उसे अपने हाथ से खाना खिलाती थी । रात में लोग जब सो जाते थे तो वे लिपट-लिपटकर रति-क्रीड़ा करते थे ॥२३॥ इस विधि से कुँवरि ने अत्यधिक सुख प्राप्त किया और सब लोगों पर विश्वास जमा दिया उसे सब फक़ीर

इक दिन कुअरि पिता पहि गई। बचन कठोर बखानत भई। कोप बहुत राजा तब भयो। बनबासा दुहिता कह दयो ॥ २५ ॥ सुन बनबास प्रगटि अति रोवै। चित के बिखै सकल दुख खोवै। सिधि काज मोरा प्रभू कीना। तात हमै बनबासा दीना ॥ २६ ॥ सिवकन संग इमि राज उचारो। एह कन्या कह बेगि निकारो। जह बन होइ घोर बिकराला। तिह इह छड आवहु ततकाला ॥ २७ ॥ लै सेवक तिन संग सिधाए। ताँको बन भीतर तजि आए। वह राजा आवत तह भयो। तही तवनि तैं आसन लयो ॥ २८ ॥ द्रिढ़ रति प्रथम तवन सो करी। भाँति भाँति के भोगन भरी। है आरूड़त पुनि तिह कीना। नगर अपन को मारग लीना ॥ २९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ सतावन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २५७ ॥ ४८५५ ॥ अफजूँ ॥

के तौर पर जानते थे और राजा कोई भी नही मानता था ॥ २४ ॥ एक दिन कुँवरि पिता के पास गई और उसे भला-बुरा कहने लगी। राजा उससे कुपित हो उठा और उसने पुत्री को वनवास दे दिया ॥ २५ ॥ वनवास को सुनकर वह प्रकट में तो रोने लगी पर मन में प्रसन्न थी। परमात्मा ने मेरा कार्य सिद्ध कर दिया है, जिसमे पिता ने मुझे वनवास दिया है ॥२६॥ सेवकों को राजा ने कहा कि इस लड़की को तुरन्त देश से निकालो। जहाँ घोर वन हो वहाँ इसको तत्काल छोड़ आओ ॥ २७ ॥ सेवक उसे साथ ले वहाँ पहुँच गए और उसे वन के भीतर छोड़ आए। वह राजा भी वहाँ आ गया और उसने वहीं आसन जमा लिया ॥ २८ ॥ सबसे पहले (मिलते ही) उसने दृढतापूर्वक रति-क्रिया की और भाँति-भाँति से भोग-विलास किया। फिर उसे घोड़े पर बैठाया और अपने नगर का रास्ता पकड़ा ॥ २९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ सत्तावनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २५७ ॥ ४८५५ ॥ अफ़ज़ूँ ॥

अथ दोइ सौ अठावन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ हंसाधुज राजा इक सुनियत । बल प्रताप जिह अति जग गुनियत । केसोतमा धाम तिह नारी । जा सम सुनी न नैन निहारी ॥ १ ॥ हंसमती तिह ग्रहि दुहिता इक । पढ़ी ब्याकरन कोकशासत्र निक । ता सम अवर न कोऊ जग मै । थकित रहित (मू०ग्रं०११८२) निरखत रवि मग मैं ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ अति सुंदरि वह बाल जगत महि जानियै । जिह सम अवर सुंदरी कहूँ न बखानियै । जोबन जेब अधिक ताके तन राजई । हो निरखि चंद्र अरु सूर मदन छबि लाजई ॥ ३ ॥ रूप कुअरि सु कुमार जबै अबला लहा । जा सम निरखा कहूँ न कहूँ किन हूँ कहा । जब वह राजसभा महि बैठत आइकै । हो सभ इसत्रिन के चित कह लेत चुराइकै ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ राजसुता इक सखी बुलाई । सिखै कुअर के पास पठाई । कोटि जतन करि तिह ह्यां ल्यावहु । सुख मांगहु जोई सोई पावहु ॥ ५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ ब्याकुल राजकुअरि जबै सहचरी निहारी ।

दो सौ अट्ठावनवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हंसाध्वज नामक एक राजा सुना जाता था, जिसका बल-प्रताप सारा जगत मानता था। केशोतमा नामक स्त्री उसके घर में थी जिसके समान अन्य कोई न देखा गया और न सुना गया था ॥ १ ॥ हंसमती नामक एक पुत्री उसके घर में थी जो व्याकरण, कोक एवं शास्त्रादि पढ़ी थी। जगत में उसके समान अन्य कोई नहीं था और सूर्य भी उसे रास्ते चलती को देखने के लिए थककर भी खड़ा रहता था ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ उस बालिका को अत्यन्त सुन्दर समझा जाता और उसके समान अन्य सुन्दरी का बखान नहीं होता था। उसका यौवन अत्यधिक शोभायमान था और सूर्य-चन्द्र भी उसकी छबि को देख लज्जित होते थे ॥ ३ ॥ जब उस स्त्री ने रूपकुँवर सुकुमार को देखा तो पाया कि ऐसा व्यक्ति न कहीं देखा और न कहीं सुना गया है। जब वह राजसभा में बैठता था तो सभी स्त्रियों के चित्त को चुरा लेता था ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजकुमारी ने एक सखी को बुलाया और उसे सिखाकर कुँवर के पास भेजा उसे कोई भी यत्न कर यहां ले आओ और मुहमांगा इनाम पाओ ५ अड़िल्ल सखी ने

मति न कुअरि मरि जाइ इहै जिय माँहि बिचारी। चली सकल डर डारि पहूची जाइ तह। हो बैठो सेज सवारि तवन को मित्र जह॥ ६॥ ॥ चौपई॥ ज्यों त्यों करि ताकौ तह ल्याई। बात मिलन की तिह न जताई। तब वहु धाम कुअरि के आयो। राजसुता निरखत सुख पायो॥ ७॥ ताकौ कही आनि मोकौ भजु। लाज साज सभ ही अबही तजु। मथन भेद जब मीत पछाना। धरम छुटन ते अधिक डराना॥ ८॥ ॥ दोहरा॥ सुंदरि अधिक कहाइ जग जनम राजग्रहि पाइ। ढीठ रमियो मो सों चहैं अजहूँ न निलज लजाइ॥ ९॥ ॥ चौपई॥ जब तुहि मैं निरखत छबि भई। लोकलाज तबही तज दई। धरम करम मैं कछू न जाना। तव दुति लखि मुर जीय बिकाना॥ १०॥ सुन तरनी मैं तोहि न भजौ। धरम आपनो कबहूँ न तजौ। जब ते क्रिपा नंद मुहि जायो। इहै मित्र उपदेश बतायो॥ ११॥ ॥ दोहरा॥ पर नारी की सेज पर भूलि न दीजहु पाइ। काम भोग नहि कीजियहु तासो रुचि उपजाइ॥ १२॥ ॥ चौपई॥ अब तुमरे मैं करम निहारे। कहिहौ राजा पास

जब राजकुँवरि को व्याकुल देखा तो सोचा कि कहीं कुँवरि मर न जाय। वह सभी भय त्यागकर वहाँ जा पहुँची जहाँ शय्या सजाकर उसका मित्र बैठा हुआ था॥ ६॥ ॥ चौपाई॥ जैसे-तैसे वह उसे वहाँ ले आयी पर मिलन की बात को उसने जताया नहीं। तव वह कुँवरि के घर चला आया और राजकुमारी को देखकर हर्षित हो उठा॥७॥ उसने कहा कि लज्जा-सज्जा आदि को त्यागकर मुझसे रमण करो। जब रतिक्रीड़ा के भेद को मूर्ख ने जान लिया तो धर्महानि के भय से अत्यधिक डर गया॥ ८॥ ॥ दोहा॥ राजा के घर जन्म पाकर, अत्यधिक सुन्दरी कहाकर यह ढीठ निर्लज्ज मुझसे अब रमण करना चाहती है॥ ९॥ ॥ चौपाई॥ जब मैंने तुम्हारी छवि देखी तो लोक-लाज त्यागकर मैंने धर्म-कर्म कुछ नही जाना और तुम्हारी छवि पर मेरा मन बिक गया॥ १०॥ हे तरुणी! सुनो, मैं तुम्हारा उपभोग नहीं करूँगा और अपना धर्म नहीं छोड़ूंगा। जबसे मैं पैदा हुआ हूँ, मुझे विप्र ने यही उपदेश दिया है॥ ११॥ ॥ दोहा॥ पराई स्त्री की शय्या पर भूलकर भी पाँव नहीं रखना चाहिए और उसमे रुचिपूर्वक कभी भी कामभोग नहीं करना चाहिए '। १२॥ ।' चौपाई॥ मैं तुम्हारे कर्म देख चुका हूँ और यह सब राजा को कहूगा तुम्हे घर से पकड मँगाऊँगा और अनेक प्रकार से

सवारे। तोहि सदन ते पकरि मँगैहो। अनिक भाँति सासना दिवैहो॥ १३॥ ॥ दोहरा॥ परदा तुमरो फारिहौ तुमरे पिता हजूरि। तोकह देस निकारिहौ कूक्रनि की ज्यों कूर॥ १४॥ ॥ चौपई॥ जरि बरि गई नामु कुतिया सुनि। कोप किया अति ही माथो धुनि। प्रथम इसी कह अबै (मू०ग्रं०११८३) सँघारो। बहुरि भ्रिस याके कहु मारो॥१५॥ जिन तुहि यह उपदेश द्रिड़ायो। ताते मोसौ न भोग कमायो। कै जड़ आनि अबै मुहि भजो। नातर आस प्रान कि तजो॥ १६॥ मूरख तिह रति दान न दीया। ग्रहि अपने का मारग लीया। अनिक भाँति तिन किया धिकारा। पाइन परी लात सौ मारा॥ १७॥ राजसुता क्रुद्धित अति भई। इह जड़ मुहि रति दान न दई। प्रथम पकरि करि याहि सँघारो। बहुरि मिस्र याकै कह मारो॥ १८॥ ॥ अड़िल्ल॥ तमकि तेग को तब तिह घाइ प्रहारियो। ताहि पुरख कह मारि ठौर ही डारियो। ऐंच सदन की लोथि दई तर डारिकै। हो ता पर रही बैठि करि आसन मारिकै॥ १९॥ ॥ दोहरा॥ जपमाला कर महि गही बैठी आसन मारि। पठै सहचरी पिता प्रति लीना निकट हकारि॥ २०॥ ॥ चौपई॥ हंसकेत तब ताँहि सिधाना।

प्रताड़ित करवाऊँगा॥ १३॥ ॥ दोहा॥ तुम्हारे पिता के समक्ष तुम्हारा पर्दाफ़ाश करूँगा और वह तुम्हें कुत्तों की तरह बाहर निकाल देगा॥ १४॥ ॥ चौपाई॥ वह कुतिया यह सुनकर जल-भुन गई और माथा धुनकर उसने अत्यन्त क्रोध किया। पहले तो मैं इसी को मारूँ और फिर इसके पंडित को भी मार डालूँगी॥ १५॥ जिसने इसे ऐसा उपदेश दिया है कि इसने मेरे साथ रतिक्रीड़ा नहीं की है। मूर्ख या तो आकर मुझसे रमण करो नहीं तो अपने प्राणों की आशा त्याग दो॥ १६॥ उस मूर्ख ने रतिदान नहीं किया और अपने घर का रास्ता लिया। अनेक प्रकार से उसे धिक्कारा और पाँव पर गिरी हुई को लात से मारा॥ १७॥ राजकुमारी अत्यन्त क्रोधित हो उठी कि इस मूर्ख ने मुझे रतिदान नहीं दिया। पहले मैं इसे मारूँगी और फिर इसके गुरु को मार डालूँगी॥ १८॥ ॥ अड़िल्ल॥ उसने तमककर तलवार का वार उस पर किया और उस पुरुष को उसी स्थान पर मार डाला। उसकी लाश खींचकर नीचे फेंक दी और उस पर आसन जमाकर बैठ गई १९ दोहा माला हाथ में पकडकर आसन मारकर बैठ

निरखि सुता तर म्रितक डराना। कहसि कुअरि इह कहि तुहि करा। बिनु अपराध याको जिय हरा ॥ २१ ॥ चिंतामनि मुहि मंत्र सिखायो। बहु बिधि मित्र उपदेश द्रिड़ायो। जौ इह रूप कुअर ते मरिहैं। तब सभ काज तिहारो सरिहैं ॥ २२ ॥ ताँते मै याको गहि मारा। सुनहु पिता तुम बचन हमारा। साधो मंत्र बैठ याँ पर मै। जो जानहि सो कारहु अबै तैं ॥ २३ ॥ हंसकेत न्रिप कोप भरा तब। बचन सुता कौ स्रवन सुना जब। इयाँ ल्यावहु तिह मित्र पकरिकै। जो दुहिते क्यौं मंत्र सिखरिकै ॥ २४ ॥ सुनि म्रित बचन उताइल धाए। तह मित्रहि न्रिप पहि गहि ल्याए। ताकह अधिक कसासा दिया। करम चंडार बिप्र है किया ॥ २५ ॥ सुनि बच मित्र अचंभै रहा। त्राहि त्राहि राजा तन कहा। मै प्रभु करम न ऐसो किया। तव दुहिता कह मंत्र न दिया ॥ २६ ॥ तब लगि राजकुअरि तह आई। दिजबर के पाइन लपटाई। तुम जु मंत्र मो कहि सिखायो। ताही बिधि मै जाप कमायो ॥ २७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तब आइसु हम मानि मनुच्छ कह मारियो। ता

गई और दासी भेजकर पिता को बुलवा लिया ॥ २० ॥ ॥ चौपाई ॥ हंसकेतु तब उस ओर चल पड़ा और अपनी पुत्री के नीचे मृतक को देखकर घबरा गया। उसने कुँवरि को कहा कि यह तुमने क्या किया है और इसे निरपराध को क्यों मार डाला ॥ २१ ॥ मुझे पंडित ने चिंतामणि मंत्र विभिन्न प्रकार से दृढ़ करवाया है और कहा है कि यदि मैं इस कुँवर को मार दूँ तो मेरे सारे काम ठीक हो जायँगे ॥ २२ ॥ इसलिए मैंने इसे पकड़कर मार डाला है। हे पिता तुम मेरी बात सुनो। मैंने इस पर बैठकर मंत्र की साधना की है और तुम जो कहो मैं अभी कर सकती हूँ ॥ २३ ॥ राजा हंसकेतु तब क्रोध में भर उठा और पुत्री की बात सुनते ही उसने कहा कि अभी उस पंडित को पकड़कर लाओ जो ऐसा मंत्र इसे सिखाकर गया है ॥ २४ ॥ बात सुनकर सेवक दौड़े गए और उस पंडित को पकड़कर ले आए। उसे अत्यधिक यातना सहनी दी, क्योंकि वे यह समझ रहे थे कि इसने चांडाल का काम किया है ॥२५॥ मित्र यह सुनकर अचंभे में पड़ गया और त्राहि-त्राहि करने लगा। हे प्रभु ! मैंने यह कर्म नहीं किया है और आपकी पुत्री को कोई मंत्र नहीं दिया है ॥ २६ ॥ तब तक राजकुमारी वहाँ आ गई और विप्र के पाँवों से लिपट कर कहने लगी कि तुमने जो मंत्र मुझे सिखाया था मैंने उसी विधि से उसका जाप किया है ७ अड़िल्ल तुम्हारी आज्ञा मानकर मैंने एक

पाछे चिंतामनि मंत्र उचारियो । चारि पहर निसि जपा सु सिधि न कछु भयो । हो ताते हम रिसि ठानि सु (मू०ग्रं०११८४) कहि न्रिप प्रति दयो ॥ २८ ॥ ॥ चौपई ॥ अब किह काज मुकरि तै गयो । तब चिंतामन हमहि द्रिड़यो । अब क्यो न कहत न्रिपति के तीरा । साच कहत कस लागत पीरा ॥ २९ ॥ मिस्र चक्रित चहूँ ओर निहारै । कहा भयो जगदीस सँभारै । करि उपदेस बहुत बिधि हारा । भेद अभेद न्रिप कछु न बिचारा ॥ ३० ॥ ॥ दोहरा ॥ फाँसी तिह मिस्रहि दिया हंसकेत रिसि मानि । हंसमती कह जिह सिख्यो । ऐसो मंत्र बिधान ॥ ३१ ॥ जिह न भजी तिह घै हना इह छल मिस्रहि मारि । इह बिधि न्रिप क्रुध्रित किया हंसमती बर नारि ॥ ३२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ अठावन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २५८ ॥ ४८८७ ॥ अफजूं ॥

मनुष्य को मारा और फिर चिंतामणि मंत्र का उच्चारण किया । चार प्रहर तक उसका जाप किया पर कोई सिद्धि प्राप्त नहीं हुई । इसी से क्रुद्ध हो राजा को यह सब मैंने बता दिया ॥ २८ ॥ ॥ चौपाई ॥ अब भला तुम क्यों मुकर गए हो और तब तो तुमने मुझे चिंतामणि मंत्र दृढ़ करवाया था । अब राजा के सामने क्यों नहीं मानते हो और सत्य कहते तुमको क्या दर्द हो रहा है ॥ २९ ॥ मिश्र ने चकित हो चारों ओर देखा और सोचा अब यह क्या हो रहा है । परमात्मा ही रक्षा करे । बहुत सी बातें उसने कही और हार गया पर राजा ने भेद-अभेद कुछ नहीं माना ॥ ३० ॥ ॥ दोहा ॥ हंसकेतु ने क्रोध मानकर उस मिश्र को फाँसी दे दी, जिसने हंसमती को वह मंत्र-विधान सिखाया था ॥ ३१ ॥ जिसने रमण नहीं किया उसे मार डाला और प्रपंच से मिश्र को भी मार डाला । इस प्रकार श्रेष्ठ सुन्दरी हंसमती ने राजा को भी क्रोधित कर दिया ॥ ३२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ अट्ठावनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २५८ ॥ ४८८७ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ उनसठि चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ रुद्रकेत राजा हुतो राशट्र देश को नाहि । जा सम और नरेश नहि दुतिय प्रिथी तल माहि ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ स्री म्रिगराजकला ताकी त्रिय । बसत न्रिपति के जिह अंतर जिय । जाके रूप तुल्लि नहि कोऊ । एकै घड़ी बिधाता सोऊ ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ दोइ पुत्र ताते भए अमित रूप की रासि । तीनि भवन महि जानियत जाको तेज रुत्रास ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ ब्रिखभकेत सुभ नामु प्रथम को जानियै । ब्याघ्रकेत दूसर को नाम प्रमानियै । रूपवान बलवान बिदित जग मैं भए । हो जनुक सूर ससि प्रगट दुतिय तिह पुरवए ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ जब जोबन झमका तिनके तन । जात भयो जब ही लरिकापन । अरि अनेक बहु बिधन सँघारे । चाकर प्रजा आपने पारे ॥ ५ ॥ ॥ दोहरा ॥ भाँति भाँति के देस लै बहु जीते अरिराज । सभहिन सिर सोभित भए दिन मन ज्यों नर राज ॥ ६ ॥ रूप कुअर घटि प्रथम मै दूसर रूप अपार । देस देस तें आनि त्रिय सेवत जाँहि हजार ॥ ७ ॥ ॥ सोरठा ॥ ऐसो किसी न देस

दो सौ उनसठवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ (सौ) राष्ट्र देश में एक राजा था, जिसके समान पृथ्वीतल पर अन्य कोई राजा नहीं था ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ मृगराजकला उसकी स्त्री थी जो राजा के मन में बसा करती थी । उसके रूप के समकक्ष अन्य कोई नहीं था और लगता था मानों विधाता ने एक ही बनाई हो ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ उससे अमित रूपराशि वाले दो पुत्र हुए जिनका भय तीनों लोकों में माना जाता था ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ पहले का नाम वृषभकेतु था और दूसरे का नाम व्याघ्रकेतु था । वे संसार में रूपवान और बलवान जाने जाते थे और ऐसे लगते थे मानों दूसरे चन्द्र-सूर्य धरती पर आए हों ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब उनका यौवन-काल आया और लड़कपन बीता तो उन्होंने अनेकों शत्रुओं का नाश किया और अपने सेवकों का पालन किया ॥ ५ ॥ ॥ दोहा ॥ भाँति-भाँति के देश और अनेकों शत्रु राजा उन्होंने मारे और सबके सिर पर राजा सूर्य की तरह शोभायमान थे ६ पहले कुँवर मे रूप कम था पर दूसरे कुवर मे अपार रूप था और देश-देशान्तरो से स्त्रियाँ

जैसो लहु सुंदर कुअर । कै दूसरो दिनेश कै निशेश अलिकेश यहि ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ ताकी मात पुत्र की लखि छबि । जात भई सुधि सात तवन सब । रम्यो चहत लहु सुत के संगा । रानी ब्यापी अधिक अनंगा ॥ ९ ॥ तिह तब चहा नाथ कह मरियै । (मू०ग्रं०११८५) पुनि टीका को पुत्र संघरियै । कवन चरित्र कह कहाँ बिचारो । लहु सिर पुत्र छत्र कह ढारो ॥ १० ॥ एक दिवस सिवधुजहि बुलायो । मदरा सो करि मत्त सुवायो । पुनि टीका को पूत हकारा । अधिक मत्त ताहू कह प्यारा ॥ ११ ॥ ॥ दोहरा ॥ पति सुत प्रथम सुवाइ करि काढि लिया असि हाथ । पूत हेत मारा तिनै हाथ आपने साथ ॥ १२ ॥ ॥ चौपई ॥ मारि पूत पति रोइ पुकारा । पति सुत सुत पति मारि सँघारा । मद के महा मत्त ए भए । आपुस मै कोपित तन तए ॥ १३ ॥ उठित दोऊ आहव कह भए । काढि क्रिपान कोप तन तए । असि लै पितु सुत के सिर झारा । पूत काढि तितु सीस प्रहारा ॥ १४ ॥ मैं ठाढी इह चरित निहारा । फूटि न गए नैन करतारा । दाव बचाइ न इन ते अयो । ताते काल दुहुँन को भयो ॥ १५ ॥ अब हौ

आकर उनकी सेवा करती थीं ॥ ७ ॥ ॥ सोरठा ॥ ऐसा सुन्दर कुंवर कहीं भी नहीं था। वह मानों सूर्य था अथवा चन्द्र था या फिर कुबेर था ॥ ८ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसकी माँ पुत्र की छवि को देखकर अपनी सुधि भूल जाती थी। वह छोटे पुत्र के साथ रमण करना चाहती थी, क्योंकि रानी के तन में अत्यधिक काम व्याप्त हो चुका था ॥ ९ ॥ तब उसने सोचा कि स्वामी को मारा जाय और फिर राज-तिलक पानेवाले पुत्र को मारा जाय। कौन सा प्रपंच किया जाय कि छोटे पुत्र के सिर पर राज्य-छत्र झूले ॥ १० ॥ उसने एक दिन शिवध्वज को बुलाया और मदिरा पिलाकर उसे मस्त कर सुला दिया। पुनः बड़े पुत्र को बुलाया और उसे भी अत्यधिक प्रेम किया ॥ ११ ॥ ॥ दोहा ॥ पति के पुत्र को सुलाकर तलवार निकाल ली और छोटे पुत्र के हेतु उसे अपने हाथ से मार दिया ॥ १२ ॥ ॥ चौपाई ॥ पुत्र को मार कर रोकर पति को पुकारा। अब पति के पुत्र और पुत्र के पिता अर्थात् राजा को मार डाला। वे मद में मस्त हो कुपित हो उठे ॥ १३ ॥ दोनों युद्ध करने लगे और कृपाणें निकालकर कुपित हो मारने लगे। पिता ने कृपाण पुत्र के सिर में मारी और पुत्र ने उसके सिर पर वार किया ॥ १४ ॥ मैं खड़ी-खड़ी यह देखती रही ८ ने मेरे नयन क्यों न फोड दिये इनसे दाँव न बचाया

दैव कहौ का करौ। उर महि मारि कटारी मरौ। बानप्रसथ ह्वै बनहि सिधैहौ। लहु सुत के सिर छत्र दुरैहौ ॥ १६ ॥ प्रथम पूत पति को बध कीना। बहुरि राज लहु सुत कह दीना। बहुरौ भेख अतिथ को धारौ। पंथ उत्तरा ओर सिधारी ॥ १७ ॥ ॥ दोहरा ॥ तहा जाइ तपसा करी शिव की बिबिध प्रकार। भूत राट रीझत भए निरखि ठिठुरता नारि ॥ १८ ॥ ॥ चौपई ॥ बरंबयूह पुत्री कै कहा। जो तव ब्याधि हिदै महि रहा। देहु त पिता इहै बर पाऊँ। बिरधा ते तरुनी ह्वै जाऊँ ॥ १९ ॥ ॥ दोहरा ॥ बिरधा ते तरुनी भई बर दीना त्रिपुरारि। तुचा पुरातन छाडि करि ज्यों अहि कुंचुरि डारि ॥ २० ॥ ॥ चौपई ॥ बिरधा ते तरुनी जब भई। तब चलि तिसी नगर कह गई। जह खेलत सुत चड़ा शिकारा। मारे रीछ रोझ अंखारा ॥ २१ ॥ एक म्रिगी का भेस धार तब। तन के बस्त्र छोडि सुंदर सब। खेलत हुतो अखिट सुत जहाँ। हरनी ह्वै निकसत भी तहाँ ॥ २२ ॥ ता पाछे तिह सुत है डारा। संगी किसू न ओर निहारा। एकल जात दूरि भ्यो तहाँ। थो बन घोर भयानक

जा सका इसलिए दोनों मारे गये ॥ १५ ॥ हे देव ! अब मैं क्या करूँ और क्यों न तन में कटार भोंककर मर जाऊँ। मैं तो छोटे पुत्र के सिर पर छत्र झुलाकर वानप्रस्थ हो जाऊँगी ॥ १६ ॥ पहले पुत्र और पति का वध किया और फिर छोटे पुत्र को राज दिया। पुनः साधु का वेश धारण किया और उत्तरी देश की ओर चली गई ॥ १७ ॥ ॥ दोहा ॥ वहाँ जाकर उसने शिव की विविध प्रकार से तपस्या की जिससे स्त्री की कठोरता देखकर भूत-सम्राट् उस पर प्रसन्न हो गए ॥ १८ ॥ ॥ चौपाई ॥ उन्होंने कहा कि जो तुम्हारे मन में कामना है उसे मैं पूरा करता हूँ। तब उसने कहा कि हे देव ! मुझे यह वर दो कि मैं वृद्ध से तरुणी हो जाऊँ ॥ १९ ॥ ॥ दोहा ॥ शिव ने वरदान दिया और वह वृद्धा से तरुणी हो गई। उसने पुरानी त्वचा ऐसे ही छोड़ दी जैसे साँप केंचुली छोड़ता है ॥ २० ॥ ॥ चौपाई ॥ जब वह वृद्धा से तरुणी हो गई तो चलकर उसी नगर में जा पहुँची, जहाँ पुत्र शिकार के लिए निकला था और रीछ-भालू आदि को मार रहा था ॥ २१ ॥ वह एक मृगी का वेश धारण करके और तन के सुन्दर वस्त्र त्यागकर वहाँ जा निकली जहाँ पुत्र शिकार खेल रहा था ॥ २२ ॥ उसके पुत्र ने उसी के पीछे दौड़ लगा दी और किसी संगी-साथी की भी परवाह नहीं की वह अकेला वहाँ

जहाँ ॥ २३ ॥ साल तमाल जहाँ द्रुम भारे । निंबू कदंप सु बट जटियारे । सीबर तार खजूरैं भारी । निज हाथन जनु ईस सुधारी ॥ २४ ॥ म्रिगी जाइ तह गई भुलाई । (पृ०पं०११८६) उत्तमांगना भेस बनाई । आनि अपन तिह रूप दिखारा । राजकुअर मोहित करि डारा ॥ २५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सुरी आसुरी किंन्रनि कवन बिचारियै । नरी नागनी नगनी को जिय धारियै । गंधरबी अपसरा कवन इह जानियै । हो रवी ससी बासवी पारवती मानियै ॥ २६ ॥ राजकुमार निरख तह रहा लुभाइकै । पूछत भयो चलि ताहि तीर तिह जाइकै । नरी नागनी नगनी इन ते कवनि तुय । हो कवन साचु कहि कह्यो सुता तै एस भुअ ॥ २७ ॥ ॥ दोहरा ॥ मन बच क्रम मै तोरि छबि निरखत गयो लुभाइ । अबही ह्वै अपनी बसहु धाम हमारे आइ ॥ २८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक आध बिर नाँहि नाँहि तिन भाखियो । लगी निगोडी लगन जात नहि आखियो । अंत कुअर जो कहा मानि सोई लियो । हो पति सुत प्रथम सँघारि लहु सुत छलि पिय कियो ॥ २९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ उनासठि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २५९ ॥ ४९१६ ॥ अफजूं ॥

दूर निकल गया जहाँ घोर भयानक वन था ॥ २३ ॥ वहाँ साल, तमाल, निंबू, कदम्ब और बड़ के भारी वृक्ष थे । सीबर, ताड़, खजूर के भारी वृक्ष थे और ऐसे लग रहे थे मानों उन्हें परमात्मा ने अपने हाथों से बनाया हो ॥ २४ ॥ मृगी वहाँ जाकर लुप्त हो गई और उसने सुन्दर अंगोंवाली स्त्री का वेश बना लिया । उसने अपना रूप आ दिखाया और राजकुँवर को मोहित कर लिया ॥ २५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ यह सुर-स्त्री, असुर-स्त्री, किन्नर-स्त्री या नर-नाग अथवा पर्वत (पहाड़ी) स्त्री है । गंधर्वी, अप्सरा, सूर्य, शशि की स्त्री अथवा इन्द्राणी है ॥ २६ ॥ राजकुमार उसे देखकर लुब्ध हो उठा और उसके पास जाकर पूछने लगा । तुम नर, नाग अथवा नग (पहाड़) की स्त्री मे से कौन हो ? मुझे सत्य बताओ ॥२७॥ ॥ दोहा ॥ मैं तो मन-वचन-कर्म से तुम्हारी छवि देखकर उस पर मोहित हो गया हूँ । तुम तुरन्त मेरे घर में चलो और बसो ॥ २८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ उसने एक आधी वार नाँह-नाँह कहा पर निगोड़ी लगन ऐसी लगी थी कि अच्छी तरह कहा भी नहीं जाता था अत

जो कुवर ने कहा वही उसने मान लिया और इस प्रकार उसने पहले पति और पुत्र को मारकर फिर छलकर छोटे पुत्र को प्रिय बना लिया ॥ २६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ उनसठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २५६ ॥ ४६१६ ॥ अफजूँ ॥

अथ दोइ सौ साठ चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ मसतकरन इक न्रिपति जगिस्स्वी । तेज भान बलवान तपस्स्वी । स्री कजराछमती तिह दारा । पारबती को जनु अवतारा ॥ १ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ मसतकरन न्रिप शिव पूजा नितप्रति करै । भाँति अनिक के ध्यान जानि गुर पगु परै । रैनि दिवस तपसा के बिखै बितावई । हो रानी के ग्रहि भूलि न कबहो आवई ॥ २ ॥ रानी एक पुरख सौ अति हित ठानिकै । रमत भई तिह संग अधिक रुचि मानिकै । सोत हुती सुपना महि शिव दरशन दियो । हो बचन आपने मुख ते हसि मुहि यौ कियो ॥ ३ ॥ ॥ शिव बाच ॥ इक गहिरे बन बिच तुम एकल आइयो । करि कै पूजा मोरी मोहि रिझाइयो । जोति आपने सौ तव जोति मिलाइहो । हो तुहि कह जीवत मुकति सु जगति दिखाइहौ ॥ ४ ॥ ताते तव आग्या लै पति तहि जाइहौ । करिकै शिव की पूजा अधिक

दो सौ साठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ मस्तकर्ण एक सूर्य के समान तेजस्वी और बलवान राजा था। कजराक्षमती उसकी स्त्री थी जो मानों पार्वती का अवतार थी ॥ १ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजा मस्तकर्ण शिव की पूजा नित्य करता था और अनेक प्रकार के ध्यान करके वह गुरु के चरण पकड़ता था। रात-दिन तपस्या में बिताता था और रानी के घर भूलकर भी नहीं आता था ॥ २ ॥ रानी एक पुरुष से प्रेम करके उसके साथ रुचिपूर्वक रमण करती थी। उस सोती हुई को सपने में शिव ने दर्शन दिये और हँसकर कहा ॥ ३ ॥ ॥ शिव उवाच ॥ तुम अकेली एक गहरे वन में जाओ और मेरी पूजा करके मुझे प्रसन्न करो। मैं अपनी ज्योति से तुम्हारी ज्योति मिलाऊँगा और तुम्हें जगत् में जीवन-मुक्त कर दूंगा ॥ ४ ॥ उसने आज्ञा ले पति के पास गई कि मैं शिव की पूजा कर

रिझाइहौ। मोकहु जीवत मुकति सदा शिव करहिंगे। हो सपत मातकुल सपत पितरकुल तरहिंगे ॥ ५ ॥ ॥ दोहरा ॥ भे त्रिप की आग्या गई लै शिवजू को नाम। जियत मुकति (मू०पं०११८७) भी पति लहा बसी जार के धाम ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ साठ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २६० ॥ ४९२२ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ इकसठ चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ अहिधुज एक रहै राजा बर। जनुक दुतिय जग वयो प्रभाकर। स्री मासूकमती तिह रानी। रवी चंद्रवी कै इंद्रानी ॥ १ ॥ ताके पुत्र होत ग्रिह नाही। इह चिंता त्रिय के जिय माही। राजा ते जिय महि डरपावै। बहु पुरखन संग केल कमावै ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक दिवस सुंदरी झरोखा बैठि बर। महिखन को पालक तह निकस्यो आइ करि। मेहीवाल सोहनी मुख ते गावतो। हो सभ नारिन के चित्त कौ चला चुरावतो ॥ ३ ॥ ॥ दोहरा ॥ सुनि रानी स्रुत

उसे रिझाऊँगी। मुझे शिव जीवन-मुक्त करेंगे और मेरे माता-पिता के सातों कुल पार हो जायँगे ॥ ५ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा की आज्ञा और शिवजी का नाम लेकर जीवन-मुक्त हो गई और आकर यार के घर में बस गई ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ साठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २६० ॥ ४९२२ ॥ अफजूं ॥

दो सौ इकसठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ अहिध्वज एक श्रेष्ठ राजा था जो मानों दुनिया में दूसरा सूर्य था। उसकी रानी माशूकमती थी और वह सूर्य की चन्द्रमा की अथवा इन्द्र की पत्नी के समान थी ॥ १ ॥ उसके घर पुत्र उत्पन्न नहीं होता था उसे यही चिन्ता सताती थी। राजा से वह मन में डरती थी और बहुत से पुरुषों से रतिक्रीड़ा करती थी ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक दिन सुन्दरी झरोखे में बैठी थी कि एक भैंस चरानेवाला उधर से आ निकला। वह सोहनी-महिवाल का गीत गा रहा था और सब स्त्रियों के चित्त को चुरा ले रहा था ॥ ३ ॥ ॥ दोहा ॥ रानी कानों से नाद की ध्वनि सुनकर होश खो बैठी

नाद धुनि मार करी बिसंभार। रमो महिख पालक भएँ इह बिध किया बिचार ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ महिख चरावत थो वहु जहाँ। रानी गई राति कह तहाँ। द्वैक घरी पाछे पति जागा। असि गहि कर पाछे त्रिय लागा ॥ ५ ॥ सखी हुती इक तहाँ सियानी। तिन इह बात सकल जिय जानी। जो ताकौ पति ऐस लहैहैं। तौ ग्रहि जम के दुहूँ पठैहैं ॥ ६ ॥ आगू आपि तई उठि गई। रानी जहाँ मिलत तिह भई। ऐंचि अंग तिह तबै जगाया। सभ ब्रितांत कहि ताहि सुनाया ॥७॥ ॥अड़िल्ल॥ त्रास समुंद के बिखै बूडि तरुनी गई। गरो पगरिया डारि तिसै मारत भई। एक बडे द्रुम संग दयो लटकाइकै। हो बस्त्र उतारि तर न्हात भई तह जाइकै ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ अहिधुज राज तहाँ तब आयो। न्हात म्रितक तर त्रिय लखि पायो। पूछत पकरि तबै तिह भयो। जरि बरि आठ टूक ह्वै गयो ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ निजु धामन कह छोरिकै क्यो आई इह ठौर। साचु कहै तौ छाडिहौ हनो कहै कछु और ॥ १० ॥ ॥ चौपई ॥ तब त्रिय जोरि दुहूँ कर लिआ। पति पाइनि तर मसतकि दिया। प्रथम सुनहु पिय बैन हमारे। बहुरि करहु जो ह्रिदै तिहारे ॥ ११ ॥ मोरे बढी

और उसने यह विचार किया कि इसी भैंस चरानेवाले से रमण किया जाय ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ जहाँ वह भैंसे चराता था रानी रात में वहाँ गई। दो घड़ी के बाद पति जग गया और तलवार पकड़कर स्त्री के पीछे लग गया ॥ ५ ॥ वहाँ एक चतुर सखी थी जिसने यह सारी बात समझ ली और सोचा कि यदि इसे पति ऐसे पकड़ लेगा तो दोनों को यमलोक पहुँचा देगा ॥ ६ ॥ वह पहले ही वहाँ पहुँची जहाँ उसे रानी मिली। उसे खींचकर इसने जगाया और सारा वृत्तांत कह सुनाया ॥७॥ ॥अड़िल्ल॥ अब वह स्त्री भय के सागर में डूब गई और उसने उसके गले में पगड़ी डालकर उसे मार दिया। उस व्यक्ति को उसने एक बड़े पेड़ के साथ लटका दिया और स्वयं निर्वस्त्र हो उसके नीचे स्नान करने लगी ॥ ८ ॥ ॥ चौपाई ॥ अहिध्वज राजा जब वहाँ आया तो उसने मृतक के नीचे स्नान करती स्त्री को देखा। वह जल-भुनकर आठ टुकड़े हो गया और उससे पूछने लगा ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ अपना घर छोड़कर तुम इस जगह क्यों आई? मुझसे सच बताओ अगर झूठ कहा तो मार डालूगा १० चौपाई तब स्त्री ने दोनो हाथ जोड लिये और पति के चरणो मे मस्तक रख दिया पहले हे

अधिक चिंता चित । ध्यान धरो स्री पति कै निति प्रति । पूत देहु प्रभु धाम हमारो। पल पल बलि बलि जाँउ तिहारो ॥१२॥ ॥ अड़िल्ल ॥ (मू०ग्रं०११८८) पुत्र हेत मैं ह्याँ तसकर तर आइकै। मज्जन किया बनाइ अधिक सुख पाइकै। साच कहा पिय तोहि जान जिय लीजियै। हो अवरु न याते बात जु जान सु कीजियै ॥ १३ ॥ ॥ दोहरा ॥ सुनि राजा ऐसो बचन जिय महि भयो प्रसन्य । जिन त्रिय ह्वै अस हठ किया धरनीतल महि धन्य ॥ १४ ॥ ॥ चौपई ॥ जो त्रिय मोपै कहा बिचारी। साच वहै मै नैन निहारी। अस चरित्र सुत हित जिन किया। धंनि धंनि कुअरि तिहारो हिया ॥१५॥ ॥ दोहरा ॥ निरसंदेह तुमरे सदन ह्वैहै पूत अपार । हठी जपी तपसी सती सूरबीर सुकुमार ॥ १६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ ताँहि भोगि फासी सौ बहुरि सँघारियो। करिकै त्रिपहि चरित्र इह भाँति दिखारियो। मूढ़ प्रफुलित भयो न कछु ताकौ कहा। हो धंनि धंनि कहि नारि मगन ह्वै मन रहा ॥ १७ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ इकसठि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २६१ ॥ ४६३६ ॥ अफजूं ॥

प्रिय ! मेरी बात सुनो और फिर वही करो जो तुम्हारे मन में है ॥ ११ ॥ मैं अत्यधिक चिन्तातुर थी और मैं नित्य विष्णु भगवान का ध्यान करती थी कि हे भगवान ! मुझे एक पुत्र दो जिससे मैं प्रत्येक क्षण तुम पर न्योछावर होऊँ ॥ १२ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ पुत्र के लिए मैंने इस चोर के नीचे आकर स्नान किया है। हे प्रिय ! मैंने सत्य कहा है और इसके अलावा अन्य कोई बात नही है, इसे मन में सत्य जानो और जो चाहो सो करो ॥ १३ ॥ ॥दोहा॥ राजा यह वचन सुनकर मन में प्रसन्न हो उठा कि जिस स्त्री ने ऐसा इस धरती पर किया वह धन्य है ॥ १४ ॥ ॥ चौपाई ॥ जिस स्त्री ने मुझको ऐसा बताया वह मैंने आँखों से सत्य देख लिया। जिसने पुत्र के लिए ऐसा चरित्र किया, हे कुँवरि ! तुम्हारा हौसला धन्य है ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥ निस्संदेह तुम्हारे घर पुत्र होंगे जो हठी, जपी, तपस्वी एवं शूरवीर कुमार होंगे ॥ १६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ उसका भोग करके फिर उसे फाँसी से मार दिया और राजा को यह प्रपंच करके दिखाया। वह मूर्ख खुश हो गया और कुछ न समझा तथा स्त्री को धन्य-धन्य कहके मन में मस्त हो गया ॥ १७ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ इकसठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति २६१ । ४६३६ अफजूं

अथ दोइ सौ बासठ चरित्र कथनं ॥

॥ अड़िल्ल ॥ किलमाकन के देस इंद्रधुज न्रिपति बर । स्री किलमाकमती रानी जिह बसत घर । पुन माशूकमती दुहिता ताकै भई । हो जनुक चंद्र की कला दुतिय जग मै वई ॥ १ ॥ सौदा हित सौदागर तह इक आइयो । जनु ससि को अवितार मदन उपजाइयो । अधिक जुवन की जेब बिधातै दई तिह । हो सुख पावत सुर असुर निहारे क्रांति जिह ॥ २ ॥ एक दिवस न्रिप सुता झरोखे आइकै । बैठत भी चित लगे सु बैस बनाइकै । शाहु पुत्र तह आइ दिखाई दै गयो । हो या माननि को मनहि मनोहरि लै गयो ॥ ३ ॥ राजकुअरि लखि रूप रही उरझाइ करि । पठै सहचरी तहाँ बहुत धन द्याइ करि । शाहु सुतहि क्यो हूँ बिधि जो ह्याँ ल्याइहै । हो जो माँगै मुहि तू सो अबहीं पाइहै ॥ ४ ॥ सुनत कुअरि को बचन सखी तह जाइकै । मन भावत पिय याकह दिया मिलाइकै । चौरासी आसन सु बिबिध बिधि कै लिए । हो चित के शोक संताप बिदा सभ कर दिए ॥ ५ ॥ छैल छैलनी छके न छोरत एक छिन । जनुक

दो सौ बासठवाँ चरित्र-कथन

॥ अड़िल्ल ॥ किलमाकन देश में इन्द्रध्वज श्रेष्ठ राजा था जिसकी रानी किलमाकमती थी। उनकी पुत्री माशूकमती थी जो जगत् में चन्द्रकला मानी जाती थी ॥ १ ॥ वहाँ व्यापार के लिए एक सौदागर आया जो मानो चद्रमा अथवा कामदेव था। विधाता ने उसे अत्यधिक यौवन प्रदान किया था। सुर-असुर सभी उसकी कांति को देखा करते थे और सुखी होते थे ॥२॥ एक दिन राजा की पुत्री सज-धजकर झरोखे में आकर बैठ गई। उसे वह शाह-पुत्र दिखाई दे गया और मानों इस मानिनी का चित्त चुराकर ले गया ॥ ३ ॥ राजकुँवरि रूप देखकर उलझ गई और उसने बहुत-सा धन देकर वहाँ एक सहचरी भेजी। उससे कहा कि शाहपुत्र को कैसे भी यहाँ ले आओ और मुझसे जो चाहोगी वही पाओगी ॥ ४ ॥ सखी ने बात सुनकर वहाँ जाकर सखी का मनभाता प्रिय उसे मिलवा दिया। विविध विधि से चौरासी आसन उसने किए और चित्त के सभी शोकों को दूर कर दिया ५ तरुण और तरुणी प्रसन्न हो एक क्षण के लिए भी एक-दूसरे को नहीं छोड

नवो निधि राँक सु पाई आजु तिन । चिंतातुर चित भई बिचार बिचारिकै । हो सदा बसौ सुख साथ पियरवा यारिकै ॥ ६ ॥ भेख पुरख (मू०ग्रं०११८९) सहचरि करि दई पठाइकै । ताके पितु के पास यौ कहियहु जाइकै । बूडि मरा तव सुत हम आँखिन सौ लहा । हो बहत नदी महि गयो न कर किनहूं गहा ॥ ७ ॥ शाहु सुनत इह भाँति उठा अकुलाइकै । सरिता तीर पुकारत आतुर जाइकै । लोटत लोटत भू पर इत ते उत गयो । हो माल मताह लुटाइ अथित ह्वै जात भयो ॥८॥ वही सखी या पहि इह भाँति उचारियो । तव पितु ह्वै करि अतिथ सु बनहि पधारियो । माल मताहि लुटाइ जात बन कौ भयो । हो राजकुअरि के धाम सौंपि तुम कह गयो ॥ ९ ॥ पितु ते भयो निरास रहत तिह ग्रहि भयो । देस माल सुख पाइ बिसरि सभ ही गयो । काज करत सोई भयो कुअरि जो तिह कह्यो । हो इह छल सेती छला सदा ताके रह्यो ॥ १० ॥ अपनो धाम बिसारि कुअरि चित ते दयो । बहुत काल सुख पाइ रहत तिह ग्रहिं भयो । भेद न दूजे कान किनूं नर जानियो । हो शाहु पुत्र सौ अधिक कुअरि रस ठानियो ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति श्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ बासठ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २६२ ॥ ४९५० ॥ अफजूं ॥

रहे थे । उन्हें ऐसा लग रहा था मानों आज उन्होंने नवनिधियाँ प्राप्त कर ली हों । अब वह चिन्तातुर हो उठी और सोचने लगी कि सदैव सुखपूर्वक अब यार के साथ ही बसा जाय ॥ ६ ॥ कुँवरि ने पुरुष-वेश धारण करवा एक दासी को उसके घर पिता से यह कहलवाने के लिए भेज दिया कि तुम्हारा पुत्र डूब मरा है, मैंने आँखों से देखा है । वह नदी में बह गया, उसका हाथ कोई भी न पकड़ सका ॥ ७ ॥ यह बात सुनकर शाह अकुला उठा और नदी के किनारे जाकर पुकारने लगा । वह भूमि पर लोटता-लोटता इधर-उधर लुढ़कने लगा और धन-माल लुटाकर फ़क़ीर बन गया ॥ ८ ॥ उसी सखी ने इधर इससे कहा कि तुम्हारा पिता साधु बनकर धन-माल लुटाकर वन को चला गया है : तुम्हें वह राजकुमारी को सौंप गया है ॥ ९ ॥ पिता की ओर से निराश होकर वह वहीं रह गया और सुख की प्राप्ति कर उसे देश, माल आदि सब कुछ भूल गया । अब जो राजकुमारी कहती थी वह वही कार्य करता था और इस प्रकर छल से (राजकुमारी नें) छल लिया १० अब वह अपना घर भूलकर कंवरि मे चित्त लगा बैठा और

बहुत समय तक सुखपूर्वक उसके घर रहा। किसी को कानों-कान खबर नहीं हुई और कुँवरि ने शाहपुत्र से भी अधिक रस प्राप्त किया ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ बासठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २६२ ॥ ४६५० ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ तिरसाठि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ अजैचंद पूरब की दिसि न्रिप। अनिक भाँति जीते जिन बहु रिप। नागरमती नारी ताके घर। रूपवान दुतिमान छटा बर ॥ १ ॥ जुद्धकरन राजा को भ्राता। कुंट चारहूँ बिच बिख्याता। अति हीं रूप तवन को राजत। जानु दिवाकरि दुतिय बिराजत ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ अबला ताँको रूप लखि अटिक रही मन माँहि। पति करि दिया बिसारि करि कछू रही सुधि नाहि ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ सखी हुती इक तहाँ सयानी। तिन यह बात सकल पहिचानी। रनियहि भाखि तहा चलि गई। सभ तिह बात बतावत भई ॥ ४ ॥ जुद्धकरन इह बात न मानी। नागमती तब भई खिसानी। जा महि मैं अपना मन दिया। उह जड़ हम मैं चित्त न किया ॥ ५ ॥ ॥ दोहरा ॥ जौ इह हनरी सभ

दो सौ तिरसठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ पूर्व दिशा में अजयचंद्र नामक राजा था जिसने अनेक प्रकार से अनेक शत्रुओं को जीता था। उसकी स्त्री नागरमती थी जो अत्यन्त रूपमान और छविमान थी ॥ १ ॥ राजा का भाई युद्धकरन था जो चारों दिशाओं में प्रसिद्ध था। उसका रूप अत्यन्त शोभायमान था, मानो वह दूसरा चन्द्रमा हो ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ वह स्त्री उसका रूप देखकर उसी में अटककर रह गई और सुधि भूलकर उसने पति को मन से भुला दिया ॥ ३ ॥ ॥ चोपाई ॥ वहाँ एक चतुर सखी थी जो इस बात को पहचान गई। रानी से बात करके वह वहाँ चली गई और उसे सब बात बताई ॥ ४ ॥ युद्धकरन ने यह बात न मानी और इससे नागमती खिसिया गई। जिसको मैंने अपना मन दे दिया उस मूर्ख ने मेरी तरफ ध्यान ही नहीं दिया ॥ ५ ॥ ॥ दोहा ॥ यदि यह सारा बात किसी के पास कह देगा तो

त्रिथा कहि है काहू पास। अजैचंद राजा अबै हम ते ह्वैहै उदास ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ तब पति और त्रियन हित कैहै। भूल न धाम हमारे ऐहै। तब हौ काज कहो का करिहौ। बिरहा की पावक महि बरिहौ ॥ ७ ॥ (मू०ग्रं०११६०) ॥ दोहरा ॥ ताते करो चरित्र कछु हनियै याकह आज। साम डारि याके इसै हनौ न जानहि राज ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ एक सखी कह कहि समझायो। अधिक दरबु दै तहाँ पठायो। जब आवत न्रिप कह लखि लीजौ। तब मद पी गारी तिह दीजौ ॥ ९ ॥ अजैचंद तिह ठाँ जब आयो। आपहि त्रिय बौरी ठहरायो। भाँति अनिक गारिन तिह दीयो। कोपमान राजा कह कीयो ॥ १० ॥ न्रिप इह कहा अबै गहि लेहू। डारि इसी धौलर ते देहू। तब सखि भाज जात भी तहाँ। जुद्धकरन को ग्रहि थो जहाँ ॥ ११ ॥ अधिक कोप रानी तब भई। सैना को आग्या इम दई। जिन न्रिप चोर डारि ग्रहि राखी। ताको हनो आजु यौ भाखी ॥ १२ ॥ ॥दोहरा॥ यौ न्रिप हूँ आग्या दई अति चित कोप बढाइ। सखी सहित वहि मूढ़ कौ अब ही देहु उडाइ ॥ १३ ॥ ॥ चौपई ॥ आइसु दिया तोपखाना कौ। इह घर पर छाडहु बाना कौ। अब ही याकह

अजयचंद्र राजा भी मुझसे उदास हो जायगा ॥ ६ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब मेरा पति अन्य स्त्रियों के साथ हित बढ़ा देगा और भूलकर भी मेरे घर पर नहीं आएगा। तब मैं क्या करूँगी और विरह-अग्नि में ही जलती रहूँगी ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ इसलिए अब कुछ प्रपंच करना चाहिए और साम-नीति के अन्तर्गत इसे राजा को बिना पता चले मार डालना चाहिए ॥ ८ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसने एक सखी को बहुत-सा धन देकर और योजना समझाकर वहाँ भेजा कि तुम जब राजा को आते देख लो तो शराब पीकर उसे गाली देना ॥ ९ ॥ अजयचंद्र जब वहाँ आया तो इस स्त्री ने अपने आपको पागलों जैसा बना लिया। उसे अनेक प्रकार से गालियाँ दीं और राजा को क्रुद्ध कर दिया ॥ १० ॥ राजा ने कहा कि इसे पकड़कर अभी महल से नीचे गिरा दूँगा। तब वह सखी भागकर वहाँ जा पहुँची जहाँ युद्धकरन का निवास था ॥ ११ ॥ रानी तब अत्यधिक क्रुद्ध हो गई और उसने सेना को आज्ञा दी कि जिसने राजा के चोर को छुपा रखा है, उसे आज मार डालो ॥ १२ ॥ दोहा राजा ने भी अत्यन्त क्रुद्ध होकर आज्ञा दी कि सखी-समेत उस मूर्ख को अभी उड़ा दो १३ चौपाई तोपखाने को आदेश दिया

देहु उडाई। पुनि मुख हमहि दिखावहु आई ॥ १४ ॥
॥ दोहरा ॥ सुनि न्रिप के चाकर बचन तहाँ पहूँचे जाइ।
त्रिया चरित्र न बूझियो भ्राता दियो उडाइ ॥ १५ ॥
॥ चौपई ॥ त्रिया चरित्र किनहूँ नहि जाना। बिधना सिरजि
बहुरि पछुताना। शिव घर तजि काननहि सिधायो। तऊ
तरुनि को अंतु न पायो ॥ १६ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल सौ
राजा छला जुद्धकरन कौ घाइ। त्रिय चरित्र को मूढ़ कछु भेव
सका नहि पाइ ॥ १७ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संवादे दोइ सौ तिरसाठि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २६३ ॥ ४९६७ ॥ अफजूँ ॥

अथ दोइ सौ चौसठि चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ न्रिपति बिचच्छनसैन के मती सुलच्छनि
नारि। दच्छनि को राजा रहै धन करि भरे भंडार ॥ १ ॥
॥ चौपई ॥ बिरहकुअरि ताके दुहिता इक। पढ़ी ब्याकरन
कोकशास्त्रनिक। नाना बिधि की बिद्या धरै। बहु पंडित

कि इस घर पर गोलाबारी करो। इसे पहले उड़ा दो और मुझे आकर मुँह दिखाओ ॥ १४ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा के सेवक आज्ञा सुनकर वहाँ आ पहुँचे। उस राजा ने त्रिया-चरित्र को नहीं समझा और भाई को उड़वा दिया ॥ १५ ॥ ॥ चौपाई ॥ स्त्री के प्रपंच को कोई नहीं समझ सका है। परमात्मा भी इसे बनाकर बाद में पश्चात्ताप में पड़ गया था। शिव घर छोड़कर जंगल में चले गए पर फिर भी स्त्री का रहस्य न पा सके ॥ १६ ॥ ॥ दोहा ॥ उसने छल से राजा को छला और युद्धकरन को मार डाला। मूर्ख राजा त्रिया-चरित्र का रहस्य न समझ सका ॥ १७ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ तिरसठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २६३ ॥ ४९६७ ॥ अफजूँ ॥

दो सौ चौंसठवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ विलक्षणसेन राजा की सुलक्षणामती स्त्री थी। वह दक्षिण का राजा था और उसके भंडार धन से भरे हुए थे ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसकी एक पुत्री विरहकुँवरि थी जो व्याकरण को आदि की ज्ञाता थी उसके पास नाना प्रकार की विद्या थी और पंडित उसका

उसतति जिह करै ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ अधिक रूप तिह कुअरि को ब्रहम बनायो आपु । ता सम सुंदरि थापि करि सका न दूसरि थापु ॥ ३ ॥ परी पदमनी पंनगी ता सम और न कोइ । नरी न्रितकारी नटी दुतिय न वैसी होइ ॥ ४ ॥ हिंदुनि (मू०पं०११६१) तुरकानी जिती सुरी आसुरी बारि । खोजत जगत न पाइयत दूसर वैसी नारि ॥ ५ ॥ इंद्रलोक की अपछरा ताँहि बिलोकनि जात । निरखत रूप अघात नहि पलक न भूलि लगात ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ हेरि अपछरा तिह मुसकानी । सखिन माँझ इह भाँति बखानी । जैसी यह सुंदर जगि माही । ऐसी अवर कुअरि कहूँ नाही ॥ ७ ॥ ॥ शाह परी बाच ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जैसी यह सुंदरी न सुंदरि कहूँ जग । थकति रहत जिह रूप चराचर हेरि मग । या सम रूप कुअरि जो कतहूँ पाइऐ । हो करिकै कोरि उपाइ सु याहि रिझाइऐ ॥ ८ ॥ ॥ दोहरा ॥ परी सुनत ऐसे बचन सभन कहा सिर न्याइ । या सम सुंदरि पुरख इह दैहैं खोजि मिलाइ ॥ ९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ परी राज की परी सभाग्या पाइकै । चलत भई सखि सहस शिंगार बनाइकै । खोजि

सम्मान करते थे ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ विधाता ने उसका रूप अत्यन्त सुन्दर बनाया था और उसके समान सुन्दरी बनाकर वह अन्य कोई वैसी नहीं बना सका था ॥ ३ ॥ परी, पद्मिनी एवं नाग-स्त्री, कोई भी उसके समान नही थी । मनुष्य, नटी एवं अप्सरा कोई भी वैसी नहीं थी ॥ ४ ॥ हिन्दू, मुस्लिम, सुर-असुर में से खोजने पर भी वैसी कोई स्त्री नहीं थी ॥ ५ ॥ इन्द्रलोक की अप्सराएँ भी उसे देखने जाती थीं और बिना पलक झपकाए उसका रूप देखकर अघाती नहीं थीं ॥ ६ ॥ ॥ चौपाई ॥ अप्सरा उसे देखकर मुस्कुराती थी और सखियों में उसका वर्णन करती थी कि जैसी यह सुन्दर है वैसी सारे ससार में कोई सुन्दर स्त्री नहीं है ॥७॥ ॥शाह परी उवाच॥ ॥अड़िल्ल॥ जैसी यह सुन्दरी है वैसी जगत् में अन्य कोई सुन्दरी नहीं है । इसका रूप-सौंदर्य देखते-देखते सभी चराचर मार्ग में थकित हो उठते हैं । यदि कहीं ऐसा रूप-सौंदर्य वाला कुँवर मिल जाय तो उसके साथ इसे मोहित किया जाय ॥ ८ ॥ ॥ दोहा ॥ परियों ने यह वचन सुनकर सिर झुकाकर कहा कि खोजकर इसे इसी के समान सुन्दर पुरुष से मिलाया ९ अड़िल्ल परी राज की सभी परिया आज्ञा पाकर अनेको शृंगार बनाकर चल पड़ी वे

फिरी सभ देस न सुंदर पाइयो। हो एक हुतो रिखि तह तिन भेद बताइयो ॥ १० ॥ ॥ चौपई ॥ इक रिखि थो कानन इक भीतर। ता सम तपी न थो अवनी पर। तिनिक अपछरा तहाँ निहारी। क्रिपा जानि इहँ भाँति उचारी ॥११॥ ॥ दोहरा ॥ को है री तूँ कह चली क्यों आई इह देस। कै तूँ इसत्री इंद्र की कै अबला अलिकेस ॥ १२ ॥ ॥ चौपई ॥ किह कारन ते तै ह्याँ आई। कहु कवनै जिह काज पठाई। साच कहे बिनु जान न दैहौ। ना तर स्राप अबै तुहि कैहौ ॥ १३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक दिवस सुनि चली अपछरा धाइकै। निरखि कुअरि को रूप रही उरझाइकै। चित महि किया बिचार कुअरि हूँ पाइयै। हो ऐसो सुंदरि खोजि सु याहि मिलाइयै ॥ १४ ॥ ॥ चौपई ॥ हम सी सखी सहस्रन सुंदरि। पठै दई दसहूँ दिसि मुनिबर। खोजि थकी प्रीतम नहि पायो। देस देस सभ हेरि गवायो ॥ १५ ॥ ॥ दोहरा ॥ खोजि देस ब्याकुल भई आई तुमरे पास। दीजै सुघर बताइ कहूँ कारज आवहि रास ॥ १६ ॥ ॥ चौपई ॥ ब्रहमा एक पुरख उपजायो। न्रिप के धाम जनम तिन पायो। सात समुंद्रन पार बसत सो।

सभी देश घूम आयीं परन्तु वैसा सुन्दर व्यक्ति न मिला। एक ऋषि था, जिसने उन्हें सब रहस्य समझाया ॥ १० ॥ ॥ चौपाई ॥ जंगल में एक ऋषि था जिसके समान तपस्वी अन्य कोई धरती पर नहीं था। एक अप्सरा को उसने वहाँ देखा और कृपापूर्वक बोला ॥ ११ ॥ ॥ दोहा ॥ तू कौन है और इस देश में क्यों आयी है ? क्या तू इन्द्र की स्त्री है अथवा कुबेर की पत्नी है ? ॥ १२ ॥ ॥ चौपाई ॥ तुम किस कारण से यहाँ आई हो और तुम्हें किस कार्य के लिए भेजा गया है ? सत्य कहे बिना मैं तुम्हें जाने नहीं दूँगा और न बताने पर तुरन्त शाप दे दूँगा ॥१३॥ ॥ अड़िल्ल ॥ हे मुनि ! एक दिन हमारी (मुख्य) अप्सरा गई और कुँवरि का रूप देखकर उसी में उलझ कर रह गई। चित्त में उसने विचार किया कि इसे ऐसा ही सुन्दर खोजकर मिलाना चाहिए ॥ १४ ॥ ॥ चौपाई ॥ हे मुनिवर ! उसने हमारे जैसी अनेकों सुन्दर सखियाँ दसों दिशाओं में भेज दीं। हम सब खोजकर थक गई हैं पर वैसे प्रियतम नहीं मिल सका है ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥ सभी देशों में खोजकर व्याकुल हो अब तुम्हारे पास आई हूँ। कृपा कर कोई उपाय बता दीजिए, जिससे हमारा कार्य बन जाय १६ चौपाई ब्रह्मा ने एक पुरुष पैदा किया है जिसका जन्म एक राजा के घर हुआ है परन्तु वह सात समुद्र के

को पहुचै तिह ल्याइ सकत सो ॥ १७ ॥ ॥ दोहरा ॥ रिखि के इह बिधि बचन सुनि चलत भई सुकुमारि । सपत सिंध के छिनिक महि जात भई (मू०ग्रं०११६२) उहि पार ॥ १८ ॥ ॥ चौपई ॥ सुंदर सदन हुतो जह न्रिप बर । जात भई सुंदरि ताँही घर । जह न्रिप सुत आस्रम सुनि लीया । गई तहाँ तिन बिलम न कीया ॥ १९ ॥ लोकंजन डारत चख भई । परगट हुती लोप ह्वै गई । यह सभ ही को रूप निहारै । याकौ कोऊ न पुरख बिचारै ॥ २० ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सिंघ दिलीस धारि बस्त्र बैठे जहाँ । लोकंजन द्रिग डारि जात भी त्रिय तहाँ । हेरि तवन की प्रभा रही उरझाइ करि । हो सुधि याकी गी भूलि रही ललचाइ करि ॥ २१ ॥ ॥ चौपई ॥ यह सुधि ताहि बिसरि करि गई । तिह पुर बसत बरख बहु भई । कितक दिनन वाकी सुधि आई । मन महि तरुनी अधिक लजाई ॥ २२ ॥ जौ यह बात परी सुनि पैहै । मोकह काढि स्वरग ते दैहै । ताते याकौ करौ उपाई । जाते इह उहि देउ मिलाई ॥ २३ ॥ आलय हुतो कुअर को जहाँ । वाको चित्र लिखत भई तहाँ । चित्र जबै तिन कुअरि निहारा । राज

पार बसता है। भला कौन वहाँ पहुँचकर उसे ला सकता है? ॥ १७ ॥ ॥ दोहा ॥ ऋषि के यह वचन सुनकर वह कुमारी चल पड़ी और क्षण भर मे सातों समुद्र पार कर गई ॥ १८ ॥ ॥ चौपाई ॥ जिस राजा का घर सुन्दर सा था वहीं वह चली गई। जहाँ राजकुमार का निवास था वह अविलम्ब वहाँ चली गई ॥ १९ ॥ उसने आँखों में लोकंजन डाला और प्रकट से लुप्त हो गई। यह सबको देख सकती थी पर इसे कोई नहीं देख पाता था ॥ २० ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ दिलीश सिंह वस्त्र पहन जहाँ बैठा था वह स्त्री लोकंजन डाल कर वहाँ जा पहुँची। वह उसका सौंदर्य देखकर उलझकर रह गई और सुध भूलकर ललचाकर रह गई ॥ २१ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसे होश ही भूल गया (कि वह किस काम को आई है) और वह कई वर्षों तक वहीं रह गई। कितने दिनों बाद उसे ख्याल आया और वह तरुणी मन में अत्यधिक लज्जित हो उठी ॥ २२ ॥ यदि मुख्य परी यह जान जाएगी तो मुझे स्वर्ग से निकाल देगी। इसलिए कुछ ऐसा उपाय किया जाना चाहिए, जिससे इसे उससे मिला दिया जाय ॥ २३ ॥ जहाँ कुँवर का निवास था उसने उस (राजकुमारी) का चित्र वहाँ बना दिया। उस कुँवर ने जब चित्र देखा तो तुरन्त सभी राज-पाट

पाट सभ ही तजि डारा ॥ २४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ मन मै भयो उदास राज को त्यागिकै । रैनि दिवस तह बैठि रहत अनुरागिकै । रोइ रोइ द्रिग नैनन रुहर बहावई । हो कोटिन करै बिचार न ताकौ पावई ॥ २५ ॥ नटी नाटकी त्रिपनी त्रितणि बखानियै । नरी नागनी नगनी निजु त्रिय जानियै । शिवी बासवी ससी कि रबि तन जूझई । हो चेटक चित्र दिखाइ चतुरि चित लै गई ॥ २६ ॥ लिख्यो चित्र इह ठौर बहुरि तिह ठाँ गई । चित्र चतुरि के भवन बिखै लिखती भई । प्रात कुअरि को जब तिन चित्र निहारियो । हो राज पाट सभ साज तबै तजि डारियो ॥ २७ ॥ निरखि कुअरि को चित्र कुअर अटकत भई । राज पाट धन की सुधि सभ जिय ते गई । बढी प्रेम की पीर बतावै कहो किह । हो जो तिह शोक निवारि मिलावै आनि तिह ॥ २८ ॥ मतवारे की भाँति कुअरि बवरी भई । खान पान की सुधि तबही तजि करि दई । हसि हसि कबहूँ उठै कबै गुन गावई । हो कबहूँ रोवत दिन अरु रैनि बितावई ॥ २९ ॥ दिन दिन पियरी होत कुअरि तन जावई । अंतर पिय की पीर न प्रगट जतावई । सात समुंदर पार पिया

छोड़ दिया ॥ २४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ वह राज त्यागकर मन में उदास हो गया और रात-दिन प्रेमासक्त हो बैठा रहने लगा । वह रो-रोकर नयनों से नीर बहाने लगा । अनेकों विचार करने पर भी वह उसे पाने में असमर्थ था ॥२५॥ यह नटी, नाटकी, नृपनी, नृत्यांगना, नर-स्त्री, नागिनी अथवा पर्वतीय स्त्री है । यह शिव, इन्द्र, शशि अथवा सूर्य की स्त्री है । यह कौन कौतुक दिखा कर मेरा मन हरकर ले गई है ॥ २६ ॥ उसने यहाँ फिर वहाँ चित्र बनाया और फिर सारे भवन में चित्र बनाती हो चली गई । प्रातः उसने जब राज-कुँवरि का चित्र देखा तो समस्त राजपाट त्याग दिया ॥ २७ ॥ कुँवर का चित्र देखकर कुँवरि भी उसी में अटक गई और उसे भी राजपाट, धन-धाम को सारी सुधि भूल गई । वह भी भला अपने प्रेम की बढ़ी हुई पीड़ा किसे बताती जो उसे सभी शोकों का निवारण कर मिला देता ॥ २८ ॥ वह कुँवरि भी बावली हो गई और खान-पान का सारा होश उसने त्याग दिया । कभी वह हँसकर उठती और कभी गाने लग जाती । कभी वह रोते-रोते दिन-रात बिता देती ॥ २९ ॥ वह कुँवरि दिन-दिन पीली होने लगी । प्रिय की पीड़ा उसके अंदर थी जो वह किसी को नहीं जता रही थी । उसका प्रिय सात समुद्र पार था अब जो उसे मिला सकता हो उसे ही वह अपना दुख

ताको रहै। (मू०ग्रं०११६३) हो आनि मिलावै ताहि इतो दुख किह करै ॥३०॥ अब कहों ब्रिथा कुअर की कछु सुनि लीजियै। सुनहु सुघर चित लाइ स्त्रवन इत दीजियै। रोत रोत निसु बिन सभ सजन बितावई। हो परै न ताके हाथ चित्र उर लावई ॥३१॥ ॥ दोहरा ॥ इतै चाह उनकी लगी उन कौ इनकी चाह। कछु कौनै छल पाइयै करता करै निबाह ॥३२॥ ॥अड़िल्ल॥ अतिथ भेस धरि परी कुअरि के ढिग गई। राज सुता की बात बतावत तिह भई। तुमकौ उनकी चाह उनै तुमरी लगी। हो निसु दिनु जपत बिहंग ज्यों प्रीति तैसी जगी ॥ ३३ ॥ सात समुद्रन पार कुअरि वह जानियै। नेह लग्यो तुम सो तिह अधिक प्रमानियै। करि करि कौन उपाइ कहौ तिह ल्याइयै। हो राजकुअर सुकुमारि सु किह बिधि पाइयै ॥ ३४ ॥ मुहि सरदार परी की सुरिद बखानियै। रवि ससि की सम जाको रूप प्रमानियै। जब वहु राजकुअरि की चित्त निरखत भई। हो तब हौ तुमरे तीर पठाइ तुरित दई ॥३५॥ ॥दोहरा॥ तीनि भवन मै भ्रमि फिरी ता सम कहूँ न नारि। ताके बरबे जोग हौ तुमही राजकुमार ॥ ३६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ हौ सरदार परी

कह सकती थी ॥ ३० ॥ अब कुँवर की व्यथा कहता हूँ उसे सुन लो। हे सज्जनो! इसे चित्त लगाकर और कान देकर सुनो। वह सजन भी रो-रोकर रात-दिन बिताता था। वह चित्र वाली उसके हाथ नहीं लगती थी। वह केवल चित्र को ही हृदय से लगा लेता था ॥ ३१ ॥ ॥ दोहा ॥ इधर उसकी और उधर इसकी चाह लगी हुई थी। देखो अब कौन से प्रपंच से एक-दूसरे को पाते हैं। ईश्वर ही (उनका प्रेम) निभाए ॥ ३२ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ साधु-वेश धारणकर परी कुँवर के पास गई और उसे राजकुमारी की बात बताई। तुमको उसकी और उसे तुम्हारी चाह लग गई है। वह रात-दिन (तोते) पक्षी की तरह रटती तुम्हें प्रीति करती है ॥ ३३ ॥ वह कुँवरि सात समुद्र पार है। उसका अत्यधिक स्नेह तुमसे लग गया है। उसे किस उपाय से लाया जाय। वह सुकुमारी राजकुमारी है, उसे कैसे पाया जाय ॥ ३४ ॥ मुझे सरदार परी की मित्र समझो। उसका रूप सूर्य, चन्द्रमा के समान है। है। जब उसने राजकुमारी के मन की बात जानी तब मुझे तुम्हारे पास भेजा ॥ ३५ ॥ ॥ दोहा ॥ मैं तीनों लोकों में घूम चुकी हूँ, उसके समान अन्य कोई स्त्री नहीं है। हे राजकुमार! वह तुम्हारे ही वरण योग्य है ३६ अड़िल्ल मैं अभी सरदार परी के पास जाऊंगी और

पहि अब उठ जाइहो । कुअरि जोग बर लहि तुहि ताहि बताइहो । जब तुम ताकह जाइ सजन बरि लेहुगे । हो कहा बतावहु मोहि तबै जसु देहुगे ॥ ३७ ॥ ॥ चौपई ॥ यौ कहि ताकौ परी उडानी । सिवी बासवी रवी पछानी । चलि सरदार परी पहि आई । सकल ब्रिथा कहि ताहि सुनाई ॥३८॥ ॥ दोहरा ॥ तीनि लोक मै खोजि करि सुघर लखा इक ठौर । चलि करि आपु निहारियै जा सम सुंद्र न और ॥ ३९ ॥ ॥ चौपई ॥ सुनत बचन सभ परी उडानी । सात समुंद्र पार निज कानी । जब दिलीप सिंघ नैन निहारा । चित को शोक दूर करि डारा ॥ ४० ॥ ॥ दोहरा ॥ अप्रमान दुति कुअर की अटकी परी निहारि । यहि सुंदरि हम ही बरै डारी कुअरि बिसारि ॥ ४१ ॥ ॥ चौपई ॥ हाइ हाइ वहु परी उचारै । दै दै मूँडि धरनि सौ मारै । जिह निमित्त हम अस स्रम कीया । सो बिधि ताहि न भेटन दीया ॥४२॥ ॥दोहरा॥ अब सरदार परी कहैं हौ (मू०ग्रं०११९४) हो बरिहो जाहि । पीर कुअरि की ना करै लाज न आवत ताहि ॥ ४३ ॥ सुनु सरदार परी जु हम जिह हित अति स्रम कीन । अब तैं याहि बर्‌यो

उसे बताऊँगी कि कुँवरि के योग्य वर मैंने (तुममें) देख लिया है। हे सजन ! तुम जब जाकर उसका वरण कर लोगे तो भला बताओ, मुझे क्या यश दोगे ॥३७॥ ॥ चौपाई ॥ यह कहकर वह परी उड़कर चली । वह शिव, इन्द्र, सूर्य की पत्नी लगती थी । वह चलकर सरदार परी के पास आई और अपनी पूरी व्यथा उसे कह सुनाई ॥ ३८ ॥ ॥ दोहा ॥ मैंने तीनों लोकों में खोजकर एक सुन्दर सुघड़ (व्यक्ति) देखा है । आप चलकर उसे देखिए, उसके समान अन्य कोई सुन्दर नहीं है ॥ ३९ ॥ ॥ चौपाई ॥ बात सुनकर सभी परियाँ उड़ चलीं और सात समुद्र पार कर वहाँ आ पहुँचीं । जब उन्होंने दिलीप सिंह को देखा तो उनके मन का शोक दूर हो गया ॥ ४० ॥ ॥ दोहा ॥ कुँवर की अपरिमित छवि देखकर परी उलझ गई और कुँवरि को भुलाकर सोचा कि इसका तो हम ही क्यों न वरण कर लें ॥ ४१ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह परी 'हाय-हाय' कहने लगी और सिर धरती पर पटकने लगी । जिसके लिए मैंने इतना श्रम किया, विधाता ने इसे उसको मिलने नहीं दिया ॥ ४२ ॥ ॥ दोहा ॥ अब सरदार परी कहने लगी कि मैं ही इसका वरण करूँगी । उसे कुँवरि की पीड़ा नहीं लग रही थी और न उसे लज्जा आ रही थी ४३ हे सरदार परी तुम सुनो जिसके लिए मैंने

चहत मिलन न ताकह दीन ॥ ४४ ॥ ॥ चौपई ॥ सखि सरदार परी क्या करै । बिरह ताप तन छतिया जरै । जब मैं याको रूप निहार्यो । स्वरग बिखै को बास बिसार्यो ॥ ४५ ॥ ॥ दोहरा ॥ कहा करो मैं जाउ कत लगे निगोड़े नैन । बिनु हेरे कल ना परै निरखत लागत चैन ॥ ४६ ॥ बिनु देखे महबूब के पलक लगत है जाम । तब सरदार परी हुती अब इह भई गुलाम ॥ ४७ ॥ कहा करौ कासौ कहौं कहे न आवत बैन । बिनु देखे महबूब के भए जहमती नैन ॥४८॥ ॥अड़िल्ल॥ पलक न इत उत जाइ नैन ऐसे लगे । पिय देखन के प्रेम दोऊ इह बिधि पगे । लगन लागि मुरि गई निगोडि न छूटई । हो नैकु निहारे बिनु सखि प्रान निखूटई ॥ ४९ ॥ छुटत छुटाए नाहि निगोड़े जह लगे । पलक न इत उत होइ प्रेम पिय के पगे । जहाँ लगे ए नैन तहीं कै ह्वै रहे । हो फिरि आवन के नाहि कबिन ऐसे कहे ॥ ५० ॥ ॥ दोहरा ॥ थरहराइ थिर ना रहहि पलक नही ठहराहि । जह लागे ए लोइना फिरि आवन के नाहि ॥ ५१ ॥ निरखि नैन महबूब के नैन गडे तिन

इतना श्रम किया उसे अब यही वरण कर लेना चाहती है। इसे उस कुँवरि से मिलने नहीं दिया ॥ ४४ ॥ ॥ चौपाई ॥ सरदार परी भी क्या करती, उसकी छाती भी विरह-अग्नि से जल रही थी। उसने कहा कि जब मैंने इसका रूप देखा तो स्वर्ग में रहने का भी विचार त्याग दिया ॥ ४५ ॥ ॥ दोहा ॥ मैं क्या करूँ मेरे निगोड़े नयन जो लड़ गए हैं। बिना देखे चैन नहीं आता और उसे देखकर ही चैन पड़ता है ॥ ४६ ॥ महबूब को देखे बिना एक पल भी एक प्रहर लगता है। पहले यह सरदार परी थी अब वही गुलाम होकर रह गई है ॥ ४७ ॥ क्या करूँ, किससे कहूँ, कुछ कहते नहीं बनता। महबूब को देखे बिना ये आँखें मुसीबत बन गई हैं ॥ ४८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ नयन ऐसे लगे कि पल भर के लिए भी इधर-उधर नहीं होते। ये दोनों प्रिय को देखने के लिए उसी (के प्रेम) में भीग गए हैं। मेरी लगन ऐसी लगी है कि छूट नहीं रही है। हे सखी ! उसे पल भर भी बिना देखे प्राण नष्ट हो रहे हैं ॥ ४९ ॥ ये निगोड़े नयन जहाँ लग गए हैं अब छुड़ाए भी नहीं छूटते। ये प्रेम में अनुरक्त पल भर के लिए भी इधर-उधर नहीं होते। ये तो जहाँ लगे हैं वहीं के हो गुज़रे हैं। अब ये जहाँ जा पहुँचे है, कवि कहते हैं, फिर वहाँ से वापस नहीं आयेंगे ॥ ५० ॥ ॥ दोहा ॥ ये थरथराते रहते हैं और पल भर भी नहीं टिकते जहाँ ये आँखें लगी हैं वहाँ से

उडै अघाने बाज ज्यों फिर आवन के नाहि ॥ ५२ ॥
गे ए लोइनाँ तह ही के सु भए। बहरी ज्यों कहरी दोऊ
गए गए ॥ ५३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जित लागे ए नैन सु
के भए। करि हारी हौ जतन न भूलि इतै अए।
त मुरि कर ते कहो हौं क्या करों। हो मदन ताप तन
। जिय मै जरों ॥ ५४ ॥ ॥ चौपई ॥ कोटि जतन
ी सखी सब। लगन निगोडी लागि गई जब। तब
ी उपाइ बिचारो। राजपुत्र सौ जाइ उचारो ॥ ५५ ॥
र तैं जिह बर लाइक। जाकी परी लगहि सभ
अब तुहि बर्यो चहत हमरी पति। कहा तिहारे
है मति ॥ ५६ ॥ राजकुअरि इह भाँति सुना जब।
री सों कहे बिहसि तब। मैं सरदार परिहि नहि
(मू०ग्रं०११९५) लागि बिरह सु कुअरि के मरिहौ ॥५७॥
॥ लाग कुअरि के बिरह तन बरिहौ दिन अरु रैनि।
प्रो इह जौ परी नैक न लगिहैं नैन ॥ ५८ ॥
॥ कहा परी इक मोर कहा करु। राजकुअर तैं राज

ां लौटेंगी ॥ ५१ ॥ महबूब के नयनों को देखकर मेरे नयन उनमे
ए हैं। ये तो बाज़ की तरह उड़ चले हैं, अब वापस आनेवाले
२॥ ये नयन जहाँ गए वहीं के होकर रह गए। ये तो
ाज़ की तरह गए तो गए (वापस आनेवाले नहीं हैं) ॥ ५३ ॥
ये नयन जहाँ लगे वहीं के हो गए। मैं यत्न करके हार चुकी
भी वापस नहीं आए। मेरे तो हाथ से बात जाती रही, बताओ
। करूँ ? मैं तो काम-दग्ध होकर नित्य मर रही हूँ ॥ ५४ ॥
अनेकों यत्न करने पर भी जब लगन लग गई तब उस परी ने
और राजकुमार से जाकर कहा ॥ ५५ ॥ हे राजकुँवर ! तुम तो
ोग्य हो, सब परियाँ जिसके चरणों को प्रणाम करती हैं। तुम्हे
सरदार परी वरण करना चाहती है। यह तुम्हें क्या हो गया
राजकुँवर ने जब यह सुना तो हँसकर उसने कहा, मैं सरदार
ण नहीं करूँगा और उसी राजकुमारी के विरह में मैं मर
७॥ ॥ दोहा ॥ उस कुँवरि के विरह में दिन-रात अपने तन को
क्या हुआ यदि यह परी है। मैं इससे आँखें भी नही
५८॥ ॥ चौपाई ॥ परी ने कहा कि मेरा एक कहना
राजकुँवरि को छोडकर राजपरी अर्थात मेरे साथ विवाह करो

परी बरु । राजकुअरि कहु बरि कस करिहै । पदमिनि छाडि हसतिनी बरिहै ॥ ५९ ॥ ॥ दोहरा ॥ जासौ मेरो हित लगा वहै हमारी नारि । सुरी आसुरी पदमिनी परी न बरौ हजार ॥ ६० ॥ ॥ चौपई ॥ परी जतन करि करि बहु हारी । एक बात तब और बिचारी । जौ इह कहत वहै हौ करौ । बहुरो छलि याही कह बरौ ॥ ६१ ॥ प्रथम परी जो तहाँ पठाई । वहै आपने तीर बुलाई । ताहि कहा जु कहा मुर करिहै । तब तव दैब धाम धन भरिहै ॥ ६२ ॥ याहि कुअर मुहि देहु मिलाई । हौ या पर जिय तें उरझाई । कहा हमारा करै पयारी । तूँ साहिब मैं दास तिहारी ॥ ६३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सुनत बचन इह परी फूलि मन मैं गई । सुघर कुअर के पास जात तबही भई । पर पाइन कर जोर कहा मुसकाइकै । हौ करौ बिनति जौ कहौ कछू सकुचाइकै ॥६४॥ प्रथम परी सौ कुअर तुमैस उचारियहु । गहि बहिया सिहजा पर तिह बैठारियहु । रमयौ चहै तुम सौ तब तुम यौ भाखियहु । हो घरी चारि पाँचक लगि द्रिड़ चित राखियहु ॥ ६५ ॥ प्रथम ब्याह तासौ जौ मोर कराइहो ।

राजकुँवरि का वरण कर तुम क्या करोगे ? क्या पद्मिनी को छोड़ हस्तिनी स्त्री को अपनाओगे ? ॥ ५९ ॥ ॥ दोहा ॥ मेरा जिससे स्नेह लगा है अब तो वही मेरी स्त्री है । मैं सुर, असुर, पद्मिनी अथवा परी किसी भी स्त्री का वरण नहीं करूँगा ॥ ६० ॥ ॥ चौपाई ॥ परी अनेकों यत्न कर जब हार गई, तो उसने तब एक और बात सोची । जो यह कह रहा है मैं भी वही करूँगी और ऐसे छलकर इसी का वरण करूँगी ॥ ६१ ॥ उसने पहली परी, जिसे पहले भेजा था, को अपने पास बुलाया । उससे कहा कि जो मैं कहूँ वह करो और मैं तुम्हारा घर धन-धान्य से भर दूँगी ॥ ६२ ॥ मुझे इस कुँवर से, मिला दो क्योंकि मैं मन से इस पर आसक्त हूँ । यदि तुम मेरा कहना मान जाओ तो मैं तुम्हारी नौकरानी और तुम मेरी स्वामिनी होओगी ॥ ६३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ यह सुनकर वह परी मन में फूल गई और तत्काल उस कुँवर के पास चली गई । उसके पाँव पड़, हाथ जोड़कर उससे कहा, मैं संकोचपूर्वक तुमसे प्रार्थना कर रही हूँ ॥ ६४ ॥ तुम उस परी से (कुछ) पहले कहना और हाथ पकड़कर उसे शय्या पर बैठा लेना । जब वह तुमसे रमण करना चाहे तो तुम कहना और चार-पाँच घडी तक अपना मन मजबूत बनाकर रखना ॥ ६५ ॥ यदि तुम मुझे पाना चाहती हो तो पहले मेरा विवाह उस राजकुमारी) से करवा दो

बर्‌यो चहहु जौ मोहि तु तबही पाइहो। ताँहि बरे बिन मैं न तोहि क्यों हूँ बरो। हो नातर मारि कटारी उर अब ही मरो ॥ ६६ ॥ इह बिधि भेद कुअर दै ताके ढिग गई। जिह तिह सहचरि जानि पठै इह पै दई। मैं करि जतन अनेक कुअरहि रिझाइयो। हो तुम सो करन कलोल कबूल कराइयो ॥ ६७ ॥ ॥ चौपई ॥ शाह परी कह लै तह आई। जहाँ कुअर की सेज सुहाई। तहाँ कपूर अरगजा महिकै। बाँधो धुजा धाम पर लहिकै ॥ ६८ ॥ इह बिधि दीना कुअर मिलाई। बैठे दोऊ सेज पर जाई। तह ते जबै सखी टरि गई। काम करा ताके तन भई ॥ ६९ ॥ काम परी कह जबै संतायो। हाथ कुअर की ओर चलायो। बिहसि कुअर इह (मू०ग्रं०११९६) भाँति उचारी। कहो बात तुहि सुनहु पयारी ॥ ७० ॥ प्रथम मोहि तुम ताहि मिलावहु। बहुरि भोग मुरि संग कमावहु। पहिले बरो वहै बर नारी। वह इसत्री तै यार हमारी ॥ ७१ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ करि हारी बहु जतन न तिह रति वहि दई। जु कछु बखानी कुअर वहै मानत भई। पच्छन पर बैठाइ ताहि लैगी तहाँ। हो पिय पिय रटत बिहंग ज्यों कुअरि परी

उसे ब्याहे बिना मैं तुम्हारा बरण नहीं करूँगा अन्यथा कटार मारकर अभी मर जाऊगा ॥ ६६ ॥ यह रहस्य उसे समझाकर वह वापस उस (सरदार) परी के पास गई जिसने इसे सहेली समझकर राजकुमार के पास भेजा था। इसने कहा कि मैंने अनेकों यत्न कर कुँवर को प्रसन्न किया है और तुमसे रमण करने को मना लिया है ॥ ६७ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह शाह परी को वहाँ ले आई जहाँ कुँवर की शय्या शोभायमान थी। वहाँ कपूर-अगरबत्ती महक रही थी और निवास पर ध्वजा लहरा रही थी ॥ ६८ ॥ इस प्रकार उसे कुँवर से मिला दिया और ये दोनों सेज पर बैठ गये। तब वह सखी वहाँ से चली गई और इसके मन में कामकला जाग्रत् हो उठी ॥ ६९ ॥ परी को जब काम ने सताया तो उसने आप हाथ कुँवर की ओर बढ़ाया। तब कुँवर ने हँसकर कहा कि हे प्रिय ! मेरी बात सुनो ॥ ७० ॥ पहले तुम मुझे उस (राजकुमारी) के साथ मिलाओ, फिर मेरे साथ रतिक्रीड़ा करो। पहले मैं उसी का वरण करूँगा। वह मेरी स्त्री होगी और तुम मेरी मित्र होगी ॥ ७१ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ वह अनेकों प्रयत्न करके हार गई पर वह उसे रतिदान नहीं दे रहा था जो कुवर ने कहा उसने मान लिया उसे पखो पर बिठाकर वह वहाँ ले गई जहाँ पक्षी की तरह कंवरि प्रिय प्रिय रटते हुए पड़ी

जहाँ ॥ ७२ ॥ चित्र जवन को हेरि मुहबति लगत भी । ताको दरस प्रतच्छि जबै पावत भई । कुअरि चहत जो हुती बिधातै सो करी । हो बन बसंत की भाँति सु झरि झरि भी हरी ॥ ७३ ॥ ॥ चौपई ॥ जब दरशन त्रिय का पिय करा । खान पान आगे लै धरा । बिबिध बिधन के अमल मँगाए । बैठि कुअरि के तीर चड़ाए ॥७४॥ ताहू को बहु कैफ पिवाई । बहुरो लयो गरे सो लाई । आसन चुंबन बहु बिधि कीए । चित के ताप बिदा करि दीए ॥ ७५ ॥ ॥ दोहरा ॥ कुअरि सजन सो रति करत रीझ रही मन माहि । वहि दिन पूजा रुद्र की भूलि करी तिन नाहि ॥ ७६ ॥ ॥ चौपई ॥ कुअरि कुअर कै संग सिधाई । एक बिवत मन माहि पकाई । इक दुरबल त्रिय निकट बुलाइसि । कान लागि तिह मंत्र सिखाइसि ॥ ७७ ॥ अपनी ठौर ताहि बैठायो । ताँहि भली बिधि चरित सिखायो । सभ सखियन जब ताहि निहारा । तिन त्रिय तब इह भाँति उचारा ॥ ७८ ॥ मैं शिव पूजन कालि न गई । ताते स्राप रुद्र मुहि दई । याते अवर बरन ह्वै गयो । गोर बरन ते साँवर भयो ॥ ७९ ॥ सभ सखियन

थी ॥ ७२ ॥ जिसका चित्र देखकर उसे प्रेम हो गया था, उसका उसने प्रत्यक्ष दर्शन पा लिया । जो राजकुमारी चाहती थी, विधाता ने वही कर दिया । वह वसन्त में वन की तरह हरी-भरी हो उठी ॥ ७३ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब उस स्त्री नें प्रिय का दर्शन किया तो खाने-पीने का सामान आगे रख दिया । उसने विविध प्रकार के नशे मँगाए और बैठकर राजकुमारी के पास ही उन्हे चढा गया ॥ ७४ ॥ उसको भी बहुत-सा मद्यपान कराया और फिर गले से लगा लिया । विभिन्न आसन और चुंबन किये तथा चित्त के शोक दूर कर दिये ॥ ७५ ॥ ॥ दोहा ॥ कुँवरि ने मस्त होकर कुँवर के साथ रतिक्रीड़ा की और उस दिन रुद्र की पूजा करना भी भूल गई ॥ ७६ ॥ ॥ चौपाई ॥ कुँवरि कुँवर के साथ चली गई और उसने एक योजना बनाई । उसने एक दुर्बल स्त्री को निकट बुलाया और कान के पास उसे एक बात समझाई ॥ ७७ ॥ उसे अपने स्थान पर बिठा दिया और उसे भी भली प्रकार प्रपंच सिखा दिया । जब उसे सब सखियों ने देखा तो उसनें इस प्रकार कहा ॥ ७८ ॥ मैं कल शिव की पूजा करने नहीं गई, इससे रुद्र नें मुझे यह शाप दे दिया है । इससे मेरा रंग बदल गया है और गोरे से साँवला हो गया है ७९ सब सखियो ने जब यह सुना तो सभी मिलकर राजा के

इह भाँति सुना जब । मिलि राजा पहि जात भई सब । सभ ब्रितांत करि ताहि सुनायो । दुहितहि तात बिलोकन आयो ॥ ८० ॥ अनत बरन राजै जब लहा । इह बिधि सो रानी तन कहा । कहा भयो इह राजदुलारी । गोरी हुती ह्वै गई कारी ॥ ८१ ॥ ॥ दोहरा ॥ बिरध तरुनि ते ह्वै गई भई गोरि ते स्याम । सति स्राप शिव ऐसई जपो सकल सभ जाम ॥ ८२ ॥ ॥ चौपई ॥ मूरखराज बात नहि जानी । और नारि दुहिता पहिचानी । बिरहमती मितवा संग गई । बहु बिधि भोग कमावत भई ॥ ८३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ इक दिन (मू०ग्रं०११६७) धाम परी के देत पठाइकै । इक दिन आपु कलोल करत सुख पाइकै । अरधा अरध बजावै तासौ रैनि दिन । हो मूरख बात न पाई राजै कछू इन ॥ ८४ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ चौसठि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २६४ ॥ ५०५१ ॥ अफजूं ॥

पास गई । उसे सारा वृत्तांत कह सुनाया और पुत्री को देखने के लिए पिता आ गया ॥ ८० ॥ राजा ने जब उसका दूसरा रूप देखा तो उसने रानी से ऐसे कहा । इस राजकुमारी को क्या हो गया जो यह गोरी से काली हो गई है ॥ ८१ ॥ ॥ दोहा ॥ यह तरुणी नै वृद्धा और गोरी से काली हो गई है । शिव का शाप सत्य है, उसका आठों प्रहर जाप करना चाहिए ॥ ८२ ॥ ॥ चौपाई ॥ मूर्ख राजा ने बात समझी नहीं और अन्य स्त्री को अपनी पुत्री मान लिया । उधर विरहमती तो अपने मित्र के साथ चली गई और विभिन्न प्रकार से सुख भोगने लगी ॥ ८३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक दिन वह (राजकुमार को) परी के घर भेज देती थी और एक दिन आप (स्वयं सुखपूर्वक किल्लोल करती थी । रात-दिन उससे भोग-विलास करती थी पर मूर्ख राजा कुछ भी नहीं समझ सका ॥ ८४ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद के दो सौ चौंसठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २६४ ॥ ५०५१ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ पैसठि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ पूरब दिसि रथ चित्र नराधिप। सकल प्रिथी तल हुतो न्रिपाधिप। प्रक्रितमती ताकी पटरानी। नरी सुरी जिह निरखि लजानी ॥ १ ॥ ॥ दोहरा ॥ चित्र कौच इक न्रिप हुतो ढाका शहिर मँझार। जा सम सुंद्र न होइगो भयो न राजकुमार ॥ २ ॥ जात्रा तीरथन की निमित ग्यो तह राजकुमार। जानुक चला शिगार यह नौ सत साज शिगार ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जहाँ झरोखा राना न्रिपति सुधारिकै। तिह मग निकसा न्रिप नौ सत शिंगारिकै। निरखि प्रभा तिह तरुनि अधिक बौरी भई। हो घर बाहर की सुधि छुटि करि सिगरी गई ॥ ४ ॥ निकसिठाढि भी नौ सत कुअरि शिंगार करि। जोरि रही जखु चारि सु लाज बिसारि करि। निरखि न्रिपति चकि रहा तरुनि केते जतन। हो नरी नागनी नगी बिचारी कौन मन ॥ ५ ॥ चारु चित्रनी चित्र कि प्रतिमा जानियै। परी पदमिनी प्रक्रिति पारबति मानियै। एक बार जौ ऐसी भेटन पाइयै। हो आठ जनम लगि पल पल

दो सौ पैंसठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ पूर्व दिशा में चित्ररथ नामक एक राजा था जो सारी पृथ्वी का सम्राट् था। उसकी पटरानी प्रकृतिमती थी, जिसे देखकर नर-सुर-स्त्रियाँ सभी लज्जित होती थीं ॥ १ ॥ ॥ दोहा ॥ चित्रकवच एक राजा था जो ढाका शहर में रहता था। उसके समान सुन्दर राजकुमार न हुआ, न होगा ॥ २ ॥ वह राजकुमार तीर्थयात्रा के लिए गया। ऐसा लगता था मानो श्रृंगार स्वयं सोलह श्रृंगार करके चला जा रहा हो ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जिस ओर रानियों का झरोखा था, राजा सज-धजकर उस ओर से निकला। उसकी प्रभा को देखकर तरुणियाँ अत्यधिक बौरा गईं और उन्हें घर बाहर की सुधि भूल गई ॥ ४ ॥ सभी कुँवरियाँ सोलह श्रृंगार कर निकल खड़ी हुईं और लज्जा को भुलाकर उसी ओर आँखें जोड़कर खड़ी हो गईं। तरुणी को देखकर राजा चकित हो गया और सोचने लगा कि यह नर, नाग अथवा पर्वत-स्त्रियों में से कौन है ॥ ५ ॥ वह सुन्दर प्रतिमा की अथवा परी पद्मिनी प्रकृति या पार्वती थी। एक बार यदि ऐसी स्त्री रमण के लिए मिल जाय तो आठ जन्मों तक प्रत्येक पल न्योछावर हुआ जा सकता

बलि बलि जाइयै ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ उतै कुअरि कह चाहि भई इह । इह कौ बांछा भई अधिक तिह । प्रगट ठाढ ह्वै हेरत दोऊ । इत उत पल न टरत भयो कोऊ ॥ ७ ॥ ॥ दोहरा ॥ इत उत ठाढे हेर द्वै प्रेमातुर ह्वै तौन । जनु सनमुख रन भट भए भाजि चले कहु कौन ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ लागति प्रीति दुहून की भई । अथियो सूर रैनि ह्वै गई । रानी दूतिक तहाँ पठायो । अधिक सजन सौ नेह जतायो ॥ ९ ॥ तिह रानी सौ पति को अति हित । निसि कह ताँहि न छाडत इत उत । सोत सदा तिह गरे लगाए । भाँति अनिक सौ हरख बढाए ॥ १० ॥ रानी घात कोऊ नहि पावै । जिह छल तासौ भोग कमावै । राजा सदा सोत संग ताके । किह बिधि संग मिलै इह वाके ॥ ११ ॥ बिना (मू०ग्रं०११९८) मिले तिह कल नहि परई । राजा सोत संग तें डरई । जब स्वै गयो पतिहि लखि पायो । वहै घात लखि ताहि बुलायो ॥ १२ ॥ पठै सहचरी लयो बुलाई । बहु बिधि ताहि कहा समुझाई । रानी कहा राव सो सोई । यौ भजियहु ज्यों जगै न कोई ॥ १३ ॥ चित्र कौच तिह ठाँ

है ॥ ६ ॥ ॥ चौपाई ॥ उधर कुँवरि में भी चाह जगी और इधर इसमें भी इच्छा बढ़ी । दोनों ही खड़े होकर एक-दूसरे को देखने लगे और एक पल के लिए भी कोई इधर-उधर न हिला ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ इधर-उधर दोनों ही प्रेमातुर हो ऐसे खड़े थे मानो दो योद्धा आमने-सामने युद्ध में खड़े हों । देखें अब भला कोई कैसे भाग कर जा सकेगा ॥ ८ ॥ ॥ चौपाई ॥ दोनों में प्रीति बढ़ चली और सूर्य अस्त होकर रात हो गई । रानी ने एक दूती वहाँ भेजी और प्रिय से गहन प्रेम जताया ॥ ९ ॥ उस रानी से उसके पति का अत्यधिक स्नेह था और रात में वह उसे इधर-उधर जरा भी नहीं छोड़ता था । वहाँ अनेकों प्रकार से हर्षित हो उसे सदैव गले से लगाकर सोता था ॥ १० ॥ रानी अवसर नहीं पा रही थी जिससे कि वह उस (प्रिय) के साथ भोग-विलास कर सके । राजा सदैव उसके साथ सोता था । अब भला वह उसे कैसे मिले ॥ ११ ॥ बिना उससे मिले उसे चैन नहीं पड़ता था और राजा साथ सोता था, इससे उसे डर लगता था । जब उसने पति को सो गया जाना तो अवसर पाकर उसे बुला लिया ॥ १२ ॥ उसे दासी भेजकर बुला लिया और विभिन्न प्रकार से उसे समझा दिया । रानी ने राजा को समझाया कि ऐसे तुम रमण करना कि कोई जागने न पाए ॥ १३ ॥ चित्र-

सुरी आसुरी सम नहि जाके ॥ १ ॥ स्री रनखंभकला दुहिता तिह । जीति लई ससि अंस कला जिह । निरखि भान जिह प्रभा रहत दबि । सुरी आसुरिन की नहि सम छबि ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ तरुनि भई तरुनी जबै अधिक सुखन के संग । लरिकापन मिटि जात भयो दुंदभि दियो अनंग ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ चारि भ्रात ताके बलवाना । सूरबीर सब शस्त्र निधाना । तेजवान दुतिमान अतुल बल । अरि अनेक जीते जिह दलि मलि ॥४॥ सारदूल धुज नाहर धुज भन । सिंघकेत हरिकेत महा मन । चारौ सूरबीर बलवाना । मानत शत्र सकल जिह आना ॥ ५ ॥ चारो कुअरि पढ़न के काजा । दिज इक बोलि पठायो राजा । भाख्याबिक ब्याकरन पढ़े जिन । औगाहन सभ किय पुरान तिन ॥ ६ ॥ अधिक (मू०ग्रं०११९९) दरब न्रिप बर तिह दीया । बिबिध बिधन करि आदर कीया । सुता सहित सौंपे सुत तिह घर । कछु बिद्या दिजि देहु क्रिपा करि ॥ ७ ॥ जब ते तह पढ़बे कह आवै । अपनो बिप कहु सीस झुकावै । जो सिख्या दिज देत सु लेही । अमित दरब पंडित कह देही ॥ ८ ॥ इक दिन कुअरि अगमनो

उसके घर में समरमती नामक रानी थी जिसके समान कोई भी सुर-असुर-स्त्री नहीं थी ॥ १ ॥ उनकी पुत्री रणखंभकला थी जिसने चन्द्रकलाओं को भी जीत रखा था । सूर्य भी जिसकी प्रभा को देखकर दबा रहता था और सोचता कि सुर-असुर स्त्री अर्थात् किसी की भी छवि इसके समान नही है ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ तरुणी जब सुखपूर्वक युवती बनी तो उसका लड़कपन समाप्त हो गया और काम नें दुंदुभि बजाना आरम्भ कर दिया ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसके चार भाई अत्यन्त बलवान थे जो शूरवीर और शस्त्र (विद्या) के भंडार थे । वे अत्यन्त तेजस्वी, द्युतिमान और बलशाली थे, जिन्होंने अनेकों शत्रुओं के दलों को दलित किया था ॥ ४ ॥ शार्दूलध्वज, नाहरध्वज, सिंहकेतु और हरिकेतु नामक ये चारों बलवान थे जिनको सारे शत्रु मानते थे ॥ ५ ॥ चारों कुँवरों की पढ़ाई के लिए राजा ने एक ब्राह्मण को बुलाया, जिसने भाषा, व्याकरण आदि पढ़े हुए थे और सभी पुराणों का अवगाहन किया हुआ था ॥ ६ ॥ राजा नें उसे अत्यधिक द्रव्य और विविध प्रकार से सम्मान दिया । पुत्री-सहित पुत्र उसे सौंप दिए और कहा कि कृपा-पूर्वक कुछ विद्यादान इन्हें दो ॥ ७ ॥ वे जब उससे पढ़नें आते थे तो अपना पण्डित (गुरु) मानकर वे उसके सामने सिर झुकाते थे वह ब्राह्मण जो शिक्षा

गई। दिज कह सीस झुकावत भई। सालिग्राम पूजत था दिजबर। भाँति भाँति तिह सीस न्याइ करि ॥ ९ ॥ ताकौ निरखि कुअरि मुसकानो। सो प्रतमा पाहन पहिचानी। ताहि कहा पूजत किह नमितिह। सिर नावत कर जोरि काज जिह ॥ १० ॥ ॥ दिज बाच ॥ सालग्राम ठाकुर ए बाला। पूजत जिनैं बडे नरपाला। तैं अग्यान इह कहा पछानै। परमेस्वर कह पाहन जानै ॥ ११ ॥ ॥ राजा सुत बाच ॥ ॥ सवैया ॥ ताहि पछानत है न महाँ जड़ जाको प्रताप तिहूँ पुर माही। पूजत है प्रभु कै तिस कौ जिनके परसे परलोक पराही। पाप करो परमारथ कै जिह पा पन तें अति पाप डराही। पाइ परो परमेश्वर के पसु पाहन मै परमेश्वर नाही ॥ १२ ॥ ॥ बिजै छंद ॥ जीवन मै जल मै थल मै सभ रूपन मै सभ भूपन माही। सूरज मै ससि मै नभ मै जह हेरौ तहा चित लाइ तहाही। पावक मै अरु पौन हूँ मै प्रिथवीतल मै सु कहा नहि जाँही। ब्यापक है सभ ही के बिखै कछु पाहन मै परमेश्वर नाही ॥ १३ ॥ कागज दीप सभै करिकै अरु सात समुंद्रन की

देता था वे लेते थे और उसे अपरिमित द्रव्य देते थे ॥ ८ ॥ एक दिन कुँवरि पहले चली गई और उसने द्विज के सामने सिर झुकाया। ब्राह्मण शालिग्राम की पूजा विभिन्न प्रकार से सिर झुकाकर कर रहा था ॥ ९ ॥ उसे देखकर कुँवरि मुस्कुराई और उसने उस पत्थर की मूर्ति को देखा। उस कुँवरि ने कहा कि इसकी पूजा क्यों करते हो और क्यों इसके सामने सिर झुकाते तथा हाथ जोड़ते हो ॥ १० ॥ ॥ द्विज उवाच ॥ हे बालिका ! यह शालिग्राम है, जिसकी पूजा बड़े-बड़े राजा करते हैं। तुम अज्ञानी इसे क्या पहचानो। तुम परमेश्वर को पत्थर मान रही हो ॥ ११ ॥ ॥ राजकुमारी उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ मूर्ख उसे पहचानते नहीं हैं, जिसका प्रताप तीनों लोकों में व्याप्त है। उसे प्रभु जान पूजते हैं, जिससे परलोक और भी दूर चला जाय। परमार्थ के नाम पर इतने पाप करते हैं कि उन पापों से पाप स्वयं लज्जित होते हैं। हे पशु ! उस परमेश्वर के चरणों में गिरो, इन पत्थरों में परमेश्वर नहीं है ॥ १२ ॥ ॥ बिजै छंद ॥ वह समस्त प्राणियों में, जल में, स्थल में, सभी रूपों में, राजाओं में, सूर्य में, चन्द्र में, नभ में और सभी उन स्थानों में है, जहाँ उसे मन से खोजा जाय। अग्नि, पवन, पृथ्वी और फिर भला कहाँ वह नहीं है। वह परमात्मा सब में व्याप्त है, इसलिए हे मूर्ख ! केवल पत्थरों में ही नहीं है ॥ १३ ॥ सभी द्वीपों को कागज़ और सातों समुद्रों को स्याही बनाया

मसु कैयै । काटि बनासपती सिगरी लिखबे हूकौ लेखन काज बनैयै । सारस्वती बकता करिकै सभ जीवन ते जुग साठि लिखैयै । जो प्रभु पायतु है नहि कैसेहू सो जड़ पाहन मौ ठहरैयै ॥ १४ ॥ ॥ चौपई ॥ ए जन भेव न हरि को पावै । पाहन मै हरि कौ ठहरावै । जिह किह बिधि लोगन भरमाहीं । ग्रहि को दरबु लूटि लै जाहीं ॥ १५ ॥ ॥ दोहरा ॥ जग मै आपु कहावई पंडित सुघर सुचेत । पाहन की पूजा करै याते लगत अचेत ॥ १६ ॥ ॥ चौपई ॥ चित भीतर आसा धन धारै । शिव शिव शिव मुख ते उचारै । अधिक डिंभ करि जगहि दिखावै । द्वार द्वार माँगत न लजावै ॥ १७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ नाक मूँदि करि चारि घरी ठाढे रहै । शिव शिव शिव ह्वै (मू०ग्रं०१२००) एक चरन इसथित कहैं । जो कोऊ पैसा एक देत करि आइकै । हो दातन लेत उठाइ शिवहि बिसराइकै ॥ १८ ॥ ॥ कबित्तु ॥ औरनुपदेश करै आपु ध्यान कौ न धरै लोगन कौ सदा त्याग धन को द्रिड़ात है । तेही धन लोभ ऊच नीचन के द्वार द्वार लाज कौ तियाग जेही तेही पै घिघात है । कहत पवित्र हम रहत

जाय; सभी वनस्पति को काटकर लिखने के लिए क़लम बना लिया जाय, सरस्वती स्वयं बोले और सारे जीवों द्वारा साठों युगों तक लिखा जाय तब भी जिस प्रभु का रहस्य नहीं जाना जा सकता उसे हे मूर्ख ! तुम पत्थरों में कैसे मान रहे हो ॥ १४ ॥ ॥ चौपाई ॥ जो पत्थरों में प्रभु मानता है वह उसका रहस्य नहीं जान पाता । वह लोगों को भ्रम में डालता है और लोगों के घरों का द्रव्य लूट ले जाता है ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥ ये पंडित संसार में तो बड़े चैतन्य पुरुष लगते हैं, परन्तु पत्थरों की पूजा करने से ये बिलकुल अचेत (मूर्ख) लगते हैं ॥ १६ ॥ ॥ चौपाई ॥ चित्त में धन की आशा लगाए रहते है और मुख से शिव-शिव का उच्चारण करते हैं । जगत में अत्यधिक प्रपंच कर दिखाते हैं और द्वार-द्वार माँगते लजाते नहीं हैं ॥१७॥ ॥अड़िल्ल॥ नाक बन्द कर ये चार घड़ी तक खड़े रहते हैं और शिव-शिव कहकर एक पाँव पर खडे रहते हैं । यदि कोई एक भी पैसा आकर देता है तो ये शिव का विस्मरण कर उस दान को उठाने में लग जाते हैं ॥ १८ ॥ ॥ कवित्त ॥ अन्यों को उपदेश देते हैं स्वयं ध्यान नहीं देते और ये लोग लोगों को सर्वत्र त्याग का उपदेश देते हैं उसी धन के लोभ में ये ऊँच नीच का विचार किये बिना

अपवित्र खरे चाकरी मलेछन की कैकें टूक खात है। बड़े असंतोखी हैं कहावत संतोखी महाँ एक द्वार छाडि माँगि द्वारे द्वार जात है ॥ १६ ॥ माटी के शिव बनाए पूजिकें बहाइ आए आइकें बनाए फेरि माटी के सुधारिकें। ताके पाइ पर्‌यो माथो घरी ह्वै रगर्‌यो ऐ रे ताँ मैं कहा है रे दैहै तोहि कौ बिचारिकें। लिंग को तू पूजा करै शंभु जानि पाइ परै सोई अंत दैहै तेरे कर मैं निकारि कै। दुहिता कौ दैहै को तूँ आपन चबैहै ताको यौं ही तोहि मारि है रे सदा शिव ख्वार कै ॥ २० ॥ ॥ बिजै छंद ॥ पाहन को शिव तूँ जो कहै पसु याते कछू तुहि हाथ न ऐहै। लैयक जोनि जु आपु परा हसि कै तुहि को कहु का बरु दैहै। आपन सो करिहै कबहूँ तुहि पाहन की पदवी तब पैहै। जानु रे जानु अजान महाँ फिरि जान गई कछु जानि न जैहै ॥ २१ ॥ बैस गई लरिकापन मो तरुनापन मै नहि नाम लयो रे। औरन दान करात रहा कर आप उठाइ न दान दयो रे। पाहन को सिर न्यातन तै परमेश्वर को सिर न्यात भयो रे। कामहि काज फसा घर के जड़ कालहि काल कै काल गयो रे ॥ २२ ॥ ह्वैक पुरानन कौ

है, पर बने रहते हैं अपवित्र, तथा तथाकथित म्लेच्छों की चाकरी करके रोटी के टुकड़े पाते हैं। ये कहलाते तो बहुत सन्तोषी हैं, पर हैं परम असन्तोषी। ये एक परमात्मा के द्वार को छोड़ अन्य द्वारों पर जाकर माँगते हैं ॥ १६ ॥ ये मिट्टी का शिव बनाते हैं, उसकी पूजा कर उसे बहा देते हैं तथा फिर उसे बनाते हैं। तुम उसके पाँव पड़ते हो, सिर रगड़ते हो; हे मूर्ख ! उसके पास क्या है जो तुम्हें देगा। तुम उसके लिंग की पूजा करते हो और शिव जानकर उसके पाँव पड़ते हो। तुम्हें तो वह फिर वही निकालकर देगा (जिसकी तुम पूजा करते हो)। तू उसे अपनी पुत्री को देगा या फिर खुद चबाएगा ? शिव तुझे वहीं खींचकर मारेगा ॥ २० ॥ ॥ विजै छन्द ॥ हे पशु ! तू जो पत्थर का शिव कहता है, इससे तुझे कुछ हाथ नहीं लगेगा। जो पत्थर की योनि में खुद पड़ा है वह भला प्रसन्न हो तुझे क्या वरदान देगा। वह तो तुझे अपने जैसा कर लेगा और तुझे पत्थर का पद दे देगा। हे मूर्ख ! अभी जान ले, फिर जान जाने पर कुछ भी नहीं जान पायेगा ॥ २१ ॥ लड़कपन तो ऐसे ही निकल गया और तरुणाई में तूने उस प्रभु का नाम नहीं लिया। तू दूसरों से तो दान कराता रहा पर आप हाथ उठाकर कभी दान नही दिया। पत्थर का सिर झुकाकर मानो तुम परमात्मा का सिर नीचा कर

पढ़िकै तुम फूलि गए दिजजू जिय माही। सो न पुरान पढ़ा जिह के इह ठौर पढ़े सभ पाप पराही। डिभ दिखाइ करो तपसा दिन रैनि बसै जियरा धन माही। मूरख लोग प्रमान करै इन बातन कौ हम मानत नाही ॥ २३ ॥ काहे को काज करो इतनी तुम पाहन को किह काज पुजावो। काहे को डिभ करो जग मै इहलोक गयो परलोक गवावो। झूठे न मंत्र उपदेश करो जोऊ चाहत हो धन लौ हरखावो। राजकुमारन मंत्र दियो सु दियो बहुरौ हम कौ न सिखावो ॥ २४ ॥ ॥ दिज बाच ॥ ॥ चौपई ॥ कहा बिप्र सुनु राजदुलारी। तैं शिव की महिमा न बिचारी। ब्रहमा बिशन रुद्र जू देवा। इनकी सदा कीजियै (सू०पं०१२०१) सेवा ॥ २५ ॥ तैं याके भे वहि न पछानै। महाँ मूड़ इह भाँति बखानै। इनको परम पुरातन जानहु। परम पुरख मन महि पहिचानहु ॥ २६ ॥ हम है कुअरि बिप्र ब्रतधारी। ऊच नीच सभ के हितकारी। जिसी किसी कर मंत्र सिखावै। महाँ क्रिपन ते दान करावै ॥ २७ ॥ ॥ कुअरि बाच ॥ मंत्र देत सिख अपन करत

रहे हो। तू कामनाओं के काम में ही फँसा है, हे मूर्ख ! कल, कल करते सारा (जीवन-) काल ही समाप्त हो गया ॥ २२ ॥ हे पंडित ! तुम दो एक पुराण पढ़कर मन में फूल गए हो। तुमने वह पुराण नहीं पढ़ा, जिसके पढ़ने से सारे पाप नष्ट हो जाते हैं। प्रपंच दिखाकर तुम तपस्या करते हो और दिन-रात तुम्हारा मन तो धन में बसा रहता है। मूर्ख लोग भले ही तुम्हे प्रामाणिक मानें पर हम तो इन बातों को नहीं मान सकते ॥ २३ ॥ क्यो इतना कार्य कर रहे हो और पत्थर के लिए यह सब क्यों पहुँचा रहे हो। क्यों इस जगत में प्रपंच कर रहे हो। तुम्हारा यह लोक तो गया तुम परलोक क्यों गँवा रहे हो। झूठे ही तुम मुझे मंत्र और उपदेश मत दो, जो चाहते हो तो धन लेकर खुश हो जाओ। तुम राजकुमारों को ही मंत्र सिखाओ और मुझे कुछ मत सिखाओ ॥ २४ ॥ ॥द्विज उवाच॥ ॥चौपाई॥ ब्राह्मण ने कहा कि हे राजकुमारी ! सुनो ! तुमने शिव की महिमा नहीं जानी है। ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्रदेव की सदैव सेवा करनी चाहिए ॥ २५ ॥ तुम उनका रहस्य नहीं पहचानती हो और यहाँ मूर्खों की तरह बात करती हो। इन्हें परम प्राचीन मानना और परमपुरुष जानना चाहिए ॥ २६ ॥ हे कुँवरि ! हम व्रतधारी विप्र हैं और ऊँच-नीच सबके हितैषी हैं। मंत्रविद्या सिखाते है और यहाँ कंजूसो मे भी दान करवाते हैं २७ कुवंरि उवाच तुम

हित । ज्यों ज्यों भेट लेत ताते बित । सत्ति बात ताकह न सिखावहु । ताँहि लोक परलोक गवावहु ॥ २८ ॥ सुनहु बिप्र तुम मंत्र देत जिह । लूटि लेत तिह घर बिधि जिह किह । ताकह कछू ग्यान नहि आवै । मूरख अपना मूँड मुँडावै ॥ २९ ॥ तिह तुम कहु मंत्र सिधि ह्वैहै । महाँदेव तोको बरु दैहै । जब ताते नहि होत मंत्र सिधि । तब तुम बचन कहत हौ इह बिधि ॥ ३० ॥ कछू कुक्रिया तुमते भयो । ताँते दरस न शिवजू दयो । अब तै पुन्य दान दिज करु रे । पुनि शिव के मंत्रहि अनुसरु रे ॥ ३१ ॥ उलटो डंड तिसी ते लेही । पुनि तिह मंत्र रुद्र को देही । भाँति भाँति ताको भटकावैं । अंत बार इमि भाख सुनावैं ॥ ३२ ॥ तो ते कछु अच्छर रहि गयो । कै कछु भंग क्रिया ते भयो । ताते तुहि बरु रुद्र न दीना । पुन्य दान चहियत पुनि कीना ॥ ३३ ॥ इह बिधि मंत्र सिखावत ताको । लूटा चहत बिप्र घर जाको । जब वहु दरब रहत ह्वै जाई । और धाम तब चलत तकाई ॥ ३४ ॥ ॥ दोहरा ॥ मंत्र जंत्र अरु तंत्र सिधि जौ इन महि कछु होइ । हजरति ह्वै आपहि रहहि मागत फिरत

सीखनेवालों को मंत्र सिखाने के नाम पर अपना ही हित करते हो और जैसे-तैसे उनसे भेंट लेते हो। सच्ची बात उन्हें नहीं सिखाते हो और लोक-परलोक दोनों को गँवाते हो ॥ २८ ॥ हे विप्र, तुम जिनको मंत्र देते हो, उनका घर विधिपूर्वक लूट लेते हो। उनको कुछ ज्ञान नहीं होता और वे मूर्ख अपना सिर मुँड़ाते हैं ॥ २९ ॥ उन्हें तुम कहते हो कि मंत्र-सिद्धि होगी और शिव तुमको वरदान देगा। जब उनसे मंत्र सिद्ध नहीं होता, तुम उनसे ऐसे कहते हो ॥ ३० ॥ तुमसे कुछ ग़लत क्रिया हो गई है इसी से शिव ने दर्शन नहीं दिया। तुम अब ब्राह्मण को दान करो और पुनः शिव का जाप कर अनुसरण करो ॥ ३१ ॥ तुम उलटा उसी से दंड लेते हो और उसे पुनः रुद्र का मंत्र देते हो। विभिन्न प्रकार से उसको भटकाते हो और अन्त में यह कह सुनाते हो ॥ ३२ ॥ तुमसे कुछ अक्षर रह गए और तुम क्रिया से विचलित हो गए हो। इसी से रुद्र ने तुम्हें वरदान नहीं दिया, अतः फिर पुण्य-दान करो ॥ ३३ ॥ इस प्रकार जिसका घर लूटना चाहो उसे तुम मंत्र सिखाते हो। जब वह द्रव्य-विहीन हो जाता है तो तुम दूसरा घर पकड़ लेते हो ॥ ३४ ॥ ॥ दोहा ॥ यदि तुम्हारे इन मंत्रों-तंत्रों में कुछ सिद्धि हो तो तुम खुद बादशाह बनकर रहते और माँगते न घूमते ॥ ३५

न कोइ ॥ ३५ ॥ ॥ दिज बाच ॥ ॥ चौपई ॥ सुनि ए बचन मिसर रिसि भरा। धिक धिक ताकहि बचन उचरा। तैं हमरी बातन कह जानैं। भाँग खाइकै बैन प्रमानैं ॥ ३६ ॥ ॥ कुअरि बाच ॥ सुनो मिसर तुम बात न जानत। अहंकार कैं बचन प्रमानत। भाँग पिए बुधि जात न हरी। बिनु पीए तव बुधि कह परी ॥ ३७ ॥ तुम आपन स्याने कहलावत। कबहीं भूलि न भाँग चढ़ावत। जब पुन जाहु काज भिच्छा के। करहो ख्वार रहत ग्रहि जाके ॥ ३८ ॥ जिह धन को तुम त्याग दिखावत। दर दर तिह माँगन कस जावत। महाँ मूढ़ राजन के पासन। लेत फिरत हो मिस्र जू (मू०ग्रं०१२०२) कन कन ॥ ३९ ॥ तुम जग महि त्यागी कहलावत। सभ लोकन कह त्याग द्रिड़ावत। जाकह मन बच क्रम तजि दीजै। ताकह हाथ उठाइ कस लीजै ॥ ४० ॥ काहू धन त्याग द्रिड़ावहि। काहू कौ कोऊ ग्रहि लावहि। मन महि दरब ठगन की आसा। द्वार द्वार डोलत इह प्यासा ॥ ४१ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ बेद ब्याकरन शास्त्र सिम्रित इम उचरैं। जिनि किसहू ते एक टका मोकौ झरै। जे तिनको कछु देत

॥ द्विज उवाच ॥ ॥चौपाई॥ यह वचन सुनकर मिसिर क्रोध से भर गया और उसे धिक्कारने लगा। तुम मेरी बातों को क्या समझोगी जो भाँग खाकर बातें कर रही हो ॥ ३६ ॥ ॥ कुँवरि उवाच ॥ हे ब्राह्मण ! सुनो, तुम बात नहीं समझते और अहंकार की बातें कहते हो। भाँग पीने से बुद्धि का हरण नहीं होता। बताओ बिना पीने से तुम्हें कौन सी बुद्धि आ गई है ॥ ३७ ॥ तुम स्वयं को सयानें कहलाते हो और कभी भूलकर भी भाँग नहीं पीते हो। जब तुम भिक्षा माँगने जाओगे तो जिसके घर जाओगे उसे (अवश्य) दुखी कर दोगे ॥ ३८ ॥ जिस धन के त्याग की बात तुम कहते हो उसे ही माँगने के लिए तुम द्वार-द्वार पर क्यों जाते हो ? महामूर्ख राजाओं के पास हे मिश्र जी ! तुम कण-कण के लिए घूमते-फिरते हो ॥ ३९ ॥ तुम संसार में त्यागी कहलाते हो और सब लोगों को त्याग दृढ़ करवाते हो। जिसे मन-वचन-कर्म से त्याग दिया जाय भला फिर उसे हाथ उठाकर क्यों पकड़ा जाय ॥४०॥ किसी को धन का त्याग दृढ़ करवाते हो और किसी को कोई ग्रह लगा देते हो। मन में धन ठगने की आशा लगाए तुम प्यासे होकर द्वार-द्वार घूमते हो ॥ ४१ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ वेद, व्याकरण, शास्त्र, स्मृति आदि का उच्चारण करते हो कि जसे-तसे कोई टका मैं झाड ल जो तुम्हे कुछ देते हैं

उसतति ताकी करै। हो जो धन देत न तिनै निंद ताकी ररै ॥ ४२ ॥ ॥ दोहरा ॥ निंदिआ अरु उसतति दोऊ जीवत ही जग माहि। जब माटी माटी मिली निंदुसतति कछु नाहि ॥ ४३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ देनहार दाइकहि मुकति नहि करि दियो। अनदाइक तिह पुत्तन पित को बध कियो। जाते धन कर परै सुजस ताको करै। हो जाते कछू न लहै निंद तिह उचरै ॥ ४४ ॥ ॥ चौपई ॥ दुहूँअन सम जोऊ करि जानै। निंद्या उसतति सम करि मानै। हम ताही कह ब्रहम पछानहि। वाही कहि दिज कै अनुमानहि ॥ ४५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ ए दिज जाते जतन पाई धन लेवही। ता नर कह बहु भाँति बडाई देवही। मिथ्या उपमा बकि करि तहि प्रसंन करै। हो घोर नरक के बीच अंत दोऊ परै ॥ ४६ ॥ धन के काज करत सभ काजा। ऊच नीच राना अरु राजा। ख्याल काल को किनूँ न पायो। जिन इह चौदह लोक बनायो ॥ ४७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ इही दरब के लोभ बेद ब्याकरन पड़त नर। इही दरब के लोभ मंत्र जंत्र न उपदिस कर। इही दरब के लोभ देस परदेस सिधाए। हो परे दूरि

उनकी तुम स्तुति और जो नहीं देते हैं, उनकी निन्दा करते हो ॥ ४२ ॥ ॥ दोहा ॥ निन्दा और स्तुति दोनों जीवित रहते समय तक की बातें है। जब मिट्टी से मिट्टी मिल गई तो निन्दा-स्तुति दोनों ही समाप्त हो जाएगी ॥ ४३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ देनेवाले परमात्मा ने मुक्ति कहीं किसी के हाथ में नहीं पकड़ायी है। कभी-कभी तो अनचाहे में पुत्र-पिता का वध कर देते हैं। तुम जिससे धन पा जाते हो उसका यशोगान करते हो और जिससे कुछ नहीं पाते उसकी निन्दा करते हो ॥ ४४ ॥ ॥ चौपाई ॥ दोनों को अर्थात् निन्दा-स्तुति को जो समान रूप से मानता है, हम तो उसी को ब्रह्म मानते हैं और सच्चे ब्राह्मण के रूप में पहचानते हैं ॥ ४५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ ये ब्राह्मण यत्नपूर्वक जिससे धन ले लेते हैं, उसकी विभिन्न प्रकार से बड़ाई करते है। उसकी झूठी प्रशंसा कर उसे प्रसन्न करते हैं और अन्त में दोनों घोर नरक में जा पड़ते हैं ॥ ४६ ॥ ऊँच, नीच, राजा आदि सभी धन के लिए ही कार्य करते हैं। काल का कोई भी ध्यान नहीं करता जिसने चौदह लोकों का निर्माण किया है ४७ अड़िल्ल इसी द्रव्य के लोभ में लोग वेद ण आदि पढते हैं और इसी द्रव्य के लोभ मे सभी मन्त्र-यन्त्र का उपदेश

कह जाइ बहुरि निजु देसन आए ॥ ४८ ॥ ॥ कबित्त ॥ एही धन लोभ ते पड़त ब्याकरन सभै एही धन लोभ ते पुरान हाथ धरे हैं। धन ही के लोभ देस छाडि परदेस बसे तात अरु मात के दरसहू न करे हैं। ऊचे द्रुम साल तहाँ लाँबे बट ताल जहाँ तिन मै सिधाल है न जी मै नंकु डरे हैं। धन के नुरागी हैं कहावत तिआगी आपु कासी बीच जए ते कमाऊ जाइ मरे हैं ॥ ४९ ॥ ॥ बिजै छंद ॥ लालच एक लगै धन के सिर मद्धि जटान (मू०ग्रं०१२०३) के जूट सवारें। काठ की कंठिन कौ धरिकै इक कानन मै बिनु कानि पधारें। मोचन कौ गहिकै इक हाथन सीसहू के सभ केस उपारें। डिंभु करै जग डंडन को इह लोक गयो परलोक बिगारें ॥ ५० ॥ माटी के लिंग बनाइकै पूजत ता मै कहो इन का सिधि पाई। जो निरजोति भयो जग जानत ताहि के आगे लै जोति जगाई। पाइ परे परमेस्वर जानि अजान बडै करिकै हठताई। चेत अचेत सुचेतन को चित की तजि कै चट दै दुचिताई ॥ ५१ ॥ कासी के बीच पढ़ै बहुकाल बुटंत मै अंत मरै पुनि जाई। तात रहा

अपने देश में वापस आ जाते हैं ॥ ४८ ॥ ॥ कवित्त ॥ इसी धन के लोभ में सभी व्याकरण पढ़ते हैं और इसी धन के लोभ में पुराणों को हाथ में पकडे घूमते हैं। धन के ही लोभ में देश छोड़कर परदेश में बसते हैं और माता-पिता के दर्शन तक नहीं करते। ऊँचे-ऊँचे पेड़ों के कुंजों में, लम्बे-लम्बे बट के पेड़ों, तालाबों में जाने से नहीं डरते। ये धन के अनुरागी अपने-आपको त्यागी कहलाते हैं, पर इनका जन्म तो काशी में होता है, पर ये पैसे के चक्कर में कुमायूँ तक पहुँच जाते हैं और वहीं मरते हैं ॥ ४९ ॥ ॥ बिजै छन्द ॥ धन के लालच में ही लोगों ने सिर में जटाएँ धारण कर रखी हैं। लकड़ी की माला धारण कर ये सब लज्जा का त्याग कर जंगल में जाते हैं। कई हाथ में चिमटी पकड़कर सिर के बालों को उखाड़ते हैं। संसार को दंडित करने के लिए ये प्रपंच कर इस लोक को तो गँवाते ही हैं परलोक को भी बिगाड़ लेते हैं ॥ ५० ॥ मिट्टी का लिंग बनाकर पूजने से भला इनको कौन सी सिद्धि प्राप्त होगी। जो स्वयं ज्योति-विहीन है उसके आगे इन्होंने ज्योति जला रखी है। उसे परमेश्वर समझकर ये पाँव पड़ते हैं और मूर्खतापूर्वक हठ करते हैं। हे अचेत मूर्ख ! शीघ्र चेतो और शीघ्रता से चित्त का दुचित्तापन त्यागो ॥५१॥ काशी में बहुत समय तक पढते हैं और मरते दूर भूटान आदि पहाडी प्रदेशों मे है पिता कहीं है माता कही है पुत्र-स्त्री-पुत्री कही अन्य स्थान

अरु मात कहूँ बनितासुत पुत्र कलत्रन भाई। देस बिदेस फिरैं तजिकै घर थोरी सी सीखि कै चातुरताई। लोभ की लीक न लाँघी किसू नर लोभ रहा सभ लोग लुभाई॥ ५२॥ ॥ कबित्तु॥ एकन को मूँडि माँडि एकन सौ लेहि डाँड एकन कै कंठी काठ कंठ मै डरत हैं। एकन द्रिड़ावै मंत्र एकन लिखावै जंत्र एकन कौ तंत्रन प्रबोध्यो ई करत है। एकन के बिद्या को बिबादन बतावै डिंभ जग को दिखाइ ज्यों क्यों माल कौ हरत हैं। मैया कौन मानै महाँकालै न मनावै मूड़ माटी कौ मानत ताते माँगत मरत है॥ ५३॥ ॥ सवैया॥ चेत अचेतु किए जिन चेतन ताँहि अचेतन को ठहरावै। ताहि कहै परमेस्वर कै मन माहि कहे घटि मोल बिकावै। जानत है न अजान बडै सु इते पर पंडित आपु कहावै। लाज के मारे मरै न महाँ लट ऐंठहि ऐंठ अमैठि गवावैं॥ ५४॥ ॥ बिजै छंद॥ गतमान कहावत गात सभै कछू जानै न बात गतागत है। दुतिमान घने बलवान बडे हम जानत जोग मधे जत है। पाहन के कहैं बीच सही शिव जानैं न मूड़ महाँ मत है। तुमहूँ न बिचारि सु जान कहो इन मै कहाँ पारबती पति

में हैं। थोड़ी सी चतुरता सीखकर घर त्यागकर लोग देश-बिदेश में घूमते हैं। लोभ की लकीर कोई नहीं लाँघ सका है। लोभ सबको लुभाता है॥ ५२॥ ॥ कवित्त॥ कइयों को लूट-पाटकर, कइयों से दंड लेकर कइयों के गले में लकड़ी की माला डाल दी गई है। कइयों को मंत्र दृढ़ कराते हैं, कइयों को यंत्र लिखाते हैं और कइयों को तंत्र-शिक्षा दिया करते हैं। कइयों को विद्वत्ता जताते हैं और कइयों को प्रपंच दिखाकर उनके धन का हरण किया करते हैं। कई माता (दुर्गा) को मानते हैं, पर मूर्खतावश महाकाल को नहीं मानते। मूर्ख मिट्टी (की मूर्ति) से माँगते हैं और मरे जा रहे हैं॥ ५३॥ ॥ सवैया॥ जिसने जड़-जीव सभी को बनाया है उसको मूर्ख कोई नहीं पहचानता। उसी जड़ पदार्थ को परमेश्वर करके मानते हैं जो मोल बिकता है। जानते कुछ नहीं हैं, पर अज्ञानी होने पर भी पंडित कहलाते हैं। महामूर्ख लज्जा में नहीं मरते और अकड़ में ही अकड़े रहते हैं॥ ५४॥ ॥ बिजै छंद॥ सभी शरीरधारी अपने आपको सुविज्ञ कहलाते हैं पर गति-अगति को कुछ नहीं समझते। बड़े-बड़े द्युतिमान और बलवान योग-क्रियाओं में अनुरक्त हैं। पत्थर में ही सत्य को मानते हैं और महामूढ होकर शिव को नहीं पहचानते तुम्हीं भला सोचकर

है ।। ५५ ।। माटी कौ सीस निवावत है जड़ याते कहे तुहि का सिधि ऐहै । जौन रिझाइ लयो जग कौ तब चावर डारत रीझि न जैहै । धूप जगाइकै संख बजाइ सु फूलन की बरखा बरखैहै । अंत उपाइ कै हारिहैं रे पसु पाहन मै परमेश्‍र न पैहै ।। ५६ ।। एकन जंत्र सिखावत हैं दिज एकन मंत्र प्रयोग बतावैं । जो न भिजैं इन बातन ते (मू०ग्रं०१२०४) तिह गीति कबित्त सलोक सुनावैं । द्योस हिरैं धन लोगन के ग्रहि चोर चकैं ठग देखि लजावैं । कानि करैं नहि काजी कुटवार की मूँडि कै मूँडि मुरीदन खावैं ।। ५७ ।। ।। दोहरा ।। पाहन की पूजा करै जो है अधिक अचेत । भाँग न एते पर भखै जानत आप सुचेत ।। ५८ ।। ।। तोटक छंद ।। धन के लगि लोभ गए अनतैं । तजि मात पिता सुत बाल कितैं । बसि कै बहु मास तहाँ ही मरैं । फिरि कै ग्रहि के नहि पंथ परैं ।। ५९ ।। ।। दोहरा ।। धनी लोग हैं पुहप सम गुनिजन भौर बिचार । गूँज रहत तिह पर सदा सभ धन धाम बिसार ।। ६० ।। ।। चौपई ।। सभ कोऊ अंतकाल बसि भया ।

बताओ कि इन (पत्थरों) में कहीं पार्वतीपति शिव हो सकते हैं ।। ५५ ।। जड़ मिट्टी को सिर झुका रहे हैं । भला इनमें क्या सिद्धि मिलेगी । जिसने सारे संसार को मोहित कर रखा है, तुम्हारे चँवर डालने से वह रीझ नहीं जाएगा । तुम धूप-बत्ती जलाकर, शंख बजाकर फूलों की वर्षा करते हो । परन्तु हे पशु ! अंत में सब उपाय करके हार जाओगे पर पत्थरों में परमेश्वर नहीं पाओगे ।। ५६ ।। ये द्विज एक को यंत्र सिखाते हैं और दूसरे को मंत्र का प्रयोग बताते है । जो इन बातों से प्रसन्न नहीं होता उन्हें गीत-कवित्त-श्लोकादि सुनाते हैं । दिन में ही ये लोगों का धन ऐसे चुरा लेते हैं कि चोर और ठग भी लज्जित हो जाते हैं । ये क़ाज़ी, कोतवाल की भी परवाह नहीं करते और लूट-लूटकर अपने चेलों को ही खाते हैं ।। ५७ ।। ।। दोहा ।। जो बिलकुल निर्बुद्धि होकर पत्थर की पूजा करते हैं और भाँग आदि का नशा नहीं करते वे अपने को चैतन्य समझते हैं (यह कैसी अजीब बात है) ।। ५८ ।। ।। तोटक छंद ।। धन के लोभ में माता-पिता, सुत एवं पुत्री को छोड़कर ये अन्यत्र चले जाते हैं । वे अनेकों मास, वर्षों तक वहीं बसकर वहीं मर जाते हैं और फिर घर का रास्ता नहीं लेते ।। ५९ ।। ।। दोहा ।। धनी लोग तो फूलों के समान हैं और गुणीजन भौंरे हैं । वे घर-बाहर की चिन्ता छोड़कर सदैव उन्हीं पर करते हैं ६० चौपाई सभी अंत

धन की आस निकरि तजि गया। आसा करत गया संसारा। इह आसा को वार न पारा ॥ ६१ ॥ एक निरास वहै करतारा। जिन कीना इह सकल पसारा। आसा रहित और कोऊ नाही। जान लेहु दिजबर मन माही ॥ ६२ ॥ लोभ लगे धन के ए दिजबर। माँगत फिरत सभन के घर घर। या जग महि करि डिंभ दिखावत। ते ठगि ठगि सभ कह धन खावत ॥ ६३ ॥ ॥ दोहरा ॥ आसा की आसा लगे सभ ही गया जहान। आसा जग जीवत बची लीजै समझि सुजान ॥ ६४ ॥ ॥ चौपई ॥ आशा करत सगल जग जया। आसहि उपज्या आसहि भया। आसा करत तरुन ब्रिध हूआ। आसा करत लोग सभ मूआ ॥ ६५ ॥ आसा करत लोग सभ भए। बालक हुतो ब्रिद्ध ह्वै गए। जित कित धन आसा करि डोलहि। देस बिदेस धनास कलोलहि ॥ ६६ ॥ पाहन कहु धनास सिर न्यावैं। चेत अचेतन कौ ठहरावैं। करत प्रपंच पेट के काजा। ऊच नीच राना अरु राजा ॥ ६७ ॥ काहू को भिच्छा सु द्रिड़ावैं। काहूँ कौ लै मूँड मुँडावैं। काहूँ पठै तीरथन देहीं। ग्रहि को दरबु माँग सभ लेहीं ॥ ६८ ॥

में काल के वश में हैं परन्तु धन की आशा में सभी निकलकर घूमते हैं। इच्छा करता ही सारा संसार गया है। इस आशा का तो कोई अन्त नहीं है ॥ ६१ ॥ आशा-विमुक्त एक वह कर्तार ही है, जिसने सारा प्रसार किया है। अन्य कोई भी आशा-रहित नहीं है। हे विप्रवर, तुम इसे जान लो ॥६२॥ ये विप्र लोभ में ग्रस्त सबके घर-घर पर माँगते घूमते हैं। इस संसार में ये प्रपंच दिखाते हैं और सबको ठग-ठगकर उनका धन खाते हैं ॥ ६३ ॥ ॥ दोहा ॥ आशा की आशा में लिप्त तो सारा संसार ही चला गया है परन्तु हे सुजान, आशा फिर भी जीवित बची रही है ॥ ६४ ॥ ॥ चौपाई ॥ आशा लगाए सारा संसार जाता है और आशा में उपजता और आशा रूप ही हो जाता है। तरुण भी आशा लगाए ही बृद्ध हो गया और आशा करते-करते ही सब मर जाते हैं ॥ ६५ ॥ आशा करते ही सब लोग बालक से वृद्ध हो गए हैं। इधर-उधर धन की आशा में ही वे डोलते हैं और धन की आशा में ही देश-विदेशों के भ्रमण किया करते हैं ॥ ६६ ॥ धन की आशा में ही पत्थर को सिर झुकाते हैं और अचेतन को भी चैतन्य मानते हैं। पेट के लिए ही प्रपंच करते हैं ६७ किसी को सुशिक्षा दृढ करवाते हैं और किसी का सिर मुडवा देते हैं किसी को तीर्थयात्रा पर भेज देते हैं और घर का

जिह नर को धनवान तकावैं। जोनि सिला महि ताँहि फसावै। बहुरि डंड तिह मूँडि चुकाहीं। काढि देत ताके पुनि माहीं॥ ६९॥ इन लोगन धन ही की आसा। स्री हरि जी की नाहि पयासा। डिंभि जगत कह करि परचावै। (मू०ग्रं० १२०५) लछिमी हर ज्यो त्यो लै आवै॥ ७०॥ ॥ दिज बाच॥ सुनु पुत्री तै बात न जानै। शिव कह करि पाहन पहिचानै। बिप्रन को सभ ही सिर न्यावैं। चरनोदक लै माथ चड़ावैं॥ ७१॥ पूजा करत सगल जग इनकी। निंद्या करत मूड़ तै जिनकी। ए हैं परम पुरातन दिजबर। सदा सराहत जिन कह न्रिप बर॥ ७२॥ ॥ कुअरि बाच॥ सुन मूरख दिज तै नहि जानी। परम जोति पाहन पहिचानी। इन महि परम पुरख तै जाना। तजि स्यानप ह्वै गयो अयाना॥ ७३॥ ॥ अड़िल्ल॥ लैनौ होइ सु लै दिज मुहि न झुठाइयै। पाहन मै परमेस्वर न भाखि सुनाइयै। इन लोगन पाहन महि शिव ठहराइकै। हो मूड़न लीजहु लूट हरख उपजाइकै॥ ७४॥ काहू कह पाहन महि ब्रहम बतात हैं। जल डूबन हित किसहूँ तीरथ पठात हैं।

सारा द्रव्य स्वयं माँग लेते हैं॥ ६८॥ जिस धनवान को ये देख लेते हैं उसे आवागमन के चक्र में (भय दिखाकर) फँसा लेते हैं। वे उसकी ओर अच्छा खासा दंड निकाल देते हैं और उसे चुकता करवाते हैं॥ ६९॥ इन लोगों को धन की ही आशा होती है और हरि की ज़रा भी प्यास नहीं होती। जगत को ये प्रपंच में उलझाए रहते हैं और जैसे-तैसे लक्ष्मी का हरण कर ये लाते रहते हैं॥ ७०॥ ॥ द्विज उवाच॥ हे पुत्री! सुनो, तुम बात नहीं समझती हो और शिव को पत्थर मान रही हो। ब्राह्मणों को तो सभी सिर झुकाते हैं और उनका चरणामृत लेकर माथे पर चढ़ाते हैं॥ ७१॥ मूर्ख जिनकी निन्दा करते हैं सारा संसार इनकी पूजा करता है। ब्राह्मण सबसे प्राचीन हैं जिनकी प्रशंसा राजागण भी सदैव किया करते हैं॥ ७२॥ ॥ कुँवरि उवाच॥ हे मूर्ख ब्राह्मण, तुमने (कुछ भी) जाना नहीं है और परम ज्योति को पत्थर मान रहे हो। तुम इन (पत्थरों) में परमपुरुष को मान रहे हो और सयानापन छोड़कर बचकाने हो गए हो॥ ७३॥ ॥ अड़िल्ल॥ हे विप्र, जो लेना हो सो लो परन्तु मुझे झूठ मत बताओ और पत्थर में परमेश्वर है ऐसा मत कहो। मूर्खों को पत्थरों में शिव बतलाकर बेशक हर्षपूर्वक लूट लेना॥ ७४॥ किसी को पत्थर में ब्रह्म बताते हो किसी को जल में डुबकी लगाने के लिए तीर्थों पर भेज देते हो अगणित यत्न कर तुम जैसे भी हो धन चुरा लेते हो।

ज्यो त्यो धन हर लेत जतन अनगनित कर। हो टका गाठि मांहि लए न देही जान घर ॥ ७५ ॥ धनी पुरख कह लखि दिज दोख लगावही। होम जग्य ताते बहु भांत करावही। धनियहि करि निरधनी जात धन खाइकै। हो बहुरि न ताकौ बदन दिखावत आइकै ॥ ७६ ॥ ॥ चौपई ॥ काहू लौ तीरथन सिधावै। काहू अफल प्रयोग बतावै। काकन ज्यो मँडरात धनू पर। ज्यो किलका मच्छरीयै दू पर ॥ ७७ ॥ ज्यो द्वै स्वान एक हडिया पर। भूसत मनो बादि बिद्याधर। बाहर करत बेद की चरचा। तन अरु मन धन ही की अरचा ॥ ७८ ॥ ॥ दोहरा ॥ धन की आसा मन रहै बाहर पूजत देव। ना हरि मिला न धन भयो ब्रिथा भई सभ सेव ॥ ७९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ ए बिद्या बल करहि जोग की बात न जानै। ए सुचेत करि रहहि हमनि आचेत प्रमानै। कहा भयौ जौ भाँग भूलि भौदू नहि खाई। हो निजु तन ते बिसंभार रहत सभ लखत लुकाई ॥ ८० ॥ भाँग खाइ भट भिड़हि गजन के दाँत उपारहि। सिमटि साँग संग्रहहि सार

जिसकी गाँठ में धन हो तुम उसे घर वापस (धन-सहित) नहीं जाने देते ॥ ७५ ॥ धनी पुरुष को देखकर विप्र उसमें कुछ न कुछ दोष ढूंढ़ लेते हैं और उससे बहुत प्रकार के होम-यज्ञादि करवाते हैं। धनी का धन खाकर उसे निर्धन कर देते हैं और फिर उसे आकर मुँह नहीं दिखाते ॥ ७६ ॥ ॥ चौपाई ॥ किसी को तीर्थों पर भेज देता है और किसी की साधना में दोष बताता है। यह कौवे, मक्खी, मच्छर की तरह धन पर मँड़राता रहता है ॥ ७७ ॥ अथवा जैसे दो कुत्ते एक हड्डी पर टूट पड़ते हैं या फिर वाद-विवादी एक-दूसरे पर भौंकते हैं। बाहर तो तुम लोग वेद की चर्चा करते हो, पर मन ही मन धन की पूजा किया करते हो ॥ ७८ ॥ ॥ दोहा ॥ मन मे धन की आशा लगाए रहते हो और बाहर से देवता की पूजा करते हो। ऐसे में न तो परमात्मा मिलता है और न ही धन मिलता है। इस प्रकार सारी सेवा निष्फल चली जाती है ॥ ७९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ विद्या का अभिमान करते हो पर योग की बात नहीं जानते। स्वयं को प्रबुद्ध मानते हो और हम लोगों को मूर्ख समझते हो। क्या हुआ जो इस मूर्ख ने भूल से भाँग नहीं खाई परन्तु सभी जानते हैं कि यह धरती पर बोझ के समान है ॥ ८० ॥ भाँग खाकर ही वीर भिड़ते हैं और हाथियों के दाँत उखाड़ लेते हैं पीछे सिमटकर ये भाला पकड़ते हैं और शत्रु के सम्मुख हो उसे चलाते हैं अरे

सनमुख ह्वै ग्रारहि। तै मूओ पी भाँग कहो का काज सवरिहै। हो ह्वै कै म्रितक समान जाइ औधे मुख परिहै॥ ८१॥ (मू०ग्रं०१२०६) ॥ भुजंग छंद॥ सुनो मिस्र सिच्छा इनी को सु दीजै। महाँ झूठ ते राखिकै मोहि लीजै। इतो झूठ कै और नीको द्रिड़ावौ। कहा चाम के दाम कै कै चलावौ॥ ८२॥ महाँ घोर ई नरक के बीच जैहो। कि चंडाल की जोनि मै औतरैहो। कि टाँगे मरोगे बधे म्रितुशाला। सने बंधु पुत्रा कलत्रान बाला॥ ८३॥ कहो मिस्र आगे कहाँ ज्वाब दैहो। जबै काल के जाल मै फाँसि जैहो। कहो कौन सो पाठ कैहो तहाँ हो। तऊ लिंग पूजा करौगे उहाँही॥ ८४॥ तहाँ रुद्र ऐहैं कि स्री क्रिशन ऐहैं। जहाँ बाँधि स्री काल तोको चलै हैं। किधौ आनि कै राम ह्वैहै सहाई। जहाँ पुत्र माता न ताता न भाई॥ ८५॥ महाकाल जू को सदा सीस न्यैये। पुरी चौदहूँ त्रास जाको त्रसैयै। सदा आनि जाको सभै जीव मानै। सभै लोक ख्याता बिधाता पछानै॥ ८६॥ नहो जानि जाई कछू रूप रेखा। कहाँ बास ताको फिरै कौन भेखा। कहाँ नाम ताको कहाँ कै कहावै।

कंजूस! तुम भला भाँग पीकर क्या कर पाओगे। तुम तो मृतक के समान औंधेमुख हो गिर पड़ोगे॥ ८१॥ ॥ भुजंग छन्द॥ हे ब्राह्मण, तुम ऐसी शिक्षा इन (मूर्खों को) ही देना और मुझे इस महाझूठ से बचा लेना। झूठ को और अच्छे तरीक़े से हटाओ और इच्छानुसार चमड़े का सिक्का चलाओ॥ ८२॥ तुम यहाँ नरक में जाओगे और चांडाल की योनि मे अवतार धारण करोगे। मृत्युशाला में टाँगकर बंधु-पुत्रादि-समेत मारे जाओगे॥ ८३॥ हे विप्र! कहो, आगे क्या उत्तर दोगे जब तुम काल के जाल मे पड़ोगे? तब बताओ वहाँ कौन सा पाठ करोगे? क्या वहाँ भी लिंग की ही पूजा करोगे?॥ ८४॥ वहाँ रुद्र आएँगे कि श्रीकृष्ण आएँगे? जहाँ तुम्हे काल बाँधकर ले जायगा और पुत्र, माता, पिता भाई कोई नहीं होगा वहाँ क्या फिर राम तुम्हारी सहायता करेंगे?॥ ८५॥ सदैव महाकाल (परमात्मा) के सम्मुख सिर झुकाना चाहिए जिसका भय चौदह भुवन मानते हैं, जिसकी आन सभी मानते हैं और जिसे सभी विधाता के रूप में पहचानते हैं॥ ८६॥ उसकी कोई रूप-रेखा, आवास और वेश जाना नहीं जा सकता उसका क्या नाम है वह क्या कहलाता है, मैं कहाँ तक वर्णन करूँ मुझसे

कहा कै बखानो कहे भो न आवै ॥ ८७ ॥ न ताको कोऊ तात माता न भाई । न पुत्रा न पोत्रा न दाय्या न दाई । कछू संग सैना न ताके सुहावै । कहै सत्ति सोई करै सो बन्यावै ॥ ८८ ॥ कईऊ सवारै कईऊ खपावै । उसारे गड़े फेरि मेटै बनावै । घनी बार लौ पंथ चारो भ्रमाना । महाकाल ही को गुरू को पछाना ॥ ८९ ॥ मुरीद है उसी का वहै पीर मेरो । उसी का किआ आपना जीव चेरो । तिसी का किआ बालका मैं कहावौ । वही मोहि राखा उसी को धिआवौ ॥ ९० ॥ ॥ चौपई ॥ दिज हम महाँ काल को मानै । पाहन मै मन को नहि आनै । पाहन को पाहन करि जानत । ताँते बुरो लोग ए मानत ॥ ९१ ॥ झूठा कह झूठा हम कैहैं । जो सभ लोग मनै कुररैहैं । हम काहू की कानि न राखैं । सत्ति बचन मुख ऊपर भाखैं ॥ ९२ ॥ सुनु दिज तुम धन के लब लागे । माँगत फिरत सभन के आगे । अपने मन भीतरि न लजावहु । इक टक ह्वै हरि ध्यान न लावहु ॥ ९३ ॥ ॥ दिज बाच ॥ तब दिज बोला तै क्या मानै । संभू को पाहन करि मानै । जो इनको करि आन बखानै । ताको ब्रहम

कहा नहीं जाता ॥ ८७ ॥ उसका न कोई पिता, माता, भाई, न पुत्र, पौत्र और न कोई धाय है । उसके साथ कोई सेना नहीं है, परन्तु वह जो कहना चाहता है वही होता है ॥ ८८ ॥ कइयों को उसने सँवारा और कइयों को नष्ट कर दिया । कइयों को बनाया और फिर मिटा दिया । कई बार वह चारों दिशाओं में घूमा है और सदैव महाकाल गुरु के रूप में पहचाना गया है ॥ ८९ ॥ मैं उसे ही अपना पीर मानती हूँ और उसी की मुरीद हूँ, क्योंकि मेरी जीवात्मा उसी की बनाई हुई है । उसी की रचना मैं बालिका कहलाती हूँ; उसी ने मेरी रक्षा की है और मैं उसी का स्मरण करती हूँ ॥ ९० ॥ ॥ चौपाई ॥ हे विप्र, मैं महाकाल को मानती हूँ और पत्थर में मन नहीं लगाती । पत्थर को मात्र पत्थर ही मानती हूँ इससे लोग बुरा समझते हैं ॥ ९१ ॥ झूठे को तो हम झूठा ही कहेंगे चाहे लोग मना करें और चिल्लाएँ । हम किसी की परवाह नहीं करेंगे और सच्ची बात मुँह पर कहेंगे ॥ ९२ ॥ हे पंडित, तुम धन के लोभ में सबसे माँगते घूमते हो । अपने मन में लज्जित नहीं होते और एक टका भर भी परमात्मा का ध्यान नहीं करते ॥ ९३ ॥ ॥ द्विज उवाच ॥ तब ब्राह्मण बोला— तुम क्या जानो जो शिव को पत्थर समझ रही हो जो इन्हें मानता है

घातकी जानैं । ९४ (मू०ग्रं०१२०७) जो इन कह कटु बचन उचारैं । ताकौ महाँनरक बिधि डारैं । इनकी सदा कीजियै सेवा । ए है परम पुरातन देवा ।। ९५ ।। ।। कुअरि बाच ।। एकै महाँ काल हम मानैं । महाँरुद्र कह कछू न जानैं । ब्रहम बिशन की सेव न करही । तिन ते हम कबहूँ नहि डरही ।। ९६ ।। ब्रहम बिशन जिन पुरख उचार्यो । ताकौ म्रितु जानियै मार्यो । जिन नर कालपुरख को ध्यायो । ताके निकट काल नहि आयो ।। ९७ ।। जे नर कालपुरख को ध्यावै । ते नर काल फाँस नहि जावैं । तिनके रिद्ध सिद्ध सभ घर मौ । कोबिद सभ ही रहत हुनर भौ ।। ९८ ।। कालपुरख इक दा जिन कहा । ताके रिद्धि सिद्धि ह्वै रहा । भाँति भाँति धन भरे भंडारू । जिन का आवत वार न पारू ।। ९९ ।। जिन नर कालपुरख कह ध्यायो । सो नर कलि मो कबहू न आयो । या जग मै ते अति सुख पावै । भोग करै बैरनि कह घावैं ।। १०० ।। जब तोको दिज काल सतैहैं । तब तूं को पुसतक कर लैहैं । भागवत पढ़ो कि गीता कहिहो । रामहि पकरि कि शिव कह गहिहो ।। १०१ ।। जो तुम परमपुरख

उसे पापी समझता है ।। ९४ ।। जो इन्हें कठोर वचन कहता है उसे महा-नरक में डालता है । इनकी सदैव सेवा करो क्योंकि यही प्राचीनतम देव हैं ।। ९५ ।। ।। कुँवरि उवाच ।। हम तो केवल एक महाकाल को ही जानते हैं और महारुद्र आदि को कुछ नहीं जानते । ब्रह्मा-विष्णु की सेवा हम नहीं करेंगे और उनसे तनिक भी नहीं डरेंगे ।। ९६ ।। जिसने (मात्र) ब्रह्मा-विष्णु का स्मरण किया, समझ लो मौत ने उसे मार दिया । जिसने अकाल पुरुष का स्मरण किया, समझो मौत उसको फंदे में नहीं फँसा सकती ।। ९७ ।। जो मनुष्य कालपुरुष का ध्यान करते हैं, वह मृत्यु के फाँस में नहीं फंसते । ऋद्धियाँ, सिद्धियाँ उनके घर में रहती हैं और वे सब कलाओं में भी निपुण रहते हैं ।। ९८ ।। जिसने एक दिन भी अकालपुरुष का स्मरण कर उच्चारण किया, ऋद्धियाँ-सिद्धियाँ उसकी होकर रह जाती हैं । उसके घर में धनो के भंडार भर जाते हैं जो अनन्त होते हैं ।। ९९ ।। जिसने अकालपुरुष का स्मरण किया है वह फिर योनियों में कभी नहीं आता । वह इस संसार में अत्यन्त सुख को प्राप्त करता है और भोग-विलास करता हुआ शत्रुओं का नाश करता है ।। १०० ।। हे विप्र ! जब तुम्हें मौत सताएगी तो बताओ भला तुम कौन सी पुस्तक सामने करोगे ? तुम भागवत पढोगे कि गीता बाँचोगे और बताओ तब

ठहराए। ते सभ डंड काल के घाए। काल डंड बिन बचा न कोई। शिव बिरंच बिशनिंद्र न सोई ॥ १०२ ॥ जैसि जूनि इक दैत बखनियत। त्यों इक जूनि देवता जनियत। जैसे हिंदूआ नो तुरकाना। सभहिन सीस काल जरवाना ॥ १०३ ॥ कबहूँ दैत देवतन मारैं। कबहूँ दैतन देव सँघारैं। देव दैत जिन दोऊ सँघारा। वहै पुरख प्रतिपाल हमारा ॥ १०४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ इंद्र उपिंद्र दिनिंद्रहि जौन सँघारियो। चंद्र कुबेर जलिंद्र अहिंद्रहि मारियो। पुरी चौदहूँ चक्र जवन सुनि लीजियै। हो नमशकार ताही को गुर करि कीजियै ॥ १०५ ॥ ॥ दिज बाच ॥ ॥ चौपई ॥ बहु बिधि बिप्रहि को समझायो। पुनि मिस्रहि अस भाखि सुनायो। जे पाहन की पूजा करिहैं। ताके पाप सकल शिव हरिहैं ॥ १०६ ॥ जे नर सालिग्राम कह ध्यैहै। ताके सकल पाप को छैहै। जो इह छाडि अवर कह ध्यैहै। ते नर महाँ (मू०पं०१२०८) नरक महि जैहै ॥ १०७ ॥ जे नर कछु धन बिप्रहि दैहै। आगे माँग दस गुनो लैहै। जो बिप्रन बिनु अनतै देही। ताकौ कछु सु फलै नहि सेई ॥ १०८ ॥

फिर राम को पकड़ोगे कि शिव को पकड़ोगे ॥१०१॥ जिनको तुमने परमपुरुष ठहराया है, वे सब काल के दंड से ग्रस्त हैं। शिव, विष्णु, इन्द्र, ब्रह्मा कोई भी कालदंड से नहीं बच सका है ॥ १०२ ॥ जैसी एक योनि दैत्यों की है वैसी ही एक योनि देवता की भी है। जैसे हिन्दू और तुर्क हैं वैसे ही सबके सिर पर काल महाबली है ॥१०३॥ कभी देवों ने दैत्यों को और कभी दत्यों ने देवताओ को मारा है। परन्तु जिसने देव-दैत्यों दोनों को मारा है, वही परमपुरुष हमारी पूजा का उद्देश्य है ॥ १०४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जिसने इंद्र, उपेन्द्र, सूर्य, चंद्र, कुबेर, वरुण, शेषनाग को मार डाला है। जिसका चौदह पुरियों मे चक्र चलता सुनाई पड़ता है, उसे ही गुरु मानकर प्रणाम करना चाहिए ॥ १०५ ॥ ॥ द्विज उवाच ॥ ॥ चौपाई ॥ उसने बहुत प्रकार से मिसिर को समझाया, परन्तु उसने फिर कह सुनाया। जो पत्थर की पूजा करेंगे उसके समस्त पाप शिव नष्ट कर देंगे ॥ १०६ ॥ जो व्यक्ति शालिग्राम का ध्यान करेंगे उनके समस्त पाप नष्ट हो जायेंगे। जो इसे छोड़ अन्य का स्मरण करेंगे वे महानरक में जायेंगे ॥ १०७ ॥ जो व्यक्ति विप्र को धन देगा वह आगे दस गुना पा जायगा। जो विप्र के अतिरिक्त अन्य किसी को देगा उसे कुछ फल नहीं मिलेगा १०८ अड़िल्ल तभी कुंवरि ने

॥ अड़िल्ल ॥ तबै कुअरि प्रतिमा शिव की कर मै लई । हसि हसि करि द्विज के मुख कसि कसि कै दई । सालिग्राम भे दाँति फोरि सभ ही दिए । हो छीनि छानि करि बस्त्र मिस्त्र के सभ लिए ॥ १०९ ॥ कहो मिस्त्र अब रुद्र तिहारो कह गयो जिह सेवत थो नास दाँति छै तिन कियो । जिह लिंगहि कौ जपते काल गवाइयो । हो अंत काल सो तुमरे मुख महि आइयो ॥ ११० ॥ ॥ चौपई ॥ ताको दरबु छीनि जो लियो । सो सभ दान द्विजन करि दियो । कह्यो मिस्त्र कछु चिंत न करहूँ । दान दस गुनो आगै भरहू ॥ १११ ॥ ॥ कबित्तु ॥ औरन को कहत लुटाओ तुम जाहु धन आपु पहिती मै डारि खातन बिसारि हैं । बडे ही प्रपंची परपंचन को लिए फिरैं दिन ही मै लोगन को लूटत बजार हैं । हाथ ते न कौडी देत कौडी कौडी माँग लेत पुमी कहत तासो करै बिभचार हैं । लोभता के जाए हैं कि ममता के भए हैं ए सूमता के पुत्र कैधौ दरिद्रावतार हैं ॥ ११२ ॥ ॥ चौपई ॥ पहती बिखै बिसार न डारहि । औरन पास गाल को मारहि । जनियत किसी देस के राजा । कौडी के आवत नहि काजा ॥ ११३ ॥ जो

हाथ में शिव की मूर्ति ली और हँसते हुए उसे ब्राह्मण के मुख पर दे मारा । शालिग्राम भी फोड़ दिए और मिश्र के वस्त्र भी छीन-छान लिये ॥ १०९ ॥ कहो विप्र ! अब तुम्हारा रुद्र कहाँ गया ? जिसका तुम पूजन-सेवन करते थे उसके मैंने दाँत तोड़ दिये हैं । जिस लिंग की पूजा करते तुमने समय नष्ट किया वही अन्त में तुम्हारे मुँह में आ पड़ा है ॥ ११० ॥ ॥चौपाई॥ उसका जो द्रव्य छीना था वह उसने सभी अन्य ब्राह्मणों को दान कर दिया । विप्र से कहा कि तुम चिन्ता मत करो, तुम्हें आगे (परलोक में) दस गुना मिल जायगा ॥ १११ ॥ ॥ कवित्त ॥ अन्यों से कहते हैं कि खूब धन लुटाओ और स्वयं (कंजूसी के कारण) दाल में नमक भी नहीं डालते हैं । ये बड़े प्रपंची है और दिन में ही लोगों को सरे बाजार लूट लेते हैं । हाथ से एक कौड़ी भी नहीं देते पर कौड़ी-कौड़ी करके सबसे माँग लेते हैं । जिसे पुमी कहते है, उसी से व्यभिचार करते हैं । जैसे लोभ द्वारा पैदा हुए स्वार्थ के ही होकर रहनेवाले कृपणता के पुत्र अथवा दरिद्रता के अवतार हैं ॥ ११२ ॥ ॥ चौपाई ॥ खुद तो दाल में नमक तक नहीं डालते और दूसरों के पास गाल बजाते हैं ऐसे जाने जाते हैं मानो किसी देश के राजा हो लेकिन हैं एक

इन मंत्र जंत्र सिधि होई। दर दर भीखि न मागै कोई। एकै मुख ते मंत्र उचारै। धन सौ सकल धाम भरि डारै ॥ ११४ ॥ राम क्रिशन ए जिनै बखानै। शिव ब्रह्मा ए आहि प्रमानै। ते सभ ही स्री काल सँघारे। काल पाइकै बहुरि सवारे ॥ ११५ ॥ केते रामचंद्र अरु क्रिशना। केते चतुरानन शिव बिशना। चंद सूरज ए कवन बिचारे। पानी भरत काल के द्वारे ॥ ११६ ॥ काल पाइ सभ ही ए भए। कालो पाइ काल ह्वै गए। कालहि पाइ बहुरि अवतरिहै। कालहि काल पाइ संघरिहै ॥ ११७ ॥ ॥ दोहरा ॥ स्राप राक्षसी के दए जो भयो पाहन जाइ। ताहि कहत परमेश्र तैं मन महि नही लजाइ ॥ ११८ ॥ ॥ द्विज बाच ॥ ॥ चौपई ॥ तब दिज अधिक कोप ह्वै गयो। भरभराइ ठाढा उठि भयो। (मू०ग्रं०१२०६) अब मैं इह राजा पै जैहौ। तहाँ बाँधि करि तोहि मँगैहौ ॥ ११९ ॥ ॥ कुअरि बाच ॥ तब तिन कुअरि दिजहि गहि लिआ। डार नदी के भीतर दिया। गोता पकरि आठ सै दीना। ताँहि पवित्र भली बिधि कीना ॥ १२० ॥ कहो कुअरि पितु पहि मैं जैहौ। तैं मुहि

कौड़ी काम के भी नहीं ॥ ११३ ॥ यदि इन मंत्रों-यंत्रों में सिद्धि हो तो भला कोई भी दर-दर भीख न माँगे। मुख से मंत्र का उच्चारण करे और धन के समस्त भंडार भर ले ॥ ११४ ॥ राम, कृष्ण, शिव, ब्रह्मा आदि जितने भी बताए गए हैं वे सब काल के द्वारा मारे गए हैं और फिर उसी के द्वारा सँवारे गए हैं ॥ ११५ ॥ कितने ही रामचंद्र, कृष्ण, ब्रह्मा, शिव और विष्णु हैं। चंद्र और सूर्य बेचारे क्या हैं; ये सब तो काल के द्वार पर पानी भरते हैं ॥ ११६ ॥ समय-समय पर ये सब हुए हैं और समय पाकर ही ये सब काल-कवलित हो गए हैं। फिर कालानुसार ही पुनः पैदा होंगे और समय पाकर ही काल द्वारा मार डाले जायेंगे ॥ ११७ ॥ ॥ दोहा ॥ जो एक राक्षसी के शाप के कारण पत्थर बन गया उसे सब परमेश्वर कहते हैं और मन में नहीं लजाते ॥ ११८ ॥ ॥ द्विज उवाच ॥ ॥ चौपाई ॥ तब ब्राह्मण अत्यधिक कुपित होकर भड़भड़ाकर उठ खड़ा हुआ और कहने लगा कि मैं अभी राजा के पास जाता हूँ और तुम्हें बँधवाकर मंगवाता हूँ ॥ ११९ ॥ ॥ कुँवरि उवाच ॥ तब उस राजकुमारी ने ब्राह्मण को पकड़ा और नदी में लुढ़का दिया। उसे पकड़कर आठ सौ गोता खिलाया और भली प्रकार पवित्र किया १२० कुँवरि कहने लगी कि मैं पिता के पास जाऊंगी और

डारा हाथ बतैहौ । तेरे दोनो हाथ कटाऊँ । तौ राजा की सुता कहाऊँ ॥ १२१ ॥ ॥ दिज बाच ॥ इह सुनि बात मिस्र डरपयो । लागत पाइ कुअरि के भयो । सोऊ करों जु मोहि उचारो । तुम निजु जिय ते कोप निवारो ॥ १२२ ॥ ॥ कुअरि बाच ॥ तुम कहियहु मैं प्रथम अन्हायो । धन निमिति मै दरबु लुटायो । पाहन की पूजा नहि करियै । महाकाल के पाइन परियै ॥ १२३ ॥ ॥ कबियो बाच ॥ तब दिज महाँ काल को ध्यायो । सरिता महि पाहनन बहायो । दूजे कान न किनहूँ जाना । कहा मिस्र पर हाल बिहाना ॥ १२४ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल सौ मिसरहि छला पाहन दए बहाइ । महाकाल को सिख्य करि मदरा भाँग पिवाइ ॥ १२५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ छिआसठि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २६६ ॥ ५१९४ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ सतसठि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ रूपसैन इक न्रिपति सु लच्छन । तेजवान बलवान बिचच्छन । सकलमती ताको घर दारा । जा सम

कहूँगी कि तुमने मुझ पर हाथ डाला है। तेरे दोनों हाथ कटवाऊँगी तभी राजा की पुत्री कहलाऊँगी ॥१२१॥ ॥द्विज उवाच॥ यह बात सुनकर ब्राह्मण डर गया और कुँवरि के पाँव पड़ गया। तुम जो कहोगी मैं वही करूँगा, तुम अपना गुस्सा शान्त करो ॥ १२२ ॥ ॥ कुँवरि उवाच ॥ तुम यह कहना कि मैं नहाया हूँ और मैंने स्वयं अपना द्रव्य लुटा दिया है। पत्थर की पूजा नही करोगे और महाकाल (परमात्मा) के चरणों में पड़ोगे ॥ १२३ ॥ ॥ कवि उवाच ॥ तब विप्र ने महाकाल की आराधना की और सरिता में पत्थरों को बहा दिया। किसी को कानोंकान भी खबर नहीं हुई कि मिसिर पर क्या बीती ॥ १२४ ॥ ॥ दोहा ॥ इस छल से उसने ब्राह्मण को छला और पत्थर बहा दिए। उसे मदिरा-भाँग पिलाकर महाकाल का उपासक बनाया ॥ १२५ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ छिआसठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २६६ ॥ ५१९४ ॥ अफजूं ॥

दो सौ सड़सठवाँ चरित्र-कथन

चौपाई रूपसेन एक राजा था जो विलक्षण रूप से तेजवान और

कहूँ न राजकुमारा ॥ १ ॥ तहि इक बसै तुरकनी नारी। तिह सम रूप न मैन दुलारी। तिन राजा की छबि निरखी जब। मोहि रही तरुनी ता पर तब ॥ २ ॥ रूपसैन पहि सखी पठाई। लगी लगन तुहि साथ जताई। इक दिन मुरि कह्यो सेज सुहैयै। नाथ सनाथ अनाथहि कैयै ॥ ३ ॥ इमि दूजी प्रति न्रिपति उचारा। त्रिय आगे पति जियत तिहारा। जौ तौ प्रथम काजियहि मारै। तिह पाछे मुहि संगि बिहारै ॥ ४ ॥ सुनि सहचरि तिह जाइ जताई। न्रिप हम को इमि भाख सुनाई। जौ तै प्रथम काजियहि घावैं। तिह उपरांत बहुरि मुहि पावैं ॥ ५ ॥ सुनि तिय बात चित्त महि राखी। और न किसी औरतहि भाखी। रैनि समैं काजी जब आयो। काढि क्रिपान सोवतहि (मू०ग्रं०१२१०) घायो ॥ ६ ॥ ताको काटि मूँड करि लियो। लै राजा के हाजर कियो। तव निमित्त काजी मैं घायो। अब मुहि संग करो मन भायो ॥ ७ ॥ जब सिर निरखि न्रिपति तिह लयो। मन के बिखै अधिक डरपयो। पति मारत जिह लगी न बारा। का उपपति तिह अग्र बिचारा ॥ ८ ॥ धिक धिक

बलवान था। सकलमती उसके घर में स्त्री थी जिसके समान कोई अन्य राजकुमारी नही थी ॥ १ ॥ वहाँ एक मुस्लिम स्त्री रहती थी, उस कामदेव की पत्नी के समान रूप वाली के समान अन्य कोई रूपवान नहीं था। जब उसने राजा की छवि देखी तो वह तरुणी उसी पर मोहित हो उठी ॥ २ ॥ उसने रूपसैन के पास सखी भेजी और अपनी लगन उससे लगी हुई उससे बताई। एक दिन मेरे कहने के अनुसार मेरी शय्या की शोभा बढ़ाओ और मुझ अनाथ को सनाथ कर दो ॥ ३ ॥ राजा ने दूसरी स्त्री से कहा कि तुम्हारा तो पति जीवित है। यदि तुम पहले उसे मारो तो फिर मेरे साथ विहार करो ॥ ४ ॥ सखी ने सुनकर यह उससे कहा कि राजा ने मुझसे कहा है कि यदि तुम पहले क़ाज़ी को मार डालो तो उसके बाद मुझे प्राप्त कर सकती हो ॥ ५ ॥ यह बात सुनकर उस औरत ने मन में रखी और किसी अन्य स्त्री से नहीं कहा। रात को जब क़ाजी आया तो कृपाण निकालकर उसे मार डाला ॥ ६ ॥ उसका सिर काट लिया और राजा के सम्मुख हाजिर कर दिया। तुम्हारे लिए मैंने क़ाज़ी को मार डाला है, अब तुम मेरे साथ मन भाता रमण करो ॥ ७ ॥ जब राजा ने उस सिर को देखा तो मन मे अत्यधिक डर गया जिसे पति को मारते देर नही लगी उसके सामने भला

बच तिह त्रियह उचारा । भोग करब मैं तजा तिहारा । त्रिय पापनि तैं भरता घायो । ताते मोहि अधिक डर आयो ।। ९ ।। अब तैं जाहि पापनी तही । निज कर नाथ सँघारा जही । अब तेरो सभ ही ध्रिग साजा । अब ही लगि जीवत निरलाजा ।। १० ।। ।। दोहरा ।। हित मेरे जिन पति हना कोना बडा कुकाज । जमधर मारि न मरत हैं अब लौ जियत निलाज ।। ११ ।। ।। चौपई ।। सुनत बचन ए नारि रिसाई । लजित भई घर को फिरि आई । पति को मूँड तिसी घर डारा । आइ धाम इस भाँति पुकारा ।। १२ ।। प्रात भए सभ लोग बुलाए । सभहिन काजी म्रितक दिखाए । स्रोनत धार परत जित गई । सो मगु ह्वै करि खोजत भई ।। १३ ।। जह जह जाइ स्रोन की धारा । तिह हेरत जन चले अपारा । तह सभहूँ लै ठाढो कीना । जह निजु हाथ डारि सिर दीना ।। १४ ।। मूँड कट्यो सभहिन लखि पायो । इह काजी याही त्रिप घायो । ताकह बाँधि लै गए तहाँ । जहाँगीर बैठा थो जहाँ ।। १५ ।। सभ ब्रितांत कहि प्रथम सुनायो । इह काजी राजै इन घायो । हजरति बाँधि त्रियहि

बेचारा प्रेमी क्या चीज़ हो सकती है ।। ८ ।। उसने स्त्री को धिक्कारा और कहा कि मैं तुम्हारे भोग का त्याग करता हूँ । हे पापिनी स्त्री ! तुमने पति को मार डाला है, इससे मैं अत्यधिक भयभीत हो उठा हूँ ।। ९ ।। हे पापिन ! अब तुम वहीं जाओ जहाँ तुमने अपने पति को मारा है । अब तो तुम्हारा सारा साज-श्रृंगार धिक्कार है । अरे निर्लज्ज ! तुम अभी तक जीवित हो ।।१०।। ।। दोहा ।। जिसने मेरे लिए अपना पति मार दिया और बड़ा कुकर्म किया, वह निर्लज्ज कटार मारकर मरती नहीं और अब तक जीवित है ।। ११ ।। ।। चौपाई ।। यह वचन सुनकर स्त्री खिसिया गई और लज्जित होकर घर चली आई । पति का सिर उसने उसी (राजा के) घर पर छोड़ दिया और घर आकर लोगों को पुकारने लगी ।। १२ ।। प्रातः उसने सब लोगों को बुलाया और मृत क़ाज़ी को दिखाया । खून की धारा जिधर जा रही थी वह उसी रास्ते पर खोजते आगे बढ़ी ।। १३ ।। जिस तरफ रक्त की धारा गई, जनसमूह उसी ओर चल पड़ा । उसने वहाँ सबको ला खड़ा किया जहाँ उसने अपने हाथों से सिर फेंका था ।। १४ ।। कटे सिर को देखकर सबने समझा कि राजा ने ही क़ाज़ी को मारा है । उसे सभी बाँधकर वहाँ ले गए जहाँ जहाँगीर का दरबार था १५ उस सब वृत्तांत कह सुनाया कि

कह दीना । भेद कछू जिय माँझ न चीना ॥ १६ ॥ मारन कौ लै ताहि सिधाई । आँखिन ही महि भ्रिपहि जताई । मुर जिय राखु कहै सौ करिहौ । लै घट सीस पानि कौ भरिहौ ॥ १७ ॥ तब सुंदर इह भाँति बिचारो । अब माना न्रिप कहा हमारो । ताकौ छाडि हाथ ते दीना । खून बखश्यो मैं इह कीना ॥ १८ ॥ प्रथमहि छाडि मित्र कह दीना । पुन इह भाँति उचारन कीना । अब मैं सैर मका को जैहौं । मरी त गई जियत फिरि ऐहौं ॥ १६ ॥ लोगन सैर भवारो दियो । आपु पैंड तिह ग्रहि कौ लियो । ताहि निरखि राजा डरपाना । काम (मू०ग्रं०१२११) भोग तिह संग कमाना ॥ २० ॥ लोग कहैं मक्का कह गई । हुआँ की सुधि किनहूँ नहि लई । कहा बाल इन चरित दिखायो । किह छल सौ काजी कह घायो ॥ २१ ॥ इह छल साथ काजियहि मारा । बहुरि मित्र कह चरित दिखारा । इन की अगम अगाधि कहानी । दानव देव न किनहूँ जानी ॥ २२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ सतसठि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २६७ ॥ ५२१६ ॥ अफजूं ॥

इस राजा ने ही क़ाज़ी को मार डाला है। उसने राजा को बाँधकर स्त्री को दे दिया और भेद को कुछ भी नहीं समझ सका ॥ १६ ॥ उसे मारने के लिए ले गई और आँखों में ही जताया कि मेरा मन रखकर जो मैं चाहती हूँ करो, मैं सिर पर घड़ा रखकर तुम्हारा पानी भरूँगी ॥ १७ ॥ तब सुन्दरी ने विचार किया कि राजा अब मेरा कहना मान जायगा। उसे हाथ से छोड़ दिया कि मैंने खून माफ़ कर दिया है ॥ १८ ॥ पहले तो मित्र को छोड़ दिया और फिर कहा कि अब मैं मक्का की यात्रा पर जाऊँगी और यदि जीवित रह गई तो फिर वापस आऊँगी ॥ १६ ॥ लोगों को यात्रा के भ्रम में डाल दिया और स्वयं घर को चली आई। राजा उसे देखकर डर गया और उसने उसके साथ रतिक्रीड़ा की ॥ २० ॥ लोग समझे कि मक्का गई है और वहाँ की सुधि कसी ने नहीं ली। इस स्त्री ने क्या प्रपंच दिखाया कि छल से क़ाज़ी को मार डाला ॥ २१ ॥ छल के साथ क़ाज़ी को मारा और फिर मित्र को चरित दिखाया। इन (स्त्रियों) की कहानी अगम्य एवं अगाध है, जिसे दानव और देवता भी नहीं जान सके ॥ २२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ सड़सठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति। २६७ ५२१६ अफजू

अथ दोइ सौ अठसठ चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ चंपावती नगर दिसि दच्छिन । चंपतराइ न्रिपति सुभ लच्छन । चंपावती धाम तिह दारा । जा सम कहूँ न राजदुलारा ॥ १ ॥ चंपकला दुहिता ताके ग्रहि । रूपमान दुतिमान अधिक वह । जब तिह अंग मैनता वई । लरिकापन की सुधि बुधि गई ॥ २ ॥ हुतो बाग इक तहाँ अपारा । जिह सर नंदन कहा बिचारा । तहाँ गई वहु कुअरि मुदित मन । लगे सुंदरी संग करि अनगन ॥ ३ ॥ तह निरखा इक शाह सरूपा । सूरति सीरति माँझ अनूपा । रीझी कुअरि अटकि गी तबही । सुंदर सुघर निहार्‍यो जबही ॥ ४ ॥ सभ सुधि भूलि सदन की गई । आठ टूक तिह ऊपर भई । ग्रहि ऐबे की बुद्धि न आई । तही उधरि तिह संग सिधाई ॥ ५ ॥ सहचरि भेद चरित इक जाना । इह बिधि साथ चरित्र प्रमाना । रोइ रोइ धनि ऊच पुकारै । दै दै मूँड धरनि सौ मारै ॥ ६ ॥ चंपकला राजा की जाई । राछस गही आनि दुखदाई । ताँहि छुरैयै जान न दीजै । बेगहि बध दानव को कीजै ॥ ७ ॥ ए सुनि बैन लोग सभ

दो सौ अड़सठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ दक्षिण दिशा में चंपावती नामक एक नगर था जहाँ का शुभ लक्षणों वाला राजा चम्पतराय था। उसकी स्त्री चम्पावती थी जिसके समान अन्य कोई राजकुमारी नहीं थी ॥ १ ॥ उसकी पुत्री चम्पाकला थी जो अत्यधिक रूपवती और दुतिमान थी। जब उसके अंगों में काम का संचार हुआ तो उसे बचपन की सुधि विस्मृत हो गई ॥ २ ॥ वहाँ एक बाग़ था जिसके सामने नन्दन वन भी बेचारा क्या था। वहाँ अनेकों सुन्दरियो को साथ लेकर वह कुँवरि प्रसन्नतापूर्वक गई ॥ ३ ॥ वहाँ उसने एक शाह का स्वरूप देखा जो सूरत और सीरत में अद्वितीय था। उस सुन्दर सुघड़ को देखकर कुंवरि उस पर मोहित हो उठी ॥ ४ ॥ उसे घर की सारी याद भूल गई और वह आठों टुकड़े होकर उस पर न्योछावर हो गई। उसे घर आना ही भूल गया और वहीं से उसके साथ चली गई ॥ ५ ॥ सखी ने इस भेद को समझकर एक प्रपंच प्रस्तुत किया। वह ऊँची-ऊँची ध्वनि में रोने लगी और सिर धरती पर पटकने लगी ६ राजा की पुत्री चम्पाकली को राक्षस ने पकड़ लिया है उससे उसे छुड़ाओ जाने मत दो और शीघ्र दानव का

धाए। काढे खड़ग बाग मै आए। दैत बैत तह कछु न निहारा। चक्रित भे जिय मांझ बिचारा ॥ ८ ॥ हरि दानव तिह गयो अकासा। राजकुअरि ते भए निरासा। रोइ पीट दुहिता कह हारे। राजा भए अधिक दुखियारे ॥ ९ ॥ केतिक दिनन सकल धन खायो। देस बिदेस फिरत दुख पायो। राजकुअरि मितहि को त्यागी। आधी राति देस कौ भागी ॥ १० ॥ लिखि पत्री पित पास पठाई। दानव ते मै देव छराई। पठै (मू०ग्रं०१२१२) मनुछ अब बोलि पठावहु। मोहि मिलाइ अधिक सुख पावहु ॥ ११ ॥ पढ़ि पत्री पित कंठ लगाई। अधिक पालकी तहाँ पठाई। चंपकला कह ग्रहि लै आयो। मूरख भेद अभेद न पायो ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ अठसठ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २६८ ॥ ५२२८ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ उनहतरि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ गूआ बंदर इक रहत त्रिपाला। जाको डंड भरत भूआला। अप्रमान ताके घर मै धन। चंद्र सूर कै

वध करो ॥ ७ ॥ यह सुनकर सभी दौड़े और खड़ग निकालकर बाग़ में आ गए। वहाँ दैत्य आदि उन्होंने कुछ नहीं देखा और वे सब चकित रह गए ॥८॥ वे सोचने लगे कि कुँवरि का हरणकर दानव आकाश में चला गया है। इस प्रकार वे निराश हो गए। रो-पीटकर वे पुत्री गँवा गए और राजा अत्यधिक दुखी हो उठा ॥ ९ ॥ कितने ही दिनों तक धन खाते-खाते समाप्त कर दिया और देश-विदेश में घूमते-घूमते अनेकों दुख पाए। अब राजकुँवरि मित्र को त्यागकर आधी रात के समय पुनः अपने देश की ओर भागी ॥ १० ॥ उसने पिता के पास पत्र लिखा कि ईश्वर ने मुझे दानव से छुडा लिया है। अब कोई व्यक्ति भेजकर मुझे बुलवा लो और मुझसे मिलकर सुखी होओ। ॥ ११ ॥ पिता ने पत्र पढ़कर गले से लगाया और पालकियाँ वहाँ भेजी। चम्पाकला को घर ले आया और मूर्ख कुछ भी भेद-अभेद न समझ सका ॥ १२ ॥ १ ॥

श्री के त्रिया चरित्र के मन्त्री भूप-सवाद में दो सौ अढसठवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति २६८ ५२२८ अफजू

इंद्र दुतिय जनु ॥ १ ॥ मित्रमती ताकी अरधंगा । पुन्य मान दूसर जनु गंगा । मीनकेत राजा तह राजै । जा को निरखि मीनधुज लाजै ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ स्री झखकेत मती दुहिता तिह जानियै । अप्रमान अबला की प्रभा प्रमानियै । जा सम सुंदरि कहूँ न जग महि जानियत । हो रूपमान उहि की सी वही बखानियत ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ प्रात भएँ न्रिप सभा लगाई । ऊच नीच सभ लिया बुलाई । तह इक पुत्र शाहु को आयो । जिह सम दिति आदिति न जायो ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजकुअरि रही थकित सु ताँहि निहारि करि । चक्रित चित महि रही चरित्र बिचारि करि । सखी पठी तिह धाम मिलन की आस कै । हो चाह रही जस मेघ पपिहरा प्यास कै ॥ ५ ॥ ॥ दोहरा ॥ अति प्रसन्य चित महि भई मन भावन कह पाइ । सहचरि को जु दरिद्र थो तत छिन दिया मिटाइ ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ जबही तरुनि तरुन कौ पायो । भाँति भाँति तिन गरे लगायो । रैनि सगरि रति करत बिहानी । चारि पहर पल चार पछानी ॥ ७ ॥ पिछली पहर राति जब रही । राजकुअरि ऐसे तिह कही । हम तुम आब निकसि दोऊ जावैं । और

राजागण कर भरा करते थे । उसके घर में अपरिमित धन था और वह दूसरा चन्द्रमा, सूर्य अथवा इंद्र था ॥ १ ॥ उसकी पत्नी मित्रमती थी जो मानो दूसरी पुण्यवती गंगा थी । मीनकेतु राजा था जिसे देखकर कामदेव भी लज्जित होता था ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ झखकेतुमती उसकी पुत्री थी जिसकी प्रभा अपरिमित थी । उसके समान जगत् में कोई अन्य सुन्दर नहीं था और अपने स्वरूप वाली केवल वही थी ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ प्रातः राजा ने दरबार लगाया जिसमें ऊँच-नीच सबको बुलाया । वहाँ शाह का पुत्र आया जिसके समान देव-दानवों में कोई नहीं था ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजकुमारी उसे देखते-देखते थक गई और मन में यह दृश्य देखकर आश्चर्यचकित हो गई । सखी को उसने मिलने की आशा के साथ उसके घर पर भेजा । मानो पपीहा मेघ की प्यास के लिए प्यासा हो ॥ ५ ॥ ॥ दोहा ॥ उस मनभावन को पाकर वह अत्यन्त प्रसन्न हुई और उसने तत्काल सखी की सारी दरिद्रता दूर कर दी ॥ ६ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब तरुणी ने तरुण को प्राप्त किया तो विभिन्न प्रकार से उसे गले लगाया । सारी रात रतिक्रीडा में गुजर गई और चार प्रहरों को उसने चार पलों की तरह समझा ७ जब रात्रि का

देस दोऊ कहूँ सुहावैं ॥ ८ ॥ तुहि मुहि कह धन की थुर नाही। तुमरी चहत कुसल मन माही। यौ कहि दुहूँ अधिक धनु लीना। औरै देस पयाना कीना ॥ ९ ॥ चतुरि भेद सहचरि इक पाई। तिह ग्रहि को दई आगि लगाई। रनियहि रानी जरी सुनाई। रोवत आपु न्रिपहि पहि धाई ॥ १० ॥ रानी कहा (मू०ग्रं०१२१३) न्रिपहि जरि मरी। तुम ताकी कछु सुद्धि न करी। अब तिनके चलि असति उठावौ। मानुख दै गंगा पहुचावौ ॥ ११ ॥ न्रिप सुनि बचन उताइल धायो। जह ग्रहि जरत हुतो तह आयो। हहा करत रानीयहि निकारहु। जरति अगनि ते याहि उबारहु ॥ १२ ॥ जानी जरी अगनि महि रानी। उधलि गई मन बिखै न आनी। अधिक शोक मन माहि बढायो। पजा सहित कछु भेद न पायो ॥ १३ ॥ धनि धनि इह रानी को धरमा। जिन असि कीना दुहकरि करमा। लज्जा निमित प्रान दै डारा। जरि करि मरी न रौरन पारा ॥ १४ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ उनहतरि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २६९ ॥ ५२४२ ॥ अफजूं ॥

पिछला समय रह गया तब राजकुमारी ने कहा कि आओ, हम-तुम यहाँ से निकल जायें और किसी अन्य देश में जा बसें ॥ ८ ॥ तुम्हें और मुझे धन की कमी नहीं है, मैं केवल तुम्हारी कुशलता मन से चाहती हूँ। यह कहकर दोनों ने अत्यधिक धन लिया तथा अन्य देश की ओर प्रस्थान किया ॥ ९ ॥ एक चतुर सखी ने रहस्य को जानकर उसके घर को आग लगा दी। रानियों ने रानी को जला हुआ मान लिया और रोती हुई राजा के पास दौड़ीं ॥ १० ॥ रानियों ने कहा कि वह तो जल मरी लेकिन तुम्हें पता ही नहीं लगा। अब उसकी अस्थियों को उठाओ और किसी व्यक्ति को देकर गंगा पहुँचाओ ॥११॥ राजा यह सुनकर शीघ्र चला और जहाँ घर जल रहा था वहाँ आया। वह चिल्लाने लगा कि कोई रानी को निकालो और आग से बचाओ ॥ १२ ॥ रानी अग्नि में जल गई सबने मान लिया, पर किसी ने न सोचा कि वह भाग गई है। उसे अत्यधिक शोक हुआ और प्रजा-समेत कोई भी कुछ न जान सका ॥ १३ ॥ धन्य-धन्य रानी का धर्म है, जिसने ऐसा दुष्कर्म किया। वह लज्जा के कारण जल मर गई पर चीखी-चिल्लाई नहीं ॥ १४ ॥ १ ॥

श्री के त्रिया चरित्र के मन्त्री भूप-संवाद में दो सौ उनहत्तरवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति २६९। ५२४२। अफ्जूं।

अथ दोइ सौ सतर चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ मोरंग दिसि इक रहत त्रिपाला । जाके दिपत तेज की ज्वाला । पूरब दे तिह नारि भणिज्जै । को अबला पटतर तिह दिज्जै ॥ १ ॥ पूरब सैन त्रिपति को नामा । जिन जीते अनगन संग्रामा । जाके चड़त अमित दल संगा । है गै रथ पैदल चतुरंगा ॥ २ ॥ तह इक आयो शाह अपारा । जाके संग इक पुत्र पयारा । जाको रूप कहै नही आवै । ऊख लिखत लेखन ह्वै जावै ॥ ३ ॥ पूरब दे तिह ऊपर अटकी । भूलि गई सभ ही सुधि घटिकी । लर्‍यो कुअर सो नेह अपारा । जिह बिनु रुचै न भोजन बारा ॥ ४ ॥ एक दिवस तिह बोलि पठायो । काम केल रुचि मानि कमायो । दुहूँअन ऐसो बधा सनेहा । जिनको भाखि न आवत नेहा ॥ ५ ॥ शाह पुत्र तब शाहु बिसार्‍यो । ताके सदा रहित जिय धार्‍यो । पिता संग कछु कलह बढायो । चड़ि घोरा परदेस सिधायो ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ त्रिय निमित्त निजु पितु सौ कलह बढाइकै । चड़ि बाजी पर चला

दो सौ सत्तरवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ मोरंग देश में एक राजा रहता था जिसके तेज की ज्वाला देदीप्यमान थी । पूर्वदेवी उसकी स्त्री थी जिसकी किसी स्त्री के साथ तुलना नहीं की जा सकती थी ॥१॥ राजा का नाम पूर्वसेन था जिसने अनेकों संग्राम जीते थे। जिसके साथ हाथी, घोड़ों, पैदलों और रथों वाला अगणित सैन्य समूह था ॥ २ ॥ वहाँ एक शाह आया जिसके साथ एक उसका प्यारा पुत्र था। उसके रूप-सौंदर्य को कहा नहीं जा सकता था। गन्ने जितनी बड़ी लेखनी भी लिखते-लिखते घिस जाती थी ॥ ३ ॥ पूर्वदेवी उसी में उलझ गई और उसे अपनी सुधि भूल गई। उसका कुँवर के साथ स्नेह हो गया और उसके बिना उसे भोजन रुचिकर नहीं लगता था ॥ ४ ॥ एक दिन उसने उसे बुलाया और रुचिपूर्वक काम-क्रीड़ा की। दोनों में ऐसा प्रेम हो गया कि कहा नहीं जा सकता ॥ ५ ॥ शाह के पुत्र ने भी शाह को भुला दिया और सदैव उसी (स्त्री) का स्मरण किया करता था। पिता के साथ उसका कुछ झगड़ा हो गया और घोड़े पर सवार हो परदेश चला गया ॥ ६ ॥ ॥ अडिल्ल ॥ स्त्री के लिए अपने पिता से वह घोड़े पर सवार हो अन्य देश की ओर

देस कह धाइकै। पितु जान्यो सुत मेरो देस अपने गयो। हौ अरध रात्रि गे ग्रहि रानी आवत भयो ॥७॥ ॥ चौपई ॥ तह ते शाहु जबै उठि गयो। तब रानी अस चरित बनयो। ताहि निपुंसक करि ठहरायो। राजा सौ इस भाँति जतायो ॥ ८ ॥ मैं इक मोल निपुंसक आना। जाको रूप न जात बखाना। (मू०ग्रं०१२१४) ताते अपने काज करैहौ। मन भावत के भोग कमैहौ ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ भली भली राजा कही भेद न सका बिचार। पुरख निपुंसक भाखि त्रिय राखा धाम सुधारि ॥ १० ॥ रम्यो करत रानी भए तवन पुरख दिन रैनि। न्रिपति निपुंसक तिह लखै कछू न भाखै बैन ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ सतर चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २७० ॥ ५२५३ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ इकहतरि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ तेलंगा जह देस अपारा। समरसैन तह को सरदारा। ताहि बिलासदेइ वर रानी। जाकी जात न

चल पड़ा। पिता ने समझा कि पुत्र अपने ही देश में है पर वह आधी रात के समय रानी के महल में आ गया ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ वहाँ से जब राजा उठकर चला गया तब रानी ने यह चरित बनाया। उसे नपुंसक घोषित कर दिया और राजा से कहा ॥ ८ ॥ मैंने एक नपुंसक मोल लिया है जिसके रूप का वर्णन नहीं किया जा सकता। उससे अपना काम करवाऊँगी और सुखपूर्वक रहूँगी ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा ने कहा ठीक है, और भेद को न जान सका। पुरुष को नपुंसक बतलाकर घर में ही अच्छी तरह रखा ॥१०॥ रानी दिन-रात उससे रमण किया करती थी। राजा उसे नपुंसक के तौर पर देखता था और कुछ नहीं कहता था ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-सवाद में दो सौ सत्तरवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति २७० ५२५३ अफजू

प्रभा बखानी । १ ॥ तिह इक छैल पुरी संन्यासी । तिह पुर मद्र देस कौ बासी । रानी निरखि लगनि तिह लागी । जाते नींद भूख सभ भागी ॥ २ ॥ रानी की ताहू सों लागी । छूटै कहा अनोखी जागी । इक दिन तिह सौ भोग कमायो । भोग किया तिय द्रिड़ प्रिय भायो ॥ ३ ॥ बहु दिन भोग तवन संगि किया । ऐसुपदेश तवन कह दिया । जो मैं कहौ मित्र सो कीजहु । मेरो कह्यो मानि करि लीजहु ॥ ४ ॥ कहूँ जु म्रितक पर्‌यो लखि पैयो । ताको काटि लिंग लै ऐयो । ताहि कुपीन बिखै द्रिड़ रखियहु । भेद दूसरे नरहि न भखियहु ॥५॥ ॥अड़िल्ल॥ जब मैं दैहो तुमैं उरांभे लाइ कै । तब तुम हम पर उठियहु अधिक रिसाइकै । काढि कुपीन ते हम पर लिंग चलाइयो । हो ऊच नीच राजा कह चरित दिखाइयो ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ सोई काम मित्र तिह कीना । जिह बिधि सौ तवनै सिख दीना । रानी प्रात पतिहि दिखराई । संन्यासी पहि सखी पठाई ॥ ७ ॥ संन्यासी जुत सखी गहाई । राजा देखत निकट बुलाई । छैल गिरहि बहु भाँति दुखायो । तै चेरी संग भोग कमायो ॥ ८ ॥ यौं

नवयुवक संन्यासी था जो "पुरी" सम्प्रदाय का था और मद्र देश का रहनेवाला था। उसे देखकर रानी की लगन उससे लग गई और उसकी नींद-भूख सब भाग गई ॥ २ ॥ रानी की उससे लगी लगन भला अब कैसे छूट सकती थी। एक दिन उससे भोग किया जिससे वह स्त्री को और भी अच्छा लगने लगा ॥ ३ ॥ उसके साथ बहुत दिन तक भोग-विलास किया और उस संन्यासी को यह समझाया कि हे मित्र ! जो मैं कहूँ तुम वही करो और मेरा कहना मान लो ॥ ४ ॥ कहीं यदि कोई मृत व्यक्ति मिल जाय तो उसका लिंग काटकर ले आओ। उसे लँगोट में रख लेना और इस रहस्य को किसी से न कहना ॥ ५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जब मैं तुम्हें आकर बुरा-भला कहूँ तब तुम मुझ पर क्रुद्ध हो उठना और लिंग को अपने कौपीन में से निकालकर हमें दे मारना तथा राजा को ऊँचा-नीचा प्रपंच दिखाना ॥६॥ ॥चौपाई॥ जो उसने सिखाया वही सब उस मित्र ने किया। रानी ने प्रातः उसे पति को दिखाया और उधर एक सखी को संन्यासी के पास भेज दिया ॥ ७ ॥ संन्यासी को सखी के साथ देखकर राजा ने उसे पास बुलाया। उस युवक को यह कहकर दुखी किया कि तुमने दासी के साथ रतिक्रीड़ा की है ॥ ८ ॥ यह वचन सुनकर वह क्रुद्ध हो उठा और उसने छुरा निकाल लिया उसने

सुनि बचन तेज मन लयो। कर महि काढि छुरा कह लयो। कट्यो लिंग बस्त्र ते निकारा। राज तरुनि के मुख पर मारा ॥ ९ ॥ हाइ हाइ रानी कहि भागी। ताके उठि चरनन संग लागी। हमि रिखि तुमरो चरित न जाना। बिनु समझे तुहि झूठ बखाना ॥ १० ॥ तब राजै इह भाँति बिचारी। इंद्री काटि संन्यासी डारी। ध्रिग ध्रिग कुपि रानियहि उचारा। तैं (मू०ग्रं०१२१५) त्रिय किया दोख यह भारा ॥ ११ ॥ अब इह राखु आपने धामा। सेवा करहु सकल मिलि बामा। जब लगि जियै जान नहि दीजै। सदा जती की पूजा कीजै ॥ १२ ॥ रानी बचन न्रिपति को माना। बहु बिधि साथ ताहि ग्रहि आना। भोग करै बहु हरख बढाई। मूरख बात न राजै पाई ॥ १३ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह बिधि चरित बनाइकै ताहि भजा रुचि मान। जीवत लगि राखा सदन सका न न्रिपति पछान ॥ १४ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ इकहत्तरि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २७१ ॥ ५२६७ ॥ अफजूं ॥

कटा हुआ लिंग कपड़े में से निकाला और रानी के मुख पर दे मारा ॥ ९ ॥ रानी हाय-हाय कहकर भागी और उसके चरणों से जा लगी। हे ऋषि! मैंने तुम्हारा चरित नहीं समझा और बिना सोचे ही तुम्हें झूठ कह दिया ॥ १० ॥ तब राजा ने सोचा कि संन्यासी ने तो अपनी इन्द्रीः काट दी है। उसने रानी को धिक्कारा और कहा कि हे स्त्री! तूने यह महान अनर्थ कर दिया है ॥ ११ ॥ अब इसे अपने घर पर रखो और सब स्त्रियों के साथ मिलकर इसकी सेवा करो। जब तक यह जीवित रहे इसे जाने मत दो और सदैव इसकी पूजा करो ॥ १२ ॥ रानी राजा का वचन मानकर उसे अपने घर ले आई। वह हर्षपूर्वक उसके साथ रमण करने लगी पर मूर्ख राजा यह सब नहीं समझ सका ॥ १३ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार प्रपंच करके उससे रुचिपूर्वक रमण किया। उसे जीवन पर्यन्त घर में रखा और राजा कुछ भी न जान सका ॥ १४ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ इकहत्तरवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति २७१ ५२६७। अफजूं ॥

अथ दोइ सौ बहत्तरि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ एक सुगंधसैन न्रिप नामा । गंधागिर परबत जिह धामा । सुगंधमती ताकी चंचला । हीन करी ससि की जिन कला ॥ १ ॥ बीरकरन इक शाहु बिखयाता । जिह सम दुतिय न रचा बिधाता । धन करि सकल भरे जिह धामा । रीझि रहत दुति लखि सभ बामा ॥ २ ॥ सौदा नमित तहाँ वह आयो । जाकह निरखि रूप सिर न्यायो । जा सम सुंदर सुना न सूरा । देग तेग साचो भरपूरा ॥ ३ ॥ ॥ दोहरा ॥ रानी ताको रूप लखि मन महि रही लुभाइ । मिलिबे के जतनन करै मिल्यो न तासो जाइ ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ रानी बहु उपचार बनाए । बहुत मनुख तिह ठौर पठाए । बहु करि जतन एक दिन आना । कामभोग तिह संग कमाना ॥ ५ ॥ बहुत दरब ताकह तिन दीना । ताके मोहि चित्त कह लीना । इह बिधि सौ तिह भेव द्रिड़ायो । ब्राहमन को तिह भेस धरायो ॥ ६ ॥ आप त्रिपति संग कीया गिआना । किय उपदेश पतिहि बिधि

दो सौ बहत्तरवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ सुगंधसेन नामक एक राजा था जो गंधगिरि पर्वत पर रहता था। उसकी रानी सुगंधमती थी जिसके सामने चन्द्र-किरणें भी हीन थी ॥ १ ॥ वीरकर्ण एक विख्यात शाह था जिसे विधाता ने अद्वितीय बनाया था। उसके धाम धन से भरे थे और स्त्रियाँ उस पर मोहित होकर रह जाती थी ॥ २ ॥ वह सौदा ख़रीदने वहाँ आया जिसे देखकर उस रानी नें सिर झुका लिया। उसके समान शूरवीर कोई सुनने में नही आता था। वह देग और तेग़ अर्थात् दान देने और तलवार चलाने में सच्चा गुणों से भरा-पूरा था ॥ ३ ॥ ॥ दोहा ॥ रानी उसका रूप देखकर लुब्ध हो उठी। उससे मिलने का यत्न करने लगी पर मिला नहीं जा रहा था ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ रानी ने अनेकों उपाय किये और बहुत से मनुष्य वहाँ भेजे। बहुत यत्नों के बाद एक दिन वह लाया गया। उसके साथ उसने रतिक्रीडा की ॥ ५ ॥ उसे बहुत सा द्रव्य दिया और उसके चित्त को मोहित कर लिया। उसे रानी ने रहस्य समझाया और उसे ब्राह्मण का वेश धारण ६ स्वय राजा के

नाना । जैसो पुरख दान जग द्यावै । तैसो ही आगे बर पावै ॥ ७ ॥ मैं तुहि बार दान बहु कीना । तातें पति तोसो न्रिप लीना । तुम हौ पुंनि बार बहु कीनी । तब मो सी सुंदरि तिय लीनी ॥ ८ ॥ अब जौ पुन्य बहुरि मुहि करिहो । मो सी त्रिय आगे पुनि बरिहो । धरम करत कछु ढील न कीजै । दिज कौ दै जग मौ जसु लीजै ॥ ९ ॥ इह सुनि यौ न्रिप के मन आई । पुन्य करन इसवी ठहराई । जो रानी के मन महि भायो । वहै जानि दिज बोलि पठायो ॥ १० ॥ ताकह नारि दान करि दीनी । मूढ़ (मू०ग्रं०१२१६) भेद की क्रिया न चीनी । सो लै जात तरुनि कह भयो । मूँडि मूँडि मूरख को गयो ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ बहत्तरि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २७२ ॥ ५२७८ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ तिहतर चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुक्रितसैन इक सुना नरेसा । जिह को डंड भरत सभ देसा । सुक्रितमंजरी तिह की दारा । जा

साथ गोष्ठी करने लगी और पति को विभिन्न प्रकार से उपदेश देने लगी । पुरुष संसार में जैसा दान करता है, वह वैसा ही वरदान पाता है ॥ ७ ॥ मैंने तुम्हें अनेकों बार दान दिया है, इसी से तुम्हारे जैसा राजा पति मुझे मिला है । तुमने भी बहुत सा पुण्य किया है तो मेरी जैसी सुन्दर रानी प्राप्त की है ॥ ८ ॥ अब यदि तुम मेरे जैसी स्त्री दान करो तो आगे फिर मेरे जैसी स्त्री का वरण करोगे । धर्म करने में कुछ ढील मत करो और दान देकर जगत में यश का अर्जन करो ॥ ९ ॥ यह सुनकर राजा ने स्त्री को दान करने का विचार बना लिया । रानी को जो दान रुचिकर था वही राजा ने ब्राह्मण को बुलाकर दिया ॥ १० ॥ उसे स्त्री दान में दे दी और मूर्ख ने मन में कुछ नहीं जाना । वह युवती को लेकर चला गया और इस प्रकार मूर्ख राजा को ठग गया ॥११॥१॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया चरित्र के मंत्री भूप-संवाद में दो सौ बहत्तरवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति २ २ ५२७८ अफजू

सम देव न देवकुमारा ॥ १ ॥ अतिभुतसैन शाहु सुत इक तह । जा सम दुतिय न उपज्यो महि मह । जगमगात तिह रूप अपारा । जिह सम इंद्र न चंद्र कुमारा ॥ २ ॥ रानी अटकि तवन पर गई । तिह ग्रहि जाति आपि चलि भई । तासों प्रीति कपट तजि लागी । छूटो कहा अनोखी जागी ॥ ३ ॥ बहु बिधि तिन संग भोग कमाना । केल करत बहु काल बिहाना । सुंदर और तहाँ इक आयो । वहै पुरख रानी कहलायो ॥ ४ ॥ वहै पुरख रानी कह भाइसि । कामकेल ग्रहि बोलि कमाइसि । प्रथम मित्र तिह ठाँ तब आयो । रमत निरखि रानी कुररायो ॥ ५ ॥ अधिक कोप करि खड़्गु निकार्यो । रानी राखि जार कह मार्यो । आपु भाज पुनि तह ते गयो । तेज भए त्रिय को तन तयो ॥ ६ ॥ लिखि पतिया असि ताँहि पठाई । तोहि मित्र मुहि तजा न जाई । छिमा करहु इह भूलि हमारी । अब दासी मैं भई तिहारी ॥ ७ ॥ जौ आगे फिरि ऐस निहरियहु । मोहू सहित मारि तिह डरियहु । भला किया तुम ताँहि सँघारा । आगे राह मित्र मुहि डारा ॥ ८ ॥ ॥ दोहरा ॥ खतिया बाचत मूढ़

थी ॥ १ ॥ अद्‌भुतसेन नामक एक शाह का पुत्र वहाँ था जिसके समान धरती पर अन्य कोई पैदा नहीं हुआ था । उसका रूप-सौंदर्य जगमगाता था और उसके समान इन्द्र, चन्द्र आदि कोई भी नहीं था ॥ २ ॥ रानी उसके सौंदर्य में अटक गई और स्वयं चलकर उसके घर पर चली गई । उससे निष्कपट प्रीति उसने लगा दी जो अब छूट नहीं सकती थी ॥ ३ ॥ उसने विभिन्न प्रकार से उसके साथ रतिक्रीडा की और इस प्रकार बहुत सा समय बीत गया । एक और सुन्दर युवक वहाँ आ गया, रानी ने उसे भी कहला भेजा ॥ ४ ॥ रानी को वह पुरुष भी भा गया । उसे भी घर बुलाकर उसने कामक्रीडा की । उसी समय पहला मित्र भी वहाँ आ गया जो रानी को रमण करते देखकर चिल्ला पड़ा ॥ ५ ॥ अत्यधिक कुपित होकर उसने खड़ग निकाला और रानी को बचाकर यार को मार डाला । स्वयं वहाँ से भाग गया और रानी अत्यन्त क्रुद्ध हो उठी ॥ ६ ॥ उसने उसे पत्र लिखा कि तुम मेरे प्रिय होकर मुझे छोड़ो मत । मेरी इस भूल को क्षमा कर दो, अब मैं तुम्हारी दासी हूँ ॥ ७ ॥ यदि फिर तुम मुझे ऐसे देखो तो मुझे उसके समेत मार डालना । अच्छा किया जो तुमने उसे मार डाला और मित्र के रूप में मुझे सही रास्ता दिखाया है ८ दोहा पत्र पढ़कर वह मूर्ख मन में फूल

मति फूल गयो मन माहि। बहुरि तहाँ आवत भयो भेद पछान्यो नाहि॥ ९॥ ॥ चौपई॥ प्रथम मित्र तिह ठाँ जब आयो। दुतिय मित्र सौ बाँधि जरायो। जिन मेरे मितवा कह मार्‍यो। वहै चाहियत पकरि सँघार्‍यो॥ १०॥ अस त्रिय प्रथम भजत भी जाको। इह चरित्र पुनि मार्‍यो ताको। इन अबलन की रीति अपारा। जिन को आवत वार न पारा॥ ११॥ १॥ (मू०ग्रं०१२१७)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ तिहतर चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ २७३॥ ५२८९॥ अफजूं॥

अथ दोइ सौ चौहतर चरित्र कथनं॥

॥ चौपई॥ इक अंबसट के देस त्रिपाला। पदुमिनि दे जाके ग्रहि बाला। अप्रमान तिह प्रभा भनिज्जै। जिह को को पतटर त्रिय दिज्जै॥ १॥ ताके एक दास घर माही। जिह सम स्याम बरन कहूँ नाही। नामाफिक संख्या तिह रहै। मानुख जोनि कवन तिह कहै॥ २॥ चेरी एक हुती तासौ रति। जाके हुती न कछु घट महि मति। नामाफिक

गया और बिना रहस्य को पहचाने वह वहाँ पर आ गया॥ ९॥ ॥चौपाई॥ जब पहला मित्र वहाँ आ गया तो उसे दूसरे (मृत) मित्र के साथ बाँधकर जला दिया। उसने यह सोचा कि जिसने मेरे मित्र को मारा है उसी चाहनेवाले को मार डालना ही ठीक है॥ १०॥ इस प्रकार स्त्री पहले जिसके साथ रमण करती थी उसे प्रपंच से मार डाला। इन स्त्रियों की लीला अपार है, जिसका कोई आदि-अंत नहीं है॥ ११॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ तिहत्तरवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ २७३॥ ५२८९॥ अफजूं॥

दो सौ चौहत्तरवाँ चरित्र-कथन॥

॥ चौपाई॥ अम्बस्ट देश का एक राजा था जिसके घर में पद्मिनी स्त्री थी। उसकी सुन्दरता अपरिमित थी, जिसकी उपमा किसी के साथ नहीं दी जा सकती॥ १॥ उसके घर में एक दास था जिसके समान अन्य कोई काला नहीं था। वह बिलकुल न होने की तरह रहता था और कोई उसे मनुष्य-योनि में नहीं मानता था २ एक बिलकुल मूर्ख दासी उसमें

तिन नारि बुलायो। काम भोग मन खोलि मचायो ॥ ३ ॥
तब लगि आइ न्रिपति ग्यो तहाँ। चेरी रमत दासि संग जहाँ।
लपटाइ दासी तब गई। चटपट जात सकल सुधि भई ॥ ४ ॥
जतन अवर कछु हाथ न आयो। मारि दास उलटो
लटकायो। हरे हरे तर आगि जराई। काढत है जन
करि मिमियाई ॥ ५ ॥ न्रिपति म्रितक जब दास निहारा।
अदभुत ह्वै इह भाँति उचारा। क्यों इह हनि तैं
दिय लटकाई। किह कारन तर आगि जराई ॥ ६ ॥
॥ चेरी बाच ॥ मिल्यो बैद मुहि एक न्रिपारा। क्रिया दई
तिन मोहि सुधारा। मैं इह करी चकितसा ताते। लीजै
सकल ब्रिथा सुनि याते ॥ ७ ॥ खई रोग इह कह्यो राज
महि। ताते मारि दास तूँ इह कहि। करि मिमियाई न्रिपहि
खवावै। तब तिह दोख दूरि ह्वै जावै ॥ ८ ॥ तिह निमित
याको मै घायो। मिमियाई को बिवत बनायो। जौ तुम
भच्छन करहु त कीजै। ना तर छाडि आगु ही दीजै ॥ ९ ॥
जब इह भाँति न्रिपति सुनि पायो। ताँहि बैदनी करि ठहरायो।
मन महि कह्यो भली बिधि कीनी। घर महि नारि रोगि हा
दीनी ॥ १० ॥ धंनि धंनि कहि ताहि बखाना। तेरो गुन

अनुरक्त थी। उस नामाफिक को स्त्री नें बुलाया और मन खोलकर उससे कामक्रीड़ा की ॥ ३ ॥ तब तक राजा वहाँ आ गया जहाँ दासी उस दास के साथ रमण कर रही थी। तब दासी लिपट गई और अपनी समस्त सुधि-स्मृति भूल गई ॥ ४ ॥ अब उसे अन्य कुछ न सूझा और उसने दास को मारकर उलटा लटका दिया। नीचे उसने धीमी-धीमी आग जला दी मानो उसकी चर्बी निकाल रही हो ॥ ५ ॥ जब राजा ने दास को मृत देखा तो बोल उठा कि तुमने क्यों इसे मारकर लटका दिया है और नीचे आग जलाई है ॥ ६ ॥ ॥ दासी उवाच ॥ मुझे हे राजन्, एक वैद्य मिला है जिसने मुझे एक प्रयोग बतलाया है। इससे मैं यह चिकित्सा-प्रक्रिया कर रही हूँ। आप पूरा सुनें ॥ ७ ॥ राजा को क्षय रोग है, इसलिए तुम इस दास को मारो। राजा को इसकी चर्बी खिलाओ जिससे उसका दुख दूर हो जाए ॥८॥ इसीलिए मैंने इसे मारा है और चर्बी निकालने का प्रयोग किया है। यदि तुमको खाना हो तो मैं आगे करूँ अन्यथा यहीं पर छोड़ दूँ ॥ ९ ॥ जब राजा ने यह सुना तो उसे वैद्य-स्त्री समझा। मन में कहा कि परमात्मा ने भला किया है जो घर में ही रोगों का नाश करनेवाली स्त्री दे दी है १०

जानु निरधनी पाइ धन रह्यो हीय सौ लाइ ॥ ४ ॥
॥ चौपई ॥ तब राजा ताके ग्रहि आयो। निरखि सेज पर ताहि रिसायो। असि गहि धयो हाथ गहि नारी। इह बिधि सौ हसि बात उचारी ॥ ५ ॥ तैं राजा इह भेद न जाना। बिनु बूझे असि कोप प्रमाना। प्रथमहि बात जानियै याकी। बहुरो सुधि लीजै कछु ताकी ॥ ६ ॥ इह है मित्र मछिंदर राजा। आयो न्याइ लहन तव काजा। तपस्या बल आयो इह ठौरा। है सभ तपसिन का सिरमौरा ॥ ७ ॥ या संग मित्राचार करीजै। भुगति जुगति बहु बिधि तिह दीजै। भली भली तुहि क्रिया सिखैहै। राज जोग बैठो ग्रहि पैहै ॥ ८ ॥ निप ए बचन सुनत पग परा। मित्राचार तवन संग करा। ताहि मछिंद्रनाथ पछान्यो। मूरख भेव अभेव न जान्यो ॥ ९ ॥ बहु बिधि तन पूजा तिह करैं। बारंबार पाइ पसु परैं। ताहि सही रिखिराज पछाना। सत्ति बचन त्रिय को करि जाना ॥ १० ॥ ताहि मछिंदर करि ठहरायो। त्रिय कह सौंपि ताहि उठि आयो। वह तासौ निति भोग कमावै। मूरख बात न राजा पावै ॥ ११ ॥ इह छल साथ

ऐसा लग रहा था मानों कोई निर्धन धन पाकर उसे गले से लगा ले रहा हो ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब राजा उसके यहाँ आ पहुँचा और उसे शय्या पर देखकर क्रुद्ध हो उठा। वह तलवार लेकर टूट पड़ा पर स्त्री ने हाथ पकड़कर हँसते हुए कहा ॥ ५ ॥ राजन् ! तुमने भेद नहीं जाना और बिना बूझे ही कुपित हो गए हो। पहले कुछ इसके बारे में जान लो, फिर उसका ध्यान करना ॥ ६ ॥ यह तो मत्स्येन्द्रनाथ है जो तुम्हारा न्याय देखने आया है। यह तो तपस्या के बल पर यहाँ आया है और तपस्वी शिरोमणि है ॥७॥ इसके साथ मित्राचार दिखाओ और इसे दानादि विभिन्न प्रकार से दो। यह तुम्हें अच्छी क्रियाएँ सिखाएगा और तुम घर बैठे ही राजयोग पा जाओगे ॥८॥ राजा यह सुनकर उसके चरणों में आ पड़ा और उसने उसके साथ मित्रवत् व्यवहार किया। उसे मत्स्येन्द्रनाथ मान लिया और मूर्ख नें रहस्य को नहीं पहचाना ॥ ९ ॥ उसकी भली प्रकार पूजा करने लगा और बार-बार वह पशु उसके पाँव पड़ने लगा। सखियों ने भी उस स्त्री का वचन सत्य मानकर उसे योगीराज के रूप में जाना ॥ १० ॥ उसे मछेन्द्र माना और स्त्री उसे सौंपकर राजा चला आया। वह रोज उससे भोग-विलास करने लगा परन्तु मूर्ख राजा इस तथ्य को नहीं समझ पाता था ११ इस छल करने के

जार भजि गयो। अति बिसमै राजा कौ भयो। तब रानी राजा ढिग आई। जोरि हाथ अस बिनै सुनाई॥ १२॥ जिन न्रिप राज आपना त्यागा। जोग करन के रस अनुरागा। सो तेरी परवाहि न राखै। इमि रानी राजा तन भाखै॥ १३॥ सत्ति सत्ति तब राज बखाना। ताको दरस सफल करि माना। भेद अभेद जड़ कछू न पायो। त्रिय संग चौगुन नेह बढायो॥ १४॥ १॥ (मू०ग्रं०१२१६)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ पच्हत्तरहि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ २७५॥ ५३१५॥ अफजूं॥

अथ दो सौ छिहतरि चरित्र कथनं॥

॥ चौपई॥ शंक्रावती नगर इक राजत। जनु शंकर के लोक बिराजत। शंकरसैन तहा को राजा। जा सम दुतिय न बिधना साजा॥ १॥ शंकर दे ताकी बर नारी। जनुक आपु जगदीस सवारी। रुद्रमती दुहिता तिहँ सोहै। सुर नर नाग असुर मन मोहै॥ २॥ तहाँ छबील दास थो छत्री।

बाद वह यार भाग गया तब राजा को अत्यन्त आश्चर्य हुआ। तब रानी राजा के पास आई और हाथ जोड़कर उससे प्रार्थना की॥ १२॥ जिस राजा ने अपना राज्य तक त्याग दिया और योग में लिप्त हो गया वह तेरी परवाह नहीं करेगा। रानी ने राजा से यह कहा॥ १३॥ राजा ने उसे "सत्य-सत्य" कहा और उसके दर्शनमात्र को अपनी (जन्म की) सफलता माना। उस मूर्ख ने भेद-अभेद कुछ नहीं जाना और स्त्री के साथ चार गुना स्नेह करने लगा॥ १४॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ पचहत्तरवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ २७५॥ ५३१५॥ अफजूं॥

दो सौ छियत्तरवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई॥ शंकरावती एक नगर था जो मानो शंकर का ही लोक था। शंकरसेन वहाँ का राजा था जिसे विधाता ने अद्वितीय बनाया था॥१॥ शंकरदेवी उसकी रानी थी जिसे मानों परमात्मा ने स्वयं बनाया था। उसकी पुत्री रुद्रमती थी जो सुर असुर नर नाग सबका मन मोहित करती थी २ वहाँ छबीलदास क्षत्रिय रहता था जो अत्यन्त रूपवान था

रूपवान छबिमान अति अही। ताँ पर अटक कुअरि की भई। आठ टूक वा पर ह्वै गई॥ ३॥ ॥ दोहरा॥ लगन निगोडी लगि गई छुटत छुटाई नाहि। मत्त भई जनु मद पीआ मोहि रही मन माहि॥ ४॥ ॥ चौपई॥ एक सहचरी तहाँ पठाई। चित जु हुती कहि ताहि सुनाई। सो चलि सखी सजन पहि गई। बहु बिधि ताहि प्रबोधत भई॥ ५॥ ॥ अड़िल्ल॥ तबै छबीलो छैल तहाँ चलि आइयो। रम्यो तरुन बहु भाँति कुअरि सुख पाइयो। लपटि लपटि तर जाइ पियरवहि भुजन भरि। हो द्रिड़ आसन दै रह्यो न इत उत जाति टरि॥ ६॥ ॥ दोहरा॥ एक सुघर दूजे तरुनि त्रितीए सुंदर मीत। बस्यो रहत निस दिन सदा पल पल चित जिमि चीति॥ ७॥ ॥ चौपई॥ इक दिन मिति इमि बचन बखाना। तव पित के हौ त्रास त्रसाना। जौ तुहि भजत न्रिपति मुहि पावै। पकरि काल के धाम पठावै॥ ८॥ बिहसि कुअरि अस ताहि बखाना। तै इसत्रिन के चरित न जाना। पुरख भेख तुहि सेज बुलाऊ। तौ मैं तुमरी यार कहाऊँ॥ ९॥ रोमनासनी ताहि लगाई। सकल समस तिह दूरि कराई। कर महि ताँहि तँबूरा दीया।

राजकुमारी उस पर अटक गई और खंड-खंड हो उस पर न्योछावर हो गई॥ ३॥ ॥ दोहा॥ लगन निगोड़ी ऐसी लगी थी जो छूटते नहीं छूटती थी। वह शराबी की तरह मदमस्त हो गई और मन में मोहित हो उठी॥४॥ ॥ चौपाई॥ उसने एक दासी वहाँ भेजी और मन की बात कहलवायी। उस सखी ने सजन के पास आकर उसे विभिन्न प्रकार से संबोधित किया॥ ५॥ ॥ अड़िल्ल॥ तब वह छबीला युवक वहाँ चला आया; उससे विविध प्रकार से रमण किया जिससे कुँवरि को सुख प्राप्त हुआ। प्रिय को भुजाओं में भरकर वह लिपट-लिपट रह जाती थी पर वह भी दृढ़तापूर्वक आसन जमाए हुए था और इधर-उधर नहीं हिल रहा था॥ ६॥ ॥ दोहा॥ एक तो सुघड़, दूसरा तरुण और तीसरा वह सुन्दर मित्र था। वह प्रत्येक पल उसके चित्त में बस रहा था॥ ७॥ ॥ चौपाई॥ एक दिन मित्र ने कहा कि तुम्हारे पिता के डर से मैं भयभीत हूँ। तुम्हारे साथ रमण करते को यदि राजा मुझे पा जाय तो वह पकड़कर मुझे यमलोक पहुँचा देगा॥ ८॥ तब राजकुमारी ने हँसकर उससे कहा कि तुम स्त्रियों के चरित्रों को नहीं जानते। पुरुष-वेष में ही मैं तुम्हें शय्या पर बुलाऊँगी और तब तुम्हारी सच्ची प्रेमिका कहलाऊँगी॥ ९॥ केशनाशक दवा उसे लगाई और उसकी मूँछें साफ़ करा दीं उसके हाथ में

गाइन भेस सजन को कीया ॥ १० ॥ पिति बैठे तिह बोलि पठायो । भले भले गीतानि गवायो । सुनि धुनि नाद रीझि न्रिप रहियो । भली भली गाइन इह कहियो ॥ ११ ॥ शंकर दे इह भाँति उचारी । सुन गाइन तैं बात हमारी । पुरख भेस धरि तुम निति ऐयहु । इह ठाँ गीति मधुरि धुनि गैयहु ॥ १२ ॥ यौ सुनि पुरख भेस तिन धरा । प्राची दिसा चाँद जन चरा । सकल लोग इसत्री तिह जानैं । त्रिया चरित्र न मूढ़ पछानैं ॥ १३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ मित्र पुरख को भेस धरे नित आवई । आन कुअरि सौं काम (मू०ग्रं०१२२०) कलोल कमावई । कोऊ न ताकह रोकत गाइन जानिकैं । हो त्रिय चरित्र कह मूढ़ न सकहि पछानिकैं ॥ १४ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल सौ तासौ सदा निसु दिन करत बिहार । दिन देखत सभ को छलै कोऊ न सकै बिचार ॥ १५ ॥ ॥ चौपई ॥ शंकरदेव न ताहि पछानैं । दुहिता की गाइन तिह मानैं । अति स्यानप ते कैंफन खावै । महाँ मूड़ निति मूँड मुँडावै ॥ १६ ॥ कहा भयो जो चतुर कहाइसि । भूलि भाँग भोदू न चढ़ाइसि ।

तानपूरा दिया और सजन को गायक का वेश धारण करवाया ॥ १० ॥ पिता की उपस्थिति में उसे बुलवा लिया और सुन्दर-सुन्दर गीत गायन करवाये। नाद सुनकर राजा प्रसन्न हो उठा और उसके गायन की सराहना करने लगा ॥ ११ ॥ शंकरदेव यह कहने लगा कि हे गायक ! तुम मेरी बात सुनो। तुम पुरुष-वेश धारण कर रोज़ यहाँ आओ और मधुर ध्वनि में मुझे गीत सुनाओ ॥ १२ ॥ यह सुनकर उसने पुरुष-वेश धारण कर लिया। अब वह ऐसा लगा मानों पूर्व दिशा में चाँद उग आया हो ! सभी लोग उसे स्त्री समझते थे और त्रिया-प्रपंच को नहीं समझ पा रहे थे ॥ १३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ वह मित्र पुरुष का वेश धारण कर रोज़ आता था और आकर राजकुमारी के साथ रमण किया करता था। कोई उसे गायक समझकर नहीं रोकता था और स्त्री के प्रपंच को नहीं पहचानता था ॥ १४ ॥ ॥ दोहा ॥ इस छल के माध्यम से वह रात-दिन उससे विहार किया करता था और दिन-दहाड़े वह सबको छल जाता था। कोई विचार भी नहीं सकता था (कि कुछ ग़लत है) ॥१५॥ ॥ चौपाई ॥ शंकरदेव उसे पहचान नहीं सका और पुत्री की गायिका ही उसे मानता था। अत्यन्त चतुरता से वह नित्य नशीले पदार्थ खाता था और वह मूर्ख नित्य अपना सिर मुँड़वाता था अर्थात् रोज ठगा जाता था ॥१६॥ क्या हुआ यदि वह चतुर कहलाता था और भी मूर्ख भाँग नहीं खाता

अमली भलो खता जुन खावै। मूँड मूँड सोफिन को जावै॥ १७॥ शंकरसैन त्रिपहि अस छला। कह किय चरित शंकरा कला। तिह गाइन की दुहिता गनियो। मूरख भेद अभेद न जनियो॥ १८॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ छिहतरि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ २७६॥ ५३३३॥ अफजूं॥

अथ दोइ सौ सतहत्तरि चरित्र कथनं॥

॥ अड़िल्ल॥ शहिर मुरादाबाद मुगल की चंचला। हीन करी जिह रूप चंद्रमा की कला। रूपमती ताको सम सोई जानियै। हो तिह समान तिहु लोक न और प्रमानियै॥ १॥ ॥ चौपई॥ दूसरि एक तिसी की नारी। तिह सम होत न ताहि पियारी। तिन इह जानि रोस जिय ठानो। और पुरख संग कीया यरानो॥ २॥ ॥ दोहरा॥ जैसे वाँ त्रिय की हुती सवतिन की अनहारि। तैसो ई तिन खोजि नर तिह संग कीया प्यार॥ ३॥ ॥ चौपई॥ [ि]य इक दिन तिह धाम बुलाइसि। काम केल

था। वह मद्यपान करनेवाला भला है जो धोखा न खाए और सूफ़ियों (न पीनेवालों) को ठगकर खाता है॥ १७॥ शंकरसेन राजा को इसी भाँति छला और इस प्रकार शंकरकला (रुद्रमती) ने प्रपंच किया। उसे पुत्री की गायिका जाना गया और कोई भी मूर्ख भेद-अभेद न जान सका॥ १८॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ छिहत्तरवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ २७६॥ ५३३३ ॥ अफजूं॥

दो सौ सतहत्तरवाँ चरित्र-कथन

॥ अड़िल्ल॥ मुरादाबाद शहर में एक मुगल की स्त्री थी जिसने चन्द्रमा की कलाओं को भी हीन बना दिया था। उसके समान रूपवान वही थी और उसके समान तीनों लोकों में अन्य कोई नहीं थी॥ १॥ ॥ चौपाई॥ उसी की एक अन्य स्त्री थी पर वह उसे इसके समान प्यारी नहीं थी। दूसरी ने यह जानकर मन में क्रोध किया तथा अन्य पुरुष के साथ दोस्ती लगा ली॥२॥ ॥ दोहा॥ जैसी उस स्त्री की अपनी शक्ल सूरत थी वैसे ही पुरुष का खोजकर उसने उसके साथ प्रेम कर लिया ३ चौपाई उस स्त्री ने उसे एक

तिह संग कमाइसि । सवतिह फासि डारि गर मार्यो । जाइ मुगल तन ऐस उचार्यो ॥ ४ ॥ अदभुत बात नाथ इक भई । तुमरी नार पुरखु ह्वै गई । ऐसी बात सुनी नहि हेरी । जो गति भई नारि की तेरी ॥ ५ ॥ सुनि ए बचन चक्रित जड़ भयो । उठि तिह आपु बिलोकन गयो । ताके लिंग छोरि जौ लहा । कह्यो भयो जो मुहि त्रिय कहा ॥ ६ ॥ अति चिंतातुर चित महि भयो । बूडि शोक सागर महि गयो । ऐ इलाह तैं इह कस कीना । इसत्री कौ मानस कर दीना ॥ ७ ॥ यह मोको थी अधिक पियारी । अब इह दैव पुरख करि डारी । दूसर नारि इसै (मू०ग्रं०१२२१) दै डारूँ । भेद न दूसर पास उचारूँ ॥ ८ ॥ निसचै बात इहै ठहरई । पहिली नारि तिसै लै दई । भेद अभेद जड़ कछू न पायो । इह छल अपनो मूँड मुँडायो ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ पुरख भई निजु नारि लहि ताँहि दई निजु नारि । भेद अभेद की बात कौ सका न मूढ़ बिचारि ॥ १० ॥ ॥ चौपई ॥ इसत्री पुरखु भई ठहिराई । इसत्री ताकह दई बनाई । दुतिय न पुरखहि भेद जतायो । इह छल अपनो मूँड मुँडायो ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ सतहत्तरि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २७७ ॥ ५३४४ ॥ अफजूं ॥

दिन घर बुलाया और उसके साथ काम-क्रीड़ा की । सौतन को गले में फाँसी लगाकर मार डाला और जाकर मुगल को कह सुनाया ॥ ४ ॥ हे नाथ ! एक बात अद्भुत हुई है कि तुम्हारी स्त्री पुरुष बन गई है। जो गति तुम्हारी स्त्री की हुई है ऐसी बात तो कहीं देखने-सुनने में नहीं आई है ॥ ५ ॥ वह मूर्ख यह सुनकर चकित हो उठा और उठकर स्वयं उसे देखने गया । जब उसका लिंग खुलवाकर देखा तो जो स्त्री ने कहा था वही पाया ॥ ६ ॥ वह चित्त में अत्यन्त चिन्तातुर हो गया और शोक-सागर में डूब गया। हे अल्लाह ! यह तूने क्या किया जो स्त्री को पुरुष बना दिया ॥ ७ ॥ यह मुझे अत्यधिक प्यारी थी और इसे अब दैव नें पुरुष बना दिया है। दूसरी स्त्री इसे ही दे दूँ और यह भेद किसी से भी न कहूँ ॥ ८ ॥ उसने यही निश्चय किया और पहली स्त्री उसको दे दी। भेद-अभेद वह मूर्ख कुछ नहीं समझ सका और इस छल से आप ठगा गया ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ अपनी स्त्री को पुरुष बना देखकर उसे अपनी स्त्री दे दी और वह मूर्ख कुछ भी भेद-अभेद न विचार सका १० चौपाई स्त्री को पुरुष बना मान लिया और

[स]ना-सँवार कर स्त्री उसे दे दी। अन्य किसी पुरुष को यह भेद न जताया
[औ]र इस प्रकार ठगा गया ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ सतहत्तरवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २७७ ॥ ५३४४ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ अठहतरि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ शहर जहानाबाद बसत जह। शाहिजहाँ जू राज करत तह। दुहिता राइ रौशना ताके। और नारि सम रूप न वाके ॥ १ ॥ शाहिजहाँ जब ही मरि गए। औरंग शाह पातिशाह भए। सैफदीन संग याको प्यारा। पीर अपन करि ताँहि बिचारा ॥ २ ॥ ताके संग रौशना राई। बिबिध बिधन तन प्रीतुपजाई। काम भोग तिह संग कमायो। ताहि पीर अपनो ठहिरायो ॥ ३ ॥ औरंगशाह भेद नहि जानै। वहै [म]ुरीद भई तिह मानै। पीय समुझि तिह भोग कमावै। पीर [भ]ाखि सभहूँन सुनावै ॥ ४ ॥ इक दिन पीर गयो अपने घर। [त]ाहि बिना तिह परत न छिनकर। रोगनि तन अपने ठहराई। [सां]ढ़नी पहि बैठि साँढनी आई ॥ ५ ॥ ताके रहत बहुत दिन भई। [ब]हुरो शहिर दिल्ली महि गई। भई अरोगनि भाखि अनाई।

दो सौ अठहत्तरवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ जहानाबाद शहर जहाँ था वहाँ शाहजहाँ राज करता [था।] उसकी पुत्री रौशनराय (रौशनआरा) थी जिसके समान अन्य किसी [स्त्री में रू]प-सौंदर्य नहीं था ॥ १ ॥ शाहजहाँ जब मर गया और औरंगजेब [बादशा]ह बना तो उसे सैफदीन के साथ प्यार हो गया और वह उसे अपना [पीर म]ानता था ॥ २ ॥ रौशनराय ने भी उसके साथ विविध प्रकार से प्यार [किया]। उसके साथ रतिक्रीड़ा की और उसे अपना पीर माना ॥ ३ ॥ [औरंग]ज़ेब इस रहस्य को नहीं समझ रहा था और मान रहा था कि वह भी [मुरीद] हो गई है। वह प्रिय समझकर तो रतिक्रिया करती थी पर सबके [सामने] उसे पीर कहती थी ॥ ४ ॥ एक दिन पीर अपने घर गया तो इसे [क्षण] भी उसके बिना चैन नहीं पड़ता था। वह शरीर के रोग का बहाना [कर सां]ड़नी पर सवार हो उसके पास चली आई ॥ ५ ॥ उसके पास बहुत [दिन रह]कर वह पुन दिल्ली चली गई [और आ]कर कहा कि मैं अब स्वस्थ हो

बात भेद की किनूँ न पाई ॥ ६ ॥ आत भए इह भाँति उचारी । रोग बडा प्रभु हरी हमारी । बैदन अधिक इनाम दिलायो । भेद अभेद न औरंग पायो ॥ ७ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ अठहतरि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २७८ ॥ ५३५७ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ उनासी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ प्रेमावती नगर इक राजत । प्रेमसैन जह न्रिपति बिराजत । प्रेममंजरी तिह ग्रहि दारा । जा सम दिति न अदित्ति कुमारा ॥ १ ॥ तहा शाहु के पूत सुघर अति । जा सम राजकुअरि न (मू०ग्रं०१२२२) कहूँ कत । जाकी प्रभा कनन नहि आवै । हेरैं पलक न जोरी जावै ॥ २ ॥ जब रानी तिह की दुति लही । ऐसी भाँति चित्त महि कही । कै इह के संग भोग कमाऊँ । ना तर ह्वै जोगनि बन जाऊँ ॥ ३ ॥ एक सहचरी तहाँ पठाई । ताहि प्रबोधि तहाँ लै आई । बनि ठनि बैठ चंचला जहाँ । लै आई सहचरि तिह जहाँ ॥ ४ ॥

गई हूँ, पर भेद की बात कोई नहीं समझ सका ॥ ६ ॥ भाई के पास आकर उसने कहा कि प्रभु ने मेरा बहुत बड़ा रोग काट दिया है । वैद्य को अत्यधिक इनाम दिलाया । औरंगजेब भी इस रहस्य को न जान सका ॥ ७ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-सवाद में दो सौ अठहत्तरवें चरित्र की सुभ सत् समाप्ति ॥ २७८ ॥ ५३५७ ॥ अफजूं ॥

दो सौ उन्नासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ प्रेमावती नामक एक नगर था जहाँ प्रेमसेन राजा था । प्रेममंजरी उसकी स्त्री थी जिसके समान सुर-असुर-स्त्रियाँ भी नहीं था ॥ १ ॥ वहाँ के शाह के सुन्दर पुत्र के समान अन्य कोई भी राजकुमार नही था । उसकी प्रभा कही नहीं जा सकती । उसे देखकर तो पलक भी नहीं झपकी जा सकती थी ॥ २ ॥ जब रानी ने उसकी छवि देखी तो चित्त में यह सोचा कि या तो इसके साथ रतिक्रीड़ा करूँगी अन्यथा योगिनी बन जाऊँगी ॥ ३ ॥ उसने एक दासी को भेजा जो उसे बुलाकर वहाँ ले आई । दासी जहाँ उसे ले आई वहाँ स्त्रियाँ सज-धजकर बैठी थीं ४ उस कामातुर राजकुँवरि ने लिपटकर बहुत प्रकार से उस मित्र का

आतुर कुअर ताहि लपटाई। बहु बिधि भज्यो मिल सुखदाई। चतुर पहर रजनी रति मानी। करत काम की केल कहानी ॥ ५ ॥ अटकि गई अबला तिह संगा। रंगित भई उही के रंगा। ताकह ऐस प्रबोध द्रिड़ायो। आपु न्रिपहि चलि सीस झुकायो ॥ ६ ॥ जो मुहि भयो सुपन सुनु राई। सोवत रुद्र जगाइ पठाई। आठ बरसि हम सौ तुम सोवौ। रैनि दिवस मोरे ग्रहि खोवौ ॥ ७ ॥ पटी बाँधि द्रिगन दुहूँ सोवौ। आठ बरसि लगि जगहि न जोवौ। उपजो पूत धाम बिन सासा। सकल खलन को ह्वैहै नासा ॥ ८ ॥ किलबिख एक न तव तन रहै। मुहि शिव सुपन बिखै इमि कहै। अप्रमान धन भरे भंडारा। सकल काज सभ होइ तिहारा ॥ ९ ॥ राजै सत्ति इही द्रिड़ कीनी। पट्टी बाँधि दुहूँ द्रिग लीनी। आठ बरस रानी संग सोयो। चित्त जु हुतो सकल दुखु खोयो ॥ १० ॥ आँखै बाँधि तहाँ न्रिप सोवै। आवत जात न काहू जोवै। उत रानी कह जो नर भावै। ताँहि तुरतु ग्रहि बोलि पठावै ॥ ११ ॥ बहु बिधि करै केल संग ताके। जो नर रुचै चित्त त्रिय वाके। बात करत पति सो इत जावै।

उपभोग किया। काम-क्रीड़ा का यह हिसाब था कि चारों प्रहर रात तक यह रतिक्रिया चलती रही ॥ ५ ॥ वह स्त्री उसी में अटक गई और उसी के रंग में रँगी गई। उससे बातचीत कर स्वयं राजा के सामने आ सिर झुकाया ॥६॥ राजन् ! जो मुझे सपना आया है, सुनो। मुझे तो शिव ने जगाकर भेजा है। तुम आठ वर्ष तक मेरे घर में सोओ और मेरे साथ रहो ॥ ७ ॥ दोनों आँखों में पट्टी बाँधकर सोओ और आठ वर्ष तक जागो मत। बिना साँस वाला एक पुत्र जन्म लेगा और समस्त शत्रुओं का नाश होगा ॥ ८ ॥ तुम्हारे तन पर कोई कष्ट नहीं रहेगा, यह मुझे शिव ने स्वप्न में बताया है। तुम्हारे भंडार अपरिमिति धन से भर जायँगे और तुम्हारे सारे काम हो जायँगे ॥ ९ ॥ राजा ने इसे सत्य मान लिया और दोनों आँखों पर पट्टी बांध ली। आठ वर्षों पर्यन्त वह रानी के साथ सोया और चित्त का सारा दुःख नष्ट कर दिया ॥ १० ॥ राजा आँखें बाँधकर वहाँ सोता था और आते-जाते किसी को नहीं देखता था। उधर रानी जिस भी पुरुष को चाहती थी उसे तुरन्त घर में बुला लेती थी ॥ ११ ॥ स्त्री को जो व्यक्ति अच्छा लगता था उसके साथ विभिन्न प्रकार से केलि क्रीडा करती थी पति से बात करती जाती थी और उधर यार के साथ कामक्रीडा करती जाती

उतै जार तर परी ठुकावै ॥ १२ ॥ जो त्रिय चहै वहै तह आवै । खैंचि तरुनि तरु ऐंचि बजावै । बहु नर जासौ भोग कमाही । एको पूत होइ ग्रिह नाही ॥ १३ ॥ कितक दिनन महि सुत इक जायो । न्रिप को साच हियो महि आयो । आगै जो त्रिय कहै सु मानै । भेद अभेद न मूड़ पछानै ॥ १४ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ उनासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २७९ ॥ ५३६५ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ असी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बिशनचंद इक न्रिपति फिरंगा । जाके दिपत अधिक छबि अंगा । स्री जुगराजमंजरी रानी । सुंदरि भवन चतुर (मू०ग्रं०१२२३) दस जानी ॥ १ ॥ सुक्रित नाथ जोगी तहाँ । स्री जुगराजमती त्रिय जहाँ । जोगी द्रिशटि जबै तिह आयो । सदन चंचले बोलि पठायो ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ काम भोग तासो कियो ह्रिदै हरख उपजाइ । पकरि भुजन आसन तरें जात भई लपटाइ ॥ ३ ॥

थी ॥ १२ ॥ स्त्री जिसे चाहती थी वही वहाँ आता था और उस तरुणी को खींचकर उससे रमण करता था । जिस स्त्री से बहुत लोग भोग-विलास करते है, उसके घर कोई पुत्र नहीं होता ॥ १३ ॥ कई दिनों बाद उसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ । जिससे राजा को सच्चाई पर यक़ीन हो गया । अब स्त्री जो कहती थी वह वही मानता था और मूर्ख भेद-अभेद को नहीं समझता था ॥ १४ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ उनासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २७९ ॥ ५३६५ ॥ अफजूं ॥

दो सौ अस्सीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ बिशनचन्द्र एक फ़िरंगी राजा था जिसके अंगों की छवि शोभायुक्त थी । जुगराजमंजरी उसकी रानी थी जिसे चौदह लोकों में सुन्दरी माना जाता था ॥ १ ॥ सुकृतनाथ योगी वहाँ था जहाँ जुगराजमती स्त्री रहती थी । स्त्री ने योगी को देखते ही उसे घर पर बुलवा लिया ॥ २ ॥ दोहा उसने हृदय मे प्रसन्न हो उससे काम भोग किया और भुजाएं

॥ चौपई ॥ बहु बिधि भोग ताँहि तिन कीया। मोहि ह्रिदै रानी को लीया। त्रिय तासौ अति हित उपजायो। राजा कह चित ते बिसरायो ॥ ४ ॥ त्रिय ऐसी बिधि चितहि बिचारा। इह राजा कह चहियत मारा। लै तिह राज जोगियहि दीजै। कछू चरित्र ऐसि बिधि कीजै ॥ ५ ॥ सोवत समै न्रिपति कह मार्‍यो। गाडि ताहि इह भाँति उचार्‍यो। राजै राज जोगियहि दीना। आपन भेस जोग को लीना ॥ ६ ॥ जोग भेस धारत न्रिप भए। दै इह राज बनहि उठ गए। हमहूँ राज जोगियहि देहै। नाथ गए चित तही सिधैहै ॥ ७ ॥ सत्ति सत्ति सभ प्रजा बखान्यो। जो न्रिप कह्यो वहै हम मान्यो। सभहिन राज जोगयहि दीना। भेद अभेद मूढ़ नहि चीना ॥ ८ ॥ ॥ दोहरा ॥ मारि न्रिपति कह चंचलै कियो आपने काज। सकल प्रजा डारी पगन दै जोगी कह राज ॥ ९ ॥ ॥ चौपई ॥ इह बिधि राज जोगियहि दीया। इह छल सौ पति को बध कीया। मूरख अब लग भेद न पावै। अब तक आइ सु राजकमावै ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ असी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २८० ॥ ५३७५ ॥ अफजूँ ॥

पकड़कर लिपट-लिपट जाती थी ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसने बहुत प्रकार से उससे भोग किया और रानी का हृदय मोह लिया। स्त्री का भी उससे अत्यधिक प्रेम हो गया और उसने राजा को मन से भुला दिया ॥ ४ ॥ स्त्री ने मन में सोचा कि इस राजा को जान से मार डाला जाय। राजा इससे लेकर योगी को दिया जाय और इसके लिए कुछ प्रपंच किया जाय ॥ ५ ॥ उसने सोते हुए राजा को मार दिया और उसे गाड़कर कह दिया कि राजा ने राज्य योगी को दे दिया है और स्वयं योगी का वेश धारण कर लिया है ॥६॥ राजा ने योगी-वेश धारण कर लिया है और इसे राज्य देकर वन को चले गए हैं। मैं भी राज्य योगी को दूँगी और जिस ओर मेरे नाथ गए हैं, मैं भी उसी ओर चली जाऊँगी ॥ ७ ॥ सारी प्रजा ने "सत्य, सत्य" का उच्चारण किया और कहा जो राजा ने किया-कहा है हम भी उसे मानते हैं। सब मूर्खों ने भेद-अभेद नहीं जाना और राज्य योगी को दे दिया ॥ ८ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा को मार कर स्त्री ने अपना काम किया और योगी को राज देकर सारी प्रजा उसके चरणो मे ला डाली ९ चौपाई इस प्रकार योगी को राज्य दिया और छल से पति का वध कर दिया मख

अभी तक उसका भेद नहीं जान सके हैं और वह अभी तक राज कर रहा है ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ अस्सीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २८० ॥ ५३७५ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ इकासी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बिजैनगर इक राइ बखनियत । जाको त्रास भेस सभ मनियत । बिजैसैन जिह नाम न्रिपतिबर । बिजैमती रानी जिह के घर ॥ १ ॥ अजैमती दूसरि तिह रानी । जाके कर न्रिप देहि बिकानी । बिजैमती के सुत इक धामा । स्री सुलतानसैन तिह नामा ॥ २ ॥ बिजैमती को रूप अपारा । जा संग नही न्रिपति को प्यारा । अजैमती की सुंदरि काया । जिन राजा को चित्त लुभाया ॥ ३ ॥ ताके रहत रैनि दिन परा । जैसी भाँति गोर महि मरा । दुतिय नारि के धाम न जावै । ताँते तरुनि अधिक कुररावै ॥ ४ ॥ आग्या (मू०ग्रं०१०२४) चलत तवन को देसा । रानी भई न्रिपति के भेसा । यहि रिसि नारि दुतिय जिय राखी ।

दो सौ इक्यासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ विजयनगर में एक राजा कहा जाता था जिसका भय सभी मानते थे। उस श्रेष्ठ राजा का नाम विजयसेन था और उसके घर में विजयमती नामक रानी थी ॥ १ ॥ उसकी एक दूसरी रानी अजयमती थी जिसके हाथ राजा बिका हुआ था। विजयमती के घर एक पुत्र था जिसका नाम सुल्तानसेन था ॥ २ ॥ जिसके साथ राजा को प्यार नहीं था उस विजयमती का रूप अपार था। अजयमती का शरीर सुन्दर था जिसने राजा के चित्त को मोहित कर रखा था ॥ ३ ॥ उसके यहाँ रात-दिन ऐसे पड़ा रहता था मानों क़ब्र में पड़ा हो। वह दूसरी स्त्री के घर नहीं जाता था जिससे वह तरुणी अत्यधिक दुखी थी ॥ ४ ॥ उसी की आज्ञा देश में चलती थी और रानी ही राजा के वेश में कार्य करती थी। यह जलन दूसरी स्त्री ने मन मे रखी और एक वैद्य को बुलाकर ऐसे बोली ५ यदि तुम इस

बोलिक बैद प्रगट असि भाखी ॥ ५ ॥ या राजा कह जु तैं खपावै । मुख माँगै मो ते सो पावै । तब चलि बैद न्रिपति पहि गयो । रोगी बपु तिहको ठहरयो ॥ ६ ॥ जो तुम कहो तु करो उपाई । ज्यों त्यों कहि तिह बरी खवाई । रोगी भयो अरोगी तन सौ । भेद अभेद न पावत जड़ सौ ॥ ७ ॥ भच्छत बरी पेट तिह छूटा । सावन जान पनारा फूटा । दूसरि बरी थंभ के काजै । जोरावरी खवाई राजै ॥ ८ ॥ ताते अधिक पेट छुटि गयो । जाते बहु बिहबल न्रिप भयो । संन भयो इह बैद उचारा । इह बिध किय उपचार बिचारा ॥ ९ ॥ दस तोले अहिफेन मँगाई । बहु बिखि वाके संग मिलाई । धूरा किया तवन के अंगा । चाम गयो ताके तिह संगा ॥ १० ॥ हाइ हाइ राजा जब करै । तिमि तिमि बैद इह भाँति उचरै । या कहु अधिक न बोलन देहू । मूँदि बदन राजा को लेहू ॥ ११ ॥ जिमि जिमि धूरो तिह तन परै । हाइ हाइ तिम न्रिपति उचरै । भेद अभेद न किनहूँ चीनो । इह छल प्रान तवन को लीनो ॥ १२ ॥ इह छल साथ त्रिपति कह मारा ।

राजा को खत्म कर दो तो मुझसे मुँह-माँगा इनाम पाओ। तब वैद्य चलकर राजा के पास गया और उसे विभिन्न रोगों से ग्रस्त बताया ॥ ६ ॥ यदि तुम कहो तो उपचार करूँ और जैसे-तैसे कहकर उसे दवा की जड़ी खिला दी। निरोगी तन से रोगी हो गया और वह जड़-मूर्ख कोई भेद न समझ सका ॥ ७ ॥ दवा खाते ही उसका पेट ऐसा ढीला हो गया मानों सावन में पैनाला बह निकला हो। अब उसे रोकने के लिए राजा को दूसरी दवाई जबरदस्ती खिला दी ॥ ८ ॥ उससे पेट और अधिक छूट गया और राजा अत्यन्त व्याकुल हो उठा। वैद्य ने कहा कि सन्निपात हो गया है और उसके उपचार का भी आयोजन किया ॥ ९ ॥ उसने दस तोले सर्प की फेन मँगाई और उसके साथ बहुत से विष मिलाए। उसके अंगों को उसके साथ धुआँ दिया जिससे उसका चमड़ा उतर गया ॥ १० ॥ जैसे-जैसे राजा "हाय-हाय" कहता था तो वैसे-वैसे वैद्य कहता था कि इसे बोलने मत दो और इसका मुँह हाथ से बंद कर लो ॥ ११ ॥ जैसे-जैसे उसका धुआँ उसे लगता था राजा हाय-हाय का उच्चारण करता था। कोई भी रहस्य को न समझ सका और इस प्रकार उसके प्राण ले लिये १२ इस छल से राजा को मार डाला और अपने

अपने छत्र पुत्र सिर ढारा। सभ सौअन कह देत निकार्‌या। भेद अभेद न किनू बिचार्‌यो ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संवादे दो सौ इकासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २८१ ॥ ५३८८ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ ब्यासी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ अमीकरन इक सुना न्रिपाला। अमरकला जाके ग्रहि बाला। गढ़ सिराज को राज कमावै। सीराजी जग नाम कहावै ॥ १ ॥ असुरकला दूसरि ताकी त्रिय। निसि दिन रहत न्रिपति जामै जिय। अमरकला जिय मांझ रिसावै। असुर कलहि पिय रोज बुलावै ॥ २ ॥ एक बनिक कौ लयो बुलाई। मदन क्रीड़ तिह साथ कमाई। अनद कुअरि तिह नर को नामा। जाकौ भजा न्रिपति की बामा ॥ ३ ॥ असुरकला कौ निजु कर घायो। मरी नारि तब पतिहि सुनायो। तर तखता के मित्रहि धरा। ता पर बडो अडंबर करा ॥ ४ ॥ (मू०ग्रं०१२२५) तर तखता के मित्र दुरायो।

पुत्र को राज्य-छत्र दे दिया। सब सौतनों को निकाल दिया और इस प्रकार भेद-अभेद कोई भी न जान सका ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ इक्यासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २८१ ॥ ५३८८ ॥ अफजूं ॥

दो सौ बयासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ अमीकर्ण नामक एक राजा था जिसके घर में अमरकला नामक स्त्री थी। वह सिराजगढ़ में राज्य करता था और जगत में सिराजी नाम से जाना जाता था ॥ १ ॥ उसकी दूसरी स्त्री असुरकला थी जिसमें रात-दिन राजा का मन रमा करता था। अमरकला यह सोचकर जलती थी कि असुरकला को प्रिय रोज़ बुलाता है ॥ २ ॥ उसने एक वणिक् को बुलाया और उसके साथ रतिक्रीड़ा की। उस व्यक्ति का नाम आनंदकुँवर था जिससे राजा की स्त्री क्रीड़ा किया करती थी ॥ ३ ॥ उसने असुरकला को अपने हाथों से मार दिया और तब पति को बता दिया (कि वह मर गई है)। (लकड़ी के) तख्ते के नीचे मित्र को छुपाया और बड़ा प्रपंच किया ४ तख्ते के नीचे मित्र को छिपा दिया और ऊपर सौत की

ता पर सवति लोथ कहि पायो। भेद अभेद न किनूं बिचारा। इह छल अपनो यार निकारा ॥ ५ ॥ ॥ दोहरा ॥ सवति संघारी पति छला मित्रहि लयो उबारि। भेद किसू पायो नही धंन सु अमर कुमारि ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ ब्यासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २८२ ॥ ५३९४ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ तरासी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ शहिर पलाऊ एक त्रिपारा। जिह धनि भरे सकल भंडारा। किन्रमती तिह राजदुलारी। जानुक चंद्र लई उजियारी ॥ १ ॥ बिक्रम सिंघ शाहु सुत इक तह। जा सम सुंदर दुतिय न महि मह। अप्रमान तिह प्रभा बिराजै। सुर नर असुर निरखि मन लाजै ॥ २ ॥ किन्रमती वासौ हित कियो। ताहि बोलि ग्रहि अपने लियो। काम भोग तासौ द्रिड़ किया। चित को शोक दूरि करि दिया ॥ ३ ॥ रानी भोग मित्र को रसिकै। इह बिधि बचन बखान्यो हसिकै।

लाश लिटा दी। किसी ने भी भेद-अभेद को न समझा और इस प्रकार उसने अपना यार निकाल दिया ॥ ५ ॥ ॥ दोहा ॥ सौतन को मार दिया, पति को छल लिया और मित्र को भी बचा लिया। किसी को पता नही चला। अमरकुमारी धन्य है ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ बयासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २८२ ॥ ५३९४ ॥ अफजूं ॥

दो सौ तिरासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ पलामू शहर में एक राजा था जिसके भंडार धन से भरे हुए थे। किन्नरमती उसकी स्त्री थी जिससे मानों चन्द्रमा ने भी रोशनी उधार ली हो ॥ १ ॥ विक्रमसिंह वहाँ एक शाह का पुत्र था जिसके समान धरती पर अन्य कोई नहीं था। उसकी शोभा अपरिमित थी और उससे सुर, नर, असुर सभी लज्जित होते थे ॥ २ ॥ किन्नरमती ने उससे प्रेम किया और उसे अपने घर पर बुला लिया। उससे रति-क्रीडा की और चित्त का शोक दूर कर दिया ॥ ३ ॥ रानी ने रसिक मित्र से रमण कर उससे हँसकर कहा। हे प्रिय! कुछ ऐसा प्रपंच

तुम हम कह लै संग सिधावहु। पिय चरित्र कछु ऐस बनावहु ॥ ४ ॥ मित्र कह्यो मैं कहौ सु करियहु। भेद पुरख दूसर न उचरियहु। रुद्र भवन पूजन तुम जैहौ। तबही हितू हितू कह पैहौ ॥ ५ ॥ पति तन भाखि देहरे गई। तह ते जात मित्र संग भई। किनहूँ पुरख भेद नहि जाना। अस राजा तन बचन बखाना ॥ ६ ॥ रानी रुद्र भवन जब गई। शिवजू बिखै लीन सो भई। तिन साजुज मुकति कह पायो। जनम मरन को ताप मिटायो ॥ ७ ॥ त्रिप सुनि रुद्र भगति अनुरागा। धनि धनि त्रियहि बखानन लागा। दुहकर करम कीआ जिन दारा। पलि पलि प्रति ताके बलिहारा ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संवादे दोइ सौ तरासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २८३ ॥ ५४०२ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ चौरासी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ दच्छनिसैन दच्छनी राजा। दच्छनि दे रानी सिर ताजा। जा सम और न दूजी रानी। दच्छिनवती बसत

करो कि मुझे साथ लेकर कहीं अन्यत्र चले चलो ॥ ४ ॥ मित्र ने कहा कि मैं जो कहूँ वैसा करो और अन्य किसी से इस भेद को न कहना। जब तुम रुद्र के मन्दिर में पूजा के लिए जाओगी तो वहीं अपने हितैषी को पाओगी ॥ ५ ॥ पति को कहकर वह मंदिर गई और वहीं से मित्र के साथ चली गई। किसी भी व्यक्ति को भेद का पता नहीं लगा और उस व्यक्ति ने राजा से ऐसे कहा ॥ ६ ॥ रानी जब शिव-मंदिर में गई तो वहीं शिव में लीन हो गई। उसने सायुज्य मुक्ति प्राप्त की है और जन्म-मरण के ताप को मिटा दिया है ॥७ ॥ राजा भी सुनकर शिव की भक्ति में लीन हो गया और स्त्री को धन्य-धन्य कहने लगा। जिस स्त्री ने इतना कठिन कार्य किया, मैं प्रतिपल उसके बलिहारी जाता हूँ ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ तिरासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २८३ ॥ ५४०३ ॥ अफजूं ॥

दो सौ चौरासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ दक्षिण में एक दक्षिणसेन राजा था जो दक्षिणदेवी रानी का सिरताज था। उसकी राजधानी में उसके समान अन्य कोई रानी नहीं

राजधानी ॥ १ ॥ दच्छिनीराइ एक तह चाकर । रूपमान जनु दुतिय दिवाकर । ताकी जात प्रभा नहि (मू०ग्रं०१२२६) कही । जानुक फूलि चंबेली रही ॥ २ ॥ रूप तवन को दिपत अपारा । तिह आगे क्या सूर बिचारा । सोभा कही न हमते जाई । सकल त्रिया लखि रहत बिकाई ॥ ३ ॥ रानी दरस तवन को पायो । पठै सहचरी धाम बुलायो । कामकेल तासौ हसि मानी । रमत रमत सभ निसा बिहानी ॥ ४ ॥ जैसे हुतो न्रिपति के रूपा । तैसो ताको हुतो सरूपा । जासौ अटक कुअरि की भई । न्रिप की बात बिसरि करि गई ॥ ५ ॥ तासौ हित रानी को भयो । राजा साथ हेतु तजि दयो । मदरा अधिक न्रिपति कह प्यायो । राज सिंघासन जार बैठायो ॥ ६ ॥ मत्त भए न्रिप सो धन पायो । बाँधि मित्र के धाम पठायो । ताको प्रजा न्रिपति करि माना । राजा कह चाकर पहिचाना ॥ ७ ॥ दुहूँअन की एकै अनुहारा । राव रंक नहि जात बिचारा । ताकौ लोग न्रिपति करि मानै । लज्जत बचन न न्रिपति बखानै ॥ ८ ॥ ॥ दोहरा ॥ रंक राज

थी ॥ १ ॥ दक्षिणराय नामक एक सेवक वहाँ था जो रूप-सौंदर्य में मानों दूसरा सूर्य था । उसकी प्रभा वर्णनातीत थी । ऐसा लग रहा था मानों चमेली फूल रही हो ॥ २ ॥ उसके अपार देदीप्यमान रूप के आगे सूर्य भी बेचारा क्या था । हम उसकी सुन्दरता का वर्णन नहीं कर सकते, सभी स्त्रियाँ उसे देखकर बिकी रहती थीं ॥ ३ ॥ रानी ने उसका दर्शन किया और दासी भेजकर उसे घर बुलाया । उससे हँस-हँसकर कामक्रीड़ा की और रमण करते-करते सारी रात बीत गई ॥ ४ ॥ जैसा राजा का स्वरूप था वैसा ही इसका रूप था । जब से कुँवरि (रानी) उससे अटकी, राजा की बात तो उसे भूल ही गई ॥ ५ ॥ रानी का प्रेम अब उससे हो गया और उसने राजा का साथ छोड़ दिया । राजा को अत्यधिक मदिरा पिलाई और अपने यार को राजसिंहासन पर बैठा दिया ॥ ६ ॥ मदमत्त राजा को बाँधकर मृत्युलोक भेज दिया । उसे प्रजा ने राजा मान लिया और राजा को नौकर मान लिया ॥ ७ ॥ दोनों का स्वरूप एक ही जैसा होने से राजा और उस निर्धन में पहचान नहीं हो पाती थी । लोग उसे ही राजा मानते थे और राजा लज्जावश कुछ नहीं कहता था ८ दोहा निर्धन और राजा के साथ ऐसा कर उसने निर्धन को

ऐसे करा दिया रंक कौ राज । ह्वै अतीत पति बन गयो तजि गयो सकल समाज ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ चौरासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २८४ ॥ ५४११ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ पचासी चरित्र कथनं ॥

॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ हुतो एक राजा प्रजासैन नामा । प्रजापालनी धाम ताके सु बामा । प्रजा लोग जाकी सभै आनि मानै । तिसै दूसरो जान राजा प्रमानै ॥ १ ॥ सुधासैन नामा रहै भ्रित ताके । रहै रीझि बाला लखें नैन वाके । न ह्वैहै न हैना बिधाता बनायो । नरी नागनी गंध्रबी को न जायो ॥ २ ॥ ॥ चौपई ॥ बनिक एक धनवान रहत तह । प्रजासैन न्रिप राज करत जह । सुमतिमती ताकी इक कन्या । धरनीतल के भीतर धन्या ॥ ३ ॥ सुधासैन तिन जबै निहारा । हरि अरि सर ताके तन मारा । पठै सहचरी ताहि बुलायो । सो नर धाम न वाके आयो ॥ ४ ॥ नाहि नाहि जिमि जिमि

राज दे दिया । अब पति सारा समाज छोड़कर साधु बन जंगल में चला गया ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ चौरासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २८४ ॥ ५४११ ॥ अफजूँ ॥

दो सौ पचासीवाँ चरित्र-कथन

॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ प्रजासेन नामक एक राजा था जिसके घर मे प्रजापालनी नामक सुन्दर स्त्री थी । प्रजा भी उस स्त्री का आदेश मानती थी और उसे दूसरा राजा समझती थी ॥ १ ॥ उसके पास सुधासेन नामक एक सेवक रहता था, वह स्त्री उसकी आँखें देखकर उस पर मोहित हो उठी थी । वैसा न तो कोई है, न होगा और न ही विधाता ने वैसा किसी को बनाया है । वह मानव, नाग, गंधर्व आदि स्त्रियों में से किसी का भी नही था ॥ २ ॥ ॥ चौपाई ॥ जहाँ राजा प्रजासेन राज्य करता था वहाँ एक धनवान वणिक् रहता था । उसकी सुमतिमती नामक एक कन्या थी जो धरती पर "धन्य-धन्य" कही जाती थी ॥ ३ ॥ सुधासेन ने जब उसे देखा तो कामदेव ने उसे काम-बाण मार दिया । उसने दासी भेजकर उसे बुलाया पर

वह कहै। तिमि तिमि हठि इस्त्री कर गहै। अधिक दूत का तहाँ पठावै। क्योंहूँ धाम मित्र नहि आवै ॥ ५ ॥ ज्यों ज्यों मित्र न आवै धामा। त्यों त्यों अति ब्याकुल ह्वै बामा। बहु दूतिन ते धाम लुटावै। पल पल प्रति तिह धाम पठावै ॥ ६ ॥ (मू०ग्रं०१२२७) शाह सुता बहुबिधि करि हारी। सुधासैन सौ भई न यारी। तब अबला इह मंत्र पकायो। इक दूती कह तहाँ पठायो ॥ ७ ॥ चली चली सहचरि तह गई। जिह ग्रहि सुधि मितवा की भई। पकरि भुजा ते सोत जगायो। चलहु अबै त्रिप तियहि बुलायो ॥ ८ ॥ मूरख कछू बात नहि पाई। सहचरि तहाँ संग करि ल्याई। बैठी सुता शाहु की जहाँ। लै आई मितवा कह तहाँ ॥ ९ ॥ वहि मूरख ऐसे जिय जाना। शाहु सुता को छल न पछाना। रानी अटकि सु मुहि पर गई। ताते हमै बुलावत भई ॥ १० ॥ ताके साथ भोग मैं करिहो। भाँति भाँति के आसन धरिहौ। त्रिप नारी कह अधिक रिझैहौ। जो मुखि माँगिहौ सोई पैहौ ॥ ११ ॥ शाहु सुता सो कीना संगा। लखत भयो त्रिप की अरधंगा। मूरख भेद अभेद न पायो। इह छल अपनो

वह व्यक्ति उसके घर नहीं आया ॥ ४ ॥ जैसे-जैसे वह 'नहीं-नहीं' कहता था उस स्त्री का हठ और ज़ोर पकड़ता जाता था। वह और दासियों को वहाँ भेजती पर कैसे भी वह मित्र घर नहीं आता था ॥ ५ ॥ जैसे-जसे वह मित्र घर नहीं आ रहा था वैसे-वैसे वह स्त्री और अधिक व्याकुल हो उठ रही थी। अनेक सेविकाओं पर वह घर लुटाए चली जा रही थी और हर पल उन्हें उसके घर भेजने लगी ॥ ६ ॥ वह शाह की पुत्री अनेकों यत्न कर हार गई पर सुधासेन से उसकी दोस्ती नहीं हो सकी। तब उस स्त्री ने एक विचार किया और एक दूती को वहाँ भेजा ॥ ७ ॥ वह दासी चलती-चलती वहाँ पहुँची जहाँ उस मित्र की खबर उसे मिली थी। उसे बाँह पकड़ उसने सोते से जगाया और कहा अभी चलो, तुम्हें रानी ने बुलाया है ॥८॥ उस मूर्ख ने कुछ नहीं समझा और वह दासी उसे वहाँ साथ ले आई जहाँ उस धनी की पुत्री बैठी थी ॥ ९ ॥ उस मूर्ख ने सत्य समझा और धनी शाह की पुत्री के छल को नहीं पहचाना। उसने सोचा कि रानी मुझ पर मोहित है इसलिए उसने मुझे बुलाया है ॥ १० ॥ मैं उसके साथ रमण करूँगा और भाँति-भाँति के आसन प्रयुक्त करूँगा। रानी को अत्यधिक रिझाऊँगा और जो मुख से माँगूँगा वही पाऊँगा ॥ ११ ॥ शाह की पुत्री के साथ उसने रमण किया और उसे राजा की स्त्री मानने लगा

मूँड मुडायो ॥ १२ ॥ ॥ दोहरा ॥ शाहु सुता कौ त्रिय लिया जानत भ्यो मन माहि । हरख मन ताकौ भजा भेव पछाना नाहि ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ पचासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २८५ ॥ ५४२४ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ छिआसी चरित्र कथनं ॥

॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ दिसा बारुणी मै रहै एक राजा । सु वा तुल्लि दूजो बिधातै न साजा । बिखया नाम ताकी सुता एक सोहै । सुरी आसुरी नागिनी तुल्लि को है ॥ १ ॥ प्रभासैन नामा रहै ताहि ताता । तिहूँ लोक मै बीर बाँको बिख्याता । तहा एक आयो बडो छत्रधारी । सभै शस्त्रबेता सु बिद्याधिकारी ॥ २ ॥ प्रभासैन आयो जहाँ बाग नीको । प्रभा हेरि जाकी बढ्यो नंद जी को । तहाँ बोलि सूरहि रथहि ठाढ कीनो । पियादे भये पैंड ताको सु लीनो ॥ ३ ॥ जबै बाग नीको सु तौनौ निहार्यो । इहै आपने चित्त माही बिचार्यो ।

मूर्ख ने भेद-अभेद नहीं समझा और इस प्रकार छला गया ॥ १२ ॥ ॥ दोहा ॥ वह शाह की पुत्री को राजा की स्त्री समझ रहा था और बिना भेद पहचाने हर्षपूर्वक उसके साथ रमण करता रहा ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ पचासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २८५ ॥ ५४२४ ॥ अफजूं ॥

दो सौ छियासीवाँ चरित्र-कथन

॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ वारुणी दिशा में एक राजा रहता था जिसके समान विधाता ने अन्य किसी को नहीं बनाया था । विषया नामक उसकी एक पुत्री, जिसके समान कोई भी देव, दानव, नाग-स्त्री नहीं थी ॥ १ ॥ प्रभासेन प्यारा राजा था जो तीनों लोकों में विख्यात वीर था । वहाँ एक बड़ा छत्रधारी आया जो शस्त्रवेत्ता और विद्याओं में निपुण था ॥ २ ॥ प्रभासेन सुन्दर बाग़ में आया और वहाँ की शोभा देखकर उसका आनन्द बढ़ गया । शूरवीरों को कहकर वहाँ रथ रोका और पैदल ही चलने लगा ॥ ३ ॥ जब उसने सुन्दर बाग़ को देखा तो अपने चित्त में यही विचार किया कि कुछ समय तक यहाँ विश्राम किया जाय और दो एक घड़ियों के बाद गाँव का

कछु काल इहाँ अनै सैन कीजै । घरी द्वैक कौ ग्राम को पंथ लीजै ॥ ४ ॥ हरे बाज कीने घरी द्वैक सोयो । सभै आपने चित्त को शोक खोयो । तहाँ राजकन्या बिखया नाम आई । बिलोक्यो तिसै सुधि तौनै न पाई ॥ ५ ॥ तबै राजकन्या हिदै यौ बिचार्यो । प्रभासैन कौ सोवते जौ निहार्यो । त्रिया मै (मू०ग्रं०१२६८) इसी की इहै नाथ मेरो । बरौंगी इसै मैं भई आजु बेरो ॥ ६ ॥ त्रिसंतै इहै चित्त मै बाल आनी । इसी को बरौ कै तजौं राजधानी । तहाँ एक पत्री सु डारी निहारी । इहै चंचला चित्त माही बिचारी ॥ ७ ॥ चह्यो पत्रका को सु बाचौ उघारौ । डरौ बेद की सासना कौ बिचारौ । परी पत्रिका कौ सु कोऊ उघारै । बिधाता उसै नरक के माँझ डारै ॥ ८ ॥ रही शंकि लीनी तऊ हाथ पाती । लई लाइकै मित्र की मानि छाती । कबै हाथ माँही छिपावै उघारै । मनों निरधनी द्रब पायो निहारै ॥ ९ ॥ तबै चंचला चित मै यौ बिचारी । तिसै जानिकै नाथ पाती उघारी । जोऊ नाथ की जानि पाती उघारै । न ताकौ बिधाता महाँ नरक डारै ॥ १० ॥ हुतो एक राजा तहाँ छत्रधारी । प्रभासैन के प्रान को हंत कारी । तिनि छिआ इहै चित्त के माँझ कीनी ।

रास्ता लिया जाय ॥ ४ ॥ घोड़ों को रोककर वह दो घड़ी सोया और अपने मन के शोक को दूर किया । वहाँ विषया नामक राजकन्या आई और उसे देखकर वह सुधि भूल गई ॥ ५ ॥ प्रभासेन को सोता देखकर राजकन्या ने यह विचार किया कि मैं तो इसी की स्त्री हूँ और यही मेरा स्वामी है । मैं इसी का वरण करूंगी ॥ ६ ॥ उस बालिका ने निश्चित रूप से सोच लिया कि या तो इसी का वरण करूँगी अथवा राजधानी का त्याग कर दूंगी । तभी वहाँ एक पत्र डाला हुआ देखकर वह सोच में पड़ गई ॥७॥ वह चाह रही थी कि पत्र को खोलकर पढ़ूँ पर वेद-नियम भंग होने से डर रही थी । पड़े हुए पत्र को यदि कोई खोले तो विधाता उसे नर्क में डालेगा ॥ ८ ॥ शंकाकुल वह थी पर हाथ में उसने पत्र ले लिया और मित्र का मान कर उसे छाती से लगाया । कभी हाथ में छिपाती और कभी देखती थी । ऐसा लग रहा था मानों निर्धन द्रव्य पाकर देख रहा हो ॥ ९ ॥ तब चंचला स्त्री ने विचार किया और पत्र को खोला । जो प्रिय का पत्र खोलता है उसे परमात्मा नर्क में नहीं डालता ॥ १० ॥ एक छत्रधारी राजा था जो प्रभासेन को मारना चाहता था उसने एक इच्छा की थी जिसे उसने पत्र

सोई लिख्य कै पत्र के संङ्घि दीनी ॥ ११ ॥ बिख्या नाम जाकी सपुत्री अपारा । तिसी ओर लिख्यि पत्रिकै मांझ डारा । प्रभासैन आयो जबै जानि लीजो । बिखै लै तिसी काल मै तासु दीजो ॥ १२ ॥ रही पत्रिको बाचि कै चौकि चित्तै । कियो मंत्र इक मित्र की रच्छ हित्तै । लियो आँजि कै अंजनैं हाथ प्यारी । बिख्या बिखि कै दैनता कौ सु डारी ॥ १३ ॥ रही जात बाला तबै राज जागे । वहै पत्रिका हाथ लैकै नुरागे । पिता तौन के हाथ लैकै सु दीनी । सुन्यो मित्र को नामु लै भूप चीनी ॥ १४ ॥ जबै पत्रिका छोरिकै भूप बाची । इहै बात राजै लिखी मित्र साची । बिख्या बाँचि पत्री उसी काल दीजो । घरी एक बेलंब राजा न कीजो ॥ १५ ॥ बिख्या राज कन्या महाराज दीनी । कहा चंचला चेशटा चार कीनी । कछू भेद ताको सु राजै न पायो । प्रभासैन राजा तिसै ब्याहि ल्यायो ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप सवादे दोइ सौ छिआसी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २८६ ॥ ५४४० ॥ अफजूं ॥

था ॥ ११ ॥ विषया जिस राजा की पुत्री थी उसी ओर यह पत्र लिखा गया था कि प्रभासेन राजा जब आए तो उसे विष दे देना ॥ १२ ॥ वह पत्र को पढकर मन में चौंक उठी और उसने मित्र की रक्षा के लिए एक विचार बनाया । अपना अंजन हाथ में लगाया और विषया नें उसमें विष की बात को हटा दिया ॥ १३ ॥ वह कन्या जाने लगी और तभी राजा जग गया और उसने वह पत्र प्रेमपूर्वक सँभाल लिया । उसने वह पत्र (विषया के) पिता के हाथ में दिया जिसे उसके पिता ने अपने मित्र का लिखा हुआ पहचान लिया ॥ १४ ॥ जब राजा ने पत्र खोलकर पढ़ा तो उसने पाया कि मित्र ने एक (सच्ची) आवश्यक बात लिखी थी । पत्र पढ़ते ही विषया तत्क्षण दे दो और एक घड़ी की भी देरी नहीं करना ॥ १५ ॥ राजकन्या विषया राजा ने दे दी और (प्रभासेन ने) कहा कि इस स्त्री ने तो बहुत सुन्दर उपाय किया है । राजा को उसका कुछ भी भेद न पता चला और प्रभासेन उससे विवाह कर उसे ले गया ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ छियासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २८६ ॥ ५४४० ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ सतासी चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ घाटमपुर कुररे बिखैं एक मुगल की बाल ।
भ्राता साथ चरित्र तिन कियो सु सुनहु त्रिपाल ॥ १ ॥
॥ चौपई ॥ सौदा निमित्त भ्रात तिह गयो । खाटि कमाइ अधिक धन लयो । निसि कह (मू०ग्रं०१२२६) धाम भगनि को आयो । कंठ लागि तिन मोह जतायो ॥ २ ॥ अपनी सकल ब्रिथा तिन भाखी । जो जो बितई सो सो आखी । जु धन हुतो संग खाटि कमायो । सो भगनी कह सकल दिखायो ॥३॥ मरियम बेगम ताको नामा । भाई कौ मारा जिन बामा । सभ ही दरब छीनि करि लीना । आपु चरित्र सु ऐसे कीना ॥ ४ ॥ ॥ दोहरा ॥ भगनी दरब बिलोकि कै लोभ सिंध कै माहि । नख सिख लौ बूडत भई सुधि न रही जिय माहि ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ भ्रातबात भगनी न बिचारा । फाँसी डारि कंठि महि मारा । लीना लूटि सकल तिह धन कौ । कर्‌यो अमोह आपने मन कौ ॥ ६ ॥ प्रात भए रोवै तब लागी । जब सभ प्रजा गाँव की जागी । म्रितक बंधु तब

दो सौ सत्तासीवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ श्वेत फूलों के उद्यानों वाले घाटमपुर में एक मुगल की स्त्री थी । उसने अपने भाई के साथ जो प्रपंच किया, हे राजन् ! अब उसे सुनो ॥१॥ ॥ चौपाई ॥ उसका भाई व्यापार के लिए उसके पास गया और खा-कमाकर उसने काफ़ी धन एकत्र किया । रात को वह बहन के घर आ गया और उसने भी गले मिलकर काफ़ी प्रेम जताया ॥ २ ॥ उसने अपनी पूरी व्यथा कह सुनायी और जो बीता कह डाला । जो धन उसने कमाया था वह भी बहन को सारा दिखाया ॥ ३ ॥ उस स्त्री का नाम मरियम बेगम था जिसने भाई को मार डाला । ऐसा प्रपंच किया कि सारा द्रव्य छीन लिया ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ बहन धन को देखकर लोभ के समुद्र में डूब गई । वह नख से लेकर शिख तक लीन हो गई और उसे कुछ भी सुधि न रही ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ भाई होने का कुछ विचार नहीं किया और उसे गले में फाँसी लगाकर मार डाला । अपने मन से मोह हटाकर उसका सारा धन लूट लिया ॥ ६ ॥ सुबह होने पर गाँव के लोगों के जग जाने पर वह रोने-चिल्लाने लगी मृत भाई सबको दिखा दिया और कहा कि साँप के काट

सभन दिखायो । मर्यो आजु इह साँप चबायो ॥ ७ ॥ भली भाँत तन ताँहि गडायो । यौ काजी तन आपु जतायो । साज बाजि इक याको घोरो । और जु कछु याको धनु थोरो ॥ ८ ॥ सो इह त्रियहि पठावन कीजै । फारखती हम कौ लिखि दीजै । कबुज लिखा काजी तें लई । कछु धन त्रितक त्रिया कह दई ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल अपनो भ्रात हति लीनो कबुज लिखाइ । निसा करी तिह नारि की सभ धन गई पचाइ ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संवादे दोइ सौ सतासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २८७ ॥ ५४५० ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ अठासी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ यूना शहिर रूम महि जहाँ । देवछत्र राजा इक तहाँ । छैल देइ दुहिता ताके इक । पढ़ी ब्याकरन कोकशास्त्रनिक ॥ १ ॥ अजितसैन तिह ठाँ इक छत्री । तेजवान बलवान धरत्री । रूपवान बलवान अपारा । पूरो पुरख जगत उजियारा ॥ २ ॥ तेजवान दुतिवान अतुल बल ।

खाने से यह मरा है ॥ ७ ॥ भली प्रकार से उसका शरीर गाड़ दिया और काज़ी से स्वयं कहा कि इसका घोड़ा और थोड़ा सा धन है ॥ ८ ॥ वह इसकी पत्नी को भेज दो और मुझे बेबाकी पत्र लिख दो । बेबाकी पत्र क़ाजी से लिखा लिया और थोड़ा सा धन मृतक की स्त्री को दे दिया ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार छल से भाई को मारकर बेबाकी पत्र लिखा लिया । उस स्त्री को भी सन्तुष्ट कर दिया और स्वयं सारा धन पचा गई ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ सत्तासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २८७ ॥ ५४५० ॥ अफजूं ॥

दो सौ अट्ठासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ रूम देश में यूना नामक शहर था जहाँ का राजा देवछत्र था । छैल देवी उसकी एक पुत्री थी जो व्याकरण-कोकशास्त्र आदि पढ़ी हुई थी ॥ १ ॥ अजीतसेन वहाँ एक तेजस्वी और बलवान क्षत्रिय था । वह रूपवान और बलशाली था और जगत में प्रकाश के समान तेजस्वी पूर्णपुरुष था २ वह अत्यन्त तेजवान अपरिमित बलवान था जिसने शत्रुओं के

अरि अनेक जीते जिन दलि मलि । आवत ताँहि बिलोक्यो रानी । दुहिता सो इह भाँति बखानी ॥ ३ ॥ जौ इह धाम न्रिपति के होतो । तौ तुमरे लाइक बर को थो । अब मैं अस कह करौ उपाऊ । ऐसो बर तुहि आन मिलाऊँ ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तनिक कुअरि के धुनि जब असि कानन परी । देखि रही (मू०ग्रं०१२३०) तहि ओर मैन अरु मद भरी । मोहि रही मन माँहि न प्रगट जताइयो । हो पल पल बलि बलि जाती दिवस गवाइयो ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ रैनि भए सहचरी बुलाई । चित्त ब्रिथा तिह सकल सुनाई । जौ तिह दै मिलाइ मुहि प्यारी । तौ जानौ तूँ हितू हमारी ॥ ६ ॥ कह्यो कुअरि सहचरि सौ जाना । भेद न दूसर कान बखाना । तत छिन दौर तवन पहि गई । बहु बिधि ताँहि प्रबोधत भई ॥ ७ ॥ बहु बिधि ताहि प्रबोध जताई । ज्यो त्यो ताँहि तहाँ लै आई । मारग कुअरि बिलोकत जहाँ । लै पहुची मितवा कह तहाँ ॥ ८ ॥ लखि तिह कुअरि प्रफुल्लित भई । जनुक राँक नवो निधि पई । बिहसि बिहसि तिह कंठ लगायो । मन मानत को भोग कमायो ॥ ९ ॥ ताको दूर दरिद्र दिया करि । सीस रही धर सखी पगन पर । तव प्रसाद मै मित्रहि लह्यो ।

अनेकों दल जीते थे । रानी ने उसे आते देखकर पुत्री से यह कहा ॥ ३ ॥ यदि यह राजा के घर होता तो तुम्हारे योग्य वर था । अब मैं ऐसा उपाय करती हूँ कि तुझे ऐसा ही वर खोजकर देती हूँ ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ कुँवरि के कानों में जब यह बात पड़ी तो वह कामासक्त होकर मदपूर्वक उसकी ओर देखने लगी । वह मन में मोहित हो उठी पर उसने जताया नहीं और पल-पल बलिहारी जाती उसने सारा दिन गंवा दिया ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ रात को उसने दासी को बुलाया और मन की सारी व्यथा उसे सुनाई । हे प्रिय ! यदि तुम मुझे उसे मिला दो तो मैं तुम्हें अपनी हितैषिणी समझूँ ॥ ६ ॥ कुँवरि ने केवल सखी से ही यह कहा और किसी दूसरे को भेद बिलकुल नहीं बताया । वह तत्काल दौड़कर उसके पास गई और विभिन्न प्रकार से उसे संबोधित किया ॥ ७ ॥ विभिन्न प्रकार से उससे बातचीत करके उसे जैसे-तैसे वहाँ ले आई, जहाँ कुँवरि रास्ता देख रही थी । वह मित्र को लेकर वहाँ आ पहुँची ॥ ८ ॥ कुँवरि उसे देखकर खुश हो उठी मानो निर्धन व्यक्ति को नौ निधियाँ मिल गई हों । उसे हँस-हँसकर गले से लगाया और मनचाहा भोग-विलास किया ॥ ९ ॥ उसकी दरिद्रता दूर कर वह सखी के चरणों में

कहाँ कहो तुहि जात न कह्यो ॥ १० ॥ अब कछु ऐस चरित्र बनैयै । जाते सदा मित्र कह पैयै । सोवै सदा संग लै ताकौ । चीनि सकै कोऊ नहि वाकौ ॥ ११ ॥ त्रिय चरित्र अस चित्त बिचारे । सु मैं कहत हो सुनहु पयारे । ताहि छपाइ सदन महि राखा । रानी सौ ऐसी बिधि भाखा ॥ १२ ॥ रानी जो तुम पुरख सराहा । ताकह स्री बिसनाथन चाहा । वाको काली काल ह्वै गयो । या सखि के मुख ते सुनि लयो ॥ १३ ॥ हम सभहिन जो ताहि सराहा । ताते तिसु बिसुनाथन चाहा । जनियत द्रिशटि त्रियन की लागी । ताते ताहि म्रितु लै भागी ॥ १४ ॥ रानी शोक तवन को कियो । ता दिन अंन न पानी पियो । साच मर्‌यो जान्यो जिय ताकौ । भेद अभेद न पायो याकौ ॥ १५ ॥ जस तुम सुंदर याहि निहार्‌यो । भयो न है ह्वैहै न बिचार्‌यो । याकी बहिनि एक तिह घर मै । छाडि अयो जिह भ्रात नगर मै ॥ १६ ॥ मुहि तुम कहो तु तह मैं जाऊँ । वाकी खोजि बहिनि मैं ल्याऊँ । सो अति चतुरि सभन गुन आगरि । आणि दिखाऊँ तुहि न्रिप नागरि ॥ १७ ॥ भली भली सभ त्रिय बखानी । भेद अभेद गति किनूँ न जानी ।

सिर रख रही थी। तुम्हारी कृपा से मैंने मित्र पाया है। क्या बताऊँ कुछ कहा नहीं जाता ॥ १० ॥ अब कुछ ऐसा प्रपच किया जाय जिससे मित्र को हमेशा के लिए प्राप्त किया जा सके। उसके साथ हमेशा शयन किया जा सके और कोई भी इस रहस्य को जान न सके ॥ ११ ॥ उस स्त्री ने मन में ऐसा प्रपंच बनाया मैं अब उसे कहता हूँ सुनो। उसे घर में छिपा लिया और रानी से कहा ॥ १२ ॥ हे रानी ! तुमने जिस पुरुष की सराहना की थी वह विश्वनाथ भगवान को प्यारा हो गया। तुम इस सखी से सुन लो उसे मृत्यु प्राप्त हो गई है ॥ १३ ॥ हम सबने उसकी प्रशंसा की इससे भगवान ने बुला लिया। लगता है उसे औरतों की नज़र लग गई है; इसी से उसे मौत ले गई है ॥ १४ ॥ रानी ने बहुत शोक मनाया और उस दिन अन्न-जल कुछ भी ग्रहण नहीं किया। उसने रहस्य नहीं समझा और उसका मरना सच मान लिया ॥ १५ ॥ जैसा वह सुन्दर था, वैसा न तो हुआ है और न ही होगा। उसकी एक बहिन है जिसे वह भाई पीछे नगर में छोड़ आया है ॥ १६ ॥ तुम मुझे कहो तो मैं वहाँ जाऊँ और उसकी बहिन को खोज लाऊँ। वह अत्यन्त चतुर और गुणज्ञ है। मैं उसे लाकर तुम्हें दिखाती हूँ ॥ १७ ॥ सब स्त्रियों ने "ठीक ठीक" कहा और भेद अभेद कोई भी न समझ सकी उसे खर्च

खरची अधिक तवन कह दई। तत छिन करिकै बिदा पठई ॥ १८ ॥ (मू०ग्रं०१२३१) ॥ दोहरा ॥ बिदा भई बहु दरब लै गई कुअरि के धाम। आठ मास दुरि तह रही लखी न दूसर बाम ॥ १९ ॥ ॥ चौपई ॥ नवो मास चड़त जब भयो। ताकह भेस नारि को क्यो। लै रानी कह ताहि दिखायो। सभहिन हेरि हियो हुलसायो ॥ २० ॥ जो मै कहो सुनहु न्रिप नारी। इह सौपहु तुन अपनि दुलारी। राजा साथ न भेद बखानो। मेरो बचन सत्ति करि मानो ॥ २१ ॥ जो इस कौ राजा लहि लैहै। भूलि तिहारो धाम न ऐहै। लै याकौ करिहै निजु नारी। मुख बाएं रहि हो तुम प्यारी ॥ २२ ॥ भली कही तुहि ताँहि बखानी। त्रिय चरित्र गति किनूँ न जानी। तिह को भवन सुता के राखा। भेद न मूल न्रिपति तन भाखा ॥ २३ ॥ चहत हुती न्रिप सुता सु भई। इह छल सो सहचरि छलि गई। ताकह प्रगट धाम महि राखा। न्रिपहि भेद कोऊ त्रियहिन भाखा ॥ २४ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह चरित्र तिह चंचला लह्यो आपनो यार। सभ त्रिय मुख बाएँ रही सका न कोऊ बिचार ॥ २५ ॥ सुर

दिया और तत्काल विदा किया ॥ १८ ॥ ॥ दोहा ॥ वह विदा हुई और द्रव्य ले कुँवर के पास पहुँची। आठ महीने तक छुपी रही और दूसरी स्त्री को देखा तक नहीं ॥ १९ ॥ ॥ चौपाई ॥ नौवाँ महीना जब चढ़ा तो उस (पुरुष) का वेश नारी का बनाया। उसे लाकर रानी को दिखा दिया जिसे देखकर सभी प्रसन्न हो उठे ॥ २० ॥ हे राजा की स्त्रियो, जो मैं कह रही हूँ उसे सुनो, इसे तुम अपनी पुत्री को सौंप दो। राजा को बताना भी मत और मेरा कहना सत्य कर जानना ॥ २१ ॥ यदि राजा इसे देख लेगा तो भूलकर वह तुम्हारे घर भी नहीं आएगा। इसे अपनी स्त्री बना लेगा और तुम मुँह फाड़े देखती रहोगी ॥ २२ ॥ सबने कहा कि भला हुआ जो तुमने बता दिया। स्त्री के प्रपंच को कोई नहीं समझ सका। उसका पुत्री के घर पर रखा और राजा को तनिक भी भेद नहीं बताया ॥ २३ ॥ राजा की पुत्री जो चाहती थी वही हुआ और इस छल से उसने सब सखियों को छल लिया। उसको खुले आम घर में रखा और किसी भी स्त्री ने राजा को भेद नहीं बताया ॥ २४ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रपंच से उस स्त्री ने अपना प्रेमी पाया और सभी स्त्रियाँ मुख देखती रहीं कोई भी न जान सका २५ देव मुनि

मुनि नाग भुजंग सभ नर बपुरे किन माहि । देव अदेव त्रियान के भेद पछानत नाहि ॥ २६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ अठासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २८८ ॥ ५४७६ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ ननानवें चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ सुना शहिर बगदाद के दच्छिनसैन नरेस । दच्छिन दे ताके तरुनि रहत सु रति के भेस ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ कमलकेतु इक शाहु बसत तह । जा सम दूसर भयो न महि मह । तेजवान बलवान धरत्री । जाहिर चहूं ओर महि छत्री ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ जब रानी तिह कुअर को रूप बिलोका नैन । रही मगन ह्वै मैन मद बिसरि गई सुनि ऐन ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ चतुर सहचरी कुअरि हकारी । आनि कुअरि तन किअस जुहारी । चित को भेद सकल तिहँ दीयो । वाके तीर पठावन कीयो ॥ ४ ॥ बार न लगी सखी तह आई । आन कुअरि तन ब्रिथा जताई । को पर

नाग, मनुष्य आदि किस खेत की मूली हैं। बड़े-बड़े देव-दैत्य भी त्रियाओ के रहस्यों को नहीं पहचान सके ॥ २६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ अट्ठासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २८८ ॥ ५४७६ ॥ अफजूं ॥

दो सौ नवासीवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ बग़दाद का दक्षिणसेन राजा था। उसकी स्त्री दक्षिणदेवी रति-रूप में उसके साथ रहती थी ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ वहाँ कमलकेतु नामक एक धनी रहता था जिसके समान दूसरा कोई भी धरती पर नहीं था। वह तेजवान, बलवान अस्त्र-शस्त्रों को धारण करनेवाला चारों ओर प्रसिद्ध था ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ रानी ने जब उस कुँवर का रूप देखा वह कामाशक्त हो उठी और उसे घर की सुधि भी भूल गई ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसने एक चतुर दासी को बुलाया जिसने फ़ौरन् आ प्रणाम किया। उसे चित्त की समस्त बात कहकर उसे उस कुँवर के पास भेजा ॥ ४ ॥ ज़रा भी समय न बीता और सखी वहाँ आ पहुँची और उसने कुँवर को सब व्यथा कह सुनायी। तुम्हारे पर राजा की स्त्री अनुरक्त है। उसको इस लगन से उसका सारा

अटकत त्रिप तिय भई । छूटहु कसब लगन लगि गई ॥ ५ ॥ अब वह धाम क्रितारथ कीजै । इयाँ ते चलि वहि (मू०ग्रं०१२३२) ग्रहि पगु दीजै । उठहु कुअर जू बिलम न लैयै । राज तरुनि की सेज सुहैयै ॥ ६ ॥ जिह तिह बिध ताको मन लीना । आनि मिलाइ कुअरि कह दीना । भाँति भाँति तिन ताहि रिझायो । चारि पहर निसि भोग कमायो ॥ ७ ॥ केल करत निसि सकल बिहानी । करत काम की कोटि कहानी । भाँति भाँति के आसन करिकै । काम तपत सभ ही कह हरिकै ॥ ८ ॥ भोर भयो रजनी जब गई । भाँति भाँति चिरईं चुहचई । स्रमित भए दोऊ केल कमाते । एकहि सेज सोए रस माते ॥ ६ ॥ सोवत त्याग नींद जब जगे । मिलि करि केल करन तब लगे । आसन करत अनेक प्रकारा । कोकहूँ ते दस गुन बिसतारा ॥ १० ॥ केल कमात अधिक रस मातैं । भूलि गई घर की सुधि सातैं । चित अपनो अस किया बिचारा । प्रगट मित्र के साथ उचारा ॥ ११ ॥ सुनहु बात प्यारे तुम मेरी । दासी भई आजु मैं तेरी । मेरे तोट दरब को नाही । हम तुम आवहु कहूँ सिधाही ॥ १२ ॥ ऐसो जतन मित्र कछु करियै । अपने लै मुहि संग सिधरियै । अतिथ भेस

काम-काज छूट गया है ॥ ५ ॥ अब उस घर को कृतार्थ करो और यहाँ से चलकर वहाँ चरण डालो । हे कुँवर ! उठो और देर किये बिना राज-स्त्री की शय्या पर शोभायमान होइए ॥ ६ ॥ उसने जैसे-तैसे उसका मन जीता और रानी से आ मिलाया । उसे भाँति-भाँति से रिझाया और चार प्रहर रात तक उसके साथ रमण किया ॥ ७ ॥ केलिक्रीड़ा में सारी रात बीत गई और कामलीला की अनेकों कहानियाँ कही गयीं । विभिन्न प्रकार के आसन कर कामाग्नि को शान्त किया गया ॥ ८ ॥ प्रातः होने पर अनेकों चिड़ियों ने जब चहचहाना शुरू किया तो एक ही शय्या पर मदमस्त सोये दोनों को जगने की याद आयी ॥ ९ ॥ नींद त्यागकर जब वे जगे तो फिर मिलकर केलिक्रीड़ा करने लगे । वे अब कोक-वर्णित आसनों से भी दस गुना अधिक आसन करने लगे ॥ १० ॥ अधिक रसमग्न होकर केलि-क्रीड़ा करते हुओं को घर की सब सुधि भूल गई । उसने चित्त में विचार किया और मित्र को बताया ॥ ११ ॥ हे प्रिय, तुम मेरी बात सुनो, मैं तो तुम्हारी दासी हो गई हूँ । मेरे पास धन की कमी नहीं है, आओ हम तुम मिलकर कहीं निकल चलें ॥ १२ ॥ हे मित्र, कुछ ऐसा यत्न करो कि मुझे साथ लेकर कहीं चले चलो दोनो साधु-वेश

दोऊ धरि लैहै। इक ठाँ बैठ खजाना खैहै ॥ १३ ॥ जार कह्यो अबला सौ ऐसे। तुहि निकसे लै करि संगि कैसे। ठाढे इहाँ अनिक रखवारे। नभ के जात पखेरू मारे ॥ १४ ॥ जौ तुहि मुहि कौ त्रिपति तिहारै। दुहूँअन ठौर मारि कर डारै। ताते तुम अस करहु उपावै। मुर तुर भेद न दूसर पावै ॥ १५ ॥ सूर सूर करि गिरी तरनि धरि। जानुक गई साचु दैकै मरि। हाइ हाइ कह नाथ उचाई। बैद लए सभ निकटि बुलाई ॥ १६ ॥ सभ बैदन सौ त्रिपति उचारा। याको करहु कछू उपचारा। जाते रानी मरै न पावै। बहुरि हमारी सेज सुहावै ॥ १७ ॥ बोलत भी इक सखी सियानी। जन त्रिय की रति क्रिया पछानी। एक नारि बैदनी हमारे। जिह आगे क्या बैद बिचारे ॥ १८ ॥ जौ राजा तुम ताहि बुलावो। ताही तें उपचार करावो। रानी बचै बिलंब न लावै। बहुरि तिहारी सेज सुहावै ॥ १९ ॥ सोई बात राजै जब मानी। बोल पठाई वहै सयानी। जो तिन पुरख नारि करि भाखा। ताही कह बैदनि करि राखा ॥ २० ॥ (मू०ग्रं०१२३३) सखी तबै राजा पहि गई। ताहि तरुनि करि ल्यावत भई। जब तिन त्रिय को नारि

कर लेंगे और एक स्थान पर बैठकर खज़ाना खाते रहेंगे ॥ १३ ॥ यार ने स्त्री से कहा कि तुम्हें लेकर मैं कैसे निकलूँगा। यहाँ तो इतने पहरेदार है कि आसमान के पक्षी भी मार डाले जा रहे हैं ॥ १४ ॥ यदि राजा मुझे और तुम्हें देख लेगा तो उसी स्थान पर दोनों को मार डालेगा। इससे तुम ऐसा उपाय करो कि मेरे और तुम्हारे सिवा अन्य कोई न जाने ॥ १५ ॥ वह 'शूल-शूल'' कहकर धरती पर ऐसे गिर पड़ी मानों सच में ही मर गई हो। वह 'हाय-हाय' कहके अपने पति को पुकारने लगी और उसने सभी वैद्यों को पास बुला लिया ॥ १६ ॥ राजा ने सब वैद्यों से कहा कि इसका कुछ उपचार करो ताकि रानी बच जाए और मेरी शय्या की शोभा बढ़ाए ॥ १७॥ एक सयानी दासी, जो रानी की रतिक्रीडा को जानती थी, बोली कि हमारे यहाँ एक स्त्री वैद्य है, उसके सामने पुरुष वैद्य क्या है ॥ १८ ॥ राजन् ! आप उसी को बुलाएँ और उसी से उपचार कराएँ। रानी बच जायगी और पुनः तुम्हारी शय्या की शोभा बढ़ाएगी ॥ १९ ॥ राजा ने बात मानकर वही सयानी स्त्री बुलवा भी। उसी पुरुष को नारी-वेश पहनाकर वैद्य बनाकर रखा हुआ था २० दासियाँ सभी राजा के पास से गई और उसी तरुणी

निहारी । राजा सो इह भाँति उचारी ।। २१ ।। राज रोग रानी कह धरियो । जाति सिताबी दूरि न करियो । आठ बरिस लगि रहै जु कोई । याको दूरि दूख तब होई ।। २२ ।। सोई सत्ति न्रिपति करि मानी । जिह बिधि ता सो जार बखानी । ताके धाम बैदनी राखी । जो नर तें इसत्री करि भाखी ।। २३ ।। रैनि दिवस ताके सो रहै । भोग कबै तरुनी जब चहै । मूरख राव भेद नहि पायो । आठ बरिस लगि मूँड मुँडायो ।। २४ ।। ।। दोहरा ।। इह चरित्र तिन चंचला न्रिप कह छला सुधारि । आठि बरसि मित्रहि भज्यो सक्यो न मूढ़ बिचारि ।। २५ ।। १ ।।

।। इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ ननान्वें चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ।। २८९ ।। ५५०१ ।। अफजूं ।।

अथ दो सौ नब्बे चरित्र कथनं ।।

।। चौपई ।। पूरब देस एक न्रिप रहै । पूरबसैन नाम जग कहै । पूरब दे ताके घर नाही । जा सम लगत न देव कुमारी ।। १ ।। रूपसैन छत्री इक तहाँ । ता सम सुंदर कहूँ

को ले आयी । जब उसने रानी को देखा तो राजा से कहा ।। २१ ।। रानी को राजरोग है जो शीघ्र ही दूर नहीं होगा । आठ वर्ष तक यदि कोई (इलाज) करे तो यह दुख दूर होगा ।। २२ ।। उस यार ने जो कहा राजा ने वही सत्य मान लिया । उसके निवासस्थान पर वही वैद्य स्त्री रख दी जिसे पुरुष होते हुए भी स्त्री बताया गया था ।। २३ ।। रात-दिन वह वहीं रहता था और जब वह तरुणी चाहती थी, भोग-विलास करता था । मूर्ख राजा ने भेद नहीं समझा और आठ वर्ष तक मूर्ख बनता रहा ।। २४ ।। ।। दोहा ।। इस प्रपंच से उस स्त्री ने राजा को छला । आठ वर्ष तक मित्र से रमण किया जिसे वह मूर्ख नहीं समझ सका ।। २५ ।। १ ।।

।। श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ नवासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ।। २८९ ।। ५५०१ ।। अफजूं ।।

दो सौ नब्बेवाँ चरित्र-कथन

।। चौपाई ।। पूर्व देश में पूरबसेन नामक एक राजा रहता था । पूरबदेवी उसकी स्त्री थी देवकुमारियाँ भी उसके समान नहीं थी १

न कहाँ। अप्रमान तिह तेज बिराजै। नरी नागनिन को मनु लाजै ॥ २ ॥ राज तरुनि जब ताँहि निहारा। मन बच क्रम इह भाँति बिचारा। कैसे केल सु या संग करौ। नातर मारि कटारी मरौ ॥ ३ ॥ मित्र जानि इक हितू हकारी। ता प्रति चित की बात उचारी। कै इह मुहि तै देहि मिलाई। नातर मुहि न निरखिहैं आई ॥ ४ ॥ ॥ दोहरा ॥ कै सजनी मुहि मित्र कह अब ही देहु मिलाइ। नातर रानी म्रित कौ बहुरि निरखियहु आइ ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ जब इह भाँति उचारो रानी। जानि गई तब सखी सयानी। याकी लगन मित्र सौ लागी। ताते नींद भूख सभ भागी ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तनिक न लगी अवार सजन कै घर गई। बहु बिधि ताहि प्रबोधत तह ल्यावत भई। जह आगे त्रिय बैठी सेज डसाइकै। हो तही तवन कह हितू निकास्यो ल्याइकै ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ उठि करि कुअरि अलिंगन कियो। भाँति भाँति चुंबन तिह लियो। कामकेल रुचि मान कमायो। भाँगि अफीम शराब चढ़ायो ॥ ८ ॥ (मू०ग्रं०१२३४) जब मद करि मतवारा कियो। भुज तें पकरि सेज पर दियो। अधिक

वहाँ रूपसेन नामक एक क्षत्रिय था जिसके समान सुन्दर कोई नहीं कहा जाता था। उसका अपरिमित तेज देखकर मानव और नाग-स्त्रियाँ भी लज्जित होती थीं ॥ २ ॥ राजकन्या ने जब उसे देखा तो मन-वचन-कर्म से विचार किया कि या तो इससे किसी प्रकार केलिक्रीडा की जाय अथवा मैं कटार भोककर मर जाऊँ ॥ ३ ॥ मित्र मानकर उसने एक हितैषिणी को बुलाया और उसे अपने मन की बात कही। या तो मुझे इससे मिला दो अथवा तुम मुझे नहीं देखोगी ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ हे सजनी ! या तो मुझे मित्र से मिला दो अथवा आने पर तुम मुझे मृत देखोगी ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब रानी ने यह कहा तो सयानी सखी सब समझ गई। इसकी लगन मित्र से लग गई थी और इसकी नींद-भूख सब भाग गई थी ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ उसने तनिक भी देरी नहीं लगाई और सजन के घर चली गई और उसे विभिन्न प्रकार से मनाकर वहाँ को आयी। जहाँ स्त्री शय्या पर बैठी थी वहीं वह उस मित्र को ले आई ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ कुँवरि ने उठकर आलिंगन किया और भाँति-भाँति से चुंबन लिये। भाँग-अफ़ीम-शराब चढ़ाकर रुचिपूर्वक कामक्रीडा की ॥८॥ जब मद्य पीकर वह मतवाला हो गया तो उसे हाथ पकड़कर शय्या पर पटक लिया अधिक रुचिपूर्वक उसे गले से लगाया और उछल उछलकर

मानि रुचि गरे लगायो। उछरि उछरि करि भोग कमायो ॥ ९ ॥ एक तरुन दूसर मद मातो। तीसर भोग तरुनि के रातो। दुहूँअन मद्ध हार को मानै। चारहु बेद भेद इह जानै ॥ १० ॥ जब त्रिय तरुनि तरुन कह पावै। छिन छतिया ते छोरि न भावै। गहि गहि ताँकह गरे लगावै। चारि पहिर निसि भोग कमावै ॥ ११ ॥ भोग करत तरुनी बसि भई। पर की तें वाकी ह्वै गई। छिन इक छैल न छोर्यो जावै। छैलियहि यार छबीलो भावै ॥ १२ ॥ कोकसार के मतन उचारै। अमल पान करि द्रिढ़ रति धारै। आन पुरख की कानि न करहीं। भाँति भाँति के भोगन भरहीं ॥ १३ ॥ पोसत भाँग अफीम मँगावै। एक खाट पर बैठि चढ़ावै। हसि हसि करि कोऊ जाँघन लेही। राज तरुनि कौ बहु सुख देही ॥ १४ ॥ भोग करत निसि सकल बितावैं। सोइ रहै उठि केलि कमावैं। फिरि फिरि त्रिय आसन कह लेकं। भाँति भाँति कै चुंबन कैकै ॥ १५ ॥ भोग करत तरुनियहि रिझायो। भाँति अनिक तिन केल मचायो। इह बिधि हौ हसि ताहि उचारो। कहो जु तुम सौ सुनहु

रतिक्रीडा की ॥ ९ ॥ एक तो युवक, दूसरा मदमस्त और तीसरा वह तरुणी के साथ भोगानुरक्त था। चारों वेद अर्थात् समस्त ज्ञान यह मानता है कि अब भला दोनों में कौन हारनेवाला था ॥ १० ॥ जब तरुणी स्त्री तरुण पुरुष पा जाती है तो उसे क्षण भर भी छाती से अलग नहीं करती। पकड़-पकड़ उसे गले से लगाती है और सारी रात उसके साथ रमण करती है ॥ ११ ॥ संभोग करते-करते तरुणी वश में हो गई और परकीया से स्वीकीया हो गई। एक क्षण के लिए भी छैल छोड़ा नहीं जा रहा था और उस छैलिनी को वह छबीला मन भा रहा था ॥ १२ ॥ कोकसार के मतों को बोलते वे नशा पीकर दृढ़तापूर्वक रतिक्रीडा कर रहे थे। वे अब किसी की भी लज्जा नहीं मान रहे थे और विभिन्न प्रकार के लोगों से मन भर रहे थे ॥ १३ ॥ पोस्त, भाँग, अफ़ीम मँगाकर एक ही पलंग पर बैठे चढ़ा रहे थे। हँस-हँसकर दोनों जंघाओं को पकड़कर वह राजस्त्री को अत्यंत सुख दे रहा था ॥ १४ ॥ रतिक्रीडा में ही सारी रात बिताते थे और सोते से उठकर केलिक्रीडा करने लग जाते थे। बार-बार आसन और भाँति-भाँति के चुंबन लेकर ॥ १५ ॥ केलिक्रीडा करते हुए उसने तरुणी को रिझाया और अनेक प्रकार से प्रणय-लीला की तब उसने हँसकर उससे कहा कि हे

पयारो ॥ १६ ॥ जब तरुनी संग ब्रिड़ रति करी। भाँति भाँति के भोगन भरी। रीझि तरुनि इह भाँति उचारी। मित्र भई मैं दास तिहारी ॥ १७ ॥ अब जौ कहो नीर भरि ल्याऊँ। बार अनेक बजार बिकाऊँ। जे तुम कहो वहै मै करिहौ। और किसू ते नैकु न डरिहौ ॥ १८ ॥ मित्र बिहसि इह भाँति उचारा। अब मैं भयो गुलाम तिहारा। तो सी तरुनि भोग कह पाई। पूरन भई मोरि भगताई ॥ १९ ॥ अब इह बात चित मै मेरे। सो मैं कहत यार संग तेरे। अब कछु ऐस उपाव बनैयै। जाते तोकह सदा हंढैयै ॥ २० ॥ अब तुम ऐस चरित्र बनावहु। जाते मोहि सदा तुम पावहु। भेद दूसरो पुरख न पावै। लहै न स्वान न भूसन आवै ॥ २१ ॥ रानी सुनी बात ऐसी जब। बचन कहा हसि करि पिय सौ तब। रोम नास तुम बदन लगावहु। सकल नारि को भेस बनावहु ॥ २२ ॥ रोमांतक (मू०ग्रं०१२३५) रानियहि मगायो। ताके बदन सार लै लायो। सभ ही केस दूरि जब भए। ताकह बस्त्र नारि के दए ॥ २३ ॥ बीना दई कंध ताकै पर। सुनन नमिति राखयो ताको घर। जब राजा ताके ग्रहि आवै।

प्यारे! तुम मेरी बात सुनो ॥ १६ ॥ जब तरुणी के साथ दृढ़तापूर्वक रतिक्रीडा भाँति-भाँति के भोगों से भरी हुई की, तब तरुणी ने कहा कि हे मित्र! मैं तुम्हारी दासी हो गई हूँ ॥ १७ ॥ अगर कहो तो तुम्हारा पानी भरूँ या तुम्हारे लिए हज़ारों बार बाज़ार में बिक जाऊँ। तुम जो कहो मैं वही करूँगी और किसी से तनिक भी नहीं डरूँगी ॥ १८ ॥ मित्र ने भी हँसकर कहा कि मैं अब तुम्हारा ग़ुलाम हो गया हूँ। तुम्हारी जैसी तरुणी को मैंने भोग के लिए पाया है, समझो मेरी भक्ति पूर्ण हो गई है ॥ १९ ॥ मेरे चित्त में एक बात है जो हे प्रिय! मैं तुमसे कहता हूँ। अब कुछ ऐसा उपाय बनाओ जिससे मैं सदैव तुम्हारा उपभोग करूँ ॥ २० ॥ अब तुम कुछ ऐसा प्रपंच बनाओ जिससे तुम हमेशा पाती रहो। दूसरा कोई भी पुरुष भेद न जाने क्योंकि न कुत्ता देखे न भौंकने दौड़े ॥ २१ ॥ रानी ने जब यह बात सुनी तो हँसकर प्रिय से कहा कि बालनाशक दवा तुम अपने शरीर में लगाओ और पूर्ण रूप से नारी का वेश धारण कर लो ॥ २२ ॥ रानी ने बालनाशक दवा मँगाई और उसके सारे शरीर पर लगा दी। जब उसके सब बाल नष्ट हो गये तो उसे स्त्री के वस्त्र दिये ॥ २३ ॥ उसने उसके कंधे पर वीणा रखवा दी और उसे सुनने के लिए घर पर ही रख लिया जब राजा उसके घर आता तो उस

तब तंत्री सौ बैठि बजावै ॥ २४ ॥ राज बीन सुनि त्रिय तिह मानैं । पुरख वाहि इसत्री पहिचानैं । ताको हेरि रूप ललचाना । घर बाहर तजि भयो दिवाना ॥ २५ ॥ इक दूती तब राइ बुलाइसि । अधिक दरब दै तहाँ पठाइसि । जब रानी ऐसे सुनि पाई । बचन कहा तासो मुसकाई ॥ २६ ॥ जिनि तोको राजा यह बरै । हम सो नेहु सकल तजि डरै । मैं अपने संग लै तुहि स्वैहों । चित के सकल शोक कह खवैहों ॥ २७ ॥ जो तापहि त्रिप सखी पठावै । सो चलि तीर तवन के आवै । रानी के संग सोत निहारै । इह बिधि त्रिप सो जाइ उचारै ॥ २८ ॥ रानी त्रिपति भेद लख गई । ताते वहि छोरत नहि भई । अपने संग ताहि लै सोई । हमरो दाव न लागत कोई ॥ २९ ॥ जब इह भाँति त्रिपति सुनि पावै । तह तिह आपु बिलोकन आवै । त्रिय सो सोत जार को हेरै । निहफल जाइ तिनै नहि छेरै ॥ ३० ॥ माथो धुन्यो त्रिपति यौ कहियो । हमरो भेद रानियहि लहियो । ताते याहि संग लै सोई । मेरी घात न लागत कोई ॥ ३१ ॥ उन रानी ऐहो तब कीयो । भेद भाखि सखियन सभ दीयो । जो इह सोत

तन्त्री-वादक से बजवाया जाता ॥ २४ ॥ राजा उसकी वीणा सुनकर उसे स्त्री मानता और वह स्त्री (राजा की स्त्री) उसे पुरुष जानती थी। राजा उसका रूप देखकर ललचा गया और घर-बाहर (का ख्याल) छोड़कर दीवाना हो गया ॥ २५ ॥ राजा ने एक दूती को बुलाया और उसे बहुत सा धन देकर वहाँ भेजा। जब रानी ने यह सुना तब उससे मुस्कुराकर कहने लगी ॥ २६॥ कहीं ऐसा न हो कि यह राजा तुम्हारा वरण कर ले और मुझसे स्नेह त्याग दे। मैं तुम्हें साथ लेकर सोऊँगी और चित्त का शोक नष्ट करूँगी ॥ २७ ॥ राजा उसके पास जिस दासी को भेजता था, वह आती और उसे रानी के साथ शयन करते देखकर राजा से कह देती ॥ २८ ॥ रानी राजा का आशय समझ गई है और इसी से उसे नहीं छोड़ रही है। वह उसे अपने साथ लेकर सो रही है और मुझे अवसर हाथ नहीं लग रहा है ॥ २९ ॥ जब राजा यह सुनता तो स्वयं देखने आता। वह स्त्री के साथ यार को सोए देखता पर वह उसे न छेड़ता और उसका प्रयत्न बेकार जाता ॥ ३० ॥ राजा ने माथा धुना और कहा कि रानी को मेरा भेद पता लग गया है। तभी यह उसे साथ ले सो रही है और मुझे मौक़ा नहीं लग रहा है ॥ ३१ ॥ तब उस रानी ने ऐसा किया कि सब दासियों को भेद बता दिया कि राजा यदि इसे अन्यत्र सोता पायगा तो

अनत त्रिय पावै । पकरि भोगबे काज मँगावै ॥ ३२ ॥ मैं सोवत ताले इह संगा । अपने जोर अंग सो अंगा । भली भली इसत्रिन सभ भाखी । ज्यों त्यों नारि नाह ते राखी ॥ ३३ ॥ दिन देखत रानी तिह संगा । सोवत जोर अंग सो अंगा । मूरख राव भेद नहि पावै । कोरो अपनो मूँड मुँडावै ॥ ३४ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ नव्वे चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २९० ॥ ५५३५ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ इक्यानवो चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ पछिमावती नगर इक सोहै । पसचिम सैन न्रिपति तह को है । पसचिम दे रानी ताके घर । रहत पंडिता सकल लोभि करि ॥ १ ॥ अधिक रूप रानी को रहै । जग तिह दुतिय चंद्रमा कहै । ता पर रीझि न्रिपति की भारी । जानत ऊच नीचि पनिहारी ॥ २ ॥ (मू०ग्रं०१२३६) तह इक हुतो राइ दिलवाली । जानक दूसर साहै माली । मो पहि जात न प्रभा बखानी । उरझि रही दुति हेरत रानी ॥ ३ ॥ तासौ

इसके साथ रतिक्रीडा करने के लिए इसे पकड़ मँगाएगा ॥ ३२ ॥ इसीलिए मैं इसके अंगों के साथ अंग जोड़कर सो रही हूँ । सब स्त्रियों ने "ठीक, ठीक" कहा और जैसे-तैसे उस स्त्री को राजा से बचाया ॥ ३३ ॥ अब दिन-दहाड़े रानी उसके अंगों से अंग जोड़कर सोती थी । मूर्ख राजा रहस्य नहीं समझ पा रहा था और अपना सिर मुँड़वा रहा था ॥ ३४ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ नव्वेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २९० ॥ ५५३५ ॥ अफजूं ॥

दो सौ इक्यानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ पश्चिमावती नामक नगर में पश्चिमसेन नामक एक राजा था । उसकी रानी पश्चिमदेवी थी जिसे देखकर सभी विद्वद्गण ललचाया करते थे ॥ १ ॥ रानी अत्यधिक रूपवान थी और संसार उसे जगत में दूसरा चन्द्रमा मानता था । सभी लोग जानते थे कि राजा उस पर अधिक मोहित है ॥ २ ॥ वहाँ दिलवाली राय था जो हिमालय की तरह शोभायमान था मुझसे उसकी प्रभा का बखान नहीं किया जाता रानी उसकी छवि

अधिक सनेह् बढायो । एक दिवस ग्रहि बोलि पठायो । सो तब ही सुनि बच पहु गयो । भेटत राजकुअरि कह् भयो ॥ ४ ॥ पोसत भाँग अफीम मँगाई । एक सेज पर बैठि चढाई । जब मद सो मतवारे भए । तब ही शोक बिसरि सभ गए ॥ ५ ॥ एक सेज पर बैठि कलोलहि । रस की कथा रसिक मिलि बोलहि । चुंबन और अलिगन करहीं । भाँति भाँति के भोगन भरहीं ॥ ६ ॥ रानी रमत अधिक उरझाई । भोग गए दिलबाली राई । चित अपनै इह भाँति बिचारो । मैं याही के संग सिधारो ॥ ७ ॥ राज पाट मेरे किह् काजा । मोकह् नहीं सुहावत राजा । मैं साजन के साथ सिधैहो । भली बुरी सिर माँझ सहैहो ॥ ८ ॥ जहा सिंघ मारत बन माही । सुना देहुरा एक तहाँ ही । चड़ि झंपान तिह् और सिधाई । मित्रहि तही सहेट बताई ॥ ९ ॥ महाँ गहिर बन मै जब गई । लघु इच्छा कह् उतरत भई । तह ते गई मित्र के संगा । छित मै डारि स्रोण के रंगा ॥ १० ॥ जब मित्र साथ सजन के गई । तब अस सखी पुकारत भई । लए सिंघ रानी कह् जाई । कोऊ आनि लेहु छुटकाई ॥ ११ ॥

देखकर उसमें उलझ गई ॥ ३ ॥ उससे अत्यधिक स्नेह बढ़ाया और एक दिन उसे घर बुलाया । वह वचन सुनकर तुरन्त गया और राजकुँवरि से मिला ॥४॥ पोस्त, भाँग, अफ़ीम मँगाई गई और एक ही पलंग पर बैठकर पी गई । जब मदमस्त हो गये तो सभी दुःख विस्मृत हो गये ॥ ५ ॥ वे एक शय्या पर बैठकर किल्लोल करने लगे और मिलकर रस की कथा-वार्ता कहने लगे । चुंबन और आलिंगन करते हुए वे विभिन्न प्रकार के भोग-विलास करने लगी ॥ ६ ॥ रानी दिलवाली राय से रमण करते अत्यधिक अनुरक्त हो गई । उसने मन में सोचा कि मैं इसी के साथ चली जाऊंगी ॥ ७ ॥ राजपाट मेरे किस काम का है । मुझे राजा अच्छा नहीं लगता है । मैं तो सजन के साथ ही जाऊँगी और भला-बुरा जो होगा सहूँगी ॥ ८ ॥ जहाँ वन में शेर आदि हैं, सुना है वहाँ एक मंदिर था । पालकी में सवार हो वहाँ चली गई और मित्र को भी वहाँ बुला लिया ॥ ९ ॥ जब घोर वन में पहुँची तो लघुशंका के लिए पालकी में से उतरी । वहाँ से वह मित्र के साथ चली गई और धरती पर उसने रक्त जैसा रंग फैला दिया ॥ १० ॥ जब वह सजन के साथ चली गई तो स्त्रियाँ इस प्रकार चिल्लाने लगीं— शेर रानी को ले जा रहा है, कोई आकर छुड़ा दो ॥ ११ ॥ शूरों ने शेर का नाम सुना और भयभीत हो उठे । उन्होंने

उत्तरहि द्यावै । झूम झूमि झट दै छिति झरै । बार बार पिय शबद उचरै ॥ ४ ॥ अदभुत हेरि राइ ह्वै रहै । सखियन सौ ऐसी बिधि कहै । या अबला कौ कस ह्वै गयो । जाते हाल ऐस इह भयो ॥ ५ ॥ याकौ कौन जतन अब करै । जाते यह रानी नहि मरै । जो वह माँगै सो मैं दैहौ । रानी निमिति करवतहि लैहौ ॥ ६ ॥ सिर करि तिह आगै जल भरौ । बार बार ताके पग परौ । जो रानी का रोग मिटावै । रानी सहित राज कह पावै ॥ ७ ॥ जो रानी का रोगु मिटावै । सो नर हम कह बहुरि जियावै । अरध राज रानी जुत लेई । एक रात्रि हम कह त्रिय देई ॥ ८ ॥ एक दिवस वहु राज करावै । रानी के संग भोग कमावै । दूसर दिन हम राज कमावहि । लै अपनी इसत्रियहि बजावहि ॥ ९ ॥ जब बहु बिधि न्रिप ऐस उचरा । सहचरि एक जोर दोऊ करा । यौ राजा सौ बचन उचारे । सु मैं कहत हौ सुनहु पयारे ॥ १० ॥ एक बैद तुम ताहि बुलावौ । ताँते इह उपचार करावो । सो छिन मै याको दुख हरिहै । रोगनि तें सु अरोगिनि करिहै ॥ ११ ॥ जब राजे ऐसे सुनि पावा ।

न कहकर किसी से उत्तर कहलवा देती थी । झूम-झूमकर वह धरती पर गिर पड़ती थी और बार-बार "प्रिय-प्रिय" शब्द का उच्चारण किया करती थी ॥ ४ ॥ राजा यह देखकर हैरान रह जाता था और दासियों को कहता था कि इस रानी को क्या हो गया है, जिससे इसका ऐसा हाल हो गया है ॥५॥ कौन ऐसा प्रयत्न कर सकता है जिससे यह रानी न मरे । जो कोई माँगेगा मैं वही दे दूंगा और रानी के लिए करवत ले लूँगा ॥ ६ ॥ इसके लिए सिर पर पानी भरूँगा और बार-बार उसके पैर पड़ूँगा । जो रानी का रोग मिटा देगा उसे मैं रानी-समेत राज्य दे दूंगा ॥ ७ ॥ जो रानी का रोग मिटा देगा समझ लो वह मुझे पुनः जीवित करेगा । एक रात के लिए यह स्त्री ठीक करके मुझे दे दे तो रानी-समेत आधा राज दे दूँगा ॥ ८ ॥ एक दिन के लिए वह राज करे और रानी के साथ रमण करे । दूसरे दिन राज हम ले लेंगे पर, स्त्री उसकी कहलाएगी ॥ ९ ॥ जब राजा ने इस प्रकार बहुत बार कहा तो एक दासी ने हाथ जोड़कर जो कहा, हे प्रिय, वह मैं कहता हूँ ॥ १० ॥ तुम एक वैद्य बुलाओ और उससे इसका इलाज कराओ । वह क्षण में इसका रोग दूर कर इसे नीरोग कर देगा ॥ ११ ॥ जब राजा ने यह सुना तो तत्काल उसे बुला मँगाया । रानी की नाड़ी देखकर सुखदायक वैद्य

तत छिन ताकह बोलि पठावा । रानी की नाटिका दिखाई । बोला बैद देखि सुखदाई ॥ १२ ॥ दुख जौनै इह तरुनि दुखाई । सो दुख तुम सो कह्यो न जाई । जान माफ हमरी जो कीजै । पाछे बात सकल सुनि लीजै ॥ १३ ॥ या रानी कह काम सँतायो । तुम नहि इह संग भोग कमायो । ताते याहि रोग गहि लीना । हम ते जात उपाव न कीना ॥ १४ ॥ यह मद मस्त मैन त्रिय भरी । तुम क्रीड़ा इह साथ न करी । अब यह अधिक भोग जब पावै । याको सोग दूर ह्वै जावै ॥ १५ ॥ इह तुम तब उपचार करावो । बचन हाथ मोरे पर द्यावो । जब इह दुख मैं दूर कराऊँ । अरध राज रानी जुत पाऊँ ॥ १६ ॥ भली भली राजै तब भाखी । हमहूँ इह हिरदै मथि राखी । प्रथम रोग तुम याहि मिटावो । अरध राज रानी जुत पावो ॥ १७ ॥ प्रथमहि बचन त्रिपति ते लिया । पुनि उपचार (मू०ग्रं०१२३८) तरुनि को किया । भोग कियो त्रिय रोग मिटायो । अरध राज रानी जुत पायो ॥ १८ ॥ अरध राज इह छल तिह दियो । रानी भोग मित्र संग कियो । मूरख नाह नाहि छल पायो । प्रगट आपनो मूँड मुँडायो ॥ १९ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल रानी

बोला ॥ १२ ॥ जिस दुख से यह तरुणी दुखी है वह दुख तुमसे कहा नहीं जा सकता । पहले मुझे प्राणदान दो तब मेरी बात सुन लो ॥ १३ ॥ यह रानी कामासक्त है और तुमने इसके साथ रतिक्रीडा नहीं की है । इसी से इसे रोग ने पकड़ लिया है । मुझसे अब इसका उपाय नहीं किया जाता ॥ १४ ॥ यह स्त्री तो भयानक रूप से मदमस्त है और काम से पूर्ण है । तुमने इसके साथ रतिक्रीडा नहीं की है । अब जब यह अधिक भोग ली जायगी तो इसका कष्ट दूर हो जायगा ॥ १५ ॥ तुम मुझे वचन देकर इसका यही उपचार कराओ । जब मैं इसका यह दुख दूर कर दूँ तभी रानी-समेत आधा राज्य प्राप्त करूँगा ॥ १६ ॥ राजा ने 'ठीक-ठीक' कहकर कहा कि मैंने भी हृदय में यही सोच रखा है । पहले तुम इसका रोग नष्ट करो और फिर रानी-समेत आधा राज्य प्राप्त करो ॥ १७ ॥ पहले राजा से वचन लिया और फिर तरुणी का उपचार किया । रमण करके स्त्री का रोग मिटा दिया और रानी समेत आधा राज्य प्राप्त किया ॥१८॥ छल से उसे आधा राज (स्त्री ने दिला) दिया और मित्र के साथ रानी ने रमण भी किया । मूर्ख पति (रहस्यपूर्ण) छल को नही समझ सका और प्रकट मे ठगा गया १९ दोहा इस

त्रिप छला रमी मित्र के साथ । अरध राज ताको दिया भेद न पायो नाथ ॥ २० ॥ ॥ चौपई ॥ इह बिधि अरध राज तिह दीयो । मूरख पति कह असि छलि लीयो । इक दिन रनियहि जार बजावै । अरध राज तिह आप कमावै ॥ २१ ॥ इक दिन आवै त्रिप के धामा । इक दिन भजै जार कौ बामा । इक दिन राजा राज कमावै । जार छत्र दिन दुतिय ढरावै ॥ २२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ बानवें चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २९२ ॥ ५५७१ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ तरानवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ राजपुरी नगरी है जहाँ । राजसैन राजा इक तहाँ । राजदई ताके ग्रहि नारी । चंद्र लई जाते उजियारी ॥ १ ॥ त्रिप सौ अति त्रिय को हित रहै । सोई करत जु रानी रहै । और नारि के धाम न जावै । अधिक नार के त्रास त्रसावै ॥ २ ॥ रानी की आग्या सभ मानैं ।

छल से रानी ने राजा को छला और मित्र के साथ रमण किया । उसे आधा राज दे दिया और उसका स्वामी उसका रहस्य न जान सका ॥ २० ॥ ॥ चौपाई ॥ इस प्रकार आधा राज उसे दे दिया और मूर्ख पति को छला । एक दिन यार रानी के साथ रमण करता और आधा राज करता ॥ २१ ॥ एक दिन वह राजा के घर आती और एक दिन वह स्त्री उस यार द्वारा भोगी जाती थी । एक दिन राजा राज करता था और दूसरे दिन वह यार छत्र झुलाता था ॥ २२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ बानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २९२ ॥ ५५७१ ॥ अफजूं ॥

दो सौ तिरानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ राजपुरी नगरी में राजसेन राजा था । उसके घर मे राजदेवी रानी थी जिससे चन्द्रमा ने उजाला लिया था ॥ १ ॥ स्त्री का राजा से अत्यन्त स्नेह था और वह भी जो वह स्त्री कहती थी वही करता था । वह अन्य स्त्रियों के घर नहीं जाता था और उस स्त्री से सभी भयभीत रहते थे ॥ २ ॥ सभी रानी की आज्ञा मानते थे और राजा को कुछ नहीं

राजा को करि कछू न जानै। मार्यो चहत नारि तिह मारै। जिह जानै तिह प्रान उबारै ॥ ३ ॥ बेस्वा एक ठौर तिह आई। तिह पर रहे न्रिपति उरझाई। चहत चित्त महि ताहि बुलावै। निजु नारी कै त्रास त्रसावै ॥ ४ ॥ जब रानी ऐसे सुनि पाई। इहै चित्त अपने ठहराई। जो मैं धाम जार के जाऊँ। न्रिपन कहै कछु साफ कराऊँ ॥ ५ ॥ रैनि समै जब तह न्रिप आए। इह बिधि रानी बचन सुनाए। मो ते ताहि सुंदरि तिह जानौ। जासो प्रीति राइ तुम ठानो ॥ ६ ॥ ताते अधिक रोख मुहि भयो। बेस्वा के राजा ग्रहि गयो। इह अपनी भगनियहि न भजो। मो सो प्रीति नतर तुम तजो ॥ ७ ॥ जौ तुम बेस्वा के ग्रहि जैहो। काम भोग तिह साथ कमैहो। तब मै धाम जार के जैहो। तेरे फूलि डारि सिर ऐहो ॥ ८ ॥ प्रथम बात मुहि यह लिखि (मू०ग्रं०१२२१) द्यावहु। जिह जानहु तिह बहुरि बुलावहु। जिह चाहै तिह हौहूँ बुलावौ। काम केल तिह साथ कमावौ ॥ ९ ॥ जब इह भाँति सुने न्रिप बैना। जोरि रहा नैनन सो नैना। चुप ह्वै रहा कछू नहि कह्यो। तवन भेद इसवौ इन लह्यो ॥ १० ॥ मोरी लगन

समझते थे। रानी जिसे मारना चाहती थी मार देती थी और जिसे चाहती थी उसे छोड़ देती थी ॥ ३ ॥ वहाँ एक वेश्या आई जिस पर-राजा आसक्त हो गया। वह अब जिसे चाहता था बुलाता था और अपनी स्त्रियों को दुखी करता था ॥ ४ ॥ जब रानी नें यह सुना तो मन में निर्णय किया कि यदि मैं अपने किसी यार के घर जाया करूँ तो राजा की इस आदत को कुछ कम करूँगी ॥ ५ ॥ रात को जब राजा वहाँ आया तो रानी ने कहा कि तुम उस स्त्री को मुझसे भी अधिक सुन्दर जानते हो जिसके साथ प्रेम करते हो ॥ ६ ॥ मुझे इस कारण अत्यधिक क्रोध हुआ है कि राजा वेश्या के घर जाता है। इस अपनी बहन (वेश्या) के साथ प्रेम मत करो अन्यथा मेरे साथ प्रेम का त्याग करो ॥ ७ ॥ यदि तुम वेश्या के घर जाकर उसके साथ रति-क्रीड़ा करोगे तो मैं भी अपने यार के घर जाऊँगी और उसके साथ कामलीला कर तुम्हारे सिर पर मिट्टी डालूँगी ॥ ८ ॥ पहले तुम मुझे यह लिख दो और फिर जिसे चाहो बुलाओ। तुम जिसे चाहो बुलाओ और काम-क्रीडा करो ॥ ९ ॥ राजा ने जब यह बात सुनी तो उसकी आँखों से आँखें मिलाईं। वह चुप रहा और समझने लगा कि इस स्त्री को रहस्य का पता लग गया है १० मेरी लगन उधर लग गई है तभी इस रानी ने ऐसा सोचा

उतै लगि गई । तब रानी असि बात उटई । ताको करियै कवन उपाई । मुहि ते तजी न बेस्वा जाई ॥ ११ ॥ अब यह बात रानियहि गही । जोरि प्रीति बेस्वा संग लही । वा बिनु मोसौ रह्यो न जाई । ताहि भजे कर ते त्रिय जाई ॥ १२ ॥ जब न्रिप फिरि रानी के आयो । तब रानी इह भाँति सुनायो । तुहि बेस्वा के ग्यो सुनि पैहौ । तब मैं भोग जार सौ कैहौ ॥ १३ ॥ अब तुम ह्वै न्रिधात पिय गए । ताते सुत ग्रिहि होत न भए । जब भजि है जु लोग इह बामा । ह्वैहै पूत तिहारो धामा ॥ १४ ॥ तब राजै यौ ह्रिदै बिचारी । भली बात रानियहि उचारी । ताकौ भोग माफ लिखि दीयो । आप गवन बेस्वा के कीयो ॥ १५ ॥ जब राजा बेस्वा के जावै । जिह चाहै तिह नारि बुलावै । काम भोग तो सौ द्रिड़ करई । ह्रिदै न्रिपति की शंक न धरई ॥ १६ ॥ रानी बेस्वहि आपु बुलायो । इह छल राजा तो लिखिवायो । जिह चाहै तिह बोलि पठावै । काम भोगि रुचि मानि कमावै ॥ १७ ॥ मूरख भेद न राजै पायो । इह

इसका कुछ उपाय किया जाय, मुझसे तो वेश्या छोड़ी नहीं जायगी ॥ ११ ॥ रानी ने यह बात पकड़ ली है और वेश्या के साथ मेरी प्रीति पकड़ ली है। मुझसे उसके बिना रहा नहीं जायगा और उसके साथ रमण करता हूँ तो मेरी स्त्री हाथ से जाती है ॥ १२ ॥ जब राजा फिर रानी के पास आया तब रानी ने फिर कहा कि तुम्हें वेश्या के पास जाते हुए यदि मैंने सुना तो मैं अपने यार के साथ रमण करूँगी ॥ १३ ॥ हे प्रिय, अब तुम वीर्य-विहीन हो गए हो, इसी से तुम्हारे घर में पुत्र उत्पन्न नहीं हो रहे हैं। जब तुम्हारी इस पत्नी से लोग रतिक्रीड़ा करेंगे तभी तुम्हारे घर में पुत्र पैदा होगा ॥ १४ ॥ तब राजा ने सोचा कि रानी ने तो ठीक ही कहा है। उसे पर-पुरुष-भोग माफ कर दिया और स्वयं वेश्या के यहाँ चला गया ॥ १५ ॥ जब राजा वेश्या के पास गया तो स्त्री मन-मरज़ी से पुरुषों को बुलाने लगी। तब वह उनसे कामक्रीड़ा करती थी और हृदय में राजा की तनिक भी शंका नहीं करती थी ॥ १६ ॥ रानी ने वेश्या को स्वयं बुलाया था और छलपूर्वक राजा से वचन लिखवा लिया था। वह जिसे चाहती थी बुला लेती थी और रुचिपूर्वक काम क्रीडा करती थी । १७ मूर्ख राजा रहस्य न समझा और छला गया

छल अपनो मूँड मुडायो । अबला ऐसो चरित बनयो पति ते भोग माफ करि लयो ॥ १८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ तरानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २९३ ॥ ५५८९ ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ चुरानवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ अनदावती नगर इक सुना । आनदसैन न्रिपति बहु गुना । अनदावती सदन तिह बाला । जगत भयो ताते उजियाला ॥ १ ॥ अधिक रूप बिधिना तिह कीना । जा सम रूप न दूसर दीना । आयो पुरख एक तब बनो । रानी ते सुंदरि थो घनो ॥ २ ॥ जब अबला तिह रूप निहारा । मदन बान ताके तन मारा । रीझि रही सुंदरि मन माही । घर बाहर की कछु सुधि नाही ॥ ३ ॥ पठै हितू इक ताहि बुलावा । काम भोग तिह साथ कमावा । मन मानत आसन (मू०ग्रं०१२४०) तिह दए । चुंबन और अलिंगन लए ॥ ४ ॥ अधिक मित्र रानी कह भायो । इह बिधि ताहि प्रबोध जनायो । कहा उजारि जहाँ बड अहीं । आसन लाइ

स्त्री ने ऐसा प्रपंच किया कि पति से पर-पुरुष-भोग की माफ़ी लिखवा ली ॥ १८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ तिरानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २९३ ॥ ५५८९ ॥ अफजूँ ॥

दो सौ चौरानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ आनन्दावती नामक एक नगर में आनन्दसेन नामक एक राजा था । उसके घर में आनन्दावती नामक पत्नी से मानों सारा संसार प्रकाशित था ॥१॥ विधाता ने उसे अत्यधिक रूप दिया था और उसके समान अन्य कोई नहीं था । तब एक पुरुष आया जो रानी से भी सुन्दर था ॥ २ ॥ जब उस स्त्री ने उसका रूप देखा तो वह काम-बाण से बिंध गई । सुन्दरी मोहित हो उठी और उसे घर-बाहर की सुधि भूल गई ॥ ३ ॥ एक हितैषी भेजकर उसे बुलाया और कामक्रीड़ा की । चुंबन और आलिंगन लेकर उसे मनमाने आसन प्रदान किये ॥ ४ ॥ रानी को वह मित्र बहुत अधिक भा गया और उसने उससे कहा कि जहाँ घना उजाड़ है तुम वहाँ आसन लगाकर

बैठियो तहीं ॥ ५ ॥ सभ ही अंग बिभूति दड़ैयहु । द्रुम तर बैठे ध्यान लगैयहु । राजा सहित तहाँ हम ऐहैं । तुमैं धाम ज्यों त्यों लै जैहैं ॥ ६ ॥ मानि जार सोई बच लयो । भेख अतिथ को धारत भयो । आसन एक ब्रिच्छ तर मारा । यौ राजा सौ नारि उचारा ॥ ७ ॥ सोवत हुती सुपन मैं पायो । महाँ रुद्र मेरे ग्रहि आयो । पाव साथ तिन मोहि जगायो । अधिक क्रिपा करि बचन सुनायो ॥ ८ ॥ तुम राजा जू साथ उचरियहु । एक बात चित भीतरि धरियहु । एक रखीसुर बन महि सुना । ता सम भयो न है कहूँ मुना ॥ ९ ॥ राजा सहित जाइ तिह ल्यैयहु । द्वादस बरख संग लै स्वैयहु । निहसंसै घर मै सुत होई । या मै बात न दूजी कोई ॥ १० ॥ महाँ जती तिह मुनि को जानहु । कहूँ न बिनसा ताहि पछानहु । रंभादिक इसत्री पहिचानी । ब्रत ते टरा न रिखि ब्रतधारी ॥ ११ ॥ हम तुम साथ तहाँ दोऊ जावैं । ज्यों त्यों मुनहि पाइ पर ल्यावैं । बारह बरिस मोरि संग स्वावहु । निहसंसै घर मै सुत पावहु ॥ १२ ॥ सुनि बच न्रिप उठि ठाढो भयो । रानी सहित तवन बन गयो । जह छ्वै ब्रिछ गगन तन रहे । घोर भयानक जात न कहे ॥ १३ ॥ रानी सहित राव

बैठो ॥ ५ ॥ तुम सभी अंगों पर भभूत लगाकर पेड़ के नीचे बैठकर ध्यान लगाना । मैं राजा समेत वहाँ आऊँगी और जैसे-तैसे तुम्हें घर ले जाऊँगी ।।६।। मित्र ने कहना मानकर वही किया और फ़क़ीर का वेश धारण कर लिया । एक पेड़ के नीचे आसन जमा दिया और इधर उस स्त्री ने राजा से कहा ।।७।। सोते में मैंने सपने में देखा है कि महारुद्र मेरे घर आए हैं । उन्होंने पाँव के साथ मुझे जगाया है और अत्यधिक कृपापूर्वक कहा ।।८।। तुम मन में यह बात रखकर राजा से कहो कि एक ऋषि वन में सुनने में आया है, उसके समान अन्य कोई मुनि नहीं है ।। ९ ।। राजा-सहित जाकर उसे लाओ और बारह वर्ष तक उसके साथ शयन करो । अवश्य तुम्हारे घर में पुत्र उत्पन्न होगा । इसमें कोई संदेह नहीं है ।। १० ।। उस मुनि को महायती तथा कभी न नष्ट होनेवाला जानो । रम्भा आदि स्त्रियाँ भी प्रयत्न कर हार गई हैं, परन्तु वह व्रती अपने व्रत से नहीं टला ।। ११ ।। हम-तुम दोनों वहाँ चलें और जैसे-तैसे मुनि के चरण पकड़ उसे यहाँ ले आएँ । उसे बारह वर्ष तक मेरे साथ शयन कराओ और निस्संदेह पुत्र प्राप्त करो ।। १२ ।। बात सुनकर राजा उठ खडा हुआ और रानी-समेत उस वन मे गया जहा भयानक वृक्ष को छू रहे

तह गयो। हेरत तवन मुनीसहि भयो। नारि सहित पाइन तिह परियो। चित मै इहै बिचार बिचरियो ॥ १४ ॥ जो शिव सुपन समैं कहि गयो। सो हम साचु द्रिगन लहि लयो। ज्यों त्यों करि इह ग्रहि लै जाऊँ। लै रानी के साथ सुवाऊँ ॥ १५ ॥ ज्यों ज्यों न्रिप पाइन पर परै। त्यों त्यों मुनि आँखैं न उघरै। त्यों राजा सीसहि निहुरावै। ताकह महाँ मुनी ठहरावै ॥ १६ ॥ जब न्रिप अनिक बार पग परा। तब आँखैं मुनि दुहूँ उघरा। तासौ कहा किह नमिति आयो। किह कारन इसत्री संग ल्यायो ॥ १७ ॥ हम हैं मुनि कानन के बासी। एक नाम जानत अबिनासी। राजा प्रजा बसत किह ठौरा। (मू०ग्रं०१२४१) हम प्रभ के राचे रस बौरा ॥ १८ ॥ यह संपति हमरे किह काजा। जो लै हमैं दिखावत राजा। हम नहि धाम किसूके जाहीं। बनहीं महि हरि ध्यान लगाहीं ॥ १९ ॥ क्रिपा करहु न्रिप धाम पधारो। हमरे बडे अघन कह टारो। बारह बरिस क्रिपा करि रहियै। बहुरो मग बन ही को गहियै ॥ २० ॥ जब न्रिप अधिक निहोरा कियो। तब इह बिधि उत्तरि रिखि दियो। हमरो कहाँ धाम

थे ॥ १३ ॥ रानी समेत राजा वहाँ गया और उसने मुनीश्वर को देखा स्त्री-समेत वह चरणों में आ पड़ा और चित्त में विचार किया ॥ १४ ॥ जो शिव ने स्वप्न में कहा वही मैंने सचमुच आँखों से देख लिया है। जैसे भी हो इसे घर ले जाऊँ और इसे रानी के साथ सुला दूँ ॥ १५ ॥ जैसे-जैसे राजा पाँव पड़ता था मुनि आँख ही नहीं खोलता था। फिर राजा और सिर झुकाता था और महामुनि की ओर देखता था ॥ १६ ॥ जब राजा अनेकों बार पाँव पड़ा तो मुनि ने दोनों आँखें खोलीं। उससे कहा कि किसलिए आए और स्त्री को साथ लेकर क्यों आये हो ? ॥ १७ ॥ हम तो जंगल के वासी मुनि हैं और केवल एक परमात्मा का नाम ही जानते हैं। राजा-प्रजा कहाँ रहते है (हमें कुछ पता नहीं)। हम तो प्रभु के रस में मग्न हैं ॥ १८ ॥ हे राजन्! जो यह सम्पत्ति तुम हमें दिखा रहे हो, हमारे किस काम की है। हम किसी के घर नहीं जाते और वन में ही ध्यान लगाते हैं ॥ १९ ॥ कृपापूर्वक राजा के घर चलो और हमारे बड़े पापों को नष्ट करो। बारह वर्ष तक कृपापूर्वक रहिये और फिर बेशक वन में आ जाना ॥ २० ॥ जब राजा ने अधिक विनती की तो ऋषि ने इस प्रकार उत्तर दिया : मेरे पाँव क्यों पकड़ रहे हो, मेरा तुम्हारे घर में क्या काम है ॥ २१ ॥ हमें शिव ने आपके बारे में बताया

तब राजा । बार बार पकरत पग राजा ॥ २१ ॥ हम कह शिव तुहि आपु बतायो । सोवत इहाँ जगाइ पठायो । ताँते मानि शंभु को कहो । बारह बरख हमारे रहो ॥ २२ ॥ शिव की सुनत भयो जब बानी । तब मुनि साथ चलन की मानी । राजा के ह्वै संग सिधारा । रानी सहित सदन पग धारा ॥ २३ ॥ खान पान आगै त्रिप धरा । ताँहि निरखि रिखि ऐस उचरा । इह भोजन हमरे किह काजा । ए है इन ग्रिहसतन के साजा ॥ २४ ॥ हम इसत्रिन तन नैन न लावहि । इन रस कसन भूल नहि खावहि । बिन हरि नाम काम नहि आवै । बेद कतेब यौ भेद बतावै ॥ २५ ॥ तब त्रिप ताहि सही मुनि माना । भेद अभेद न मूड़ पछाना । निजु रानी तन ताहि सुवायो । मूरख अपनो मूँड मुडायो ॥२६॥ निजु कर मूरख सेज बिछावै । ताहि तिया के साथ सुवावै । अधिक जती ताकह पहिचानै । भेद अभेद न मूरख जानै ॥ २७ ॥ जब पति नहि हेरत त्रिय जानै । काम भोग तासो द्रिड़ ठानै । भाँग अफीम अधिक तिह ख्वारी । चारि पहर रति करी पयारी ॥ २८ ॥ भोग करत इक क्रिया बिचारी । ऊपर एक तुलाई डारी । त्रिप बैठो मूकियै लगावै । सो अंतर

है और सोते से जगाकर यहाँ भेजा है । शिव का कहना मानो और हमारे यहाँ बारह वर्ष तक रहो ॥ २२ ॥ जब मुनि ने शिव की वात सुनी तो साथ चलना स्वीकार कर लिया । राजा के साथ चल पड़ा और रानी के साथ महल में आ पाँव रखे ॥ २३ ॥ राजा ने खाद्य-सामग्री आगे रखी जिसे देखकर ऋषि ने कहा कि यह भोजन हमारे किस काम का है, यह सब तो गृहस्थी लोगों का साज-सामान है ॥ २४ ॥ हम तो स्त्रियों को देखते भी नहीं हैं और रसयुक्त और कषाय वस्तुओं का सेवन भूलकर भी नहीं करते । वेद-कतेब सभी यह बताते हैं कि बिना परमात्मा के नाम के अन्य कुछ काम नहीं आएगा ॥ २५ ॥ तब राजा ने उसे सही मुनि माना और भेद-अभेद को कुछ भी नहीं समझा । अपनी रानी को उसके साथ सुलाया और मूर्ख ने अपना मुँह मुँड़वाया ॥ २६ ॥ वह मूर्ख अपने हाथों से शय्या बिछाता था और उसे स्त्री के साथ सुलाता था । उसे अत्यधिक यती मानता था और भेद-अभेद कुछ नहीं जानता था ॥ २७ ॥ जब पति को न देखता हुआ समझती तो वह स्त्री उसके साथ दृढ़तापूर्वक काम-क्रीड़ा करती थी । उसे भाँग-अफ़ीम खिलाकर चार प्रहर तक उससे रतिक्रिया करती । २८ । भोग करते समय

रानियहि बजावै ॥ २९ ॥ इह छल सौ मित्रहि तिन पावा । मूरख भूप न भेद जतावा । पाँवद बैठि मूकियन मारै । उत रानी संग जार बिहारै ॥ ३० ॥ इह छल सौ रानी पति छरियो । जार गवन त्रियि देखत करियो । मूरख भेद अभेद न पायो । सो इसत्री ते मूँड मुडायो ॥ ३१ ॥ १ ॥ (मू०ग्रं०१२४२)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ चुरानवें चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २९४ ॥ ५६२० ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ पंचानवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ चंचलसैन न्रिपति इक नरवर । अवर न्रिपति ताकी नहि सरबर । चंचल दे ताके घर दारा । ता सम देव न देव कुमारा ॥ १ ॥ सुंदरिता इह कही न आवै । जाको मदन हेरि ललचावै । जोबन जेब अधिक तिह धरी । मैन सु नार भरत जनु भरी ॥ २ ॥ ताके एक धाम सुत भयो । बीस बरिस को ह्वै मरि गयो । रनियहि बाढा शोक अपारा । जांते सभ बिसरा घर बारा ॥ ३ ॥ तह इक पूत शाह को

उसने एक क्रिया सोची और ऊपर एक रज़ाई डाल ली। राजा बैठकर उन्हें दबाता और वह अन्दर रानी के साथ रमण करता ॥ २९ ॥ इस प्रपंच से उसने मित्र प्राप्त किया और मूर्ख राजा ने भेद न समझा। वह पाँव की तरफ बैठकर मुट्टी-चापी करता था और उधर रानी के साथ उसका यार रति-क्रीड़ा करता था ॥ ३० ॥ इस छल से रानी ने पति को छला और मित्र देखते-देखते स्त्री के साथ प्रणय-क्रीड़ा करता था। मूर्ख नें रहस्य नहीं समझा और ठगा गया ॥ ३१ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ चौरानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २९४ ॥ ५६२० ॥ अफजूं ॥

दो सौ पंचानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ चंचलसेन एक राजा था जिसके बराबर अन्य कोई राजा नही था। चंचलदेवी उसकी स्त्री थी जिसके समान कोई देव-स्त्री नहीं थी ॥१॥ उसकी सुन्दरता कहते नहीं बनती थी उसे देखकर तो कामदेव भी ललचाता था। उसका यौवन बहुत अधिक था और वह काम से परिपूर्ण थी ॥२॥ उसके घर में एक पुत्र हुआ जो बीस वर्ष का होकर मर गया था। रानी अत्यन्त शोकाकुल हो गई और उसे घर-बाहर सब भूल गया ३ वहाँ एक धनी

आयो। तेजवान दुति को जनु जायो। जैसो तिह सुत को थो रूपा। तैसो ई तिह लगत सरूपा ॥ ४ ॥ जब रानी सो पुरख निहारा। लाज साज तज ह्रिदै बिचारा। यासौ काम भोग अब करियै। नातर मारि छुरकिआ मरियै ॥ ५ ॥ जब वहु कुअर राह तिह आवै। चंचल देखन कौ तिह जावै। इक दिन ताके नाथ निहारी। इह बिधि सौ तिह बात उचारी ॥ ६ ॥ किह निमिति इह ठाँ तूँ आई। हेरि रही किह कह द्रिग लाई। तब रानी इह भाँति उचारो। सुनहु न्रिपति तुम बचन हमारो ॥ ७ ॥ जस तव सुत सुरलोक सिधायो। सो धरि रूप दुतिय जनु आयो। तिह तुम मुरि ढिग सेज सुवावो। हमरे चित को ताप मिटावो ॥ ८ ॥ मूरख भेद अभेद न पायो। ताहि बुलाइ आपु लै आयो। न्रिप पुनि तिह भरुआपन करियो। भलो बुरो न बिचारि बिचरियो ॥ ९ ॥ भरुआ की किरया कह करियो। चारि बिचार कछू न बिचरियो। दूती पठवन ते त्रिय बची। भूपति की दूती करि रची ॥ १० ॥ ताहि सेज के निकट सुवावै। भलो भलो भोजन तिह खुवावै। कहै सु सुत मुर को अनुहारा। ताते या संग हमरो प्यारा ॥ ११ ॥ जो त्रिय

का पुत्र आया जो अत्यन्त तेजवान और मानो प्रकाश का पुत्र था। जसा उसके पुत्र का रूप था वैसा ही इसका स्वरूप था ॥ ४ ॥ जब रानी ने उस पुरुष को देखा तो लज्जा का त्याग कर हृदय में विचार किया कि इसके साथ रमण करूँगी अन्यथा छुरा मारकर मर जाऊँगी ॥ ५ ॥ जब वह कुँवर उधर आता तो स्त्री उसे देखने के लिए आती। एक दिन उसके स्वामी ने उसे देखा और कहा ॥ ६ ॥ तुम यहाँ क्यों आई हो और आँखें गड़ाकर किसे देख रही हो ? तब रानी ने कहा कि हे राजन् ! मेरी बात सुनो ॥ ७ ॥ तुम्हारा पुत्र जो मर गया है यह दूसरा मानो उसी का रूप धारण कर आया है। इसे तुम मेरे साथ सुलाओ और मेरा कष्ट दूर करो ॥ ८ ॥ मूर्ख ने भेद-अभेद कुछ नहीं जाना और उसे ले आया। राजा ने भड़ुआपन किया और भले-बुरे का कुछ विचार नहीं किया ॥ ९ ॥ भड़ुए का काम किया और कुछ भी विचार नहीं किया। दूती भेजने के काम से वह बच गई और राजा को दूती बना दिया ॥ १० ॥ उसे शय्या के पास सुलाती थी और सुन्दर भोजन खिलाती थी। वह कहती कि इसका स्वरूप मेरे पुत्र के समान है, इसी से यह मुझे प्यारा है ११ जो स्त्री उसे भोजन परोसती थी रानी उसे

ताको भोजु खुवारै। रानी झझकि ताहि त्रिय डारै। इह मोरे सुत की अनुहारा। भलो भलो चहियत तिह खवारा ॥१२॥ निकटि आपने ताहि सुवावै। तिह ढिग अपनी सेज बिछावै। जब ताँ संग न्रिपति स्वै जावै। तब त्रिय ता संग भोग कमावै ॥ १३ ॥ कसि कसि रमै जार के संगा। दलि मलि ताँहि करै सरबंगा। भाँति भाँति तन भोग कमाई। सोइ रहै त्यों ही लपटाई ॥ १४ ॥ इक दिन गई जार पहि रानी। सोवत जगा न्रिपति अभिमानी। मुख चुंबन तिह ताहि (मू०ग्रं०१२४३) निहारा। ध्रिग ध्रिग बच ह्वै कोप उचारा ॥ १५ ॥ ॥ दोहरा ॥ मैं इह बोली पूत करिया संग अति मुर प्यार। ताते मुख चुंबत हुती सुत की जनु अनुहार ॥ १६ ॥ ॥ चौपई ॥ न्रिप के साच इहै जिय आई। पूत जानि चुंबन मुख धाई। कोप जु बढा हुता तजि दीना। भेद अभेद कछू नहि चीना ॥ १७ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल बंगसराइ कह राखा अपने धाम। दिन कह पूत उचारई निसि कह भोगै बाम ॥ १८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ पंचानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २९५ ॥ ५६३८ ॥ अफजूं ॥

झिड़कती थी। यह मेरे पुत्र की तरह है, इसे भली प्रकार खिलाओ ॥ १२ ॥ उसे अपने पास सुलाती थी और अपने पास उसकी शय्या बिछवाती थी। जब राजा सो जाता था तब वह उसके साथ रमण करती थी ॥ १३ ॥ वह कस-कसकर मित्र के साथ सभी अंगों का मर्दन करती हुई रमण करती थी। भाँति-भाँति प्रकार से भोग करके वह लिपटकर सोते रहे ॥ १४ ॥ एक दिन जब रानी मित्र के पास गई तो सोता हुआ राजा जग गया। उसे मुख चूमते हुए उसने देखा और क्रुद्ध हो "धिक-धिक" कहने लगा ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥ मैंने इसे अपना पुत्र कहा है और इसने मेरे साथ अत्यन्त प्यार किया है। मैं भी इसे अपने पुत्र के रूप को जानकर इसका मुँह चूम रही थी ॥ १६ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजा ने भी यही सोचा कि पुत्र जानकर यह उसका मुँह चूम रही है। उसने अपना बढ़ा हुआ क्रोध त्याग दिया और भेद-अभेद कुछ भी न जान सका ॥ १७ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार प्रपच से बंग के राजा को उसने अपने घर रख लिया। दिन में वह उसे पुत्र कहती थी और रात में वह उस स्त्री से रमण किया करता था ॥ १८ ॥ १ ॥

श्री के त्रिया चरित्र के मंत्री भूप-संवाद में दो सौ पचानवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति २९५ ॥ ५६३८ । अफजूं

करैं। भाँति भाँति तन ताप मदन को हम हरैं। मैं तरुनी तैं तरुन कहाँ चकिचित रह्यो। हो हम तुम रमहि सु आजु चंचला अस कह्यो ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ शाहु तवन की बात न मानी। अधिक मंगला भई खिसानी। अधिक कोप करि हेतु बिसारा। अरधा अरध चीर तिह डारा ॥ ८ ॥ लूटि लयो ताँको सभ ही धन। घोर अप्राध कियो पापी इन। या कह चीरि मत्त गज डारा (मू०ग्रं०१२४४)। किनहूँ पुरख न करी निवारा ॥ ९ ॥ वारस भई आपु ताकी तिय। माला लई मारि ताको जिय। भेद अभेद न किनूँ बिचारा। भोग न किया तिसै कौ मारा ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल मारा ताहि कौ जौ न रमा तिह संग। सु कबि स्याम पूरन भयो तब ही कथा प्रसंग ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ छ्यानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २९६ ॥ ५६४९ ॥ अफजूं ॥

भुजा से पकड़कर शय्या पर डाल दिया ॥ ६ ॥ उससे कहा कि आओ हम कामक्रीड़ा करें और काम का ताप दूर करें ! तुम चकित क्यों हो, मैं तरुणी हूँ और तुम तरुण हो। उस स्त्री ने कहा कि आओ, हम-तुम रमण करें ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ उस व्यापारी ने उसकी बात नहीं मानी और मंगलादेवी खिसिया उठी। अत्यधिक क्रुद्ध हो उसने स्नेह का त्याग कर दिया और उसे आधा-आधा चीर डाला ॥ ८ ॥ उसने उसका सारा धन लूट लिया। इस पापिनी ने घोर अपराध किया। उसने यह कह दिया कि इसे मदमत्त हाथी ने चीर डाला है। कोई भी व्यक्ति इसे न जान सका ॥ ९ ॥ वह स्वयं ही उसकी वारिस भी बन गई और उसे मार कर उसका धन भी लूट लिया। किसी ने यह भेद-अभेद न विचारा कि इसने भोग नहीं किया, इसी से इसे मार डाला है ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार जिसने उसके साथ रमण नहीं किया, उसे इस स्त्री ने मार डाला। कवि श्याम के कथनानुसार यह प्रसंग पूर्ण हुआ ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ छियानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २९६ ॥ ५६४९ ॥ अफजूं ॥

अथ दो सौ सतानवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बिजैसूर खत्री इक रहै। सिद्धपाल ताकह जग कहै। शमसदीन दिलीस दिवाना। जानत सकल राव अरु राना ॥ १ ॥ लछिमनसैन धाम सुत सुभ मति। बज्रसैन दूसरे बिक्रट मति। सकुचमती दुहिता इक ताके। नरी नागनी सम नहि जाके ॥ २ ॥ शमसदीन दिलीस जुवाना। मानत आनि देस जिह नाना। एक दिवस वहु गयो शिकारा। जाँ दिस हुती केहरी बारा ॥ ३ ॥ तही दिलीस आपु चलि गयो। जहाँ सिघनी चितवत भयो। सिद्धपाल लिए अपने संगा। और लिए अनगन चतुरंगा ॥ ४ ॥ ता पर करी झुकावत भयो। केहरि समै जनम तब लयो। अरध रहा तन मात कुखूतर। अरधह नाकर गज मसतक पर ॥ ५ ॥ तन इक भाट कौतक अस लहा। हजरति सुनत दोहरा कहा। सु मैं कहत हो सुनहु पयारे। जो तिन शाह न चित ते टारे ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ सिघ सापुरश पदमिनी इनका इहै सुभाउ। ज्यों ज्यों दुख गाढ़ो परै त्यों त्यों आगै पाउ ॥ ७ ॥

दो सौ सत्तानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ विजयशूर में एक क्षत्रिय रहता था, जिसे सभी सिद्धपाल कहते थे। शमसदीन दिल्ली का राजा था जिसे सभी राजा जानते थे ॥ १ ॥ उसके घर लक्ष्मणसेन शुभ मतिवान और वज्रसेन विकट बुद्धि का स्वामी पुत्र था। उसके घर सकुचमती नामक एक पुत्री थी, जिसके समान नर-नाग की कोई भी स्त्री नही थी ॥ २ ॥ शमसदीन दिल्ली का युवक था और सभी अन्य देश उससे डरते थे। एक दिन वह वहाँ शिकार को गया जहाँ एक शेरनी थी ॥ ३ ॥ दिल्लीश्वर ने जहाँ शेरनी देखी वहाँ स्वयं चलकर गया। उसने सिद्धपाल और चतुरंगिणी सेना को अपने साथ लिया ॥ ४ ॥ उसने उस शेरनी पर हाथी डाल दिया। उसी समय उस शेरनी ने एक शेर को जन्म दिया। उसका आधा तन अभी माँ की कोख में ही था कि उसने अपने दो पांव हाथी के मस्तक पर टिका दिये ॥ ५ ॥ एक भाट ने यह कौतुक देखा और उसने बादशाह को सुनाते हुए एक दोहा कहा। हे प्यारे! उसे मैं कहता हूँ जिसे उस बादशाह ने न भुलाया ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ शेर पुरुष मद और पद्मिनी का यह स्वभाव है कि ज्यों-ज्यों इन पर गहन दुख

॥ चौपई ॥ भाट जबै इह भाँति उचारा। हजरति बचन स्रवन इह धारा। जब अपने महलन महि आयो। सिधपाल कह बोल पठायो ॥ ८ ॥ तासो इह बिधि नाथ बखाना। तैहै मोर वजीर सयाना। अब कछु अस तुम करहु उपाई। जाते मिलै पदुमिनि आई ॥ ९ ॥ सिधपाल इह भाँति उचारा। सुन हजरति जू बचन हमारा। सभ अपनी तुम सैन बुलावो। मोहि सिंगलादीप पठावो ॥ १० ॥ जौ तुम्हरी आग्या कह पाऊँ। अमित सैन लै तहाँ सिधाऊँ। खड़ग सिंगलादीप मचैहो। ज्यों त्यों कै पदुमिनि लै ऐहो ॥ ११ ॥ यौ कहि गयो धाम जब राजा। बाजत भाँत अनेकन बाजा। बैरी हुतो (मू०ग्रं०१२४५) तहाँ इक ताको। भेद कहा हजरति पै बाको ॥ १२ ॥ एक धाम दुहिता है याके। परी पदमिनि तुलि न ताके। पठै मनुच्छ तिह हेरि मँगावहु। तिह पाछे पदुमिनि खुजावहु ॥१३॥ हजरति सुनत जबै से भयो। तत छिन दूती तहाँ पठयो। चतुरि चितेरी रूप उजियारी। बिसुकरमा की जान कुमारी ॥ १४ ॥ इक चतुरा अरु दुतिय चितेरी। प्रतिमा दुतिय मदन जनु केरी। गोरबरन अरु खाए पाना। जानुक

पडता है, ये आगे की ओर क़दम बढ़ाते जाते हैं ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ भाट ने जब यह कहा तो बादशाह ने इस बात को सुना। जब वह अपने महलों मे आ गया तो उसने सिद्धपाल को बुलाया ॥ ८ ॥ उसे स्वामी ने कहा कि तुम मेरे सयाने मंत्री हो। तुम कुछ ऐसा उपाय करो जिससे मुझे पद्मिनी स्त्री आ मिले ॥ ९ ॥ सिद्धपाल ने यह कहा कि हे बादशाह! मेरी बात सुनो। तुम अपनी सारी सेना बुलाओ और मुझे सिंहलद्वीप भेजो ॥ १० ॥ यदि आपकी आज्ञा पाऊँ तो अपरिमित सेना लेकर वहाँ जाऊँ। वहाँ सिंहलद्वीप में युद्ध करूंगा और जैसे-तैसे पद्मिनी को ले आऊँगा ॥ ११ ॥ यह कह कर राजा महल में गया और विभिन्न प्रकार के वाद्य बजने लगे। वहाँ सिद्धपाल का एक शत्रु था, उसने बादशाह से उसका रहस्य कह दिया ॥ १२ ॥ इसके घर में एक पुत्री है जिसके समान कोई परी अथवा पद्मिनी नहीं है। एक व्यक्ति भेजकर उसे बुला लो और बाद में पद्मिनी ढूंढ़ने के लिए कहना ॥ १३ ॥ बादशाह ने सुनते ही तत्काल एक दूती को वहाँ भेजा। वह चतुर चित्रकला में प्रवीण और रूप का प्रकाश फैलानेवाली थी। मानो विश्वकर्मा की पुत्री हो ॥ १४ ॥ वह चतुर मानों काम की द्वितीय प्रतिमा लगती थी गोरा बदन और पान खाती हुई वह ऐसी लगती मानों आकाश

चढ़ा चंद असमाना ॥ १५ ॥ ताके धाम चितेरनि गई। लिखि ल्यावत प्रतिमा तिह भई। जब लै करि कर शाह निहारी। जानुक तानि कटारी मारी ॥ १६ ॥ सभ सुधि गई मस्त ह्वै झूमा। घाइ लगे घायल जनु घूँमा। तन की रही न तनिक सँभारा। जनु डसि गयो नाग कौडियारा ॥१७॥ इक दिन करी शाह मिजमानी। सभ पुर नारि धाम महि आनी। सिद्धपाल की सुता जबाई। सकल दीप ज्यों सभा सुहाई ॥ १८ ॥ छिद्र बीच करि ताँहि निहारा। हजरति भयो तबै मतवारा। मन तरुनी के रूप बिकान्यो। म्रितक सो तनु रह्यो पछान्यो ॥ १९ ॥ हजरति सकल पठान बुलाए। सिद्धपाल कै धाम पठाए। कै अपनी दुहिता मुहि दीजै। नातर मीच मूँड पर लीजै ॥ २० ॥ सकल पठान तवन के गए। हजरति कही सु भाखत भए। सिद्धपाल धंन भाग तिहारे। ग्रहि आवहिगे शाह सवारे ॥२१॥ सिद्धपाल ऐसो जब सुना। अधिक दुखित ह्वै मसतक धुना। दैव कवन गति करी हमारी। ग्रहि असि उपजी सुता दुखारी ॥ २२ ॥ जौ नहि देत तु बिगरत काजा। जात दए

में चाँद निकला हो ॥ १५ ॥ उसके घर वह चित्रकला में निपुण दूती गई और उसका चित्र बनाकर ले आई। जब बादशाह ने उसे देखा तो मानो उसे किसी ने तानकर कटारी मार दी हो ॥ १६ ॥ उसने सब सुधि खो दी और घायल हो घूमने लगा। उसे तन की तनिक भी होश न रही, और ऐसा लग रहा था मानो उसे भयंकर विषधर सर्प काट गया हो ॥ १७ ॥ एक दिन बादशाह ने मेज़बानी की और नगर की सारी स्त्रियों को महल में बुलाया। सिद्धपाल की पुत्री जब आई तो मानों सारी सभा शोभायमान हो उठी हो ॥ १८ ॥ छिद्र के बीच से देखकर तो बादशाह मतवाला हो उठा। उसका मन तरुणी के हाथों बिक चुका था और तन मानों मृतक के समान (क्रिया-हीन) हो चुका था ॥ १९ ॥ बादशाह ने सारे पठान बुलाए और यह कहकर सिद्धपाल के घर भेजे कि या तो अपनी पुत्री मुझे दे दो या फिर मौत स्वीकार करो ॥ २० ॥ बादशाह के भेजे पठान उसके पास गए और बादशाह ने जो कहा था वह उन्होंने कह सुनाया। सिद्धपाल तुम्हारा धन्यभाग है जो शाह तुम्हारे यहाँ सवारी करके आएँगे ॥ २१ ॥ सिद्धपाल ने जब यह सुना तो दुखी हो उसने माथा पीट लिया। हे भगवान ! तुमने यह मेरे साथ क्या किया जो ऐसी दुखदायक पुत्री मेरे घर पैदा हुई ॥२२।

छत्रिन की लाजा। मुगल पठान तुरक घर माही। अब लगि गी छत्रानी नाही॥ २३॥ छत्रिन के अब लगे न भई। दुहिता काढि तुरक कह दई। रजपूतन के होतह आई। पुत्री धाम मलेछ पठाई॥ २४॥ हाडन एक दूसरन खत्री। तुरकन कह इन दई न पुत्री। जो छत्री अस करम कमावै। कुंभी नरक देह जुत जावै॥ २५॥ जो नर तुरकहि देत दुलारी। ध्रिग ध्रिग जग तिह करत उचारी। लोक प्रलोक ताहि को जैहै। छत्री सुता तुरक कह दैहै॥ २६॥ हाडियन (मू०ग्रं०१२४६) सुता तुरक नहि दई। छत्रानी तुरकनी न भई। कछ रजपूतन लाज गवाई। रानी ते बेगमा कहाई॥ २७॥ अब मैं धरै इहौ निजु बुद्धा। मंडौ बीर खेत महि क्रुद्धा। पहिरि कौच करि खड़ग सँभारौ। चुनि चुनि आजु पखरिया मारौ॥ २८॥ तब कन्या निजु पिता हकारा। इह बिधि तासो मंत्र उचारा। तात तनिक चिंता नहि करियै। सनमुख पातिशाह सौ लरियै॥ २९॥ ॥ अड़िल्ल॥ बोल सदा थिर रहै दिवसरे जाइहैं। करे करम छत्रिन के चारण

यदि नहीं देता हूँ तो राजा बिगड़ता है और जाने देता हूँ तो क्षत्रियों को लाज लगती है और मर्यादा जाती है। अब तक मुगल पठानों के घर कोई क्षत्राणी नहीं गई है॥ २३॥ अब तक क्षत्रियों में ऐसा नहीं हुआ कि किसी ने पुत्री तुर्क को दे दी हो। राजपूतों में ऐसा होता आया है कि पुत्रियों को उन्होंने म्लेच्छों को दिया है॥ २४॥ यह एक तो हाड़ा वंश (कोटा-बूँदी नरेश वंश) की है, फिर क्षत्राणी है; इन लोगों ने तुर्कों को पुत्रियाँ नहीं दी है। जो क्षत्रिय ऐसा कर्म करता है वह सदेह कुंभी नर्क में जायगा॥ २५॥ जो व्यक्ति तुर्कों को पुत्री देता है, सारा संसार उसे धिक्कारता है। जो क्षत्रिय तुर्क को पुत्री देगा उसका लोक-परलोक सब नष्ट हो जायगा॥ २६॥ हाड़ा-वंशियों ने पुत्री तुर्कों को नहीं दी और क्षत्राणी अभी तक मुसलमानी नहीं बनी है। कुछ ही राजपूत-स्त्रियों ने लज्जा का त्याग कर रानी से बेगम कहलाना पसंद किया है॥ २७॥ अब मैं तो यही निर्णय करता हूँ कि क्रुद्ध हो युद्ध किया जाय। कवच पहना जाय, खड़ग सँभाला जाय और चुन-चुनकर शूरवीरों को मारा जाय॥ २८॥ तब कन्या ने भी अपने पिता से कहा कि आप चिन्ता न करें और बादशाह के सामने होकर लड़ें॥ २९॥ ॥ अडिल्ल ॥ दिन बीत जायँगे लेकिन बातें सदा होती रहेंगी और किये हुए कर्मों का चारण भाट गायन करते रहेंगे हे पिता मुझे

गाइहैं । ता तन मोको दीजै आहव कीजियै । हो दान क्रिपान दुहूँ जग मै जस लीजियै ॥ ३० ॥ खड़ग हाथ जिनि तजहु खड़गधारा सहो । भाजि न चलियहु तात मंडि रन कौ रहो । पठे पखरिया हनियहु बिसिख प्रहार करि । हो मारि अरिन कौ मरियहु हमहि सँघारि करि ॥ ३१ ॥ ॥ चौपई ॥ सुनहु पिता इक करहु उपाई । शमशदीन कह लेहु बुलाई । जब आवै तब पकरि संघरियहु । बहुरौ निकसि जुद्ध कौ करियहु ॥ ३२ ॥ सिधपाल तब ऐस बिचारी । भली बात इन सुता उचारी । अंतहपुर ते बाहरि आयो । बोलि पठानन ऐस जतायो ॥ ३३ ॥ ए है प्रभु के बडे बनाए । हम तुम ए इनके पग लाए । जो इन कहा वहै मन माना । सिर पर हुकम शाह को आना ॥ ३४ ॥ तब मिलि खान शाह के गए । अति ही ह्रिदै अनंदित भए । तुरकहि छत्रिन सुता न दई । हसि है इनै भली इह भई ॥ ३५ ॥ दुहिता इतै पितहि समुझावै । छत्री जनमु फेरि नहि आवै । अब लौ ऐसी बात न भई । तुरकन के छत्रानी गई ॥ ३६ ॥ ताते मोहि न दीजै ताता । मंडहु जुद्ध होत ही प्राता । चलि है कथा सदा जग

मत दीजिए और युद्ध कोजिए तथा खड़ग चलाकर संसार में यश का अर्जन कीजिए ॥ ३० ॥ हाथ से खड़ग का त्याग मत करो और कृपाण की धार को सहन करो.। हे पिता, युद्ध को शुरू करो और भागना मत। वीरों को बाण चलाकर मारना और शत्रुओं को मार, मुझे भी मार कर मर जाना (पर उनकी बात नहीं मानना) ॥ ३१ ॥ ॥ चौपाई ॥ हे पिता, एक उपाय सुनो और शमसदीन को बुला लो। जब आये तो पकड़कर मार देना और फिर निकलकर युद्ध करना ॥ ३२ ॥ सिद्धपाल ने तब सोचा कि पुत्री ने ठीक ही कहा है। वह अन्तःपुर से बाहर आया और पठानों को कहा ॥ ३३ ॥ ये (बादशाह) तो ईश्वर के द्वारा ही बड़े बनाए गये हैं। हम-तुम तो इनके पाँव लगने के तुल्य हैं। जो उसने कहा है, मैं मानता हूँ और शाह का हुक्म सिर आँखों पर है ॥ ३४ ॥ तब मिलकर पठान बादशाह के पास गए और हृदय में अत्यधिक आनंदित हुए। क्षत्रियों ने तुर्कों को पुत्री नहीं दी थी पर इसने हँसकर इस बात को मान लिया ॥ ३५ ॥ इधर पुत्री पिता को समझाने लगी कि क्षत्रिय-जन्म दुबारा नहीं मिलेगा। आज तक ऐसा नहीं हुआ है कि क्षत्राणी तुर्कों के पास गई हो ॥ ३६ ॥ इससे हे पिता, मुझे मत दीजिए और सुबह होते ही युद्ध करो। यह कथा युगों तक चलती

माही। प्रात पठान कि छत्री नाही ॥ ३७ ॥ पहिरहु कौच बजाइ नगारे। पी पी अमल होहु मतवारे। प्रात मचत है जुद्ध अपारा। ह्वैहै अंध धुंध बिकरारा ॥ ३८ ॥ पातिशाह संग है संग्रामा। सभ ही करहु केसरी जामा। टाँकि आफुएँ तुरै नचावौ। साँग झलकती हाथ फिरावौ ॥ ३९ ॥ प्रथम त्यागि प्रानन की आसा। बाहहु खड़ग सकल तजि त्रासा। (मू०ग्रं०१२४७) पोसत भाँग अफीम चढ़ावो। रेती माँझ चरित्र दिखावो ॥ ४० ॥ हजरति जोरि तहाँ दल आयो। सकल ब्याह को साज बनायो। सिधपाल के जब घरि आए। पुनि कन्या अस बचन सुनाए ॥ ४१ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ ग्रहि आवै जो शत्रु न ताहि सँघारियै। धाम गए इहु मारहु मंत्र बिचारियै। लछिमन पुत्रहि डारि डोरि दिय तिय उचरि। ह। संग सत सै खतिरेटा ग्यो त्रिय भेस धरि ॥ ४२ ॥ ॥ चौपई। जब ते जात धाम ते भए। तब ताके मंदर मो अए। लुबधमान ह्वै हाथ चलायो। लछिमन काढि कटारी घायो ॥ ४३ ॥ ताकह ऐस कटारी मारा। बहुरि न हजरति बैन उचारा। ताकह मारि भेस नर धारो। लोगन महि इह भाँति उचारो ॥ ४४ ॥ मोहि अमल के काज पठावा। तुम

रहेगी। प्रातः या तो पठान नहीं रहेंगे या फिर क्षत्रिय नहीं रहेंगे ॥ ३७ ॥ नगाड़े बजाकर कवच पहन लो और नशा पी-पीकर सभी मस्त हो जाओ। प्रातः विकराल रूप से अंधाधुंद युद्ध होगा ॥ ३८ ॥ बादशाह के साथ युद्ध है, सभी केसरिया बाना पहन लो। अफ़ीम वग़ैरः खाकर घोड़ों को नचाओ और झिलमिलाती बर्छियाँ हाथों में घुमाओ ॥ ३९ ॥ प्राणों की आशा छोड़कर अभय होकर खड़ग चलाओ। पोस्ता, भाँग, अफ़ीम चढ़ा लो और इस रेतीली धरती पर अपना कर्तव्य-कर्म दिखाओ ॥ ४० ॥ बादशाह उधर आ पहुँचा और उसने विवाह की पूरी तैयारी की थी। जब वह सिद्धपाल के घर आया तो कन्या ने फिर कहा ॥ ४१ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ घर मे शत्रु भी आ जाय तो उसे मारना नहीं चाहिए। जब वह घर जाय तब इसे मार डालो। पुत्र लक्ष्मण ने उसे डोली में डालकर कहा कि साथ मे स्त्रियों के वेश में सात सौ क्षत्रिय साथ हैं ॥ ४२ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब वे घर से निकले तो मंदिर में आए। मोहपूर्वक उसने हाथ चलाया और लक्ष्मण ने कटार निकालकर उसे मार डाला ॥ ४३ ॥ उसे ऐसी कटार मारी कि बादशाह न फिर बात भी मुह से नही निकाली उसे मारकर वह नर-वेश में प्रकट हो

तन इह बिधि आपु कहावा । धाम आवने कोई न पावै । जो आवै सो जान गवावै ।। ४५ ।। इह छल लाधि डचढीयन आयो । चोबदार नहि किनी हटायो । जबही कुमक आपनी गयो । तब ही अमित कुलाहल भयो ।। ४६ ।। बाजै लगे तहाँ शदियाने । बाचत तिहूँ भवन महि जाने । ढोल म्रिदंग मुचंगनहारे । मंदल तूर उपंग अपारे ।। ४७ ।। ।। दोहरा ।। बजै दमामा जब लगे सुनि मारू धुनि कान । खान खवीन जिते हुते टूटि परे तह आनि ।। ४८ ।। ।। चौपई ।। ऐसो कवन द्वैखनी जायो । जिनै जुझऊआ इहाँ बजायो । ऐसा भयो कवन मतवाला । जह मूरख नहि सूझत चाला ।। ४९ ।। इह बिधि भाखि खान सभ धाए । बाँधे चुंग चौपतन आए । शमसदीन लछिमन जह घायो । तिह ठाँ सकल सैन मिलि आयो ।। ५० ।। लोदी सूर नयाजी चले । लीने संग सूरमा भले । दाओ जई रुहेले आए । आफरीदियन तुरै नचाए ।। ५१ ।। ।। दोहरा ।। बावन खेल पठान तह सभै परै अरिराइ । भाँति भाँति बाना बधे गनना गनी न जाइ ।। ५२ ।। ।। चौपई ।। पखरियारे द्वारन नहि मावैं ।

गया और लोगों से कहने लगा ।। ४४ ।। मुझे यही सब काम के लिए भेजा गया है और तुम लोगों से कहने के लिए कहा गया है। कोई भी मंदिर में आने न पाए । जो आयेगा वह जान गँवा लेगा ।।४५।। ऐसा छल करके वह ड्योढ़ी लाँघकर आया और चोबदार ने किसी को नहीं हटाया । जब मदद के लिए सारी सेना गयी तब अत्यन्त कोलाहल होने लगा ।। ४६ ।। वहाँ वाद्य बजने लगे जो उसी मंदिर में बजते लग रहे थे । वहाँ ढोल, मृदंग, मुचंग, तुरही बजने लगे ।। ४७ ।। ।। दोहा ।। जब मारक वाद्य बजने लगे तो जितने खान, पठान थे वे टूट पड़े ।। ४८ ।। ।। चौपाई ।। ऐसा कौन द्वेषिणी-पुत्र यहाँ है जिसने मारू वाद्य बजा दिये हैं ? ऐसा कौन मतवाला है जिस मूर्ख को ठीक समझ नहीं आ रही है कि हम कितनी अपार संख्या में और किस कार्य के लिए आये हैं) ।। ४९ ।। यह कहकर सभी खान चुंगियाँ भरते अर्थात् भागते हुए वहाँ आ गए । शमसदीन को लक्ष्मण ने जहाँ मारा था वहाँ सारी सेना आकर एकत्र हो गई ।। ५० ।। लोदी और नियाज़ी भले शूरवीरों को लेकर चल पड़े । दाऊ, जई, रुहेले और अफ़रीदियों ने घोड़े नचा लिये ।। ५१ ।। ।। दोहा ।। बावन खेल, पठान सभी चिल्लाकर टूट पड़े । वे भाँति-भाँति की पोशाकें पहने हुए थे उनकी गिनती असंभव है ५२ चौपाई वीर

जहाँ तहाँ भट तुरंग नचावैं। बानन की आँधी तह आई। हाथ पसारा लखा न जाई ॥ ५३ ॥ इह बिधि शोर नगर मै पयो। जनु रबि उलटि पलटि ह्वै (मू०ग्रं०१२४८) गयो। जैसे जलधि बारि थरहरै। उछरि उछरि मछरी ज्यों मरै ॥ ५४ ॥ जिह बिधि नाव नदी की धारा। बही जात कोऊ नहिं रखवारा। तैसी दशा नगर की भई। जनु बिनु शक्र सची ह्वै गई ॥ ५५ ॥ ॥ दोहरा ॥ इहि दिसि सभ छत्री चढ़े उहि दिसि चढ़े पठान। सुनहु संत चित दै सभै जिह बिधि भयो निदान ॥ ५६ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ जबै जोरि बाना अनी खान आए। इतै छोभि छत्री सभै बीर धाए। चले बान ऐसे दुहूँ ओर भारे। लगैं अंग जाके न जाँही निकारे ॥ ५७ ॥ तबै लछिमन कुमार जू कोप कैकै। हने खान बानी सभै शस्त्र लैकै। किते खेत मारे परे बीर ऐसे। बिराजै कटे इंद्र के केत जैसे ॥ ५८ ॥ पीएँ जानु भंगै मलंगै परे हैं। कहूँ कोटि सौंडीन सीसैं झरे हैं। कहूँ उशट मारे सु लै भूमि सोपैं। कहूँ खेत खांडे लसैं नगन धोपैं ॥ ५९ ॥ कहूँ बान काटे परे भूमि ऐसे। बुयो को किसानै कढे ईख जैसे।

दरवाजे में नहीं घुस पा रहे थे और जहाँ-तहाँ घोड़ों को नचा रहे थे। वहाँ बाणों की आँधी चल पड़ी जिससे पसारा हुआ हाथ नज़र नहीं आता था ॥५३॥ नगर में ऐसा शोर हुआ मानों सूर्य उलट-पलट गया हो। मानों समुद्र पानी उछालकर बाहर फेंक रहा हो और मछलियाँ उछल-उछलकर मर रही हों ॥ ५४ ॥ जैसे नदी की धारा में नाव बहती चली जा रही हो और कोई बचानेवाला न हो। नगर की ऐसी दशा हुई मानों शची इन्द्र के बिना हो गई हो ॥ ५५ ॥ ॥ दोहा ॥ इस दिशा से क्षत्रिय चढ़े और उधर पठान चढ़ उठे। हे संतो, जो हुआ उसे चित्त लगाकर सुनो ॥५६॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ जब बाणों का प्रहार करती इधर पठानों की सेना आई तो उधर से क्षुब्ध हो सभी क्षत्रिय वीर चल पड़े। दोनों ओर से इतने भीषण बाण चले कि जिसकी छाती में लग जाते थे, उससे वापस निकाले नहीं जाते थे ॥ ५७ ॥ तभी लक्ष्मणकुमार ने कुपित हो खान लोगों को शस्त्र ले मार डाला। कहीं वीर कटे हुए ऐसे पड़े थे जैसे इन्द्र के कटे हुए झंडे पड़े हों ॥ ५८ ॥ वे ऐसे लग रहे थे मानों मलंग लोग भाँग पीकर पड़े हों। कहीं हाथियों के कटे सिर और कहीं मरे हुए ऊँट भूमि पर पड़े थे। कहीं खड्ग-वार से खेत रहे [illegible] वीर पड़े थे ॥ ५९ ॥ कहीं बाणों से कटे वीर ऐसे पड़े थे मानों कि[illegible]

कहूँ लहिलहैं पेट मे यों कटारी। मनो मछ सोहैं बधे बीच जारी ॥ ६० ॥ किते पेट पाटे परे खेत बाजी। कहूँ मत्त दंती फिरें छूछ ताजी। कहूँ मूंड माली पुऐ मूंड माला। कहूँ भूत औ प्रेत नाचै बिताला ॥ ६१ ॥ कहूँ दैत काढो फिरें दाँत भारे। बमै स्रोन केते परे खेत मारे। कहूँ ताजि डारे जिरह खोल ऐसे। बगे ब्योल भारे समैं सीत जैसे ॥ ६२ ॥ तहाँ बाज हाथीन की स्रोन धारैं। परै ज्यों फुहारानहूँ की फुहारैं। प्रलै काल सो जान दूजो भयो है। जहाँ कोटि सूरान सूरा खयो है ॥ ६३ ॥ तहाँ कोटि सौडील के सूंड काटे। कहूँ बीर मारे गिरे केत फाटे। कहूँ खेत नाचैं पठै पखरियारे। कहूँ मार बाजै उठैं नाद भारे ॥ ६४ ॥ कहूँ संख भेरी तहाँ नाद बाजैं। हसैं गरजि ठोकैं भुजा भूप गाजैं। नगारे नफीरी बजैं झाँझ भारी। हठे रोस कैकै तहाँ छत्रधारी ॥ ६५ ॥ कहूँ भीम भेरी बजै राग मारू। नफीरी कहूँ नाइ नादै नगारू। कहूँ बेनु औ बीन बाजै सुरंगा। रुबंगा त्रिदंगा उपंगा मुचंगा ॥ ६६ ॥ झरोखा तरे जो मची

बोया ईख काटकर फेंकता हो। कहीं पेट में कटारी ऐसे फँसी पड़ी थी मानो मछली जाली में फंसी हो ॥ ६० ॥ कहीं पेट फटे मृत घोड़े पड़े थे। कहीं मदमत्त हाथी और कहीं सवार-विहीन घोड़े दौड़ रहे थे। कहीं मुंडमाला पिरोयी जा रही थी और कहीं भूत-प्रेत एवं बैताल नाच रहे थे ॥ ६१ ॥ कहीं दैत्य भारी दाँत निकाले घूम रहे थे। कई रक्त वमन कर रहे थे और कई युद्धस्थल में मरे पड़े थे। कहीं जिरहबख्तर ऐसे पड़े उड़ रहे थे मानों शीतकाल में झंझावात चल रहा ो ॥ ६२ ॥ हाथी-घोड़ों की रक्तधाराएँ फुहारों के रूप में पड़ रही थीं। ऐसा लग रहा था मानों प्रलयकाल हो गया हो जिसमें कोटान-कोटि बीर नष्ट हो गये हों ॥ ६३ ॥ वहाँ अनेकों हाथियों के सूँड़ काटे पड़े थे। कहीं वीर मारे गये और कई फटे गिरे पड़े थे। कहीं वीर युद्ध में नृत्य कर रहे थे। कहीं मार-मार की ध्वनि बज रही थी और कहीं घनघोर नाद उठ रहा था ॥ ६४ ॥ कहीं शंख, भेरी का नाद हो रहा था और कहीं भुजाओं को ठोंककर वीर गरज रहे थे। नगारे, नफ़ीरियाँ और झाँझें बज रही थीं और छत्रधारी रुष्ट हो वहाँ हठपूर्वक अड़े हुए थे ॥ ६५ ॥ कहीं भीमकाय भेरियाँ और कहीं मारू राग नाद बज रहे थे। कहीं नफ़ीरियाँ और नगाड़े, बज रहे थे। कहीं वीणा और बाँसुरी सुन्दर रूप से बज रही थी मृदग ऱ्पग और मुचग आदि वाद्य बज रहे थे ६६ झरोखे के नीचे

मारि ऐसी। भई देव दानवान की है न तैसी। न स्री राम औ रावनै जुद्ध ऐसो। कियो भी महाँभारथै मै सु तैसो ॥ ६७ ॥ तहा बीर केते खरे गालह मारें। (मू०ग्रं०१२८६) किते बान छोड़े किते शस्त्र धारें। किते नारि के भेस की साज लैकै। चलै छोरि बाजी हठी भाज कैकै ॥ ६८ ॥ किते खान खेदे किते खेत मारे। किते खेत मै खिग खत्री लतारे। जहाँ बीर बाँके हठी पूत घाए। तही गोल बाँधे चले सिख आए ॥ ६९ ॥ जबै सिद्धपालै पठानौ निहारा। किनी हाथ लै न हथ्यारै सँभारा। किते भाजि चाले किते खेत मारे। पुराने पलासी मनो राइ डारे ॥ ७० ॥ हठे जे जुझे से सभै खेत मारे। किते खोदि कै कोट के मद्धि डारे। किते बाँधि लैकै किते छोरि दीने। किते जान मारे किते राखि लीने ॥ ७१ ॥ तिसी कौ हना खग जौनै उचायो। सोई जीव बाचा जुई भाजि आयो। कहाँ लौ गनाऊँ भयो जुद्ध भारी। लखे लोह माचा कुपे छत्रधारी ॥ ७२ ॥ किते नाद नादै किते नाद पूरै। किते ज्वान जूझै बरै हेरि सूरै। किते आनि कैकै क्रिपानै चलावै।

तो ऐसी मार मची जैसी देव-दानवों में भी नहीं हुई थी। श्रीराम और रावण तथा महाभारत में भी ऐसा युद्ध नहीं हुआ था ॥ ६७ ॥ वीर खड़े गालियाँ बोल रहे थे और कहीं बाण छोड़े जा रहे थे और कहीं शस्त्र धारण किये जा रहे थे। कहीं स्त्रियों के वेश में हठी वीर घोड़े आदि छोड़कर भाग ले रहे थे ॥ ६८ ॥ कितने खान दौड़ा दिए गये और कितने ही युद्धस्थल में मार डाले गए और कितने ही क्षत्रियों को युद्ध में कुचल डाला गया। जहाँ वीर हठी पुत्रों को मारा गया था उनके शिष्यगण उसी ओर आ टूटे ॥ ६९ ॥ जब सिद्धपाल को पठानों ने देखा तो किसी के भी हाथ में शस्त्र सँभला न रह सका। कितने ही भाग खड़े हुए और कितने ही मार डाले गये। ऐसे लग रहे थे मानों पुराने पलाश के पेड़ धरती पर गिरा दिये गये हों ॥ ७० ॥ जो हठपूर्वक जूझते रहे उन सबको युद्धस्थल में मार डाला गया और कइयों को धरती खोदकर गाड़ दिया गया। कइयों को बाँध लिया गया और कइयों को छोड़ दिया गया। कइयों को जान से मार डाला गया और कइयों को बचा लिया गया ॥ ७१ ॥ जिसने तलवार उठायी उसे मार डाला गया और वही बच पाया जो भाग खड़ा हुआ। कहाँ तक बताऊँ, बहुत भीषण युद्ध हुआ और छत्रधारी राजागण कुपित हो उठे ॥ ७२ ॥ कहीं घनघोर नाद हो रहा था, कहीं जवान जूझ रहे थे और उनको ढूँढ़-ढूँढ़कर (अप्सराओं द्वारा

किते आनि गाजै किते भाजि जावै ॥ ७३ ॥ जबै सिद्धपालै सभै खान मारे । लए छीन कै ताज बाजी नगारे । हुते दूरि बासो तिते खान धाए । चिर्‍यो सिद्धपालं करी मत्त न्याए ॥ ७४ ॥ जिते खान भाजे तिते फेरि ढूकै । चहूँ ओर गाजै हथी सिद्ध जूकै । कहाँ जाइगो छत्रि जाने न दैहैं । इही छेत्र मै छिप्र तुहि आजु छैहै ॥ ७५ ॥ सुने बैन ऐसे भर्‍यो कोप सूरो । सभै शस्त्र सौडी महा लोह पूरो । दयो सैन को आइसै आपुही यो । कपी बाहनी कौं कह्यो राम ज्यो यो ॥ ७६ ॥ सुने बैन सैना चली कोप फैकै । सभै शस्त्र अस्त्रान को हाथ लैकै । जिते खान आए तिते खेत मारे । किते खेदि कै कोटि की ओट डारे ॥ ७७ ॥ किते बीर बानैत बाजी पलट्टै । किते बीर बानीन सो आनि जुट्टै । किते खग्ग लै खिग खत्री उमंगे । जहाँ जंग जोधा जगे जोर जंगं ॥ ७८ ॥ घुरें घोर बादित्र मारू नगारे । मचे आनि कै कै महाँ भूप भारे । खुले खग्ग खत्री उठे भाँति ऐसी । मनो बह्नि ज्वाला प्रलैकाल जैसी ॥ ७९ ॥ कहूँ टोक काटे गिरे

बरण किया जा रहा था । कई आ-आकर कृपाणें चलाते थे और कितने ही आकर गरज रहे थे और कितने ही भाग खड़े हो रहे थे ॥ ७३ ॥ जब सिद्धपाल ने सभी पठानों को मार दिया और घोड़े-नगाड़े वगैरः छीन लिये तो दूर-दराज़ के पठानों को मार कर सिद्धपाल मस्त हाथी की तरह चिढ़ गया ॥ ७४ ॥ जितने पठान भागे उतने ही फिर आ पहुँचे और सिद्धपाल के हाथी चारों ओर गरजने लगे । वे भी कहने लगे कि क्षत्रिय ! तुम कहाँ जाओगे ? तुम्हें जाने नहीं देंगे और इसी युद्धक्षेत्र में तुझे खत्म कर देंगे ॥ ७५ ॥ यह बचन सुनकर बीर कुपित हो उठा । वह सभी शस्त्रों से सज्जित महाबली था । उसने सेना को वैसे ही आज्ञा दी जैसे रामजी ने वानर-सेना को दी थी ॥ ७६॥ बचन सुनकर सारी सेना सभी अस्त्र-शस्त्रों को हाथ में लेकर चल पड़ी । जितने भी खान-पठान आये सभी मार दिए और कइयों को खदेड़ कर क़िले की ओट में फेंक दिया ॥ ७७ ॥ कहीं भीषण बीर घोड़ों-सहित पलट पड़े और कहीं बीर बाणों-समेत आ जुटे । कहीं खड्ग लेकर क्षत्रिय उमंगपूर्वक वहाँ आ रहे थे जहाँ युद्ध में योद्धागण जोर से युद्ध कर रहे थे ॥ ७८ ॥ घनघोर नगाड़े घरघरा रहे थे और भारी-भारी राजागण युद्ध कर रहे थे । क्षत्रियों के खुले हुए खड्ग ऐसे लग रहे थे मानों प्रलयकाल की ज्वाला बह रही हो ॥ ७९ ॥ कहीं काटा जा रहा था और कहीं टोप टूट रहे थे कहीं मुकुटधारी और

टोप टूटे । कहूँ ताज धारी परे बरम छूटे । कहूँ चरम काटे परे खेत ऐसे । कहूँ चौर सोहै मनो हंस जैसे ॥ ८० ॥ कहूँ केत काटे लसे भूम ऐसे । मनो बाय तोरो महाँ ब्रिछ जैसे । कहूँ अरध काटे तुरंगं झरे है । कहूँ टूक टूक ह्वै (मू॰ग्रं॰१२५०) मतंगं परेहै ॥ ८१ ॥ किते डोब डूबे गिरे घूम घूमैं । गजे राज बाजी हने भूँमि झूमैं । किते ऊठि भाजे तुरे बूट माही । लगैं घाव पीठें कढें मूँड नाही ॥ ८२ ॥ कित्यो केसु फाँसे द्रुमो जात ओरें । हहा मोहि छाडै कहै शत्र भोरें । निकारें क्रिपानै न पाछे निहारें । भजे जाँहि काजी न बाजी सँभारें ॥ ८३ ॥ किते खान तोरे न घोरे सँभारें । किते छोरि जोरे त्रिया भेस धारे । किते दै अकोरें निहोरैं तिसी को । लए हाथ मै तेग देखै जिसी को ॥ ८४ ॥ किते जीव लैकै सिपाही सिधाए । किते चुंग बाँधै चलै खेत आए । कित्यो प्रान होमे रनहि ज्वाल माही । मरे टूकटूक ह्वै भजे पै गुनाही ॥ ८५ ॥ तहाँ लै अपच्छरान केते बरे है । जिते सामुहे जुद्ध कैकै मरे है । किते नरक बासी तिसी काल हूए ।

उनके खुले हुए कवच पड़े थे । कहीं चर्म कटे वीर युद्धस्थल में पड़े थे । कहीं चँवर पड़े ऐसे लग रहे थे मानों हंस हों ॥ ८० ॥ कहीं झंडे कटे हुए धरती पर ऐसे शोभायमान हो रहे थे मानों वायु ने बड़े-बड़े वृक्षों को तोड़ फेंका हो । कहीं अधकटे घोड़े पड़े थे और कहीं खंड-खंड हो हाथी पड़े थे ॥ ८१ ॥ कितने ही (रक्त में) डूब गये और कितने ही घूम-घूमकर गिर पड़े । राजा और घोड़े गरज रहे थे और झूम-झूमकर मारे जा रहे थे । कहीं ऊँट भागकर पेड़ों के झुंडों में छिप गए और घाव लगने के कारण मुँह नहीं निकाल रहे थे ॥ ८२ ॥ कइयों के केश पेड़ों में फँसे हुए थे और कई शत्रुओं को छोड़ने के लिए पुकार रहे थे । कृपाणें निकालकर पीछे नहीं देखते थे और घोड़ों को सँभाले बिना क़ाज़ी भागे जा रहे थे ॥ ८३ ॥ कई खानों को तोड़ दिया गया और घोड़े उन्हें संभाल नहीं रहे थे और कई स्त्री-वेश धारण करने के कारण छोड़ दिये गये थे । कहीं मिन्नत कर उसे भेंट दे रहे हैं जिसके हाथ में तलवार देखते हैं ॥ ८४ ॥ कहीं जान बचाकर सिपाही भाग खड़े हुए हैं और वे मुंड बाँधे युद्धस्थल में चले आये हैं । कइयों ने रणज्वाला में प्राणों का होम कर दिया और कई भागने को गुनाह समझकर टुकड़े-टुकड़े होकर कट मरे ॥ ८५ ॥ वहाँ अप्सराओं ने उन कइयों का वरण कर लिया जो सामने लड़कर युद्ध में मर गये हैं । कई वहीं नर्कवासी बने और कई कृपण. नशा न

जिते सूम सोफी भजे जात मूए ॥ ८६ ॥ किते भीर जोधा मरे बाज मारे । गिरे व्रास कैकै बिना बान डारे । कित्यो अगमनै आनि कै प्रान दीने । कित्यो देव के लोक को पंथ लीने ॥ ८७ ॥ जिते सूम सोफी भजे जात मारी । तिते भूमि भोगै नही बंनि जारे । भई भीर गाढी मच्यो जुद्ध भारी । लखे बीर ठाढे कपै देह सारी ॥ ८८ ॥ जहाँ सिद्धपालै घने शत्र कूटे । तहाँ देखि जोधान तै कोटि छूटे । चले भाजि कै ना हथ्यारै सँभार्यो । लखैं शमसदीनै पर्यो भूंमि मार्यो ॥ ८९ ॥ तहाँ भाट ढाढी खरे गीत गावै । सुनावै प्रभै बैर बिंदे व्रसावै । कहूँ नाद बाजैं मफीरी नगारे । हसै गरजि ठोकैं भुजा भूप भारे ॥ ९० ॥ जबै खान जूझे सभै खेत माही । बचे एक ठिबारे बच्यो एक नाही । लई छीनि दिल्ली दिलीसै सँघार्यो । सबै आपने सीस पै छत्र ढार्यो ॥ ९१ ॥ जबै सिद्धपालै धनी सैन कूटी । बचे प्रान लैकै चहूँ ओर फूटी । लई पातिशाही सिरै छत्र ढार्यो । पर्यो पासु बाँच्यो अर्यो सो सँघार्यो ॥ ९२ ॥ लई पातिशाही हिदै यौ बिचारा ।

पीनेवाले भागते हुए ही मर गये ॥ ८६ ॥ कई डरपोक योद्धा कोई घोड़ा तक मारे बिना मर गये और कई बिना बाण चलाये ही डरकर गिर पड़े । कई आगे आकर प्राण त्याग गए और कइयों ने देवलोक का मार्ग पकड़ा ॥ ८७ ॥ जितने न पीनेवाले भागे जा रहे थे वे मारे गए । कइयों को भूमि निगल गई और कई बाँधकर मार डाले गये । आपाधापी मच गई और भीषण युद्ध हुआ । बीरों को खड़े देखकर लोग काँप उठते थे ॥ ८८ ॥ जहाँ सिद्धपाल ने अनेकों शत्रुओं को काटा वहाँ योद्धागण क़िले को छोड़ भाग गये । शमसद्दीन को भूमि पर मरा पड़ा देखकर हथियार सँभाले बिना वे भाग खड़े हुए ॥ ८९ ॥ वहाँ भाट, चारण खड़े गीत गा रहे थे और शत्रुओं को डरा रहे थे । कहीं नाद, मफीरी, नगाड़े बज रहे थे और बड़े-बड़े राजागण भुजाओं को ठोंककर गरज तथा हँस रहे थे ॥ ९० ॥ जब सभी खान युद्ध में मारे गए और एक भी नहीं बचा तो दिल्लीश्वर को मारकर दिल्ली छीन ली गई और उसने अपने सिर पर छत्र झुलवा दिया ॥ ९१ ॥ जब सिद्धपाल ने सेना को काट-कूट डाला और जो बची थी वह चारों ओर भाग खड़ी हुई तो उसने बादशाहत लेकर सिर पर छत्र झुलाया । जो शरण में आ गया वह बच गया और जो अड़ गया वह मार डाला गया ॥ ९२ ॥ राज लेकर उसने हृदय में विचार किया कि मैंने इसे राह जाते को मारकर अच्छा

कर्यो काज नीको न राहै सँघारा। जग्यो रैनि सारी धर्यो ध्यान ताको। दियो पातिशाही मिलै प्रात वाको ॥ ६३ ॥ कसाईन कौ दास तह एक आयो। नदी डारबे ओझरी लै सिधायो। गह्यो जाइ ताको दई पातिशाही। धर्यो जैन आलावदी नाम ताही ॥ ६४ ॥ ॥ चौपई ॥ जब ही राज तवन (मू०ग्रं०१२११) कह दयो। सुता सहित बन मारग लयो। बद्रकाशि महि किया प्रवेसा। दुहिता सहित अतिथ के भेसा ॥ ६५ ॥ ॥ दोहरा ॥ जब बहु तह उपमा करी प्रगट भई जग माइ। बरंबूह तासो कह्यो जो तुहि सुता सुहाइ ॥६६॥ ॥ चौपई ॥ मैया इहै दानु मुहि दीजै। रच्छा आपु हमारी कीजै। छत्रानी ग्रहि तुरक न जाइ। मुहि बर देहु इहै जग माइ ॥ ६७ ॥ चरनन रहै तिहारे चित्ता। ग्रहि महि होइ अनगनत बित्ता। शत्र न जीति हमैं कोई जाइ। तुम महि रहै मोर मन माइ ॥ ६८ ॥ जग माते ऐसे बर दीयो। तिन कह राज असाम को कीयो। अब लगि राज तहाँ तै करैं। दिल्लीपति की कानि न धरैं ॥ ६९ ॥ जिन कह राज भवानी दीयो। तिन ते छीनि न किनहूँ लीयो। अब लौ करत तहाँ

काम नहीं किया है। उसने सारी रात जमकर यह विचार किया कि जो भी प्रातः मिल जाय उसे ही यह राज दे दिया जाय ॥ ६३ ॥ वहाँ एक कसाई का दास आ निकला जो नदी में कुछ गंदगी फेंकने जा रहा था। उसे जा पकड़ा और राज दे दिया और उसका नाम जैनुलाबादी रख दिया ॥ ६४ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब राज उसे दे दिया तो स्वयं पुत्री-समेत जंगल का रास्ता पकड़ लिया। पुत्री-सहित साधुवेश में उसने भद्रकाशी में प्रवेश किया ॥६५॥ ॥ दोहा ॥ जब वहाँ घनघोर तपस्या की तो जगत्माता प्रकट हुईं और उसने कहा कि तुम्हारी पुत्री को जो वर अच्छा लगे उसी से इसका विवाह कर दो ॥ ६६ ॥ ॥चौपाई॥ हे माँ ! मुझे यह दान दो और स्वयं मेरी रक्षा करो। क्षत्राणी को कोई तुर्क न ले जाय, हे जगत्माता ! मुझे यही वरदान दो ॥ ६७ ॥ मेरा चित्त तुम्हारे चरणों में रहे और मेरे घर में अपरिमित द्रव्य हो। मुझे कोई शत्रु न जीत सके और मेरा मन सदैव तुम्हारे में लगा रहे ॥ ६८ ॥ जगत्माता ने उसे ऐसा वर दिया कि उसे आसाम का राजा बना दिया। वह अभी तक वहाँ राज करता है और दिल्लीश्वर की परवाह नहीं करता ॥ ६९ ॥ जिन्हें भवानी ने खुद राज दिया हो उनसे कोई छीन नहीं सकता। अब तक वह वहाँ का राजा है और ऋद्धियाँ-सिद्धियाँ उसके पास

को राजा । रिद्धि सिद्धि सभ ही घर साजा ॥ १०० ॥ प्रथम दिलिस सौ पिता जुझायो । पुनि देवी तें अस बर पायो । अंग देस के भए न्रिपारा । इह छल अबला धरम उबारा ॥१०१॥१॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दो सौ सतानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २९७ ॥ ५७५० ॥ अफजूं ॥

अथ दोइ सौ अठानवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनियत एक शाह की दारा । रूपवान गुनवान अपारा । झिलमिल दे तिह नाम भनिज्जै । को दूसर पटतर तिह दिज्जै ॥ १ ॥ रूपकेत राजा इक तहाँ । रूपवान अरु सूरा महाँ । थरहर कँपै शत्रु जाके डर । प्रगट भयो जनु दुतिय निसाकर ॥ २ ॥ एक सपूत पूत तिन जयो । जा सौ और न जग महि भयो । झिलमिल दे ताकौ लखि गई । तबहीं तो बवरी सी भई ॥ ३ ॥ तासौ बाँधा अधिक सनेहा । द्वै ते करी एक जनु देहा । और उपाउ न चल्यो चलायो । तब अबला नर भेस बनायो ॥ ४ ॥ ॥ दोहरा ॥ धरि करि भेस करौल कौ गई सदन के धाम । सभ को नर जाने तिसै कोई न

हैं ॥ १०० ॥ पहले दिल्लीश्वर से पिता को जुझाया । फिर देवी से वरदान प्राप्त किया और अंगदेश का राजा बन गया । इस प्रकार का कार्य करके उस अबला ने अपना धर्म बचाया ॥ १०१ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में दो सौ सतानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २९७ ॥ ५७५० ॥ अफजूं ॥

दो सौ अट्ठानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ एक धनी की स्त्री रूपवान और गुणवान सुनी जाती थी । उसका नाम झिलमिलदेवी था और दूसरा अन्य भला उसके समान कौन था ॥ १ ॥ वहाँ रूपकेतु नामक एक राजा था जो अत्यन्त रूपवान और शूरवीर था । शत्रु उससे थरथराते थे । वह मानों दूसरा चन्द्र था ॥ २ ॥ उसका एक सुपुत्र था जिसके समान जगत् में अन्य कोई नहीं था । झिलमिल देवी ने उसे देखा और बावली-सी हो गई ॥ ३ ॥ उससे अत्यधिक स्नेह बढ़ाकर मानों एक ही शरीर कर दिया । जब अन्य कोई उपाय न चला तो स्त्री ने पुरुष-वेश बनाया ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ वह शिकारी (करौल) का वेश धारणकर उसके घर गई । सब उसे पुरुष मान रहे थे कोई भी उसे स्त्री

जानै बाम ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ कुअरहि रोज शिकार खिलावै । भाँति भाँति तन म्रिगहि हनावै । इकली फिरै सजन के संगा । पहिरे पुरख भेस कह अंगा ॥ ६ ॥ इक दिन सदन न जात सु भई । पित तन कही सुता मरि गई । (मू०ग्रं०१२५२) अपनी ठग्रर बकरियहि जारा । दूसर पुरख न भेद बिचारा ॥ ७ ॥ शाह लह्यो दुहिता मर गई । यौ नही लखयौ करौलन भई । संग नित लै न्रिप सुत कौ जावै । बन उपबन भीतर भूमि आवै ॥ ८ ॥ बहुत काल इह भाँति बितायो । राजकुअर कह बहु बिरमायो । सो ताकह नहि नारि पछानै । भलो करौल ताहि करि मानै ॥ ९ ॥ इक दिन गए गहिर बन दोऊ । साथी दुतिय न पहुचा कोऊ । अथ्यो दिवस रजनी ह्वै आई । एक ब्रिछ तर बसे बनाई ॥ १० ॥ तह इक आयो सिंघ अपारा । काढे दाँत बडे बिकरारा । ताहि निरखि न्रिप सुत डरपायो । शाह सुता तिह धीर बँधायो ॥ ११ ॥ तब तिह ताकि तुपक सौ मार्‌यो । न्रिप सुत देखत सिंघ प्रहार्‌यो । राजकुअरि अस बचन उचारे । माँगहु जो जिय रुचत तिहारे ॥ १२ ॥ तब तिन तासौ ब्रिथा

नहीं जान रहा था ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह कुँवर को रोज़ शिकार खिलवाती थी और विभिन्न प्रकार के मृगों को मरवाया करती थी। वह साजन के साथ पुरुष-वेश में अकेली ही घूमती थी ॥ ६ ॥ एक दिन घर पर वापस नहीं गई और पिता से कहलवा दिया कि पुत्री मर गई है। अपने स्थान पर एक बकरी को जला दिया और दूसरे किसी को भी पता न लगा ॥ ७ ॥ राजा ने सोचा कि पुत्री मर गई है, यह नहीं सोचा कि वह शिकारिन हो गई है। वह राजा के लड़के को साथ ले रोज़ जाती और वन-उद्यान में भ्रमण कर आती ॥८॥ बहुत समय तक इसी तरह बीता और उसने राजकुमार को प्रसन्न कर लिया। वह उसे स्त्री न जानकर एक भला शिकारी मानता था ॥ ९ ॥ एक दिन दोनों गहरे जंगल में पहुँचे जहाँ उनका दूसरा साथी कोई भी न पहुँच सका। दिन बीत गया और रात हो गई। वे दोनों एक पेड़ के नीचे रुक गए ॥ १० ॥ वहाँ एक भयंकर शेर आया जिसके विकराल दाँत थे। उसे देखकर राजा का पुत्र डर गया पर उस शाह की पुत्री ने उसे धैर्य बँधाया ॥ ११ ॥ उसने ताककर निशाना लगाया और बंदूक से राजा के लड़के के देखते-देखते उसे मार डाला। राजकुमार ने तब कहा कि तुम जो चाहो माँगो ॥ १२ ॥ तब उसने सारी बात कही कि हे

उचारी । राजकुअर मैं शाह दुलारी । तो सौ मोरि लगनि लग गई । ताते भेस धरत इह भई ॥ १३ ॥ अब तुम हमरे साथ बिहारो । इस्त्री करि ग्रहि महि मुहि बारो । जस मुरि लगन तुमू पर लागी । तस तुम होहु मोर अनुरागी ॥ १४ ॥ आनंद भयो कुअर के चीता । जनु करि मिली राम कह सीता । भोजन जानु छुधातरु माई । जनु नल मिली दमावति आई ॥ १५ ॥ उही ब्रिछ तर ताकौ भजा । भाँति भाँति आसन कह सजा । ताँहि सिघ को चरम निकारी । भोग करे ता पर नर नारी ॥ १६ ॥ ताको नाम अपच्छरा धरा । कही कि रीझि मोहि इह बरा । इह छल ताहि नारि करि ल्यायो । रूपकेतु पितु भेद न पायो ॥ १७ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल ताकौ ब्याहिकैं लैं आयो निजु धाम । लोक अपच्छराँ तिह लखै कोऊ न जानै बाम ॥ १८ ॥ न्रिप सुत बरा करोल ह्वै भई अनाथ सनाथ । सभहूँ सिर रानी भई इह बिधि छल के साथ ॥ १९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे दोइ सौ अठानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २९८ ॥ ५७६६ ॥ अफजूं ॥

राजकुमार ! मैं तो शाह की दुलारी हूँ । मुझे तुमसे प्रेम हो गया था इसी से मैंने यह वेश धारण किया था ॥ १३ ॥ अब तुम मेरे साथ रमण करो और स्त्री जानकर मेरा वरण कर लो । जैसे मेरी लगन तुमसे लगी है तुम भी मुझ पर आसक्त हो जाओ ॥ १४ ॥ कुँवर का मन वैसे ही आनंदित हो उठा, जैसे मानों राम को सीता मिल गई हो । मानों भूखे को भोजन मिल गया हो अथवा नल को दमयन्ती मिल गई हो ॥ १५ ॥ उसी वृक्ष के नीचे विभिन्न आसनों के माध्यम से उसके साथ केलिक्रीड़ा की । उसी शेर का चमड़ा निकालकर उस पर वे स्त्री-पुरुष रमण करने लगे ॥ १६ ॥ उसका नाम अप्सरा रखा और उड़ा दिया कि अप्सरा ने रीझकर मेरा वरण किया है । इस छल द्वारा उसे स्त्री बनाकर ले आया और रूपकेतु पिता को पता नहीं लग पाया ॥ १७ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार छल से उसे ब्याह कर घर ले आया । सब उसे अप्सरा मान रहे थे और कोई भी उसे स्त्री नहीं मान रहा था ॥ १८ ॥ शिकारी बनकर उसने राजा के पुत्र का वरण किया और अनाथ से सनाथ हो गई । वह छल से सबके सिर पर रानी बन बैठी ॥ १९ ॥ १ ॥

श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया चरित्र के मन्त्री भूप-सवाद में दो सौ अट्ठानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति २९८ ५७९९ । अफजू

अथ दोइ सौ नंन्यानवें चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ चंद्रचूड़ इक रहत भुपाला। अमितप्रभा जाके ग्रहि बाला। ता सी दूसरि जग महि नाही। नरी नागनी निरखि (मू०ग्रं०१२५३) लजाही ॥ १ ॥ साहिक हुतो अधिक धनवाना। जा सौ धनी न जग में आना। अछल देइ दुहिता ताके घर। रहत पंडिता सभ मति हरि करि ॥२॥ चंद्रचूढ़ को हुतो पुत्र इक। पढ़ा ब्याकरन अरु शास्त्रनिक। ताको नाम न कहबे आवै। लिखत ऊख लिखनी ह्वै जावै ॥ ३ ॥ इक दिन कुअर अखेटक गयो। शाहु सुता को निरखत भयो। वाकी लगी लगन इह संगा। मगन भई तरुनी सरबंगा ॥ ४ ॥ चतुरि दूति इक तहाँ पठाई। कहियहु ऐस कुअर कह जाई। एक दिवस मोरे घर आवहु। साथ हमारे भोग मचावहु ॥ ५ ॥ तब वहु सखी कुअरि पहि आई। कही कुअरि सो ताहि सुनाई। बिहसि साजन इह भाँत उचारी। कहियहु जाइ ऐस तुम प्यारी ॥ ६ ॥ इक अवधूत सु छत्र त्रिपारा। सुनियत बसत समुद के पारा। है अवधूतमती

दो सौ निन्यानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ चन्द्रचूड़ एक राजा था जिसके घर पर अमितप्रभा नामक स्त्री थी। उसके समान जगत् में कोई अन्य स्त्री नहीं थी। नर, नाग-स्त्रियाँ सभी उसे देख लजाती थीं ॥ १ ॥ साहिक एक अत्यधिक धनी पुरुष था जिसके समान धनवान जगत् में अन्य कोई नहीं था। उसके घर अछल देवी नामक एक पुत्री थी जिसने पंडितों की मति हरण कर रखी थी ॥ २ ॥ चंद्रचूड़ का एक पुत्र था जो व्याकरण और शास्त्र पढ़ा हुआ था। उसकी महिमा लिखते तो गन्ने जितनी बड़ी लेखनी घिसकर सामान्य लेखनी बन जाती है ॥ ३ ॥ एक दिन राजकुमार शिकार खेलने गया और उसने उस धनी की पुत्री को देखा। उसकी भी लगन इससे लग गई और तरुणी सर्वांगरूप से उस पर आसक्त हो गई ॥ ४ ॥ उसने एक चतुर दूती को वहाँ भेजा, जिससे यह कहलवाया कि एक दिन मेरे घर पर आओ और मेरे साथ रमण करो ॥ ५ ॥ तब वह दासी कुँवर के पास आई और उसे सुनाकर कह दिया। सजन ने हँसकर कहा कि तुम प्रिय से जाकर कह देना ॥ ६ ॥ एक अवधूत राजा समुद्र के पार बसता है। अवधूतमती उसकी पुत्री है जिसके

दुहिता तिह। अवर न घड़ी बिधाता सम जिह ॥ ७ ॥ प्रथम तूँ लिसै मोहि मिलावैं। ता पाछे मोसौ पति पावैं। यौ जो कोटि उपाव बनै है। तौ मोसो नहि भोगन पैहै ॥ ८ ॥ यौ ही सखी जाइ तिह कहो। मन बच कुअरि चक्रित ह्वै रही। चित मो अनिक चटपटी लागी। तातें नींद भूख सभ भागी ॥ ९ ॥ समुंद पार जायो नहि जावै। तऊ कुअरि को शांति न आवै। साज तहाँ चलिबे को करा। तीरथ जात हो पितहि उचरा ॥ १० ॥ साज बाज सभ कीआ तयारा। तह ह्वै चली बाज असवारा। सेतबंध रामेश्वर गई। इह बिधि ह्रिदै बिचारत भई ॥ ११ ॥ ताते ह्वै जहाज असवारा। गई सिगलाद्वीप मझारा। जह तिह सुना राज को धामा। जात भई तह ही कौ बामा ॥ १२ ॥ तह गो पुरख भेस को करिकै। भाँति भाँति के भूखन धरिकै। जब अवधूतमती तिह हेरा। राजकुअरि जान्यो कहूँ केरा ॥ १३ ॥ निरखत कुअरि मदन बसि भई। अंग अंग बिहबल ह्वै गई। चित महि कहा इसी कह बरिहौ। ना तर घाइ कटारी मरिहौ ॥ १४ ॥ देखै लगी सीस निहुराई। तिह लिय घात इहै कर आई। तुरंग धवाइ जात तह भई। लिघनि जानु

समान विधाता ने अन्य नहीं बनाई है ॥ ७ ॥ पहले तुम मुझे उसे मिलाओ और तब मेरे जैसा पति प्राप्त करो। वैसे अगर तुम करोड़ों उपाय भी करो तो मुझसे रमण नहीं कर पाओगी ॥ ८ ॥ दासी ने वही जा कहा जिसे सुनकर राजकुमारी चकित हो उठी। उसके चित्त में उलझन बढ़ गई और उसकी नींद-भूख सब भाग गई ॥ ९ ॥ समुद्र पार जब तक नहीं जाया जायगा तब तक कुँवर को शांति नहीं मिलेगी। वहाँ जाने को सोचकर उसने पिता से तीर्थ जाने की बात कही ॥ १० ॥ सब तैयारी करके घोड़े पर सवार हो वह चल पड़ी। वह सेतुबंध रामेश्वरम् पहुँच गई और वहाँ आगे जाने का आयोजन करने लगी ॥ ११ ॥ वहाँ से जहाज पर सवार हो वह सिंहलद्वीप पहुँची। वह स्त्री उधर ही चल पड़ी जिस ओर उसे राजा के महल का पता चला ॥ १२ ॥ वहाँ वह पुरुष-वेश और भाँति-भाँति के आभूषण पहनकर गई। अवधूतमती ने उसे देखकर कहीं का राजकुमार समझा ॥ १३ ॥ कुँवर को देखकर वह कामासक्त हो उठी और उसका अंग व्याकुल हो उठा। उसने मन में सोचा कि मैं इसी का वरण करूँगी अन्यथा कटारी मारकर मर जाऊँगी ॥ १४ ॥ वह सिर झुकाकर देखने लगी और इसी समय इस स्त्री को

म्रिगी गहि लई ॥ १५ ॥ झटकि झरोखा तें गहि लई । बाँधत साथ (मू०ग्रं०१२५४) प्रिसट कै भई । हाहा भाखि लोग पचि हारे । राखि न सके ताँहि रखवारे ॥ १६ ॥ बाँधि प्रिसटि तिह तुरंग धवायो । एकै बान मिला सो घायो । ताकह जीति धाम लै आई । सखी कुअरि के धाम पठाई ॥ १७ ॥ जो तुम कहा काज मैं किया । अपनो बोल निबाहहु पिया । प्रथम ब्याहि मोकौ लै जावौ । ता पाछे याकह तुम पावो ॥ १८ ॥ राजकुअर तब ही तह आयो । तासौ प्रथमै ब्याह करायो । बहुरौ ब्याहि ताहि लै गयो । असि चरित्र चंचला दिखयो ॥ १९ ॥ प्रथमहि पार समुंद कै गई । राज सुतहि हरि ल्यावत भई । बहुरौ मन भावत पति करियो । त्रिया चरित्र न जात बिचरियो ॥ २० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप सबादे दोइ सौ नंन्यानवें चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ २९९ ॥ ५७८९ ॥ अफजूं ॥

अवसर मिल गया । घोड़ा दौड़ाकर वह वहाँ ऐसे पहुँच गई मानो शेरनी ने मृगी को पकड़ लिया हो ॥ १५ ॥ उसे झटककर झरोखे से पकड़ लिया और अपनी पीठ के साथ बाँध लिया । लोग हाहाकार मचाकर थक गए परन्तु रक्षक भी उसे बचा न सके ॥ १६ ॥ पीठ पर बाँधकर उसने घोड़ा दौड़ाया और जो मिला उसे एक ही बाण से मार डाला । उसे जीतकर घर ले आई और तब उसने सखी को राजकुमार के घर भेजा ॥ १७ ॥ जो तुमने कहा है वह मैंने कर दिया है, हे प्रिय ! अब तुम अपना वचन निभाओ । अब तुम पहले मुझे व्याह कर ले जाओ, बाद में तुम इसे प्राप्त करो ॥१८॥ तब राजकुमार वहाँ आया और पहले उससे विवाह किया, फिर उसे व्याहकर ले गया । इस प्रकार स्त्री ने यह चरित्र दिखाया ॥ १९ ॥ पहले वह समुद्र पार जा राजकुमारी को लायी और फिर मनभाता पति पाया । त्रिया-चरित्र का विचार नहीं किया जा सकता ॥ २० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में दो सौ निन्यानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ २९९ ॥ ५७८९ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सीसी सारकेत इक राजा । जासो बिधि दूसर न साजा । सीसै सार देइ तिह रानी । जा सम दूसर ह्वै न बखानी ॥ १ ॥ तासौ अधिक न्रिपति की प्रीता । निस दिन रहै तरुनि मै चीता । कितक दिनन रानी मरि गई । राजा की उदास मति भई ॥ २ ॥ अवर नारि की ओर न हेरै । भूल न जात किसी के डेरै । नारी और अधिक दुख पावैं । नाथ मिले बिनु मैन संतावैं ॥ ३ ॥ मिलि बैठी इक दिन सभ रानी । आपु बिखैं मिलि करत कहानी । इह जड़ पति मति किन हरि लई । कहा भयो रानी मरि गई ॥ ४ ॥ एतो शोक कियो जाको इह । मति हरि लई कहाँ याको तिह । ह्वैहै त्रिया न्रिपन के घनी । सदा सलामति चहियत धनी ॥ ५ ॥ सखी एक स्यानी तह अही । तिह इह भाँति बिहसि करि कही । मैं न्रिप ते त्रिय शोक मिटैहौं । बहुरि तिहारे साथ मिलैहौं ॥ ६ ॥ जारिक पकरि कठोरी राखा । न्रिप के सुनत ऐस बिधि भाखा । ध्रिग इह मूड़ न्रिप को

तीन सौवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ सीसी सारकेतु एक अद्वितीय राजा था, जिसकी रानी सीसेसारदेवी थी। रूप में उसके समान कोई नहीं कही जाती थी ॥१॥ राजा की उसमें अत्यधिक प्रीति थी और रात-दिन उसका ध्यान उसी तरुणी में रहता था। कई दिनों बाद रानी मर गयी और राजा उदासीन हो गया ॥२॥ वह अन्य किसी स्त्री की ओर देखता भी नहीं था और भूलकर भी किसी के निवास स्थान पर नहीं जाता था। अन्य स्त्रियाँ दुखित थीं क्योंकि प्रिय से मिले बिना उन्हें काम सताता था ॥ ३ ॥ एक दिन सब रानियाँ मिल-बैठकर आपस में बातचीत करने लगीं। इस जड़ पति की मति का हरण किसने कर लिया है। क्या हुआ जो रानी मर गयी है ॥ ४ ॥ इसने उसका इतना ही शोक किया है कि इसकी बुद्धि ही चुरा ली गयी है। राजा पति सलामत रहना चाहिए, स्त्रियाँ तो अनेकों मिल जायँगी ॥ ५ ॥ वहाँ एक सयानी सखी थी, जिसने हँसकर कहा कि मैं राजा का शोक दूर कर दूँगी और उसे पुनः तुम लोगों से मिलवा दूँगी ॥६॥ एक यार को उसने पकड़कर कोठरी में रख लिया और राजा को सुनाकर कहा कि राजा को धिक्कार है जिसे विवेक-अविवेक

जीआ। जिह अबिबेक बिबेक न कीआ ॥ ७ ॥ जु त्रिया और सौ भोग कमावै। बातन साथ पतिहि उरझावै। न्रिप जु कोठरी छोरि निहारै। साच झूठ तब आपु बिचारै ॥ ८ ॥ (मू०ग्रं०१२५५) न्रिप के स्रवनन धुनि इह परी। तुरतु कुठरीया जाइ उघरी। हेरा जब वहु मनुछ बनाई। तब ऐसे तिह कहा रिसाई ॥९॥ इतौ शोक हम कियो निकाजा। इह न लहत थो ऐस निलाजा। अब मैं रनियन अवर बिहारौ। रानी मरी न फेरि चितारौ ॥ १० ॥ और त्रियन के साथ बिहारा। वा रानी कह न्रिपति बिसारा। इह छल त्रियन नरिंद्रहि छरा। त्रिय चरित्र अतिभुत इह करा ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३०० ॥ ५८०० ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ इक चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ इच्छ्यावती नगर इक सुना। इच्छसेन राजा बहु गुना। इशटमती ताके घर नारी। इशटदेवका

का कुछ भी ख्याल नहीं रहा है ॥७॥ जो स्त्रियाँ अन्य के साथ रमण करती हैं वे पति को प्यार के दिखावे की बातों में उलझाए रहती हैं। राजा यदि कोठरी खोलकर देखे तो सच-झूठ का स्वयं ही उसे पता चल जायगा ॥ ८ ॥ राजा के कान में जब यह बात पड़ी तो उसने तुरन्त कोठरी को जा खोला। जब उसने उस व्यक्ति को वहाँ देखा तब क्रुद्ध हो ऐसे कहा ॥९॥ मैंने बेकार ही शोक किया और इस निर्लज्ज को नहीं देखा। अब मैं अन्य रानियों के साथ रमण करूँगा और मृत रानी को फिर नहीं याद करूँगा ॥ १० ॥ अब वह अन्य स्त्रियों के साथ केलि-क्रीड़ा करने लगा और उस रानी को राजा ने विस्मृत कर दिया। इस छल से स्त्रियों ने राजा को छला और इस प्रकार अद्भुत प्रपंच बनाया ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३०० ॥ ५८०० ॥ अफजूं ॥

तीन सौ एकवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ इच्छावती नामक नगर में गुणवान राजा इच्छासेन था। उसकी स्त्री इष्टमती और पुत्री इष्टदेवका थी ॥ १ ॥ अजयसेन

रहत दुलारी ॥ १ ॥ अजैसैन छत्तरेटा तहाँ । आवत भयो धाम तिय जहाँ । राणी ता को रूप निहारा । गिरी धरनि जनु लग्यो कटारा ॥ २ ॥ उड़वा बेग निपुंसक बने । पठै दए रानी तह घने । गहि करि ताहि लै गए तहाँ । तरनी पंथ बिलोकत जहाँ ॥ ३ ॥ कामभोग तासौ रानी करि । पौढे दोऊ जाइ पलघा पर । तब लगि आइ न्रिपति तह गए । सोवत दुहूँ बिलोकत भए ॥ ४ ॥ भरभराइ तिय जगी दुखातर । डारि दयो दुपटा पति मुख पर । जब लौ करत दूरि न्रिप भयो । तब लौ जारि भाजि करि गयो ॥ ५ ॥ दुपटा दूरि करा न्रिप जबै । पकर लियो रानी कह तबै । कहाँ गयो वहु जु मैं निहारा । बिनु न कहे भ्रम मिटै हमारा ॥ ६ ॥ प्रथमै जान माफ मुर कीजै । बहुरो बात साच सुनि लीजै । बचन देहु मेरे जौ हाथा । बहुरि लेहु बिनती सुनि नाथा ॥ ७ ॥ भैंगे नेत्र तोरि बिधि करे । इक तै जात दोइ लख परे । तुम काह कछू झाँवरो आयो । मुहि को दिखि लखि करि द्वै पायो ॥ ८ ॥ न्रिप सुनि बचन चक्रित ह्वै रहा । तिय सौ बहुरि बचन नहि कहा । मुख

एक क्षत्रिय वहाँ आया जहाँ स्त्रियाँ थी । रानी ने उसका रूप देखा और धरती पर ऐसे गिर पड़ी मानों कटारी लगी हो ॥ २ ॥ उड़दावेग तथा अनेकों अन्य नपुंसकों को रानी ने भेजा जो उसे वहाँ पकड़कर ले आए जहाँ वह तरुणी उसका रास्ता देख रही थी ॥ ३ ॥ रानी उसके साथ रतिक्रीड़ा कर उसके साथ पलंग पर लेट गई । तब तक राजा वहाँ आ गया और उसने दोनों को देखा ॥ ४ ॥ स्त्री हड़बड़ाकर उठी और दुखी हृदया ने पति के मुख पर दुपट्टा डाल दिया । जब तक राजा उसे हटाए तब तक वह यार भाग गया ॥ ५ ॥ जब राजा ने दुपट्टा दूर किया तो रानी को पकड़ लिया । वह कहाँ गया जिसे मैंने देखा था । उससे बात किये बिना मेरा भ्रम नहीं मिटेगा ॥ ६ ॥ पहले मुझे प्राण की माफ़ी दो तब सच्ची बात सुनो । पहले मुझे वचन दो और नाथ ! फिर मेरी बात सुनो ॥ ७ ॥ विधाता ने तुम्हारी आँखें भैंगी कर दी हैं, इससे तुम्हें एक की जगह दो नजर आते हैं । तुम्हें कुछ भ्रम हुआ है और मुझ एक को तुमने दो देखा है ॥ ८ ॥ राजा सुनकर चकित हो गया और स्त्री से पुन·

लए नाथ कह मारा । तन मै रांड भेस को धारा । जब ग्रहि अपने जार बुलायो । सभ प्रसंग कहि ताहि सुनायो ॥ ६ ॥ सुनिकै जार बचन अस डरा । ध्रिग ध्रिग बच तिह त्रियहि उचरा । जिन अपनो पति आपु संघरियो । मुहि कस चहत भलाई करियो ॥ ७ ॥ पति मार्‍यो जाके हित गयो । सो भी अंत न ताको भयो । ऐसो मित्र कछू नहि करियो । इह राखे ते भलो संघरियो ॥ ८ ॥ कर महि काढि भगौती लई । दुहूँ हाथ ताको सिर दई । हाइ हाइ जिमि भूप पुकारै । त्यों त्यों नारि क्रिपानन मारै ॥ ९ ॥ द्वै दिन भए न पति के मरै । ऐसी लगे अबै ए करै । ध्रिग जियबो पिय बिनु जग माही । जार चोर जिह हाथ चलाही ॥ १० ॥ मर्‍यो निरखि तिह सभन उचारा । भला करा तै जार संघारा । चादर की लज्जा तै राखी । धन्य धन्य पुत्री तूँ भाखी ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ दोइ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३०२ ॥ ५८२० ॥ अफजूं ॥

वह रोज उसे बुलाती थी और रुचिपूर्वक कामक्रीडा करती थी ॥ ५ ॥ उसके लिए उसने अपने पति को मार कर विधवा का वेश धारण कर लिया । जब उसने अपने घर अपने मित्र को बुलाया तो उसे सारा रहस्य समझा दिया ॥ ६ ॥ यार उसकी बातें सुनकर डर गया और कहने लगा कि उसे धिक्कार है जिसने स्वयं अपना पति मार दिया है । अब भला वह मेरी कौन सी भलाई करेगी ॥ ७ ॥ जिसके लिए उसने पति को मारा वह भी अब उसका नहीं हुआ । ऐसे मित्र को रखना नहीं चाहिए और उसे मार डालना चाहिए ॥ ८ ॥ उसने तलवार हाथ से खींच दोनों हाथों के ज़ोर से उसके सिर पर दे मारी । अब राजा जैसे-जैसे हाय-हाय करता था स्त्री वैसे-वैसे ही कृपाणों के वार करती जाती थी ॥ ९ ॥ अभी मेरे पति को मरे दो दिन हुए और यह ऐसा कर रहा है । इस संसार में प्रिय के बिना जीना धिक्कार है, जहाँ चोर, यार सभी हाथ उठाते हैं ॥ १० ॥ उसे मरा जानकर सब ने यह कहा कि तुमने भला किया जो यार को मार डाला और इज्ज़त बचा ली । हे पुत्री ! तुम धन्य हो ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ दूसरे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३०२ ॥ ५८२० ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ तीन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ अभरन सिंघ सुना इक न्रिप बर । लजत होत जिह निरखि दिवाकर । अभरन देइ सदन तहि नारी । मथि अभरन जणु सकल निकारी ॥ १ ॥ रानी हुती मित्र सेती रति । भोगत हुती तवन कह निति प्रति । इक दिन भेद राव लखि पायो । त्रिय को धाम बिलोकन आयो ॥ २ ॥ तह ते लयो पकरि इक जारा । तौनै ठौरि (मू०ग्रं०१२५७) मारि करि डारा । इस्त्री जानि न इस्त्री मारी । चित अपने ते दई बिसारी ॥ ३ ॥ बीतत बरख अधिक जब भए । रानी बहु उपचार बनए । राजा ताके धाम न आयो । तब इक औरुपचार बनायो ॥ ४ ॥ रानी भेस संन्यासिनि को धरि । जात भई तजि धाम निकरि करि । खेलत न्रिपति अखिट जब आयो । एक हरिन लखि तुरंग धवायो ॥ ५ ॥ जोजन कितक नगर ते गयो । पहुचत जह न मनुच्छ इक भयो । उतर्यो बिकल बाग मै जाई । रानी इकल पहूची आई ॥ ६ ॥ संन्यासिनि को भेस बनाए । सीस जटन को जूट छकाए । जो नक ताको

तीन सौ तीसरा चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ अभरन सिंह एक राजा था जिसे देखकर सूर्य भी लजाता था। उसकी स्त्री अभरनदेवी थी जिसे मानों समुद्र से मथकर निकाला गया था ॥ १ ॥ रानी मित्र के साथ अनुरक्त थी और नित्यप्रति उसके साथ केलिक्रीडा करती थी। एक दिन राजा को रहस्य का पता चला और वह स्त्री के निवास पर उसे देखने आया ॥ २ ॥ उसने एक यार वहाँ से पकड़ लिया और उसे उसी स्थान पर मार डाला। स्त्री को स्त्री समझकर नहीं मारा। पर अपने मन से निकाल दिया ॥ ३ ॥ जब अधिक वर्ष बीत गये तो रानी ने अनेकों उपाय किये। राजा उसके घर नहीं आया तब रानी एक अन्य उपाय किया ॥ ४ ॥ रानी संन्यासिन का वेश धारण कर घर से निकल गई। राजा जब शिकार खेलने के लिए आया तो उसने मृग देखकर घोड़ा दौड़ाया ॥ ५ ॥ वह नगर से कई योजन दूर वहाँ तक निकल गया जहाँ एक भी व्यक्ति नहीं था। वह व्याकुल हो एक बाग में ठहरा जहाँ रानी आ पहुँची ॥ ६ ॥ उसने सन्यासिन का वेश बनाया हुआ था और जटाजूट बढ़ा रखी थी। जो

रूप निहारै । उरझि रहै नहि शंक बिचारै ॥ ७ ॥ उतरत बाग तिहीं तिय भई । उहि राजा तन भेटन हुई । निरखत रूप उरझि न्रिप रहियो । नरी नागनी को इह कहियो ॥ ८ ॥ कवन रूप रानी तुम होजू । किधों अपछरा साच कहोजू । कै तुमहो रति पत की नारी । कै निसि पति की अहहु कुमारी ॥ ९ ॥ भाँति भाँति तन चरचा करी । बेद ब्याकरन कोक उचरी । ज्यों त्यों चित ताको हरि लीना । बिना घाइ घायल पति कीना ॥ १० ॥ मगन भयो चित भीतर भूपा । निरखि नारि को रूप अनूपा । एक बार कह जौ इह पाऊँ । जनम अनेक लगे बलि जाऊँ ॥ ११ ॥ न्रिपहु नारि कह अधिक रिझायो । भाँति अनिक सैती उरझायो । भजौ याहि मन माहि बिचार्‌यो । इह बिधि तासौ बचन उचार्‌यो ॥ १२ ॥ हम तुम आउ रमैं मिलि दोऊ । और न लखत हमै ह्याँ कोऊ । क्यों तरुनापन ब्रिथा गवावत । रानी ह्वै किन सेज सुहावत ॥ १३ ॥ अस तन सुंदरि धूरि न लावहु । जोबन जाल न ब्रिथा गवावहु । बिरधापनो आइ जब जैहै । इह ज्वानी कह तब पछतैहै ॥ १४ ॥ इह जोबन को कहा गुमाना ।

व्यक्ति उसके रूप को देखता था उसी में उलझकर रह जाता था ॥ ७ ॥ वह स्त्री उसी बाग़ में आई और राजा से मिली । राजा उसका रूप देखकर अनुरक्त हो गया और सोचने लगा कि नर, नाग-स्त्री में यह कौन है ? ॥८॥ हे रूप की रानी ! तुम कौन हो ? सच बताओ, कहीं तुम अप्सरा तो नहीं हो ? क्या तुम काम की स्त्री हो अथवा चन्द्रकुमारी हो ? ॥ ९ ॥ उससे विभिन्न प्रकार की चर्चा की और वेद-व्याकरण आदि की बातें की । जैसे-तैसे उसका चित्त चुरा लिया और अपने ही पति को घायल (आसक्त) कर लिया ॥ १० ॥ नारी का अनुपम रूप देखकर राजा मन में मगन हो उठा । वह सोचने लगा कि यदि इसे एक बार पा जाऊँ तो अनेकों जन्मों तक इस पर न्योछावर होता रहूँ ॥ ११ ॥ राजा ने भी स्त्री को अत्यधिक प्रसन्न किया और अनेक प्रकार से उसे उलझा लिया । उसने उसके साथ रमण करने की बात सोचकर उससे कहा ॥ १२ ॥ आओ हम-तुम दोनों रमण करें । हमें यहाँ कोई देखनेवाला नहीं है । क्यों अपनी जवानी व्यर्थ गँवा रही हो और रानी बनकर क्यों नहीं मेरी शय्या की शोभा बढ़ाती हो ॥ १३ ॥ ऐसे तन को धूल मत लगाओ और यौवन को व्यर्थ न गँवाओ । जब वृद्धावस्था आ जायगी तो इस जवानी के लिए तुम

जो काहू पर थिर न रहाना। आउ करैं दोऊ भोग बिलासा। कहा करत याको भरवासा॥ १५॥ ॥ अड़िल्ल॥ धन जोबन को कहा गुमान न कीजियै। सुख हम कौ दै तरुनि आपि सुखु लीजियै। बिरधापनु ऐहै तरुनापन जाइहै। हो तब इह समैं सँभारि अधिक पछुताइहै॥ १६॥ ॥ चौपई॥ प्रथम कही मेरी जो करै। तिह पाछैं तुहि साथ (मू०ग्रं०१२५८) बिहरैं। बचन दीजियै मेरी हाथा। तौ मैं मानौ बच तौ नाथा॥ १७॥ ॥ अड़िल्ल॥ प्रिथम त्रिया को दोख छिमापन कीजियै। तिह पाछे मोरा मन प्रियबर लीजियै। दोख छिमापन कीन बचन त्रिय को तबै। हो सुनै संन्यासिनि बैन स्रवन भीतर जबै॥१८॥ ॥ चौपई॥ एक दिवस त्रिय के ग्रहि आवै। दुतिय दिवस ताके घर जावै। रानी भेस संन्यासिनि धरै। काम भोग राजा तन करै॥ १९॥ तिह त्रिय दुतिय नारि करि जानै। भेद अभेद न मूड़ पछानै। इस्त्री चरित्र नही लखि पावै। नितप्रति अपनो मूँड मुँडावै॥ २०॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ तीन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ ३०३॥ ५८४०॥ अफजूं॥

पछताओगी॥ १४॥ इस यौवन का क्या अभिमान जो किसी के पास भी स्थिर नहीं रहता। आओ दोनों भोग-विलास करें, इसका कोई भरोसा नहीं है॥ १५॥ ॥ अड़िल्ल॥ धन-यौवन का अभिमान नहीं करना चाहिए। तुम हमें सुख दो और स्वयं भी सुख लो। तरुणावस्था जायगी और वृद्धावस्था आ जायगी। तब इस समय को याद कर तुम पछताओगी॥ १६॥ ॥ चौपाई॥ (रानी ने कहा—) पहले तुम मेरा कहना मानो, तब मेरे साथ विहार करो। हे राजन्! मुझे बचन दो, तब मैं तुम्हारा कहना मानूँगी॥ १७॥ ॥ अड़िल्ल॥ अपनी पहली स्त्री का दोष माफ़ कर दो और हे राजन्! फिर मेरा मन-तन स्वीकार करो। संन्यासिन ने तब अपने कानों से सुना कि राजा ने स्त्री का दोष क्षमा कर दिया है॥ १८॥ ॥ चौपाई॥ अब वह एक दिन उस स्त्री के घर जाता था और दूसरे दिन उसके घर जाता था। रानी ही संन्यासिन का वेश धारण कर राजा के साथ रमण करती थी॥ १९॥ राजा उसे दूसरी स्त्री समझता था और मूर्ख भेद-अभेद कुछ नहीं जान रहा था। स्त्री के प्रपंच को नहीं समझ पा रहा था और रोज़ ठगा जाता था॥ २०॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ तीसरे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ ३०३॥ ५८४०॥ अफजूं॥

अथ तीन सौ चार चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बिधीसैन राजा इक सूरो। तेग देग दुहूँअनि करि पूरो। तेजवान दुतिवान अतुल बल। अरि अनेक जीते जिन दलि मलि ॥ १ ॥ बिध्यमती दुहिता इक ताके। नरी नागनी सम नहि जाके। अप्रमान तिह सेज सुहावै। रवि ससि रोज बिलोकन आवै ॥ २ ॥ ताको लग्यो एक संग नेहा। ज्यों सावन को बरिसत मेहा। चतुर कुअर तिह नाम भनिज्जै। कवन पुरख पटतर तिह दिज्जै ॥ ३ ॥ बिध्या देई इक दिन रसिकै। बोलि लिया प्रीतम कह कसिकै। कामभोग तिह साथ कमायो। तरुनी तरुन अधिक सुख पायो ॥ ४ ॥ बिधीसैन सौ किनहि जताई। तोरि सुता ग्रिहि जार बुलाई। कामभोग तिह साथ करत है। तो ते न्रिप नहि नेकु डरत है ॥ ५ ॥ तब न्रिप साथ तिसी को लैकै। जात भयो तह अधिक रिसैकै। बिध्यामती जबै सुनि पाई। मीत सहित जिय मै डरपाई ॥ ६ ॥ खोदि छात द्वै छेद सवारे।

तीन सौ चौथा चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ बिधीसेन एक शूरवीर राजा था जो देग और तेग दोनों का धनी था। वह तेजस्वी, अतुल बलशाली था और उसने अनेकों शत्रुओं का मर्दन कर उन्हें जीता था ॥ १ ॥ विद्यामती उसकी एक पुत्री थी जिसके समान नर-नाग-स्त्री कोई भी नहीं थी। उसकी शय्या अपरिमित रूप से शोभायुक्त थी, जिसे सूर्य-चन्द्र भी रोज़ देखने आते थे ॥ २ ॥ उसका सावन की घनघोर वर्षा के समान किसी से स्नेह हो गया। उसका नाम चतुरकुँवर था। उसकी भी तुलना भला किसने साथ की जाय ॥ ३ ॥ एक दिन रसिक विद्यादेवी ने प्रियतम को बुला लिया। उसके साथ कामक्रीडा की और तरुण-तरुणी दोनों ने सुख प्राप्त किया ॥ ४ ॥ किसी ने राजा बिधीसेन को बता दिया कि तुम्हारी पुत्री ने घर में यार को बुलाया है। वह उसके साथ कामभोग करती है और राजा, तुमसे बिलकुल नहीं डरती है ॥ ५ ॥ तब राजा उस (व्यक्ति) को साथ ले क्रुद्ध हो उसी ओर चल पड़ा। जब विद्यामती ने सुना तो वह मित्र-सहित मन में डर गई ॥ ६ ॥ उसने छत खुदवा कर दो छिद्र किये जहाँ दो जानवर आये। उन्होंने उसी मार्ग से मल त्याग किया जो राजा और दूत के

जिह आवत बैराह बिचारे। तिह मग ह्वै बिसटा दुहूँ करा। दूत सहित त्रिप के सिर परा ॥ ७ ॥ अंध गए ह्वै सूझन आयो। तिसी पैंड ग्रहि जार पठायो। राजा भेद अभेद न लहा। दुहिता काम कै गई कहा ॥ ८ ॥ बिसटा रही दुहूँ के लगिकै। सुघर गयो तिह के सिर हगि (मू०ग्रं०१२५६) कै। घरीक लगी धोवते बदनन। बहुरि गए दुहिता कै सदनन ॥९॥ तहाँ जाइ जौ त्रिपति निहरा। जारबार कछु दिशटि न परा। तब त्रिप उलटि तिसी को मारियो। बिशटा प्रथम जाँहि सिर परियो ॥ १० ॥ इह छल सौ त्रिय पियहि उबार्यो। तिनके मुख बिशटा को डार्यो। भला बुरा भूपति न बिचारा। भेददाइ कहि पकरि पछारा ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ चार चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३०४ ॥ ५८५१ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ पाँच चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ त्रिपुरा शहिर बसत है जहाँ। त्रिपुरपाल राजा थो जहाँ। त्रिपुरमती ताको बर नारी। कनक अवटि

सिर पर पड़ा ॥ ७ ॥ वे दोनों देखने में असमर्थ हो गये और उन्हें कुछ भी नहीं सूझा। उसने उसी रास्ते से अपने यार को घर भेज दिया। राजा ने भेद-अभेद कुछ नहीं जाना और समझा कि पुत्री किसी कार्यवश बाहर गई है ॥ ८ ॥ मल दोनों को लगा और वह बुद्धिमान दोनो के सिर पर मल त्यागकर चला गया। उन्हें मुँह आदि धोने में घड़ी भर का समय लग गया। वे पुनः पुत्री के घर गए ॥ ९ ॥ वहाँ जाकर जब राजा ने देखा तो मित्र आदि कुछ भी दिखाई नहीं दिया। तब राजा ने उलटा उसे मार डाला जिसके सिर पर पहले मल गिरा था ॥ १० ॥ इस छल से स्त्री ने प्रिय को बचाया और उन पर मल फिकवाया। राजा ने भला-बुरा कुछ नहीं सोचा और भेद देनेवाले को पछाड़ फेंका ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में तीन सौ चौथे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३०४ ॥ ५८५१ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ पाँचवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ त्रिपुरा शहर में त्रिपुरपाल राजा था जिसकी रानी

साँचे जनु ढारी ॥ १ ॥ फूलमती दूसरि तिह सवतिनि । जनु तिह हुता आँखि मैं सौ कनि । तासो ताहि तिपरधा रहै । चित भीतर मुख ते नहि कहै ॥ २ ॥ त्रिपुरामती एक द्विज ऊपर । अटकी रहै अधिक ही चित करि । रैनि दिवस ग्रहि ताहि बुलावै । काम केल रुचि मान मचावै ॥ ३ ॥ एक नारि तिन बोलि पठाई । अधिक दरब दै ऐसि सिखाई । जब ही जाइ प्रभा सभ सोई । ऊच शबद उठियहु तब रोई ॥ ४ ॥ यौ कहि जाइ त्रिपति तन सोई । आधी राति अँधेरी होई । अधिक दुखित ह्वै नारि पुकारी । त्रिप के परी कान धुनि भारी ॥ ५ ॥ राणी लई संग अपने करि । हाथ बिखै अपने अस कौ धरि । दोऊ चलि तीर तवन के गए । इह बिधि सौ पूछत तिह भए ॥६॥ ॥ दोहरा ॥ को है रो तूँ रोत क्यों कहाँ लग्यो दुख तोहि । मारत हो नहि ठौर तुहि साच बतावहु मोहि ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ मुहि अरबला त्रिपति की जानहु । भूपति भोर काल पहिचानहु । ताते मैं रोवत दुखियारी । सभै बिछुरिहै निसुपति प्यारी ॥ ८ ॥ किह बिधि बचैं त्रिपति के प्राना ।

त्रिपुरमती थी जो मानों सोने के साँचे में ढालकर बनाई हुई थी ॥ १ ॥ आँख में धूल के समान उसकी एक सौतन थी जिसका नाम फूलमती था । उसकी मन ही मन उस रानी से स्पर्धा बनी रहती थी, परन्तु वह मुख से कुछ नहीं कहती थी ॥ २ ॥ त्रिपुरामती मन ही मन एक ब्राह्मण के साथ उलझी हुई थी । उसे रात-दिन घर बुलाती थी और केलिक्रीड़ा रुचिपूर्वक किया करती थी ॥ ३ ॥ उसने एक स्त्री बुलाई और उसे अत्यधिक द्रव्य दे बोली कि जब सभी सो जाएँ तो तुम ऊँचे स्वर में रोने लग जाना ॥ ४ ॥ यह कहकर वह राजा के साथ सो गई और इधर आधी रात बीतने पर वह स्त्री अत्यंत दुखित स्वर में चिल्लाई । राजा ने स्वर सुना ॥ ५ ॥ हाथ में तलवार पकड़ उसने रानी को अपने साथ लिया । दोनों उसके पास गए और इस प्रकार उससे पूछने लगे ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ तुम कौन हो ? क्यों रो रही हो ? तुम्हे क्या दुख है ? तुम सच बताओ नहीं तो तुम्हें अभी जान से मार डालूँगा ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ मुझे राजा की आयु समझो । राजा को सुबह काल पहचान कर ले जायगा । इससे मैं अत्यधिक दुखी हूँ कि सुबह सभी इस चन्द्र-समान राजा से बिछुड़ जायँगे ॥ ८ ॥ कोई ऐसा उपाय किया जाय जिससे राजा के प्राण बच जायँ उस स्त्री ने तब कहा कि

प्रात कीजियै सोई बिधाना। तह त्रिय कहियो क्रिया इक करै। तब मरबे ते न्रिपति उबरै ॥ ९ ॥ त्रिपुरमती दिजबर कह देहू। डोरी निजु काँधे करि लेहू। दरब सहित तिह ग्रहि पहुचावै। तब न्रिप निकट काल नहि आवै ॥ १० ॥ फूलि देइ जु दुतिय त्रिय घर मै। तिह देवै चंडारहि कर मै। त्रिपुरमती (मू०ग्रं०१२६०) कह ग्रह न बुलावै। ताकौ फेरि न बदन दिखावै ॥ ११ ॥ ॥ दोहरा ॥ प्रात आइ अपने सदन वहै क्रिपा न्रिप कीन। इक रानी दिजबर दई दुतिय चंडारहि दीन ॥ १२ ॥ भेद अभेद त्रियान के मूढ न सक्यो बिचारि। दई दोऊ त्रिय पुन्य करि जिय को त्रास निवारि ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ पाँच चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३०५ ॥ ५८६४ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ छे चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बहड़ाइचि को देस बसत जह। धुंधपाल न्रिप बसत होत तह। दुंदब दे ताके घर रानी। जाकी सम

एक काम करो जिससे राजा मरने से बच सकता है ॥ ९ ॥ त्रिपुरमती रानी तो ब्राह्मण को दे दो और स्वयं कन्धे पर डोरी (जनेऊ) धारण कर लो। यदि द्रव्य समेत उसे उस पंडित के घर पहुँचाओगे तो काल तुम्हारे पास नहीं आ सकता ॥ १० ॥ फूलदेवी जो राजा की दूसरी स्त्री है, उसे चांडाल के हाथ में दे दो और त्रिपुरमती को फिर वापस घर नही बुलाया जाय और न ही वह फिर मुख दिखाए ॥ ११ ॥ ॥ दोहा ॥ प्रातः राजा ने अपने महल में आकर वही कार्य किया। एक रानी तो ब्राह्मण को दे दी और एक चांडाल को सौंप दी ॥ १२ ॥ वह मूर्ख स्त्रियों के रहस्य न समझ सका और मन का भय त्यागने के लिए उसने दोनों स्त्रियाँ दान में दे दीं ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ पाँचवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३०५ ॥ ५८६४ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ छठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ बहराइच में धुंधपाल राजा रहता था। दुंदुभिदेवी उसकी रानी थी जिसके समान शचि (इन्द्र की पत्नी) भी नही

सुंदरि न बखानी । १ ॥ छत्रिक सुलच्छन राइ बखनियत । छत्री को तिह पूत प्रमनियत । ताके तन सुंदरता घनी । मोर बदन ते जात न भनी ॥ २ ॥ तासौ बधी कुअरि की प्रीता । जैसी भाँति राम सो सीता । रैनि दिवस तिह बोलि पठावै । शंक त्याग लिय भोग मचावै ॥ ३ ॥ इक दिन खबरि न्रिपति कह भई । भेदी किनहि ब्रिथा कहि दई । अधिक कोप करि गयो न्रिपति तह । भोगत हुती जार कह लिय जह ॥ ४ ॥ रानी भेद पाइ अस कीया । बाँधि औध सिहजा तर लीया । राव सहित ऊपरहि बहिठी । भाँति भाँति तन होइ इकठी ॥ ५ ॥ रति मानी न्रिप साथ बनाई । मूरख कंत बात नहि पाई । रीझि रहा अबला कह भजिकै । भाँति भाँति के आसन सजिकै ॥ ६ ॥ भोग कमात अधिक थकि गयो । सोवत सेज तिसी पर भयो । जौ न्रिचेशट त्रिय पिय लखि पायो । जारि काढि करि धाम पठायो ॥ ७ ॥ ॥ दोहरा ॥ जागि खोजि न्रिप घर थका जारन लह्यो निकारि । भेद दियो जिह जान तिह झूठो हन्यो गवार ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ छे चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३०६ ॥ ५८७२ ॥ अफजूँ ॥

थी ॥ १ ॥ वहाँ एक सुलक्षण राय नामक व्यक्ति क्षत्रिय-पुत्र जाना जाता था । उसकी अत्यधिक सुन्दरता का मैं वर्णन नहीं कर सकता ॥ २ ॥ उस कुँवरि की प्रीति उससे वैसी हो गई जैसी राम-सीता की प्रीति थी । वह रात-दिन उसे कहकर बुलवा लेती थी और निःशंक हो रमण करती थी ॥ ३ ॥ एक दिन राजा को किसी भेदिए द्वारा यह खबर मिल गई । राजा अत्यधिक कुपित हो वहाँ चला गया, जहाँ स्त्री अपने यार के साथ भोग-रत थी ॥ ४ ॥ रानी ने पता लगने पर ऐसा किया कि मित्र को शय्या के नीचे औंधा बाँध लिया । अब वह राजा-समेत ऊपर बैठी और विभिन्न प्रकार से चिमट गई ॥ ५ ॥ राजा के साथ रतिक्रीड़ा की और मूर्ख समझ ही नहीं पाया । वह स्त्री के साथ भाँति-भाँति के आसनों के माध्यम से रमण कर प्रसन्न हो उठा ॥ ६ ॥ जब क्रीडा करते अत्यधिक थक गया तो उसी शय्या पर राजा सो गया । जब स्त्री ने पति को निश्चेष्ट देखा तो यार को निकाल कर घर भेज दिया ॥ ७ ॥ ॥ दोहा ॥ जगने पर राजा खोज कर थक गया पर वह

मगर उसे दिखाई नहीं दिया। जिसने भेद दिया था उसे व्यर्थ ही उसने मार डाला ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ छठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३०६ ॥ ५८७२ ॥ अफजूँ ॥

अथ तीन सौ सात चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ भैरोपाल सुना इक राजा। राज पाट ताही कह छाजा। चपलावती सुनी तिह त्रिय बर। हुती पंडिता सकल हुनर करि ॥ १ ॥ अद्रपाल इक न्रिपति परोसा। देग तेग को जाहि भरोसा। सुघनावती सुता इक ताकी। रोशन भयो जोति लसि वाकी ॥ २ ॥ (मू०ग्रं०१२२१) इक दिन निकसा न्रिपति शिकारा। लए स्वान सीचान हजारा। चीता और जारियन लीने। स्याह गोस नहि जाँहि सु चीने ॥ ३ ॥ लगर झगर जुररा अरु बाजा। बहरी कुही सिचान समाजा। बासे और बसीनै घनी। चिपक धूतियैं जाँहि न गनी ॥ ४ ॥ भाँति भाँति तन खेल शिकारा। अधिक म्रिगन कह खेदि पछारा। तब लगि द्रिशटि बराहिक आयो। तिह पाछे तिह तुरंग धवायो ॥ ५ ॥ जात भयो ताही

तीन सौ सातवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ भैरवपाल एक राजा था जिसका राजपाट चारों ओर छाया हुआ था। उसकी श्रेष्ठ स्त्री चपलावती थी जो सभी कलाओं में निपुण थी ॥ १ ॥ पड़ोस में ही अद्रपाल नामक राजा था जिसे अपनी दान-क्षमता और वीरता पर पूरा भरोसा था। उसकी पुत्री सुघनावती थी, जिससे चाँद भी रौशन होता था ॥ २ ॥ एक दिन राजा हजारों कुत्ते, बाज लेकर शिकार के लिए निकला। उसने पालतू चीते, आग जलानेवाले व्यक्ति और स्याहगोश (कुत्ते और बिल्ली की मिश्रित नस्ल का काले कानों वाला शिकारी जानवर) आदि लिये ॥ ३ ॥ अनेकों प्रकार के बाज लिये जिनमें मगर, बहरी, कुही, सीचान आदि भी थे। बास, बसीन, चिपक, धूतिए आदि अगणित पशु-पक्षी लिये ॥ ४ ॥ विभिन्न प्रकार से शिकार खेलकर उसने अनेकों मृगों को दौड़ाकर पछाड़ फेंका। तब तक एक सूअर नजर आया और उसके पीछे उसने घोड़ा लगा

के देसा । हाँकि तुरंग पवन के भेसा । सुघनावती लखा जब ताकों । लयो बुलाइ तहाँ ते वाकों ॥ ६ ॥ धौलर तर कमंद लरकाई । लयो तिसौ तिह पैंड चढ़ाई । काम भोग अति रुच करि माना । भेद दूसरे मनुख न जाना ॥ ७ ॥ तब तिह पित यौं ह्रिदै बिचारा । निज रानी के साथ उचारा । हम तुम आउ सुता के जाहीं । दुहिता होइ खुशी मन माहीं ॥ ८ ॥ तब वै दोऊ सुता के गए । ताके प्रापति द्वार पर भए । सुघनमती तिह लखि दुख पायो । अधिक अशरफी काढि मँगायो ॥ ९ ॥ और अधिक तिन अतिथ बुलाए । एक एक दै मुहर पठाए । तिन के माँहि न्रिपति कर मंगना । दै सत मुहर निकार्‌यो अँगना ॥ १० ॥ मुर परवार लख्यो इन राजा । एतो दयो दरब बिनु काजा । ताते दुगुन तवन कह दयो । भेद अभेद न जानत भयो ॥ ११ ॥ ॥ दोहरा ॥ राज सुता पिय मित्र को इह छल अतिथ बनाइ । दै अशरफी निकारियो भेद न जाना राइ ॥ १२ ॥

दिया ॥ ५ ॥ वह अब पवनवेग से घोड़े को हाँककर उसी के देश की ओर चल पड़ा । सुघनावती ने जब उसे देखा तो उसे बुला लिया ॥ ६ ॥ महल के नीचे कमंद लटकाकर उसे उसी रास्ते से ऊपर चढ़ा लिया । उसने रुचिपूर्वक कामक्रीडा की और किसी दूसरे व्यक्ति को पता तक नहीं चल पाया ॥ ७ ॥ तब उसके पिता ने हृदय में विचार कर रानी से कहा, आओ हम-तुम पुत्री के घर चलें, वह खुश हो जायगी ॥ ८ ॥ तब वे दोनों पुत्री के दरवाजे तक जा पहुँचे । सुघनमती उनको देखकर दुखी हो उठी और उसने काफ़ी अशर्फ़ियाँ मँगाई ॥ ९ ॥ उसने और अनेकों अतिथियों (साधुओं) को बुलाया और सबको एक-एक मुहर देकर बिदा किया । उसी के बीच उस राजा को भी याचक बनाकर सात मुहर देकर विदा कर दिया ॥ १० ॥ राजा ने सोचा कि आखिर मेरे परिवार की राजकुमारी है, तभी इसने इतना धन अकारण ही दे दिया है । मूर्ख ने भेद-अभेद पहचाने बिना उससे दुगना धन उसे दे दिया ॥ ११ ॥ ॥ दोहा ॥ राजकुमारी ने प्रिय मित्र को छलपूर्वक साधु-फ़क़ीर बनाकर अशर्फ़ी देकर निकाल दिया और राजा ने भी इस छल-भेद को नहीं

मन मानत को भोग करि पित अरु मात दिखाइ। इह छल जो काढा तिसै तिसै न गह्यो बनाइ ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ सात चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३०७ ॥ ५८८५ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ आठ चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ कोच विहार शहिर जह बसै। अमरावती पुरी कह हसै। ब्रिधकेत तिह भूप भनिज्जै। को राजा पटतर तिह दिज्जै ॥ १ ॥ स्री फुट बेसरि दे तह दारा। जिह सम देव न देवकुमारा। ताको जात न रूप उचारा। दिवस भयो ताते उजियारा ॥ २ ॥ हाजी राइ तहाँ खतिरेटा। इशक मुशक के साथ लपेटा। ताकी जात न प्रभा (मू॰ग्रं॰१२९२) उचारी। फूलि रही जानुक फुलवारी ॥ ३ ॥ स्री फुट बेसरि दे तिह लहा। इह बिधि चित अपने महि कहा। कै अब मरौ कटारी हनिकै। कै इह भजौ आजु बनि ठनिकै ॥ ४ ॥

समझा ॥ १२ ॥ मनचाहा भोग करके, माता-पिता को दिखाते हुए उसे छलपूर्वक निकाल दिया और उसे कोई पकड़ न सका ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ सातवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३०७ ॥ ५८८५ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ आठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ कूच बिहार शहर अपनी सुन्दरता के कारण अमरावती (स्वर्ग) की भी हँसी उड़ाता था। वृद्धकेतु वहाँ का राजा कहा जाता था जिसके समान अन्य कोई राजा नहीं था, जिससे उसकी तुलना की जा सके ॥ १ ॥ उसकी पत्नी फुटबेसरी देवी थी जिसके समान कोई देव-कन्या भी नहीं थी। उसके रूप का वर्णन नहीं किया जा सकता। दिन ने भी मानों उसी से उजाला लिया हो ॥ २ ॥ वहाँ एक क्षत्रिय हाजी राय था जो इश्क-मुश्क में सराबोर था। उसकी छवि का भी वर्णन नहीं किया जा सकता। वह ऐसा था मानों फुलवाड़ी खिली हो ॥ ३ ॥ श्री फुटबेसरी देवी ने उसे देखकर मन में सोचा कि या तो आज कटारी मारकर मर जाऊँगी अथवा बन-ठनकर आज ही इसके साथ रमण करूँगी ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥ अभी उसकी मस भीग ही रही

॥ दोहरा ॥ मसि भीजत तिह बदन पर अति सुंदर सरबंग । कनक अवटि साँचे ढर्‌यो लूटी प्रभा अनंग ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ सुघरि सहचरी तहाँ पठाई । छल सौ ताँहि तहाँ लै आई । जब तिह हाथ चलायो रानी । हाजी राइ बात नहि मानी ॥ ६ ॥ अबला कोटि जतन करि हारी । क्योंहूँ न भजी ताहि त्रिप नारी । हाइ हाइ गिरि भूम उचारा । मुर करेज डाइनी निहारा ॥ ७ ॥ तिह त्रिय बस्त्र हुते पहिराए । डाइन सुनत लोग उठि धाए । जब गहि ताहि बहुत बिधि मारा । तब तिन मना जु त्रिया उचारा ॥ ८ ॥ तब लगि तहाँ त्रिपति हूँ आयो । सुनि करेज त्रिय हर्‌यो रिसायो । इह डाइनि कह कहाँ सँघारो । कै अब ही रानियहि जियारो ॥ ९ ॥ तब तिन दूरि ठाढ त्रिप कीए । रानी के चुंबन तिन लीए । राजा लखै करेजो डारै । भेद अभेद नहि मूढ़ बिचारै ॥ १० ॥ सभ तब ही लोगान हटायो । अधिक नारि सौ भोग मचायो । राखे जो मुरि कहि प्रिय प्राना । तुम सौ रमौ सदा बिधि नाना ॥ ११॥

थी अर्थात् चेहरे पर छोटे-छोटे बाल उग रहे थे और वह सर्वांग सुन्दर था। वह मानों सोने के साँचे में ढला था और उसने मानों कामदेव की प्रभा भी लूट ली थी ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसने एक सयानी दासी वहाँ भेजी जो उसे छलपूर्वक वहाँ ले आई। जब रानी ने हाथ बढ़ाया तो हाजी राय ने बात नहीं मानी ॥ ६ ॥ वह स्त्री ज़ोर लगाकर हटी पर कैसे भी उस क्षत्रिय ने राजपत्नी के साथ रमण नहीं किया। अब वह धरती पर गिरकर हाय-हाय पुकारने लगी और कहने लगी कि मुझ डायन ने कलेजे से दबा लिया है ॥ ७ ॥ उस क्षत्रिय को उसने स्त्री वस्त्र पहना रखे थे। डायन की बात सुनकर सभी लोग उठ दौड़े और उसे पकड़कर बहुत मारा और जो उस स्त्री ने कहा वह सत्य मान लिया ॥ ८ ॥ तब तक राजा वहाँ आ गया और कलेजा चुरा लेने की बात सुनकर क्रुद्ध हो उठा। उसने कहा कि अभी डायन को मार दो अथवा यह रानी को अभी जीवित करे ॥ ९ ॥ तब उस (हाजी राय) ने राजा को दूर खड़ा कर रानी का चुंबन लिया। राजा समझ रहा था कि कलेजा डाल रही है। वह मूर्ख भेद-अभेद तनिक नहीं पहचान रहा था ॥ १० ॥ तब उसने सब लोगों को हटा दिया और उस स्त्री के साथ खूब रमण किया। हे प्रिय ! तुमने मेरे प्राण बचाए हैं. मैं तुमसे विभिन्न प्रकार से सदैव रतिक्रीडा करती रहूँगी ॥ ११ ।

अधिक भोग तासौ त्रिय करिकै । धाइ भेस दै दयो निकरिकै । भाखत जाइ पतिहि अस भई । देइ करिजवा डाइनि गई ॥ १२ ॥ दित मुहि प्रथम करिजवा भई । पुनि वह अंतध्यान ह्वै गई । न्रिपबर द्रिशटि न हमरी आई । क्या जनियै किह देस सिधाई ॥ १३ ॥ सत्ति सत्ति तब न्रिपति उचारा । भेद अभेद न मूढ़ बिचारा । निरखत थो त्रिय जार बजाई । इह चरित्र ग्यो आँखि चुराई ॥ १४ ॥ प्रथम मित्र त्रिय बोलि पठायो । कह्यो न किय त्रिय त्रास दिखायो । बहुरि भजा इह चरित्र लखाया । ठाढ न्रिपति जड़ मूँड मुँडाया ॥ १५ ॥ १ ॥ (मू०ग्रं०१२६३)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ आठ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३०८ ॥ ५६०० ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ नौ चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ करनाटक को देश बसत जह । स्री करनाटक सैन न्रिपति तह । करनाटक देई ग्रहि नारी । जाते लिय रवि ससि उजियारी ॥ १ ॥ तह इक शाह बसत

उस स्त्री से अत्यधिक विहार करके वेश बदलकर वह निकल गया । अब उस रानी ने पति से जाकर कहा कि डायन मुझे कलेजा दे गई है ॥ १२ ॥ वह मुझे कलेजा देकर अन्तर्धान हो गई है । राजन् ! वह तो अलोप हो गई, पता नहीं किस देश में चली गई है ॥ १३ ॥ राजा ने "सत्य-सत्य" कहा और मूर्ख ने भेद-अभेद नहीं समझा । उसके देखते-देखते मित्र भोग गया और प्रपंच से आँख चुराकर निकल गया ॥ १४ ॥ पहले तो स्त्री ने मित्र को बुलाया, किसी से कहा नहीं और उसे डराया । फिर उसका इस प्रपंच से उपभोग किया और राजा मूर्ख बना ठगा हुआ खड़ा का खड़ा रहा ॥ १५ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ आठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३०८ ॥ ५६०० ॥ अफजूं ॥

तीन सौ नौवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ कर्नाटक देश में कर्नाटकसेन राजा था जिसकी रानी कर्नाटकमती थी । सूर्य-चन्द्र ने भी मानो उससे प्रकाश लिया हो ॥ १ ॥

थो नीको । जाँहि निरखि सुख उपजत जी को । ताके सुता हुती इक धामा । थकित रहत निरखत जिह बामा ॥ २ ॥ सुता अपूरब दे तिह नामा । जिह सी कहूँ कोऊ नहि बामा । एक शाह के सुत कह ब्याही । बीरजकेत नाम तिह आही ॥ ३ ॥ जब वहु ब्याहि ताहि लै गयो । निजु सदनन लै प्रापति भयो । एक पुरख तिन नारि निहारा । जाकी सर नहि राजकुमारा ॥ ४ ॥ निरखत ताँहि लगन तिह लगी । नींद भूखि तब ही ते भगी । पठै सहचरी ताहि बुलावै । कामभोग रुचि मान कमावै ॥ ५ ॥ संग ताके बहु बधा सनेहा । राँझन और हीर को जेहा । बीरजकेतह यादि न ल्यावै । धरम भ्रात कहि ताँहि बुलावैं ॥ ६ ॥ भेद ससुर के लोग न जानै । धरम भ्रात तिह त्रिय पहिचानै । भेद अभेद न मूरख लहही । भ्राता जान कछू नहि कहही ॥ ७ ॥ इक दिन त्रिय इह भाँति उचारा । निजु पति कौ दैकै बिखु मारा । भाँति भाँति सौ रोदन करै । लोग लखत सिर केस उपरै ॥ ८ ॥ अब मै धाम कवन के रहो । मैं प्रिय शबद कवन सौ कहो । न्याइ

वहाँ एक सुन्दर धनिक बसता था जिसे देखकर सुख प्राप्त होता था । उसके घर एक पुत्री थी जिसे देखकर स्त्रियाँ थक जाती थीं ॥ २ ॥ उस पुत्री का नाम अपूर्वदेवी था जिसके समान अन्य कोई स्त्री नहीं थी । वह एक धनी के पुत्र को ब्याही थी जिसका नाम वीर्यकेतु था ॥ ३ ॥ जब वह उससे विवाह कर अपने घर पहुँचा तो उसकी स्त्री ने एक पुरुष को देखा, जिसके समान कोई राजकुमार भी नहीं था ॥ ४ ॥ उसे देखते ही उसकी लगन उससे लग गई और उसकी नींद-भूख सब भाग खड़ी हुई । अब वह दासी भेजकर उसे बुलाती थी और रुचिपूर्वक उससे कामभोग करती थी ॥ ५ ॥ उसका उसके साथ ऐसा ही स्नेह बन गया जैसा हीर-राँझा का स्नेह था । वीर्यकेतु को वह याद नहीं रखती थी और उस प्रेमी को धर्मभाई कहकर बुला लेती थी ॥ ६ ॥ ससुराल के लोग रहस्य को नहीं समझते थे और उस व्यक्ति को धर्मभाई ही समझते थे । वे मूर्ख भेद-अभेद कुछ नहीं समझते थे और उसे भाई समझकर कुछ नहीं कहते थे ॥ ७ ॥ एक दिन स्त्री ने ऐसा किया कि पति को विष देकर मार दिया । भाँति-भाँति प्रकार से वह रोने लगी और लोगों के देखते अपने सिर के बाल उखाड़ने लगी ॥ ८ ॥ अब मैं किसके घर रहूँ और प्रिय शब्द किसके लिए कहूँ परमात्मा के घर मे न्याय नहीं

नही हरिके घरि भीतरि। इह गति करी मोरि अवनी तर ॥ ९ ॥ ग्रहि को दरब संग करि लीना। मित्रहि संग पयाना कीना। धरम भाइ जाकौ करि भाखा। इह छल नाथ धाम करि राखा ॥ १० ॥ लोग सभै इह भाँति उचारा। आपु बिखै मिलि करत बिचारा। कहा करै इह नारि बिचारी। जाकी दैव अैस गति धारी ॥ ११ ॥ ता ते लै सभ ही धन धामा। अपुने गई भाइ के बामा। भेद अभेद न सकत बिचरिकै। गई जार के नाथ सँघरिकै ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ नौं चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३०९ ॥ ५९१२ ॥ अफजूँ ॥

अथ तीन सौ दस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ पुनि मंत्री इह भाँति उचारा। सुनहु त्रिपति जू बचन हमारा। गारव देस बसत है जहाँ। गौरसैन राजा थो तहाँ ॥ १ ॥ (मू०ग्रं०१२६४) स्री रसतिलक देइ तिह दारा। चंद्र लियो जाते उजियारा। सामुंद्रक लच्छन तासै सब। छबि उचार तिह सकै कवन कबि ॥ २ ॥ तह

है। मेरी इस धरती पर क्या हालत बना दी है ॥ ९ ॥ उसने प्यार का द्रव्य बटोरा और मित्र के साथ प्रस्थान कर दिया। जिसे धर्मभाई कहा था उसे छलपूर्वक पति मानकर रखा ॥ १० ॥ लोग सभी विचार करने लगे और कहने लगे कि यह बेचारी स्त्री क्या करे, जिसकी परमात्मा ने यह हालत कर दी है ॥ ११ ॥ यह अब धन-दौलत लेकर अपने भाई की पत्नी के साथ रहने के लिए गई है। भेद-अभेद कोई न जान सका और वह पति को मार यार के साथ चली गई ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ नौवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३०९ ॥ ५९१२ ॥ अफजूँ ॥

तीन सौ दसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ फिर मंत्री ने कहा कि हे राजन् ! मेरी बात सुनो। गारव देश में गौरसेन नामक राजा बसता था ॥ १ ॥ उसकी स्त्री रसतिलक देवी थी जिससे चन्द्रमा ने भी प्रकाश लिया था। उसमें सामुद्रिक वेद्या में माने जानेवाले सभी (शुभ) लक्षण थे और उसकी छवि का वर्णन कोई कवि नही कर सकता था २ वहाँ एक बनिक का

इह हुतो शाह को पूता। भूतल को जानुक पुरहूता। अधिक तरुन को तेज बिराजै। नरी नागनी को मन लाजै॥ ३॥ जब रानी तिह प्रभा निहारी। तब ते भई अधिक मतवारी। निरखि मित्र के नैन बिकानी। तब ही ते ह्वै गई दिवानी॥ ४॥ तब तिह बोलि लियो अपने घर। कामकेल कीना अति रुचि करि। भाँति भाँति तिह गरे लगायो। अबला अधिक ह्रिदै सुखु पायो॥ ५॥ तब लग आइ न्रिपति तह गयो। तत छिन डारि महल ते दयो। मरि गयो न्रिपति न भेद बिचारा। जो जन अरध उरध तें पारा॥ ६॥ आप होत इह भाँति उचारा। देव पकरि करि न्रिपति पछारा। मोरे साथ कियो थो संगा। ताते भयो अपवित्र सबंगा॥ ७॥ ॥ दोहरा॥ इह छल जार निकार्यो निजु नाइकहि सँघारि। भेद अभेद मूरख कछू सका न नैक बिचारि॥ ८॥ निजु नाइक कौ महल ते तिह हित दियो गिराइ। यार बचायो आपनो नैक न रही लजाइ॥ ९॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ दस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ ३१०॥ ५९२१॥ अफजूं॥

पुत्र था जो मानो धरती पर इन्द्र था। उस तरुण के अत्यधिक तेज को देखकर नर-नाग-स्त्रियों का मन लज्जित होता था॥ ३॥ जब रानी ने उसकी प्रभा देखी तो वह अत्यधिक मतवाली हो गई। मित्र के नयनों को देखकर बिक गई और तत्क्षण दीवानी हो गयी॥ ४॥ तब उसने उसे अपने घर बुला लिया और रुचिपूर्वक कामक्रीड़ा की। उसे विभिन्न प्रकार से गले लगाया और उस स्त्री ने सुख प्राप्त किया॥ ५॥ तब उधर से राजा वहाँ आ गया तो उसे तत्क्षण महल से नीचे गिरा दिया। राजा मर गया और ऊपर से नीचे गिर पड़ा॥ ६॥ तब उस (स्त्री) ने रोते हुए ऐसा कहा कि किसी दैत्य ने पकड़ कर राजा को पछाड़ फेंका है। इसने मेरे साथ समागम किया था इसलिए पूर्ण रूप से अपवित्र हो गया था॥ ७॥ ॥ दोहा॥ इस छल से अपने पति को मारकर उसने यार को निकाल दिया। वह मूर्ख कुछ भी भेद-अभेद न जान सका॥ ८॥ उस प्रेमी के लिए अपने पति को महल से गिरा दिया। अपने यार को बचा लिया और तनिक भी लज्जित नहीं हुई॥ ९॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ दसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ ३१०॥ ५९२१॥ अफजूं॥

अथ तीन सौ ग्यारह चरित्र कथन

॥ चौपई ॥ बिरतसैन इक न्रिपति सुजाना । मानत आनि देस जिह नाना । बिरहमंजरी ताकी रानी । सुंदरि भवन चतुदस जानी ॥ १ ॥ ताकै धाम एक सुत भयो । जानक रवि दुतियो प्रगटयो । सुंदरिता तिह कही न आवै । निरखत पलक न जोरी जावै ॥ २ ॥ तह इक तरनि शाह की जाई । जाकी छबि नहि जात बताई । कै ससि ते रोहनि इह जई । आगे ह्वैहै न पाछे भई ॥ ३ ॥ राजकुअर जब तवन निहार्यो । मदन बान तन ताहि प्रहार्यो । लगी अटकि सुधि बुधि छुट गई । तबहि तरुनि मतवारी भई ॥ ४ ॥ भाँति भाँति तन दरबु लुटाई । अधिक सखिन कह रही पठाई । राजकुअरि क्यों हूँ नहि आए । तासौ करे न मन के भाए ॥ ५ ॥ करि करि जतन कुअर (मू०ग्रं०१२६२) बहु हारी । कैस हूँ भजी मित्र नहि प्यारी । घायल फिरै कुअरि मतवारी । जानुक म्रिगी बिसिख तन मारी ॥ ६ ॥ रोवत कुअरि कबूँ उठि गावै । नाचत कबहूँ बचन सुनावै । मित्र

तीन सौ ग्यारहवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ बिरतसेन एक सुजान राजा था जिसकी आन अनेकों देश मानते थे । बिरहमंजरी उसकी रानी थी जो चारों दिशाओं में सुन्दरी मानी जाती थी ॥ १ ॥ उसके घर एक पुत्र पैदा हुआ जो मानो दूसरा सूर्य था । उसकी सुन्दरता का वर्णन नहीं किया जा सकता उसे देखकर आँखें बंद नहीं होती थीं ॥ २ ॥ वहाँ एक धनी की तरुणी पुत्री थी जिसकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता । मानों चन्द्रमा से रोहिणी नक्षत्र के रूप में पैदा हुई, जो न तो कभी पैदा हुई है और न कभी पैदा होगी ॥ ३ ॥ राजकुमार को जब उसने देखा तो उसे काम-बाण आ लगा । उसकी सुधि-बुधि जाती रही और वह तरुणी मतवाली हो गई ॥ ४ ॥ उसने अनेकों प्रकार से द्रव्य लुटाया और कई सखियों को भेजा पर राजकुमार आता ही नहीं था और उससे मनचाहा रमण नहीं करता था ॥ ५ ॥ वह कुँवरि यत्न कर करके हार गई पर किसी भी प्रकार मित्र के साथ रमण न कर पाई । वह कुँवरि ऐसे घायल घूम रही थी मानों मृगी को बाण लगा हो ॥ ६ ॥ रोती हुई कुँवरि कभी तो उठकर

मिलाइ देइ मुहि कोई । जो मुख माँगै द्यो तिह सोई ॥ ७ ॥ एक सखी इह भाँति उचारो । सुनहु मित्रनी बचन हमारो । जो तुहि को तव मित्र मिलाऊँ । तऊ कहाँ तुमते बर पाऊँ ॥ ८ ॥ शाह सुता जब यौ सुनि पावा । जनक बहुरि बपु मै जिय आवा । निधनी अधिक मनहु धन पायो । जनु कर अंम्रित म्रित के आयो ॥ ९ ॥ तासो लगन कुअरि की हुती । तासौ भेस धारि कै सुती । राज ग्रिहन मै किया पियाना । भाखत भई बचन बिधि नाना ॥ १० ॥ न्रिप सुत त्रिय जु तिहारे भई । मैं तिन तुमरे धाम पठई । तुम तिह त्रिय को चित्त चुरायो । अब चलि कुअर करो मन भायो ॥११॥ जब न्रिप सुत ऐसे सुनि पाई । चल्यो न पनहीं पाइ चढ़ाई । भेद अभेद जड़ कछु न बिचारा । आयो शाह सुता कै द्वारा ॥ १२ ॥ दिया बुझाइ दयो आगे त्रिय । आवत भयो अंधेरे घर पिय । चित्त अटका जासौ सो जानी । काम क्रिया तासौ कसि ठानी ॥ १३ ॥ काम भोग करि धाम सिधार्यो । मूरख कछु न बिचार बिचार्यो । दिया बुझाइ

गाने लग जाती और कभी नाचते-नाचते बातें करने लग जाती थी । मुझे कोई मित्र से मिला दे, जो माँगेगा मैं वही दे दूंगी ॥ ७ ॥ एक सखी ने उससे कहा कि हे सखी ! मेरी बात सुनो । यदि मैं तुम्हें तुम्हारा मित्र मिला दूं तो बताओ तुमसे मुझे क्या प्राप्त होगा ? ॥ ८ ॥ धनी की पुत्री ने जब यह सुना तो मानों उसके शरीर में प्राण वापस आ गए । मानो निर्धन ने अत्यधिक धन पा लिया हो या फिर मृतक को अमृत मिल गया हो ॥ ९ ॥ उसकी कुँवरि से परम मित्रता थी वह उसी का वेश धारण कर राजमहल में चली गई और विभिन्न प्रकार की बातें करने लगी ॥ १० ॥ हे राजकुमार ! जो तुम्हारी स्त्री अपने आपको मान चुकी है, मुझे उसने तुम्हारे पास भेजा है । तुमने उसका चित्त चुरा लिया है, अब तुम उसके साथ मनचाहा विहार करो ॥ ११ ॥ जब राजपुत्र ने यह सुना तो वह बिना जूता पहने ही चल पड़ा । उस मूर्ख ने भेद-अभेद कुछ नहीं समझा और उस शाह की पुत्री के द्वार पर आ पहुँचा ॥ १२ ॥ आगे स्त्री ने दीपक बुझा दिया और प्रिय अँधेरे घर में प्रविष्ट हुआ । जिसमें उसका मन अटका हुआ था उससे कसकर केलिक्रीड़ा की ॥ १३ ॥ रमणोपरान्त वह घर गया और मूर्ख ने तनिक भी विचार नहीं किया । दीपक बुझा कर वह स्त्री उसे रोज़ बुलाती और उससे

त्रिय रोज बुलावै। कामकेल करि कुमति कमावै ॥ १४ ॥ देन कहा सु दूतियहि दीना। काम भोग त्रिप सुत तन कीना। जिन जड़ भेद अभेद न पायो। इह छल अपनो मूँड मुँडायो ॥ १५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ ग्यारह चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३११ ॥ ५९३७ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ बारह चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ जोगसैन राजा इक अति बल। अरि अनेक जीते जिन दलमलि। स्री संन्यासमती दारा घर। अधिक चतुरि त्रिय हुती गुनन करि ॥ १ ॥ केतिक दिनन जनत सुत भई। सिखया राम बिरागी दई। बढत बढत सो भयो तरुन जब। अत ही सुंदरि होत भयो तब ॥ २ ॥ तह इक हुती जाट की दारा। अटकि रही लखि राजकुमारा। निसु दिन सदन ताहि के आवै। न्रिप सुत ताहि चित्त नहि (मू०ग्रं०१२६६) ल्यावै ॥ ३ ॥ ताते तरुनि दुखित अति भई। चित मै चरित बिचारे कई। तब तन इहै बिचार

कामक्रीड़ा करती थी ॥ १४ ॥ जो उसने दूती को देने को कहा था वह उसे दे दिया और राजा के पुत्र के साथ संभोग किया। उस मूर्ख ने भेद-अभेद न समझा और इसी प्रकार ठगा जाता रहा ॥ १५ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ ग्यारहवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३११ ॥ ५९३७ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ बारहवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ जोगसेन एक राजा था जिसने अनेकों शत्रुओं का मर्दन कर उन्हें जीता था। उसकी स्त्री संन्यासमती अत्यन्त गुणज्ञ थी ॥ १ ॥ कितने ही दिनों बाद उसके यहाँ पुत्र हुआ जिसे उसने राम और वैराग्य की शिक्षा दी। बढ़ता-बढ़ता जब वह तरुण हो गया तो अत्यन्त सुन्दर लगने लगा ॥ २ ॥ वहाँ एक जाट की स्त्री थी जो राजकुमार को देखकर उसमें उलझ गई। वह रोज उसके घर में जाती थी पर राजा का लड़का उसकी ओर ध्यान नहीं देता था ॥ ३ ॥ इससे तरुणी अत्यन्त दुखी हुई और उसने मन में अनेकों प्रपंच सोचे। तब मन में उसने सोच-समझकर

बिचारा। निजु तन भेस जोग को धारा ॥ ४ ॥ जोग भेस धरि तिह ग्रहि गई। जंत्र मंत्र सिखवत बहु भई। ताको लयो चोर करि चित्ता। और हरा ग्रहि को सभ बित्ता ॥ ५ ॥ इक दिन यौ तिह साथ उचारो। जानत जोगी सवहि उठारो। इक दिन इकल जु मोसौ चलै। कौतक लखहु सकल तुम भलै ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ अब लगि जगत मसान को नाहि निहारा नैन। अब जुगिया के हेत ते दिखिहैं भाखे बैन ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ जब निसु भई अरध अँध्यारी। तब न्रिप सुत इह भाँति बिचारी। इकलो जोगी साथ सिधैहैं। उठत मसान निरखि घर ऐहैं ॥ ८ ॥ चलत भयो जोगी के संगा। त्रिय चरित्र को लख्यो न ढंगा। ह्वै एकलो गयो तिह साथा। शस्त्र अस्त्र ग्रहि लयो न हाथा ॥ ६ ॥ जब दोऊ गए गहर बन माही। जह कोऊ मनुख तीसरो नाही। तब अबला इह भाँति उचारा। सुनहु कुअरि जू बचन हमारा ॥ १० ॥ ॥ त्रिय बाच ॥ कै जड़ प्रानन की आसा तजु। कै रुचि मानि आउ मुहि कौ भजु। कै तुहि काटि करै सत खंडा। कै दै मोरि भग बिखै लंडा ॥ ११ ॥ राजकुअर अत ही तब डरा।

योगी का वेश धारण कर लिया ॥ ४ ॥ योग-वेश में वह उसके घर गई और अनेकों यंत्र-मंत्र सिखाने लगी। उसने उसका चित्त और घर का सारा द्रव्य चुरा लिया ॥ ५ ॥ एक दिन इसने उससे कहा कि मैं सोते हुओं (मुर्दों) को भी उठा सकती हूँ। यदि एक दिन अकेले तुम मेरे साथ चलो तो तुमको आश्चर्यकारक काम दिखाऊँ ॥ ६ ॥ ॥ दोहा ॥ वह सोचने लगा, आज तक मैंने भूत को जागते नहीं देखा, अब योगी के प्रताप से यह भी देखूंगा ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब अँधेरी आधी रात हो गई तो राजकुमार ने सोचा कि अकेला ही योगी के साथ चलूंगा और भूत उठता देखकर घर आ जाऊँगा ॥ ८ ॥ वह योगी के साथ चल दिया और उसने स्त्री के प्रपंच को न समझा। वह अकेला ही उसके साथ गया और शस्त्र-अस्त्र कुछ भी हाथ में नहीं लिया ॥ ९ ॥ जब दोनों गहरे निर्जन वन में गए तो स्त्री ने कहा कि हे राजकुमार ! सुनो ॥ १० ॥ ॥ स्त्री उवाच ॥ हे मूर्ख ! या तो प्राणों की आशा त्याग दो अथवा आकर मेरे साथ रमण करो। तुझे काट कर सात टुकड़े कर दूंगी अथवा तुम मेरी योनि में लिंग प्रविष्ट कराओ ॥ ११ ॥ राजकुमार अत्यन्त भयभीत हो उठा और उसने उस स्त्री

काम भोग तिह त्रिय संग करा। इह छल सै वाको छलि गई। राइ बिरागियहि भोगत भई ॥ १२ ॥ अंत त्रियन के किनूँ न पायो। बिधना सिरजि बहुरि पछुतायो। जिन इह कियो सकल संसारो। वहै पछानि भेद त्रिय हारो ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ बारह चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३१२ ॥ ५९४९ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ तेरह चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ स्वरनसैन इक सुना न्रिपाला। जाके सदन आठ सै बाला। बिस्वमती ता के इक नारी। जात न जिह की प्रभा उचारी ॥ १ ॥ नाइनेक तिन न्रिपति निहारी। रूपमान गुन मान बिचारी। ताकह पकरि सदन लै आयो। काम भोग तिह साथ कमायो ॥ २ ॥ ताको लै इस्त्री न्रिप करो। भाँति भाँति तिह साथ बिहरो। ता त्रिय को (मू०ग्रं०१२९७) कुटेव नहि जाई। अवरन साथ रमैं

के साथ रतिक्रीडा की। इस छल से उसे छल गई और उसका उपभोग कर गई ॥ १२ ॥ स्त्रियों के रहस्य को कोई नहीं समझ सका है, इन्हें तो बनाकर विधाता भी पछताया था। जिसने यह सारा संसार बनाया है, वह भी स्त्री के रहस्य के सामने हार गया है ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ बारहवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३१२ ॥ ५९४९ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ तेरहवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ स्वर्णसेन एक राजा सुना जाता था जिसके घर में आठ सौ स्त्रियाँ थीं। उसकी एक स्त्री विश्वमती थी जिसकी प्रभा का वर्णन नहीं किया जा सकता ॥ १ ॥ राजा ने एक नाइन को देखा जो उसे रूपवान और गुणवान लगी। उसे वह पकड़कर महल में ले आया और उसके साथ कामक्रीडा की ॥ २ ॥ राजा ने उसे रानी बना लिया और विभिन्न प्रकार से उसके साथ विहार करने लगा। परन्तु उस स्त्री की बुरी आदतें नहीं गईं और वह अन्यों के साथ भी रमण किया करती थी ॥ ३ ॥ एक दिन जब आधी रात हुई तो वह अपने प्रेमी के घर गई।

लपटाई ॥ ३ ॥ इक दिन अरध निसा जब भई । जार धाम नाइनि वह गई । चौकीदारन गहि ताकौ लिय । नाक काटि कर बहुरि छाडि दिय ॥ ४ ॥ नाइनि कटी नाक लैकै कर । फिरि आई न्रिप के भीतर घर । तब न्रिप रोम मूँडबे काजा । माँग्यो तुरतु उसतरा राजा ॥ ५ ॥ तब तिन वहै उसतरा दीयो । जा पर साढि न कबहूँ कीयो । निरखि न्रिपति तिह अधिक रिसायो । गहि ता त्रिय की ओर चलायो ॥ ६ ॥ तब त्रिय हाइ हाइ कहि उठी । काटि नाक राजा जू सुटी । तब राजा हेरत तिह धायो । स्रोन पुलत लखि मुख बिसमायो ॥ ७ ॥ हाहा रट तब न्रिपति उचारा । मैं नहि ऐसो भेद बिचारा । निरखहु ता त्रिय की चतुराई । राजा मूँड बुराई दई ॥ ८ ॥ ॥ दोहरा ॥ भेद अभेद कौ तिन न्रिपति किया न हिरदै बिचार । ताहि बुराई सिर दई नाक कटाई नारि ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ तेरह चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३१३ ॥ ५९५८ ॥ अफजूं ॥

चौकीदारिन ने उसे पकड़ लिया और उसकी नाक काटकर उसे छोड़ दिया ॥ ४ ॥ नाइन कटी नाक को हाथ में लेकर राजा के महल में वापस आ गई । तब राजा ने बाल काटने के लिए उस्तरा उससे माँगा ॥ ५ ॥ तब उसने उसे वही उस्तरा दिया जो बिलकुल काट नहीं सकता था । राजा यह देखकर क्रुद्ध हो उठा । उसने उस्तरा पकड़कर उसकी तरफ फेंक चलाया ॥ ६ ॥ तब वह स्त्री हाय ! हाय ! कर उठी और कहने लगी कि हे राजन् ! तुमने मेरी नाक ही काट दी है । तब राजा ने उसे देखा और रक्त से भीगे मुख को देखकर चकित हो उठा ॥ ७ ॥ तब वह भी "हाय-हाय" करके कहने लगा कि मैंने भी इस भेद को नहीं समझा था । उस स्त्री की चतुरता देखो, राजा को मूर्ख बना उसी पर बुराई डाल दी ॥८॥ ॥ दोहा ॥ राजा ने भी मन में भेद-अभेद को न जाना । स्त्री ने भी नाक कटवाकर बुराई राजा के मत्थे डाल दी ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ तेरहवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३१३ ॥ ५९५८ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ चौदह् चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ दछिछनसैन सु दच्छिन न्रिप इक । शास्त्र सिम्रित जानत थो निक । सदन सुदच्छिन दे तिह दारा । जनु ससि चढ़ियो गगन मँझारा ॥ १ ॥ अप्रमान रानी की थी छबि । निरखि प्रभा जिह रहत भान दबि । राजा अधिक आसकत ता परि । जिह बिधि अलि पंखुरी कमल करि ॥ २ ॥ तहाँ शाह की हुती दुलारी । तिन राजा की प्रभा निहारी । स्री सुकुमार देइ तिह नामा । जिह सी भई न महि महि बामा ॥ ३ ॥ चित महि शाह् सुता यौ कह्यिो । जब तिह हेरि अटक मन रह्यिो । कौन जतन जाते न्रिप पाऊँ । चित तें त्रिय पहिली बिसराऊँ ॥ ४ ॥ बसत्रति उतम सकल उतारे । मेखलादि तन मो पट धारे । ताके धूम द्वार पर डार्यो । इस्त्री पुरख न किनूँ बिचार्यो ॥५॥ केतिक दिवस बीत जब गए । लखन नगर निकसत प्रभ भए । भाखा सुनन सभन की काजा । अतिथ भेस धरि निकस्यो राजा ॥ ६ ॥ तिन त्रिय भेस अतिथ को धरिकै । बचन

तीन सौ चौदह्वाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ दक्षिण में दक्षिणसेन नामक एक राजा था जो शास्त्र, स्मृति आदि अच्छी तरह् जानता था । सुदक्षिणदेवी उसकी स्त्री थी जो मानों आकाश में चढ़ा हुआ चन्द्रमा थी ॥ १ ॥ रानी की अपरिमित छबि को देखकर सूर्य भी दब जाता था । राजा उस पर उसी प्रकार अत्यधिक रूप से आसक्त था जैसे भौंरा फूल पर मस्त रहता है ॥ २ ॥ वहाँ एक धनी की पुत्री थी जिसने राजा की सुन्दरता देखी । उसका नाम सुकुमारदेवी था जिसके समान धरती पर अन्य कोई स्त्री नहीं थी ॥ ३ ॥ धनिक-पुत्री ने जब से उसे देखा और जब से उसका मन उसमें अटका तो वह सोचने लगी कि किस तरह मैं राजा को प्राप्त करूँ और उसकी पहली स्त्री उसे विस्मृत करा दूँ ॥ ४ ॥ उसने वस्त्रादि उतारकर मेखला आदि वस्त्र तन पर धारण कर लिये । उसके दरवाजे पर बिना किसी स्त्री-पुरुष का विचार किये उसने धुआँ जला दिया ॥ ५ ॥ कई दिन बीतने के बाद राजा नगर देखने निकला । वह फ़क़ीर का वेश धारण कर सबकी सुनने के लिए निकला ॥ ६ उस स्त्री ने फ़क़ीरी वेश धारण

उचार्यो त्रिपहि निहरिकै। (मू०ग्रं०१२६८) कह भयो राजा मूरख मति को। भलो बुरी जानत नहि गति को ॥ ७ ॥ दुराचार रानी जु कमावै। ताके धाम नित्य त्रिप जावै। जड़ इह लखत मोरि हित कारनि। सो नित सोत संग लै यारनि ॥ ८ ॥ त्रिप यह धुनि स्त्रवनन सुनि पाई। पूछत भयो तिसी कह जाई। अथित त्रिपति ह्याँ को क्या करै। जो तुम कहहु सो बिधि परहरै ॥ ९ ॥ इह त्रिप जोग न ऐसी नारी। चहियत हनी कि तुरतु निकारी। भलो न गवन करो ताके छिन। दुराचार त्रिय करत जु निसदिन ॥ १० ॥ इनके जोग एक त्रिय अही। एक शाह के जाई कही। ज्यों इह त्रिप पुरखन को राजा। त्यों वहु नारि त्रियन सिरताजा ॥ ११ ॥ जौ वाको राजा ग्रहि ल्यावै। राज पाट तब सकल सुहावै। ताहि लखे त्रिय सभ दुरि जाहीं। जिमि उडगन रवि की परछाहीं ॥ १२ ॥ जब राजै इह बिधि सुन पायो। इहै मतो जिय माँझ पकायो। दुराचार इस्त्री परहरौ। निजु त्रिय शाह सुता लै करौ ॥ १३ ॥ प्रातेकाल धाम जब आयो। नेगी मह तन बोलि पठायो। शाह सुता

करके राजा को देखकर कहा। मूर्ख-मति राजा को क्या हो गया है जो भला-बुरा नही जानता है ॥ ७ ॥ जो रानी दुराचारिणी है, राजा रोज उसके पास जाता है। मूर्ख यह समझता है कि उसे मेरे साथ ही स्नेह है, परन्तु वह नित्य अपने यार के साथ सोती है ॥ ८ ॥ राजा यह सुनकर जाकर उसी से पूछने लगा कि हे साधु ! बताओ तब यहाँ के राजा को क्या करना चाहिए जिससे जो तुम बता रहे हो वह दूर हो ॥ ९ ॥ यह नारी राजा के योग्य नहीं है, इसे या तो मार डालना चाहिए या निकाल देना चाहिए। भला तो यह है कि एक क्षण के लिए भी उसके पास न जाया जाय जो दुराचार में लिप्त है ॥ १० ॥ इस राजा के योग्य तो एक स्त्री है जो एक धनी की पुत्री है। जैसे यह पुरुषों का राजा है वैसे ही वह स्त्रियों की सिरताज है ॥ ११ ॥ यदि राजा उसे घर ले आए तो राजपाट सभी ठीक रहेगा। उसे देखकर सभी स्त्रियाँ ऐसे ही छिप जायँगी जैसे सूर्य की चमक में तारागण छिप जाते हैं ॥ १२ ॥ जब राजा ने यह सुना तो मन में यही विचार बना लिया। उसने दुराचारिणी स्त्री का त्याग कर दिया और उस धनी की पुत्री को अपनी रानी बना लिया ॥ १३ ॥ प्रात जब वह घर आया तो उसने दासी भेजकर उसे

जिह तिह बिधि लई। रानी डारि ह्रिदै ते दई॥ १४॥
॥ दोहरा॥ इह चरित्र तह चंचला ताको चरित दिखाइ।
निजु त्रिय साथ तुराइ हित आपन भज्यो बनाइ॥ १५॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ चौदह चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ ३१४॥ ५९७३॥ अफजूं॥

अथ तीन सौ पंद्रह चरित्र कथनं॥

॥ चौपई॥ शहिर इटावा गंग तीर जह। पाल सुपच्छिम हुते त्रिपति तह। नारि सु पच्छिमदे ताके घर। सुरी नागनी नरी न सरबर॥ १॥ बाढी एक रानियहि हेरा। मदन देह तब ही तिह घेरा। अधिक नेह तिह साथ बढायो। राजा को चित ते बिसरायो॥ २॥ ऐसी रसिगी ता सौ नारी। जाँते पति तन प्रीति बिसारी। गेरू घोरि पान करि लीयो। मुख ते डारि लखत त्रिप दीयो॥ ३॥ जाना स्रोण बदन ते बमा। त्रिप मन मै इह सूलन छमा।

बुलवा लिया। उसने जैसे-तैसे धनी की पुत्री को अपना लिया और रानी को हृदय से भुला दिया॥ १४॥ ॥ दोहा॥ इस प्रपंच से उस स्त्री ने उसकी अपनी स्त्री से उसका सम्बन्ध तोड़कर स्वयं उसके साथ रमण-क्रीडा सुखपूर्वक की॥ १५॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ चौदहवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ ३१४॥ ५९७३॥ अफजूं॥

तीन सौ पन्द्रहवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई॥ गंगा के किनारे इटावा शहर में पश्चिमपाल राजा था, जिसकी स्त्री पश्चिमदेवी थी। उसके समान कोई सुर, नाग अथवा मनुष्य-स्त्री न थी॥ १॥ रानी ने एक बढ़ई देखा और कामासक्त हो गई। उसने उसके साथ अत्यधिक स्नेह बढ़ा लिया और राजा को चित्त से विस्मृत कर दिया॥ २॥ वह स्त्री उसमें ऐसी लीन हो गई कि उसने पति-प्रेम को भुला दिया। उसने (एक दिन) गेरू मिट्टी घोलकर पी लिया और राजा के देखते उसे मुँह से निकाल दिया ३ राजा ने सोचा कि रक्त का वमन हुआ है और इसे शूल के कारण कष्ट है उसने व्याकुल हो वैद्यों को बुलाया

अति आतुर ह्वै बैद बुलाए। चिह्न रोग तिह नारि सुनाए॥ ४॥ तब तिन पी गेरू पुनि डारा। स्रोण बमा सभहूँन बिचारा। तब पति सो इम नारि उचारो। अब रानी (मू०पं०१२६६) कह मरी बिचारो॥ ५॥ रानी कहत न्रिपति सो करियहु। मेरो बहुरि न बदन निहरियहु। और सखी काहू न दिखैयो। रानी जाइ जार घरि ऐयो॥ ६॥ साच बचन जड़ सुनत उचरिकै। दम कह रोकि गई जनु मरिकै। आँसू पुलित अखीआँ पति भई। तब ही जार साथ उठि गई॥ ७॥ आँखि पूँछि न्रिप हेरै कहा। ऊहाँ न अंग तवन को रहा। तब सखियन इह भाँति उचार्‌यो। भेद अभेद पसु न्रिप न बिचार्‌यो॥ ८॥ रानी गई सदेह स्वरग कह। छोरि गई हम कौ कत महि मह। मूरख साचु इहै लहि लई। देह सहित सुरपुर लिय गई॥ ९॥ जे जे पुन्यवान हैं लोगा। ते ते हैं इह गति को जोगा। जिन इक चित ह्वै कै हरि ध्यायो। ताके काल निकट नहि आयो॥ १०॥ इक चित जो ध्यावत हरि भए। देह सहत सुरपुर ते

और उन्हें रोग के लक्षण वताए ॥४॥ उसने फिर पीकर गेरू बाहर निकाला और सबने सोचा कि रक्त का वमन हुआ है। तब पति से स्त्री ने कहा कि अब अपनी रानी को मरा समझो॥ ५॥ रानी ने पति से कहा कि तुम मेरा मुँह दुबारा नहीं देख सकोगे। वह अन्य किसी को भी दिखाई न दी और रानी यार के घर पहुँच गई॥ ६॥ सत्य वचन को मूर्ख स्वयं ही दुहराने लगा कि रानी तो मानों मरकर भी (मेरे लिए) दम रोक गई। उसकी आँखें जब अश्रुपूरित हो गई तो वह उसी समय उठकर यार के पास चली गई॥ ७॥ आँखें पोंछकर राजा देखने लगा कि वह कहाँ है, परन्तु वह वहाँ नहीं थी। तब सखियों ने कहा, जिसे मूर्ख राजा समझ न सका॥ ८॥ रानी सदेह स्वर्ग चली गई और हम लोगों को क्यों धरती पर छोड़ गई। उस मूर्ख ने यही सत्य मान लिया कि वह सदेह स्वर्ग चली गई है॥ ९॥ जो जो पुण्यवान हैं, वे इसी गति के योग्य होते हैं। जिसने एक मन से प्रभु का ध्यान किया काल उसके निकट नहीं आ सका १० जो एक मन से हरि का स्मरण करते

गए। भेद अभेद की क्रिया न पाई। मूरख सत्ति इहै ठहराई ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ पंद्रह चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३१५ ॥ ५९८४ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ सोलह चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ शहिर सुनार गाँव सुनियत जह। राइ बंगाली सैन बसत तह। स्री बंगालमती तिह रानी। सुंदरि भवन चतुदस जानी ॥ १ ॥ बंगदेइ दुहिता इक ताके। और सुंदरी सम नहि जाके। तिन इक पुरख निहारो जबही। कामदेव के बसि भी तबही ॥ २ ॥ सूर सूर कहि भू पर परी। जनु गज बेल बाव की हरी। सुछबिराइ सुधि पाइ बुलाइसि। काम भोग रुचि मान मचाइसि ॥ ३ ॥ बधि गी कुअरि सजन के नेहा। जिमि लागत सावन को मेहा। सूर सूर कहि गिरी प्रिथी पर। तात मात आई सखि सभ घर ॥ ४ ॥ मात परी दुहिता कह जनियहु। ता तन जीए कुअरि प्रमनियहु।

है वे सदेह स्वर्ग जाते हैं। मूर्ख भेद-अभेद न समझकर इसे ही सत्य मानते है ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ पंद्रहवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३१५ ॥ ५९८४ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ सोलहवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ सुनारगाँव नामक शहर में राजा बंगालीसेन रहा करता था। उसकी रानी बंगालमती चारों दिशाओं में सुन्दर मानी जाती थी ॥१॥ उनकी एक अद्वितीय रूप से सुन्दर बंगदेवी थी। उसने जब एक पुरुष को देखा तो वह काम के वशीभूत हो गई ॥ २ ॥ वह "शूल-शूल" कहकर धरती पर ऐसे गिर पड़ी मानों हवा ने पानों की बेल तोड़ फेंकी हो। उसने होश आने पर सुछबिराय को बुलवाया और रुचिपूर्वक काम-भोग उसके साथ किया ॥३॥ वह कुंवरि सजन के स्नेह में वैसे बँध गई जैसे सावन की वर्षा (धरती से स्नेह करके) बरसती जाती है। वह "पीड़ा. पीड़ा" कहकर धरती पर गिर पड़ी उसके निवास पर माता पिता तथा सखियाँ आ गईं ॥ ४ ॥ सखियों ने कहा कि तुम्हारी पुत्री परी है और यह परी के शरीर में ही जीवित रह पायगी

जो मैं कहत तुमै सो करियहु। छोरि कफन मुख नहिन निहरियहु ॥ ५ ॥ तुम को तात मात दुख ह्वैहै। तुमरी सुता अधोगत जैहै। हमरो कछू न शोकहि धरियहु। छमापराध हमारो करियहु ॥ ६ ॥ रवि ससि कौ मैं मुख न दिखारा। अब हेरै कस अंग न हमारा। सास घूटि जनु करि मरि गई। सखियन (मू०ग्रं०१२७०) लपिटि बस्त्र महि लई ॥ ७ ॥ बकरी बाँध सिरही मधि दीनी। छोर बस्त्र पितु मात न चीनी। दुहूँ सुता को बचन सँभारा। सल के मांझ बकरियहि नारा ॥ ८ ॥ गई जार संग राजकुमारी। भेद अभेद किन्हो न बिचारी। दुहिता मरी जारि जनु दीनी। त्रिय चरित्र की क्रिया न चीनी ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ सोलह चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३१६ ॥ ५९९३ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ सत्रह चरित्र कथनं ॥

॥ चौपाई ॥ मंत्री कथा उचारी और। राजा देस बंगला गौरै। समनप्रभा ताकी पटरानी। जिह सम सुनी न किनी

(मानव-शरीर में नहीं)। जो हम कहें वही करना और इसका कफ़न उठाकर भी मुँह नहीं देखना ॥ ५ ॥ (यदि तुम ऐसा नहीं करोगे तो) तुम्हारी पुत्री दुखी होगी और उसकी अधोगति होगी। हमारा ख्याल न करना और हमारा अपराध क्षमा कर देना ॥ ६ ॥ हम लोगों ने तो सूर्य-चंद्र को भी अंग नहीं दिखाया है अब भला ये सब कैसे देख लेंगे। ऐसे लगा मानों वह साँस दबाकर मर गई हो। सखियों ने उसे वस्त्रों में लपेट दिया ॥ ७ ॥ वहाँ सिर के स्थान पर बकरी का एक सिर बाँध दिया और माता-पिता ने वस्त्र उठाकर नहीं देखा। दोनों ने पुत्री के वचन को माना और चिता में बकरी को जला दिया ॥ ८ ॥ यार के साथ राजकुमारी चली गई और किसी ने भी भेद-अभेद का रहस्य न समझा। उन्होंने समझा कि मरी हुई पुत्री को जला दिया है और उस स्त्री के प्रपंच को न पहचाना ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ सोलहवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३१६ ॥ ५९९३ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ सत्रहवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ मंत्री ने और कथा कही कि गौड़ बंगला देश का राजा था

बखानी ॥ १ ॥ पुहपप्रभा इक राजदुलारी । बहुरि बिधाता तसि न सवारी । ताकी आभा जात न कही । जनु करि फूलि अबासी रही ॥ २ ॥ भूमि गिरी ताकी सुंद्राई । तांते अबासी लई ललाई । गाल्हन ते जो रस चुइ परा । भयो गुलाब तिसी ते हरा ॥ ३ ॥ जोबन जब आयो अंग तांके । शाह एक आयो तब वाके । एक पुत्र सुंदरि तिह संगा । जन मनसा ह्वै जए अनंगा ॥ ४ ॥ गाजी राइ नाम तिह नर को । कंकन जान काम के कर को । भूखन को भूखन तिह मानो । दूखन को दूखन पहिचानो ॥ ५ ॥ पुहपप्रभा ताको जब लहा । मन बच क्रम ऐसे कर कहा । ऐसि करौ मैं कवन उपाई । मोरि इही संग होइ सगाई ॥ ६ ॥ प्रातहिकाल सुयंबर किया । कुंकम डारि तिसी पर दिया । अरु पुहपन तै डारिसि हारा । हेरि रहे मुख भूप अपारा ॥ ७ ॥ तिह न्रिप सुत सभहूं करि जाना । शाह पुत्र किनहूं न पछाना । माता पिता नहि भेद बिचरा । इह छल कुअरि सभन कह छरा ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ सत्रह चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३१७ ॥ ६००१ ॥ अफजूं ॥

जिसकी पटरानी सुमनप्रभा थी । उसके समान रानी कही-सुनी नहीं गई थी ॥ १ ॥ एक राजकुमारी पुष्पप्रभा थी जो विधाता की सृष्टि में अतुलनीय थी, मानों गुलाबासी फूली हुई हो ॥ २ ॥ उसकी सुन्दरताई ज़मीन पर गिरी थी अतः गुलाबासी ने उससे ललाई ली थी । उसके गालों से चूनेवाले रस से ही मानों गुलाब हरा था ॥ ३ ॥ जब उसके अंग में यौवन आया तो वहाँ एक धनी पुरुष आया । उसके साथ एक पुत्र था जो मानों कामदेव का मानस पुत्र हो ॥ ४ ॥ उसका नाम गाजीराय था । वह मानों कामदेव के हाथ में पहना कंगन था । उसे आभूषणों का आभूषण और सभी दोषों का दमन करनेवाला समझो ॥ ५ ॥ पुष्पप्रभा ने जब उसे देखा तो मन, वचन और कर्म से ऐसा कहा कि ऐसा कोई उपाय किया जाय जिससे मेरी इसी के साथ सगाई हो ॥ ६ ॥ प्रातः ही उसनें स्वयंवर किया और उस पर कुंकुम डाल दिया । फूलों का हार उसके गले में डाल दिया और अनेकों राजा मुँह देखते रह गए ॥ ७ ॥ उसे सभी ने राजपुत्र माना और कोई न जान सका कि यह धनिक का पुत्र है । माता-पिता नें भी भेद का विचार नहीं किया और इस प्रकार छल से कुँवरि नें सबको छल लिया ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ सत्रहवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति ३१७ ६००१ अफर्जू

अथ तीन सौ अठारह् चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ मरगजसैन हुतो इक न्रिप बर । मरगजदेइ नारि जाके घर । रूपवान धनवान बिसाला । भिछक कलपतरु द्रुजनन काला ॥ १ ॥ मूँगी पटना देस तवन को । जीति कवन रिप सकत जवन को । अप्रमान तिह् प्रभा बिराजै । सुर नर नाग असुर मन लाजै ॥ २ ॥ (मू०ग्रं०१२७१) एक पुरख रानी लखि पायो । तेजमान गुनमान सवायो । पुहपराज जनु मधि पुहपन के । चोरि लेति जनु चित इस्त्रिन के ॥ ३ ॥ ॥ सोरठा ॥ रानी लयो बुलाइ तवन पुरख अपने सदन । अति रुचि अधिक बढाइ तासौ रति मानत भई ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ तब लगि नाथ धाम तिह् आयो । मनहाँ तर त्रिय जार छपायो । बहु बुगचा आगे दै डारे । ताके जात नअंग निहारे ॥ ५ ॥ बहु चिर तह् बैठा न्रिप रहा । भला बुरा कछु भेद न लहा । जब ही उठि अपनो घर आयो । तब ही त्रिय घर मीत पठायो ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ अठारह् चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३१८ ॥ ६००७ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ अठारह्वाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ मरगज़सेन एक राजा था जिसकी स्त्री मरगज़देवी थी। वह राजा रूपवान, धनवान, भिक्षुकों के लिए कल्पतरु और दुर्जनों के लिए काल था ॥ १ ॥ उसका देश मुंगीपतन (विशाखापतनम ज़िले का एक नगर) था, जिसे कोई भी शत्रु जीत नहीं सकता था। उसकी प्रभा अपरिमित थी और सुर-असुर, नाग, नर सभी उसके सामने लज्जित होते थे ॥ २ ॥ रानी ने एक पुरुष देखा जो अधिक तेजवान, गुणवान था। वह पुष्पों में मानों पुष्पों का राजा था और मानों स्त्रियों का चित्तचोर था ॥३॥ ॥सोरठा॥ रानी ने उस पुरुष को अपने घर बुलाया और अत्यन्त रुचिपूर्वक उससे रतिक्रीड़ा की ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब उसका पति घर में आ गया और इसने उसे पलंग के नीचे छिपा दिया। उसके आगे बोरे आदि रख दिये जिससे उसके अंग न दिखाई दें ५ राजा वहाँ बहुत देर तक बैठा रहा और भला बुर

कुछ न जान सका। जब वह उठकर अपने घर आया तो स्त्री ने मित्र को अपने घर भेज दिया ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ अठारहवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३१८ ॥ ६००७ ॥ अफज़ूं ॥

अथ तीन सौ उनीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनो त्रिपति मैं भाखत कथा। जह मिलि देव समुद्द कह मथा। तहा सुब्रत नामा मुनि रहै। अधिक ब्रती जाकह जग कहै ॥ १ ॥ त्रिय मुनिराज मती तिह रहै। रूप अधिक जाको सभ कहै। असि सुंदरि नहि और उतरी। है ह्वैहै न बिधाता करी ॥ २ ॥ सागर मथन देव जब लागे। मथ्यो न जाइ सगल दुख पागे। तब तिन त्रिय इह भाँति उचारो। सुनो देवतियो बचन हमारो ॥ ३ ॥ जो बिधि धरै सीस पर झारी। पानि भरै जल रासि मँझारी। मेरो धूरि पगन की धोवै। तब यह सफल मनोरथ होवै ॥ ४ ॥ ब्रहम अति आतुर कछु न बिचरा। झारी राखि सीस जल भरा। देखहु इह इसत्रिन के चरिता। इह बिधि चरित दिखायो करता ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ उनीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३१९ ॥ ६०१२ ॥ अफज़ूं ॥

तीन सौ उन्नीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजन् ! सुनो, मैं कथा सुनाता हूँ। जहाँ देवताओं ने समुद्र-मंथन किया वहाँ सुव्रत नामक एक मुनि रहता था जिसे सारा संसार अत्यधिक व्रती मानता था ॥ १ ॥ मुनिराजमती उसकी स्त्री थी जो संसार में अत्यधिक रूपमती जानी जाती थी। वैसी अन्य सुन्दरी न होगी और न ही विधाता ने बनाई थी ॥ २ ॥ देव जब सागर-मंथन करने लगे तो उनसे मंथन नहीं हो पा रहा था और वे दुखी हो उठे। तब उस स्त्री ने कहा कि हे देवगणो ! मेरी बात सुनो ॥ ३ ॥ यदि विधाता सिर पर घड़ा लेकर पानी भरे और मेरे चरणों की धूल साफ़ करे तब तुम लोगों का मनोरथ सफल होगा ४ ब्रह्मा ने व्याकुल हो अन्य कुछ विचार न किया और घड़ा सिर पर रखकर जल भरा इन स्त्रियों के प्रपंच देखो इन्होंने स्रष्टा को भी

अथ तीन सौ बीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ भूमि भार तें अति दुख पायो । ब्रहमा पै दुख रोइ सुनायो । ब्रहमा करी बिशन की सेवा । ताते भए क्रिशन जग देवा ॥ १ ॥ मुर दानव को कंसवतारा । करत पूरब लौ द्रोह सँभारा । वाके करत हनन के दावै । नितप्रति आसुरन तहाँ पठावै ॥ २ ॥ प्रथम पूतना क्रिशन सँघारी । पुनि सकटासुर देह उधारी । बहुरि (मू०ग्रं०१२७२) बकासुर असुर सँघार्यो । ब्रिखभासुर के ब्रिछन उपार्यो ॥ ३ ॥ आघासुर को अघ निवरत करि । पुनि केसी मार्यो चरनन धरि । बहुरि ब्रहम कह चरित दिखायो । धरि करि पर गिर इंद्रह रायो ॥ ४ ॥ नंदहि छीन बरन ते ल्यायो । संदीपन के सुतहि मिलायो । दावानल ते गोप उबारे । गोपन सौ ब्रिज करे अखारे ॥ ५ ॥ कुबल्या गज को दाँत लयो हरि । चांडूरहि मुसटकहि प्रहरि करि । पकरि केस ते कंस पछारा । उग्रसैन सिर छत्रहि ढारा ॥ ६ ॥ जरासिंधु की चमूँ सँघारी । संख लयो संखासुर मारी । नगर द्वारिका किया प्रवेशा । देस देस के जीति

तीन सौ बीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ पृथ्वी ने बोझ से दबकर अत्यन्त दुख पाया तो ब्रह्मा के पास दुख रो सुनाया । ब्रह्मा ने विष्णु की सेवा की तो जगत् में कृष्ण पैदा हुए ॥ १ ॥ कंस मुर राक्षस का अवतार था जिसे पूर्वजन्म की ही शत्रुता थी । कृष्ण को मारने के लिए वह नित्यप्रति असुरों को वहाँ भेजता था ॥२॥ पहले कृष्ण ने पूतना को मारा, फिर शकटासुर का उद्धार किया । फिर बकासुर को मारा और वृक्षासुर के वृक्षों को उखाड़ फेंका ॥ ३ ॥ अघासुर के पापों की निवृत्ति कर केशी को चरणों में पटककर मार डाला । पुनः ब्रह्मा को कौतुक दिखाया और हाथ पर पर्वत उठाकर इन्द्र को दिखा दिया ॥ ४ ॥ नंद को वरुण से छीनकर लाये और संदीपन को उसके पुत्रों से मिला दिया । गोपों को दावानल से और ब्रज में गोपों के अखाड़े बनाए ॥ ५ ॥ कुबलया गज के दाँत लाया और चंडूर पर मुष्टिका-प्रहार किया । कंस को केशों से पकड़कर पछाड़ दिया और उग्रसेन के सिर पर छत्र झुलाया ६ की चतुरंगिणी सेना का संहार किया और शंखासुर को मारकर उससे शंख लिया देश-देशान्तरों के राजाओं को

नरेशा ॥ ७ ॥ दंतबक्र नरकासुर घायो । सोरह सहस बधू बरि ल्यायो । पारजात सुरपुर ते ल्याया । बिंद्राबन महि खेल दिखाया ॥ ८ ॥ पंडवन की जिन करी जितारी । द्रुपद सुता की लाज उबारी । सभ कौरव के दलहि खपाई । संतहि आँच न लागन पाई ॥ ९ ॥ सभ सूचनला जौ करि जैयै । ग्रंथ बढन ते अधिक डरैयै । ताते थोरी कथा उचारी । चूक होइ कबि लेहु सुधारी ॥ १० ॥ अब मैं कहत कथा रुकमनी । जिह छल बर्यो क्रिशन सो धनी । लिखि पतिया दिज हाथ पठाई । कहियहु महाराज तन जाई ॥ ११ ॥ ॥ सवैया ॥ ब्याह बद्यो सिसपाल भए सुई जोरि ब रात बियाहन आए । हौ अटकी मधसूदन सौ जिनकी छबि हाटक हेरि हिराए । चातिक की जिमि प्यास घटै न बिना घन से घन स्याम सुहाए । हारि गिरी न हिर्यो हिय को दुख हेरि रही न हहा हरि आए ॥ १२ ॥ ॥ चौपई ॥ पतिया बाचि चढ़े हरि रथै । मानहु लूट लयो मनमथै । उत सिसुपाल जोरि दल आयो । कुंदनपुरी नगर नियरायो ॥ १३ ॥ भेद कहा रुकमिनी बिप्र स्यों । प्राननाथ

जीतकर द्वारिका नगर में प्रवेश किया ॥ ७ ॥ वक्रदंत और नरकासुर को मारा तथा सोलह सहस्र स्त्रियों का वरण किया । स्वर्ग से पारिजात वृक्ष ले आया और वृंदावन में रासलीला दिखाई ॥ ८ ॥ जिसने पांडवों का जिताया और द्रौपदी की लाज रखी । उसने कौरवों के समस्त दलों को नष्ट कर दिया, पर संतों को आँच नहीं आने दी ॥ ९ ॥ यदि सभी सूचियाँ बनाई जायँ तो ग्रंथ के बढ़ने से डर लगता है । इसीलिए मैंने थोड़ी बात कही है, चूक होने पर कविगण सुधार लेंगे ॥१०॥ अब मैं रुक्मिणी की कथा कहता हूँ कि उसने किस छल से कृष्ण का वरण किया । उसने पत्र लिखकर कृष्ण को ओर ब्राह्मण के हाथ भेजा और बताने को कहा ॥ ११ ॥ ॥ सवैया ॥ मेरा विवाह शिशुपाल से तय हो गया है और वह बारात लेकर मुझे ब्याहने आ गया है । मैं तो मधुसूदन की उस छवि में अटकी हूँ जिस छवि को देखकर सोने की भी संभाल नहीं रहती । चातक की बादलों को देखे बिना प्यास नहीं बुझती । मैं तो देखते-देखते हार गई हूँ, पर हाय हरि कृष्ण अभी तक नहीं आए हैं ॥ १२ ॥ ॥ चौपाई ॥ पत्रिका पढ़कर कृष्ण रथ पर चढे । उन्हें मानों काम ने लूट लिया हो । उधर शिशुपाल भी सेना एकत्र कर कुंदनपुरी के निकट आ गया ॥ १३ ॥ रुक्मिणी ने विप्र (ब्राह्मण) से कहा कि कृष्ण से कहना कि जब मैं गौरापूजन के लिए आऊगी तो तुम्हारे

सेती कहियहु यों। जब मैं गौरि पूजबै ऐहों। तब तव दरस चंद्र सो पैहों ॥ १४ ॥ ॥ दोहरा ॥ तब तुम हमको भुजा भरि लीजहु रथहि चढ़ाइ। निजु मारी लै कीजियहु दुशट सभन को घाइ ॥ १५ ॥ ॥ चौपई ॥ रुकम ब्याह की सौज बनाई। भाँति भाँति पकवान मिठाई। फूल्यो फिरत त्रियन के गन (पृ०ग्रं०१२७३) मै। मूँड मुँडे की खबरि न मन मै ॥ १६ ॥ गौरि पूजने बहिनि पठाई। तह ते हरी क्रिशन सुखदाई। दुशट लोग मुख बाइ रहत भे। हाइ हाइ इह भाँति कहत भे ॥ १७ ॥ ॥ भुजंग छंद ॥ चल्यो क्रिशन ताको रथै डारि लैकै। तबै बीर धाए सभै कोप ह्वैकै। जरासिंधु ते आदि लै बीर जेते। हथै लै पटैलै चले डारि तेते ॥ १८ ॥ किते पाखरैं डारिकै बाजियो पै। किते चार जामे चढ़े ताजियो पै। मघोले धधेले बुंदेले चंदेले। कछ्वाहेर ठौरे बघेले खंडेले ॥ १९ ॥ तबै रुकम रुकमी सभै भाइ लैकै। चल्यो सैन बाकी हठी गोल कैकै। तहाँ बान तीखे छुटे ओर चारू। मंडे आनि जोधा बज्यो राग मारू ॥ २० ॥ कही भीम भेरी बजैं संख भारे। कहूँ नाद नाफीरियैं औ नगारे। परी मारि बानान की भाँति ऐसी।

चन्द्रमुख का दर्शन करूँगी ॥ १४ ॥ ॥ दोहा ॥ तब तुम मुझे बाँह पकड़कर रथ पर चढ़ा लेना और सभी शत्रुओं को मारकर मुझे अपनी पत्नी बना लेना ॥ १५ ॥ ॥ चौपाई ॥ रुक्म ने विवाह की तैयारी की और भाँति-भाँति के पकवान बनवाए। वह स्त्रियों के झुंड में खुशी-खुशी फूला घूम रहा था और उसे ठगे जाने की तनिक भी खबर नहीं थी ॥ १६ ॥ उसने बहन को गौरी-पूजा के लिए भेजा और वहीं से सुखदायक कृष्ण ने उसका हरण कर लिया। दुष्ट लोग मुँह फाड़े देखते रहे और हाय-हाय करते रहे ॥ १७ ॥ ॥ भुजंग छंद ॥ कृष्ण जब उसे रथ में डालकर चल पड़ा तो वीर क्रुद्ध हो टूट पड़े। जरासंध आदि वीर से लेकर सभी वीर हाथों में शस्त्र लेकर चल पड़े ॥ १८ ॥ कहीं घोड़ों पर जीनें कसकर और कहीं स्वयं सुन्दर वस्त्र धारण कर चल पड़े। मघोले, धधेले, बुंदेले, चन्देल, बघेल और खंडेल आदि चल पड़े ॥१९॥ तभी रुक्म और रुक्मी भी सेना लेकर गोल बनाकर चल पड़े। वहाँ चारों ओर तीखे बाण छूटने लगे और योद्धाओं के रणमंडन से भीषण नाद के साथ युद्ध होने लगा ॥२०॥ भीमकाय भेरियाँ और भारी शंख बजने लगे। कहीं नफीरी और नगाड़े का नाद होने लगा। बाणों की मार ऐसी पड़ने लगी कि की अग्नि जसी लपट उठने लगीं २१ बाण

उठी अगनि ज्वाला प्रलैकाल जैसी ।। २१ ।। चलैं शीघ्रता सौं खहै बान बाने । उठैं अगनि ज्वाला लसैं ज्यों टनाने । कहूँ चरम बरमैं परे भरम भेदे । कहूँ मास के गीध लैगे लबेदे ।। २२ ।। कहूँ अंगुलित्राण काटे परे हैं । कहूँ अंगुली काटि रतनैं झरे हैं । रही हाथ ही मै क्रिपानैं कटारे । गिरै जूझि कैकै परे भूम मारे ।। २३ ।। तबै कोप कैकैं चंदेले सिधाए । बधे चुंग चुंगी चले खेत आए । चहूँ ओर घेर्‌यो हरी क्रिशन कौ यौ । गड़े दार मानो करी मत्त की ज्यों ।। २४ ।। तबै कोप कै क्रिशन मारे चंदेले । मघेले धधेले बघेले बुंदेले । चंदेरीस हूँ कौ तबै बान मारा । गिर्‌यो भूमि पै न हथ्यारै सँभारा ।। २५ ।। ।। चौपई ।। जरासिंध कहि पुनि सर मारा । भागि चल्यो न हथ्यार सँभारा । भिरे सु मरे बचे तो हारे । चंदेरियहि चंदेल सिधारे ।। २६ ।। तब रुकमी पहुचत भयो जाई । अधिक क्रिशन सौं करी लराई । भाँति भाँति तन बिसिख प्रहारे । हार्‌यो वहै क्रिशन नहि हारे ।। २७ ।। चित मै अधिक ठानिकै क्रुद्धा । माँडत भयो क्रिशन सौं जुद्धा । एक बान तब स्याम प्रहारा । गिर्‌यो प्रिथी

शीघ्रता से चलकर बाणों से टकराने लगे और अग्नि की चिनगारियाँ उड़ते जुगनुओं के समान दिखाई देने लगीं। कहीं चर्म और कहीं लोहकवच पड़े थे और कहीं मांस के लोथड़े गिद्ध आदि ले जा रहे थे ।।२२।। कहीं अगुलित्राण कटे पड़े हैं और कहीं कटी अगुलियों से रत्न झड़ रहे हैं। कृपाण और कटारे हाथ में ही रह गई और वीर युद्ध में जूझकर भूमि पर गिर मरे हैं ।। २३ ।। तभी चंदेले क्रुद्ध हो छलाँगे लगाते युद्ध में आ गए। उन्होंने चारों ओर से श्रीकृष्ण को ऐसे घेर लिया जैसे शिकारियों ने हाथी को घेर लिया हो ।।२४।। तब कृष्ण ने भी कुपित हो चन्देलों, बघेलों, मघेलों और बुन्देलों आदि सबको मार डाला। तभी चंदेरी-अधिपति शिशुपाल को वाण मारा और वह शस्त्र छोड़कर भूमि पर गिर पड़ा ।। २५ ।। ।। चौपाई ।। फिर जरासंध को बाण मारा जो शस्त्र सँभाले बिना भाग चला। जो भिड़ गए वे मारे गए और जो बच गए वे हार गए। चंदेले चंदेरी की ओर भाग निकले ।। २६ ।। तब तक रुक्मी (रुक्मिणी का भाई) आ पहुँचा और उसने कृष्ण से भीषण युद्ध किया। उसने विभिन्न प्रकार के बाण चलाए जिसमें वही हारा, कृष्ण नहीं हारे २७ चित्त में अत्यधिक क्रुद्ध हो वह कृष्ण से युद्ध करने लगा तब कृष्ण ने एक बाण मारा और वह पृथ्वी पर ऐसे गिर पड़ा मानो मर

घर जानु सँघारा ॥ २८ ॥ सर सौ मूँडि प्रथम तिह सीसा । बाँधि लयो रथ सौ जदुईसा । भ्रात जानि रुकमिनी छडायो । लजत धाम सिसपाल सिधायो ॥ २९ ॥ (मू०ग्रं०१२७४) किनूँ चंदेलन के सिर तूटे । कईक गए मूँड घर टूटे । सकल चंदेले लाज लजाए । नारि गवाइ चंदेरी आए ॥ ३० ॥ ॥ दोहरा ॥ गए चंदेल चंदेरियहि कर ते नारि गवाइ । इह चरित्र तन रुकमनी बरत भई जदुराइ ॥ ३१ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ बीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३२० ॥ ६०४३ ॥ अफजूँ ॥

अथ तीन सौ इकीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुक्राचारज दान्वन को गुर । सुक्रावती बसत जाको पुर । मारि देव जाकौ रन जावै । पढ़ि संजीबनि ताहि जियावै ॥ १ ॥ देवजानि इक सुता तवन को । अप्रमान छबि हुती जवन की । कचमाना देवन को दिजबर । आवत भयो सुक्र के तब घर ॥ २ ॥ देवजानि संगि किया अधिक हित । हरि लीनो ज्यों त्यों त्रिय को चित । मंत्रहि लेन

गया हो ॥ २८ ॥ उसका सिर मूँड़कर कृष्ण ने उसे रथ के साथ बाँध लिया। उसे भाई समझकर रुक्मिणी ने छुड़ा दिया जो लज्जित हो शिशुपाल के पास चला गया ॥ २९ ॥ कितने ही चंदेलों के सिर टूट गए और कई एक सिर मुँड़वाकर घर गए। सारे चन्देले लज्जित थे क्योंकि स्त्री गँवाकर वे चन्देरी वापस आए थे ॥ ३० ॥ ॥ दोहा ॥ चन्देले, स्त्री गँवाकर वापस चन्देरी को चले गए और इस प्रपंच से रुक्मिणी ने कृष्ण का वरण किया ॥ ३१ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ बीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३२० ॥ ६०४३ ॥ अफजूँ ॥

तीन सौ इक्कीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ शुक्राचार्य दानवों का गुरु था और वह शुक्रवती नगर में रहता था। देवता जिसे भी युद्ध में मार देते थे वह संजीवनी विद्या पढ़कर उसे जीवित कर देता था ॥ १ ॥ उसकी एक पुत्री देवयानी थी जिसका सौंदर्य अपरिमित था। कच देवताओं का पुरोहित माना जाता था, वह शुक्राचार्य के घर आया ॥ २ ॥ उसने देवयानी के साथ स्नेह बढ़ाकर जैसे-तैसे उसका मन चुरा लिया उसे संजीवनी मंत्र सीखने के लिए

रति करी न ताले संगा । ब्यापि रह्यो तिह जदपि अनंगा । देवजानि तब अधिक रिसाई (मू०ग्रं०१२७५) मोहि न भज्यो याहि दुखदाई ॥ ११ ॥ इह बिधि स्राप देत तिह भई । कथा चउपई सु मै बनई । पापी फुरै मंत्र तव नाही । तो ते सुर न जिवाए जांही ॥ १२ ॥ प्रथम जियायो ताँहि कशट करि । रम्यो न सो स्राप्यो तब रिसि भरि । पिता भए इह भाँति सुनायो । देवराज इह कचहि जयायो ॥ १३ ॥ तात बात कहो मै सो करो । मंत्र सजीवन इह ननुसरो । जब इह सीखि मंत्र कह जैहैं । देवराज फिरि हाथ न ऐहैं ॥ १४ ॥ मंत्र न फुरै स्राप इह दीजै । मेरो बचन मानि ितु लीजै । भेद अभेद कछु सुक्र न पायो । मंत्र निफल को स्रापु दिवायो ॥ १५ ॥ ताँहि मरो बहु बार जियायो । तब स्राप्यो जब भोग न पायो । त्रिय चरित्र गति किनूं न पाई । जिनि बिधन इह नारि बनाई ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ इकीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३२१ ॥ ६०५७ ॥ अफजूं ॥

करो ॥ १० ॥ यद्यपि उसके अंगों में काम व्याप्त था, पर कच ने उसके साथ रतिक्रीडा नहीं की । तब देवयानी अत्यधिक क्रुद्ध हो उठी कि इस दुखदायी ने मेरे साथ रमण नहीं किया है ॥ ११ ॥ उसने इसे शाप दे दिया । इस कथा को मैंने चौपाई में कहा है । हे पापी ! तुझे मंत्र समय पर याद नहीं आयेगा और तुम देवताओं को जीवित नहीं कर सकोगे ॥१२॥ पहले तो उसे कष्टपूर्वक जीवित करती रही । जब उसने रमण नहीं किया तो क्रुद्ध हो उसे शाप दे दिया । फिर उसने पिता से कहा कि यह देवराज को जीवित कर लेगा ॥ १३ ॥ इसलिए हे पिता जी, जो मैं कहती हूँ उसे मानों और इसका संजीवनी मंत्र निष्फल कर दो । जब यह मंत्र सीख कर चला जायगा तो देवराज (इन्द्र) फिर हमारे हाथ कैसे लग सकेगा ॥१४॥ इसलिए हे तात ! मेरा कहना मानकर इसे शाप दे दीजिए कि इसे मंत्र याद न रहे । शुक्राचार्य ने भेद-अभेद को नहीं जाना और मंत्र की निष्फलता का शाप उसे दे दिया ॥ १५ ॥ उस मरे हुए को पहले बहुत बार जीवित किया, फिर कामक्रीडा न मिलने पर उसे शापित किया । स्त्रियों के चरित्र की गति को कोई नहीं समझ सका है । वह भी नहीं समझ सका है, जिस विधाता ने इस नारी को स्वयं बनाया है ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ इक्कीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ३२१ । ६०५७ अफजूं

अथ तीन सौ बाईस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु प्रभु और बखानो कथा। ऐहै चित्त हमारे जथा। छजकरनन को देस बसत जह। सुछबिकेत इक हुतो न्रिपति तह ॥ १ ॥ अचरज दे ताके इक नारी। कनक अवटि साँचे जनु ढारी। स्री मकराछमती दुहिता तिह। छीनि करी ससि अंस सकल जिह ॥ २ ॥ जब बर जोग भई बहु दारा। शाहु पूत तन किया पयारा। कामकेल तिह साथ कमावै। भाँति अनिक तन ताहि रिझावै ॥ ३ ॥ न्रिप तन भेस किसू नर भाखा। तब ते ताँहि धाम असि राखा। जहाँ न पंछी करै प्रवेसा। जाइ न जहाँ पवन को वेसा ॥ ४ ॥ कुअरि मित्र बिनु बहु दुखु पायो। बीर हाँकि इक निकट बुलायो। तासौ कहा तहाँ तुम जाई। ल्याहु सजन की खाटि उचाई ॥ ५ ॥ सुनत बचन तह बीर सिधयो। खाट उचाइ लयावत भयो। काम भोग करि कुअरि कुअर संग। पहुचायो ग्रहि ताहि तिसी ढंग ॥ ६ ॥ ॥ दोहरा ॥ एक दिवस ताको पिता गयो सुता के ग्रेह। सेज देखि करि दलमली चित महि

तीन सौ बाईसवाँ चरित्र-कथन

॥चौपाई॥ हे राजन् ! तुम्हें मन में आयी एक अन्य कथा सुनाता हूँ। छाजकर्णों के देश में सुछविकेतु एक राजा था ॥ १ ॥ उसकी स्त्री अचरज देवी थी जो मानों सोने के साँचे में डालकर बनाई हुई थी। मकराक्षमती उसकी पुत्री थी जिसने मानों समस्त कलाओं को छीनकर अपने में समेट रखा था ॥ २ ॥ जब वह स्त्री वर योग्य हुई तो उसने एक धनी के पुत्र से प्यार किया। वह उसके साथ कामकेलि करती थी और अनेकों प्रकार से उसे प्रसन्न करती थी ॥ ३ ॥ राजा से किसी ने यह भेद कह दिया, तब से उसने राजकुमारी को ऐसे स्थान पर रखा, जहाँ पक्षी भी प्रवेश न पा सकें और जहाँ हवा भी न जा सके ॥ ४ ॥ कुँवरि ने मित्र के बिना बहुत दुख पाया। उसने एक वीर को पास बुलाया और उससे कहा कि तुम मेरे सजन का पलंग यहाँ उठा लाओ ॥ ५ ॥ वीर यह वचन सुनकर उस ओर चल पड़ा और पलंग उठाकर ले आया। कुँवरि ने कुँवर के साथ कामभोग किया और उसे फिर उसी तरह उसके घर पहुँचा दिया ६ दोहा एक दिन कुँवरि का पिता पुत्री के कक्ष में

बढा संदेह ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ चितातुर घर को फिरि आयो । शहिर ढँढोरा ऐस दिलायो । जे केई पुहप खरीदन आवै । मुहि निरखे बिनु लेन न पावै ॥ ८ ॥ (मू०ग्रं०१२७६) पुहपन समै बिकन जब भयो । तब तह त्रिपति बिलोकन अयो । जोगी एक तहाँ तब आयो । पुहप पाँच मन मोल चुकायो ॥ ९ ॥ आइ सु फूल मोल लै गयो । पाछो गहत त्रिपति तिह भयो । जात जात दोऊ गए गहिर बन । जह लखि आत तीसरो मनुछ न ॥ १० ॥ तब जोगी सर जटा उघारी । तिन भीतर तें नारि निकारी । भाँति भाँति तासौ रति करिकै । सोयो ताप मदन को हरिकै ॥ ११ ॥ जब ही सोइ संन्यासी गयो । जूत जटन तिह नारि छुरयो । तह ते पुरख एक तिह काढा । कामभोग तासौ करि गाढा ॥ १२ ॥ त्रिप ठाढे तिह चरित निहारा । जोरि हाथ जोगियहि उचारा । मो ग्रहि काल क्रिपा करि ऐयो । जथा शकति भोजन करि जैयो ॥ १३ ॥ प्रात गयो संन्यासी तिह घर । भगवा भेस सकल तन मै धरि । भाँति भाँति तन प्रभा बनाई । महाँ धरम सो जनियो जाई ॥ १४ ॥ संन्यासी कह त्रिप आगे धरि । दुहिता के

गया और शय्या को उलटी-पलटी देखकर उसके मन में संदेह बढ़ा ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह चितातुर वापस अपने निवास पर आया और उसने शहर में ढिंढोरा पिटवा दिया कि यदि कोई पुहप खरीदने के लिए आए तो मुझसे मिले बिना न खरीदे ॥८॥ फूलों के बिकने का समय जब हुआ तो राजा स्वयं वहाँ देखने गया । तब एक योगी वहाँ आया और उसने पाँच मन फूलों का दाम चुकता किया ॥ ९ ॥ वह फूल लेकर गया और राजा भी उसके पीछे-पीछे चल पड़ा । चलते-चलते वे गहरे वन में चले गये, जहाँ तीसरा व्यक्ति दिखायी नहीं देता था ॥ १० ॥ तब योगी ने सिर की जटाएँ खोल दी और उनमें से एक स्त्री निकली । वह उससे भाँति-भाँति की रमण-क्रीडा करके कामाग्नि शान्त करके सो गया ॥ ११ ॥ जब संन्यासी सो गया तो नारी ने उसकी जटा को छुआ और उनमें से एक पुरुष निकला जिसने दृढ़तापूर्वक उससे रतिक्रीडा की ॥ १२ ॥ राजा ने खड़े होकर यह दृश्य देखा और हाथ जोड़कर योगी से कहा कि कृपा कर कल मेरे घर आइए और यथाशक्ति मुझसे भोजन ग्रहण कीजिए ॥ १३ ॥ प्रातः भगवे वस्त्र धारण कर संन्यासी वहाँ उसके घर गया । उसने तन को भाँति भाँति प्रकार से सजाया जिसे वह महाधार्मिक जाना जा रहा

राजा आयो घर। तीन थाल भोजन के भरिकै। आगे राखे बचन उचरिकै॥ १५॥ इह बिधि बचन कहे संन्यासी। कहा करत है मुहि तन हासी। एक मनुछ हो इतनो भोजन। खायो जाइ कवन बिधि मो तन॥ १६॥ एक थार भोजन तुम करो। दुतिय जटन मे तिह अनसरो। जिह तिह भाँति जटा छुरवाइ। तह ते नारि निकासी राइ॥ १७॥ त्रितिय थार आगे तिह राखा। बिहसि बचन तासौ त्रिप भाखा। केस फाँस ते पुरख निकारहु। यह भोजन तुम ताकह खवारहु॥ १८॥ जिह तिह बिधि ताको सु निकार्यो। बहुरि सुता सौ बचन उचार्यो। तीन थार आगे तिह राखे। तीनो भखहु याहि बिधि भाखे॥ १९॥ दुहकर करम लखियो पित को जब। चक्रित भई चित माँझ कुअरि तब। जार सहित वह बीर बुलायो। आपन सहित भोज वह खायो॥ २०॥ तास चित मै अधिक बिचारा। इन राजै सभ चरित निहारा। कवन उपाइ आजु ह्याँ करियै। कछुक खेलि करि चरित निकरियै॥ २१॥ बीर हाकि अस मत्र उचारा। पित जुत अंध तिनै करि डारा। गई मित्र के साथ

था॥ १४॥ संन्यासी को आगे-आगे लेकर राजा पुत्री के घर आया। उसने तीन थालों में भोजन परोसकर उसके आगे रखा॥ १५॥ संन्यासी ने कहा कि तुम क्यों मुझसे हँसी कर रहे हो? मैं एक हूँ और भोजन इतना अधिक है। मैं कैसे खा पाऊँगा?॥१६॥ एक थाल भोजन तुम खाओ और दूसरा जटाओं में डाल लो। उसकी जटाएँ जैसे-तैसे खुलवाकर राजा ने उसमें से स्त्री को निकाला॥ १७॥ तीसरा थाल उसके आगे रखकर राजा ने हँसकर उससे कहा। केशपाश से पुरुष को निकालो और यह भोजन तुम उसको खिलाओ॥ १८॥ उसने जैसे-तैसे उसको भी निकाला और पुनः पुत्री से कहा। तीनों थाल उसके आगे रखे और कहा कि तीनों खाओ॥ १९॥ पिता के दुस्तर कार्य को देखकर कुँवरि चित्त में चकित हो उठी। उसने यार समेत उस बीर (प्रेत) को बुलाया और तीनों ने वह भोजन खाया॥ २०॥ उसने चित्त में अधिक दुख किया कि राजा ने मेरा सारा प्रपंच देख लिया है। कुछ उपाय किया जाय जिससे इस जवाबी प्रपंच से बचा जाय॥ २१॥ उसने बीर (प्रेत) को बुलाकर ऐसा मन्त्र [illegible] कि अपने पिता को अंधा कर दिया। वह मित्र के साथ नि[illegible] चली गई और किसी को रहस्य का पता ही न लग

निकरि करि। भेद सका नहि किनूँ बिचरि करि ॥ २२ ॥ अंध भए ते (मू०ग्रं०१२७७) लोग सभै जब। इह बिधि बचन बखाना न्रिप तब। आछि बैद कोऊ लेहु बुलाइ। जो आँखिन को करै उपाइ ॥ २३ ॥ दुहिता बैद भेस तह धरिकै। रोग न्रिपति अखिअन कौ हरिकै। माँगि लयो पित ते सोई पति। खचित हुती जाके भीतर मति ॥ २४ ॥ इह छल बर्‍यो बाल पति तौनै। मन महि चुभ्यो चतुरि कै औनै। इन इसत्रिन के चरित अपारा। सजि पछुताम्यो इन करतारा ॥ २५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ बाइस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३२२ ॥ ६०८४ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ तेईस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ भद्रसैन राजा इक अति बल। अरि अनेक जीते जिन दलमलि। शहिर भेहरा मे असथाना। जिन कौ भरत दंड न्रिप नाना ॥ १ ॥ कुमुदनिदे ताके घर नारी। आपु जनुक जगदीस सवारी। ताकी जात न प्रभा उचारी। फूल रहो जनु करि फुलवारी ॥ २ ॥ प्रभुवसैन सुत ग्रहि

पाया ॥ २२ ॥ जब सभी अंधे हो गये तो राजा ने तब कहा कि कोई अच्छा वैद्य बुलाओ जो आँखों का उपाय करे ॥ २३ ॥ पुत्री ने वैद्य का वेश धारण कर पिता का रोग दूर कर पिता से वही पति माँग लिया जिसमें वह अनुरक्त थी ॥ २४ ॥ इस छल से उसने अपने उस पति का वरण किया जो मन में समाया हुआ था। इन स्त्रियों के अपार चरित्र है। इन्हें बनाकर तो विधाता भी पछताया है ॥ २५ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ बाइसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३२२ ॥ ६०८४ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ तेईसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ भद्रसेन एक अत्यंत बलशाली राजा था जिसने अनेकों शत्रुओं का दलन कर उन्हें जीता था। भेरा (जेहलम के किनारे एक शहर) में वह रहता था और अनेकों राजा उसका कर भरते थे ॥ १ ॥ कुमुदिनी देवी उसकी स्त्री थी जिसे मानों परमात्मा ने अपने हाथ से सँवारा था उसकी प्रभा का वर्णन नहीं किया जा सकता वह ऐसी लगती

अवतरियो। मदन रूप दूसर जनु धरियो। जाकी जात न प्रभा बखानी। अटिक रहत लखि रंकरु रानी ॥ ३ ॥ जब वह तरुन कुअर अति भयो। ठौरह्ि ठौर अवर ह्वै गयो। बालपने कि तगीरी आई। अंग अंग फिरी अनंग दुहाई ॥ ४ ॥ तह इक सुता शाह की अही। कुअर बिलोक थकित ह्वै रही। हौस मिलन की ह्रिदै बढाई। एक सहचरी तहाँ पठाई ॥ ५ ॥ सखी कुअर तन ब्रिथा जनाई। शाह सुता तव हेरि लुभाई। करहु सजन तिह धाम पयाना। भोग करो वासो बिधि नाना ॥ ६ ॥ द्वै हैंगे इह नगर खुदाई। तिन दुहूँअन मौ रारि बढाई। जो तूँ दुहूँ जियन तै मारै। बहुरि हमारो साथ बिहारै ॥ ७ ॥ सुनि बच भेस तुरक त्रिय धरा। बाना वहै आपनो करा। गहि क्रिपान तह कियो पयाना। जहाँ निमाजी पढ़त दुगाना ॥ ८ ॥ जबही पढ़ी निमाज तिनो सब। सिजदा बिखै सु गए तुरक जब। तब तिह घात भली करि पाई। काटि मूँड दुहूँअन के आई ॥ ९ ॥ इह बिधि दोऊ खुदाई मारे। रमी आनि करि साथ पधारे। भेद अभेद न किनी

थी मानों फुलवाड़ी फूली हो ॥ २ ॥ उनके घर प्रमुदसेन नामक पुत्र पैदा हुआ जो मानों दूसरा कामदेव था। उसकी प्रभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। उसे देखकर रानी और रंक-स्त्रियाँ सभी उसमें उलझ जाती थीं ॥ ३ ॥ जब वह कुँवर तरुण हुआ तो देखते-देखते और से और हो गया। बचपन बिदा हुआ और अंग-अंग में कामदेव छा गया ॥ ४ ॥ वहाँ एक धनी की पुत्री थी जो कुँवर को देखकर व्याकुल हो उठी। उसने मन में मिलने की लालसा से एक दासी वहाँ भेजी ॥ ५ ॥ दासी ने कुँवर से कहा कि धनी की पुत्री तुम पर लुब्ध है। हे सजन ! उसके घर जाओ और उससे विभिन्न प्रकार के रास-विहार करो ॥ ६ ॥ इस नगर में दो मुसलमान हैं जिनसे मेरा झगड़ा बढ़ा हुआ है। यदि तुम उन दोनों को जान से मार डालो तो फिर मेरे साथ रमण करो ॥ ७ ॥ यह सुनकर स्त्री ने तुर्क वेश धारण किया और उसी प्रकार के वस्त्र धारण कर लिये। कृपाण पकड़कर उसने वहीं प्रस्थान किया, जहाँ नमाज़ी नमाज़ पढ़ रहे थे ॥ ८ ॥ जब वे सब नमाज़ पढ़कर सजद: में झुके तब इसने अवसर पाकर दोनों के सिर काट लिये ॥ ९ ॥ इस प्रकार दोनों मुसलमानों को मार दिया और फिर आकर अपने प्रिय के साथ रत हो गई किसी ने भद अभद न जाना और समझा कि किसी दुष्ट ने इन्हें मार

बिचारा। किनही दुशट कह्यो इन मारा ॥ १० ॥ (मू०ग्रं०१२७८)
॥ दोहरा ॥ मारि खुदाइन दुहूँ कह बर्यो आन करि मित।
देव अदेव न पावही अबलान के चरित ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ तेईस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३२३ ॥ ६०९५ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ चौबीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ मंत्री कथा उचारन लागा। जाके रस राजा अनुरागा। सूरतिसैन न्रिपति इक सूरति। जानुक दुतिय मैन की मूरति ॥ १ ॥ अछ्छ्रादेइ सदन तिह नारी। कनक अवटि साँचै जन ढारी। अपसरमती सुता तिह सोहै। सुर नर नाग असुर मन मोहै ॥ २ ॥ सुरिदसैन इक शाह पुत्र तह। जिह सम दूसर भयो न महि मह। राज सुता तिह ऊपर अटकी। बिसरि गई सभ ही सुधि घट की ॥ ३ ॥ चतुरि सहचरी तहाँ पठाई। नारि भेस करि तिह लै आई। जब वहु तरुन तरुनियहि पायो।

डाला है ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ दोनों खुदा के बंदों को मारकर आकर मित्र का वरण किया। देव-अदेव कोई भी स्त्रियों के प्रपंचों को नहीं जान सका है ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ तेईसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३२३ ॥ ६०९५ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ चौबीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ मंत्री कहानी कहने लगा जिसमें राजा लीन था। सूरत में सूरतिसेन नामक एक राजा था जो मानों कामदेव की प्रतिमा था ॥ १ ॥ अक्षरदेवी उसकी स्त्री थी जो मानों सोने के साँचे में ढालकर बनाई गई थी। अप्सरमती उसकी पुत्री थी जो सुर, नर, नाग, सबको मोहित कर लेनेवाली थी ॥ २ ॥ सुरिदसेन वहाँ एक धनी का पुत्र था जिसके समान अन्य कोई नहीं था। राजसुता उसी पर आसक्त थी और उसे सारी सुध-बुध भूली हुई थी ॥ ३ ॥ एक चतुर सहेली उसने वहाँ भेजी जो उसे नारी वेश में राजकुमारी के पास ले आई। जब उस तरुण ने युवती पायी तो उसे विभिन्न प्रकार से आलिंगनबद्ध

भाँति भाँति भजि गरे लगायो ॥ ४ ॥ भाँति भाँति के आसन लैकै । भाँति भाँति तन चुंबन कैकै । तिह तिह बिधि ताको बिरमायो । ग्रहि जैबो तिनहूँ सु भुलायो ॥ ५ ॥ सखी भेस कह धारे रहै । सोई करै जु अबला कहै । रोज भजै आसन तिह लै कै । भाँति भाँति ताकह सुख दै कै ॥६॥ पित तिह निरखै भेद न जानै । दुहिता की तिह सखी प्रमानै । भेद अभेव जड़ कोइ न लहही । वाकी ताँहि खवासिनि कहही ॥ ७ ॥ इक दिन दुहिता पिता निहारत । भई खेल के बीच महाँ रत । तवन पुरख कह पुरख उचरिकै । भरता करा सुयंबर करिकै ॥ ८ ॥ बैठी बहुरि शोक मन धरिकै । सुनत मात पित बचन उचरिकै । कह इह करी लखहु हमरी गति । मुहि इन दीन सहचरी करि पति ॥ ९ ॥ अब मुहि भई इहै सहचरि पति । खेलत दई लरिकवन सुभ मति । अब जौ है मोरे सत माँही । तौ इह नारि पुरख ह्वै जाहीं ॥ १० ॥ लिय ते इहै पुरख ह्वै जाही । जौ कछु सत मेरे महि आही । यह अब जूनि पुरख की पावै । मदन भोग मुरि संग कमावै ॥ ११ ॥ चक्रित भयो राजा इन बचनन । रानी

किया ॥ ४ ॥ उसने भी उसे विभिन्न प्रकार से उलझाया और घर वापस जाना ही भुलवा दिया ॥ ५ ॥ वह सखी के वेश में था और वही करता था जो वह स्त्री कहती थी । उसके साथ आसनों के माध्यम से रोज रमण करता था और विभिन्न प्रकार से उसे सुख देता था ॥ ६ ॥ पिता उसे देखकर समझता नहीं था और उसे पुत्री की सहेली ही मानता था और वह भी उसे सेविका ही कहती थी ॥ ७ ॥ एक दिन पुत्री पिता के देखते-देखते रमण-रत हो गई और उस पुरुष को पुरुष कहकर उसने उसे स्वयंवर में पति बना लिया ॥ ८ ॥ वह मन में शोक धारण कर बैठ गई और माता-पिता को सुनाकर कहने लगी । देखो मेरी क्या गति हो गयी है । मैंने तो इस सहेली को ही अपना पति बना लिया है ॥ ९ ॥ बचपन से साथ खेलती चली आनेवाली यह सहेली ही अब मेरा पति हो गई है । यदि मुझमें सतीत्व होगा तो यह स्त्री ही पुरुष बन जायगी ॥ १० ॥ यही नारी से नर हो जायगी यदि मुझमें कुछ शक्ति होगी । यह अभी पुरुष योनि प्राप्त करेगी और मेरे साथ रमण करेगी ११ राजा यह वचन सुनकर चकित हो उठा और उसने रानी-

सहित बिचार कियो मन । दुहिता कहाँ कहत बैनन कह । अचरज सो आवत है जिय मह ॥ १२ ॥ (मू०ग्रं०१७६) जब तिह बस्त्र छोरि न्रिप लहा । निकस्यो वहै जु दुहिता कहा । अधिक सती ताकहि करि जाना । भला बुरा नहि मूढ़ पछाना ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ चौबीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३२४ ॥ ६१०८ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ पचीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ स्री सुलतानसैन इक राजा । जा सम दुतिय न बिधना साजा । स्री सुलतानदेइ तिह नारी । रूपवान गुनवान उज्यारी ॥ १ ॥ ताके भवन भई इक बाला । जानुक सिथर अगनि की ज्वाला । स्री सुलतान कुअरि उजियारी । कनक अवटि साँचे जन ढारी ॥ २ ॥ जोबनंग ताके जब भयो । बालापन तब ही सभ गयो । अंग अंग दयो अनंग दमामा । जाहिर भई जगत महि बामा ॥ ३ ॥ सुनि सुनि प्रभा कुअर तह आवै । द्वारे भीर

समेत विचार किया कि पुत्री क्या आश्चर्यकारक बातें कह रही है ॥ १२ । जब उसके कपड़े खोलकर उसने देखे तो जो पुत्री ने कहा वही सच निकला । उसे अत्यधिक सती माना और मूर्खों ने भला-बुरा कुछ नहीं पहचाना ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद के तीन सौ चौबीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३२४ ॥ ६१०८ ॥

तीन सौ पचीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ सुलतानसेन एक राजा था जिसके समान विधाता ने अन्य किसी को नहीं बनाया था । उसकी स्त्री सुलतानदेवी रूपवान और गुणवान थी ॥ १ ॥ उनके घर एक पुत्री थी जो मानों अग्नि की ज्वाला थी । उनका नाम सुलतानकुँवरि था जो मानों सोने के साँचे में ढालकर बनाई गई थी ॥ २ ॥ जब यौवन उसके अंगों पर आया और उसका बचपन बीता तो काम ने अंग-अंग पर अधिकार कर लिया और वह स्त्री रूप में सबके समक्ष प्रकट हो उठी ॥ ३ ॥ उसकी प्रभा के

बार नहि पावै। एक तरुन तरुनी कौ भायो। जानुक मदन रूप धरि आयो ॥ ४ ॥ सोइ कुअरि तरुनी कौ भायो। पठै सहचरी बोलि पठायो। क्रीड़ा करी बहुत बिधि वा सो। कीनो प्रात सुयंबर ता सो ॥ ५ ॥ जब ही ब्याह तवन सौ कीयो। बहुतिक बरिस न जाने दीयो। क्रीड़ा करै भाँति भाँतिन तन। हरख बढाइ बढाइ अधिक मन ॥ ६ ॥ भोग बहुत दिन ता संग कयो। ताको बल सभ ही हरि लयो। जबै त्रिधात कुअर वह भयो। तब ही डारि ह्रिदै ते दयो ॥ ७ ॥ औरन साथ करै तब प्रीता। निसु दिन करै काम की रीता। पतिहि तोरि खोजा करि डारा। आपु अवर सो केल मचारा ॥ ८ ॥ बिरहराइ ताको थो यारा। जासो बध्यो कुअर के प्यारा। ता पर रही होइ सो लटकन। तिह तिह मरत प्यास अरु भूखन ॥ ९ ॥ इक दिन भाँग मित्र तिन लई। पोसत सहित अफीम चढ़ई। बहु रति करी न बीरज गिराई। आठ पहिर लगि कुअरि बजाई ॥ १० ॥ सभ निसि नारि भोग जब पायो। बहु आसन करि हरख

बारे में सुनकर कुंवर वहाँ आते थे और उसके दरवाजे पर रास्ता मिलना कठिन हो गया था। उस तरुणी को एक युवक भा गया। वह मानों कामदेव का रूप धारण करके आया था ॥ ४ ॥ वह तरुण जो युवती को अच्छा लगा उसे सखी भेजकर उसने बुलवा लिया। उससे विभिन्न प्रकार की क्रीड़ाएँ कीं और स्वयंवर में उसका वरण कर लिया ॥ ५ ॥ जब उससे विवाह कर लिया तो बहुत वर्षों तक उसे जाने नहीं दिया। वह मन में अत्यंत प्रसन्न हो उससे विभिन्न प्रकार की कीड़ाएँ किया करती थी ॥ ६ ॥ उससे बहुत दिनों तक भोग करके उसका सारा बल समाप्त कर दिया। जब वह कुँवर वीर्य-विहीन हो गया तो उसे हृदय से भुला दिया ॥ ७ ॥ अब वह अन्यों के साथ प्रीति करने लगी और रात-दिन रतिक्रीड़ा करने लगी। पति से हित उसने तोड़ दिया और दूसरे के साथ केलिक्रीड़ा करने लगी ॥ ८ ॥ कुँवरि का प्यार विरहराय के साथ अत्यधिक था। वह उसी में उलझकर रह गयी थी और उसी के हित में भूखी प्यासी रहती थी ॥ ९ ॥ एक दिन उसके मित्र ने पोस्त-अफ़ीमयुक्त भाँग का सेवन किया और बिना स्खलित हुए आठ प्रहर तक वह कुँवरि के साथ रतिक्रीड़ा करता रहा १० जब सारी रात उसने नारी को भोगा और विभिन्न आसनो के माध्यम से सुख बढ़ाया

बढायो । ता पर तरुनि चित ते अटकी । भूलि गई सभ ही सुधि घट की ।। ११ ।। द्वै घटिका जो भोग करत नर । ता पर रीझत नारि बहुत करि । चारि पहर जो केल कमावै । सो कि न त्रिय कै चित्त चुरावै ।। १२ ।। (मू०ग्रं०१२८०) रैनि सकल तिन तरुनि बजाई । भाँति भाँति के साथ हँढाई । आसन करे तरुनि बहु हारा । चुंबनादि लख घात अपारा ।। १३ ।। भाँति भाँति के चतुरासन करि । भज्यो ताँहि तर दाबि भुजन भरि । चुंबन आसन करत बिचच्छन । कोक कला कोबिद सभ लच्छन ।। १४ ।। ।। दोहरा ।। पोसत श्राब अफीम बहु घोटि चढ़ावत भंग । चारि पहर भामहि भजा तऊ न मुचा अनंग ।। १५ ।। ।। चौपई ।। भोग करत सभ रैनि बितावत । दलिमलि सेज मलिन ह्वै जावत । होत दिवाकर की अनुराई । छैल सेज मिलि बहुरि बिछाई ।। १६ ।। पौढि प्रजंक अंक भरि सोऊ । भाँग अफीम पियत मिलि दोऊ । बहुरि काम की केल मचावैं । कोकसार मत प्रगट दिखावैं ।। १७ ।। कैफन साथ रसमसे ह्वै करि । प्रोढि प्रजंक रहत दोऊ स्वै करि । बहुरि जगै रस रीति

तो वह तरुणी चित्त से उसी में अटक गई और घर-बाहर की सुधि भूल गई ।। ११ ।। जो दो घड़ी तक स्त्री के साथ रमण करता है, उस पर स्त्रियाँ आसक्त रहती हैं । जो चार प्रहर तक केलिक्रीड़ा करता है, वह भला क्यों नहीं स्त्री का चित्त चुराएगा ।। १२ ।। उसने सारी रात विभिन्न प्रकार से स्त्री का उपभोग किया । बहुविध आसनादि उसने किए और चुंबन, नख-आघात आदि किए ।। १३ ।। भाँति-भाँति के चतुरतापूर्ण आसन कर उसने भुजाओं से दबाकर उससे रमण किया । वे कोक के लक्षणों के अनुसार विलक्षण प्रकार से चुंबन-आसन करते रहे ।। १४ ।। ।। दोहा ।। पोस्त, शराब, अफ़ीम और भंग पीकर चार प्रहर तक उस स्त्री से रमण किया, परन्तु फिर भी कामाग्नि शान्त नहीं हुई ।। १५ ।। ।। चौपाई ।। भोग करते बहुत रात बीत जाती और सारी शय्या का मर्दन हो जाता । सुबह होते ही वह छैला के साथ मिलकर फिर शय्या बिछा लेती थी ।। १६ ।। पलंग पर एक-दूसरे से आलिंगनबद्ध होते सोते थे और भाँग अफ़ीम दोनों पीते थे । फिर काम-क्रीड़ा करते और कोकसार पर चर्चा करते थे १७ नशो मे बचित होकर दोनों पलगों पर सोये रहते थे जगने पर फिर रासक्रीड़ा करते थे और कवित्तों क

मचावैं। कबित उचारहि ध्रुरपद गावैं ॥ १८ ॥ तब लगि बिरहनटा ताको पति। निकस्यो आइ तहाँ मूरख मति। तब त्रिय चतुर चरित्र बिचरिकै। हन्यो ताहि फाँसी गर डरिकै ॥ १९ ॥ एक कोठरी मित्र छपायो। पतिहि मारि सुर ऊच उचायो। राजा प्रजा शबद सुनि धाए। दुहिता के मंदरि चलि आए ॥ २० ॥ म्रितक पर्‌यो ताको भरतारा। राव रंक सभहूँन निहारा। पूछत भयो तिसो कह राजन। कहा भई याकी गति कामनि ॥ २१ ॥ सुनहु पिता मैं कछू न जानो। रोग याहि जो तुमै बखानो। अकसमात याकह कछु भयो। जीवत हुतो म्रितक ह्वै गयो ॥ २२ ॥ अरु जौ अब मो मै कछु सत है। अरु जौ सत्य बेद कौ मत है। अब मै रुद्र तपस्या करिहौ। याहि जियाऊँ कै जरि मरिहौ ॥ २३ ॥ तुमहूँ बैठ याहि अंगना अब। पूजा करहु सदा शिव की सब। मैं याकौ इह घर लै जैहौ। पूजि सदा शिव बहुरि जिवैहौ ॥ २४ ॥ मात पिता अंगना बैठाए। नैबी महता सगल बुलाए। लै संग गई म्रितक कह तिह घर। राख्यो थो जहाँ जार छपा करि ॥ २५ ॥ तिह घर जाइ पाट द्रिढ़ दै करि।

उच्चारण करते हुए ध्रुपद गाते थे ॥ १८ ॥ तब तक मूर्ख बिरहनट नामक उसका पति वहाँ आ निकला। तब चतुर स्त्री ने प्रपंच कर उसे फाँसी लगाकर मार डाला ॥१९॥ एक कोठरी में मित्र को छिपा दिया और पति को मारकर ऊँचे स्वर में चिल्लाई। राजा-प्रजा सभी चीत्कार सुनकर उस पुत्री के निवास की ओर आ गए ॥ २० ॥ राजा, रंक सब ने उसके मृत पड़े हुए पति को देखा। राजा ने उसी से पूछा, हे स्त्री, इसकी यह गति कैसे हो गई ? ॥२१॥ हे राजन्! सुनो, इसे कुछ रोग था जिसके बारे में मैं कुछ नहीं जानती जो तुम्हें बताऊँ। इसे अचानक ही कुछ हुआ और यह मर गया ॥२२॥ अब यदि मेरा सतीत्व कुछ है और वेद का मत भी यदि सत्य है तो मैं रुद्र की पूजा-तप करूँगी और या तो इसे जीवित कर लूँगी अथवा स्वयं भी जलकर मर जाऊँगी ॥ २३ ॥ तुम भी अब इसी आँगन में बैठो और सभी शिव की पूजा करो। मैं इसे घर के अन्दर ले जाती हूँ और शिव का पूजन कर इसे जीवित कर लूँगी ॥ २४ ॥ उसने माता-पिता को आँगन में बैठाया और सभी सेवकों को बुला लिया। वह मृतक को उस स्थान पर ले गई जहाँ उसने यार को छिपा रखा था २५ उस कक्ष मे पहुँचकर उसने दरवाज़े को दृढ़तापूर्वक बन्द

स्त्री जार के साथ बिहसि करि। न्रिप जुत बठ लोग द्वारा
गरि। भेद अभेद न सकत बिचारि करि ॥ २६ ॥ (मू०ग्रं०१२८१)
ते सभही जिय मै अस जानं। सुता शिवत पूजत अनुमानं।
याकी आजु सत्तता लहिहैं। भली बुरी बतिया तब
कहिहैं ॥ २७ ॥ जो यह कुअरि रुद्र सों रत है। जौ यह तिह
चरनन मै मत है। तौ पति जीवत बार न लगिहै। शिव
शिव भाखि म्रितक पुनि जगिहै ॥ २८ ॥ इत ते द्वार बिचार
बिचारत। उत त्रिय संग भो जार महा रत। ज्यों ज्यों
लपटि चोट चटकावै। ते जाने वह गाल्ह बजावै ॥ २९ ॥
तहाँ खोदि भू ताको गाडा। बाहर हाड गोड नहि छाडा।
अपने साथ जार कह धरिकै। लै आई इह भाँति उचरिकै ॥३०॥
जब मैं ध्यान रुद्र को धरियो। तब शिव अस मुर साथ
उचरियो। बरंब्रूह पुत्री मन भावत। जो इह समैं ह्रिदै
महि आवत ॥ ३१ ॥ तब मैं कह्यो जियाइ देहु पति। जो
तुमरे चरनन महि मुर मति। तब इह भाँति बखान्यो शिव
बच। सो तुम समझि लेहु भूपति सच ॥३२॥ ॥दोहरा॥ ताँते

कर लिया और प्रसन्नतापूर्वक यार के साथ रमण करने लगी। राजा अन्य लोगों-समेत दरवाजे पर बैठा था और भेद-अभेद को नहीं जान पा रहा था ॥ २६ ॥ वे सभी मन में पुत्री द्वारा शिव की पूजा करने का अनुमान लगा रहे थे। वे सोच रहे थे कि आज इसका सतीत्व देखा जायगा और तब भले-बुरे का निर्णय किया जायगा ॥ २७ ॥ यदि यह रुद्र की पूजा में अनुरक्त है और उसी के चरणों में लीन है तो पति को जीवित होने में देर नहीं लगेगी और मृतक शिव-शिव कहकर जीवित हो उठेगा ॥ २८ ॥ इधर दरवाजे पर ये सब इस प्रकार के विचार बना रहे थे उधर स्त्री यार के साथ क्रीड़ारत थी। जैसे-जैसे वे लिपट-लिपटकर आघात कर रहे थे, ये समझ रहे थे कि बकरे जैसी आवाज़ निकाल (गाल बजा) कर वह शिव को प्रसन्न कर रही है ॥ २९ ॥ वहाँ धरती खोदकर अपने पति को गाड़ दिया और बाहर कुछ नहीं छोड़ा। अपने यार को यह कहती हुई बाह ले आई ॥ ३० ॥ जब मैंने शिव का ध्यान किया तो शिव ने मुझे इस प्रका कहा। हे पुत्री, इस समय जो मन में आए माँग लो ॥ ३१ ॥ त मैंने कहा कि यदि तुम्हारे चरणों में मेरा प्यार है तो मेरे पति क जीवित कर दो तब हे राजन सच मानना शिव ने यह कहा ३२

अति सुंदर करो वा ते बैस किशोर । नाथ जियो स्री संभु की क्रिपा द्रिशटि की कोर ॥ ३३ ॥ ॥ चौपई ॥ सभहिन बचन सत्त करि जाना । शिव को सत्त बचन अनमाना । तब तें तजि सुंदर जिय तासा । नितप्रति तासौ करत बिलासा ॥ ३४ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ पचीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३२५ ॥ ६१६१ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ छबीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ गहरवार राजा इक अति बल । कबं न चलया पीर हलाचल । गूढ़मती नारी ताके घर । कही न परत प्रभा ताकी बर ॥ १ ॥ तह इक हुतो शाह बडभागी । रूपवान गुनवाननुरागी । सुकचमती दुहिता ताके घर । प्रगट भई जनु कला किरणिधर ॥ २ ॥ एक तहाँ बैपारी आयो । अमित दरब नहि जात गनायो । जवत्रि जाइफर उसटं भरे । लौंग लायची कवन उचरे ॥ ३ ॥ उतरत धाम तवन के भयो । मिलबौ काज शाह संग गयो । दुहित घात

॥ दोहा ॥ मैं इसे पहले से भी सुन्दर और जवान बना देता हूँ । इस प्रकार शिव की कृपादृष्टि से मेरा पति जीवित हो उठा है ॥३३॥ ॥चौपाई॥ सबने इसे सत्य वचन मान लिया और शिव-कथन की बात को भी सच्चा जान लिया । तब से मन का भय दूर कर वह नित्य उससे भोग-विलास करने लगी ॥ ३४ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ पचीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३२५ ॥ ६१६१ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ छब्बीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ गहरवार एक अत्यन्त बलशाली राजा था जिसके यहां कभी कोई कष्ट और हलचल नहीं हुई थी । उसकी स्त्री गूड़मती थी जिसकी शोभा अवर्णनीय है ॥ १ ॥ वहाँ एक भाग्यशाली धनवान रहता था जो रूपवान और गुणानुरागी था । उसकी पुत्री सुकचमती थी जो मानों चन्द्र की कलाओं के समान सुन्दर थी ॥ २ ॥ वहाँ अपरिमित द्रव्य वाला एक व्यापारी आया । जावित्री, जायफल, लौंग, इलायची के उसने ऊँट भरे हुए थे इस सबका वर्णन नहीं किया जा सकता ३ वह उस से

तवन की पाई । सकल दरबु तिह लियो चुराई ॥ ४ ॥ माला ग्रहि की सकल निकारि । दई बहुरि तह आगि प्रजार । रोवत सुता पिता पहि आई । जर्यो धाम कहि ताँहि सुनाई ॥ ५ ॥ सुन त्रिय बचन शाह द्वै धाए । घर को माल (मू०ग्रं०१२८२) निकासन आए । आगे आइ निहारें कहाँ । निरखा ढेर भसम का तहाँ ॥ ६ ॥ बहुरि सुता इमि बचन उचारे । यहै पिता दुख ह्रिदै हमारे । आपनि गए का शोक न आवा । याको लगत हमैं पछतावा ॥ ७ ॥ पुनि सुत कौ अस शाह उचारे । सोई भयो जु लिख्यो हमारे । तुम याको कछु शोक करहु जिन । दैहो दरबु जर्यो जितनो इन ॥ ८ ॥ भेव अभेव ना कछु जड़ पायो । मूँड मुँडाइ बहुरि घर आयो । करम रेख अपनी पहिचानी । त्रिय चरित्र की रीति न जानी ॥ ९ ॥ शाहु सुता इह छल धन हरा । भेद न ताके पितैं बिचरा । स्याना हुतो भेद नहि पायो । बिनु लागे जल मूँड मुँडायो ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ छबीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३२६ ॥ ६१७१ ॥ अफजूं ॥

मिलने के लिए उसी के घर ठहरा। पुत्री ने अवसर पाकर उसका समस्त धन चोरी कर लिया ॥ ४ ॥ अपने घर का सारा द्रव्य बाहर निकालकर उसने फिर आग लगा दी। अब पुत्री रोती हुई पिता के पास आयी और उससे कहा कि घर जल गया है ॥ ५ ॥ उस स्त्री की बात सुनकर दोनों धनिक दौड़े हुए आये और घर का माल निकालने का उपक्रम करने लगे। आगे आकर क्या देखते हैं कि वहाँ राख का ढेर पड़ा हुआ है ॥ ६ ॥ फिर पुत्री ने कहा कि हे पिताजी! मुझे यही दुख है कि अपना माल जाने की कोई बात नहीं, इनका चला गया, यही पछतावा है ॥ ७ ॥ धनी ने पुत्री से कहा कि वही हुआ है जो मेरे भाग्य में लिखा था। तुम इसका शोक मत करो। जिसने जलाया है वही वापस द्रव्य भी देगा ॥ ८ ॥ मूर्ख ने भेद-अभेद कुछ नहीं जाना और अपने आपको ठगवाकर वापस घर आ गया। उसने इसे अपना भाग्य ही समझा और स्त्री के प्रपंच को नहीं पहचाना ॥ ९ ॥ धनी की पुत्री ने इस छल से धन चुरा लिया और इस भेद को उसका पिता भी न जान पाया। सयाना होने पर भी उसने भेद नहीं जाना और बिना पानी लगवाए ही सिर मुँड़वा दिया अर्थात् ठगा गया ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ छब्बीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ३२६ ६१७१ अफजूं

अथ तीन सौ सताईस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ अचलावती नगर इक सोहै। अचलसैन राजा तह कोहै। अचलदेइ ताके घर रानी। सुंदरि भवन चवदस जानी ॥ १ ॥ अचलमती दूसर तिह दारा। ताते सुंदरि हुती अपारा। तासौ न्रिप को नेह अपारा। जानत ऊच नीच तिह प्यारा ॥ २ ॥ दुतिय नाहि अस चरित्त बिचार्यो। एक नारि के साथ सिखार्यो। ताको भर्यो दरब सौ धामा। जानत अवर न दूजी बामा ॥ ३ ॥ जब सभ अरध रात्रि स्वै जाँहि। जागत रहै एक जन नाहि। दीप जर्यो धौलर जब लहियहु। तब तुम अस राजा सौ कहियहु ॥ ४ ॥ माया गडी मोहि न्रिप जानो। एक बात मैं तुमैं बखानो। अछला दे त्रिय कौ बलि दैकै। ग्रहि लै जाँहि काढि मुहि लैकै ॥ ५ ॥ अछला दे जबही सुनि पायो। उलटि भेद तिह त्रियहि सिखायो। एक बात माँगे मुहि देहु। न्रिप पहि नाम तिसी का लेहु ॥ ६ ॥ प्रथमै अधिक दरबु तिह दिया। दुगनो दरब देन तिह किया। तिन सहेट उत

तीन सौ सत्ताईसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ अचलावती नगर में अचलसेन नामक एक राजा था। उसकी रानी अचलदेवी थी जो चौदह भुवनों में सुन्दरी समझी जाती थी ॥१॥ उसकी एक अन्य स्त्री अचलमती थी जो उससे भी सुन्दर थी। राजा का उससे अपार स्नेह था और उसके प्रेम के माध्यम से ही वह ऊँच-नीच की पहचान किया करता था ॥ २ ॥ दूसरी स्त्री ने एक प्रपंच करने का विचार किया। उसने एक स्त्री को सिखाया। उसका घर धन से भर दिया और दूसरी स्त्री को पता भी नहीं लगा ॥३॥ जब सब आधी रात को सो जाएँ और कोई भी जगता हुआ न हो; जब तुम महल पर जलता हुआ दीपक देखो तब राजा से इस प्रकार कहना ॥ ४ ॥ हे राजन्! मुझे तुम धन की देवी समझो। मैं तुम्हें और बताती हूँ। तुम अचलादेवी की बलि देकर मुझे साथ लेकर धन निकालकर ले जाओ ॥ ५ ॥ अचलादेवी ने जब यह सुना तो उसने उस स्त्री को उलटी ही बात समझा दी। उससे कहा कि तुम मुझे वचन दो कि तुम (मेरे बजाय) उसका नाम ही लोगी ॥६॥ पहली ने भी उसे काफ़ी द्रव्य दिया था परन्तु इसने उसे दुगना धन दे दिया उसने उधर नियत स्थान पर

दीप जगायो । इति इस्त्री इमि भाखि सुनायो ॥ ७ ॥ हे न्रिप मुहि माया तुम जानो । बिकट केतकी गडी पछानो । अपनी इस्त्री कह बलि दै कै । याते भखहु काढि धन लै कै ॥ ८ ॥ रानी साथ जहाँ न्रिप सोयो । अरधिक (मू०ग्रं०१२८३) रात्रि बचन तह होयो । मुहि माया कौ घर ही राखहु । इस्त्री दै अपनी बलि भाखहु ॥ ९ ॥ जिन इस्त्री इह चरित बनायो । ताही को न्रिप नाम सुनायो । राजा लोभ दरब के मारे । तिसी नारि कह बलि दै डारे ॥ १० ॥ जिनहु नारि कौ मतो सिखायो । पलटि काम ताही के आयो । उन त्रिय दरब ताँहि बहु द्याइ । नारि तिसी कौ हन्यौ बनाइ ॥ ११ ॥ बुरी बात जो कोई बनावै । उलटि काम ताही के आवै । जैसा कियो तैस फल पायो । ताँहि हनत थी आपु हनायो ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ सताईस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३२७ ॥ ६१८३ ॥ अफजूं ॥

दीपक जलाया और इधर स्त्री ने इस प्रकार कहा ॥७॥ हे राजन् ! तुम मुझे लक्ष्मी मानों जो कि एक विकट स्थान पर गड़ी पड़ी है। तुम अपनी स्त्री की बलि देकर इस धन को निकालकर उसका उपभोग करो ॥ ८ ॥ जब राजा रानी के साथ सो गया तो आधी रात के बाद फिर यह आवाज आयी। मुझ माया (लक्ष्मी) को घर में ही रखो और अपनी स्त्री का बलिदान देकर मुझे प्राप्त करो ॥ ९ ॥ जिस स्त्री ने यह प्रपंच किया था उसने राजा को उसी का नाम कह सुनाया। राजा ने धन के लालच में उसी स्त्री की बलि दे दी ॥ १० ॥ जिस स्त्री ने प्रपंच उस स्त्री को सिखाया था वह उसी के काम आ गया। उस स्त्री ने उसे अत्यधिक धन दिया और उसने उसी को मार डाला ॥ ११ ॥ जो कोई बुरी बात बनाता है वह उलटकर उसी पर लागू हो जाती है। उसने जैसा किया था वैसा ही फल पाया। वह दूसरे को मार रही थी पर स्वयं ही मारी गई ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ सत्ताईसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३२७ ॥ ६१८३ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ अठाईस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ थंभकरन इक थंभ्र देस न्रिप । सिखय साधु को दुशटन को रिपु । ताके स्वान एक थो आछा । सुंदर घनो सिंघ सो काछा ॥ १ ॥ इक दिन धाम न्रिपति के आयो । पाहन हनि तिह ताहि हटायो । त्रिय की हुती स्वान सौ प्रीता । पाहन लगे भयो दुख चीता ॥ २ ॥ पाहन लगे स्वान मरि गयो । रानी दोश न्रिपति कह दयो । मर्यो स्वान भयो कहाँ उचारा । ऐसे हमरे परे हजारा ॥ ३ ॥ अब तैं याकौ पीर पछाना । ताकी भाँति पूजिहै नाना । कहियो सही तब याहि पुजाऊँ । भले भले ते नीर भराऊँ ॥४॥ कुतब शाह राखा तिह नामा । तहीं खोदि भुअ गाड्यो बामा । ताँ की गोर बणाई ऐसी । किसी पीर की होइ न जैसी ॥ ५ ॥ इक दिन आपु तहाँ त्रिय गई । सिरनी कछू चढ़ावत भई । मंनति मोरि कही बर आई । सुपनो दियो पीर सुखदाई ॥ ६ ॥ मोहि सोवतें पीर जगायो । आपु आपनी कबुर बतायो । ताँते मैं इह ठौर पछानी । अब हमरी मनसा बर आनी ॥ ७ ॥

तीन सौ अट्ठाईसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ थंभ्र देश का राजा थंभकरन साधुओं का सेवक और दुष्टों का शत्रु था । उसके पास एक कुत्ता था जो शेर से भी अच्छा था ॥१॥ वह एक दिन राजा के घर पर आया जिसे उसने पत्थर मारकर भगा दिया । उसकी स्त्री की कुत्ते से अत्यन्त प्रीति थी और उसे पत्थर लगने से अत्यन्त दुख हुआ ॥ २ ॥ पत्थर लगने से कुत्ता मर गया और रानी ने राजा पर यह आरोप लगाया । कुत्ते के मर जाने पर राजा ने कहा कि ऐसे (कुत्ते) हमारे पास हजारों पड़े हैं ॥ ३ ॥ तुमने तो इसे ही पीर मान लिया है और लगता है तुम भली प्रकार इसी की पूजा करोगी । उसने कहा कि ठीक है मैं इसी की पूजा करवाऊँगी और अच्छे-अच्छे लोगों से यहाँ पानी भरवाऊँगी ॥४॥ उस स्त्री ने उसका नाम कुतुबशाह रख दिया और धरती खोदकर उसे गाड़ दिया । उसकी क़ब्र ऐसी बनाई जैसी किसी पीर की भी नहीं होगी ॥ ५ ॥ वह स्त्री एक दिन स्वयं वहाँ गई और कुछ प्रसाद आदि वहाँ चढ़ाया । उसने कहा कि सपने में पीर ने मेरी मन्नत पूरी कर दी है ॥ ६ ॥ पीर ने मुझे सोते से जगाया है और अपनी क़ब्र स्वयं दिखाई है मेरी मुराद पूरी हो

इह बिधि जब पुर मै सुनि पायो । ज्यारति सकल लोग मिलि आयो । भाँति भाँति सीरनी चढ़ावैं । चूँबि कबुर कूकर की जावैं ॥ ८ ॥ काजी शेख सैयद तह आवैं । पढ़ि फात्या सीरनी बटावैं । धूरि समस झारूअन उडाही । चूँमि कबुर कूकर की जाही ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल अपनै स्वान को चरित्र दिखायो बाम । अब लगि कह ज्यारति करैं शाहु (मू०ग्रं०१२८४) कुतब दी नाम ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ अठाईस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३२८ ॥ ६१९३ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ उनतीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बिजियावती नगर इक सोहै । ब्रिक्रमसैन न्रिपति तह कोहै । ब्याघ्रमती ताके घर दारा । चंद्र लयो ताते उजियारा ॥ १ ॥ तिह ठाँ हुती एक पनिहारी । न्रिप के बार भरत थी द्वारी । तिह कंचन के भूखन लहिकै । डारि दए घट मौ कर गहिकै ॥ २ ॥ ऊपर जल ताके तर

गई और इसी से मैंने यह जगह पहचान ली है ॥ ७ ॥ जब नगर में लोगों ने यह सुना तो सभी लोग वहाँ तीर्थलाभ के लिए आ पहुँचे । भाँति-भाँति के प्रसाद चढ़ाने लगे और कुत्ते की क़ब्र चूम-चूमकर जाने लगे ॥ ८ ॥ वहाँ पर क़ाज़ी, शेख, सैयद आते थे और फ़ातिहः पढ़कर प्रसाद बँटाते थे । वहाँ पर झाड़ुओं ने धूल उड़ाते और कुत्ते की क़ब्र को चूम-चूमकर जाते थे ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार उस स्त्री ने अपने कुत्ते के लिए प्रपंच दिखाया और लोग कुतुबशाह के नाम से अभी तक वहाँ तीर्थयात्रा करते हैं ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ अट्ठाईसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३२८ ॥ ६१९३ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ उन्तीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ विजयावती नामक सुन्दर नगर में विक्रमसेन नामक एक राजा था । उसकी स्त्री व्याघ्रमती थी जिससे मानों चन्द्रमा ने भी उजाला लिया हो ॥ १ ॥ वहाँ एक पनिहारिन थी जो राजा के दरवाजे पर पानी भरती थी । उसने एक दिन सोने के आभूषण देखकर घड़े में डाल दिये ॥२॥ ऊपर पानी और नीचे गहने थे परन्तु कोई भी व्यक्ति इस बात को समझ

भूखन। किनूँ न नर समझ्यो तिह दूखन। बहु पुरखन ताको जल पीआ। किनहू जानि भेद नहि लीआ॥ ३॥ रानीहूँ तिह घटहि निहारा। द्रिशटि न्रिपति की तर सु निकारा। काहूँ बात लखी नहि गई। भूखन जात नारि हरि भई॥ ४॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संवादे तीन सौ उनतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ ३२९॥ ६१९७॥ अफजूँ॥

अथ तीन सौ तीस चरित्र कथनं॥

॥ चौपई॥ बिरहावती नगर इक दच्छिन। बिरहसैन तह न्रिपति बिचच्छन। बिरहा देइ सदन महि बाला। जनु करि सिखर अगनि की ज्वाला॥ १॥ इशकादे तिह सुता भनिज्जै। चंद सूर जिह सम छबि दिज्जै। अवर नारि तिह सम नहि कोई। त्रिय की उपमा कह त्रिय सोई॥ २॥ सुंदरता ताके तन ऐसी। सची पारबती होइ न तैसी। मालम सकल जगत उजियारी। जच्छ गांध्रबी भीतर प्यारी॥ ३॥ कंचनसैन दैत तह भारो। बीरजमान दुतिमान

न सका। बहुत से व्यक्तियों ने उसका पानी पिया पर किसी को भी इस रहस्य का पता न लगा॥ ३॥ रानी ने भी उस घड़े को देखा और राजा की दृष्टि से भी वह घड़ा निकल गया। किसी से भी बात देखी नहीं गई और इस प्रकार वह स्त्री गहने चुराकर ले गई॥ ४॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ उनतीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ ३२९॥ ६१९७॥ अफजूँ॥

तीन सौ तीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई॥ दक्षिण के बिरहावती नगर में बिरहसेन एक विलक्षण राजा था। उसके घर में बिरहदेवी नामक स्त्री थी जो मानों अग्नि की ज्वाला के समान थी॥ १॥ उसकी पुत्री इश्कदेवी के नाम से जानी जाती थी, जिसकी उपमा चन्द्र-सूर्य से दी जा सकती है। उसके समान अन्य कोई स्त्री नहीं थी और उस स्त्री के समान तो वही स्त्री थी॥ २॥ उसका सौंदर्य तो ऐसा था जैसा शची और पार्वती का भी नहीं था। वह सकल जगत का प्रकाश थी और यक्ष, गंधर्वों आदि सबमें प्यारी थी। ३। वहाँ

करारो । निहकंटक असुरान कर्यो जिन । समुहि भयो सो बली हन्यो तिन ॥ ४ ॥ तिह पुर अरधि राति वह आवै । एक पुरख नितप्रति भखि जावै । सभहिन सोच बढ़्यो जिय मै अति । बैठि बिचार करत भे सुभ मति ॥ ५ ॥ इह राछस अति ही बलवाना । मानुख भखत रैनि दिन नाना । त्रास करत काहू नहि जन कौ । निरभै फिरत होत करि मन कौ ॥ ६ ॥ बेस्वा हुती एक पुर तवनै । दानव खात मनुख भुअ जवनै । सो अबला राजा पह आई । निरख राव की प्रभा लुभाई ॥ ७ ॥ इह बिधि कह्यो न्रिपति (मू०ग्रं०१२८५) तन बैना । जौ तुम मुहि राखहु निजु ऐना । तौ हौ नारि असुर कह आवौ । या पुर को सभ शोक मिटावौ ॥ ८ ॥ तब मैं बरौ तोहि कौ धामा । जब तैं हनै असुर कह बामा । देस सभै अरु लोग बसैं सुख । मिटै प्रजा के चित को सभ दुख ॥९॥ बली आठ सै महिख मँगायो । भच्छ भोज पकवान पकायो । मदरा अधिक तहा लै धरा । सात बार जु चुआइनि करा ॥ १० ॥ भली भाँति सभ अंन बनाए । भाँति भाँति बिखु साथ मिलाए । गरधभान बहु दई अफीमैं । बाँधे आनि

कचनसेन नामक भारी दैत्य था जो अत्यंत वीर्यमान और द्युतिमान था। उसने असुरों को अभय बना दिया था। उसके सामने जो भी बली आया उसने मार डाला ॥ ४ ॥ वह उस नगर में आधी रात को आता था और रोज़ एक व्यक्ति को मारकर खा जाता था। सभी चिन्तित हो गये और बैठकर विचार करने लगे ॥ ५ ॥ यह राक्षस अत्यंत बलवान है जो रात-दिन मनुष्यों को खाता रहता है। यह किसी से नहीं डरता और निर्भय होकर घूमता रहता है ॥ ६ ॥ जिस नगर में दानव मनुष्यों को खाता था वहाँ एक वेश्या रहती थी। वह स्त्री राजा के पास आयी और उसकी सुन्दरता देखकर मुग्ध हो उठी ॥ ७ ॥ उसने राजा से कहा कि यदि तुम मुझे अपने घर में रख लो तो मैं राक्षस को मार दूँगी और इस नगर का दुःख दूर कर दूंगी ॥ ८ ॥ (राजा ने कहा—) तब मैं तुम्हारा वरण कर लूंगा, यदि हे स्त्री ! तुम उस असुर को मार डालो। देश के सभी लोग सुख से बसें और प्रजा के चित्त का दुख दूर हो ॥ ९ ॥ उसने आठ सौ बलवान भैंसे मँगवाये और अनेक प्रकार के भक्ष्य, भोज, पकवान तैयार करवाये। अत्यधिक मदिरा ले ली जो सात बार आसवित की हुई थी १० उसने भलीभाति सब भोजन विष मिलाकर बनाये

असुर की सीमैं ॥ ११ ॥ आधी राति दैत तह आयो । गरधभान अहि खान चबायो । भच्छ भोज बहुतै तब खाए । भरि भरि प्याले मदहि चढ़ाए ॥ १२ ॥ मद के पिए बिसुध ह्वै रहा । आनि अफीम गरौ तिह गहा । सोइ रहा सुधि कछू न पाई । नारि पछान घात कह धाई ॥ १३ ॥ अठ हजार मन सिक्का लयो । ता पर अवटि ढारि करि दयो । भसमीभूत दैत वहु कियो । बिरहवती पुर कौ सुख दियो ॥ १४ ॥ ॥ दोहरा ॥ इन छल अबला असुर हनि न्रिपहि बर्यो सुख पाइ । सकल प्रजा सुख सौ बसी ह्रिदै हरख उपजाइ ॥ १५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संवादे तीन सौ तीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३३० ॥ ६२१२ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ इकतीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बलंदेज को एक न्रिपाला । बलंदेजदेई घर बाला । ता पुर कुप्यो फिरंगराइ मन । सैन चढ़ा लै करि

गदहों को विभिन्न प्रकार की अफ़ीमें पिलाईं और उन्हें असुर की सीमा में ला बाँधा ॥ ११ ॥ आधी रात को दैत्य वहाँ आया और उसने गदहों को चबा डाला । उसने अनेकों को खा डाला और प्याले भर-भरकर शराब पी डाली ॥ १२ ॥ वह मद्य पीकर बेसुध हो गया और अफ़ीम चढ़ जाने के कारण गिर पड़ा । वह बेसुध हो सो रहा और इसी अवसर को पहचानकर वह स्त्री वहाँ आ गयी ॥ १३ ॥ उसने आठ हज़ार मन सीसा लिया और उसे औटा कर उस पर डाल दिया । उसने उसे भस्मीभूत कर दिया और बिरहवती नगरी को सुख दिया ॥ १४ ॥ ॥ दोहा ॥ इस छल से उस स्त्री ने राक्षस को मारकर राजा का वरण किया और सारी प्रजा सुखपूर्वक रहने लगी ॥ १५ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ तीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ३३० ६२१२ अफज़ू

संग अनगन ॥ १ ॥ नामु फिरंगीराइ त्रिपति तिह। अंगरेजन पर चढ़त करी जिह। अनगन लए चमूँ चतुरंगा। जनु करि उमडि चल्यो जल गंगा ॥२॥ वलंदेज देई के नाथहि। प्रान तजे डर ही के साथहि। रानी भेद न काहू दयो। त्रास त्रसत राजा मरि गयो ॥३॥ म्रितक नाथ तिह समैं निहारा। और संग बहु सैन बिचारा। इहै घात जिय माँहि बिचारी। कास्ट पुत्रिका लच्छ सवारी ॥ ४ ॥ लच्छ ही हाथ बंदूक सवारी। दारू गोलिन भरी सुधारी। डिवढा चुनत भई तुपखाना। तीर बंदूक कमान अरु बाना ॥ ५ ॥ जब अरि सैन निकट तिह आई। सभहिन गई पलीता लाई। बीस हजार तुपक इक बारा। छुटगी कछु न (मू०ग्रं०१२८६) रही सँभारा ॥ ६ ॥ जिमि मखीर की उडत सु माखी। तिमि हीं चली बंदूकैं बाखी। जाके लगे अंग मौं बाना। ततछिन तिन भट तजे पराना ॥ ७ ॥ तरफराहि गौरिन के मारे। पछु सुत ओरन जनकु बिदारे। रथी सु नागपती अरु बाजा। जमपुर गए सहित निजु राजा ॥ ८ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह

उस राजा पर फ़िरंगियों का सम्राट् कुपित हो उठा और अगणित सेना लेकर चढ़ उठा ॥ १ ॥ उस राजा का नाम फ़िरंगीराय था जिसने अंग्रेजों पर चढ़ाई की थी। उसने अपार चतुरंगिनी सेना साथ ली। ऐसा लग रहा था मानों गंगा उमड़ रही हो ॥ २ ॥ वलंदेज देवी के पति ने तो भयभीत होकर ही प्राण त्याग दिये। रानी ने यह रहस्य किसी को नहीं बताया कि राजा डरकर मर गया है ॥ ३ ॥ उसने मृत पति को देखा और अपनी सेना के साथ विचार-विमर्श किया। उसने मन में कुछ विचार कर लकड़ी की एक लाख मूर्तियाँ बनवा लीं ॥ ४ ॥ गोलियों से भरी एक लाख बंदूकें उनके हाथ में पकड़ा दीं। डेढ़ गुना तोपख़ाना, तीर, कमान और बाण ले लिये ॥ ५ ॥ जब शत्रु-सेना पास आ गई तो सबका पलीता जला दिया। बीस हज़ार बंदूकें एक ही बार में चल गईं और कुछ भी सँभाला नहीं जा सका ॥ ६ ॥ जैसे छत्ते से मक्खियाँ उड़ चली हों इसी पर बाक़ी बंदूकें भी चल पड़ीं। बाण जिस-जिस के अंग में लगे उस वीर ने तो वहीं तत्काल प्राण त्याग दिये ॥ ७ ॥ तड़फड़ाते गोरों को ऐसे मारा मानों गरुड़ ने साँपों को मार दिया हो। रथी, हाथियों के स्वामी और घोड़ अपने राजा समेत यमपुर चले गये ८ दोहा इस

चरित्र तन चंचला कूटो कटक हजार। अरि मारे राजा सहित गए ग्रहिन कौ हारि ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संवादे तीन सौ इकत्तीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३३१ ॥ ६२२१ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ बतीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ शहिर भेहरै एक न्रिपति बर। कामसैन तिह नाम कहत नर। कामावती तवन की नारी। रूपवान दुतिवान उज्यारी ॥१॥ ताके बहुत रहैं ग्रहि बाजिन। जयो करत ताजी अरु ताजिन। तह भव एक बछेरा लयो। भूत भविख्य न वैसे भयो ॥ २ ॥ तहं इक होत शाह बडभागी। रूप कुअर नामा अनुरागी। प्रीतिकला तिह सुता भनिज्जै। को दूसर पटतर तिह दिज्जै ॥ ३ ॥ सो त्रिय एक चौधरी सुत पर। अटकि गई तरुनी अति रुचि करि। मिजमानी छल ताहि बुलायो। भाँति भाँति भोजनहि भुजायो ॥ ४ ॥ कीना कैफ रसमसो जबही। तरुनी इह बिधि उचरी तब ही।

चरित्र के द्वारा उस स्त्री ने हजारों की सेना को मार डाला और शत्रु राजा समेत मारे गये और हार कर घरों को वापस गए ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ इकत्तीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३३१ ॥ ६२२१ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ बत्तीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ भेरा (झेलम नदी के किनारे एक नगर) का राजा कामसेन था और उसकी स्त्री कामवती अत्यंत रूपवान, छविमान और मानों प्रकाश के समान थी ॥ १ ॥ उसके घर में अनेकों घोड़े थे और अनेकों घोड़े-घोड़ियाँ वहाँ जन्मते रहते थे। वहाँ एक अश्व-शावक ने जन्म लिया, जिसके समान न तो कोई भूत में था और न भविष्य में होगा ॥ २ ॥ वहाँ एक भाग्यशाली धनी था जिस प्रेमी का नाम रूपकुँवर था। उसकी पुत्री प्रीतिकला थी जिसकी उपमा किसी के साथ देना संभव नहीं है ॥३॥ वह स्त्री एक चौधरी के पुत्र पर आसक्त हो गई। उसे छल से उसने खाना खाने के लिए बुलाया और भाँति-भाँति के भोजन उसे खिलाये ॥ ४ ॥ जब परम्परा के अनुसार शराब पिलाई गई तो उस तरुणी ने कहा - अब तुम मेरे

अब तैं गवन आइ मेरो करि। काम तपत अब ही हमरो हरि ॥ ५ ॥ तब इह बिधि तिन पुरख उचारी। यौं न भजौ तुहि सुनहु पयारी। जो राजा के उपज्यो बाजी। सो दै प्रथम आनि मुहि ताजी ॥ ६ ॥ तब तिन त्रिय बिचार अस कियो। किह बिधि जाइ तुरंगम लियो। ऐसो करियै कवनु पचारा। जाते परे हाथ सो प्यारा ॥ ७ ॥ अरध राति बीतत भी जबै। स्वान भेख धारा त्रिय तबै। कर महिं गहि क्रिपान इक लई। बाजी हुतो जहाँ तह गई ॥ ८ ॥ सात कोट तह कूदि पहूँची। दान क्रिपान मान की सूची। जिह जागत पहरुअहि निहारै। ताको मूँड काटि करि डारै ॥ ९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक पहरुअहि मारि दुतिय कह मारियो। त्रितिय मारि चतरथ को सीस उतारियो। पंचम खसटम मारि सपतवौ हति कियो। हो (मू०ग्रं०१२८७) अशटम पुरख सँघारि छोरि बाजी लियो ॥ १० ॥ परी नगर मै रौरि जबै त्रिय है हर्यो। पठै पखरिया कछि कछि कहै कहाँ पर्यो। बाट घाट सभ रोकि गहो इह चोरि कौ। हो धरि लीजै इह होन न दीजै भोर कौ ॥ ११ ॥ जित जित धावहि लोग हरियो है

साथ रमण करो और मेरी कामाग्नि को शान्त करो ॥ ५ ॥ तब उस पुरुष ने कहा कि हे प्रिय ! मैं ऐसे तुम्हारे साथ केलिक्रीडा नहीं करूँगा। जो (सुन्दर) घोड़ा राजा के यहाँ पैदा हुआ है तुम पहले वह मुझे लाकर दो ॥ ६ ॥ तब स्त्री ने सोचा कि घोड़ा कैसे प्राप्त किया जाय ? कौन सा उपाय किया जाय जिससे प्रिय मेरे हाथ लग जाए ॥ ७ ॥ जब आधी रात बीत गई तो स्त्री ने कुत्ते का वेश धारण किया। हाथ में एक कृपाण पकड़ ली और जहाँ घोड़ा था वहाँ जा पहुँची ॥ ८ ॥ वह दान, मान और कृपाण चलाने में सिरमौर सात क़िले कूदकर वहाँ जा पहुँची। जिस पहरेदार को वह जगते हुए देखती उसका सिर काट देती थी ॥ ९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक पहरेदार को मार दूसरे को मारते हुए तीसरे को समाप्त किया और चौथे का सिर उतार दिया। पाँचवे, छठवें को भी मार सातवें को भी मार डाला और आठवें का संहार करके घोड़े को ले लिया ॥ १० ॥ जब स्त्री ने घोड़ा चुरा लिया तो सारे नगर में कोलाहल मच गया। राजा ने घुड़सवार ढूँढने के लिए भेजे ताकि वे सब घरों-रास्तों को देखकर चोर को सुबह होने से पहले पकड़ सकें ॥११॥ जिस ओर भी लोग दौड रहे थे, कह रहे थे कि किसने किसका हरण किया

कहै किस। कढै क्रिपानैं दिखियत धावत दसौ दिसि। अस कारज जिह किय न जान तिह दीजियै। हो ज्यों त्यों जीति तुरंग त्रिपति को लीजियै ॥ १२ ॥ बहुत पहूँचे निकट तरुनि के जाइकै। फिरि मारे तिन वहै तुरंग नचाइकै। करि करि जाहि चलाकी बाही बेग तन। हो तिनकी हौस न राखी राखे एक ब्रन ॥ १३ ॥ ॥ चौपई ॥ कूदकोआ जाके परवारा। इक तें ताँहि दोइ करि डारा। चुनि चुनि हने पखरिया मन तें। द्वै द्वै गे ह्वै इक इक तन तें ॥१४॥ बहु बिधि बीर पखरिया मारे। इक इक तें करि द्वै द्वै डारे। घोरा सहित घाइ जो घए। द्वै ते चारि टूक ते भए ॥ १५ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह बिधि बीर बिदार बहु नदी तुरंग तराइ। जहाँ मित्र को ग्रिहि हुतो तही निकास्यो आइ ॥ १६ ॥ ॥ चौपई ॥ जब तिह आनि तुरंगम दीयो। कामभोग तासै द्रिढ़ कीयो। जौ पाछे तिन फौज निहारी। इह बिधि सौ तिह त्रियहि उचारी ॥ १७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ बुरो करम हम कर्‍यो तुरंग न्रिप को हर्‍यो। आपु आपुने पगन कुहारा कौ मर्‍यो। अब ए तुरंग समेत पकरि लै जाइ हैं। हो फाँसी दैहैं दुहूँ कि सूरी

है। सभी दशों दिशाओं में कृपाणें निकाले दौड़े फिर रहे थे और कह रहे थे कि उसने ऐसा काम किया है उसे जाने मत दो। जैसे भी हो राजा का घोड़ा जीतकर लाया जाना चाहिए ॥ १२ ॥ बहुत से लोग उस तरुणी के पास जा पहुँचे जिन्हें उसने घोड़ा नचाकर मार डाला। वीर चतुरतापूर्वक उमड़कर उसके पास जाते थे परन्तु उसने भी उनकी कोई इच्छा न छोड़ी और एक ही घाव में सबको रख लिया ॥ १३ ॥ ॥ चौपाई ॥ जो उसके घेरे में कूदा उसे उसने एक में दो कर दिया। उसने चुन-चुनकर अश्वारोहियों को मारा और एक से दो-दो टुकड़ों में बाँट दिया ॥ १४ ॥ उन्होंने अनेक प्रकार के वीरों को मार दिया और एक-एक के दो-दो टुकड़े कर दिये। घोड़ों-समेत जो मारे गये वे दो से चार टुकड़ों में बँट गये ॥१५॥ ॥दोहा॥ इस प्रकार वीरों को मारकर घोड़े को नदी में तैराकर जहाँ मित्र का घर था घोड़े को वहाँ आ निकाला ॥१६॥ ॥ चौपाई ॥ जब उसे आकर घोड़ा दिया तो उसने भी दृढ़तापूर्वक उससे कामभोग किया। उसके पीछे लगी फ़ौज जब उसने देखी तो उसने स्त्री से कहा ॥ १७ ॥ ॥ अडिल्ल ॥ हमने बुरा किया जो राजा का घोड़ा चुराया और स्वय अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मारी है अब ये घोड़ समेत पकड़ ले

द्याइ हैं ॥१८॥ ॥चौपई॥ त्रिय भाख्यो पिय शोक न करो। बाज सहित दोऊ बचे बिचरो। ऐसो चरित अबै मैं करिहों। दुशटन डारि सिर छार उबरिहों ॥ १९ ॥ तहाँ पुरख को भेस बनाइ। दल कह मिली अगमने जाइ। कही हमारो सतर उबारो। और गाँव ते सकल निहारो ॥ २० ॥ मिलि दल धाम अगमने जाइ। बाज पाइ झाँझर पहिराइ। सकल गाँव तिन कह दिखराई। फिरि तिह ठौरि तिनै लै आई ॥२१॥ परदा लेत तानि आगे तिन। देखहु जाइ जनाना कहि जिन। आगे करि सभहिन के बाजा। इह छल बाम निकार्‍यो राजा ॥ २२ ॥ सो आँगन लै तिनै दिखावै। आगे बहुरि (मू०ग्रं०१२८८) कनात तनावै। आगे करि करि बाज निकारै। नेवर के बाजत झनकारै ॥ २३ ॥ बहू बधू तिनकी वहु जानै। बाजी कह मूरख न पछानै। नेवर कै बाजत झनकारा। भेद अभेद न जात बिचारा ॥ २४ ॥ दुहिता बहू तिनै करि जानै। सुनि सुनि धुनि नेवर की कानै। भेद अभेद कछू न बिचारी। इह छल छलै पुरख सभ

जायँगे और दोनों को फाँसी पर लटका देंगे ॥ १८ ॥ ॥ चौपाई ॥ स्त्री ने कहा कि हे प्रिय ! शोक मत करो और समझो कि हम घोड़े-समेत बचे हुए ही घूम रहे हैं। मैं अभी ऐसा प्रपंच करूँगी कि दुष्टों के सिर पर मिट्टी डालकर हम दोनों बच जायँगे ॥ १९ ॥ वह पुरुष का वेष बनाकर सेना को आगे से ही जा मिली। कहने लगी कि हमें कृतार्थ कीजिए और हमारे गाँव को देखो ॥ २० ॥ दल से मिलकर फिर आगे पहुँचकर घोड़े को झाँझर पहना दी। उन्हें सारा गाँव दिखाकर फिर उसी स्थान पर ले आई ॥ २१ ॥ वह आगे पर्दा तान लेती थी ताकि कोई स्त्रियों को न देख ले। घोड़े को सबके आगे कर इस प्रकार उस स्त्री ने राजा को निकाल दिया ॥ २२ ॥ एक आँगन उन्हें दिखा देती थी और फिर आगे क़नात लगवा देती थी। आगे कर करके वह घोड़े को बढ़ाती जाती थी। उसकी झाँझर की झनकार सुनाई दे रही थी ॥ २३ ॥ वे सब उसे उसकी वधू अथवा बहू जान रहे थे और मूर्ख लोग घोड़े को नहीं पहचान रहे थे। झाँझर की झनकार मे भेद-अभेद का विचार नहीं हो पा रहा था ॥ २४ ॥ झाँझर की झनकार कानों से सुनकर वे उसे उसकी पुत्री अथवा बहू समझ रहे थे। किसी ने भेद-अभेद को नहीं पहचाना और इस प्रकार उसने छलपूर्वक सभी पुरुषों को

नारी ॥ २५ ॥ जवन रुचा ज्यों त्यों तिह भजा । जिय जु न भायो तिह कौ तजा । इन इसत्रीन के चरित्र अपारा । जिनै न बिधना सकत बिचारा ॥ २६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ बतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३३२ ॥ ६२४७ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ तेतीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनहो राजकुअर इक बाता । त्रिय चरित्र जो किय बिखयाता । पसचिम दिसा हुती इक नगरी । हंसमालनी नाम उजगरी ॥ १ ॥ हंससैन जिह राज बिराजै । हंसप्रभा जाकी त्रिय राजै । रूपवान गुनवानु जियारी । जाहिर लोक चौदहूँ प्यारी ॥ २ ॥ तह इक शाहु सुता दुतिमाना । बहुरि जियत जिह निरखि समाना । जोबन भयो अधिक तिह जबही । बहुतन साथ बिहारत तबही ॥ ३ ॥ इक दिन भेस पुरख को धारि । निजु पति साथ करी बहु रारि । लात मुशट के करत प्रहार । सो तिह नारि न सकै

छल लिया ॥२५॥ स्त्री को जो कोई भा गया वह जैसे-तैसे उसका उपभोग कर लेती है और जो अच्छा नहीं लगता उसका त्याग कर देती है । इन स्त्रियों के प्रपंच अपार हैं, जिन्हें विधाता भी नहीं विचार सकता ॥२६॥१

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ बत्तीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३३२ ॥ ६२४७ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ तेंतीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजकुमार ! मेरी एक बात सुनो । मैं बताता हूँ कि स्त्री ने क्या विख्यात प्रपंच किये हैं । पश्चिम दिशा में हंसमालनी नामक एक नगरी थी ॥ १ ॥ वहाँ का राजा हंससेन था जिसकी स्त्री हंसप्रभा थी । वह रूपवान, गुणवान एवं चौदह भुवनों में प्रसिद्ध थी ॥२॥ वहाँ एक धनिक की पुत्री थी; आकाश भी उसे देखकर ही जीवित था । जब वह यौवन को प्राप्त हुई तो अनेकों के साथ रमण करने लगी ॥ ३ ॥ एक दिन उसने पुरुष-वेश धारण कर अपने पति के साथ झगड़ा किया । वह लात-घूँसों से उस पर प्रहार कर रही थी और वह उस स्त्री को पहचान नहीं रहा था ॥४॥ उससे लड़कर वह काज़ी के पास गई और पैदल सिपाहियों

बिचारि ॥ ४ ॥ तासौ लरि काजी पहि गई । लैइ लाम प्यादन संग अई । ऐंच पतिहि लै तहा सिधाई । कोतवार काजी जिह ठाई ॥ ५ ॥ प्यादन साथ द्वार पति थिर करि । दिन कह गई मित्र अपने घर । ता संग करि क्रीड़ा की गाथा । लै आई शाहिद कहि साथा ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जार प्यादन पति जुति द्वारे ठाढि कर । दुतिय मित्र के गई दिवस कह नारि घर । काम भोग तिह साथि किया रुचिमानि करि । हो शाहिद कै ल्याई अपने तिह साथ धरि ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ कहाँ लगे मैं कहों उचरि करि । इह बिधि गई बहूतन के घर । संग शाहिद सभ ही करि लीने । सकल रुजू काजी के कीने ॥ ८ ॥ तिह अपनी अपनी ते मानै । एक एक को भेद न जानै । जु त्रिय कहत सो पुरख बखानत । (मू०ग्रं०१२८६) आपु आपु की बात न जानत ॥ ९ ॥ सभ साहिद जब नजरि गुजरे । एक बचन वह त्रिया उचरे । तब काजी साची इह कीनो । दरब बटाइ अरध तिह दीनो ॥ १० ॥ किनूँ न ताको भेद बिचारा । कस चरित्र इह नारि दिखारा । औरन की कोऊ कहा बखानै । आपु आप महि तेऊ न जानै ॥ ११ ॥ ॥ दोहरा ॥ कहाँ लखा

को साथ लेकर आ गई । वह पति को खींचकर वहाँ आ गई जहाँ क़ाजी और कोतवाल थे ॥५॥ सिपाहियों के साथ पति को दरवाजे पर खड़ा करके दिन मे ही वह अपने मित्र के घर गई । वहाँ उसके साथ क्रीडा की और उसे गवाह बनाकर ले आई ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ यार को पति-सहित सिपाहियों के साथ छोड़कर वह स्त्री दूसरे मित्र के घर गई । उसके साथ भी रुचिपूर्वक कामक्रीडा की और उसे भी गवाह बनाकर साथ ले आई ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ मैं कहाँ तक बताऊँ, इस प्रकार वह अनेकों के घर गई । सभी गवाहों को अपना बना लिया और सबको क़ाज़ी के सामने ला खड़ा किया ॥ ८ ॥ सभी उसे अपनी ही समझते थे और एक-दूसरे का भेद नहीं जानते थे । जो स्त्री कहती थी वे सभी पुरुष वही कहते थे और अपनी बात नहीं जानते थे ॥ ९ ॥ जब सभी गवाह देख लिये गये तो इस स्त्री ने अपनी बात कही । क़ाज़ी ने उसे सच्ची मान लिया और आधा धन उसे बाँटकर दे दिया ॥ १० ॥ किसी ने उसका रहस्य न जाना कि इस स्त्री ने क्या प्रपंच दिखाया है अन्यों की तो कोई क्या कहे ये

त्रिय करम करि कैसे करम कमाइ । भेद अभेद सभ आपु महि सका न कोऊ पाइ ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ तेतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥३३३ ॥ ६२५६ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ चौतीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ राजसैन इक राजा दच्छिन । त्रिय तिह राजमती सुभ लच्छन । अमित दरब तन भरे भंडारा । जिन को आवत वार न पारा ॥ १ ॥ पिंगल दे तह शाह दुलारी । जाकी सम नहि दुतिय कुमारी । निरखि न्रिपति त्रिय भई दिवानी । तब ते रुचत खान नहि पानी ॥ २ ॥ ताकी लगनि न्रिपति तन लागी । छूटै कहा अनोखी जागी । सखी चीनि इक हितू सयानी । पठै दई न्रिप को रजधानी ॥ ३ ॥ जिमि तिमि बदा मिलन तिह संगा । तिह तन ब्याप्यो अधिक अनंगा । तिह भेटन कौ चित ललचावै । घात न निकसन की त्रिय पावै ॥ ४ ॥ कह्यो शाहु इक भूप

आपस में भी कुछ नहीं जानते थे ॥ ११ ॥ ॥ दोहा ॥ स्त्री ने क्या देखा और क्या कर्म किया, इस भेद-अभेद को कोई न जान सका ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ तेंतीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३३३ ॥ ६२५६ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ चौंतीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ दक्षिण का राजा राजसेन था जिसकी सुलक्षणा स्त्री राजमती थी । उसके घर में अपरिमित द्रव्य भरा हुआ था ॥ १ ॥ वहाँ एक धनी को पुत्री पिंगलदेवी थी जिसके समान अन्य कोई कुमारी नहीं थी । वह राजा को देखकर दीवानी हो गयी और खाने-पीने में उसकी रुचि समाप्त हो गई ॥ २ ॥ उसको लगन राजा के साथ लग गई थी जो अनोखी थी और छूटती नहीं थी । उसने एक सयानी सखी को देखकर उसे राजा की राजधानी में भेज दिया ॥ ३ ॥ जैसे-तैसे उसने उससे मिलने की ठानी, क्योंकि उसके तन में अत्यधिक काम व्याप्त था । उससे मिलन के लिए उसका चित्त ललचा रहा था पर निकलने की घात नहीं लग रही थी ॥ ४ ॥ उसने धनिक से कहा कि राजा बुला रहा है और सभी अन्नों

बुलावत। सभ अंगन को निरख लिखावत। बचन सुनत तह शाहु सिधारा। भलो बुरो नहि मूड़ बिचारा॥ ५॥ निकसत भई घात त्रिय पाइ। भोग किआ राजा सौं जाइ। रह्यो मूढ़ पर द्वार बहिट्ठो। भला बुरा कछु लह्यो न डिट्ठो॥ ६॥ त्रिय करि केल भूप सौ आई। लयो शाहु घर बहुरि बुलाई। कह्यो प्रात हम तुम दोऊ जैहैं। राजा कहत वहै करि ऐहैं॥ ७॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल मूरख तिह छला सक्यो न भेद बिचार। कहा चरित इन त्रिय किया त्रिप संग रमी सुधारि॥ ८॥ १॥ (मू०ग्रं०१२६०)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ चौंतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ ३३४॥ ६२६७॥ अफजूं॥

अथ तीन सौ पैंतीस चरित्र कथनं॥

॥ दोहरा ॥ शहिर सरोही के बिखै बिक्रतकरन इक राइ। बीर बडो बाँको रथी राखत सभ को भाइ॥ १॥ ॥ चौपई॥ अबला दे रानी ताके घर। अधिक पंडिता सकल

के भाव लिखा रहा है। यह बात सुनकर बिना भले-बुरे का विचार किये धनिक चल पड़ा॥ ५॥ अवसर पाकर स्त्री निकल पड़ी और उसने राजा के साथ जाकर कामक्रीडा की। वह मूर्ख दूसरे के दरवाज़े पर बैठा रहा और उसने भला-बुरा कुछ भी नहीं देखा, सुना॥ ६॥ स्त्री राजा से केलिक्रीडा कर वापस आयी और उसने धनिक को वापस घर बुला लिया। वह कहने लगी कि प्रातः हम-तुम दोनों जायेंगे और जो राजा कहेगा वही करेंगे॥ ७॥ ॥ दोहा॥ इस प्रपंच से उस मूर्ख को छला, जो रहस्य को न जान सका। इसने भी कैसा प्रपंच किया कि उसके साथ पूर्णरूपेण रमण किया॥ ८॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ चौंतीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ ३३४॥ ६२६७॥ अफजूं॥

तीन सौ पैंतीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा॥ सिरोही नगर में विक्रतकर्ण एक राजा था जो महाबली, बांका रथी और सबका सम्मान करनेवाला था॥१॥ ॥चौपाई॥ उसकी रानी अबलादेवी थी जो समस्त कलाओं में अत्यधिक निपुण थी उसने

हुनर करि। बीरमदेव पुत्र तिह जायो। तेजवान बलवान सुहायो ॥ २ ॥ ताकी जात न प्रभा बखानी। रूप अनंग धर्यो है जानी। कह लगि प्रभा करै कवनै कबि। निरखि सूर ससि रहत इंद्र दबि ॥ ३ ॥ छैल छबीलो कुअर अपारा। आपु घड़ा जानुक करतारा। कनक अवटि साचे जन ढार्यो। रीझि रहत जिन ब्रहम सवार्यो ॥ ४ ॥ नैन फबत म्रिग से कजरारे। केसजाल जनु फाँस सवारे। जाके परे गरै सोई जानै। बिनु बूझै कोई कहा पछानै ॥ ५ ॥ जेतिक देत प्रभा सभ ही कबि। तेतिक तुही तवन भीतरि छबि। पुरख नारि चितवह जो ताँहि। कछु न सँभार रहत तब वाहि ॥ ६ ॥ चंचरीट दुति देखि बिकाने। भवर आजु लगि फिरति दिवाने। महादेव ते नैक निहारै। अब लगि बन मै बसत उघारे ॥ ७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ चतुरानन मुख चतुर लखि याही ते करैं। सिखि बाहन खटबदन सु याही ते धरैं। पंचानन याते शिब भए बचारि करि। हो सहसानन नहु सका प्रभा को सिंधु तरि ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ जे अबला तिह रूप निहारत। लाज साज धन धाम बिसारत। मन मै रहत मगन ह्वै नारी।

वीरमदेव नामक पुत्र को जन्म दिया जो तेजस्वी और बलवान था ॥ २ ॥ उसकी प्रभा का वर्णन नहीं किया जा सकता, वह मानों कामदेव का रूप धारण किए था ॥ ३ ॥ छैल-छबीले कुँवर को मानों स्वयं परमात्मा ने बनाया था। वह मानों सोने के साँचे में ढाला गया था। ब्रह्मा भी उसे देखकर मोहित था ॥ ४ ॥ उसके कजरारे नयन मृग के समान शोभायुक्त थे और केश मानों पाश के समान शोभायमान थे। वह केश-जाल जिसके गले पड़ता था वही उसके बारे में जानता था। बिना जाने कोई भला उनकी क्या पहचान कर सकता था ॥ ५ ॥ कवि जितनी भी उपमाएँ देते थे वे सब उसकी सुन्दरता के भीतर ही थीं। जो भी पुरुष, स्त्री उसे देखता था उसे अपनी तनिक भी होश नहीं रहती थी ॥ ६ ॥ खंजन उस पर बिके थे और भँवरे आज तक उसकी शोभा को देखकर दीवाने थे। महादेव उसे तनिक-सा देखकर आज तक वन में नंगे होकर घूम रहे हैं ॥ ७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ ब्रह्मा ने उसे देखकर ही चार मुख बना लिये। कार्तिकेय ने इसी के कारण छः मुख बनाए और शिव इसी को जानकर पाँच मुखवाले हो गए। सहस्रमुख-शेषनाग भी इसके प्रभा-समुद्र को नहीं तैर सका ॥ ८ ॥ ॥ चौपाई ॥ जो स्त्री उसका स्वरूप देखती थी वह लज्जा धन

जानु बिसिख तन म्रिगी प्रहारी ॥ ९ ॥ शाहजँन अल्लावदीन जह । आयो कुअर रहन चाकर तह । फूलमती हजरति की नारी । ताके ग्रहि इक भई कुमारी ॥ १० ॥ स्री दिमाग रोशन वह बारी । जनु रति पति ते भई कुमारी । जनुक चीरि चंद्रमा बनाई । ताही ता ते भै अतिताई ॥ ११ ॥ बीरम दे मुजरा कह आयो । शाहु सुता को ह्रिदै चुरायो । अलिक जतन अबला करि हारी । कैसिहु मिला न प्रीतम प्यारी ॥ १२ ॥ कामातुर भी अधिक बिगम जब । पिता पास तजि लाज कही तब । कै बाबुल ग्रहि गोरि खुदाओ । कै बीरम दे मुहि बरघाओ ॥ १३ ॥ भली भली तब शाह उचारी । मुसलमान बीरम कर प्यारी । बहुरि ताहि तुम करौ निकाहा । जिह (मू०ग्रं०१२६१) सौ तुमरी लगी निगाहा ॥ १४ ॥ बीरम तीर वजीर पठायो । शाह कह्यो तिह ताहि सुनायो । हमरे दीन प्रथम तुम आवहु । बहुरि दिलिस की सुता बियावहु ॥ १५ ॥ बीरमदेव कहा नहि माना । कर्‌यो आपने देस पयाना । प्राते खबरि दिलिस जब

धाम सब भुला देती थी । नारियाँ उसी प्रकार मन ही मन मगन हो जाती थीं मानों वाण से प्रहारित मृगी पड़ी हो ॥ ९ ॥ शाह अलाउद्दीन जहाँ था वहाँ वह कुँवर नौकरी करने के लिए आया । उस बादशाह की स्त्री फूलमती थी जिसके घर एक कुमारी पैदा हुई थी ॥ १० ॥ दिमागरौशन नामक वह बालिका मानों कामदेव की पुत्री थी । वह मानों चन्द्रमा को चीरकर बनाई हुई थी और इसी से उसमें अत्यधिक अहंकार भी था ॥ ११ ॥ वीरमदेव जब मुजरा देखने के लिए गया तो उसने शाह की पुत्री का हृदय चुरा लिया । वह स्त्री अत्यधिक यत्न करके हार गई पर किसी भी प्रकार प्रियतम न मिला ॥ १२ ॥ जब वह बेगम अत्यधिक कामातुर हो उठी तो उसने लज्जा का त्याग कर पिता से कहा कि हे पिता, या तो मेरी अपने घर क़ब्र खुदवा दो या मेरा विवाह वीरमदेव के साथ कर दो ॥ १३ ॥ तब शाह ने "अच्छा, अच्छा" कहते हुए कहा कि तुम वीरम को मुसलमान बना लो । तुम उससे निकाह कर लो जिससे तुम्हारी नजरें लगी हैं ॥ १४ ॥ उसने मंत्री को वीरमदेव के पास भेजा और जो शाह ने कहा था वह उसे कह सुनाया । पहले तुम हमारे धर्म में आओ और फिर दिल्लीश्वर की पुत्री के साथ शादी करो ॥ १५ ॥ वीरमदेव ने कहना नहीं माना और अपने देश की ओर प्रस्थान कर गया । प्रात जब बादशाह को पता लगा तो उसने अपरिमित

पाई। अमिति सैन अरि गहन पठाई ॥ १६ ॥ बीरमदेव खबरि जब पाई। पलट करी तिन साथ लराई। भाँति भाँति भारी भट घाए। तहाँ न टिके तवन के पाए ॥ १७ ॥ काँधलवत राजा थो जहाँ। बीरमदेव जात भयो तहाँ। काँधल दे आगे जह रानी। रूपवान गुनवान सयानी ॥ १८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ काँधल दे रानी तिह रूप निहारिकै। गिरी धरनि के भीतर हियै बिचारिकै। ऐसो इक पल कुअर जु भेटन पाईयै। हो जनम पचासिक लौ सखी बलि बलि जाईयै ॥ १९ ॥ ॥ चौपई ॥ जाइ सखी बीरम दे पासा। इह बिधि साथ करी अरदासा। कै तुम काँधल दे कौ भजो। कै इह देस हमारो तजो ॥ २० ॥ पाछे लगी फौज तिन मानी। दुतिय रहन की ठौर न जानी। ताको देस तरुन नहि तजो। काँधल दे रानी कह भजो ॥ २१ ॥ रानी रमी मित्र के भोगा। चित के दए त्यागि सभ सोगा। तब लगि लिखो शाह को आयो। बाँचि मंत्रियन भाखि सुनायो ॥ २२ ॥ लिखि सु लिखा महि यहै पठाई। और बात दूजी न जनाई। कै बीरम कह बाँधि पठावहु। कै मेरे संग जुद्ध मचावहु ॥ २३ ॥ रानी बाँधि न

सेना शत्रु की ओर भेजी ॥ १६ ॥ वीरमदेव को जब पता लगा तो उसने भी घूमकर लड़ाई की। बड़े-बड़े वीरों को मार डाला और वहाँ कोई भी नहीं टिक सका ॥ १७ ॥ वीरमदेव जहाँ गया वहाँ का राजा कांधलवंत था। उसकी रानी कांधलवती थी जो रूपवान और सयानी तथा गुणवान थी ॥ १८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ कांधलदेवी उसका रूप देखकर उसके बारे में सोचकर धरती पर गिर पड़ी। ऐसा कुँवर यदि एक पल के लिए मिल जाय तो पचास जन्म तक मैं उस पर न्योछावर जाऊँ ॥ १९ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसकी सखी ने वीरम के पास जाकर उससे प्रार्थना की कि या तो कांधलदेवी के साथ रमण करो अथवा हमारा देश छोड़ो ॥ २० ॥ उसने सोचा कि मेरे पीछे फ़ौज लगी हुई है और अन्य किसी स्थान पर रहने का ठिकाना नहीं है। इसलिए हे तरुणी ! मैं उसका देश नहीं छोड़ूँगा और कांधलदेवी रानी के साथ रमण करूँगा ॥ २१ ॥ रानी ने मित्र के साथ रमण किया और चित्त के सभी शोकों का त्याग कर दिया। तब तक बादशाह का लिखा परवाना आ गया जो सब मंत्रियों ने पढ़कर सुना दिया ॥ २२ ॥ उसमें यही लिखा था और अन्य कुछ नहीं कहा गया था। तुम या तो वीरम को बाँधकर मेरे पास भेजो अथवा मेरे साथ युद्ध करो ॥ २३ ॥ रानी ने वीरम को नहीं दिया और

बीरम दयो। पहिर कौंच दुंदभी बजयो। निरभै चली जुद्ध के काजा। है गै रथ साजत सर साजा॥ २४॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद॥ बज्यो राग मारू मँडे छत्नधारी। बहे तीर तरवार काती कटारी। कहूँ केत फाटे गिरे छत्न टूटे। कहूँ मत दंती फिरैं बाज छूटे॥ २५॥ कहूँ बाज जूझे परे हैं मतंगैं। कहूँ नाग मारे बिराजै उतंगैं। कहूँ बीर डारे परे बरम फाटे। कहूँ खेत खाँडे लसैं चरम काटे॥ २६॥ गिरे बीर मारे कहा लौ गनाऊँ। कहौ जो सभै एक ग्रंथै बनाऊँ। जथा शकति कै अलप ताँते उचारो। सुनो कान दै कै सभै ही पिआरो॥ २७॥ इतै खान ढूके उतै राज नीके। हठी रोस बाढे सु गाढे अनीके। (पू०ग्रं०१२६२) लरे कोप कैकै सु एकै न भाज्यो। घरी चारि लौ सार सौ सार बाज्यो॥ २८॥ तहा संख भेरी घने नाद बाजे। म्रिदंगैं मुचंगैं उपंगैं बिराजे। कहूँ नाइ नाफीरियैं औ नगारे। कहूँ झाँझ बीना बजैं घंट भारे॥ २९॥ कहूँ टूक टूक ह्वै गिरैं हैं सिपाही। मरे स्वाम के काजहूँ को निबाही। तहाँ कौच धारे चढ़े छत्नधारी।

कवच पहनकर दुंदुभि बजा दी। वह हाथी, घोड़े, अस्त्र-शस्त्र लेकर निर्भय हो युद्ध के लिए चल पड़ी॥ २४॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद॥ मारू रणवाद्य बजने लगे, छत्नधारी एकत्न हो गए और तीर, तलवार, कटारें चलने लगीं। कहीं छत्न टूटने लगे और झंडे फटने लगे और कहीं मस्त हाथी और घोड़े दौड़ने लगे॥२५॥ कहीं घोड़े, हाथी जूझकर पड़े हुए थे और कहीं नागबाणों के मारे भीमकाय (वीर) पड़े थे। कहीं कवच फटे हुए वीर पड़े थे और कहीं युद्धक्षेत्र में चर्म काटनेवाले खड्ग शोभायमान हो रहे थे॥ २६॥ गिरे हुए वीरों की गिनती कहाँ तक करूँ? यदि उनका वर्णन करने लगूँ तो समझ लो कि एक ग्रंथ ही बन सकता है। इसलिए उनका वर्णन यथाशक्ति अत्यल्प ही करता हूँ। हे प्रियजनो! सुनो॥ २७॥ इधर बली खान और उधर सुन्दर राजागण थे। घनघोर सेना के वीर हठपूर्वक रोष बढ़ा रहे थे। कुपित होकर लड़े और कोई भी न भागा और चार घड़ी तक लोहे से लोहा बजता रहा॥ २८॥ शंख, भेरी, घनघोर वाद्य, मृदंग, मुचंग, उपंगादि बजने लगे। कहीं नफीरी, नगाड़े, झाँझ, वीणा, घनघोर घड़ियाल बजने लगे॥ २९॥ कहीं घोड़े और सिपाही खंड-खंड हो गिरे थे और कहीं स्वामी के कार्य को निभाते हुए वीर मर रहे थे। वे कवचधारी एवं छत्नधारी वीर ऐसे मिल रहे थे मानो मदारी आपस मे मिल रहे हो ३० कही भूमि पर लेटे

मिलै मेल मानो मदारै मदारी ॥ ३० ॥ किते भूमि लोटैं सु हाथैं उचाए । डरे सेख जैसे सभाई समाए । जुझे ज्वान जोधा जगे जोर जंगं । मनो पान कै भंग सोए मलंगं ॥ ३१ ॥ बहैं आन ऐसे बचै बीर कौनं । लरियो आनि जो पैं गयो जूझि तौनं । तहाँ जो अनं पाँच भयो बीर खेतं । बिदारे परे बीर ब्रिदे बिचेतं ॥ ३२ ॥ कहूँ बीर बैताल बीना बजावैं । कहूँ जोगनीयैं खरी गीत गावैं । कहूँ लै बरंगनि बरैं तिसी को । लहैं सामुहे जुद्ध जुझो जिसी को ॥ ३३ ॥ ॥ चौपई ॥ जब ही सैन जूझि सभ गई । तब त्रिय सुतहि पठावत भई । सोऊ जूझि जब स्वरग सिधायो । दुतिय पुत्र तह ओर पठायो ॥ ३४ ॥ सोऊ गिर्यो जूझि रन जब ही । तीजे सुतहि पठायो तब ही । सोऊ जूझि जब गयो दिवालै । चौथे पूत पठायो बालै ॥ ३५ ॥ चारों गिरे जूझि सुत जब ही । अबला चली जुद्ध कौ तबही । सूर बचे ते सकल बुलाइसि । लरन चली दुंदभी बजाइसि ॥ ३६ ॥ ऐसा करा बाल तह जुद्धा । रही न भट काहू महि सुद्धा । मारे परे बीर बिकरारा । गोमुख झांझर बजत नगारा ॥ ३७ ॥ जा पर

वीर हाथ उठा रहे थे और ऐसे लग रहे थे मानों शेख आदि धर्मसंकट में पड़े डर रहे हों। योद्धागण जंग में ऐसे जूझ रहे थे मानों मलंग भाँग पीकर सोये पड़े हों ॥ ३१ ॥ ऐसी वाण-वर्षा में कौन वीर बच सकता था। जो भी आकर लड़ा वह जूझ गया। वहाँ जो भी वीर मदमस्त होकर आये वे सब मरकर अथवा बेसुध होकर झुंडों के रूप में गिर पड़े ॥ ३२ ॥ कहीं वेताल वीर वीणा बजा रहे थे और कहीं योगिनियाँ खड़ी होकर गीत गा रही थीं। कहीं अप्सराएँ उन वीरों का वरण कर रही थीं जो सम्मुख होकर युद्ध में जूझ रहे थे ॥ ३३ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब सारी सेना जूझ गई तब स्त्री ने पुत्र को भेजा। जब वह भी स्वर्ग सिधार गया तो उसने दूसरे पुत्र को भेजा ॥ ३४ ॥ जब वह भी रण में काम आ गया तो उसने तत्काल तीसरे पुत्र को भेजा। जब वह भी जूझकर देवपुरी चला गया तो उस स्त्री ने चौथे पुत्र को भेजा ॥ ३५ ॥ जब चारों पुत्र जूझकर गिर पड़े तो वह स्त्री स्वयं युद्ध के लिए चल पड़ी। उसने बचे हुए समस्त वीरों को बुलाया और दुंदुभी बजाकर लड़ने के लिए चल पड़ी ॥ ३६ ॥ उस स्त्री ने ऐसा युद्ध किया कि किसी वीर को होश न रहे। विकराल वीर मारे हुए पड़े थे और साथ ही साथ गोमुख झाँझर नगाड़े आदि बज रहे थे ॥ ३७ ॥ सिरोही

सिमटि सरोही मारति। ताको काटि भूम सिर डारति। जाके हनै तरुनि तन बाना। करै सुभट त्रितलोक पयाना ॥ ३८ ॥ चुनि चुनि ज्वान पखरिया मारे। इक इक ते द्वै द्वै करि डारे। उठी धूरि लागी असमाना। असि चमकै बिजुरी परमाना ॥ ३९ ॥ काटे सुभट सरोहिन परे। जनु मारुत बर बिरछ उपरे। गज जूझे मारे बाजी रन। जनु क्रीड़ा शिव को यह है बन ॥ ४० ॥ रन ऐसो अबला तिन कीया। पाछे भयो न आगे हूआ। खंड खंड ह्वै गिरी धरनि पर। रन जूझी भवसिंधु गई तरि ॥ ४१ ॥ खंड खंड बाजी पर भई। तऊ न छोरि अयोधन गई। भूत पिसाच गए भखि तामा। बागि मोरि तऊ भजी (पृ०पं०१२९३) न बामा ॥ ४२ ॥ प्रथम चारऊ पुत्र जुझाए। बहुरि आपु बैरी बहु घाए। प्रथम बाल कौ जबै सँघार्यो। तिह पाछे बीरम दे मार्यो ॥ ४३ ॥ ताको मारि काटि सिर लियो। लै हाजिर हजरति के कियो। तब पित पठै सुता पहि दीना। अधिक दुखित ह्वै दुहिता चीना ॥ ४४ ॥ ॥ दोहरा ॥ जब

नामक शस्त्र जिसे पीछे होकर मारती उसका सिर भूमि पर काट गिराती थी। उस तरुणी ने जिसको भी बाण मारा वह वीर मृत्युलोक को प्रस्थान कर गया ॥ ३८ ॥ जवानों को चुन-चुनकर मारा और एक-एक से दो-दो कर दिए। धूल उड़कर आसमान को छूने लगी और ऐसा लगने लगा मानों बिजली चमक रही हो ॥ ३९ ॥ तलवारों से कटे वीर ऐसे पडे थे मानों वायु के कारण वृक्ष उखड़कर गिर पड़े हों। रणक्षेत्र में हाथी और घोडे जूझ गए और ऐसा लग रहा था मानों यह शिव का क्रीड़ास्थल हो ॥४०॥ उस स्त्री ने ऐसा युद्ध किया जो न तो पहले कभी हुआ था और न ही आगे कभी होगा। वह स्वयं भी खंड-खंड होकर धरती पर गिर पड़ी और रण में जूझकर भवसागर पार कर गयी ॥ ४१ ॥ वह घोड़े पर ही टुकड़े-टुकडे हो गयी, पर फिर भी युद्ध छोड़कर नहीं गयी। उसका मांस भूत-पिशाच आदि खा गए पर वह स्त्री फिर भी लगाम मोड़कर वापस नहीं पलटी ॥४२॥ पहले उसने चारों पुत्र मरवा दिये और फिर स्वयं अनेक शत्रुओं को मारा। शत्रु ने पहले स्त्री को और फिर वीरमदेव को मारा ॥ ४३ ॥ उसे मारकर उसका सिर बादशाह के सामने प्रस्तुत किया गया तब पिता ने उसे पुत्री के पास भेज दिया जिसे पुत्री ने बहुत दुखपूर्वक पहचाना ४४

चंचलता जिन करु सुद्रंगा । कहा बिसेस धुजहि तूँ बरि हैं । ताको जीति दास लै करि हैं ॥ ३ ॥ सुनत बात ता कह लगि गई । राखी गूढ़ न भाखत भई । जब अबला निसि कौ घर आई । चली तहाँ नर भेस बनाई ॥ ४ ॥ चलत चलत बहु चिर तह गई । जहाँ बिलासवती नगरई । तवन नगर चलि जूप मचायो । ऊच नीच सभ ही ठहरायो ॥ ५ ॥ बडे बडे जूपी अब हारे । मिलि राजा के तीर पुकारे । इक ह्याँ ऐस जुआरी आयो । किसू पास नहि जात हरायो ॥ ६ ॥ इह बिधि सुने बचन जब राजा । आपन सज्यो जूप को साजा । कह्यो ताँहि ह्याँ लेहु बुलाइ । जिन जूपी सभ लए हराइ ॥ ७ ॥ भ्रित सुनि बचन पहूँचे तहाँ । जूपिन कुअरि हरावत जहाँ । कह्यो ताहि तुहि राइ बुलायो । चाहत तुम सौ जूप मचायो ॥ ८ ॥ न्रिप के तीर तरुनि तब गई । बहु बिधि जूप मचावत भई । अधिक दरब तिन भूप हरायो । (मू०ग्रं०१२६४) ब्रहमा तें नहि जात गनायो ॥ ६ ॥ जब न्रिप दरब बहुत बिधि हारा । सुत ऊपर पासा तब ढारा । वहै हरायो देस लगायो । जीता कुअरि भज्यो मन

विशेषध्वज ने कहलवाया है कि वह तुम्हारा वरण करेगा और तुम्हें जीतकर दासी बना लेगा ॥ ३ ॥ उसकी बात उसे दिल में लग गई परन्तु उसने उसे मन में ही रखा और किसी को नहीं बताया । जब वह रात को घर आयी तो वहाँ से पुरुष का वेश बनाकर चल पड़ी ॥ ४ ॥ चलती-चलती वह वहाँ जा पहुँची जहाँ विलासवती नगरी थी । उसने वहाँ पहुँचकर जुए की धूम मचा दी और छोटे-बड़े सबको चकित कर दिया ॥ ५ ॥ बड़े-बड़े जुआरी हारकर राजा के पास जाकर पुकार करने लगे कि यहाँ एक ऐसा जुआरी आया है जो किसी से हराया नहीं जाता ॥ ६ ॥ राजा ने जब यह सुना तो स्वय जुआ खेलने का उपक्रम किया । उसने कहा कि उसे यहाँ बुला लो जिसने सारे जुआरियों को हरा दिया है ॥ ७ ॥ सेवक वचन सुनकर वहाँ पहुँचे जहाँ कुँवरि जुआरियों को हरा रही थी । उससे कहा कि तुम्हें राजा ने बुलाया है और वह तुमसे जुआ खेलना चाहता है ॥ ८ ॥ स्त्री जब राजा के निकट पहुँची तो उसने विभिन्न प्रकार से जुआ खेलना शुरू कर दिया । उसने राजा का इतना द्रव्य हरवा दिया कि ब्रह्मा से भी नहीं गिना जा सकता ॥ ६ ॥ जब राजा विभिन्न प्रकार से द्रव्य हार गया तो उसने अपने पुत्र को दाँव में लगाया उसे हराकर फिर देश को लगा दिया वह

भायो ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ जीति सकल धन तवन को दीना देस निकार । कुअर जीति करि पति करा बसी धाम ह्वै नार ॥ ११ ॥ ॥ दोहरा ॥ चंचलान के चरित को सकत न कोई बिचार । ब्रहम बिशन शिव खटबदन जिन सिरजी करतार ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ छतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३३६ ॥ ६३२६ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ सैंतीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ जमलसैन राजा बलवाना । तीन लोक मानत जिह आना । जमला टोडी को नरपाला । सूरबीर अरु बुद्धि बिसाला ॥ १ ॥ सोरठ दे रानी तिह सुनियत । दान सील जाको जग गुनियत । परजमती दुहिता इक ताकी । नरी नागनी सम नहि जाकी ॥ २ ॥ बिसहर को इक हुतो त्रिपाला । आयो गढ़ जमला किह काला । छाछ कामनी की पूजा हित । मन क्रम बचन इहै करि करि ब्रत ॥ ३ ॥ ठाढि

कुँवर को जीत गई और उससे मनचाहा रमण किया ॥१०॥ ॥दोहा॥ उसक समस्त धन जीतकर उसे देश से निकाल दिया और कुँवर को जीतकर उसे पति बनाकर वह उसके घर में बस गई ॥ ११ ॥ ॥ दोहा ॥ स्त्रियो के प्रपच को ब्रह्मा, विष्णु, शिव, कार्तिकेय एवं स्वयं परमात्मा भी नहीं जान सका है ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ छत्तीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३३६ ॥ ६३२६ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ सैंतीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ जमलसेन एक बलवान राजा था जिससे तीनों लो. डरते थे । जमल, टोडी का राजा था और शूरवीर तथा बुद्धिमान था ॥१ सोरठदेवी उसकी रानी संसार में दानी और शीलवान जानी जाती थी उसकी एक पुत्री परजमती थी जिसके समान कोई नर, नाग-स्त्री नह थी ॥ २ ॥ बेसहर का एक राजा था जो जमल के क़िले में आया । वह शीतलादेवी की मन- वचन और कर्म से पूजा करना चाहता था ॥ ३ । परजदेवी अपने निवास मे खडी थी और उसने दुखो को दूर करनेवाल

परज दे नीक निवासन । राजकुअर निरखा दुख नासन । इहै चित मै किअसि बिचारा । बरौ याहि करि कवन प्रकारा ॥ ४ ॥ सखी भेजि तिह धाम बुलायो । भाँति भाँति को भोग कमायो । इह उपदेश तवन कह दयो । गौरि पुजाइ बिदा करि गयो ॥ ५ ॥ बिदा कीया तिह ऐस सिखाइ । आपु न्रिपति सो कही जताइ । मनीकरन तीरथ मै जैहौ । न्हाइ धोइ जमला फिरि ऐहौ ॥ ६ ॥ जात तीरथ जात्रा कह भई । शहिर बेशहिर मों चलि गई । होत तवन सौ भेद जतायो । मन मानत के भोग कमायो ॥ ७ ॥ काम भोग करि कै घर राखी । रच्छ पालकन सो अस भाखी । बेगि नगर ते इनै निकारहु । हाथ उठावै तिह हनि मारहु ॥ ८ ॥ सो तरुनी तिह रसि रसि गई । काढि सखिप्री सिगरी दई । इह छल साथ लहा मन भावन । सका चीन कोऊ पुरख उपाव न ॥ ९ ॥ काढि दए सभ ही रखवारे । लोह करा जिन ते हनि डारे । जमलेस्वर न्रिप सौ यौ भाखी । तुमरी छीनि सुता न्रिप राखी ॥ १० ॥ बेसहरा (मू०ग्रं०१२९५) पर कछु न बसायो । सुनत बात न्रिप मूँड ढुरायो । इह

राजकुँवर को देखा । उसने मन में विचार कर लिया कि किसी भी प्रकार इसी का वरण करूँगी ॥ ४ ॥ उसने सखी को भेजकर उसे घर बुलाया और भाँति-भाँति के भोग किये । उसे कुछ समझाया और गौरी की पूजा करवाकर विदा कर दिया ॥ ५ ॥ उसे तो सिखाकर विदा कर दिया और स्वयं राजा से कहा कि मैं मनीकरण तीर्थ पर जाऊँगी और स्नान के बाद जमला के यहाँ जाऊँगी ॥ ६ ॥ तीर्थयात्रा को गई और बेसहर में जा पहुँची । उससे सारा भेद कहा और मनचाही रमण-क्रीड़ा की ॥ ७ ॥ उसने केलिक्रीड़ा के बाद उसे घर रख लिया और रक्षकों से कहा कि इन्हें अर्थात् साथियों को शीघ्र नगर से निकाल दो और जो हाथ उठाए उसे मार डालो ॥ ८ ॥ वह स्त्री तो प्रेम-बिभोर हो उठी और उसने लाई हुई सारी सामग्री प्रस्तुत कर दी । इस छल से उसने मनभावन प्रिय को प्राप्त किया जिसे कोई भी पुरुष न जान सका ॥ ९ ॥ सभी साथी रक्षकों को निकाल दिया गया और जो लड़े उन्हें मार डाला गया । लोगों ने जमलेश्वर राजा से कहा कि तुम्हारी पुत्री को राजा ने छीन लिया है १० राजा का बेसहर पर कुछ भी वश नहीं था

छल बरा कुअरि वहु राजा। बाइ रहा मुख सकल समाजा ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ सैंतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३३७ ॥ ६३३७ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ अठतीस चरित्र कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ नगर बिभासावती मै करन बिभास नरेस। जाके तेजरुत्रास कौ जानत सगरो देस ॥ १ ॥ ॥ चौपई ॥ मती बिबास तवन की रानी। सुंदरि भवन चवदस जानी। सात सवति ताकी छबि मान। जानुक सात रूप की खान ॥ २ ॥ आयो तहाँ एक बैरागी। रूपवान गुनवान तिआगी। स्याम दास ताको भनि नामा। निस दिन निरखि रहत तिह बामा ॥ ३ ॥ मती बिभास तवन रस राची। काम भोग मितवा के माची। गवन करौ तासौ मन भावै। सवतिन शोक ह्रिदै महि आवै ॥ ४ ॥ अहिधुज दे ब्रख केतमती भनि। पुहपमंजरी फूलमती गनि। नागरि दे नागनि दे

वह बात सुनकर मुँह लटकाकर बैठ गया। इस छल से उस कुँवरि ने उस राजा का वरण किया और समाज मुँह देखता ही रह गया ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ सैंतीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३३७ ॥ ६३३७ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ अड़तीसवाँ चरित्र-कथन

॥ दोहा ॥ बिभासावती नगरी में कर्णबिभास नामक राजा था जिसके तेज और भय को सारा देश जानता, मानता था ॥ १ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसकी रानी बिभासमती थी जो चौदह भुवनों में सुन्दर मानी जाती थी। उसकी सुन्दर सात सौतनें थीं जो मानों रूप की खानें थीं ॥ २ ॥ वहाँ एक बैरागी आया जो रूपवान, गुणवान और त्यागी था। उसका नाम श्यामदास था जिसे स्त्रियाँ रात-दिन देखा करती थीं ॥ ३ ॥ बिभासमती उसके प्रेम में लीन हो उस मित्र के साथ भोगरत रहती थी। वह उससे मनचाहा गमन करती थी और उसकी सौतनों के मन में शोक उत्पन्न होता था ॥ ४ ॥ अहिध्वजदेवी ने केतुमती से कहा और पुष्पमंजरी ने फूलमती से मन्त्रणा की वहाँ नागरी देवी और नागिन देवी थीं और नृत्यमती सारे

रानी। बिसमती सभ ही जग जानी॥ ५॥ तिन दिन एक करी मिजमानी। निवति पठी सभ ही घर रानी। बिखु को भोजन सभन खवाइ। सकल दई त्रिसलोक पठाइ॥ ६॥ बिखु कह खाइ मरीं सवतैं सब। रोवत भई बिभासमती तब। पाप करम कीना मैं भारो। धोखे लवन इनैं बिखु ख्वारो॥ ७॥ अब मैं गरौ हिमांचल जाइ। कै पावक महि बरौ बनाइ। सहचरि सहस हटकि तिह रही। मानत भई न तिन की कही॥ ८॥ वहै संग बैरागी लीना। जासौ काम भोग कह कीना। लोग लखैं त्रिय गरबे गई। किनहूँ बात जानि नहि लई॥ ९॥ मूरख राइ बाइ मुख रहा। भला बुरा कछु ताहि न कहा। नारि जारि के साथ सिधाई। बात भेद की किनहु न पाई॥ १०॥ त्रिय को चरित न बिधना जानै। महाँ रुद्र भी कछु न पछानै। इन की बात एक ही पाई। जिन इसत्री जगदीस बनाई॥ ११॥ १॥ (मू०ग्रं०१२९६)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ अठतीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ ३३८॥ ६३४८॥ अफजूं॥

संसार में जानी जाती थी॥ ५॥ उस रानी (विभासमती) ने एक दिन मेजबानी की और सब रानियों को न्यौता दे दिया। सबको विषयुक्त भोजन खिलाकर उसने मृत्युलोक भेज दिया॥ ६॥ जब विष खाकर सभी सौतनें मर गईं तो विभासमती रोने लगी। मुझसे पापकर्म हो गया है और नमक के धोखे में मैंने जहर डालकर इन्हें खिला दिया है॥ ७॥ अब मैं हिमालय में जाकर गल जाऊँगी अथवा आग में जल मरूँगी। उसे उसकी सखियाँ मनाती रहीं पर उसने उनकी एक नहीं मानी॥ ८॥ उसने उसी बैरागी को साथ लिया जिसके साथ उसने कामभोग किया था। लोगों ने सोचा कि स्त्री गलने के लिए चल पड़ी है और कोई भी रहस्य को न जान सका॥ ९॥ मूर्ख राजा मुँह खोले खड़ा रहा और उसने उस स्त्री को कुछ भी भला-बुरा नहीं कहा। वह स्त्री अपने यार के साथ चल दी और रहस्य की बात कोई भी न जान सका॥ १०॥ स्त्री के प्रपंचों को विधाता भी नहीं जान सकता और रुद्र भी इनकी पहचान नहीं कर सकता। इसकी बात तो केवल एक परमात्मा ही जान सकता है॥ ११॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ अड़तीसवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति ३३८ ६३४८ अफजूं

अथ तीन सौ उनतालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनियत इक नगरी उजियारी । बिसुकरमा निजु हाथ सवारी । नामु अलूरा ताको सोहै । तीनो लोक रचित तिन मोहै ॥ १ ॥ भूपभद्र तिह गड़ को राजा । राजपाट ताही कह छाजा । रतनमती तिह न्रिप की रानी । अधिक कुरूप जगत महि जानी ॥ २ ॥ ताके निकट न राजा जावै । निरखि नारि को रूप डरावै । अवर रानियन के घर रहै । तासौ बैन न बोला चहै ॥ ३ ॥ यह दुख अधिक नारि के मनै । चाहत प्रीति न्रिपति सौ बनै । एक जतन तब किया पिआरी । सुनहु कहत हौ कथा बिचारी ॥ ४ ॥ पूजा करत लख्यो जब राजा । तब तन सजा सकल त्रिय साजा । महाँ रुद्र को भेस बनाइ । अननै अंग बिभूति चढ़ाइ ॥ ५ ॥ करत हुतो राजा जपु जहाँ । शिव बनि आनि ठाढि भी तहाँ । जब राजै तिह रूप निहरा । मन क्रम ईस जानि पग परा ॥ ६ ॥ सुफल भयो अब जनम हमारा । महादेव को दरस निहारा । कह्यो करी मैं बडी कमाई ।

तीन सौ उनतालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ एक सुन्दर नगरी सुनी जाती है जिसे विश्वकर्मा ने मानों अपने हाथों से बनाया हो। उसका नाम अलूरा (एलोरा) था जो तीनो लोकों का मन मोहती थी ॥ १ ॥ वहाँ का राजा भूपभद्र था जिसका राजपाट शोभायमान था। रत्नमती उस राजा की रानी थी जो बेहद कुरूप मानी जाती थी ॥ २ ॥ राजा उसके पास नहीं जाता था और रानी का रूप देखकर डरता था। वह अन्य रानियों के घर रहता था और उससे बात भी नहीं किया करता था ॥ ३ ॥ उस रानी के मन में यह गहरा दुख था और वह चाहती थी कि किसी प्रकार राजा से प्रीति बने। तब उस प्रिया ने जो एक यत्न किया वह मैं तुमसे कहता हूँ, इस कथा को विचारपूर्वक सुनो ॥ ४ ॥ जब राजा को पूजा करते देखा तो उस स्त्री ने अपने शरीर को भली-भाँति सुसज्जित किया। उसने महादेव का वेश बनाया और अपने अंगों पर भभूत रमा ली ॥ ५ ॥ जहाँ राजा जाप कर रहा था वह वहाँ शिव बनकर आ खड़ी हुई। राजा ने जब उसे देखा तो मन-वचन-कर्म से उसे शिव जानकर उसके पाँवों मे आ पड़ा ॥ ६ ॥ मेरा जन्म सफल हो

जाते दीनी रुद्र दिखाई ॥ ७ ॥ बरं ब्रूह तिह कहा नारि तब । जौ जड़ रुद्र लख्यो जाना जब । तैं मुरि करी सेव भाखा अति । तब तुहि दरसु दियो मैं सभ मति ॥ ८ ॥ सुनि बच नारि राइ हरखाना । भेद अभेद जड़ कछू न जाना । त्रिय के चरन रहा लपटाई । नारि चरित्र की बात न पाई ॥ ९ ॥ तब ऐसा त्रिय किया उचारा । सुनहु बात तुम राजकुमारा । रतनमती तुमरी जो रानी । यह मुरि अति सेवकी प्रमानी ॥ १० ॥ जौ यासौ तुम करहु पयारा । ह्वैहै तुमरो तबै उधारा । शत्रु होइगो नास तिहारो । तब जानौ तूँ भगत हमारो ॥ ११ ॥ यौ कहि लोकंजन द्रिग डारी । भई लोप नहि जाइ निहारी । मूढ़ राव तिह रुद्र प्रमाना । भेद अभेद कछु पसू न जाना ॥ १२ ॥ तब ते तासौ किआ पयारा । तजि करि सकल सुंदरी नारा । इह छल छला चंचला राजा । आलूरे गढ़ को सिरताजा ॥ १३ ॥ १ ॥ (मू०ग्रं०१२९७)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ उनतालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३३९ ॥ ६३६१ ॥ अफजूँ ॥

गया है, क्योंकि मैंने महादेव का दर्शन कर लिया है। उसने कहा कि मैंने बड़ी कमाई की है जिससे मुझे रुद्र ने दर्शन दिया है ॥ ७ ॥ जब इस मूर्ख ने उसे रुद्र मान लिया तो उस स्त्री ने कहा कि तुम वरदान माँगो। उसने कहा कि तुमने मेरी बहुत सेवा की है, इसलिए मैंने तुम्हें दर्शन दिए हैं ॥ ८ ॥ स्त्री के वचन सुनकर राजा हर्षित हो उठा और उस जड़ ने भेद-अभेद कुछ नहीं समझा। वह स्त्री के चरणों में लिपट गया और उसके प्रपंच की बात को न जान सका ॥ ९ ॥ तब स्त्री ने राजा से कहा कि हे राजकुमार ! तुम मेरी बात सुनो। तुम्हारी रानी जो रत्नमती है वह मेरी प्रामाणिक सेविका है ॥ १० ॥ यदि तुम उससे प्रेम करोगे तो तुम्हारा उद्धार होगा। तब तुम्हारे शत्रुओं का नाश होगा और तुम मेरे भक्त के रूप में जाने जाओगे ॥ ११ ॥ यह कहकर उसने लोकंजन नामक सुरमा आँखों में डाला और लोप हो गई। मूर्ख राजा ने उसे रुद्र माना और भेद-अभेद कुछ भी नहीं जाना ॥ १२ ॥ तब से समस्त अन्य सुन्दर स्त्रियों को त्यागकर वह उससे प्यार करने लगा। इस छल से उस स्त्री ने राजा को छला जो अलूरगढ़ का सिरताज था ॥ १३ ॥ १ ॥

। श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री भूप म तीन सौ चरित्र की शुभ सत समाप्ति ३३९ ६३६१ अफजू

अथ तीन सौ चालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ मथुरा नाम हमारे रहै। जग तिह त्रियहि गुलाबो कहै। रामदास नाना तह आयो। निरखि नारि तिह मदन सतायो ॥ १ ॥ बहुत बरिस तासौ वहु रहा। पुनि ऐसे तिह त्रिय सौ कहा। आउ होहि हमरी तै नारी। कसि दैहैं तुहि यह मुरदारी ॥ २ ॥ भली भली अबला तिन भाखो। चित महि राखि न काहू आखो। जब मथुरा आयो तिह धामा। तब अस बचन बखान्यो बामा ॥ ३ ॥ हरीचंद राजा जग भयो। अंत काल सो भी मरि गयो। मानधात प्रभ भूप बढायो। अंत काल सोऊ काल खपायो ॥ ४ ॥ जो नर नारि भयो सो मरा। या जग महि कोऊ न उबरा। इह जग थिर एकै करतारा। और म्रितक इह सगल संसारा ॥ ५ ॥ ॥ दोहरा ॥ या जग महि सोई जियत पुन्य दान जिन कीन। सिखियन की सेवा करी जो माँगै सो दीन ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ यह उपदेश सुनत जड़ डरियो। बहुरि नारि सौ बचन उचरियो। जो उपजै त्रिय भली

तीन सौ चालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ मथुरा नामक स्त्री हमारे यहाँ रहती थी जिसे लोग गुलाब (के समान सुन्दर) मानते थे। रामदास नामक एक व्यक्ति आया जो स्त्री को देखते ही कामासक्त हो गया ॥ १ ॥ वह बहुत वर्षों तक उसके साथ रहा और फिर स्त्री से उसने कहा कि आओ तुम मेरी पत्नी बन जाओ, तुम्हें इस सेत्रिकाई में भला क्या हासिल होगा ॥ २ ॥ उस स्त्री ने 'भला-भला'' कहा और बात मन में ही रखते हुए किसी अन्य को नहीं बताई। जब मथुरा उनके घर आ गई तब उस स्त्री ने कहा ॥ ३ ॥ राजा हरिश्चन्द्र हुआ लेकिन अन्त में काल की गोद में समा गया। मांधाता नामक सम्राट् हुआ, अन्त में वह भी काल के गाल में समा गया ॥ ४ ॥ जो भी स्त्री-पुरुष इस संसार में पैदा हुए वे सब मर गए; इस संसार से बचकर कोई भी नहीं गया। इस संसार में केवल एक परमात्मा ही स्थिर है अन्य सभी मरणशील हैं ॥ ५ ॥ ॥ दोहा ॥ इस संसार में तो वही जीवित (अमर) रहता है जिसने पुण्यदान किया हो और जिज्ञासुओं की सेवा कर उन्हें मुंह माँगा दान दिया हो ॥ ६ ॥ ॥ चौपाई ॥ यह उपदेश सुनकर वह

तिहारै । वहै काम मैं करौ सवारै ॥७॥ ॥त्रिय बाच॥ फटा बस्त्र जाका लखि लीजै । बस्त्र नवीन तुरत तिह दीजै । जाकै घरि महि होइ न दारा । ताकह दीजै अपनी नारा ॥८॥ रामदास तब ताहि निहार्‌यो । धन बिहीन बिनु नारि बिचार्‌यो । धनहूँ दिया नारि हूँ दीनी । भलो बुरी जड़ कछू न चीनी ॥ ९ ॥ इह छल गई जार के नारा । बस्त्र दरब लै साथ अपारा । इह आपन अति साध पछाना । भलो बुरी का भेव न जाना ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ चालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३४० ॥ ६३७१ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ इक्यालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुक्रितावती नगर इक सुना । सुक्रितसैन राजा बहु गुना । सुभलच्छनि दे नारि बिराजै । चंद्र सूर की लखि दुति लाजै ॥ १ ॥ स्री अपच्छरादेइ सु बाला । मानहु सकल राग की माला । कही न जात तवन की सोभा ।

मूर्ख द्रवित हो उठा और स्त्री से कहने लगा कि जो तुम्हारे मन में हो मैं वही करूँगा ॥ ७ ॥ ॥ स्त्री उवाच ॥ जिसके फटे कपड़े देखो उसे तुरन्त नये वस्त्र प्रदान करो; जिसके घर में स्त्री न हो उसे अपनी स्त्री दे दो ॥ ८ ॥ रामदास ने तब देखा कि कुछ धनहीन है और कुछ नारी-विहीन हैं। धन-हीनों को उसने धन दे दिया और अन्यों को उसने स्त्री दे दी। इस प्रकार उस जड़ ने भला-बुरा कुछ नहीं पहचाना ॥ ९ ॥ इस छल से वह स्त्री अन्य यारों के पास चली गई और साथ में अपार द्रव्य व वस्त्र ले गई। अपने आपको वह साधु मानने लगा और भला-बुरा न जान सका ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ चालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३४० ॥ ६३७१ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ इकतालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ सुकृतावती नगर में सुकृतसेन नामक गुणज्ञ राजा था। शुभलक्षण देवी उसकी नारी थी जो चन्द्र-सूर्य को देखकर भी लजा उठती थी ॥ १ ॥ अप्सरा देवी उनकी सुन्दर पुत्री थी जो मानों रागमाला के समान थी। उसकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता और इन्द्र चन्द्र

इंद्र चंद्र जस रवि लखि लोभा ॥ २ ॥ तह इक आइ गयो सौदागर। पूत साथ तिह जानु प्रभाकर। राज सुता तिह ऊपर अटकी। चटपट लाज लोक की सटकी ॥ ३ ॥ चतुरि जानि तह (मू०ग्रं०१२६८) सखी पठाई। ज्यों त्यों तहाँ ताहि लै आई। राज सुता तासौ रति मानी। केल करत सभ राति बिहानी ॥ ४ ॥ बाढा बिरह दुहन को ऐसा। हम तें भाखि न जाई कैसा। एक छोरि इक अनतन जावै। पलक ओट जुग कोटि बिहावैं ॥ ५ ॥ कामभोग करि बदा संकेता। लाग्यो शाह पुत्र सो हेता। मुहि अपने लै संग सिधारो। तब जानौ तै यार हमारो ॥ ६ ॥ तासौ रति करि धाम सिधायो। किया जतन जो हितू सिखायो। बस्त्र बहुत बहु मोल पठाए। प्रथम त्रिपति कह सकल दिखाए ॥७॥ पुनि रनिवासहि पठै बनाए। राजसुतहि अस गयो जताए। जो पसंद इन मै ते कीजै। सो दे बस्त्र मोलि मुरि लीजै ॥८॥ ॥ अड़िल्ल ॥ रानी मालु दिखाइ बहुरि लै कुअर दिखायो। लपटि तरुनि तिह माँहि आपनो अंग दुरायो। गई मित्र के

तथा सूर्य भी उसके रूप के लोभी थे ॥ २ ॥ वहाँ एक सौदागर आ गया जिसके साथ सूर्य के समान तेजस्वी उसका पुत्र था। राजकुमारी उस पर आसक्त हो गई और उसने लोक-लाज आदि तुरन्त विस्मृत कर दी ॥ ३ ॥ उसने एक सखी को चतुर समझकर उसके पास भेजा जो उसे जैसे-तैसे वहाँ ले आई। राजकुमारी ने उससे रमण किया और कामक्रीड़ा में ही सारी रात बीत गई ॥ ४ ॥ दोनों का विरही प्रेम इतना बढ़ा कि मुझसे उसका वर्णन नहीं हो सकता। एक-दूसरे को छोड़कर कोई भी अन्य स्थान पर नहीं जाता था और पल भर दूर रहना उन्हें युगों के समान लगता था ॥ ५ ॥ कामभोग के बाद उस स्नेही धनी-पुत्र के साथ बाजी लगी कि मैं तुम्हें तभी अपना सच्चा प्रेमी मानूंगी यदि तुम मुझे अपने साथ भगाकर ले चलो ॥ ६ ॥ वह उसके साथ कामक्रीड़ा कर घर चला गया और जैसे उसे सिखाया गया था उसने वैसा ही प्रयत्न किया। उसने बहुत से वस्त्र मोल लिये और सभी राजा के समक्ष प्रस्तुत किए ॥ ७ ॥ फिर उन्हें रनिवास में भेज दिया और राजकुमारी को भी जता दिया। जो वस्त्र इनमें से पसन्द करो उसका मोल मुझे दे देना ॥ ८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ रानी को माल दिखाकर फिर कुँवरि को दिखाया गया। उस तरुणी ने अपने अंग उन्हीं वस्त्रों में छिपा लिये वह मित्र के घर चली गई और राजा ने तनिक भी विचार नहीं

धाम न भूप बिचारियो। हो इह छल तिह लै साथ हरीफ सिधारियो ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ भांगन भोहू पियत थो राहत भयो परबीन। दुहिता हरी हरीफ यौ सका न जड़ छल चीन ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ इक्यालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३४१ ॥ ६३८१ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ बतालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ उत्तर दिसा प्रगट इक नगरी। स्री ब्रिजराजवती सु उजगरी। स्री ब्रिजराजसैन तह राजा। जाकह निरखि इंद्र अति लाजा ॥ १ ॥ स्री ब्रिजराजमती तिह रानी। सुंदरि भवन चतरदस जानी। स्री बरंगना दे तिह बाला। जनु निरधूम अगनि की ज्वाला ॥ २ ॥ चतुरि सखी जब ताहि निहारै। मधुर बचन मिलि ऐस उचारै। जैसी इह है दुतिय न जई। आगे होइ न पाछे भई ॥ ३ ॥ जब बरंगना देइ तरुनि भी। लरिकापन की बात बिसरिगी।

किया और इस प्रकार छल के साथ वह प्रमी प्रेमिका को लेकर चलता बना ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा जो अपने आपको बहुत प्रवीण समझता था मानों भाँग पिये हुए था। उसकी पुत्री को उसका मित्र हरण करके ले गया और यह मूर्ख उसे पहचान ही नहीं सका ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ इकतालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३४१ ॥ ६३८१ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ बयालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ उत्तर दिशा में श्री ब्रजराजवती नामक एक प्रसिद्ध नगर था। वहाँ का राजा ब्रजराजसेन था जिसे देखकर इन्द्र भी लज्जित होता था ॥ १ ॥ ब्रजराजमती उसकी रानी थी जो चौदह भुवनों में सुदर जानी जाती थी। वारंगनादेवी उसकी पुत्री थी जो मानों आग की लपटों के समान थी ॥ २ ॥ जब चतुर सखियाँ उसे देखती थीं तो मधुरतापूर्वक यही कहती थीं कि इसके समान अन्य किसी ने जन्म नहीं लिया है। न तो कोई पहले हुई है न आगे होगी ॥ ३ ॥ जब वारंगनादेवी तरुणी हुई और बचपन की यादें उसे विस्मृत हो चलीं तो उसने एक राजकुँवर को देखा और

राजकुअर तब ताहि निहार्यो । ता पर तरुनि प्रान कह वार्यो ॥ ४ ॥ तासौ कामभोग नित मानै । द्वै तै एक देह करि जानै । तब चतुरा इह चरित्र बिचार्यो । कहो त्रिपति सो प्रगट उचार्यो ॥ ५ ॥ मो कौ स्राप सदाशिव दीना । ताते जनम तिहारे लीना । स्राप अवधि पूरन ह्वै है जब । पुनि जै हौ हरि (मू०ग्रं०१२९९) लोक बिखै तब ॥ ६ ॥ इक दिन गई मित्र के संगा । लिखि पत्रा पर अपने अंगा । स्राप अवधि पूरन अब भई । सुरपुर सुता तिहारी गई ॥ ७ ॥ अब जो धाम हमारे माला । सो दीजै द्विज कौ ततकाला । यार अपन ब्रहमन ठहरायो । सकल दरब इह छल तिह द्यायो ॥ ८ ॥ इह चरित्र गो मित्रहि साथा । दै धन किया अनाथ सनाथा । मात पिता सभ अस लखि लई । स्राप मुचित भ्यो सुरपुर गई ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ बतालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३४२ ॥ ६३९० ॥ अफजूं ॥

उस पर प्राण न्योछावर कर दिए ॥ ४ ॥ वह उससे नित्य कामक्रीड़ा करती थी और दोनों अपना शरीर एक ही समझते थे । तब उस चतुर स्त्री ने एक प्रपंच सोचा और प्रकट में राजा से कहा ॥ ५ ॥ मुझे शिव ने शाप दिया था जिससे मैंने तुम्हारे यहाँ जन्म लिया है । जब शाप की अवधि पूरी हो जायगी तो मैं फिर शिवलोक को चली जाऊँगी ॥ ६ ॥ एक दिन अपने हाथ से पत्र लिखकर वह मित्र के साथ चली गई । (उसने लिखा था कि) शाप की अवधि पूरी हो गई है और तुम्हारी पुत्री देवलोक को चली गई है ॥ ७ ॥ अब जो मेरे घर में द्रव्य है वह तुरन्त ब्राह्मण को दान कर दो । अपने प्रेमी को उसने ब्राह्मण बना दिया और छल से सारा धन उसे दिला दिया ॥८॥ इस छल से वह मित्र के साथ चली गई और अनाथ को धन देकर धनी बना दिया । माता-पिता ने यह मान लिया कि उसका शाप समाप्त हो गया और वह देवलोक चली गई है ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ बयालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ३४२ ६३९० अफजूं

अथ तीन सौ तितालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सोरठ देस बसत है जहाँ। दिजबरसैन नराधिप तहाँ। मती सुमेर तवन की नारी। दुतिय न जग मै ऐसि कुमारी ॥ १ ॥ सोरठदेइ सुता इक ताके। और नार सम तुलि न वाके। दुतिय परजदे भई कुमारी। जिह सी दुतिय न ब्रहम सवारी ॥ २ ॥ दोऊ सुता तरुनि जब भईं। जन करि किरणि सूर ससि बई। ऐसी प्रभा होत भी तिनकी। बाछा करत बिधाता जिनकी ॥ ३ ॥ ओजसैन इक अनत न्रिपति बर। जनु करि मैन प्रगटियो बपु धरि। सो न्रिप खेलन चढ़ा शिकारा। रोझ रीछ मारे झंखारा ॥४॥ निकस्यो तहाँ एक झंखारा। द्वादस जाके सींग अपारा। न्रिप तिह निरखि तुरंग धवाया। पाछे चला कोस बहु आवा ॥ ५ ॥ बहुत कोस तिह म्रिगहि दखेरा। चाकर एक न पहुचा नेरा। आयो देस सोरठी के महि। न्रिप की सुता अन्हात हुती जहि ॥ ६ ॥ आनि तही झंखार निकारा।

तीन सौ तेंतालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ सोरठ देश में द्विजवरसेन नामक राजा था। उसकी स्त्री सुमेरमती थी जिसके समान दुनिया में अन्य कोई स्त्री नहीं थी ॥ १ ॥ उनकी एक पुत्री सोरठदेवी थी जिसके समान भी अन्य कोई स्त्री नहीं थी। परजदेवी एक अन्य राजकुमारी थी जिसके समान ब्रह्मा ने किसी को नहीं बनाया था ॥ २ ॥ दोनों कन्याएँ जब बड़ी हुई तो ऐसी थीं मानों चाँद-सूरज की किरणें हों। उनकी सुन्दरता ऐसी थी कि विधाता भी वैसी सुन्दरता की आकांक्षा किया करता था ॥ ३ ॥ ओजसेन एक अन्य राजा था जो मानों कामदेव के अवतार के रूप में संसार में प्रकट हुआ था। वह राजा शिकार खेलने के लिए गया और उसने रोझ, रीछ, हिरण आदि मारे ॥ ४ ॥ उधर से एक हिरण आ निकला जिसके बारह सींग थे। राजा ने उसे देखकर उसके पीछे घोड़ा दौड़ाया और बहुत कोस चला आया ॥ ५ ॥ अनेकों कोस तक वह मृग दिखता रहा परन्तु कोई भी सेवक साथ न पहुँच सका। वह (चलता-चलता) सोरठ देश में आ गया जहाँ [illegible] हिरण वहाँ आ निकला जिसे

अबला दुहूँ निहारति मारा। ऐसा बान तवन कह लागा। ठौर रहा पग द्वैक न भागा ॥ ७ ॥ राजकुआरी दुहूँ निहारो। दुहूँ ह्रिदै इह भाँति बिचारो। बिनु पूछे पितु इह हम बरिहैं। नातर मारि कटारी मरिहैं ॥ ८ ॥ तब लगु भूप तिखातुर भयो। म्रिग के सहित तहाँ चलि गयो। सो म्रिगराज सु तन कह दीयो। तिन को सीत बारि लै पीयो ॥ ९ ॥ बाँधा बाज एक द्रुम के तर। सोवत भयो ह्वै भूप स्रमातर। राज कुआरन घात पछाना। सखियन सो अस किया बखाना ॥१०॥ मदरा बहु दुहूँ कुअरि मँगायो। (मू०ग्रं०१३००) सात बार जो हुतो चुआयो। अपन सहित सखियन कौ प्याइ। अधिक मत्त करि दई सुवाइ ॥ ११ ॥ जब जाना ते भई दिवानी। सोए सकल पहरुआ जानी। दुहूँ सनाही लई मँगाइ। पहिरि नदी मै धसी बनाइ ॥ १२ ॥ तरत तरत आई ते तहाँ। सोवत सुतो नराधिप जहाँ। पकरि पाव तिह दिया जगाइ। अजा चरम पर लिया चढ़ाइ ॥ १३ ॥ भूपति लिया चढ़ाइ सनाई। सरिता बीच परो पुनि जाई। तरत तरत अपनो तजि देसा। प्रापति भी तिह देस नरेसा ॥ १४ ॥ जब कछु सुधि

दोनों राजकुमारियों के देखते-देखते उस (ओजसेन) ने मार डाला। उसे ऐसा बाण लगा कि वहीं रह गया और दो क़दम भी न भाग सका ॥ ७ ॥ दोनों राजकुमारियों ने देखा और मन में विचार किया कि पिता से पूछे बिना ही हम इसका वरण करेंगी अन्यथा कटार मारकर मर जाएँगी ॥ ८ ॥ तब तक राजा को प्यास लगी और वह मृग-समेत उनके पास जा पहुँचा। राजा ने वह मृग उन्हें दे दिया और उनसे ठंडा पानी लेकर पिया ॥ ९ ॥ घोड़े को उसने एक पेड़ के नीचे बाँधा और थककर राजा सो गया। राजकुमारियों ने अवसर देखकर अपनी सखियों से बताया ॥ १० ॥ दोनों राजकुमारियों ने मदिरा मँगायी और उसे सात बार आसबित किया। स्वयं समेत सखियों को पिलाकर अधिक मदमत्त कर उन्हें सुला दिया ॥ ११ ॥ जब उसने जाना कि वे दीवानी हो गई हैं और सारे पहरेदार भी सो गए हैं तो दोनों ने हवा से भरी मश्कें मँगा लीं और उनके सहारे नदी में धँस गईं ॥१२॥ तरती-तैरती वे वहाँ आ गईं जहाँ राजा सोया हुआ था। उसे पाँव से पकड़कर जगा लिया और उस बकरी की खाल (मश्क) पर चढ़ा लिया ॥ १३ ॥ राजा को भी मश्क पर चढ़ाकर पुनः वे नदी में आ गईं। तैरते-तैरते वे अपना देश छोड़कर उस राजा के देश में आ पहुँचीं ॥ १४ ॥ जब उन सखियों को कुछ होश आया

सखियन तिन पाई । त्रिसंदेह यौ ही ठहराई । मद सौ भई जानु मतवारी । डूबि मुई दोऊ राजदुलारी ॥ १५ ॥
॥ दोहरा ॥ बै दोऊ न्रिप संग गई अनिक हिये हरखात । अजा चरम पर भूप बर दुहूँअन चला बजात ॥ १६ ॥ १ ॥
॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ त्रितालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३४३ ॥ ६४०६ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ चौतालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ हरिद्वार इक सुन न्रिपाला । तेजिमान दुतिमान छिताला । स्रीरस रंगमती तिह जाई । जिह सम दूसरि बिधि न बनाई ॥ १ ॥ जब वुह तरुनि तरुन अति भई । भूपसैन न्रिप कहि पित दई । सिरीनगर भीतर जब आई । लखि चंडालिक अधिक लुभाई ॥ २ ॥ पठै सहचरी लिया बुलाई । न्रिप सौ भोग कथा बिसराई । रैनि दिवस तिह लेत बुलाई । रति अति नितप्रति करत बनाई ॥ ३ ॥ रसत रसत ऐसी रसि गई । जनु कर नारि तवन की भई । सभ

तो उन्होंने निस्संदेह यही ठहराया कि मद (नशे) में मस्त दोनों राजकुमारियाँ नदी में डूब गई हैं ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥ वे दोनों ही प्रसन्न हो राजा के साथ चली गईं। राजा भी दोनों के साथ रमण करता हुआ उस बकरी की खाल (की बनी मश्क) पर चला गया ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ तेतालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३४३ ॥ ६४०६ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ चौवालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हरिद्वार का राजा तेजस्वी एवं छविमान था। रसरंगमती उसकी पुत्री थी जिसके समान विधाता ने अन्य किसी को नहीं बनाया था ॥ १ ॥ जब वह कन्या जवान हो गई तो उसके पिता ने उसे राजा भूपसेन को दे दिया। जब वह श्रीनगर में आयी तो वह एक चांडाल को देखकर उस पर मोहित हो उठी ॥ २ ॥ उसने दासी को भेजकर उसे बुला लिया और राजा के साथ रमण-लीला को मानो भूल गई उसे वह रात दिन बुलाया करती थी और नित्यप्रति उसके साथ रतिक्रीडा किया करती थी ३ धीरे धीरे वह उसमे इतना

त्रितांत कहि तांहि सिखायो। सोवति समें भूप कह घायो ॥४॥ प्रात जरन के काज सिधाई। आगे राखि लए निजुराई। जबै चिता पर बैठी जाइ। चहूँ ओर त्रिय आगि लगाइ ॥५॥ चारो दिसा अगनि जब लागी। तब ही उतरि चिता पै भागी। लोगन चरित क्रिया नहि जानी। दीनी तिसी चंडारहि रानी ॥ ६ ॥ यौं छलि छैलचिकनि सन गई। किनूं न बात ताहि लखि लई। नारि अधिक मन हरख बढायो। चाहत हुती सोइ पति पायो ॥ ७ ॥ तब ते आजु लगे उह देसा। (मू०ग्रं०१३०१) मारत त्रिय को प्रथम नरेसा। काठ तरे करि जाँहि जरावत। भाखि सकति नहि बात लजावत ॥८॥ ॥ दोहरा ॥ तिह रानी के पुत्र तब राज करा तिह ठाव। आजु लगे चंडालियै भाखत तिन को नाव ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ चौतालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३४४ ॥ ६४१५ ॥ अफजूं ॥

रम गई मानों वह उसी की स्त्री हो। उसे उस स्त्री ने सब कुछ समझा दिया और सोते हुए राजा को मार डाला ॥ ४ ॥ प्रात: वह जल भरने के लिए चल पड़ी और उसने अपने आगे राजा (के शव) को रख लिया। जब वह चिता पर बैठ गई तो चारों ओर आग लगा दी ॥ ५ ॥ जब चारों दिशाओं में आग लग गई तो वह चिता से उतरकर भाग निकली। लोगों ने उसके प्रपंच को नहीं जाना और उस रानी को उसी चांडाल के हवाले कर दिया ॥ ६ ॥ इस प्रकार वह छैल और चिकने अंगोंवाली चली गई और कोई भी उसकी बात को न जान सका। वह स्त्री मन मे अत्यन्त प्रसन्न हो उठी क्योंकि उसे मनचाहा पति मिला था ॥ ७ ॥ तब से आज तक उस देश में राजागण स्त्रियों को (मरने से) पहले ही मार देते हैं। उन्हें लकड़ियों में जलाते हैं और ऐसा करने में तनिक भी लज्जा का अनुभव न करते ॥ ८ ॥ ॥ दोहा ॥ तब उस रानी के पुत्र ने वहाँ राज्य किया और चांडाल लोग आज तक उसका नाम लेते हैं ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में तीन सौ चवालीसवे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३४४ ॥ ६४१५ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ पैंतालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ दौला की गुजराति बसत जह। अमरसिंघ इक हुतो न्रिपति तह। अंगनादे रानी तिह राजै। निरखि दिबंगनन को मन लाजै ॥ १ ॥ राजा अधिक पीर कह मानै। भली बुरी जड़ बात न जानै। तहा सुबरन सिंघ इक छत्री। रूपवान धनवान बरत्री ॥ २ ॥ सुंदर अधिक हुतो खतिरेटा। जनुक रूप सौ सकल लपेटा। जब तें निरखि नारि तिह गई। सुधि बुधि छाडि दिवानी भई ॥ ३ ॥ ता संग नेह सजा रुचि मान। जानि बूझि ह्वै गई अजान। दई सहचरी तहिक पठाइ। ज्यों त्यों तिह ग्रहि लिया मँगाइ ॥ ४ ॥ पोसत भाँग अफीम मँगाई। पानि डारि करि भाँग घुटाई। पान किया दुहूँ बैठि प्रजंकहि। रति मानी भरि भरि द्रिड़ अंकहि ॥ ५ ॥ ॥ दोहरा ॥ जबै टनाने कैफ के आए अखियन माहि। करहि बिलास प्रजंक चड़ि हसि हसि नारि औ नाहि ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ भाँति भाँति के आसन लैकै।

तीन सौ पैंतालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ दौला के गुजरात में अमरसिंह नामक एक राजा था। उस राजा की रानी अंगनादेवी थी जिसे देखकर देवस्त्रियाँ भी मन मे लज्जित होती थीं ॥ १ ॥ राजा एक पीर को अधिक मानता था और भले-बुरे की पहचान नहीं कर पाता था। वहाँ स्वर्णसिंह नामक एक क्षत्रिय था जो रूपवान, धनवान और वीर था ॥ २ ॥ वह क्षत्रिय-पुत्र अत्यधिक रूपवान था और उसने मानों सारा सौंदर्य ही ओढ़ रखा था। जब से इस स्त्री ने उसे देखा वह सुधि भुलाकर उसी पर दीवानी हो गई ॥ ३ ॥ वह उसके साथ प्रेम करने लगी और जान-बूझकर मानो सब बातों से अनजान हो गई। उसने अपनी सखी को वहाँ भेजा और जैसे-तैसे उसे अपने घर मँगवा लिया ॥ ४ ॥ पोस्त, भाँग, अफ़ीम मँगाई और पानी डालकर भाँग पिसवाई। पलंग पर बैठकर दोनों ने पान किया और एक-दूसरे से आलिंगनबद्ध हो रतिक्रीड़ा की ॥ ५ ॥ ॥ दोहा ॥ जब शराब का नशा आँखों में आया तो दोनों स्त्री-पुरुष पलंग पर चढ़कर हँस-हँसकर विलास करने लगे ६ चौपाई विभिन्न प्रकार के आसन लगाकर और स्त्री को अनेको प्रकार से रिझाकर उस मदनमोहिनी

अबला कह बहु भाँति रिझै कै। आपन पर घायल करि मारी। मदन मोहनी राजदुलारी ॥ ७ ॥ अधिक बढाइ नारि सौ हेता। इहि बिधि बाँधत भए संकेता। धूँई कालिह पीर की ऐयहु। डारि भाँग हलवा महि जैयहु ॥ ८ ॥ सोफी जबै चूरमा खैहैं। जीयत म्रितक सभै ह्वै जैहैं। तहीं क्रिपा करि तुमहूँ ऐयहु। मुहि लै संग दरब जुत जैयहु ॥ ९ ॥ जब ही दिन धूँई को आयो। भाँगि डारि चूरमा पकायो। सकल मुरीदन गई ख्वाइ। राखे मूढ़ मस्त करि स्वाइ ॥ १० ॥ सोफी भए जबै मतवारे। प्रिथम दरब हरि बस्त्र उतारे। दुहूँअन लिया देस को पंथा। इहं बिधि दै साजन कह संथा ॥ ११ ॥ भया प्रात सोफी सभ जागे। पगरी बस्त्र बिलोकन लागे। सरवर कहै क्रोध किय भारा। सभहिन (मू०ग्रं०१३०२) कौ अस चरित दिखारा ॥ १२ ॥ सभ जड़ रहो तहा मुख बाई। लज्जा मान मूंड निहुराई। भेद अभेद न किनूं पछाना। सरवर किया सु सिर पर माना ॥१३॥

राजदुलारी को अपने पर मोहित कर लिया ॥ ७ ॥ उसने स्त्री से अत्यधिक प्रेम बढ़ाया और आपस में मिलकर यह सलाह कर ली कि तुम पीर के मेले के दिन आना और हलवे में भाँग डालकर चले आना ॥ ८ ॥ न नशा खानेवाले जब चूरमा खाएँगे तो सभी जीवित मृतक हो जाएँगे। तब तुम कृपा करके आ जाना और द्रव्य-समेत मुझे ले जाना ॥ ९ ॥ जब मेले का दिन आया तो भाँग मिला चूरमा पकाया गया। सारे भक्तों को खिला दिया गया और वे सब बेहोश पड़े रहे ॥ १० ॥ जब सभी सोफी (न पीनेवाले) मतवाले हो गए तो पहले धन चुराकर फिर उनके वस्त्र उतार लिये। दोनों ने अपने देश का रास्ता पकड़ लिया और इस प्रकार उस सजन (पीर) को सबक़ दिया ॥ ११ ॥ सुबह होने पर सभी जागे और अपनी पगड़ी, वस्त्रादि देखने लगे। सरवर (नामक पीर) क्रुद्ध हो कहने लगा कि सबको ऐसा प्रपंच किसने दिखाया ॥ १२ ॥ सभी मूर्ख वहाँ मुँह खोले खड़े रहे और लज्जा से सिर हिलाने लगे। किसी ने भेद-अभेद न पहचाना और जो सरवर (पीर ने किया उसे सत्य मान

॥ दोहरा ॥ भेद अभेद त्रियान को सकत न कोऊ पाइ । सभन लखो कैसे छला कस करि गई उपाइ ॥ १४ ॥ १ ॥

॥ इति श्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ पैंतालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३४५ ॥ ६४२९ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ छितालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु राजा इक कहौ कबित्त । जिह बिधि अबला किया चरित्त । सभहिन कौ दिन ही महि छला । निरखहु या सुंदरि की कला ॥ १ ॥ इशकावती नगर इक सोहै । इशकसैन राजा तह को है । स्री गजगाहमती तिह नारी । जा सम कहूँ न राजकुमारी ॥ २ ॥ इक रणदूलह सैन न्रिपति तिह । जा सम उपजा दुतिय न महि महि । महा सूर अरु सुंदर घनो । जनु अवतार मदन को बनो ॥ ३ ॥ सो न्रिप इक दिन चढ़ा शिकारा । मारत रीछ रोझ झंखारा । इशकावती नगर तर निकसा । प्रभा बिलोकि नगर की बिगसा ॥ ४ ॥ अस सुंदरि जिह न्रिप को नगरी । कस ह्वैहै

लिया ॥ १३ ॥ ॥ दोहा ॥ स्त्रियों के रहस्य को कोई नहीं जान सकता । देखो उसने किस उपाय से सबको छला और चली गई ॥ १४ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ पैंतालासवे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३४५ ॥ ६४२९ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ छियालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपई ॥ हे राजा ! सुनो एक कवित्त कहता हूँ कि स्त्री ने किस प्रकार प्रपंच किया । इस सुन्दरी की कला देखो, इसने सबको दिन में ही छल लिया ॥ १ ॥ इश्कावती नगरी में इश्कसेन नामक एक राजा था । गजगाहमती उसकी स्त्री थी जिसके समान कोई राजकुमारी नहीं थी ॥ २ ॥ रणदूलहसेन एक (अन्य) राजा था जिसके समान धरती पर कोई अन्य राजा नहीं हुआ था । वह महान् वीर और अत्यन्त सुन्दर मानों कामदेव का अवतार बना हुआ था ॥ ३ ॥ वह राजा एक दिन शिकार के लिए गया और उसने रीछ, नीलगाय, हिरण आदि मारे । वह इश्कावती नगर के पास आ निकला और नगर का सौंदर्य देखकर प्रसन्न हो उठा ॥ ४ ॥ जिस राजा की नगरी इतनी सुन्दर है उसकी स्त्री कितनी

तिह नारि उजगरी। जिह किह बिधि तिह रूप निहरियै। नातर अतिथ इही ह्वै मरियै ॥ ५ ॥ बस्त्र उतारि मेखला डारी। भूखन छोरि भिभूति सवारी। सभ तन भेख अतिथ का धारा। आसन आन दुआर तिह मारा ॥ ६ ॥ केतक बरस तहाँ बिताए। राज तरुनि के दरस न पाए। कितक दिनन प्रतिबिंबु निहारा। चतुर भेद सभ गयो बिचारा ॥ ७ ॥ तरुनी खरी सदन आनंद भरि। जल प्रतिबिंब परा तिह सुंदरि। तही सुघर तिह ठाढ निहारा। जानि गयो सभ भेद सुधारा ॥ ८ ॥ तियहु ताहि प्रतिबिंबु लखा जब। इह बिधि कहा चित्त भीतर तब। इहु अतियत कोई राजकुमारा। पारबतीस अरि को अवतारा ॥ ९ ॥ रानी बोलि सुरंगिया लीना। अति ही दरब गुपत तिह दीना। निजु ग्रहि भीतरि सुरंगि दिवाई। काहो तही न किनहूँ पाई ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ सखी तिसी मारग पठी तहीं पहूँची जाइ। गहि जाँघन ते लै गई चला न (मू०ग्रं०१३०३) भूप उपाइ ॥ ११ ॥ ॥ चौपई ॥ गहि त्रिप को लै गई सखी तह। रानी हुती बिलोकति मग जह। दिया मिलाइ मित्र ताको इन। मन

सुन्दर होगी। जैसे भी हो उसे देखा जाय अन्यथा यहीं फ़कीर बनकर मर जाया जाय ॥ ५ ॥ उसने वस्त्र उतारकर मेखला धारण की और गहनों को त्याग भभूत (शरीर पर) धारण कर ली। साधु का पूर्ण वेश बना कर वह राजा के दरवाजे पर आ बैठा ॥ ६ ॥ वहाँ कितने ही साल उसने बिता दिए पर राज-स्त्री का दर्शन न पा सका। कितने ही दिनों बाद उस विचारशील चतुर ने उसका प्रतिबिंब देखा ॥ ७ ॥ वह तरुणी आनन्दपूर्वक घर में खड़ी थी तो उसका प्रतिबिंब जल में पड़ा। उस सुन्दर व्यक्ति ने वहीं खड़े होकर देखा और सारे रहस्य को समझ गया ॥ ८ ॥ स्त्री ने भी जब उसका प्रतिबिंब देखा तो मन में कहा कि यह तो कोई राजकुमार और कामदेव का अवतार जान पड़ता है ॥ ९ ॥ रानी ने एक सुरंग बनानेवाले को बुलाया और उसे अपार द्रव्य गुप्त रूप से दिया। अपने घर में सुरंग बनवाई और सुरंग निकलवाने का किसी को पता भी न चल सका ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ उसी मार्ग से उसने सखी को भेजा जो उसे जंघाओं से पकड़कर ले गई और राजा जान भी न सका ॥ ११ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह सखी उसे पकड़कर वहाँ ले गई जहाँ रानी उसका रास्ता देख रही थी। उसने इसका मित्र मिला दिया और उन दोनों ने मनमाना

मानत रति करी दुहू तिन ॥ १२ ॥ भाँति भाँति चुंबन दुहूँ लीने । अनिक अनिक आसन त्रिय दीने । अस लुभधा राजा को चित्ता । जस गुनि जन सुनि स्रवन कबित्ता ॥ १३ ॥ रानी कहत बचन सुनु मीता । तौसौ बधा हमारा चीता । जब ते तव प्रतिबिंबु निहारा । तबते मन हठ पर्‍यो हमारा ॥ १४ ॥ नितिप्रति चहै तुमी संग जाऊँ । मात पिता की कानि न ल्याऊँ । अब किछु अस पिय चरित्र बनैयै । लाज रहै तोहि पति पैयै ॥ १५ ॥ छोरि कथा तिह भूप सुनाई । निजु त्रिप ताकी कथा जताई । मैंहो रास्ट्र देस को राजा । तव हित भेस अतिथ को साजा ॥ १६ ॥ नैन लगे तुम सौ हमरे तब । तव प्रतिबिंबु लखे जल महि जब । तव मुरि जब प्रतिबिंबु निहारा । गयो मारि तुहि मदन कटारा ॥ १७ ॥ मुहि लखि धीरज न तुमरा रहा । सुरंगि खोदि सखियन अस कहा । सो गहि मुहि गी तीर तिहारी । चहत जु थो सो भई पयारी ॥ १८ ॥ दुहूँ बैठ इक मंत्र बिचारा । मैं राजा लखि ग्यो रखवारा । पिय पठाइ ग्रहि ऐस उचारी । लोन

रतिक्रिया की ॥ १२ ॥ विभिन्न प्रकार से दोनों ने चुंबन लिये और अनेकों आसन लगाए । उसने राजा का चित्त उसी प्रकार मोहित कर लिया जैसे गुणीजनों का चित्त काव्य सुनकर मोहित हो जाता है ॥ १३ ॥ रानी ने कहा, हे मित्र ! मेरा मन तुम्हारे में अनुरक्त है । जबसे मैंने तुम्हारा प्रतिबिंब देखा है, तबसे मेरा मन मान नहीं रहा है और हठी हो गया है ॥ १४ ॥ मन चाहता है कि नित्य मैं तुम्हारे साथ ही जाऊँ और माता-पिता की भी लज्जा न मानूं । हे प्रिय ! अब कुछ ऐसा प्रपंच करो जिससे लाज भी रह जाय और तुम्हारे जैसा पति भी मिल जाय ॥ १५ ॥ उस राजा ने तब सारा वृत्तांत कह सुनाया और स्वयं राजा होने के बारे मे भी बता दिया । मैं राष्ट्र देश का राजा हूँ और तुम्हारे लिए मैंने साधु का वेश धारण किया है ॥ १६ ॥ मेरी आँखें तुमसे तभी से लगी हैं जबसे मैंने जल में तुम्हारा प्रतिबिंब देखा है । तुमने भी जब मेरे प्रतिबिंब को देखा तो तुम्हें भी कामदेव कटार मार गया ॥ १७ ॥ मुझे देखकर तुम्हारा भी धैर्य न रहा और तुमने भी सुरंग खोदकर सखियों से कहा । वह भी मुझे पकड़कर तुम्हारे पास ले गई और फिर हे प्रिय ! जो चाहती थी वही हुआ १८ दोनों ने बैठकर एक मंत्रणा की उस राजा ने कहा कि मुझे रक्षक देख गया है रानी ने प्रिय को निकालकर इस प्रकार

लेत त्रिप नार तिहारी ॥ १९ ॥ सुनत स्रवन सभ जन मिलि आए । आनि तवन कह बचन सुनाए । किह निमित्त छाडत हैं देही । सुनि राजा की नारि सनेही ॥ २० ॥ सुनु राजा इक दिज मारियो मुहि । लोन लेऊँगी साच कहूँ तुहि । जो धन हमरे धाम निहारहु । सो सभ गाडि गोरि महि डारहु ॥ २१ ॥ होरि रहे सभ एक न मानी । परी भोहरा भीतर रानी । आस पास लै लोन बिथारो । जो धन हुतो गाडि सभ डारो ॥ २२ ॥ सुरंगि सुरंगि रानी तह आई । बैठे जहाँ मीत सुखदाई । ताको संग लौ तही सिधारो । मूड़ लोग कछु गति न बिचारी ॥ २३ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ छितालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३४६ ॥ ६४५१ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ संतालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ जह हम दिसा उत्तरा सुनी । राजा तहिक बसत थो गुनी । कलगीराइ जाहि जग भाखत । नाना देस

कहना शुरू किया कि हे राजन् ! तुम्हारी स्त्री नमक में गल जाना चाहती है ॥ १९ ॥ यह सुनकर सभी दौड़े आए और उससे आकर कहने लगे कि हे राजा की प्रिय स्त्री ! तुम किस कारण से शरीर छोड़ रही हो ?॥ २० ॥ हे राजन् ! सुनो, मैंने एक ब्राह्मण को मार दिया है, इसलिए मैं नमक अवश्य लूँगी (और उसमें गल जाऊँगी) । मेरे घर में जो भी द्रव्य है उसे क़ब्र में गाड़ दो ॥ २१ ॥ सभी रोक रहे थे पर उसने एक भी नहीं मानी और वह रानी तहखाने में चली गई । उसने नमक आसपास बिखेर दिया और जितना धन था उसे गाड़ दिया ॥ २२ ॥ सुरंग सुरंग से ही रानी वहाँ आ पहुँची जहाँ उसका सुखदायक मित्र बैठा था । वह उसे लेकर वहाँ से चल दी और मूर्ख लोग उसकी चाल को समझ ही नहीं सके ॥ २३ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ छियालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३४६ ॥ ६४५१ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ सैंतालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ जिधर उत्तर दिशा कही-सुनी जाती है, वहाँ एक गुणी

कानि तिह् राखत ।। १ ।। (मू०ग्रं०१३०४) भीतमती तिह नारि बिराजै । जाहि बिलोकि चंद्रमा लाजै । ताकी एक लच्छिमिनि दासी । दुरबल देह् घड़ी अबिनासी ।। २ ।। तासौ नारि हेतु अति मानै । मूढ़ न रानी क्रिआ पछानै । गुपत लेत दासी सु छिमाही । बुरी बुरी तिह देत उगाही ।।३।। तिह रानी अपनी करि मानै । मूरख ताँहि जसूस न जानै । परै बात ताकह् जे स्रवनन । लिखि पठवै ततछिन राजा तन ।। ४ ।। हुते दोइ दासी के भाई । बिरध दंत कछु कहा न जाई । स्याम बरन इक दुतिय कुरूपा । आखैं जानु सुरन के कूपा ।। ५ ।। बगल गंधि तिन ते अति आवै । बैठन निकट न कोई पावै । चेरी भ्रात जानि हित मानै । मूढ़ नारि कछु क्रिया न जानै ।।६।। तह इक हुती जाटि की नार । मै न कहत तिह नाम उचार । जउ तिह नाम चेरि सुनि पावै । तह ते ताँहि टूकरा जावै ।। ७ ।। तिन इस्त्री इह भाँत बिचारी । दासी मूड़ ह्रिदै महि धारी । भाइ खरचु कछु माँगत तेरे । गुहज पठैयै करि करि मेरे ।। ८ ।। तब

राजा था । उसे संसार कलगीराय के नाम से जानता था और अनेको देश उसकी आन मानते थे ।। १ ।। उसकी शोभायुक्त स्त्री भीतमती थी जिसे देखकर चन्द्रमा भी लज्जित होता था । लक्ष्मणी नामक उसकी दासी थी जिसकी देह परमात्मा ने दुर्बल बनाई थी ।। २ ।। वह नारी उससे अत्यन्त प्रेम करती थी और मूर्ख रानी उसके कार्य को नहीं जानती थी । वह दासी अर्द्धवार्षिक वेतन लेती थी और बुरी-बुरी खबरें (राजा को) दिया करती थी ।। ३ ।। रानी उसे अपना समझती थी और मूर्खता-वश जासूस नहीं जानती थी । जो बात उसके कानों में पड़ती थी वह तत्काल राजा को लिख भेजती थी ।। ४ ।। उस दासी के दो भाई थे जो बड़े-बड़े दाँतों वाले थे । एक तो श्याम वर्ण था और ऊपर से कुरूप थे और उनकी आँखें मानों कुएँ के समान थीं ।। ५ ।। उनके पास से इतनी दुर्गन्ध आती थी कि उनके पास कोई बैठ नहीं पाता था । वह रानी उन्हें दासी का भाई समझकर उनका हित करती थी और इस प्रकार वह मूर्ख स्त्री कुछ नहीं समझती थी ।। ६ ।। वहाँ एक जाट की स्त्री थी जिसका मैं नाम नहीं बताता । जब दासी उसको आया सुनती तो उसे कुछ खाने को देती ।। ७ ।। उस स्त्री ने कुछ सोचा और उस दासी ने भी उसे मन मे बसा लिया । उसने कहा कि मैं जब तुमसे माँगती हूँ तो तुम छिपाकर

चेरी ऐसो तन कियो । डारि दरब भोजन महि दियो । भाइ निमित खरची पठ दई । सो लै नारि दरबु घर गई ॥ ९ ॥ आधो धन तिह भ्रातन दीना । आधो काढि आपि लिय लीना । मूरख चेरी भेद न पावै । इह चरित्र तन मूंड मुँडावै ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ संतालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३४७ ॥ ६४६१ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ अठतालीस चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ गौरिपाल इक सुना नरेसा । मानत आनि सकल तिह देसा । गौरादेई नारि तिह सोहै । गौरावती नगर तिह कोहै ॥ १ ॥ ताकी त्रिया नीच सेतो रति । भली बुरी जानत न मूढ़ मति । इक दिन भेद भूप लखि लयो । त्रासित जारु तुरतु भजि गयो ॥ २ ॥ गौरादे इक चरित बनायो । लिखा एक लिखि तहाँ पठायो । इक राजा की जान सु रीता । सो ताँकौ ठहरायो मीता ॥ ३ ॥ तिसु

मेरे हाथ कुछ बाहर भेज दिया करो ॥ ८ ॥ तब उस दासी ने ऐसा ही किया और भोजन में द्रव्य छिपाकर उसे दे दिया । उसने अपने भाइयों के लिए खर्च भेज दिया जिसे लेकर वह स्त्री अपने घर को चली गई ॥ ९ ॥ उसने आधा धन तो भाइयों को दे दिया और आधा स्वयं निकाल लिया । मूर्ख दासी भेद नहीं समझ पा रही थी और इस प्रकार अपना सिर मँड़वा रही थी ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ सैंतालीसवे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३४७ ॥ ६४६१ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ अड़तालीसवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ गौरीपाल एक राजा था जिसका सम्मान सभी देश करते थे । उसकी सुन्दर स्त्री गौरीदेवी थी और उसके नगर का नाम गौरावतीनगर था ॥ १ ॥ उसकी स्त्री एक नीच के साथ रत थी जो कि भला-बुरा कुछ नहीं जानती थी । राजा ने एक दिन इस भेद को देख लिया और उसका डरा हुआ यार भाग खड़ा हुआ ॥ २ ॥ गौरीदेवी ने एक प्रपंच किया और एक पत्र लिखकर भेज दिया । उस व्यक्ति को राजा की एक खरीदी हुई स्त्री (दासी) का मित्र ठहरा दिया ॥ ३ ॥

मुख ते लिखि लिखा पठाई। जहाँ हुते अपने सुखदाई। को दिन रमत ईहाँ ते रहना। दै करि पठिवहु हमरा लहना ॥४॥ सो पत्री न्रिप के कर आई। जानी मोरि सु रीति पठाई। जड़ निजु त्रिय को भेदन पायो। नेह त्याग तिह साथ गवायो ॥ ५ ॥ सुघर (मू०ग्रं०१३०५) हुतौ तौ भेव पछानत। त्रिय की घात सत्ति करि जानत। मूढ़ राव कछु क्रिया न जानी। इह बिधि मूँड मूँडिगी खानी ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संवादे तीन सौ अठतालीस चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३४८ ॥ ६४६७ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ उनचास चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु राजा इक कथा प्रकासौ। तुमरे जिय का भरम बिनासौ। उग्रदत्त इक सुनियत राजा। उग्रावती नगर जिह छाजा ॥ १ ॥ उग्रदेइ तिह धाम दुलारी। ब्रहम बिशन शिव तिहूँ सवारी। अवरि न असि कोई नारि बनाई। जैसी यह राजा की जाई ॥ २ ॥ अजबराइ इक तह खतिरेटा। इशक मुशक के साथ लपेटा। राजसुता जब तिह

उसकी ओर से लिख दिया कि हे मेरे सुखदायक प्रिय! मुझे यहाँ कितने दिन रहना पड़ेगा? मेरा लिया हुआ धन वापस क्यों नही भेजते? ॥ ४ ॥ वह पत्र राजा के हाथ आ गया और उसने समझा कि इसे मेरी क्रीत् स्त्री ने भेजा है। मूर्ख ने उसका भेद नहीं समझा और अपना स्नेह उसके साथ समाप्त कर दिया ॥ ५ ॥ यदि वह अक़्लमंद होता तो रहस्य को समझता और स्त्री के दाँव को पहचानता। मूर्ख राजा ने कुछ न समझा और इस प्रकार वह उसे मूर्ख बना गई ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ अड़तालीसवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३४८ ॥ ६४६७ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ उनचासवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजन्! सुनो, एक कहानी कहता हूं और तुम्हारे भ्रम का निवारण करता हूँ। उग्रावती नगर का राजा उग्रदत्त था ॥ १ ॥ उग्रदेवी उसकी पुत्री थी जिसे मानों ब्रह्मा, विष्णु और शिव ने स्वयं बनाया था। जैसी यह राजा की पुत्री थी वैसी कोई अन्य स्त्री नहीं बनाई गई थी ॥ २ ॥ अजबराय वहाँ एक क्षत्रिय पुत्र था जो इश्क-

लखि पायो। पठै सहचरी एकरि मँगायो ॥ ३ ॥ काम भोग माना तिह संगा। लपटि लपटि ताके तर अंगा। इक छिन छैल न छोरा भावै। मात पिता तें अधिक डरावै ॥ ४ ॥ इक दिन करी सभन मिजमानी। संबलखार डारि करि स्यानी। राजा रानी सहित बुलाए। दे दोऊ बिखि स्वरग पठाए ॥ ५ ॥ आपु सभन प्रति ऐस उचारा। बर दीना मुहि कह व्रिपुरारा। रानी सहित नराधिप घाए। मुर नर के सभ अंग बनाए ॥ ६ ॥ अधिक मया मों पर शिव कीनी। राज समग्री सभ मुहि दीनी। भेद अभेद न काहू पायो। सीस सुता के छत्र फिरायो ॥ ७ ॥ कितक दिवस इह भाँति बिताई। रोम मित्र के दूर कराई। त्रिय के बस्त्र सगल दै वाकौ। बर आन्यों इस्त्री करि ताकौ ॥८॥ ॥दोहरा॥ मात पिता हनि पुरख बन बर्यो मित्र त्रिय सोइ। राज करा इह छल भए भेद न पावत कोइ ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ उनचास चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३४९ ॥ ६४७६ ॥ अफजूं ॥

मुश्क से सराबोर था। राजकुमारी जब उसे देखा तो दासी भेजकर उसे पकड़ मँगाया ॥ ३ ॥ उसके अंगों के साथ लिपट-लिपटकर उसने काम-क्रीड़ा की। वह एक दिन के लिए भी उसे छोड़ना नहीं चाहती थी पर माता-पिता से अधिक डरती भी थी ॥ ४ ॥ एक दिन उसने मेजबानी की और भोजन में उस चतुरा ने जहर मिला दिया। राजा को रानी-समेत बुलाया और दोनों को जहर दे स्वर्ग भेज दिया ॥ ५ ॥ स्वय उसने सबसे कहा कि शिव ने मुझे वरदान दिया है। शिव ने रानी-समेत राजा को मार दिया और मेरे सभी अंग पुरुषों के बना दिए हैं ॥ ६ ॥ शिव ने मुझ पर अत्यधिक कृपा की है और राज्य-सामग्री सब मुझे प्रदान की है। किसी ने भेद-अभेद न समझा और पुत्री के सिर पर छत्र झुला दिया ॥ ७ ॥ कितने ही दिन उसने ऐसे गुजारने पर उस मित्र के सभी बाल साफ़ करवा दिए। उसे स्त्री के वस्त्र पहनाकर उसे स्त्री बनाकर उसका वरण कर लिया ॥ ८ ॥ ॥ दोहा ॥ माता-पिता को मार स्वय पुरुष बन मित्र को स्त्री बना लिया। इस प्रकार इस प्रपंच से राज्य किया और किसी को भेद पता न चल सका ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ उनचासवे चरित्र की शुभ सत समाप्ति ३४९ ६४७६ अफजू

अथ तीन सौ पचास चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुजनावती नगर इक पूरब । सभ शहिरन ते हुतो अपूरब । सिंघ सुजान तहाँ को राजा । जिह सम बिधनै और न साजा ॥ १ ॥ स्री नवजोबन दे तिह नारी । घड़ी न जिह सी ब्रहम कुमारी । जो अबला तिह रूप निहारै । मन क्रम बच इह भाँति उचारैं ॥ २ ॥ (मू०ग्रं०१२०६) इंद्र धाम है ऐस न नारी । जैसी न्रिप की नारि निहारी । अस सुंदर इक शाह सपूता । जिह लखि प्रभा लजत पुरहूता ॥ ३ ॥ यह धुनि परी तरुनि के कानन । तब तें लगी चटपटी भामनि । जतन कवन मैं आजु सु धारूँ । उहि सुंदर कह नैन निहारूँ ॥ ४ ॥ नगर ढँढोरा नारि फिरायो । सभहिन कह इह भाँति सुनायो । ऊच नीच कोई रहै न पावै । प्रातकाल भोजन सभ खावै ॥ ५ ॥ राजहि बात कछू नहि जानी । निवता दियो लखयो त्रिय मानी । भाँति भाँति पकवान पकाए । ऊच नीच सभ निवति बुलाए ॥ ६ ॥ भोजन खान जनावहि बिगसहि । त्रिय की द्रिशटि तरे ह्वै निकसहि ।

तीन सौ पचासवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ सब शहरों में सुन्दर पूर्व में सुजनावती नामक एक नगर था । सुजानसिंह वहाँ का राजा था जिसके समान विधाता ने अन्य किसी को नहीं बनाया था ॥ १ ॥ नवयौवनदेवी उसकी स्त्री थी जिसके समान ब्रह्मा ने अन्य कोई स्त्री नहीं बनाई थी । जो स्त्री उसका रूप देखती थी, वह मन-वचन-कर्म से कह उठती ॥ २ ॥ जैसी राजा की स्त्री है ऐसी स्त्री तो इन्द्र के घर में भी नहीं है । एक धनी का सुन्दर पुत्र था जिसे देख इन्द्र भी लजाता था ॥ ३ ॥ उसके बारे में युवती को पता लगा तो उसके मन में हलचल हो उठी । वह सोच रही थी कि मैं कौन सा यत्न करूँ जिससे उस सुन्दर को अपनी आँखों से देख सकूँ ॥ ४ ॥ उस स्त्री ने नगर में ढिंढोरा पिटवा दिया और सबसे कहलवा दिया कि कोई भी ऊँच-नीच न छूटे और सब मेरे यहाँ भोजन खाएँ ॥ ५ ॥ राजा मन में कुछ नहीं जाना और समझा कि स्त्री ने सामान्य तौर पर सबको भोजन के लिए बुलाया है । भाँति-भाँति के पकवान बनवाए गए और ऊँच-नीच सबको बुलाया गया ६ भोजन खाने के लिए जितने लोग

ऐंठीराइ जबायो तहाँ। बैठि झरोखे रानी जहाँ ॥ ७ ॥
रानी निरखि चीन तिह गई। बहु बिधि ताँहि सराहत भई।
धंनि धंनि मुख ते बहुरि उचारा। जिन करतै इह कुअर सवारा ॥८॥ लीना सखी पठाइ तिसै घरि। काम भोग किय लपटि लपटि करि। एक तरुन अरु भाँग चढ़ाई। चार पहरि निसि नारि बजाई ॥ ९ ॥ ऐंठी सौ बधि गयो सनेहा। जो मुहि कहे न आवत नेहा। भेद सिखै तिह धाम पठायो। आधी रैनि नरेसहि घायो ॥ १० ॥ प्रात चली जरबे के राजा। दरबु लुटावत नारि त्रिलाजा। द्रिशट बंधु सभ की असि करी। सभहू लखा अबला जरि मरी ॥ ११ ॥ निकसि जारि संग आपु सिधारी। भेद न लखैं पुरख अरु नारी। द्रिशटि बंद करत अस भई। मूँडि मूँडि सभहिन को गई ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संवादे तीन सौ पचासवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३५० ॥ ६४८८ ॥ अफजूं ॥

प्रसन्नतापूर्वक आ रहे थे वे सब उस स्त्री की नजर से गुजर रहे थे। ऐंठीराय तब वहाँ आया जहाँ रानी झरोखे में बैठी थी ॥ ७ ॥ रानी उसे देखकर पहचान गई और विविध प्रकार से उसकी प्रशंसा करने लगी। वह उस कर्ता के लिए धन्य-धन्य कहने लगी जिसने उसे बनाया था ॥ ८ ॥ सखी को भेजकर उसे घर बुलवा लिया और लिपट-लिपटकर उससे काम-क्रीड़ा की। एक तो वह तरुण था दूसरे उसने भाँग चढ़ा रखी थी। उसने चार पहर तक उस स्त्री को भोगा ॥ ९ ॥ उसका ऐंठीराय से इतना स्नेह बढ़ गया कि कहा नहीं जा सकता। उसे भेद समझाकर घर भेज दिया और आधी रात को राजा को मार डाला ॥ १० ॥ प्रातः वह स्त्री निर्लज्जतापूर्वक द्रव्य लुटाकर राजा के साथ जलने के लिए चल पड़ी। सब बंधुओं की नजर को यही लगा कि स्त्री जल मरी है ॥ ११ ॥ वह निकलकर यार के साथ चली गई। नारी और पुरुष भेद न जान सके। उसने सबकी दृष्टि बाँध दी और सबको ठग गई ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ पचासवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति ॥ ३५० ॥ ६४८८ ॥ अफजूं ।

अथ तीन सौ इक्यावन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनो भूप इक कहौ कहानी । किनहू सुनी न आगे जानी । भूप सु बस्त्र सैन इक सोहै । ताके सम न नराधिप को है ॥ १ ॥ धाम सु बस्त्रमती तिह नारी । बस्त्रावती नगर उजियारी । अबलचंद तिह ठा इक रावत । रानी सुना एक दिन गावत ॥ २ ॥ बधि गयो तासौ ऐस सनेहा । जस सावन को बरसत मेहा । एक जतन तिन नारि बनायो । पठै सखी तिह बोलि पठायो ॥ ३ ॥ काम भोग तासौ (मू०पं०१३०७) द्रिढ़ कीना । भांति भांति पिय को रस लीना । राजपाट सभ ही सु बिसार्यो । ताके हाथ बेचि जिय डार्यो ॥ ४ ॥ सभ अतीत ग्रिहि निवति पठाए । बस्त्र भगौहैं तिस पहिराए । आपहु बस्त्र भगौहे धरिकै । जात भई तिह साथ निकरिकै ॥ ५ ॥ चोबदार किनहूं न हटाई । सभहिन करि जोगी ठहराई । जब बहु जात कोस बहु भई । तब राजै पाछै सुध लई ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ इकयावन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३५१ ॥ ६४६४ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ इक्यावनवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजन् ! एक कहानी कहता हूँ जो पहले कभी भी कही-सुनी नहीं गई होगी । वस्त्रसेन एक राजा था जिसके समान अन्य कोई राजा नहीं था ॥ १ ॥ उसके घर में उसकी स्त्री सुवस्त्रमती थी जो सारे बस्त्रावती नगरी का प्रकाश थी । वहाँ अवलचन्द्र नामक एक रावत था जिसे रानी ने एक दिन गाते हुए सुना ॥ २ ॥ सावन मे बरसते घने मेघ के समान उससे उसका प्रगाढ़ प्रेम हो गया । उस स्त्री ने एक दिन प्रयासपूर्वक एक सखी को भेजकर उसे बुला लिया ॥ ३ ॥ उससे दृढ़तापूर्वक कामक्रीड़ा की और विभिन्न प्रकार से प्रिय का रस लूटा । राजपाट सब भुला दिया और अपना मन उसके हाथों बेच ही दिया ॥ ४ ॥ उसने सब साधुओं को घर में निमंत्रण दिया और उसे भी भगवे वस्त्र धारण करवा दिये । स्वयं भी भगवे वस्त्र धारण कर उसके साथ निकल गई ॥ ५ ॥ किसी भी पहरेदार ने मना नहीं किया और

सबने उन्हें योगी ही समझा। जब वह अनका ग्राम चली गई तब राजा को पता चल पाया ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ इक्यावनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३५१ ॥ ६४६४ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ बावन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ इशकतंबोल शहिर जह सोहै। इशक तंबोल नरिस तह को है। इशकपेच दे ताको रानी। सुंदरि देस देस महि जानी ॥ १ ॥ काजी बसत एक तह भारो। आरफदीन नाम उजियारो। सुता जेब तुल निसा तवन की। ससि को सी दुति लगत जवन को ॥ २ ॥ तह गुलजारराइ इक नामा। थकित रहत निरखत जिह बामा। सो काजी की सुता निहारा। मदन बान तन ताँहि प्रहारा ॥ ३ ॥ हितु जानि इक सखी बुलाई। ताकहु कहा भेद समझाई। जौ ताकह तैं मोहि मिलावैं। मुख माँगे सोई बरु पावैं ॥ ४ ॥ सखी गई तब ही ताके प्रति। आनि मिलाइ दयो तिन सुभ मति। भाँति भाँति दुहूँ करे बिलासा। तजि करि मात पिता को त्रासा ॥ ५ ॥ अस गो अटकि तवन

तीन सौ बावनवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ इश्कतंबोल (इस्नम्बुल) नामक नगर में इश्कतंबोल नामक राजा था। उसकी रानी इश्कपेंच देवी थी जो देश-देशान्तरों में सुन्दर मानी जाती थी ॥ १ ॥ वहाँ एक बड़ा क़ाज़ी भी रहता था जिसका नाम आरिफ़दीन था। जेबतुलनिसा उसकी पुत्री थी जो चन्द्रमा की चाँदनी के समान लगती थी ॥ २ ॥ वहाँ गुलजारराय नामक एक व्यक्ति था जिसे स्त्रियाँ देख-देखकर थक जाती थीं। उसे क़ाज़ी की पुत्री ने देखा और उसे कामदेव बाण मार गया ॥ ३ ॥ उसने अपनी एक हितैषिणी सखी बुलाई और उसे सारा भेद समझाया। यदि तुम मुझे उससे मिला दो तो मुँह माँगा इनाम पाओगी ॥ ४ ॥ सखी तुरन्त उसकी ओर गई और उसे उससे ला मिलाया। उन्होंने माता-पिता का भय त्यागकर विभिन्न प्रकार से भोग-विलास किया ॥ ५ ॥ वह तरुणी उसमें

पर तरनी। जोरि न सकत पलक सौ बरनी। रैनि दिवस तिह प्रभा निहारै। धन्य जनम करि अपन बिचारै ॥ ६ ॥ धनि धनि तवन दिवस बडभागी। जिह दिन लगन तुमारी लागी। अब कछु ऐस उपाव बनैयै। जिह छल पिय के संग सिधैयै ॥ ७ ॥ बोलि भेद सभ पियहि सिखायो। रोमनास तिह बदन लगायो। सभ ही केस दूर करि डारे। पुरख नारि नहि जात बिचारे ॥ ८ ॥ सभ तिय भेस धरा प्रीतम जब। ठाढा भयो अदालति मै तब। कहि मुरि चित काजी सुत लीना। मैं चाहत ता कौ पति कीना ॥ ९ ॥ काजी काढि किताब निहारी। देखि देखि करि इहै उचारी। जो आवैं आपन ह्वै राजी। ताकह कहि न सकत कछु काजी ॥ १० ॥ (पू०ग्रं०१३०८) यह हमरे सुत की भी दारा। हम याकी करिहैं प्रतिपारा। भेद अभेद जड़ कछू न चीनी। निरखति शाह मुहर करि दीनी ॥ ११ ॥ मुहर कराइ धाम वह गयो। पुरश भेस धरि आवत भयो। जब दिन दुतिय कचहिरी लागी। पातशाह बैठे बडभागी ॥ १२ ॥ काजी

इतनी अनुरक्त हो गई कि अब वह उसे देखती हुई पलक भी नहीं झपकती थी। रात-दिन उसी की प्रभा देखती रहती थी और अपना जन्म "धन्य-धन्य" माना करती थी ॥ ६ ॥ वह दिन धन्य है जिस दिन मेरी लगन तुम्हारे साथ लगी। अब कुछ ऐसा उपाय किया जाना चाहिए जिससे इस प्रिय के साथ भाग जाया जाय ॥ ७ ॥ उसने प्रिय को सब समझा दिया और केशनाशक उसके शरीर पर लगा दिया। उसके सभी बाल नष्ट कर दिए और अब उसके पुरुष नारी के भेद को नहीं जाना जा सकता था ॥ ८ ॥ उस प्रियतम ने जब पूर्ण रूप से स्त्री-वेश धारण कर लिया तो आकर अदालत में खड़ा हो गया। वह (स्त्री-वेश में) कहने लगा कि मेरा चित्त क़ाजी के पुत्र ने चुरा लिया है, मैं उसे पति के रूप मे वरण करना चाहता हूँ ॥ ९ ॥ क़ाजी ने किताब निकालकर देखी और देख-देखकर कहा कि जो स्वयं खुशी से आना चाहता है उसमें क़ाजी कुछ नहीं कर सकता ॥ १० ॥ यह मेरे पुत्र की पत्नी हो गई है और अब मैं इसका पोषण करूंगा। कुछ भी भेद-अभेद को न समझा और बादशाह ने भी देखते-देखते मुहर लगा दी ॥ ११ ॥ मुहर कराकर वह पुरुष-वेश मे घर आ पहुँचा। जब दूसरे दिन कचहरी लगी तो बादशाह दरबार में बैठा १२ जह काजी कोतवाल था वह पुरुष वेश धारण कर वह।

कोटवार थो जहाँ । पुरख भेस धरि आयो तहाँ । संग सुता काजी की आनी । शाह सुनत इह भाँति बखानी ॥ १३ ॥ निरखहु काजि सुता मुहि बरा । आपहि रीझि मदनपति करा । वहै मुहर हजरतिहि दिखाई । जो इस्त्री ह्वै आपु कराई ॥ १४ ॥ निरखत मुहर सभा सभ हसी । काजि सुता मित्रवा ग्रहि बसी । काजी हूँ चुप ह्वै करि रहा । न्याइ किया तैसा फल लहा ॥ १५ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल सौ काजी छला बसी मित्र के धाम । लखन चरित्र चतुरान को है न किसी को काम ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ बावन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३५२ ॥ ६५०६ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ त्रिपन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनहु राज इक कथा उचारो । जिय तुमरो को भरम निवारो । बिशनावती नगर इक दच्छिन । बिशनचंद तह भूप बिचच्छन ॥ १ ॥ उग्र सिंघ तह शाहु

आ गया । साथ में वह क़ाज़ी की पुत्री को ले आया और बादशाह को सुनाते हुए कहा ॥ १३ ॥ देखिए क़ाज़ी की पुत्री ने मेरे साथ विवाह कर लिया है और स्वयं ही रीझकर कामदेव के समान पति पाया है । उसने वही मुहर बादशाह को दिखा दी जो उसने स्वयं स्त्री बनकर लगवाई थी ॥ १४ ॥ मुहर देखकर सारी सभा हँस पड़ी और क़ाज़ी की पुत्री अपने मित्र के घर में बस गई । क़ाज़ी भी चुप होकर रह गया और जैसे उसने न्याय किया था वैसा फल पाया ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रपंच से क़ाज़ी को छलकर वह मित्र के घर में बस गई । चतुर स्त्रियों के अनेकों प्रपंच हैं और वे भी किसी से कम नहीं हैं ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ बावनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३५२ ॥ ६५०६ ॥ अफ़जूं ॥

तीन सौ तिरपनवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजन् ! सुनो, एक कहानी कहता हूँ और तुम्हारे मन का भ्रम दूर करता हूँ । दक्षिण में विष्णुवती एक नगरी का विष्णुचन्द्र नामक विलक्षण राजा था १ वहाँ उग्रसिंह नामक एक धनी

भनिज्जै । कवन भूप पटतर तिह दिज्जै । स्त्री रन झूमकदे तिह बाला । चंद्र लयो जाते उजियाला ॥ २ ॥ सुंभकरन कह हुती बिवाही । सो दिन एक निरख न्रिप चाही । जतन थक्यो करि हाथ न आई । कोप बढा अति ही नरराई ॥३॥ देखहु इहु अबला का होया । जिह कारन हम अस छल कीया । रंक छोरि करि राव न भायो । बहु भ्रितन कह तहाँ पठायो ॥ ४ ॥ सुनत बचन चाकर तह गए । घेर लेत ताको घर भए । ताके पति कह हना रिसाई । भाजि गई त्रिय हाथ न आई ॥ ५ ॥ त्रितक नाथ जब नारि निहार्यो । इहै चंचला चरित बिचार्यो । कवन जतन राजा कह मरियै । अपने पति को बैर उतरियै ॥ ६ ॥ लिख पतिया पठई इक तहाँ । बैठो हुतो नराधिप जहाँ । जो मोकह रानी तुम करहु । तो मुहि भूप आजु ही बरहु ॥ ७ ॥ सुनत बचन न्रिप बोलि पठाई । पर को (मू०ग्रं०१३०६) त्रिय रानी ठहराई । जिह तिह बिधि ताको ग्रहि आनो । भेद अभेद जड़ कछु न पछानो ॥ ८ ॥ संग अपने ताको लै सोयो । चित को भरमु

था जिसके सौन्दर्य की तुलना किसी से नहीं की जा सकती । रणझूमक देवी उसकी पुत्री थी जिससे मानों चन्द्रमा ने भी उजाला लिया हो ॥ २ ॥ सुभकरण से विवाहित उस स्त्री को एक दिन एक राजा ने देखकर चाहना शुरू कर दिया । उसने यत्न किए पर यह उसके हाथ न आई और इसी से इस राजा का क्रोध बढ़ गया ॥ ३ ॥ वह कहने लगा कि इस स्त्री की हिम्मत देखो जिसके लिए मैंने इतना प्रयत्न किया है । गरीब को छोड़ इसे राजा अच्छा नहीं लगा है । उसने बहुत से सेवकों को वहाँ भेजा ॥ ४ ॥ उसकी बातें सुनकर नौकर वहाँ गए और उन्होंने उसके घर को घेर लिया । उसके पति को क्रुद्ध हो मार डाला । वह स्त्री भाग गई और उन लोगों के हाथ में नहीं आई ॥ ५ ॥ जब स्त्री ने अपने स्वामी को मृत देखा तो मन में यह सोचा कि कैसे भी राजा को मारा जाय और अपने पति-वध का बदला लिया जाय ॥ ६ ॥ एक पत्र लिखकर उसने वहाँ भेजा जहाँ राजा बैठा हुआ था । हे राजन् ! यदि तुम मुझे रानी बनाने को तैयार हो तो मुझसे आज ही विवाह कर लो ॥ ७ ॥ यह सुनते ही राजा ने संदेश भिजवा दिया और परकीया स्त्री को रानी बना लिया जैसे-तैसे उसे अपने घर ले आया और मूर्ख ने कुछ भी भेद अभेद न जाना ८ उसको साथ लेकर सोया और चित्त का भ्रम दूर

सकल ही खोयो। कामातुर ह्वै हाथ चलायो। काढि क्रिपान नारि तिन घायो ॥ ९ ॥ न्रिप कह मारि वैसही डारो। ता पर त्यों ही बस्त्र सवारो। आपु जाइ निजु पति तन जली। निरखहु चतुरि नारि की भली ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ बैर लियो निजु नाहि को न्रिप कह दिया सँघारि। बहुरि जरी निजु नाथ सौ लोगन चरित दिखारि ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ त्रिपन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३५३ ॥ ६५२० ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ चौवन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनहु भूप इक कथा नवीनी। किनहूँ लखी न आगे चीनी। राधा नगर पूरब मै जहाँ। रुकमसैन राजा इक तहाँ ॥ १ ॥ स्री दलगाहमती त्रिय ताकी। नरी नागनी तुल्लि न वाकी। सुता सिंधुलादेइ भनिज्जै। परी पदमनी प्रक्रित कहिज्जै ॥ २ ॥ तहिक भवानी भवन भनीजै। को दूसर पटतर तिहि दीजै। देस देस एस्वर तह आवत।

किया। कामातुर होकर उसने हाथ चलाया और कृपाण निकालकर उसे मार डाला ॥ ९ ॥ राजा को मारकर फेंक दिया और उस पर वैसे ही वस्त्र सँवारकर पहना दिये। स्वयं जाकर अपने पति के साथ जल मरी। इस स्त्री की चतुराई देखो ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ अपने पति का बदला लिया और राजा को मार डाला। पुनः लोगों को प्रपंच दिखाकर अपने स्वामी के साथ जल मरी ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ तिरपनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३५३ ॥ ६५२० ॥ अफजूं ॥

तीन सौ चौवनवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ राजन्! एक नयी कहानी सुनो, जिसे पहले कभी देखा, सुना नहीं गया है। पूर्व में जहाँ राधानगर है वहाँ रुकमसेन नामक एक राजा था ॥ १ ॥ दलगाहमती उसकी स्त्री थी जिसके समान मानव एवं नाग-स्त्री कोई भी नहीं थी। सिंधुलादेवी उसकी पुत्री कही जाती थी जो परियों जैसी पदिमनी स्त्री कही जाती थी २। वहाँ भवानी का एक मंदिर था जिसके समान अन्य दूसरा कोई मंदिर नहीं था देश

आनि गवरि कह सीस झुकावत ॥ ३ ॥ भुजबल सिंघ तहाँ न्रिप आयो । भोजराज ते जनुक सवायो । निरखि सिंधुला दे दुति ताकी । मन बच क्रम चेरी भी वाकी ॥ ४ ॥ आगे हुती और सो परनी । अब इह साथ जात नहि बरनी । चित महि अधिक बिचार बिचारत । सहचरि पठी तहाँ ह्वै आरति ॥ ५ ॥ सुनु राजा तैं पर मैं अटकी । भूलि गई सभ ही सुधि घट की । जौ मुहि अब तुम दरस दिखावौ । अंम्रित डारि जनु म्रितक जियावौ ॥ ६ ॥ सुनि सखी बचन कुअर के आतुर । जात भई राजा तहि सातिर । जु कछु कह्यो कहि ताहि सुनायो । सुनि बच भूप अधिक ललचायो ॥ ७ ॥ चित करी किह बिधि तह जैयै । किह छल सौ ताकौ हरि ल्यैयै । सुनि बच भूखि भूप की भागी । तब ते अधिक चटपटी लागी ॥ ८ ॥ भूप सखी तब तही पठाई । इसथित हुती जहाँ सुखदाई । कहा चरित कछु तुमहि बनावहु । जिह छल सदन हमारे आवहु ॥ ९ ॥ एक ढोल लिय कोर मँगावा । बैठि चरम सों बीच मढ़ावा ।

देशान्तरों के राजा वहाँ आते थे और आकर गौरी के समक्ष सिर झुकाते थे ॥ ३ ॥ वहाँ भुजबलसिंह नामक राजा आया जो शोभा में भोजराज से भी सवा गुना था । सिंधुलादेवी उसकी सुन्दरता देखकर मन-वचन-कर्म से उसकी दासी हो गयी ॥ ४ ॥ वह पहले ही किसी अन्य के साथ विवाहित थी, अब वह इसके साथ उसकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता । उसने मन में अधिक सोचकर दुखी होकर एक सखी वहाँ भेजी ॥ ५ ॥ हे राजन् ! सुनो मैं तुम्हारे में अनुरक्त हो गई हूँ और तन की सुधि भी भूल गई हूँ । अब यदि तुम मुझे दर्शन दे दो तो मानो मृतक को अमृत देकर जीवित करने के समान है ॥ ६ ॥ कुँवरि के आतुर वचन सुनकर सखी तत्काल राजा के पास चली गई । जो उसने कहा था उस सखी ने उसे कह सुनाया जिसे सुनकर राजा अत्यधिक ललचा उठा ॥ ७ ॥ उसने सोचा कि कैसे वहाँ जाया जाय और कैसे उसे छलपूर्वक हरण कर ले आया जाय । सब बातें सुनकर राजा की भूख भी उड़ गई और मन में अत्यधिक उलझन बढ़ गई ॥ ८ ॥ राजा ने तब सखी को उसके पास भेजा जहाँ वह सुखदायक बैठी थी । उससे कहा कि तुम ही कुछ प्रपंच बनाओ ताकि हमारे घर आ सको ९ स्त्री ने एक बड़ा नया ढोल मँगवाया और उसे चमड़े से मढ़वा लिया आप उसमें

इसथित आपु तवन महि भई । इह छल (मू०ग्रं०१३१०) धाम मित्र के गई ॥ १० ॥ इह छल ढोल बजावत चली । मात पिता सभ निरखत अली । भेव अभेव न किनहूँ पायो । सभही इह बिधि मूँड मुँडायो ॥ ११ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह चरित्र तन चंचला गई मित्र के धाम । ढोल ढमाको दै गई किनहूँ लखा न बाम ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ चौवन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३५४ ॥ ६५३२ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ पचपन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु राजा इक कथा अपूरब । जो छल किया सुता न्रिप पूरब । भुजंग धुजा इक भूप कहावत । अमित दरब बिप्पन पह द्यावत ॥ १ ॥ अजितावती नगर तिह राजत । अमरावती निरखि जिह लाजत । बिमलमती ताके ग्रहि रानी । सुता बिलासदेइ पहिचानी ॥ २ ॥ मंत्र जंत्र तिन पढ़े अपारा । जिह सम पढ़ न दूसरि नारा । गंग

बैठ गई और इस प्रकार मित्र के घर में चली गई ॥ १० ॥ इस प्रपंच से ढोल बजाती हुई चल दी और माता-पिता, सखियाँ आदि सब देखती रह गईं । कोई भी भेद-अभेद न जान सका और सभी इस प्रकार छले गए ॥ ११ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रपंच से स्त्री मित्र के घर चली गई । वह ढोल, नगाड़े बजाते चली और कोई भी उस स्त्री को न देख सका ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ चौवनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३५४ ॥ ६५३२ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ पचपनवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजन् ! एक अपूर्व कथा सुनो कि पूर्व के राजा की पुत्री ने कैसा प्रपंच किया था । भुजंगध्वज एक राजा था जो ब्राह्मणों को अपरिमित द्रव्य दान में देता था ॥ १ ॥ अजीतवती एक नगरी थी, जिसे देखकर स्वर्गपुरी भी लज्जित होती थी । उस राजा की स्त्री का नाम विमलमति था जिसकी पुत्री विलासदेवी थी २ उसने मंत्र यंत्र इतने अपार पढ़े थे कि उसके समान अन्य कोई स्त्री नहीं थी गंगा

समुद्रहि जहाँ मिलानी । तही हुती तिनकी राजधानी ॥ ३ ॥ निरखि प्रभा तिह जात न कही । रजधानी ऐसी तिह अही । ऊच धौलहर तहा सुधारे । जिन पर बैठि पकरियत तारे ॥४॥ मज्जन हेत तहाँ न्रिप आवत । न्हाइ पूरबले पाप गवावत । तह इक न्हान नराधिप चलो । जोबनवान सिपाही भलो ॥५॥ सो बिलास दे नैन निहारा । मन क्रम बच इह भाँति बिचारा । कै मैं अब याही कह बरिहौ । नातर बूडि गंग महि मरिहौ ॥ ६ ॥ एक सखी लखि हितू सियानी । तासौ चित की बात बखानी । जो ताको तूँ मुझे मिलावै । मुख माँगै जो तो धन पावै ॥ ७ ॥ तब सखि गई तवन के ग्रेहा । पर पाइन असि दियो संदेहा । राजसुता तुमरै पर अटकी । भूलि गई ताकहि सुधि घट की ॥ ८ ॥ सुनि न्रिप बचन भयो बिसमै मन । इह बिधि ताँहि बखाने बैनन । अस किछु करियै बचन सयानी । स्री बिलास दे ह्वै मुर रानी ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ तुम न्रिप भेस नारि को धारहु । भूखन बसतर अंग सु धारहु । भुजंग धुजा कह दै दिखराई । फुनि अंगना महि जाहु छपाई ॥ १० ॥ भूपति बस्त्र नारि के धारे ।

समुद्र से जहाँ मिलती है वहीं इनकी राजधानी थी ॥ ३ ॥ उसकी राजधानी की शोभा देखकर वर्णन नहीं की जा सकती । वहाँ महल इतने ऊँचे थे कि उन पर बैठकर तारों को पकड़ा जा सकता था ॥ ४ ॥ राजा वहाँ स्नान करने आता था और अपने पापों का नाश करता था । वहीं एक यौवनवान और वीर सिपाही नहाने के लिए आया ॥ ५ ॥ विलासदेवी ने उसे आँखों से देखा और मन-वचन-कर्म से सोचा । या तो मैं अब इसी का वरण करूँगी अन्यथा गंगा में डूब मरूँगी ॥ ६ ॥ उसने एक हितैषिणी और चतुर सखी देखी और उसे मन की बात कही । यदि तुम मुझे उससे मिला दो तो मैं तुम्हें मुँह माँगा धन दूँगी ॥ ७ ॥ तब सखी उसके घर में गई और चरणों पर गिरकर उसे संदेश दिया कि राजकुमारी तुम्हारे ऊपर अनुरक्त है और उसे अपनी सुधि भी भूल गई है ॥ ८ ॥ राजा यह सुनकर विस्मित हो उठा और उससे उसने इस प्रकार कहा कि हे चतुर स्त्री ! कुछ ऐसा उपाय किया जाय जिससे विलास देवी मेरी रानी बन जाय ॥ ९ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजन् ! तुम स्त्री-वेश धारण करो और वस्त्र-आभूषण आदि पहनो । भुजंगध्वज राजा को एक बार दिखाई देकर फिर आँगन में छिप जाओ १० राजा ने स्त्री के

अथ तीन सौ छपन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु न्रिप कथा बखानै औरै। जो भई एक राज की ठौरै। शहिर सु नार गाँव है जहाँ। सबल सिंघ राजा इक तहाँ ॥ १ ॥ दलथंभन देई तिह नारि। जंत्र मंत्र जिह पढ़े सुधारि। जोगी इक सुंदर तह आयो। जिह सम सुंदर बिध न बनायो ॥ २ ॥ रानी निरखि रीझि तिह रही। मन बच क्रम ऐसी बिधि कही। जिह चरित्र जुगिया कह पैयै। उसी चरित्र कौ आजु बनैयै ॥३॥ ब्रिसटि बिना बदरा गरजाए। मंत्र सकति अंगरा बरखाए। स्रोन असथि प्रिथमी पर परैं। निरखि लोग सभ ही जिय डरैं ॥४॥ भूप मंत्रियन बोलि पठायो। बोलि बिप्र पुसतकन दिखायो। इन बिघनन को कह उपचारा। तुम सभ ही मिलि करहु बिचारा ॥ ५ ॥ तब लगि बीर हाँकि तिह रानी। इह बिधि सौ कहवाई बानी। एक काज उबरे जो करैं। नातर प्रजा सहित न्रिप मरैं ॥ ६ ॥ सभहिन लखी गगन की बानी। बीर बाक्य किनहूँ न पछानी। बहुरि बीर तिन ऐस उचारो।

तीन सौ छप्पनवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजन् ! एक कहानी और कहता हूँ जो एक राजा के साथ हुई। सुनारगाँव नगर में सबल सिंह नामक एक राजा रहता था ॥ १ ॥ दलथंभनदेवी उसकी स्त्री थी जिसने यंत्र-मंत्र सब पढ़ रखे थे। वहाँ एक सुन्दर योगी आया जिसके समान विधाता ने अन्य कोई नहीं बनाया था ॥ २ ॥ रानी उसे देखकर रीझ उठी और मन-वचन-कर्म से कहने लगी कि जिस प्रपंच से योगी को प्राप्त किया जा सके वही प्रपंच आज बनाया जाय ॥ ३ ॥ बिना बादलों के उसने वर्षा करा दी, मंत्र-शक्ति से अंगारे बरसा दिए। रक्त और अस्थियाँ पृथ्वी पर गिरने लगी और यह देखकर सब लोग ही मन में डरने लगे ॥ ४ ॥ राजा ने मंत्रियो को बुलाया और ब्राह्मणों से ग्रंथ दिखलवाये। इस विघ्न का क्या उपचार है ? तुम सब मिलकर विचार करो ॥ ५ ॥ तब तक उस रानी ने वीरों को बुलाकर इस प्रकार वाणी कहलवायी। यदि एक काम करो तो बचोगे अन्यथा राजा प्रजा-समेत मर जायगा ६ सबने उसे आकाशवाणी समझा और उन वीरो की बातों को न पहचाना पुन वीर ने कहा कि

सु मैं कहत हौ सुनहु पयारो ॥ ७ ॥ जौ राजा अपनी लै नारी । जुगियन दै धन सहित सुधारी । तब इह प्रजा सहित नहि मरै । अबिचल राज प्रिथी (मू०ग्रं०१३१२) पर करै ॥ ८ ॥ प्रजा लोक सुनि बच अकुलाए । ज्यों त्यों तहाँ न्रिपहि लै आए । जुगियहि देइ दरबु जुत हारी । भेद अभेद की गति न बिचारी ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ प्रजा सहित राजा छला गई मित्र के नारि । भेद अभेद भला बुरा सका न कोई बिचारि ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ छपन चरित्र समापतंम सतु सुभम सतु ॥ ३५६ ॥ ६५५८ ॥ अफजूँ ॥

अथ तीन सौ सतावन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु राजा इक और प्रसंगा । भाखि सुनावत तुमरे संगा । अचलावती नगर इक राजत । सूर सिंघ तह भूप बिराजत ॥ १ ॥ अंजनदेइ तवन की रानी । खंजनदे दुहिता तिह जानी । अधिक दुहूँ की प्रभा बिराजै । निरखि नरी नागिनि मन लाजै ॥ २ ॥ तहाँ एक आयो

हे प्यारो, जो मैं कहता हूँ उसे सुनो ॥ ७ ॥ यदि यह राजा अपनी स्त्री-समेत धन योगी को दे दे तो प्रजा-समेत यह मरेगा नहीं और सदैव पृथ्वी पर राज्य करता रहेगा ॥ ८ ॥ लोग यह सुनकर आकुल हो उठे और जैसे-तैसे राजा को वहाँ ले आए । स्त्री-समेत द्रव्य योगी को दिया और भेद-अभेद कुछ नहीं जाना ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ प्रजा-समेत राजा को छलकर स्त्री मित्र के पास चली गई और कोई भी भेद-अभेद भला-बुरा नहीं जान सका ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ छप्पनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३५६ ॥ ६५५८ ॥ अफजूँ ॥

तीन सौ सत्तावनवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ राजन् ! एक अन्य प्रसंग सुनो जो तुमसे कहता हूँ । अचलावती नामक एक नगर था जहाँ सूरसिंह नामक एक राजा शोभायमान था ॥ १ ॥ उसकी स्त्री अंजनदेवी थी और खंजनदेवी की पुत्री थी दोनों अत्यधिक प्रभायुक्त थी और नर-नाग स्त्रियाँ

सौदागर। रूपवंतु जनु दुतिय निसाकर। जो अबला तिह रूप निहारै। राज पाट तजि साथ सिधारै ॥ ३ ॥ सो आयो न्रिप त्रिय के घर तर। राजसुता निरखा तजि द्रिग भरि। मन बच क्रम इह ऊपर भूली। जनु मद पी मतवारी झूली ॥ ४ ॥ सिंघ प्रचंड नाम तिह नर को। जनु करि मुकत काम के सिर को। सखी एक तह कुअरि पठाई। कहियहु ब्रिथा सजन सौ जाई ॥ ५ ॥ सखी तुरतु तिन तह पहुचायो। जस नाबक को तीर चलायो। सकल कुअरि तिन ब्रिया सुनाई। मन बच रीझि रहा सुखदाई ॥ ६ ॥ नदी बहत न्रिप ग्रहि तर जहाँ। ठाढ हूजियहु निसि कह तहाँ। डारि देग मै कुअरि बहै हैं। छिद्र मूँदि ताको सभ लैहैं ॥ ७ ॥ ऊपर बाँधि तँबूरा दै है। इह चरित्र सुहि ताहि मिलैहै। जब तुबरी लखियहु ढिग आई। काढि भोग दीजहु सुखदाई ॥ ८ ॥ इह बिधि बदि तासो संकेता। दूती गी न्रिप त्रियज निकेता। डारि देग मै कुअरि बहाई। बाँधि तूँबरी तह पहुचाई ॥ ९ ॥ जब बहतो तुबरी तह आई।

दोनों ही उन्हें देखकर मन में लज्जित होती थीं ॥ २ ॥ वहाँ एक सौदागर आया जो मानों रूप में दूसरा चन्द्रमा था। जो स्त्री उसका रूप देखती थी, राजपाट तक छोड़कर उसी के साथ हो लेती थी ॥ ३ ॥ वह रानी के महल के नीचे आया और राजकुमारी ने उसे देखा। वह मन-वचन-कर्म से उस पर ऐसे मोहित हो गई मानों मद्य पी मतवाली हो झूम रही हो ॥ ४ ॥ उस व्यक्ति का नाम प्रचंडसिंह था और ऐसा लगता था मानों कामान्ध हाथी हो। कुँवरि ने एक सखी वहाँ भेजी ताकि वह कुँवर से मन की व्यथा कह सके ॥ ५ ॥ सखी ने तुरन्त संदेश वहाँ पहुँचा दिया जैसे नाविक नाव को किनारे पहुँचा देता है। उसने कुँवरि की सारी आकुलता उसे कह सुनाई जिसे सुनकर वह मन एवं वचन से रीझ उठा ॥ ६ ॥ राजा के घर के नीचे जहाँ नदी बहती है तुम रात को वहाँ खड़े रहना। मैं देग में डालकर कुँवरि को बहा दूंगी और उस देग का छिद्र (मुँह) बंद कर दूंगी ॥ ७ ॥ ऊपर एक ताँबूरा बाँध दूंगी। इस प्रपंच से मैं तुम्हें उससे मिला दूंगी। जब तूंबड़ी को पास आते देखना तो निकाल लेना और सुखपूर्वक भोग करना ॥ ८ ॥ यह संकेत निश्चित कर वह दूती राजा की स्त्री के घर गई देग में डालकर कुँवरि को बहा दिया और तुबी बाँधकर उसे वहाँ पहुँचा दिया ९ जब तुबी बहती

आवत कुअरि लखा सुखदाई। ऐंचि तहाँ ते देग निकारी। लै पलका ऊपर बैठारी ॥ १० ॥ पोसत भाँग अफीम मँगाई। दुहूँ खाट पर बैठि चढ़ाई। चारि पहर तासौ करि भोगा। भेद न लखा दूसरे लोगा ॥ ११ ॥ इह बिधि तासौ रोज बुलावै। काम भोग करि ताहि पठावै। भूप सहित (मू०ग्रं०१३१३) कोई भेद न पावै। नितप्रति अपनो मूँड मुँडावै ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ सतावन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३५७ ॥ ६५७० ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ अठावन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु भूपति इक कथा नवीनी। किनहूँ लखी न आगे चीनी। सुंद्रावती नगर इक सोहै। सुंदरसिंघ राजा तह को है ॥ १ ॥ सुंदर दे राजा की नारी। आपु जनुक जगदीश सवारी। ताको जात न प्रभा बखानी। ऐसी हुती राइ की रानी ॥ २ ॥ तहिक शाह को पूत अपारा। कनक अवटि साँचे जनु ढारा। निरखि नाक जिह सुआ

हुई वहाँ आई तो उस आती हुई सुखदायक कुँवरि को उसने देखा। खींच कर उसने देग को निकाल लिया और उसे निकालकर पलकों पर बैठा लिया ॥ १० ॥ पोस्त, भाँग और अफ़ीम मँगवाई गई और दोनों ने पलंग पर बैठकर पी। उससे चार प्रहर तक भोग किया जिसे दूसरे लोग देख भी न सके ॥ ११ ॥ इस प्रकार वह उसे रोज बुलाता था और कामक्रीड़ा कर उसे भेज देता था। राजा समेत किसी को भी पता न चलता था और वे सभी नित्यप्रति ठगे जाते थे ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ सत्तावनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३५७ ॥ ६५७० ॥ अफजूं ॥

तीन सौ अट्ठावनवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजन्! एक नई कहानी सुनो जिसे किसी ने भी पहले कहा-सुना नहीं है। सुन्दरावती नगर का राजा सुंदर सिंह था ॥ १ ॥ उस राजा की स्त्री सुंदरदेवी थी जिसे मानों परमात्मा ने स्वयं बनाया था। वह राजा की रानी ऐसी थी कि उसकी प्रभा का वर्णन नहीं किया जा सकता २। वहाँ एक धनी का पुत्र था जिसे मानो सोने के साँचे में

रिसानो। कंज जानि द्रिग भवर भुलानो ॥ ३ ॥ कटि केहरि लखि अधिक रिसावत। ताते फिरत म्रिगन कह घावत। सुनि बानी कोकिल कुकरई। क्रोध जरत कारी ह्वै गई ॥४॥ नैन निरखि करि जलज लजाना। ताँते जल महि किया पयाना। अलक हेरि नागिनि रिसि भरी। चित महि लजत पतारहि बरी ॥ ५ ॥ सो आयो राजा के पासा। सौदा की जिय मै धरि आसा। सुंदरि दे निरखत तिह कई। सुधि बुधि तजि बौरी ह्वै गई ॥ ६ ॥ पठै सहचरी ताहि बुलावा। काम भोग किय जस मन भावा। तह इक हुती न्रिपति की चेरी। हेरि गई जस हेरि अहेरी ॥ ७ ॥ पाव दाबि न्रिप जाइ जगायो। धाम तोर तसकरि इक आयो। रानी के संग करत बिलासा। चलि देखहु तिह भूप तमासा ॥ ८ ॥ सुनत बचन न्रिप अधिक रिसायो। खड़ग हाथ लै तहाँ सिधायो। जब अबला पति की सुधि पाई। अधिक धूँम तह दिया जगाई ॥ ९ ॥ सभ के नैन धूम्र सो भरे। असुआ टूटि बदन पर परे। जब रानी इह घात पछानी। मित्र लँघाइ हिये

ढालकर बनाया गया था। उसकी नासिका देखकर तोता भी ईर्ष्या करता था और नयन देखकर मृग भी भूले फिरते थे ॥ ३ ॥ शेर उसकी कमर देखकर ईर्ष्या करते थे और खीझकर मृगों को वन में मारते घूमते थे। कोयल उसकी बोली को सुनकर ही क्रुद्ध हो जलकर काली हो गई है ॥ ४ ॥ कमल उसके नयनों को देखकर लजाता है और इसीलिए वह पानी में छिप गया है। उसके बालों को देखकर क्रुद्ध नागिन लज्जित होकर पाताललोक में जा घुसी है ॥ ५ ॥ वह राजा के पास व्यापार की आशा मन में लगाए हुए आया। सुंदरदेवी उसे देखते ही होश खोकर दीवानी हो गई ॥ ६ ॥ एक सहेली को भेजकर उसे बुलाया और मनचाहा भोग किया। वहाँ राजा की एक दासी थी जो शिकारी की तरह सब देख गई ॥ ७ ॥ उसने पैर दबाकर राजा को जगा दिया और कहा कि तुम्हारे घर में चोर आ गया है। वह रानी के साथ क्रीड़ा कर रहा है। हे राजन् ! तुम स्वयं चलकर तमाशा देख लो ॥ ८ ॥ राजा यह सुनकर अत्यन्त क्रुद्ध हो उठा और खड्ग हाथ में लेकर उस ओर चल पड़ा। जब स्त्री को पति के आने का पता चला तो वहाँ उसने अत्यधिक धुआँ कर दिया ॥ ९ ॥ सबकी आँखों में धुआँ भर गया और आँसू गिरने लगे। जब रानी ने यह अवसर देखा तो मित्र को भेजकर हृदय में प्रसन्न

हरखानी ॥ १० ॥ आगे सो करि काढा जारा । धूम्र भरे द्रिग न्रिपन निहारा । पोछ नेत्र जबही ग्यो तहाँ । कोऊ न पुरख निहारा उहाँ ॥ ११ ॥ उलटि तिसी चेरी कह घायो । इह रानी कह दोश लगायो । मूरख भूप न भेद बिचारा । आगे करि त्रिय मित्र निकारा ॥ १२ ॥ १ ॥ (मू०ग्रं०१३१४)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ अठावन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३५८ ॥ ६५८२ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ उनसठि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु राजा इक और चरित्र । जिह छल नारि निकारा मित्र । पूरबदेस अपूरब नगरी । तिहूँ भवन के बीच उजगरी ॥ १ ॥ शिव प्रसाद राजा तहको है । सदा सरबदा सिवरत सोहै । भावन दे तिह नारि भणिज्जै । मन मोहनि दे सुता कहिज्जै ॥ २ ॥ शाह मदार पीर तह जाहिर । सेवत जाँहि भूप नर नाहर । एक दिवस न्रिप तहाँ सिधारा ।

हो उठी ॥ १० ॥ आगे से यार को निकाल दिया और धुएं भरे नेत्रों से राजा को देखा । वह राजा भी जब आँखें पोंछकर वहाँ गया तो उसने वहाँ किसी भी पुरुष को नहीं देखा ॥ ११ ॥ पलटकर उसने उस दासी को मार डाला जिसने इस रानी पर आरोप लगाया था । मूर्ख राजा ने रहस्य न समझा और स्त्री ने आगे करके अपने मित्र को निकाल दिया ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ अट्ठावनवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३५८ ॥ ६५८२ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ उनसठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजा ! एक अन्य प्रपंच सुनो, जिससे स्त्री ने अपने मित्र को (सुरक्षित) निकाल दिया । पूर्व देश में एक अपूर्व नगरी थी जो तीनों भुवनों में प्रकाशमान थी ॥ १ ॥ वहाँ का राजा शिवप्रसाद सदैव शिव-भक्ति में लीन रहता था । भावनदेवी उस स्त्री का नाम था और उसकी पुत्री मनमोहनदेवी थी ॥ २ ॥ वहाँ शाह मदार नामक एक जाहिर (अत्यन्त शक्तिशाली) पीर था जिसे सब राजा और प्रजा पूजते थे । एक दिन राजा वहाँ गया । उसके साथ पुत्री और पत्नी भी

दुहिता सहित लए संग दारा ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ एक पुरख न्रिप की दुहिता कह भाइयो । पठै सहचरी ताकह तही बुलाइयो । तही काम के केल तरुनि तासो कियो । हो हसि हसि करि आसन ताकौ कसि कसि लियो ॥ ४ ॥ पीर चूरमा हेत जु भूप बनाइयो । अधिक भाँग कौ ता महि तरुनि मिलाइयो । सभ सोफीतिह खाइ दिवाने ह्वै परे । हो जानु प्रहार बिना सगरे आपे मरे ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ सोफी भए सभै मतवारे । जनु कर परे बीर रन मारे । राज सुता इत घात पछाना । उठ प्रीतम संग किया पयाना ॥ ६ ॥ सोफी किनूँ न आँखि उघारी । लात जानु शैतान प्रहारी । भेद अभेद न किनहूँ पायो । राजकुअरि लै मीत सिधायो ॥७॥१॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ उनसठि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३५९ ॥ ६५८९ ॥ अफजूँ ॥

अथ तीन सौ सठ चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु राजा इक और प्रसंगा । जस किय सुता पिता के संगा । प्रबल सिंघ राजा इक अति बल । अरि

थी ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजकुमारी को एक व्यक्ति भा गया । उसे उसने सहेली भेजकर बुला लिया । तरुणी ने उसके साथ कामक्रीड़ा की और हँस-हँसकर दृढ़तापूर्वक उससे आसनादि किए ॥ ४ ॥ राजा ने पीर के लिए जो चूरमा बनाया था तरुणी ने उसमें भाँग मिला दी । सभी वहाँ खाकर दीवाने होकर गिर पड़े । वे सभी बिना किसी आघात के मारे ही स्वयं मर गए ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ सभी ऐसे मतवाले हो गये मानों युद्ध में मरे पड़े हों । राजकुमारी ने तभी अवसर पाकर प्रियतम के साथ प्रस्थान कर दिया ॥ ६ ॥ न पीनेवाले (सोफ़ी) बेहोशों में से किसी ने भी आँख नहीं खोली । ऐसा लग रहा था मानों शैतान ने लात मारकर सबको गिराया हो । भेद-अभेद कोई भी न जान पाया और मित्र राजकुमारी को लेकर चलता बना ॥ ७ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ उनसठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३५९ ॥ ६५८९ ॥ अफजूँ ॥

तीन सौ साठवाँ चरित्र-कथन

चौपाई राजा एक अन्य कहानी सुनो जिसमें पुत्री ने पिता

काँपत धाके डर जल थल ॥ १ ॥ स्री झकझूमक दे तिह बारि। घड़ी आपु जनु ब्रहम सुनार। तह थो सुघरसैन खतिरेटा। इशक मुशक के साथ लपेटा ॥ २ ॥ जगंनाथ कह भूप सिधायो। पुत्र कलत्र संग लै आयो। जगंनाथ को निरख दिवाला। बचन बखाना भूप उताला ॥ ३ ॥ हमरो पाप पुरातन गयो। सफल जनम हमरो अब भयो। जगंनाथ को पायो दरशन। और करा हाथन पग परसन ॥ ४ ॥ तब लग भूप सुता तह आई। पिता सुनत अस कहा सुनाई। सुनि मैं सैन आजु हियाँ करिहो। जिह ए कहै तिसी कह बरिहो ॥५॥ प्रात उठी तह ते सोई जब। बचन कहा पित संग इह बिधि तब। सुघरसैन खत्री जो आही। (मू०ग्रं०१३१५) जगंनाथ दीनी मैं ताही ॥ ६ ॥ राजै बचन सुना इह बिधि जब। ऐस कहा दुहिता के संग तब। जगंनाथ जाकह तूं दीनी। हम सौ जात न तासौ लीनी ॥ ७ ॥ भेद अभेद न कछु जड़ पायो। इह छल अपना मूँड मुँडायो। जगंनाथ को बचन पछाना। राजसुता लै मीत सिधाना ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ सठ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३६० ॥ ६५९७ ॥ अफजूं ॥

के साथ क्या किया। प्रबलसिंह एक बलवान राजा था जिसके डर से सभी शत्रु काँपते थे ॥ १ ॥ झकझूमकदेवी उसकी पुत्री थी जिसे मानो ब्रह्मा ने स्वयं बनाया था। वहाँ एक क्षत्रिय सुघड़सेन था जो इश्क-मुश्क में सराबोर था ॥ २ ॥ राजा जगन्नाथपुरी गया और पुत्र-स्त्री अर्थात् परिवार को भी साथ ले गया। जगन्नाथ का मंदिर देखकर राजा ने शीघ्र ही कहा ॥ ३ ॥ कि मेरा पुरातन पाप नष्ट हो गया है और मेरा जन्म सफल हो गया है। मैंने जगन्नाथ का दर्शन पाया है और अपने हाथों से चरण स्पर्श किए हैं ॥ ४ ॥ तब तक राजकुमारी वहाँ आ गई और उसने पिता को सुनाते हुए कहा कि आज मैं यहीं सोऊँगी और मुझे जिसके साथ (भगवान) आदेश देंगे उसी का वरण करूँगी ॥ ५ ॥ प्रातः वह जब सोकर उठी तो उसने पिता से कहा कि सुघड़सेन जो क्षत्रिय है, श्री जगन्नाथ ने मुझे उसे ही दे दिया है ॥ ६ ॥ राजा ने जब यह वचन सुना तो अपनी पुत्री से कहा कि भगवान जगन्नाथ ने तुझे जिसे दे दिया है अब मैं भला उससे वापस कैसे ले सकता हूँ ॥ ७ ॥ उस मूर्ख ने भेद-अभेद कुछ भी नहीं समझा और इस प्रपंच से ठगा गया। उसने जगन्नाथ

का वचन माना और इधर मित्र राजकुमारी को लेकर चलता बना ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ साठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३६० ॥ ६५९७ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ इकसठ चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु राजा इक कथा पुरातन । जिह बिधि पंडित कहत महाँ मुनि । एक महेस्र सिंघ राजाना । डंड देत जाको न्रिप नाना ॥ १ ॥ नगर महेस्रावति तह राजत । अमरावति जह दुतिय बिराजत । ताकी जात न उपमा कही । अलका निरखि थकित तिह रही ॥ २ ॥ गज गामिनि दे सुता भनिज्जै । चंद्र सूर पटतर मुख दिज्जै । ताकी जात न प्रभा बखानी । थकित रहत राजा अरु रानी ॥ ३ ॥ ताकी लगन एक सों लागी । नींद भूखि जाते सभ भागी । गाजी राइ तवन को नामा । थकित रहत जाकौ लखि बामा ॥ ४ ॥ और घात जब हाथ न आई । एक नाव तब निकट मँगाई । राजकुअर तिह राखा नामा । जानत सकल पुरख अरु बामा ॥ ५ ॥ गाजी राइ बैठि तिह ऊपर । निकसा आइ

तीन सौ इकसठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजन् ! एक पुरानी कथा सुनो जिसे पंडित, मुनियों ने भी कहा है। महेश्वर सिंह एक राजा था जिसे अनेकों राजा दंड दिया करते थे ॥ १ ॥ महेश्वरवती एक नगर था जो मानो दूसरी देवपुरी थी। उसकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। अलकापुरी भी उसे देखकर थकी-थकी सी लगती थी ॥ २ ॥ उसकी पुत्री गजगामिनी देवी थी, जिसकी तुलना सूर्य-चन्द्र से की जाती थी। उसकी प्रभा अवर्णनीय थी और राजा और रानी भी उस पर न्योछावर थे ॥ ३ ॥ उसका प्रेम एक से हो गया और नींद-भूख सब उड़ गई। उसका नाम ग़ाज़ीराय था जिसकी राह देखते स्त्रियाँ थक जाती थीं ॥ ४ ॥ जब अन्य उपाय काम न आया तो उसने एक नाव अपने पास मँगाई। उसका नाम राजकुँवर रखा जिसे सभी स्त्री-पुरुष जानने लगे ॥ ५ ॥ ग़ाज़ीराय उस पर बैठा और राजा के महलों के नीचे आ निकला। वह कहने लगा कि

भूप महलन तर। लैनी होइ नाव नौ लीजै। ना तरु मोहि उत्तर कछु दीजै ॥ ६ ॥ मै लै राजकुअरि कौ जाऊँ बेचौ जाइ और ही गाऊँ। लैनी होइ नाव तब लीजै। ना तर हमैं बिदा करि दीजै ॥ ७ ॥ मूरख भूप बात नहि पाई। बीता दिन रजनी ह्वै आई। राजसुता तब देग मँगाइ। बैठी बीच तवन के जाइ ॥ ८ ॥ छिद्र मूँदि नौका तर बाँधी। छोरी तबै बही जब आँधी। जब न्रिप प्रात दिवान लगायो। तब तिन तह इक मनुख पठायो ॥ ९ ॥ जौ तुम नाव न मोल चुकावत। राजकुअरि लै बनिक सिधावत। जानि देहु जो मोल न बनी। मेरे घर नवका हैं घनी ॥ १० ॥ हरी कुअरि राजा कौ कहिकै। मूरख सका भेद नहि लहिकै। प्रात सुता की जब सुधि पाई। (मू०ग्रं०१३१६) बैठि रहा मूँडी निहुराई ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप सं[illegible]दे तीन सौ इकसठ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३६१ ॥ [illegible]८ ॥ अफजूं ॥

नाव लेनी हो तो ले लो नहीं तो मुझे कु[illegible] उत्तर दो ॥ ६ ॥ मैं (अपनी) राजकुँवर को ले जाऊँगा और [illegible] गाँव में बेचूँगा। लेना हो तो ले लो अन्यथा हमें [illegible] ॥ ७ ॥ मूर्ख राजा समझा नहीं और दिन बीतकर रा[illegible] राजकुमारी तब देग मँगवाकर बीच में जा बैठी ॥ ८ ॥ मूँ[illegible] नौका के नीचे बाँध दिया और तब छोड़ा जब आँधी आई। जब [illegible]ने प्रातः दरबार लगाया तो उसके पास एक मनुष्य भेज दिया ॥ ९ ॥ [illegible] नाव का मोल नहीं चुकाओगे तो व्यापारी राजकुमारी को [illegible]। राजा ने कहा कि मेरे पास अनेकों नौकाएँ हैं जाने दो, [illegible]द नहीं बनेगा ॥ १० ॥ राजा को कहकर उसकी पुत्री का हरण [illegible]र वह मूर्ख भेद न जान सका। प्रातः जब उसे पुत्री की [illegible] बैठा सिर धुनने लगा ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र [illegible] तीन सौ इकसठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ [illegible] ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ बासठि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु भूपति इक कथा बचित्र । जिह बिधि किय इक नारि चरित्र । गुल्लो इक खत्रानी आही । जेठमल्ल छत्री कह ब्याही ॥ १ ॥ ताकौ और पुरख इक भायो । निजु पति सेती हेतु भुलायो । रैनि दिवस तिह धाम बुलावै । कामभोग तिन साथ कमावै ॥ २ ॥ इक दिन सुधि ताके पति पाई । बहुबिधि ता संग करी लराई । अनिक करी जूतिन की मारा । तब तिन इह बिधि चरित बिचारा ॥ ३ ॥ ता दिन तें निजु पति कौ त्यागी । साथ फकीरन के अनुरागी । वाहि अतिथ करिकै संग लीना । औरै देस पयाना कीना ॥ ४ ॥ जिह जिह देस आपु पगु धारै । तहीं तहीं वहु संग सिधारै । और पुरखु तिह अतिथ पछानै । त्रिया चरित न कोई जानै ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ बासठि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३६२ ॥ ६६१३ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ बासठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजन् ! एक कथा सुनो कि कैसे एक नारी ने विचित्र प्रपंच किया । गुल्लो नामक एक क्षत्राणी थी जो जेठमल नामक क्षत्रिय से ब्याही गई थी ॥ १ ॥ उसको एक अन्य पुरुष भा गया और उसने अपने पति के साथ प्रेम को भुला दिया । वह रात-दिन उसे घर बुलाती थी और उसके साथ कामभोग करती थी ॥ २ ॥ एक दिन उसके पति को पता लगा और उसने उसके साथ विविध प्रकार से झगड़ा-लड़ाई की । उसे अनेक जूते मारे और तब उस स्त्री ने एक प्रपंच सोचा ॥ ३ ॥ वह उसी दिन से अपने पति को त्यागकर फ़क़ीरों के साथ हो ली । उसे भी उन्होंने साधु बना लिया तथा अन्य देश की ओर प्रस्थान कर दिया ॥ ४ ॥ जहाँ-जहाँ वे क़दम रखते थे यह भी वहीं-वहीं साथ जाती थी । अन्य लोग उसे साधु ही समझते थे और स्त्री के प्रपंच को नहीं जानते थे ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ बासठवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति ३६२ ६६१३ अफ्जूं

अथ तीन सौ तेसठि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुन राजा इक कथा नवीन । जस चरित्र किय नारि प्रबीन । सिंघ महेस्र सुना इक राजा । जिह सम और न बिधना साजा ॥ १ ॥ नगर महेस्रावति तिह राजत । देवपुरी जा कौ लखि लाजत । बिमलमती रानी तिह ऐन । जा सम सुनी न निरखी नैन ॥ २ ॥ स्री पंजाबदेइ तिह बेटी । जा सम इंद्र चंद्र नहि भेटी । अधिक तवन की प्रभा बिराजै । जिह दुति निरखि चंद्रमा लाजै ॥ ३ ॥ जब जोबन ताके तन भयो । अंग अंग मदन दमामो दयो । भूप ब्याह को बिवत बनाइ । सकल प्रोहितन लिया बुलाइ ॥ ४ ॥ सिंघ सुरेस्र भूप तब चीना । जिस ससि जात न पटतर दीना । करी तवन के साथ सगाई । दै सनमान बरात बुलाई ॥ ५ ॥ जोरि सैन आयो राजा तह । रचा ब्याह को बिवतारे जह । तहीं बरात आइ करि निकसी । रानी कंज कली जिमि बिगसी ॥ ६ ॥ (मू०ग्रं०१३१७) ॥ दोहरा ॥ राजसुता सुंदर

तीन सौ तिरसठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजा ! एक अन्य नई कथा सुनो कि किस प्रकार एक चतुर स्त्री ने प्रपंच किया। महेश्वर सिंह नामक एक राजा सुना जाता था, जिसके समान विधाता ने अन्य किसी को नहीं बनाया था ॥ १ ॥ महेश्वरवती नगरी थी जिसे देखकर देवपुरी भी लज्जित होती थी। उस राजा के घर में विमलमती रानी थी जिसके समान सुन्दर स्त्री देखी-सुनी नही जाती थी ॥ २ ॥ पंजाब देवी उसकी बेटी थी जिसके समान इन्द्र, चन्द्र को भी स्त्री नहीं मिली थी। उसकी अत्यधिक शोभा को देखकर चन्द्रमा भी लज्जित होता था ॥ ३ ॥ जब वह यौवनवती हो गई तो अंग-अंग में कामदेव ने आकर नगाड़े बजाने शुरू कर दिये। राजा ने विवाह का आयोजन कर सभी पुरोहितों को बुला लिया ॥ ४ ॥ राजा ने सुरेश्वर सिंह राजा को चुना जिसकी बराबरी चन्द्रमा भी नहीं कर सकता था। उसके साथ सगाई कर दी और सम्मानपूर्वक बारात बुलाई ॥ ५ ॥ राजा सेना समेत वहाँ आ गया जहाँ विवाह का आयोजन था। वहीं बारात आ पहुँची और रानी भी फूल की कली के समान प्रफुल्लित हो उठी ॥ ६ ॥

दोहा राजकुमारी सुन्दर थी और उसका वर (उसकी अपेक्षा) कुरूप

हुती तिह बर होत कुरूप । बिमल भई अबला निरखि जनु जिय हारा जूप ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ एक शाह को पूत हुतो संग। सुंदर हुते सकल जाके अंग । राज सुता लख ताहि लुभाई। गिरी धरनि जनु नाग चबाई ॥ ८ ॥ सुता गिरी मइया तह आई । सींचि बारि बहु चिरै जगाई । जब ताको बहुरौ सुधि आई । उलटि गिरी जन लगी ह्वाई ॥ ९ ॥ पहिरक बिते बहुरि सुधि आई । रोइ मात सौ बात जनाई । अगनि जारि मुहि अबै जरावौ । इहु कुरूप के धाम न द्यावौ ॥१०॥ मातहि हुती सुता अति प्यारी । चिंता करी चित्त महि भारी। जिनि इह राजसुता मरि जाइ । कहा करै ताकी तब माइ ॥ ११ ॥ जब न्रिप सुता कछू सुधि पाई । रोइ मात सौ बात सुनाई । ध्रिग मुहि राजसुता क्यों भई । किसी शाह के धाम न गई ॥ १२ ॥ मोरो भाग लोप ह्वै गयो। ताते जनम भूप को लयो । अब ऐसे कुरूप के जैहौ । रैनि दिवस सभ रोत बितैहौ ॥ १३ ॥ ध्रिग मुहि नारि जोनि कस धरी । क्यों भूपति के धामौतरी । माँगी देत न म्रितु बिधाता । अब ही करौ देहि कों घाता ॥ १४ ॥ ॥दोहरा॥ मुख

था। वह देखकर वैसे ही बे-मन हो गई जैसे कोई जुए में हारकर खिन्न हो जाता है ॥७॥ ॥ चौपाई ॥ एक धनी का पुत्र साथ में था जिसके समस्त अंग सुन्दर थे। राजकुमारी उसे देखकर मोहित हो ऐसे धरती पर गिर पड़ी मानों नाग ने उसे काट लिया हो ॥ ८ ॥ पुत्री गिर पड़ी और माँ वहाँ आ पहुँची और पानी छिड़ककर उसे होश में लाई। जब उसे फिर होश आया तो वह फिर उलटकर ऐसे गिर पड़ी मानों उसे कोई गोली लगी हो ॥ ९ ॥ लगभग एक प्रहर बीतने पर जब उसे फिर होश आया तो उसने रोते हुए अपनी माँ को बात बताई। आग लगाकर मुझे अभी जला दो पर इस कुरूप के घर मत भेजो ॥ १० ॥ माँ को बेटी बहुत प्यारी थी उसे भी मन में भारी चिंता हुई। कहीं यह राजकुमारी मर न जाय। फिर उसकी माँ क्या करेगी ॥ ११ ॥ जब राजा की पुत्री को कुछ होश आया तो रोते हुए उसने माता से कहा कि मुझे धिक्कार है, मैं राजकुमारी क्यों बनी और क्यो न किसी धनी के घर चली गई ॥ १२ ॥ मेरा भाग्य ही नष्ट हो गया जो मैंने राजा के घर जन्म लिया। अब यदि ऐसे कुरूप के साथ जाती हूँ तो रात-दिन रोते हुए ही बिताऊँगी १३ मेरे नारी होने को धिक्कार है मैं भला क्यो राजा के घर मे जन्मी ? माँगने पर तो विधाता मृत्यु भी नही देता

मांगे जो पुरख को भलो बुरो कुछ होइ । तौ दुखिया इह जगत मै जियत न उबरै कोइ ॥ १५ ॥ ॥ चौपई ॥ अब मैं मारि कटारी मरिहौ । ना तर बस्त्र भगौहे धरिहौ । बरौ त पूत शाह को बरौ । ना तर आजु खाइ बिखु मरौ ॥ १६ ॥ रानी को दुहिता थी प्यारी । सोई करी जु ताहि उचारी । चेरी काढि तवन कह दीनी । भूप सुता करि तिन जड़ चीनी ॥१७॥ शाह पुत्र कह दई कुनारी । दुतिय पुरख नहि क्रिया बिचारी । लै चेरी वहु भूप सिधायो । जान्यो राज सुता बरि ल्यायो ॥ १८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ तैसठि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३६३ ॥ ६६३१ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ चौंसठि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ गनपति सिंघ एक राजा बर । गनपावती हुतो जाके घर । स्री महताबप्रभा तिह रानी । जाहि निरखि करि नारि लजानी ॥ १ ॥ मुहकमसिंघ एक

मैं अभी आत्मघात कर लूँगी ॥ १४ ॥ ॥ दोहा ॥ यदि मुँह माँगा भला-बुरा कुछ हो जाय तो इस संसार में कोई भी दुखी न बचे ॥ १५ ॥ ॥ चौपाई ॥ अब मैं कटार मारकर मर जाऊँगी अन्यथा भगवे वस्त्र धारण कर लूँगी । अगर करूँगी तो धनिक के पुत्र का वरण करूँगी नहीं तो आज ही जहर खाकर मर जाऊँगी ॥ १६ ॥ रानी को पुत्री से प्यार था । उसने वही किया जो उसने कहा । उसे (राजा को) एक दासी दे दी जिसे उस मूर्ख ने राजा की पुत्री समझ लिया ॥ १७ ॥ धनिक के पुत्र को वह कुलटा दे दी जिसने दूसरे पुरुष के साथ जाने की क्रिया का (तनिक भी) विचार नहीं किया । उधर वह राजा दासी को लेकर ही चल पड़ा और समझ रहा था कि राजकुमारी विवाह कर लाया है ॥ १८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में तीन सौ तिरसठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३६३ ॥ ६६३१ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ चौंसठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ गनपति सिंह एक श्रेष्ठ राजा था जिसका निवास गनपावती नामक नगर में था । उसकी रानी महताबप्रभा थी जिसे देखकर

छत्री जह जिह सम उपजा दुतिय न महि मह (मू०प०१३१८) रानी जब ताको लखि पायो। कामभोग ग्रहि बोलि कमायो ॥ २ ॥ तब लगि आइ गयो राजा तह। जार हुतो भोगत ताकौ जह। निरख नाथ त्रिय चरित्र बिचारा। हार तोरि अँगना महि डारा ॥ ३ ॥ बिहसि बचन न्रिप संग उचारा। खोजि हार तुम देहु हमारा। आन पुरख जौ हाथ लगै है। तौ हमरे पहिरन ते जैहै ॥ ४ ॥ खोजत भयो जड़ हार अयानो। नेत्र नीच करि भेद न जानो। नारि आगे ह्वै मीत निकारा। सिर नीचें पसु तिह न निहारा ॥५॥ पहरिक लगे खोजि जड़ हारो। लै रानी कह दयो सुधारो। अति पतिब्रता ताहि ठहरायो। दुतिय पुरख जिन कर न छुआयो ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ चौंसठि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३६४ ॥ ६६३७ ॥ अफजूं ॥

स्त्रियाँ लज्जित होती थीं ॥ १ ॥ वहाँ एक मुहकम सिंह नामक क्षत्रिय था जिसके समान धरती पर अन्य कोई उत्पन्न नहीं हुआ था। रानी ने जब उसे देखा तो घर बुलवाकर उसके साथ कामक्रीड़ा की ॥ २ ॥ तब तक राजा वहाँ आ गया जहाँ वह यार उसको भोग रहा था। स्वामी को देखकर स्त्री ने प्रपंच सोचा और हार को तोड़कर आँगन में डाल दिया ॥ ३ ॥ हँसकर राजा से कहा कि तुम मेरा हार खोज दो। यदि कोई अन्य पुरुष उसे छुएगा भी तो वह हमारे पहनने के काम से जायगा ॥ ४ ॥ वह मूर्ख नजरें नीची करके हार खोजने लगा और भेद न समझ पाया। स्त्री ने आगे करके मित्र को निकाल दिया और इस सिर नीचा किए हुए मूर्ख ने उसे नहीं देखा ॥ ५ ॥ लगभग एक प्रहर के समय तक मूर्ख खोजकर थक गया और रानी को खोजकर दे दिया। उसे उसने अत्यन्त पतिव्रता माना, क्योंकि उसने अन्य पुरुष को छूने भी नहीं दिया ॥ ६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ चौंसठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३६४ ॥ ६६३७ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ पैंसठि चरित्र कथन ॥

॥ चौपई ॥ त्रिपबर सिंघ एक राजाना । मानत आनि देस जिह नाना । स्री किलकंचित दे तिह रानी । जाहि निरखि पुर नारि रिसानी ॥ १ ॥ त्रिपब्रबतीनगर तिह राजत । दुतिय प्रिथी जनु सुरग बिराजत । नगर प्रभा नहि जात बखानी । थकित रहत राजा अरु रानी ॥ २ ॥ स्री चितचौपमती तिह कन्या । जिह सम नारि न उपजी अन्या । ताकी जात न उपमा करी । रूप रास जोबन तन भरी ॥ ३ ॥ राजकुअर इक हुतो अपारा । इक दिन निकसा निमिति शिकारा । म्रिग हित धयो न पहुचा कोई । आवत भयो नगर तिह सोई ॥ ४ ॥ राज सुता तिह रूप निहारो । मन क्रम बच अस करा बिचारो । ऐसो छैल एक दिन पैयै । जनम जनम पल पल बलि जैयै ॥ ५ ॥ अटिक सिंघ लखि तेज सवाया । थकित रही राजा की जाया । पठै सहचरी लियो मँगाइ । काम भोग रुचि मानुपजाइ ॥ ६ ॥ चारि पहर निसु किया बिलासा । तजि करि मात पिता को त्रासा ।

तीन सौ पैंसठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ नृपवरसिंह एक राजा था जिसका आधिपत्य अनेकों देश मानते थे। किलकंचितदेवी उसकी रानी थी जिसे देखकर सारे नगर की स्त्रियाँ ईर्ष्या करती थीं ॥ १ ॥ उनका नृपवरवती नगर शोभायमान था जो मानों धरती पर दूसरा स्वर्ग था। नगर की शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। राजा और रानी उसकी शोभा से अघाए रहते थे ॥ २ ॥ चित्तचौपमती उनकी कन्या थी जिसके समान अन्य स्त्री पैदा नहीं हुई थी। उसकी शोभा कही नहीं जाती। वह रूपराशि यौवन से पूर्ण थी ॥ ३ ॥ एक राजकुमार था जो कि एक दिन शिकार के लिए निकला। उसे कोई भी मृग न मिल सका और वह उसी नगर में आ निकला ॥ ४ ॥ राजकुमारी ने उसका रूप देखा और मन, वचन एवं कर्म से यह विचार किया कि यदि ऐसा छैला एक दिन मिल जाय तो जन्म-जन्मान्तरों तक न्योछावर हो जाऊँ ॥ ५ ॥ अटिकसिंह का रूप देखकर राजा की वह पुत्री हक्की-बक्की रह गई। एक सहेली को भेजकर उसे मँगा लिया और रुचिपूर्वक उसके साथ कामक्रीड़ा की ॥ ६ ॥ चार प्रहर रात्रि तक उससे रमण किया और माता-पिता का भय भी त्याग दिया। वे पोस्त, भाँग, अफीम मँगाते थे और

पोसत भाँगि अफीम मँगावहि । एक सेज दोऊ बैठ चढ़ावहि ॥ ७ ॥ कैफहि होत रसमसे जबही । क्रीड़ा करत दोऊ मिल तबही । भाँति भाँति तन आसन लैकै । चुंबन और अलिंगन कैकै ॥ ८ ॥ स्त्रमित भए अरु भे मतवारे । सोई रहै नहि नैन उघारे । प्राति पिता ताको तह आयो । जाइ सहचरी तिनै (मू०ग्रं०१३१६) जगायो ॥ ९ ॥ वहै सखी तिह बहुरि पठाई । यौ कहियहु राजा सौ जाई । चौका परा भोज दिज कारन । बिनु न्हाए न्रिप तह न सिधारन ॥१०॥ बस्त्र तारि कर इही अनावहु । बहुर सुता के धाम सिधावहु । भूप बचन सुनि बस्त्र उतारे । चहबच्चा महि न्हान सिधारे ॥ ११ ॥ जब डुबिआ कह भूपति लीना । तब ही काढि मित्र कह दीना । बस्त्र पहिरि फिरि तहाँ सिधायो । भेद अभेद न कछु जड़ पायो ॥ १२ ॥ ॥ दोहरा ॥ स्यानो भूप कहात थो भाँगन भूल चबाइ । इह छल छलि अमली गयो पनही मूँड लगाइ ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पाख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ पैंसठि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३६५ ॥ ६६५० ॥ अफजूँ ॥

एक ही शय्या पर बैठकर दोनों पीते थे ॥ ७ ॥ नशे में जब थोड़ा लीन होते तो दोनों मिलकर क्रीड़ा करते थे और भाँति-भाँति के चुंबन, आलिंगन और आसनों का प्रयोग करते थे ॥ ८ ॥ वे पसीने से युक्त और मतवाले हो गए थे और आँखें बंद करके सो रहे । जब प्रातः उसका पिता वहाँ आ गया तो सहेली नें जाकर उसे जगा दिया ॥ ९ ॥ उसने उसी सखी को पुनः भेजा कि राजा से जाकर कहो कि ब्राह्मणों के भोजन के लिए चौका लगा हुआ है अतः राजा बिना स्नान किए वहाँ न आए ॥ १० ॥ वस्त्र उतार कर यहीं स्नान करो और फिर पुत्री के घर में प्रविष्ट होओ । राजा नें सुनकर वस्त्र उतारे और जलताल में नहाने के लिए चल पड़ा ॥ ११ ॥ जब राजा ने डुबकी लगाई उसी समय उसनें अपने मित्र को निकाल दिया । वह (राजा) वस्त्र पहन कर फिर वहाँ आया और भेद-अभेद को मूर्ख कुछ भी न समझ सका ॥ १२ ॥ ॥ दोहा ॥ वह राजा अपने आपको चतुर कहलवाता था और भाँग भूलकर भी नहीं खाता था परन्तु वह नशेड़ी उसे छल गया औ उसके सिर पर (मानो) जूता लगा गया ॥ १३ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ पैंसठवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति ॥ ३६५ ॥ ६६५० ॥ अफजूँ ॥

अथ तीन सौ छासठ चरित्र कथन

॥ चौपई ॥ सुनु राजा इक और प्रसंगा । जस छल कीना नारि सुरंगा । छितपति सिंघ एक भूपत बर । अबला दे रानी जाके घर ॥ १ ॥ नाभमती दुहिता तिह सोहै । सुर नर नाग असुर मन मोहै । पदुमावती नगर तिह राजत । इंद्रावती निरखि तिह लाजत ॥ २ ॥ बीरकरन राजा इक औरै । भद्रावती बसत थो ठौरै । ऐंठीसिंघ पूत तिह जायो । निरखि मदन जिह रूप बिकायो ॥ ३ ॥ न्रिप सुत खेलन चढ़ा शिकारा । आवत भ्यो तिह नगर मझारा । न्हावत हुती जहाँ न्रिप बारि । थकति रहा तिह रूप निहारि ॥ ४ ॥ राजसुता तिह ऊपर अटकी । बिसरि गई उत तिह सुधि घट की । रीझ रहे दोनो मन माही । कछू रही दुहूँअनि सुधि नाही ॥ ५ ॥ तरुनि गिरा जब चतुरि निहरा । ताकी हाथ नाभि पर धरा । अरु पद पंकज हाथ लगाई । मुख न कहा कछु धाम सिधाई ॥ ६ ॥ द्वैक घरी तिन परे बिताई । रास

तीन सौ छाछठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ राजन् ! एक अन्य वार्ता सुनो कि किस प्रकार एक सुन्दर स्त्री ने छल किया । छितपति सिंह एक श्रेष्ठ राजा था जिसकी रानी अबलादेवी थी ॥ १ ॥ उसकी पुत्री नाभमती थी जो सुर, नर, नाग आदि सबका मन मोहित करती थी । पद्मावती नगर में वे शोभायमान थे जिसे देखकर इन्द्रपुरी भी लज्जित होती थी ॥ २ ॥ वीरकरन एक अन्य राजा था जो भद्रावती नामक स्थान पर बसता था । ऐंठीसिंह उसका पुत्र था जिसका रूप देखकर कामदेव भी उस पर बिका हुआ था ॥ ३ ॥ राजा का पुत्र शिकार खेलने चला और उस नगर में आ पहुँचा जहाँ राजा की बालिका स्नान कर रही थी । वह उसका रूप देखकर स्तंभित रह गया ॥ ४ ॥ राजकुमारी उसी पर अटक गई और उसे अपने शरीर की सुधि भी भूल गयी ॥ ५ ॥ दोनों मन ही मन एक-दूसरे पर मोहित हो उठे और दोनों को सुध-बुध न रही । उस चतुर स्त्री को देखकर तरुण गिर पड़ा और उसका हाथ उसकी नाभि पर जा पड़ा । उसने उसके चरण-कमलों को स्पर्श किया और मुख से कुछ भी बोले बिना घर चली आई ॥ ६ ॥ दो एक घड़ी उसने उससे दूर बितायी और इधर उस कुँवर को पुनः होश आ गया ।

कुअरि कह पुनि सुधि आई। हाहा शबद रटत घर गयो। खान पान तब तें तजि दयो ॥ ७ ॥ बिरही भए दोऊ नर नारी। राजकुअर अरु राजकुमारी। हाव परसपर दुहूँअन भयो। सो मैं कबितन मांझ कहियो ॥ ८ ॥ ॥ सवैया ॥ उन कुंकम टीको दयो न उतै इत ते हूँ न सेंदुर माँग सवारी। त्यागि दयो सभ को डरवा सभ हूँ की इतै तिह लाज बिसारी। हार तजे तिन हेरब तें सजनी लखि कोटि हहा (मू०ग्रं०१३२०) करि हारी। पान तजे तुम ता हित प्रीतम प्रान तजे तुमरे हित प्यारी ॥ ९ ॥ ॥ चौपई ॥ उतै कुअरि कह कछू न भावै। हहा शबद दिन कहत बितावै। अंन न खात पियत नहि पानी। मित्र हुतो तिह तिन पहिचानी ॥ १० ॥ कुअर बिथा जिय की तिह दई। इक त्रिय मोहि दरस दै गई। नाभ पाव पर हाथ लगाइ। फिरि न लखा कह गई सु काइ ॥ ११ ॥ ताकी बात न ताँहि पछानी। कहा कुअर इन मुझै बखानी। पूछि पूछि सभही तिह जावैं। ताको मरमु न कोई पावै ॥ १२ ॥ ताको मित्र हुतो खतरेटा। इशक मुशक के साथ लपेटा। कुअर तवन

वह हा हा कहता हुआ घर गया और खान-पान सब उसने त्याग दिया ॥ ७ ॥ दोनों नर-नारी अर्थात् वह राजकुमार और राजकुमारी विरही हो उठे। उन दोनों को परस्पर प्यार हो गया और इसी सबका मैंने काव्य में वर्णन किया है ॥ ८ ॥ ॥ सवैया ॥ उसने उधर कुंकुम का टीका नहीं लगाया और इधर इसने भी माँग में सिंदूर नहीं भरा। उन्होंने सब लाज और भय आदि त्याग दिए। वह उसे खोजती-खोजती हार गँवा बैठी और हार मान कर बैठ गई। तुम्हारे लिए प्रियतम प्राण त्याग रहा है और हे प्रिय ! तुम उसके लिए प्राण त्याग रही हो ॥ ९ ॥ ॥ चौपाई ॥ उधर कुँवर को कुछ अच्छा नहीं लगता था और "हाय-हाय" कहते सारा दिन बिता देता था। वह केवल मित्र को ही पहचान रहा था और अन्न-जल कुछ भी नहीं खा रहा था ॥ १० ॥ कुँवर ने उस मित्र को मन की बात कही कि मुझे एक स्त्री दर्शन दे गई है। उसने नाभि और पाँव पर हाथ लगाया और फिर मुझे पता नहीं क्या कह गई है ॥ ११ ॥ उस कुँवर ने क्या कहा है वह न समझ सका। सभी उससे पूछ-पूछकर जा रहे थे पर उसका मर्म कोई नहीं समझ रहा था ॥ १२ ॥ उसका एक क्षत्रिय मित्र था जो इश्क-मुश्क के साथ भरा-पूरा था कुँवर ने उस अपनी व्यथा सुनाई जिसे वह सुनते ही समझ

पहि ब्रिथा सुनाई । सुनत बात सभ ही तिन पाई ॥ १३ ॥
नाभमती तिह नाम पछाना । जिह नाभी कह हाथ छुआना ।
पदुमावती नगर ठहरायो । ताते पद पंकज कर लायो ॥ १४ ॥
दोऊ चले तह ते उठि सोऊ । तीसर तहाँ न पहूचा कोऊ ।
पदमावती नगर था जहाँ । नाभमती सुंदरि थी तहाँ ॥ १५ ॥
पूछत चले तिसी पुर आए । पदुमावती नगर नियराए ।
मालिनि हार गुहत थी जहाँ । प्रापति भए कुअर जुत
तहाँ ॥ १६ ॥ एक मुहर मालनि कह दियो । हार गुहन
हित न्रिप सुत लियो । लिखि पत्री ता महि गुहि डारी ।
जिस हाथन लै पड़ै पयारी ॥ १७ ॥ तैं जिह हाथ नाभि कह
लायो । और दुहूँ पद हाथ छुहायो । ते जन आजु नगर महि
आए । तुम सौ चाहत नैन मिलाए ॥ १८ ॥ राजसुता
पतिया जब चीनी । छोरि लई कर किसू न दीनी । बहु धन
दै मालिनी बुलाई । लिखि पत्री फिरि तनै पठाई ॥ १९ ॥
शिव कौ दिपत देहरो जहाँ । मैं ऐहौं आधी निसि तहाँ ।
कुअरि तहाँ तुमहूँ चलि ऐयहु । मन भावत को भोग
कमैयहु ॥ २० ॥ कुअर निसा आधी तह जाई । राज सुता
आगे तह आई । काम भोग की जेतिक प्यासा । पूरनि भई

गया ॥ १३ ॥ उसका नाम उस नाभिमती ने पहचान लिया जिसकी नाभि को हाथ लगा था । पद पंकज छूने की वजह से उसने नगर का नाम भी पदमावती पहचान लिया ॥ १४ ॥ वे तीसरे किसी को साथ लिये बिना दोनों वहाँ पहुँचे । जहाँ सुन्दर पदमावतीनगर में नाभिमती सुन्दरी थी ॥ १५ ॥ पूछते हुए वहीं आ गए और पदमावती नगर के पास आ पहुँचे । जहाँ मालिन हार गूँथ रही थी वे (दोनों) वहाँ आ निकले ॥ १६ ॥ मालिन को एक मुहर देकर उससे गूँथा हुआ हार ले लिया । एक पत्र उसमें गूँथकर डाल दिया ताकि वह प्यारी हाथों में लेकर पढ़ ले ॥ १७ ॥ तेरी नाभि को जिसने हाथ लगाया और तुमने जिसके चरणों को छुआ था वे नगर में आ गए हैं और तुमसे आँखें मिलाना चाहते हैं ॥ १८ ॥ राजकुमारी ने जब पत्र देखा तो खोल लिया और किसी को न दिया । बहुत सा धन देकर उसने मालिन को बुलाया और पत्र लिखकर फिर भेजा ॥ १९ ॥ जहाँ शिव का मंदिर शोभायमान है मैं वहाँ आधी रात को आऊँगी । हे कुँवर ! तुम वहाँ आ जाना और मनचाही रमण-क्रिया करना २० कुँवर आधी रात को वहाँ पहुँचा जहाँ राजकुमारी भी

दुहूँ की आसा ।। २१ ।। मालिनि की दुहिता कहि बामा । राजकुअर कह ल्याई धामा । राति दिवस दोऊ करत बिलासा । भूपत की तजि करि करि त्रासा ।। २२ ।। कितक दिनन ताको पति आयो । अति कुरूप नहि जात बतायो । सूकर के से दाँति बिराजैं । निरखत करी रदन द्वै भाजैं ।। २३ ।। राजकुअर त्रिय भेस सु धारे । (मू०ग्रं०१३२१) आवत भयो तिह निकट सवारे । राजसुता पहि निरखि लुभायो । भोग करन हित हाथ चलायो ।। २४ ।। राजकुअर तब छुरी सँभारी । नाक काटि त्रिप सुत की डारी । नाक कटे जड़ अधिक खिसायो । सदन छाडि काननहि सिधायो ।।२५।। नाक कटाइ जबै जड़ गयो । इन पथ शिव देवल को लयो । त्रिप सुत भ्रिगिक हितू हनि ल्यायो । दुहूँअन बैठि तिही ठाँ खायो ।। २६ ।। तही बैठि दुहूँ करे बिलासा । त्रियहि न रही भोग की आसा । लै ताकै संग देस सिधायो । इक सहचरि कह तहाँ पठायो ।। २७ ।। डिवढी सात सखी तिन नाखी । इमि बतिआँ भूपति संग भाखी । पति त्रिय गए दोऊ निसि कह तह । आगे हुते सदा शिवजू जह ।। २८ ।।

आ गई थी । कामक्रीड़ा की जितनी तृष्णा थी वह दोनों की पूरी हो गई ।। २१ ।। उसे स्त्री-वेश धारण कर मालिन की पुत्री कहकर राजकुमारी अपने निवास पर ले आई । अब राजा का भय भुलाकर वे रात-दिन भोग-विलास करने लगे ।। २२ ।। कई दिनों बाद उसका पति आ गया जिसकी कुरूपता का वर्णन नहीं किया जा सकता । सूअर के समान उसके दाँत थे जिन्हें देखकर हाथी के दाँत भी भाग खड़े होते थे ।। २३ ।। राजकुमार ने स्त्री-वेश धारण कर रखा था, वह उसके पास आने लगा । वह राजकुमारी पर लुब्ध था और उसने अपना हाथ आगे बढ़ाया ।। २४ ।। राजकुमार ने तब छुरी सँभालकर उस राजकुमार की नाक काट डाली । नाक कटने पर मूर्ख अत्यधिक क्रुद्ध हो उठा और जंगल में भाग गया ।। २५ ।। वह मूर्ख जैसे ही नाक कटाकर भागा इसने भी मन्दिर का रास्ता पकड़ा । राजा का पुत्र एक मृग मारकर लाया जिसे दोनों ने वहाँ बैठकर खाया ।। २६ ।। वहीं बैठकर दोनों ने रमणक्रीड़ा की और स्त्री की भोग की इच्छा पूर्ण हो गई । वह उसे लेकर अपने देश को चला गया और इधर एक दासी को भेज दिया ।। २७ ।। उस सखी ने सात दरवाजे पार करके राजा से कहा कि राजकुमारी और उसका पति दोनों

दुहूँ जाइ तह किए प्रयोगा। तीसर कोई न जानत लोगा। उलटि परा शिवजू रिसि भरियो। भसमीभूत दुहूँ कह करियो॥ २९॥ वहै भसम लै तिनै दिखाई। म्रिग भच्छन हित तिनै जगाई। भसम लए सभ ही जिय जाना। लै प्रीतम घर नारि सिधाना॥ ३०॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ छासठ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ ३६६॥ ६६८०॥ अफजूँ॥

अथ तीन सौ सतसठ चरित्र कथनं॥

॥ चौपई॥ अंधावती नगर इक सोहै। सैन बिदाव भूप तिह को है। मूरखिमति ताकी बर नारी। जिह सी मूढ़ न कहूँ निहारी॥ १॥ प्रजा लोग अति ही अकुलाए। देस छोडि परदेस सिधाए। और भूप पहि करी पुकारा। न्याइ करत तैं नही हमारा॥ २॥ ताँते तुम कुछ करहु उपाइ। जाते देस बसैं फिरि आइ। चारि नारि तब कह्यो पुकारि। हम ऐहैं जढ़ न्रिपहि सँघारि॥ ३॥ द्वै त्रिय भेस

रात को शिव-मंदिर में गए थे॥ २८ दोनों ने वहाँ जाकर अभ्यास किया जिसे तीसरा कोई नहीं जानता है। वह अभ्यास उलटा हो गया और शिव ने क्रुद्ध हो उन दोनों को भस्म कर दिया है॥ २९॥ उसने वही भस्म उसको दिखा दी जो मारे गये मृग की उसे मिली थी। सबने समझा कि वह भस्म हो गई है और वह प्रियतम स्त्री को लेकर घर की ओर चल पड़ा॥ ३०॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ छाछठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ ३६६॥ ६६८०॥ अफजूँ॥

तीन सौ सड़सठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई॥ अंधावती नगरी का बिदादसेन एक राजा था। उसकी रानी का नाम मूर्खमति था जिनके समान अन्य मूर्ख कहीं नहीं देखी-सुनी जाती थी॥ १॥ प्रजा अत्यन्त ही व्याकुल थी और देश छोड़कर परदेश चली गई थी। प्रजा राजा के पास पुकार कर रही थी कि तुम हमारा न्याय क्यों नहीं करते॥ २॥ कुछ उपाय करो जिससे देश पुनः बस जाय। चार स्त्रियों ने तब कहा कि हम मूर्ख राजा को मार कर

पुरख के धारी । पैठि गई तिह नगर मंझारी । द्वै त्रिय भेस जोग्य को धारो । प्रापति भी तिह नगर मझारो ॥ ४ ॥ इक त्रिय चोरी करी बनाइ । पकरि लई दूसरि त्रिय जाइ । द्वै त्रिय जोग भेस कौ धरिकै । गई भूप को चरित बिचरिकै ॥ ५ ॥ भूप कहा सूरी इह दीजै । तीनो हुकमु हमारे लीजै । हनन न्हात लै ताहि सिधारे । द्वै इस्त्री ह्वै अतिथ पधारे ॥ ६ ॥ जोगिनि नारि कहा अस कीजै । द्वै महि इक जोगी (मू०ग्रं०१३२२) कह दीजै । ऐहैं इहाँ अरस की बाता । जानत कोई न ताकी घाता ॥ ७ ॥ दुतिय नार इमि बचन उचारे । याहि न सूरी देहु कहारे । सूरी एक अतिथ को दीजै । तसकर दूर इहाँ ते कीजै ॥ ८ ॥ चली खबरि आवै इह कहाँ । बैठि बिदाद नराधिप जहाँ । अंध नगर के तीर लोग सभ । अच्छर कछु न पड़े तिन गरधभ ॥ ९ ॥ और कछू आनै नहि बाता । महाँ पशू मूरख बिख्याता । इह धुनि परी कान प्रभ के जब । निरखन चला अतिथहि द्वै तब ॥ १० ॥ दरस किया तिन को जब जाई । बचन किया भूपति मुसकाई । तुम सूरी कारन किह लेहु । सो मुहि भेद क्रिपा करि देहु ॥ ११ ॥ हो हम जनम जनम किय पाता ।

आएंगी ॥ ३ ॥ दो स्त्रियाँ पुरुष-वेश में नगर में घुस गई और दो स्त्रियाँ योगी-वेश धारण कर नगर में आ गई ॥ ४ ॥ एक स्त्री ने चोरी की और दूसरी ने उसे पकड़ लिया । दो स्त्रियाँ योगी-वेश में कुछ प्रपंच सोचकर राजा के पास गई ॥ ५ ॥ राजा ने कहा कि इसे सूली पर चढ़ा दो और हमारा हुक्म मानो । वे मारने के लिए उसे ले चले तो दो स्त्रियाँ साधु-वेश में आ गई ॥ ६ ॥ योगिनी स्त्रियों ने कहा कि ऐसा करो कि दो में से एक योगियों को दे दो । यहाँ आकाश की बातें होंगी जिसके बारे में कोई कुछ नहीं जानता ॥ ७ ॥ दूसरी स्त्री ने कहा कि इसे सूली मत चढ़ाओ । एक साधु को सूली पर चढ़ाओ और चोर को यहाँ से हटा दो ॥ ८ ॥ यह खबर पहुँचते-पहुँचते बिदादसेन राजा के पास पहुँची । अंधनगर के सभी लोगों में से गधों के समान कोई भी एक अक्षर नहीं पढ़ा हुआ था ॥ ९ ॥ वे अन्य कोई बात भी नहीं जानते थे और पशुत्व तथा मूर्खता के लिए विख्यात थे । यह बात जब राजा के कान में पड़ी तो वह साधुओं को देखने के लिए चला ॥ १० ॥ जब उसने उनका दर्शन किया तो राजा ने मुस्करा कर कहा कि तुम सूली पर क्यों चढ़ रहे हो इसका भेद कृपापूर्वक

या पर चड़त होहि सभ घाता। या पर बात स्वरग की ऐहै। आवागवन तुरत मिटि जैहै॥ १२॥ जब राजै ऐसो सुनि पाई। चित चड़बे की बिवत बनाई। अवर लोग सभ दए हटाइ। आपु चढ़ा सूरी पर जाइ॥ १३॥ भूप चड़त जोगी भजि गए। कहूँ दुरे जनियत नहि भए। धरि इसत्रिन के रूप अपारा। मिलगे ताही नगर मँझारा॥ १४॥ इह छल अन्याई न्रिप मारि। देस बसायो बहुरि सुधारि। अंधनगर कछु बात न पाई। इह छल हना हमारा राई॥ १५॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ सतसठ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ ३६७॥ ६६९५॥ अफजूं॥

अथ तीन सौ अठसठ चरित्र कथनं॥

॥ चौपई॥ गढ़ कनौज को जहाँ कहिज्जै। अभै सिंघ तह भूप भनिज्जै। स्रीचखुचार मती तिह नारी। जिह सम तुल्ल न ब्रहम सवारी॥ १॥ ताको नेहु एक सौ लागो।

मुझसे कहो॥ ११॥ उसने कहा कि मैंने जन्म-जन्म से पाप किए हैं जिनका इस पर चढ़ने से नाश हो जायगा। इससे स्वर्ग मिलेगा और मेरा आवागमन तुरन्त मिट जायगा॥ १२॥ जब राजा ने यह सुना तो स्वयं सूली पर चढ़ने का उपक्रम किया। उसने अन्य सब लोगों को हटा दिया और स्वयं सूली पर जा चढ़ा॥ १३॥ राजा के सूली पर चढ़ते योगी भाग गए और कहाँ छिप गए कहा नहीं जा सकता। वे स्त्रियों का रूप धारण कर नगरवासियों में मिल गए॥ १४॥ इस प्रपंच से अन्यायी राजा को मार कर पुनः देश को बसाया। अंधनगर के लोगों को कुछ पता नहीं चला कि हमारा राजा प्रपंच से मार डाला गया है॥ १५॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ सड़सठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ ३६७॥ ६६९५॥ अफजूं॥

तीन सौ अड़सठवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई॥ कन्नौज का क़िला जहाँ कहा जाता है वहाँ अभयसिंह नामक राजा रहता था। उसकी स्त्री चक्षुचारमती थी जिसके समान ब्रह्मा ने अन्य किसी को नहीं बनाया था। १ उसका स्नेह एक व्यक्ति से

जाते लाज छाड तन भागो । अघट सिंघ तिह नाम भनिज्जै । को दूजा पटतर तिह दिज्जै ॥ २ ॥ नितिप्रति तिह त्रिय बोलि पठावत । काम भोग तिह साथ कमावत । तब लौ तहाँ नराधिप आयो । त्रिय चरित्र इह भाँति बनायो ॥ ३ ॥ तुमरे केस भूप बिकरारा । सहे न मो ते जात सुधारा । प्रथमहि रोम मूँडि तुम आवहु । बहुरि हमारी सेज सुहावहु ॥ ४ ॥ जब न्रिप गयो रोम मूँडिन हित । रानी अधिक प्रसन्य भई चित । (मू०ग्रं०१३२३) छिद्र ताकि निजु मीत लुकायो । मूरख भूप भेद नहि पायो ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संवादे तीन सौ अठसठ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३६८ ॥ ६७०० ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ उनहत्तर चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु राजा इक और कहानी । जिह बिधि किया राव संग रानी । गनपति सिंघ एक राजा बर । सत्रु कंपत ताके डर घर घर ॥ १ ॥ चंचल दे राजा की नारी ।

लग गया था जिससे लज्जा उसे छोड़कर भाग गई थी । उसका नाम अघट सिंह था जिसके समान अन्य कोई नहीं था ॥ २ ॥ रोज वह स्त्री उसे बुलाती थी और उसके साथ कामभोग किया करती थी । तब तक एक दिन राजा वहाँ आ गया तो उस स्त्री ने ऐसा प्रपंच बनाया ॥ ३ ॥ हे राजन् ! तुम्हारे बाल बिकराल हैं जो मुझसे सहन नहीं होते । पहले तुम बाल काटकर आओ तब मेरी शय्या पर शोभायमान होओ ॥ ४ ॥ जब राजा बाल काटने के लिए गया तो रानी मन में प्रसन्न हो उठी । एक छिद्र देखकर उसने अपने मित्र को छिपा दिया और मूर्ख राजा कुछ भेद न जान सका ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ अड़सठवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३६८ ॥ ६७०० ॥ अफजूं ॥

तीन सौ उनहत्तरवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ राजन ! एक अन्य कहानी सुनो कि एक राजा के साथ रानी ने क्या किया । गनपति सिंह एक श्रेष्ठ राजा था जिसके डर से शत्रु अपने घरों में भी काँपते थे ॥ १ ॥ राजा की रानी चंचलदेवी थी जिसके

जिसु सम दुतिय न कहूँ हमारी। अवर रानियन के घर आवै। ताकौ कबही मुखन दिखावै ॥ २ ॥ रानी इन बातन ते जरी। पति बध को इच्छा जिय धरी। और नारि को धरि करि भेसा। निजु पति के ग्रहि लिया प्रवेसा ॥ ३ ॥ अपनी नारि न त्रिप तिह जाना। अधिक रूप लखि ताहि लुभाना। भई रैनि तब लई बुलाइ। भोग किया तासौ लपटाइ ॥ ४ ॥ यौं बतिया तिह साथ उचारी। है छिनार त्रिप नार तिहारी। एक पुरख को धाम बुलावत। मुहि निरखत तासौ लपटावत ॥ ५ ॥ यौ त्रिप सो तिन कही बनाइ। अति निजु पति कह रिसि उपजाइ। लखिन चला भूपत तिह धाई। धाम आपनागम त्रिय आई ॥ ६ ॥ निजु तनु भेस पुरख को धारी। गई सवति के धाम सुधारी। आगे प्रीति हुती संग जाके। बैठी जाइ सेज चड़ि ताके ॥ ७ ॥ तब लगि तहाँ नराधिप आयो। पुरख भेस लखि नारि रिसायो। जो बातैं मुहि यार उचारी। सो अखियन हम आजु निहारी ॥ ८ ॥ काढि क्रिपान हनति तिह धयो। रानी

समान अन्य कोई स्त्री नहीं थी। राजा अन्य रानियों के घर में आता था पर उसे कभी मुख भी नहीं दिखाता था ॥ २ ॥ रानी ने इन बातों से जल-भुनकर पति का वध करने की इच्छा बना ली। एक अन्य स्त्री का वेश धारण कर उसने अपने पति के घर में प्रवेश किया ॥ ३ ॥ राजा ने उसे अपनी स्त्री के रूप में नहीं पहचाना और उसका अत्यधिक सौंदर्य देखकर उस पर मोहित हो गया। जब रात हुई तो उसको बुलाया और उससे लिपटकर रमण किया ॥ ४ ॥ उस स्त्री ने उससे कहा कि हे राजन ! तुम्हारी स्त्री कुलटा एवं छिनाल है। वह एक पुरुष को घर में बुलाती है और मेरे देखते-देखते उससे लिपट जाती है ॥ ५ ॥ उसने इस प्रकार बनाकर राजा से कहा और अपने पति के मन में क्रोध पैदा कर दिया। राजा शीघ्रता से यह सब देखने के लिए चला और इधर वह स्त्री भी पहले ही अपने घर आ पहुँची ॥ ६ ॥ उसने अब पुरुष का वेश धारण कर लिया और सौतन के घर में घुस गई। राजा की प्रीति जिसके साथ थी उसकी शय्या पर चढ़कर बैठ गई ॥ ७ ॥ तब तक राजा वहाँ आ गया और नारी को पुरुष के रूप में देखकर क्रुद्ध हो उठा। उसने सोचा कि मेरी प्रेमिका ने जो बातें मुझसे कही हैं वे मैंने आँखों से देख ली हैं ॥ ८ ॥ वह कृपाण निकालकर उसे मारने दौड़ा पर रानी ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा कि हे मूर्ख !

हाथ नाथ गहि लयो। तब त्रिय भेस तहाँ नर धारा। तै जढ़ या कह जार बिचारा ॥ ९ ॥ जब तिह त्रिय निजु नारि बिचार्यो। उतरा कोप हियै थो धार्यो। तिन इस्त्री इह भाँति उचारी। सुनु मूरख त्रिप बात हमारी ॥ १० ॥ बसत एक द्विजबर इह गावैं। चंद्रचूड़ ओझा तिह नावैं। ब्रहम डंड तिह पूछि करावहु। तब अपनो मुख हमै दिखावहु ॥ ११ ॥ जब राजा तिह ओर सिधायो। तब दिज को त्रिय भेख बनायो। चंद्रचूड़ धरि अपना नाम। प्रापति भई त्रिपति के धाम ॥ १२ ॥ तिह त्रिप नाम पूछ हरखाना। चंद्रचूड़ तिह कौ पहिचाना। जिह हित जात कहो परदेसा। भली भई आयो वहु देसा ॥ १३ ॥ जब पूछा राजै तिह जाई। त्रिय दिज ह्वै इह बात बताई। जो (मू०ग्रं०१३२४) त्रिदोख कह दोख लगावै। जनपुर अधिक जातना पावै ॥ १४ ॥ तह तिह बाँधि थंभ कै संग। तपत तेल डारत तिह अंग। छुरियन साथ मासु कटि डारैं। नरक कुंड के बीच पछारैं ॥ १५ ॥ गावा गोबर लेहु मगाइ। ताको चिता बनावहु राइ। ता मौ बैठि जरै जे कोऊ। जमपुर बिखै न टँगियै सोऊ ॥ १६ ॥ ॥ दोहरा ॥ सुनत

तुम्हारी स्त्री ने ही पुरुष का वेश धारण किया था जिसे तुमने यार समझ लिया है ॥ ९ ॥ जब राजा ने उसे अपनी स्त्री माना तो उसके मन का क्रोध उतर गया। उस स्त्री नें तब कहा कि हे मूर्ख राजा ! अब मेरी बात सुनो ॥ १० ॥ इस नगर में एक ब्राह्मण रहता है जिसका नाम ओझा चन्द्रचूड़ है। उसके पास तुम ब्रह्मदंड देकर आओ तब मुझे अपना मुँह दिखाओ ॥ ११ ॥ जब राजा उस ओर चला तो स्त्री नें ब्राह्मण का वेश धारण कर लिया। अपना नाम चन्द्रचूड़ रखकर राजा के घर में आ पहुँची ॥ १२ ॥ राजा उसका नाम सुनकर प्रसन्न हो गया और उसे चन्द्रचूड़ मानने लगा। जिसके लिए मैं अन्यत्र जानेवाला था, अच्छा हुआ वह यहीं आ गया ॥ १३ ॥ जब राजा ने उससे पूछा तो स्त्री ने ब्राह्मण बनकर यह बात कही। जो निर्दोष पर दोषारोपण करता है वह अत्यधिक यातना पाता है ॥ १४ ॥ उसे खंभे के साथ बाँधा जाता है और तपते हुए तेल मे उसके अंगों को डाला जाता है। छुरियों से उसका मांस काट डाला जाता है और उसे नर्ककुंड में पछाड़ फेंका जाता है ॥ १५ ॥ गाय का गोबर मंगाओ और उसकी चिता बनाओ उसमे बैठकर यदि कोई जले तो उसे यमलोक

बचन दिज नारि त्रिप गोबर लिया मँगाइ । बैठि आपु ताँ महि जरा सका न त्रिय छल पाइ ॥ १७ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ उनहत्तर चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३६९ ॥ ६७१७ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ सत्तर चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ ब्याघ्रकेत सुनियत इक राजा । जिह सम दुतिय न बिधना साजा । ब्याघ्रवती नगर तिह सोहै । इंद्रावती नगर को मोहै ॥ १ ॥ स्री अबदालमती त्रिय ताकी । नरी नागनी तुल्लि न वाकी । तह इक हुतो शाहु सुत आछो । जनु अलि पनच काछ तन काछो ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ स्री जसतिलक सिंघ तिह नाम पछानियै । रूपवान धनवान चतुर पहिचानियै । जो इसत्री ताको छिन रूप निहारई । हो लोक लाज कुलि कानि सभै तजि डारई ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ एक सखी ताकौ लखि पाई । बैठि सखिन महि बात चलाई । जस सुंदर इक इह पुर माहो । तैसो चंद्र

में कोई (सूली पर) नहीं टाँगेगा ॥ १६ ॥ ॥ दोहा ॥ स्त्री के वचन सुनकर राजा ने गोबर मँगा लिया। स्वयं उसमें बैठकर जल गया और छल को न पहचान सका ॥ १७ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ उनहत्तरवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३६९ ॥ ६७१७ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ सत्तरवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ व्याघ्रकेतु नामक एक राजा था जिसके समान :विधाता ने अन्य किसी को नहीं बनाया था। वह व्याघ्रवतीनगर में शोभायमान था जो कि इन्द्रावतीनगरी को भी मोहित करती थी ॥ १ ॥ उसकी स्त्री अबदालमती थी जिसके समान नर, नाग-स्त्री कोई भी नहीं थी। वहाँ एक धनिक का पुत्र था जिसका शरीर धनुष के समान लचकीला था ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ उसका नाम जसरायतिलक सिंह था और वह रूपवान्, धनवान एवं चतुर माना जाता था। जो भी स्त्री उसके रूप-सौंदर्य को देखती थी वह लोकलाज, कुल-मर्यादा सबका त्याग कर देती थी ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ एक सखी ने उसे देखा और सखियों में बैठकर उसने बात चलाई। एक व्यक्ति इस नगर में इतना सुन्दर है कि वैसे

सूर भी नाही ॥ ४ ॥ सुनि बतिया रानी जिय राखी। और नारि सौ प्रगट न भाखी। जो सहचरि ताकौ लखि आई। रैनि भई तब बहै बुलाई ॥ ५ ॥ अधिक दरबु ताकौ दै रानी। पूछी ताहि दीन ह्वै बानी। सु कहु कहाँ मुहि जु तैं निहारा। किया चाहत तिह दरस अपारा ॥ ६ ॥ तब चेरी इमि बचन उचारो। सुनु रानी जू कहा हमारो। स्री जसतिलक राइ तिह जानो। शाह पूत ताकह पहिचानो ॥ ७ ॥ जु तुम कहौ तिह तुमैं मिलाऊँ। मदन ताप सभ तोर मिटाऊँ। सुनत बचन रानी पग परी। पुनि तासौ बिनती इमि करी ॥ ८ ॥ जे ताको तै मुझै मिलावैं। जो धन मुख माँगै सो पावैं। तह सखी गई बार नहि लागी। आनि दियो ताकौ बडभागी ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ रानी ताकौ पाइ तिहि दारिद दिया मिटाइ। न्रिप की आँख (मू०ग्रं०१३२५) बचाइ उहि लियो गरे सौ लाइ ॥ १० ॥ ॥ चौपई ॥ दोऊ धनी औ जोबनवंत। करत कामक्रीड़ा बिगसंत। इक कामी अरु कैफ चड़ाई। रैनि सकल रति करत बिताई ॥ ११ ॥ लपटि लपटि आसन बे लेही। आपु बीचि सुख बहु बिधि देही। चुंबन करत नखन के घाता। रैनि बिती आयो ह्वै

चाँद और सूरज भी नहीं हैं ॥ ४ ॥ रानी ने सुनकर बात दिल में रखी। जिस दासी ने उसे देखा था रात होने पर उसने उसे ही बुलाया ॥ ५ ॥ उसे रानी ने अधिक धन देकर दीनतापूर्बक पूछा कि तुमने जिसे देखा है बताओ वह कहाँ है ? मैं उसका दर्शन करना चाहती हूँ ॥ ६ ॥ तब दासी ने कहा कि हे रानी ! मेरी बात सुनो। उसका नाम जसरायतिलक है और वह एक धनिक का पुत्र है ॥ ७ ॥ यदि तुम कहो तो मैं तुम्हें उससे मिला दूँ और तुम्हारा काम कष्ट मिटा दूँ। बात सुनकर रानी चरणों में गिर पड़ी और पुनः उससे प्रार्थना करने लगी ॥ ८ ॥ यदि तुम मुझे उससे मिला दो तो मुँह माँगा धन पाओगी। वह दासी अबिलम्ब गई और उस भाग्यशाली को उससे मिला दिया ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ रानी ने उसे पाकर उसकी दरिद्रता मिटा दी। उसने उसे राजा की आँख बचाकर उसे गले से लगा लिया ॥१०॥ ॥ चौपाई ॥ दोनों ही धनी और यौबनयुक्त थे। वे कामक्रीडा करके प्रसन्न होने लगे। एक तो वे कामी थे दूसरे उन्होंने मदिरापान कर लिया था; उन्होंने सारी रात रतिक्रीडा में रत रहकर ही बिता दी ११ वे लिपट-लिपटकर आसन लगाते थे और परस्पर विविध प्रकार

प्राता ॥ १२ ॥ रानी गई प्रात पति पास । लगी रही जाकी जिय आस । अथवत दिनन होत अंधयारो । बहुरि भजै मुहि आनि पयारो ॥ १३ ॥ जौ रहिहौ राजा कै पास । मोहि राखि है बिरध निरास । संग कहाँ याके स्वै लैहौ । मित्र भोग भोगन ते जैहौ ॥ १४ ॥ किह छल सेज सजन की जाऊँ । नख घातन किह भाँति छपाऊँ । बिरध भूप तन सोत न जैयं । ऐसो कवन चरित्र दिखैयै ॥ १५ ॥ जाइ कह्यो न्रिप संग अस गाथा । बात सुनहु हमरी तुम नाथा । हियै बिलारि मोर नखलाए । काढि भूप कौ प्रगट दिखाए ॥ १६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सुनु राजा मैं आजु न तुम संग सोइहौ । निजु पलका पर परी सकल निसु खोइहौ । इहाँ बिलारि मोहि नख घात लगात है । हो तुहि मूरख राजा ते कछु न बसात है ॥ १७ ॥ इह छल तजि स्वैबो न्रिप पासा । किया मित्र सौ काम बिलासा । घात नखन की नाह दिखाई । बिरध मूढ़ न्रिप बात न पाई ॥ १८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ सत्तर चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३७० ॥ ६७३५ ॥ अफजूं ॥

से सुख लेते थे । चुंबन और नख-आघात-प्रतिघात करते रात बीत गई और सुबह हो गई ॥ १२ ॥ रानी फिर प्रातः पति के पास गई पर उसके मन में उसकी आशा लगी ही रही ॥ १३ ॥ वह सोचने लगी कि यदि मैं राजा के पास रहती हूँ तो यह बृद्ध मुझे निराश ही रखेगा । इसके साथ सोने से तो मित्र को भोगने से भी मैं वंचित हो जाऊँगी ॥ १४ ॥ किस प्रकार मैं पति की शय्या पर जाऊँ और नख-आघातों को कैसे छिपाऊँ । ऐसा कौन सा प्रपंच किया जाय कि वृद्ध राजा के साथ सोना न पड़े ॥ १५ ॥ उसने राजा से जाकर कहा कि हे नाथ ! तुम मेरी बात सुनो । मेरी छाती पर बिल्ली ने नाख़ून गड़ा दिये हैं और यह कहकर राजा को प्रकट में सब दिखा दिया ॥१६॥ ॥ अड़िल्ल ॥ हे राजन ! सुनो, आज मैं तुम्हारे साथ नहीं सोऊँगी और अपने पलंग पर ही सारी रात बिताऊँगी । यहाँ बिल्ली मुझे नाख़ून मार जाती है और तुम मूर्ख राजा हो जो कुछ भी नहीं करते हो ॥ १७ ॥ इस छल से उसने राजा के पास सोना त्यागा और मित्र से भोग-विलास किया । राजा को नाख़ूनों का आघात दिखाया परन्तु वृद्ध मूर्ख राजा कुछ भी न समझ सका ॥ १८ ॥ १ ॥

। श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ सत्तरवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ३७० ६७३५ । अफजूं ।

अथ तीन सौ इकहत्तरि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ अछलसैन इक भूप भनिज्जै । चंद्र सूर पटतर तिह दिज्जै । कंचन दे ताके घर नारी । आपु हाथ लै ईस सवारी ॥ १ ॥ कंचनपुर को राज कमावै । सूरबीर बलवान कहावै । अरि अनेक जीते बहु भांता । तेज त्रसत जाके पुर साता ॥ २ ॥ तहाँ प्रभाकर सैनिक शाह । निरख लजत जाको मुख माह । जब रानी ताकह लखि पायो । इहै चित्त भीतर ठहरायो ॥ ३ ॥ या कह जतन कवन करि पइयै । कवन सहचरी पठै मँगइयै । याहि भजे बिनु धाम न जैहौ । जिह तिह भाँति याहि बसि कैहो ॥ ४ ॥ कनक पिंजरी परी हुती तह । मरमकेत रानी के बसि मह । (मू०ग्रं०१३२६) बीर राखि तिह तहीं पठाई । सेज उठाइ जाइ लै आई ॥ ५ ॥ काम भोग तासौ जब माना । द्वै प्रानन ते इक जिय जाना । निजु नाइक सेती हित छोरो । तासे चतुरि चौगुनो जोरो ॥ ६ ॥ जाइ राव सौ बात जनाई । मोरे शाह पूरबलो भाई । हम को स्राप एक रिख दिया ।

तीन सौ इकहत्तरवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ अछलसेन एक राजा था जिसकी तुलना चन्द्र-सूर्य से की जाती थी। उसकी स्त्री कंचनदेवी थी जिसे ईश्वर ने स्वयं हाथ से बनाया था॥ १॥ राजा कंचनपुर पर राज्य करता था और शूरवीर बलवान कहलाता था। उसने अनेक प्रकार से शत्रुओं को जीता और सातों पुरियाँ उसके तेज से त्रस्त थीं॥ २॥ वहाँ एक प्रभाकरसेन नामक धनी था जिसे देखकर चन्द्रमा भी लज्जित होता था। जब रानी ने उसे देखा तो मन में यही निर्णय किया॥ ३॥ कि इसे किस यत्न से प्राप्त किया जाय और किस दासी को भेजकर इसे मँगाया जाय। इसके साथ रमण किए बिना तो वापस घर नहीं जाऊँगी और जैसे भी हो इसे वश में कर लूंगी॥ ४॥ मर्मकेतु रानी के वश में एक कनकपिंजरी नामक परी थी। उसने वीरों को वहाँ भेजा जो उसकी शय्या वहाँ से उठा लाये॥ ५॥ जब उससे रतिक्रीड़ा की तो मानों दो प्राणों से वे एक प्राण हो गए। उस रानी ने अपने पति से प्रेम को त्याग दिया और इससे चार गुना अधिक प्यार उस धनिक से करने लगी॥ ६॥ उस रानी ने राजा से जा कहा कि धनिक

ताते जनम दुहूँ ह्याँ लिया ॥ ७ ॥ पुनि हम सौ रिखि ऐस उचारा । ह्वैहै बहुरि उधार तुहारा । मात लोक बहु बरिस बितैहौ । बहुरौ दोऊ स्वरग महि ऐहौ ॥ ८ ॥ हम तुमरो घर बस सुखु पायो । अब रिखि स्राप अवधि ह्वै आयो । ए बच भाखि त्रिपहि घर आई । शाह परी जुत लिया बुलाई ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ गई इह गई धंनि तुम करियहु । भूप सुनत नभ बिखैं उचरियहु । जब तिन बात भेद को जानो । भला कहोगी परी बखानो ॥ १० ॥ शाह सहित भूपति पहि जाइ । कही जात है रानी राइ । इह बिधि भाखि लोप ह्वै गई । गई गई बानी नभ भई ॥ ११ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ गई यह गई चिर लौ नभबानी भई । प्रजा सहित तिन भूप यहै जिय में ठई । रानी सुरपुर गई भ्रात को साथ लै । हो मूरख भेद अभेद न सका बिचारि कै ॥ १२ ॥ ॥ चौपई ॥ मिलि सभहिन इह भांति उचारी । गई स्वरग त्रिप नारि तुमारी ।

मेरा पूर्वजन्म का भाई है । हमें एक ऋषि ने शाप दिया था जिससे हम दोनों ने यहाँ जन्म लिया ॥ ७ ॥ पुनः ऋषि ने हम लोगों से ऐसा कहा कि तुम दोनों का फिर उद्धार होगा । तुम लोग बहुत से वर्ष मृत्युलोक धरती पर बिताओगे और फिर वापस स्वर्ग आ जाओगे ॥ ८ ॥ मैंने तुम्हारे घर में काफ़ी सुख पाया है पर अब ऋषि के शाप पूरा होने की अवधि आ गई है । यह बात कहकर वह महल के अन्दर आ गई और परी-समेत धनिक को बुला लिया ॥ ६ ॥ ॥ चौपाई ॥ रानी ने परी से कहा कि "गई, गई" और "धन्य, धन्य" तुम राजा को सुनाते हुए आकाश में कहना । जब उसने भेद की बात कह दी तो परी ने कहा कि मैं ऐसा ही कहूँगी ॥ १० ॥ धनिक-समेत राजा के पास जाकर रानी ने राजा से कहा कि मैं जा रही हूँ । यह कहकर वह लुप्त हो गई और "गई, गई" की ध्वनि आकाश में हुई ॥ ११ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ "गई-गई" की वाणी आकाश में हुई और प्रजा-समेत राजा ने इसे सत्य मान लिया । रानी भाई को साथ लेकर स्वर्ग चली गई और यह मूर्ख कुछ भी भेद-अभेद न जान सका ॥१२॥ ॥ चौपाई ॥ सबने मिलकर यही कहा कि हे राजन ! तुम्हारी स्त्री स्वर्ग को चली गई है ।

तुम चिंता चित मै नहि करो। सुंदर सुघर अवर त्रिय बरो॥ १३ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ इकहत्तरि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३७१ ॥ ६७४८ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ बहत्तरि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु राजा इक अवर प्रसंगा। जिह बिधि किया नारि त्रिप संगा। जलजसैन इक भूप भनिज्जै। सु छबिमती तिह नारि कहिज्जै॥ १ ॥ सु छबिवती तिह नगर कहीजत। अमरपुरी पटतर तिह दीजत। राजा को त्रिय हुती न प्यारी। याते रानी रहत दुखारी॥ २ ॥ रानी रूप बैद को ठानि। राजा के घर किया पयान। कहा असाध भया है तोहि। बोलि चकितसा कीजै मोहि॥ ३ ॥ धावत तुमैं पसीनो आवत। रवि देखत द्रिगधुंध जनावत। राजा बात सत्य करि मानी। मूड़ भेद की क्रिया न जानी॥४॥ मूरख भूप भेद नहि पायो। त्रिय ते बोलि उपाइ

तुम मन से चिन्ता मत करो और अन्य किसी सुन्दर स्त्री से विवाह कर लो॥ १३ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ इकहत्तरवे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३७१ ॥ ६७४८ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ बहत्तरवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजा ! एक अन्य प्रसंग सुनो कि एक स्त्री ने एक राजा के साथ क्या किया। जलजसेन एक राजा कहा जाता था जिसकी रानी सुछविमती थी॥ १ ॥ अमर देवपुरी के समान उनकी नगरी सुछबिवती थी। राजा को रानी प्यारी नहीं थी इसीलिए वह उससे दुखी रहती थी॥ २ ॥ रानी ने वैद्य का रूप धारण कर राजा के घर प्रस्थान किया राजा से कहा कि तुम्हें असाध्य रोग हो गया है, तुम मुझे बुलाकर मेरा इलाज करो॥ ३ ॥ दौड़ने से तुम्हें पसीना आता है और सूर्य को देखने से धुँधला दिखाई देता है राजा ने बात को सत्य मान लिया और मूर्ख ने भेद की बात नहीं समझी ४ मूर्ख राजा ने रहस्य नहीं समझा और स्त्री को बुलाक

करायो । (मू०ग्रं०१३२७) तिन बिख डारि औखधी बीचा । छिन महि करी भूप की मीचा ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ बहत्तर चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३७२ ॥ ६७५३ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ तिहत्तरि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ शहिर दौलताबाद बसत जह । बिकट सिंघ इक भूप हुतो तह । भानमंजरी ताकी दारा । जिह सम करी न पुनि करतारा ॥ १ ॥ भीमसैन इक तह थो शाहा । प्रगट भयो जनु दूसर माहा । स्री अफताब देइ तिह नारी । कनक अवटि साचे जनु ढारी ॥ २ ॥ तिन मन मै इह बात बखानी । किह बिधि कै हूजियै भवानी । सोइ रही सभ जगहि दिखाइ । चमकि उठी सुपने कह पाइ ॥ ३ ॥ कहा दरस मुहि दिया भवानी । सभहिन सौ भाखी इमि बानी । जिह बरदान देउ तिह होई । या महि परै फेरि नहि कोई ॥४॥ लोग बचन सुनि करि पग लागे । बर आँगन लागे अनुरागे । ह्वै बैठी सभहिन की माई । यह सुनि खबर नराधिप पाई ॥५॥

उससे उपाय व इलाज कराने लगा। उसने औषध में जहर डालकर क्षण भर में राजा को मार डाला ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ बहत्तरवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३७२ ॥ ६७५३ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ तिहत्तरवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ दौलताबाद शहर में बिकट सिंह नामक एक राजा था। भानुमंजरी उसकी स्त्री थी जिसके समान कर्त्ता ने अन्य कोई स्त्री नहीं बनाई थी ॥ १ ॥ भीमसेन वहाँ एक धनी था जो मानों दूसरा चन्द्रमा था। आफ़ताब देवी उसकी स्त्री थी जो मानों सोने के साँचे में ढालकर बनाई हुई थी ॥ २ ॥ उसने मन में सोचा कि कैसे स्वयं भवानी बन जाया जाय। जब सब जग रहे थे तो वह सो रही थी और भड़भड़ा कर उठ बैठी मानों कोई स्वप्न देखा हो ॥ ३ ॥ वह सबसे कहने लगी कि मुझे भवानी ने दर्शन दिया है। मैं जो वरदान दूँगी वही होगा, इसमें कोई हेरा-फेरी नहीं होगी ॥ ४ ॥ लोग सुनकर उसके चरणों में आ पड़े और वरदान माँगने लगे वह सबकी माँ बन बैठी और यह खबर राजा

एक नारि इह नगर भनिज्जै। नाम हिंगुलादेइ कहिज्जै। जगत मात कौ आपु कहावै। ऊच नीच कह पाइ लगावै ॥६॥ काजी और मुलाने जेते। जोगी मुँडिया अरु दिज केते। सभ की घटि पूजा ह्वै गई। परचा अधिक तवन की भई ॥७॥ सभ भेखी याते रिसि भरे। बहु धन चड़त निरखि तिह जरे। गहि लै गए ताहि न्रिप पासा। कहत भए इह बिधि उपहासा ॥ ८ ॥ करामात कछु हमहि दिखाइ। कै न भवानी नामु कहाइ। तब अबला अस मंत्र बिचारा। सुनु राजा कह्यो बचन हमारा ॥ ९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ मुसलमान मसजदिहि अलहि घर भाखही। बिप्र लोग पाहन कौ हरि करि राखही। करामात जौ तुहि ए प्रथम बताइहैं। हो तिह पाछे कछु हमहूँ इनै दिखाइहैं ॥ १० ॥ ॥ चौपई ॥ बचन सुनत राजा मुसकाए। दिजबर मुल्लाँ पकरि मँगाए। मुँडिया और संन्यासी घने। जोगी जंगम जात न गने ॥ ११ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ भूप बचन मुख ते इह भाँति उचारियो। सभा बिखै सभहिन तिन सुनत पचारियो। करामात अपु अपनी हमैं दिखाइयै। हो नातर अब ही धाम त्रिपु के (मू०ग्रं०१३२८)

तक भी जा पहुँची ॥ ५ ॥ कि एक स्त्री इस नगर में है जिसका नाम हिंगलादेवी है। वह स्वयं को जगत्माता (भवानी) कहलाती है और ऊँच-नीच सबको चरणों से स्पर्श कर रही है ॥ ६ ॥ क़ाजी, मौलाने, योगी, मुँड़िया और ब्राह्मण आदि जितने हैं सबकी पूजा कम हो गई है और उसी की महिमा बढ़ गई है ॥ ७ ॥ सभी वेशधारी इससे क्रुद्ध थे और उसे अत्यधिक चढ़ावा चढ़ते देखकर जलते थे। वे उसे पकड़कर राजा के पास ले गए और उसका उपहास उड़ाने लगे ॥ ८ ॥ कुछ हम लोगों को भी करामात दिखाओ अन्यथा अपना नाम भवानी मत कहलाओ। तब स्त्री ने यह कहा कि हे राजन्! मेरी बात सुनो ॥ ९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ मुसलमान मस्जिद को अल्लाह का घर कहते हैं। ब्राह्मण लोग पत्थरों को भगवान करके जानते हैं। यदि ये सब तुम्हें कुछ करामात करके पहले दिखाएँगे तो बाद में हम भी इन्हें कुछ दिखा देंगे ॥ १० ॥ ॥ चौपाई ॥ बात सुनकर राजा मुस्कुरा उठा और उसने ब्राह्मण, मुल्ला, मुँड़िया, संन्यासी, जोगी, जंगम आदि अनेकों को पकड़ मँगाया ॥ ११ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजा ने सभा में सबको सुनाते हुए अपने मुख से यह कहा कि सभी अपनी-अपनी करामात हमें दिखाइए

जाइयै ॥ १२ ॥ सुनि राजा के बचन सभै ब्याकुल भए। शोक समुंद के बीच बूडि सभ ही गए। निरखि त्रिपति की ओर रहे सिर न्याइकै। हो करामात कोई सकै न ताहि दिखाइकै ॥ १३ ॥ करामात नहि लखी क्रोध राजा भर्‌यो। सात सात सै चाबुक तिनके तन झर्‌यो। करामात अपु अपनी कछुक दिखाइयै। हो नातर त्रिय के पाइन सीस झुकाइयै ॥ १४ ॥ ग्रहि खुदाइ कै ते कछु हमहि दिखाइयै। नातर इन शेखन को मूंड मुंडाइयै। करामात बिनु लखे न मिस्त्रन छोरिहों। हो नातर तुमरे ठाकुर नदि महि बोरिहों ॥ १५ ॥ करामात कछु हमहि संन्यासी दीजियै। नातर अपनी दूरि जटन को कीजियै। चमतकार मुंडियो अब हमहि दिखाइयै। हो नातर अपनी कंठी नदी बहाइयै ॥ १६ ॥ ॥ दोहरा ॥ रोदन वै करते भए किसू न आई बात। तब राजै तिह नारि कौ बचन कहा मुसकात ॥ १७ ॥ ॥ चौपई ॥ करामात इन कछु न दिखाई। अब चाहत हैं तुमते पाई। बचन हिंगुला देइ उचारे। सुनो नराधिप बैन हमारे ॥ १८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ करामाति इक अस मौ प्रथम पछानियै। जाकौ तेजु अरु त्रास जगत मौ मानियै। जीत हार

अन्यथा अभी सबको मृत्युलोक भेजता हूँ ॥ १२ ॥ राजा की बात सुनकर सभी व्याकुल हो शोक-समुद्र में डूब गए। सभी राजा की ओर सिर झुकाकर देखने लगे क्योंकि उनमें से कोई भी करामात नहीं दिखा सकता था ॥ १३ ॥ करामात न देखकर राजा क्रोध से भर गया और सात-सात सौ चाबुक उनके शरीर पर मारे। कुछ अपनी करामात दिखाओ नहीं तो इस स्त्री के पाँव पर सिर झुकाओ ॥ १४ ॥ खुदा के घर से हमको कुछ दिखाओ नहीं तो इन शेखों का सिर मुँड़वा दो। हे पंडितो ! करामात देखे बिना मैं तुम्हें नहीं छोड़ूंगा और नहीं तो तुम्हारे ठाकुरों को नदी में बहा दूंगा ॥१५॥ हे संन्यासियो ! हमें कुछ करामात दिखाओ नहीं तो अपनी जटाओं को हटा लो। मुँड़िया लोग भी कुछ दिखाएँ नहीं तो अपनी कंठी नदी में बहा दें ॥ १६ ॥ ॥ दोहा ॥ वे रोने लगे और किसी के मुँह से बात तक नहीं निकली। तब राजा ने उस स्त्री से मुस्कुराते हुए कहा ॥ १७ ॥ ॥ चौपाई ॥ इन्होंने तो कुछ भी करामात नहीं दिखाई अब मैं तुमसे चाहता हूँ। तब हिंगलादेवी ने कहा कि हे राजन मेरी बात सुनो १८ अड़िल्ल सबसे पहली

अरु म्रितु धार जाकी बसत । हो मेरे मन परमेसुर ताही कौ कहत ॥ १९ ॥ दुतिय काल मौ करामाति पहिचानियत । जिनको चौदह लोक चक्र कर मानियत । काल पाइ जग होत काल मिट जावई । हो यातें मुर मन ताहि गुरू ठहरावई ॥ २० ॥ करामात राजा रसनाग्रज जानियत । भलो बुरो जातें जग होत पछानियत । करामाति चौथी धन भीतर जानियै । हो होत रंक ते राव धरो तिह मानियै ॥२१॥ ॥ चौपई ॥ करामात इन महि नहि जानहु । ए सभ धन उपाइ पहिचानहु । चमतकार इन महि जौ होई । दर दर भीख न माँगै कोई ॥ २२ ॥ जो इन सभहूँ प्रथम सँघारो । तिह पाछे कछु मोहि उचारो । सत्ति बात हम तुमहि सुनाई । अब सु करौ जो तुमहि सुहाई ॥ २३ ॥ बचन सुनत राजा हरखाना । अधिक दियो तिह त्रिय को दाना । जगत मात तिन त्रिय जु कहायो । तिह प्रसादि निज (मू०ग्रं०१३२९) प्रान बचायो ॥ २४ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ तिहत्तरि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३७३ ॥ ६७७७ ॥ अफजूं ॥

करामात तो तलवार है जिसका तेज और भय सारे संसार में माना जाता है। जीत, हार और मृत्यु जिसकी धार में बसते हैं, मेरा मन तो उसी को परमेश्वर मानता है ॥ १९ ॥ दूसरी करामात काल है जिसका चक्र चौदह लोकों में चलता है। काल में ही संसार पैदा होता और उसी में समाप्त हो जाता है। इसलिए मेरा मन काल को गुरु मानता है ॥ २० ॥ (तीसरी) करामात जिह्वा के अग्रभाग अर्थात् वाणी में है जिससे व्यक्ति संसार में भला-बुरा पहचाना जाता है। चौथी करामात धन में है जिससे निर्धन भी राजा हो जाता है ॥ २१ ॥ ॥ चौपाई ॥ इन सब (व्यक्तियों) में करामात नहीं है; ये सब तो धन के उपाय करनेवाले जाने जाते हैं। इनमें यदि कोई चमत्कार होता तो ये दर-दर भीख नहीं माँगते डोलते ॥२२॥ इन सबको पहले मार डालो फिर मुझसे कुछ कहो। मैंने तो सत्य बात तुमसे कह दी है, अब तुम्हें जो अच्छा लगे वही करो ॥ २३ ॥ राजा बात सुनकर प्रसन्न हो उठा और उसने उस स्त्री को अत्यधिक दान दिया। उस स्त्री ने अपने आपको जगत्माता कहलवाया था और उसी की कृपा से उसने अपने प्राण भी बचा लिये ॥ २४ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ तिहत्तरवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति ३७३ । ६७७७ अफजूं

देस के बासी अनियत । सकल ब्रिथा निज प्रथम सुनावहु । बहुरि कुअरि की सेज सुहावहु ॥ ७ ॥ सुनि सखी मद्र देस हम रहही । धूम्रकेतु हम को जन कहही । सौदा हित आए इह देसा । देस देस को निरखि नरेसा ॥ ८ ॥ बतियन प्रथम ताँहि बिरमाइ । भाँति भाँति तन लोभ दिखाइ । ज्यों त्यों लै आई तिह तहाँ । मारग कुअरि बिलोकत जहाँ ॥ ९ ॥ जो धन कहा सुंद्र तिह दीना । कंठ लगाइ मित्र सो लीना । भाँति भाँति की कैफ मँगाई । एक खाट चढ़ि दुहूँ चड़ाई ॥१०॥ भाँति भाँति तन कैफ चड़ावहि । मिलि मिलि गीत मधुर धुनि गावहि । बिबिध बिधिन तन करत बिलासा । नैकु न करैं न्रिपति को त्रासा ॥ ११ ॥ छैलहि छैल न छोरा जाई । निसु दिन राखत कंठ लगाई । जब कबहूँ आखेट सिधावै । एक अंबारी ताहि चढ़ावै ॥ १२ ॥ तही काम क्रीड़ा कह करै । मात पिता ते नैकु न डरै । इक दिन राजा चढ़ा शिकारा । संग लए मिहरियै अपारा ॥ १३ ॥ (मू०ग्रं०१३३०) बेगम सोऊ शिकार सिधाई । एक अँबारी ताहि चढ़ाई । एक सखी तिह चढ़त निहारा । जाइ भूप सों भेद उचारा ॥ १४ ॥

कहो और फिर कुँवरि की शय्या पर शोभायमान होओ ॥ ७ ॥ हे सखी ! सुनो, हम मद्र देश के निवासी हैं और लोग मुझे धूम्रकेतु कहते हैं। हम देश-देशान्तरों के राजाओं को देखकर इस देश में व्यापार करने आए हैं ॥ ८ ॥ पहले उसे बातों में भुलाकर और फिर भाँति-भाँति के लोभ दिखाकर जैसे-तैसे उसे वहाँ ले आई जहाँ कुँवरि उसकी राह देख रही थी ॥ ९ ॥ उसने मुँह माँगा धन सुंदरी को दिया और मित्र को गले से लगा लिया। भाँति-भाँति की शराब उसने मँगाई और एक ही पलंग पर चढ़कर दोनों ने पी ॥ १० ॥ भाँति-भाँति के नशे पीते हुए वे मधुर गीत गाने लगे। वे विविध प्रकार से भोग-विलास कर रहे थे और राजा का तनिक भी भय नहीं मान रहे थे ॥ ११ ॥ छैल से वह छैला छोड़ा नहीं जा रहा था और वह उसे रात-दिन गले से लगाए रहती थी। जब कभी शिकार को जाती तो छतदार हाथी का हौदा लगवाती ॥ १२ ॥ उसी में काम-क्रीड़ा करती थी और माता-पिता से तनिक भी नहीं डरती थी। एक दिन राजा शिकार के लिए अनेकों दासियों को लेकर चला ॥ १३ ॥ वह बेगम भी शिकार के लिए छतदार हौदा लगाकर गई। एक सखी ने उस (प्रेमी) को भी चढ़ते हुए देख लिया और सारा

सुनि त्रिप बात चित मो राखी । औरि नारि सो प्रगट न भाखी । दुहिता को जब गज निकटायो । तब ताको पितु निकट बुलायो ।। १५ ।। सुनत बैन बेगम डरपानी । थरहर कंपा मित्र तिह मानी । अबहीं मुझै भूप गहि लैहै । इसी बन बिखैं मारि चुकैहै ।। १६ ।। नारि कही पिय जिन जिय डरो । कहौ चरित्र तुमै सो करो । करी रूख के तरे निकारा । लपटि रहा तासौ तह यारा ।। १७ ।। आपु पिता प्रति किया पयाना । मारे रीछ रोझ म्रिग नाना । ताहि बिलोकि पिता चुप रहा । झूठ लखा तिह त्रिय मुहि कहा ।।१८।। उसी सखी को पलटि प्रहारा । झूठ बचन इन मुझै उचारा । खेलि अखेट भूप ग्रहि आयो । तिसी बिरछ तर करी लखायो ।। १९ ।। ।। अड़िल्ल ।। पकरि भुजा गज पर पिय लयो चड़ाइकै । भोग अंबारी बीच करे सुख पाइकै । लपटि लपटि दोऊ केल करत मुसकाइ करि । हो हमरौ भूपति भेद न सकियो पाइ करि ।। २० ।। ।। दोहरा ।। पहिले रूख

रहस्य जाकर राजा से कह दिया ।। १४ ।। राजा ने बात सुनकर मन में रखी और अन्य किसी स्त्री से नहीं कही । जब पुत्री का हाथी पास आया तो पुत्री को पिता ने पास बुलाया ।। १५ ।। बात सुनकर बेगम डर गई और उसमें मित्र भी थरथर काँपने लगा । राजा मुझे अभी पकड़ लेगा और इसी वन में मार डालेगा ।। १६ ।। स्त्री कहने लगी कि हे प्रिय ! तुम डरो मत और जैसा प्रपंच मैं कहती हूँ वैसा ही करो । उसने हाथी को पेड़ के नीचे से निकाला जिसमें यार वहीं (पेड़ से) लिपट कर रह गया ।। १७ ।। स्वयं पिता के पास गई और रीछ, नीलगाय, मृग आदि अनेकों मारे । उसे देखकर पिता चुप लगा गया और समझा कि उस स्त्री ने मुझसे झूठ ही कहा है ।। १८ ।। उसी सखी को पलटकर उसने मार डाला कि इसने मुझसे झूठा ही वचन कहा है । आखेट खेलकर राजा वापस घर आ गया और यह उस हाथी को उसी बृक्ष के नीचे ले आई ।। १९ ।। ।। अड़िल्ल ।। बाँह पकड़कर प्रिय को हाथी पर चढ़ा लिया और उसी अंबारी में सुखपूर्वक भोग किया । वे लिपट-लिपटकर और मुस्कुराकर दोनों रमण करने लगे और कहने लगे कि राजा हमारा भेद जान ही नहीं सका २० दोहा पहले उसे बृक्ष पर चढ़ाया

चड़ाइ तिह लै आई फिरि धाम। उलटा तिह झूठा किया भेद दिया जिह बाम ॥ २१ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ चुहत्तरि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३७४ ॥ ६७६८ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ पंझतरि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ इशकतंबोल शहिर है जहाँ। इशक तंबोल नराधिप तहाँ। स्री शिंगारमती तिह दारा। जासी घड़ी न ब्रहमु सुनारा ॥ १ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ स्री जगजोबन दे तिह सुता बखानियै। दुतिय रूप की रास जगत महि जानियै। अधिक प्रभा जल थल महि जाकी जानियत। हो नरी नागनी नारि न वैसी मानियत ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ तह इक पूत सराफ को ताको रूप अपार। जोरि नैनि नारी रहैं जानि न ग्रहि बिसंभार ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ राजसुता ताकी छबि लही। मन बच क्रम मन मै अस कही। एक बार गहि याहि मँगाऊँ। काम भोग रुचि मान मचाऊँ ॥४॥ पठै

और फिर उसे घर ले आई। उसे उलटा झूठा बना दिया जिस स्त्री ने भेद बताया था ॥ २१ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ चौहत्तरवे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३७४ ॥ ६७६८ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ पचहत्तरवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ इश्कतंबोल नामक शहर में इश्कतंबोल नामक राजा रहता था। शृंगारमती उसकी स्त्री थी जिसके समान अन्य नारी ब्रह्मा ने नहीं बनाई थी ॥ १ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जगजोबन देवी उसकी पुत्री थी जिसे जगत् में रूप की राशि माना जाता था। उसकी जल-स्थल में अत्यधिक शोभा मानी जाती थी और नर-नाग-स्त्रियों में कोई भी वैसी नहीं थी ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ वहाँ एक सराफ़ का पुत्र था जिसका रूप अपार था। स्त्रियाँ उससे नजर मिलाकर वापस घर नहीं जाती थीं ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजकुमारी ने उसकी सुन्दरता देखी और मन में कहा कि एक बार इसे घर पकड़ मँगाऊँगी और रुचिपूर्वक इससे कामभोग करूंगी ४ उसने एक दासी को सब बात समझाकर

सहचरी दई तहाँ इक। ताँहि बात समुझाइ (मू०ग्रं०१३३१) अनिक निक। अमित दरब दै ताहि भुलाई। जिह तिह भाँति कुअरि कौ लिआई ॥५॥ भाँति भाँति के करत बिलासा। मानत किसी न नर को त्रासा। तब लग आइ पिता तह गयो। अधिक बिमन ताको मन भयो ॥ ६ ॥ अवर घात तब हाथ न आई। एक बात तब ताहि बनाई। बीच सम्याना के तिह सीआ। ऐंचित नाथ ठाढ कर दीआ ॥ ७ ॥ ऊपर अवर सम्याना डारा। वाको जाइ न अंग निहारा। आगे जाइ पिता चलि लीना। जोरि प्रनाम दोऊ कर दीना ॥ ८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तिस सम्याना के तर पितु बैठाइयो। एक एक करि ताकौ पुहप दिखाइयो। भूप बिदा ह्वै जबै आपुने ग्रहि अयो। हो काढि तहाँ ते मित्र सेज ऊपर लयो ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल सौ राजा छला सका भेद नहि पाइ। दुहिता के ग्रहि जाइ सिर आयो कोर मुँडाइ ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ पंझतरि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३७५ ॥ ६८०८ ॥ अफजूँ ॥

वहाँ भेज दिया। उसने उसे अपरिमित द्रव्य दिया और वह जैसे-तैसे उस कुँवर को ले आई ॥ ५ ॥ वे किसी भी व्यक्ति का भय न मानकर भाँति-भाँति प्रकार से रमण करने लगे। तब तक उसका पिता आ गया और उसका मन अत्यधिक खिन्न हो उठा ॥ ६ ॥ और कुछ तो उसे सूझा नहीं, उसने एक बात उस समय बनाई कि उसे शामियाने के भीतर सी दिया और रस्सियाँ खींचकर उसे सीधा खड़ा कर दिया ॥ ७ ॥ उसके ऊपर एक अन्य शामियाना डाल दिया ताकि उसका अंग भी दिखाई न दे। आगे पहुँचकर पिता का स्वागत किया और उसे दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम किया ॥ ८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ उस शामियाने के नीचे पिता को बैठाया और एक-एक करके उसे फूल दिखाया। राजा विदा होकर जब अपने घर आ गया तो उसने मित्र को वहाँ से निकालकर शय्या पर ले लिया ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रपंच से राजा को छला जो भेद नहीं जान सका। पुत्री के घर जाकर अपना सिर सूखा ही मुँड़वा आया अर्थात् छला गया ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ पचहत्तरवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३७५ ॥ ६८०८ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ छिहत्तरि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु राजा इक और कहानी । किनहूँ लखी न किनहूँ जानी । शहिर हैदराबाद बसत जह । स्री हरिजच्छकेतु राजा तह ॥ १ ॥ ग्रहि मदमत्तमती तिह नारी । स्री प्रबीन दे धाम दुलारी । अपमान दुति जात न कही । जानुक फूल चंबेली रही ॥ २ ॥ निहचल सिंघ तहा इक छत्री । सूरबीर बलवान तिअत्री । तिह प्रबीन दे नैन निहारा । मदन क्रिपान घाइ जनु मारा ॥ ३ ॥ पठै सहचरी लिया बुलाइ । भोग किया रुचि दुहूँ बढाइ । भाँति भाँति तन चुंबन करैं । बिबिध प्रकार आसनन धरैं ॥ ४ ॥ तब तह आइ गयो पितु वाको । भोगत हुतो जहाँ पिय ताको । चमकि चरित्र चंचला कीना । परदन बीच लपटि तिह लीना ॥ ५ ॥ ॥ दोहरा ॥ परदन बीच लपेटि तिह दिया धाम पहुचाइ । मुख बाएँ राजा रहा सका चरित्र न पाइ ॥ ६ ॥ १ ॥ (मू०ग्रं०१३३२)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ छिहत्तरि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३७६ ॥ ६८१४ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ छिअत्तरवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजन्, एक अन्य कहानी सुनो जो किसी ने देखी-सुनी नहीं है। हैदराबाद शहर में हरियक्षकेतु नामक राजा रहता था ॥ १ ॥ उसके घर में मदमत्मती स्त्री थी और प्रवीण देवी राजकुमारी थी। उसकी छवि अप्रमाण थी, मानों फूली हुई चमेली लगती थी ॥ २ ॥ वहाँ निहचल सिंह नामक शूरवीर, बलवान, शस्त्र-अस्त्रधारी क्षत्रिय था। उसे प्रवीणदेवी ने देखा और मानों उसे कामदेव ने कटारी से घायल कर दिया हो ॥ ३ ॥ उसे दासी भेजकर बुला लिया और रुचिपूर्वक रमण किया। विभिन्न प्रकार के चुंबन और आसन आदि उन्होंने प्रयुक्त किए ॥ ४ ॥ तब तक वहाँ उसका पिता आ गया जहाँ वह प्रिय उससे कामक्रीड़ा कर रहा था। उस स्त्री ने फ़ौरन एक प्रपच किया और उसे (मित्र को पर्दों में छिपा दिया ५

॥ दोहा ॥ उसे पर्दों में लपेटकर उसके घर पहुँचा दिया। राजा मुँह फैलाए खड़ा ही रह गया और उसका भेद न जान सका ॥ ६ ॥ १ ॥
॥ श्री चरित्नोपाख्यान के तिया-चरित्न के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ छिअत्तरवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३७६ ॥ ६८१४ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ सतत्तर चरित्न कथनं ॥

॥ चौपई ॥ नवतन सुनहु नराधिप कथा। किया चरित्न चंचला जथा। त्रिबक महारुद्र है जहाँ। त्रिबक दत्त नराधप तहाँ ॥ १ ॥ त्रिबकपुर ताको बहु सोहै। इंद्र चंद्र लोक कह मोहै। स्री रसरीतिमती तिह नारी। कंचन अवटि साँचे जनु ढारी ॥ २ ॥ स्री सुहास दे ताकी कंन्या। जिह सम उपजी नारि न अंन्या। एक चतुरि अरु सुंदरि घनी। जिह समान कोई नहि बनी ॥ ३ ॥ इक दिन कुअरि बाग के चली। बीस पचास लएं संग अली। जात हुती मारग के माही। सुंदरि निरखा एक तहाही ॥ ४ ॥ शेर सिंघ तिह नाम बिराजत। जाँहि निरखि रति को मन लाजत। कह लगि तिह छबि भाखि सुनाऊँ। प्रभा केर सभ ग्रंथ बनाऊँ ॥ ५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ राजसुता जब ते तिह गई

तीन सौ सतहत्तरवाँ चरित्न-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजा ! नयी कहानी सुनो कि एक स्त्री ने कैसा प्रपंच किया था। त्र्यंबक महारुद्र में त्र्यंबक नामक राजा था ॥ १ ॥ उसका त्र्यंबकपुर बहुत शोभायुक्त था जो इन्द्र-चन्द्रलोक को भी मोहित करता था। उसकी स्त्री रसरीतिमती थी जो मानों सोने के साँचे में ढालकर बनाई गई थी ॥ २ ॥ सुहासदेवी उसकी कन्या थी जिसके समान कोई अन्य स्त्री नहीं बनी थी। एक तो वह चतुर थी, ऊपर से वह अत्यन्त सुन्दर थी। उसके समान अन्य कोई नहीं थी ॥ ३ ॥ एक दिन बीस-पचास सखियों को साथ ले कुँवरि उद्यान के लिए चली। जब वह रास्ते में जा रही थी तो सुन्दरी ने रास्ते में एक (व्यक्ति) देखा ॥ ४ ॥ उसका नाम शेर सिंह था और उसे देखकर रति भी लज्जित होती थी। कहाँ तक उसकी छवि का वर्णन करूँ उसकी प्रभा वर्णन के लिए तो एक (अन्य ग्रंथ बना सकता हूँ ५ अड़िल्ल । राजकुमारी

निहारि करि। रही मत्त ह्वै मन इह बात बिचारि करि। कोटि जतन करि करि करि याहि बुलाइयै। हो काम केल करि या सो हरख कमाइयै ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ सखी एक तह दई पठाइ। जिह तिह बिधि तिह लयो बुलाइ। पढ़ि पढ़ि दोहा छंद बिहारहि। सकल मदन को ताप निवारहि ॥७॥ आवत नैन निरखि करि राजा। इह बिधि चरित चंचला साजा। रोम नास तिह बदन लगायो। नारि भेस ताकह पहिरायो ॥ ८ ॥ झारू एक हाथ तिह लियो। दूजे हाथ टोकरा दियो। मुहरन और रुपैयन भरो। ताहि चंडारी भाखिनि करो ॥ ९ ॥ त्रिप आगे करि ताहि निकार्यो। मूढ़ भूप नहि भेद बिचार्यो। काढि खड़ग तिह हनत न भयो। जानि चंडार ताहि त्रिप गयो ॥ १० ॥ जिन इह मोर अंग छुहि जाइ। मुझै करै अपवित्र बनाइ। ताहि पछानि पकरि नहि लयो। लै मुहरैं सुंदर घर गयो ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ सतत्तर चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३७७ ॥ ६८२५ ॥ अफजूं ॥

जबसे उसे देखकर गई तो वह मन में यह विचार कर मतवाली हो रही थी कि करोड़ों यत्न करके ही इसे बुलाऊँगी और इसके साथ सुखपूर्वक कामक्रीड़ा करूँगी ॥ ६ ॥ ॥ चौपाई ॥ उसने एक सखी को वहाँ भेज दिया और जैसे-तैसे उसको बुला लिया। वे दोहा, छंद पढ़-पढ़कर विचरण करने लगे और काम की अग्नि शान्त करने लगे ॥ ७ ॥ राजा को आते देख उस स्त्री ने यह प्रपंच किया कि उस (शेरसिंह) को बालनाशक औषधि लगा दी और उसे नारी-वेश पहना दिया ॥ ८ ॥ उसने एक हाथ में झाड़ू लिया और दूसरे में टोकरा थामा जिसे रुपये और मोहरों से भर दिया। उसे कोई चांडालिन बता दिया ॥ ९ ॥ उसे राजा के सामने से निकाल दिया और मूर्ख राजा यह रहस्य ही नहीं समझ सका। उसे उसने खड़ग निकालकर मारा नहीं और चांडाल समझकर छोड़कर चला गया ॥ १० ॥ कहीं ऐसा न हो कि इससे मेरा अंग छू जाय और यह मुझे अपवित्र कर दे। उसे पहचानकर पकड़ा नहीं और इस प्रकार वह सुन्दर मुहरें लेकर अपने घर चला गया ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री [illegible] के त्रिया चरित्र के मंत्री भूप-संवाद में तीन सौ सतहत्तरवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ३७७ ६८२५ अफजूं

अथ तीन सौ अठहत्तरि चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ भूप त्रिहाटकसैन भनिज्जै । नगर तिहाड़ो जाहि कहिज्जै । जाहि त्रिहाटकपुरी बखानैं । दानव देव जच्छ सभ जानैं ॥ १ ॥ स्री महबूबमती तिह नारी । जिह सम सुंदरि कहूँ न कुमारी । (मू०ग्रं०१३३३) दुतिय नारि म्रिदु हासमती तिह । नहि ससि सम कहियत आनन जिह ॥ २ ॥ स्री महबूबमती तन न्रिप रति । दुतिय नारि पर नहि आनन मति । अधिक भोग तिह साथ कमायो । एक पुत्र ताते उपजायो ॥ ३ ॥ दुतिय नारि के साथ न प्रीता । ताहि न बीच लयावत चीता । सुतवंती इक पुनि पति प्रीत । अवर त्रियहि ल्यावत नहि चीत ॥ ४ ॥ दुतिय नारि तब अधिक रिसाई । एक घात की बात बनाई । सिस की गुदा गोखरू दिया । ताते अधिक दुखित तिह किया ॥ ५ ॥ बालक अधिक दुखातुर भयो । रोवत धाम मात के गयो । निरखि तात माता दुख पायो । भली भली धायान मँगायो ॥ ६ ॥

तीन सौ अठहत्तरवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ त्रिहाटकसेन एक राजा था जिसका नगर तिहाड़ कहा जाता था। इसे ही त्रिहाटकपुरी कहते थे और देव-दानव-यक्ष आदि सभी जानते हैं ॥ १ ॥ उसकी स्त्री महबूबमती थी जिसके समान अन्य कोई स्त्री सुन्दर नहीं थी। उसकी दूसरी स्त्री मृदहासमती थी जिसकी तुलना चन्द्रमा से भी नहीं की जा सकती ॥ २ ॥ राजा की आसक्ति महबूबमती पर थी और दूसरी स्त्री पर उसका मन नहीं आता था। उसने उस (महबूबमती) के साथ अत्यधिक भोग-विलास किया और उससे एक पुत्र उत्पन्न किया ॥ ३ ॥ (राजा की) दूसरी स्त्री के साथ प्रीति नहीं थी और वह उसे कभी मन में नहीं लाता था। (महबूबमती) एक तो पुत्रवान थी और दूसरे उसके साथ पति की भी प्रीति थी, वह अन्य किसी स्त्री की परवाह ही नहीं करती थी ॥ ४ ॥ दूसरी स्त्री ने तब क्रुद्ध हो एक अवसर खोजा और शिशु की गुदा में गोखरू (काँटे-युक्त फूल) दे दिया और उसे बहुत दुखी किया ॥ ५ ॥ बालक अत्यन्त दुखी होकर रोता हुआ माता के घर गया माता पिता देखकर दुखी हुए और उन्होंने अच्छी-अच्छी धायों को बुलाया ६ इस प्रपंच से उस स्त्री

इह चरित्र मालहि दुख दियो। आपन भेस धाइ को कियो। किया सवति के धाम पयाना। भेद नारि किनहूँ न पछाना ॥७॥ औखध एक हाथ मै लई। सिसु की प्रथम मात कौ दई। बरी खात रानी मरि गई। स्वच्छ सुधरि रानी फिरि अई ॥८॥ निजु ग्रहि आइ भेस त्रिप त्रिय धरि। जाइ भई अपनी सवितन घर। सिसु को काढि गोखरू डारो। ताँहि सुधरि तिह सुत करि पारो ॥ ९ ॥ इह छल सो सवतनि कह मारा। सिसहु जानि सुत लियो उबारा। त्रिपह संग पुनि करि लिय प्यारा। भेद अभेद न किनूँ बिचारा ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ अठहत्तरि चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥३७८॥ ६८३५॥ अफजूँ॥

अथ तीन सौ उनासी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनु राजा इक और प्रसंगा। जिह बिधि भयो नरेसुर संगा। म्रिदुला दे तिह नारि भनिज्जै। इंद्र चंद्र पटतर तिह दिज्जै ॥ १ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ स्री सुप्रभा दे

ने बच्चे की माँ को दुख दिया। अब उसने स्वयं धाय का वेश धारण किया। उसने सौतन के घर की ओर प्रस्थान किया और उसके भेद को कोई न पहचान सका ॥ ७ ॥ उसने एक ओषधि हाथ में लेकर पहले शिशु की माता को दी। वह गोली खाते ही रानी मर गई और यह रानी पुनः स्वच्छ सुघड़ रूप में आ गई ॥ ८ ॥ अपने घर आकर फिर इसने राज-स्त्री का वेश धारण किया और सौतन के घर आ पहुँची। बच्चे का गोखरू निकाल दिया और उसे अपना पुत्र बनाकर पाला ॥ ९ ॥ इस प्रपंच से उसने सौतन को मारा और शिशु को पुत्र जानकर बचा लिया। राजा के साथ पुनः उसका प्यार हो गया और इस भेद-अभेद को कोई न जान सका ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ अठहत्तरवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३७८ ॥ ६८३५ ॥ अफजूँ ॥

तीन सौ उन्नासीवाँ चरित्र-कथन

चौपाई हे राजन्! एक राजा के साथ जैसा हुआ वह प्रसंग भी सुनो मृदुलादेयी उस राजा की स्त्री थी जिसकी तुलना इन्द्र-चन्द्र

ताकी सुता बखानियै । महाँ सुंदरी लोक चतुरदस जानियै । जो सहचरि ताकौ भरि नैन निहारहीं । हो परी पदुमनी प्रक्रित सु वाहि बिचारहीं ॥ २ ॥ ॥ चौपई ॥ हाटकपुर तिन को दिसि दच्छिन । राज करत ते तहाँ बिचच्छन । तिह पुर एक शाह को पुत्र । जनु करि बिधना ठटा चरित्र ॥ ३ ॥ ब्याघ्रकेत तिह नाम कहिज्जै । छत्र जाति रघुबंस भनिज्जै । प्रगट जानु अबतार अनंगा । (मू०ग्रं०१३३४) ऐसो शाह पुत्र को अंगा ॥ ४ ॥ लागी लगन तवन पर बाला । सखी पठी इक तहाँ रिसाला । सो चलि गई कुअर के धामा । जिमि तिमि ताहि प्रबोध्यो बामा ॥ ५ ॥ जात भई ताकह लै तहाँ । मारग कुअरि बिलोकत जहाँ । निरखत नैन गरे लपटाई । सेजासन पर लियो चढ़ाई ॥ ६ ॥ बहु बिधि करी तवन सौ क्रीड़ा । कामनि काम निवारी पीड़ा । निसु दिन धाम बाम तिह राखा । मात पिता तन भेद न भाखा ॥ ७ ॥ तब लौ ब्याहि दयो तिह तातें । भूलि गई वाकौ वै बातें । निजु प्यारे बिनु रह्यो न गयो । घालि संदूकहि साथ चलयो ॥ ८ ॥

से दी जा सकती है ॥ १ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सुप्रभादेवी उसकी पुत्री कही जाती थी और उसे चौदह लोकों में महासुन्दरी जाना जाता था । जो सखी भी उसे आँख से देखती उसे परी और पद्मिनी प्रकृति की स्त्री मानती थी ॥ २ ॥ ॥ चौपाई ॥ उनका नगर हाटकपुर दक्षिण दिशा में था जहाँ वे सुन्दर राज किया करते थे । उसी नगर में एक धनी का पुत्र था जो मानों विधाता ने छलावा बनाया था ॥ ३ ॥ उसका नाम ब्याघ्रकेतु था और वह रघुवंशी क्षत्रिय था । उस धनिक-पुत्र के अंग ऐसे थे, मानों वह कामदेव का अवतार हो ॥ ४ ॥ उस कन्या की लगन उसके साथ लग गई और उसने उसके पास एक सुन्दर सखी भेजी । वह कुँवर के घर तक चली आई और जैसे-तैसे उसने उसे संबोधित किया ॥५॥ वह उसे वहाँ ले आई जहाँ कुँवरि उसका रास्ता देख रही थी । उसने उसे देखते ही गले से लिपटा लिया और अपनी शय्या पर चढ़ा लिया ॥६॥ उसने अनेकों प्रकार से क्रीड़ा की और उस कामिनी ने अपनी काम-पीड़ा का निवारण किया । उस स्त्री ने रात-दिन उसे वहीं रखा और माता-पिता को कुछ भी भेद नहीं बताया ॥ ७ ॥ तब तक पिता ने उसका विवाह कर दिया और उसे सब बातें भूल गईं । वह अपने प्रिय के बिना रह नहीं सकती थी, इसलिए उसे संदूक में डालकर साथ ले चली ॥ ८ ॥

निसु दिन तासौ भोग कमावै। सोभत रहै न भूपति पावै। एक दिवस जबही न्रिप जागा। रनियहि छोरि जार उठि भागा ॥ ९ ॥ त्रिय सौ बचन कोप करि भाखयो। तैं लै हार धाम किमि राखयो। कै अबहीं मुहि बात बताबौ। कै प्रानन की आस चुकाबौ ॥१०॥ बात सत्य जानी जिय रानी। मुझै न न्रिप छाडत अभिमानी। भाँग घोटना हाथ सँभारा। फोरि नराधिप के सिर डारा ॥ ११ ॥ बहुरि सभन इह भाँति सुनाई। प्रजा लोग जब लए बुलाई। मद करि भूप भयो मतवारा। पहिल पुत्र को नाम उचारा ॥ १२ ॥ म्रितक पुत्र को नामहि लयो। ताते अधिक दुखातुर भयो। शोक ताप को अधिक बिचारा। मूँड फोरि भीतन सौ डारा ॥१३॥ ॥ दोहरा ॥ इह छल निजु नायक हना लीना मित्र बचाइ। बहुरि भोग तासौ करो को न सका छल पाइ ॥ १४ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ उनासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३७९ ॥ ६९४९ ॥ अफजूं ॥

रात-दिन उससे क्रीड़ारत रहती थी और राजा को कुछ भी पता नहीं चलता था। एक दिन राजा जब जग गया तो रानी को छोड़कर यार भाग खड़ा हुआ ॥ ९ ॥ वह क्रुद्ध हो रानी से बोला कि यह तूने किसे घर में रखा है ? या तो मुझे अभी सत्य बताओ नहीं तो अपने प्राणों का मोह छोड़ दो ॥ १० ॥ रानी ने सच मान लिया कि यह अभिमानी राजा मुझे नहीं छोड़ेगा। उसने भाँग रगड़नेवाला डंडा हाथ में पकड़ा और राजा के सिर में दे मारा ॥ ११ ॥ फिर प्रजाजनों को बुलाकर यह बात सुनाकर कह दी कि शराब पीकर राजा मतवाला हो गया और पहले पुत्र का नाम बोलने लगा ॥ १२ ॥ मृतक पुत्र का नाम लेकर यह अत्यधिक दुखी हो गया और इसी शोक-संताप में इसने दीवारों से सिर मार-मारकर फोड़ लिया ॥ १३ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रपंच से अपना पति मारा और मित्र को बचा लिया। पुनः उससे रमण किया और कोई भी इस भेद को न जान सका ॥ १४ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ उन्नासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३७९ ॥ ६९४९ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ अस्सी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ एक चरित्रसैन राजा बर । नारि चरित्रमती ताको घर । बती चरित्रा ताकी नगरी । तिहूँ भवन के बीच उजगरी ॥ १ ॥ गोपी राइ शाह सुत इक तह । जिह सम सुंदरि दुतिय न जग मह । तिह चरित्र दे नैन निहार्यो । अंग अंग तिह मदन प्रजार्यो ॥ २ ॥ जिह तिह बिधि तिह लयो बुलाइ । उठत लयो छतिया सौ लाइ । काम केल कीनो रुचि ठानी । केल करत सभ रैनि बिहानी ॥ ३ ॥ (मू०ग्रं०१३३५) पोसत भाँग अफीम मँगाई । एक सेज चढ़ि दुहूँ चढ़ाई । भाँति अनिक तन कियो बिलासा । मात पिता को मन न त्रासा ॥ ४ ॥ तब लगि आइ गयो ताको पति । डारि दयो सेजा तर उपपति । दुपटा डारि दयो तिह मुख पर । जान्यो जाइ न ताँते त्रिय नर ॥ ५ ॥ सोवत कवन सेज पर तोरी । भाखी नाथ मात है मोरी । हम पहि तो नहि जात जगाई । तुमैं कहत हौ बाँधि ढिठाई ॥६॥

तीन सौ अस्सीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ चरित्रसेन एक श्रेष्ठ राजा था जिसकी स्त्री का नाम चरित्रमती था। चरित्रवती उनका नगर था जो तीनों लोकों में प्रसिद्ध था ॥ १ ॥ गोपीराम एक धनिक का पुत्र था जिसके समान अन्य कोई सुन्दर नहीं था। चरित्रदेवी ने उसे आँखों से देखा और उसका अंग-अंग कामदग्ध हो उठा ॥ २ ॥ उसे जैसे-तैसे उसने बुला लिया और उठते ही उसे छाती से लगा लिया। रुचिपूर्वक कामकेलि करने की बात ठान ली और क्रीड़ा करते ही सारी रात बिता दी ॥ ३ ॥ पोस्त, भाँग और अफ़ीम मँगाकर एक ही शय्या पर चढ़कर दोनों ने चढ़ा ली। माता-पिता का मन में भय न मानते हुए उसने अनेक प्रकार से भोग-विलास किया ॥ ४ ॥ तब तक उसका पति आ गया और उसने मित्र को पलंग पर डाल दिया। उसके मुँह पर दुपट्टा डाल दिया जिससे पता नहीं लगता था कि वह पुरुष है या स्त्री ॥ ५ ॥ "तुम्हारी शय्या पर कौन सो रहा है ?" जब राजा ने पूछा तो उसने उत्तर दे दिया कि यह मेरी माँ है। तुमसे धृष्टतापूर्वक कह रही हूँ कि मुझसे तो इसे नहीं जायगा ६ तुम दो-एक घड़ी के लिए अन्यत्र चले जाओ और जब

इक घरी तुम अनत सिधाबहु। इह छठि गए बहुरि ह्यां आवहु। जब जागै ते अधिक रिसैहै। हम तुम लखि इकत्र चुप ह्वैहै ॥ ७ ॥ तिनि इह बात सत्य करि मानी। जात भयो उठि क्रिया न जानी। जब उठि मात गई लखि लैयहु। तब हमको तुम बहुरि बुलैयहु ॥ ८ ॥ इमि कहि बात जात जड़ भयो। ताँहि चड़ाइ खाट पर लयो। भाँति अनिक तन करै बिलासा। आवत भयो तिह पिता निवासा ॥९॥ तिसी भाँति तन ताहि सुवायो। तात भए इह भाँति जतायो। सुनहु पिता इह नारि तिहारी। तुम ते छपी लाज की मारी ॥ १० ॥ सुनत बचन न्रिप धाम सिधाना। भेद अभेद कछू न पछाना। ताकौ काढि सेज पर लीना। ताकी मात गवन तह कीना ॥११॥ वैसहि ताकह दिया सुवाइ। कही मात मै बात बनाइ। सुनहु मात जामात तिहारो। मोको अधिक प्रान ते प्यारो ॥ १२ ॥ याको नैन नीद दुख दियो। ताते सैन स्रमित ह्वै कियो। मै याको नहि सकत जगाई। अब ही सोइ गयो सुखदाई ॥ १३ ॥ सुनि बच मात जात भी उठ घर। लयो सेज पर त्रिय पिय भुज भर। भाँति भाँति तन

यह जग जाय तो तुम यहाँ आ जाओ। जब यह जगेगी तो अत्यधिक रुष्ट होगी, अतः हम दोनों को चुप ही लगा जानी चाहिए ॥ ७ ॥ उसने इस बात को सत्य मान लिया और बात को समझे बिना चला गया। जब माँ उठ जाय तो देख लेना और मुझे तुम फिर बुला लेना ॥ ८ ॥ यह कहकर वह मूर्ख चला गया और उसने उसे फिर पलंग पर चढ़ा लिया। उससे अनेकों प्रकार से भोग-विलास किया और इतने में उसका पिता भी वहाँ आ गया ॥ ९ ॥ उसने उसे (प्रेमी को) फिर सुला दिया और पिता से कहा कि हे पिताजी ! यह आपकी स्त्री है जो आपसे लज्जा-वश यहाँ छिपी है ॥ १० ॥ राजा यह सुनकर अपने घर चला गया और भेद-अभेद कुछ न पहचान सका। उसने उसे फिर निकालकर शय्या पर ले लिया और तब फिर उसकी माँ ने वहाँ पदार्पण किया ॥ ११ ॥ उसने फिर उसे वैसे ही सुला दिया और माँ से बात बनाकर कहा, हे माँ, सुनो यह तुम्हारा दामाद है जो मुझे प्राणों से भी प्रिय है ॥ १२ ॥ इसकी आँखें नींद से दुख रही थीं जिससे यह थककर सो गया है। मैं इसे जगा नहीं सकती क्योंकि यह अभी सुखपूर्वक सोया है ॥ १३ ॥ माँ भी सुनकर अपने निवास में चली गई और इस स्त्री ने पुन प्रमी को भुजाओं में भर

भोग कमाए। बहुरि धाम कौ ताहि पठाए॥ १४॥
॥ दोहरा ॥ इह चरित्र तिह चंचला पियहि दयो पहुचाइ।
भेद अभेद त्रियान के सक्यो न कोई पाइ॥ १५॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ अस्सी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ ३८०॥ ६८६४॥ अफजूं॥

अथ तीन सौ इकिआसी चरित्र कथनं॥

॥ चौपई॥ सुनहु राम इक कथा स्रवन धरि। जिह बिध किया चरित्र त्रिया बर। पीर एक मुलतान भनिज्जै। रूपवंत तिह अधिक कहिज्जै॥ १॥ रोशन कदर तवन को नामा। थकित रहित जिह निरखत (मू०ग्रं०१३३६) बामा। जो निरखति तिय पतिहि निहारै। ताकौ ऐंचि जूतयन मारै॥ २॥ ॥ अड़िल्ल॥ एक नार तिह पति को रूप निहारि बर। रही मुबतला ह्वै इमि चरित बिचारि करि। इह निरखे बिनु चैन न मोकौ पल परै। हो जौ निरखत हौ ताहि तु रारिह त्रिय करै॥ ३॥ ॥ चौपई॥ तिसी त्रिया

शय्या पर ले लिया। उससे भाँति-भाँति से रमण कर उसे वापस घर भेज दिया॥ १४॥ ॥ दोहा॥ इस प्रपंच से उस स्त्री ने प्रिय को पहुंचा दिया। इन स्त्रियों के रहस्य को तो कोई भी नहीं जान सकता॥ १५॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ अस्सीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ ३८०॥ ६८६४॥ अफजूं॥

तीन सौ इक्यासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई॥ कान लगाकर एक रमणीक कथा सुनो कि कैसे एक सुन्दर स्त्री ने प्रपंच किया। मुलतान में एक पीर था जिसे अत्यधिक रूपवान कहा जाता था॥ १॥ उसका नाम रोशन कादिर था और स्त्रियाँ उसे ही देख-देख थक जाती थीं। उसकी स्त्री जिस भी स्त्री को अपने पति को देखते देखती उसे जूतों से मारती॥ २॥ ॥अड़िल्ल॥ एक स्त्री उसके पति का रूप देखकर उसमें फँसकर कोई प्रपंच करने के बारे मे सोचने लगी कि इसको देखे बिना मुझे पल भर भी चैन नहीं मिलता और यदि देखती हूँ तो इसकी स्त्री से झगड़ा होता है ३ चौपाई वह

के धाम सिधाई । बहुतक भेद अशरफी ल्याई । जेवर दीने जरे जराइन । जिन को सकत अंत कोई पाइन ॥ ४ ॥ सु सभ दई तिह साथि कहा इमि । साथ खादिमाबानो के तिमि । एकहि आस ह्याँ मैं आई । सु मैं कहत हौ तुमैं सुनाई ॥ ५ ॥ ग्रहि अपने ही मदरो चवाइ । खाना अनिक भाँति के ल्याइ । निजु हाथन लै दुहूँ पयाऊँ । भेट चढ़ाइ घरहि उठि जाऊँ ॥६॥ सोई मद लै तहा सिधाई । सात बार बहु भाँत चुआई । निजु हाथन लै दुहूँ पियायो । अधिक मस्त करि सेज सुआयो ॥ ७ ॥ सोई लखो पीर त्रिय जबही । नैन सैन दै तिह प्रति तबही । ताके धरि छतिया पर चूंबन । काम भोग कीना तिह पति तन ॥ ८ ॥ सोवत रही चड़े मद नारी । भेद अभेद की गति न बिचारी । चीठी एक लिखी निज अंगा । बाँधि गई ताके सिर संगा ॥ ९ ॥ जो त्रिय खयाल त्रियन के परिहै । ताकी बिधि ऐसी गति करिहै । ताते तुम त्रिय ऐस न कीजै । बुरो सुभाइ सकल तजि दीजै ॥ १० ॥

उसी स्त्री के घर गई और बहुत-सी अशर्फ़ियों की भेंट साथ ले गई। उसे जड़ाउ जेवर दिये जिनका अन्त पाना कठिन है ॥ ४ ॥ वह सब देकर उसने खादिमाबानो नामक उस स्त्री से यह कहा कि मैं एक आशा लेकर यहाँ आई हूँ जिसे मैं तुमसे कह सुनाती हूँ ॥ ५ ॥ मैं अपने घर ही मदिरा और खाना बनाकर ले आऊँगी और आप दोनों को अपने हाथ से पिलाकर वापस घर चली जाऊँगी ॥ ६ ॥ वह वही शराब वहाँ लेकर पहुँची जो सात बार निकाली (आसवित की) गई थी। उन्हें अपने हाथों से पिलाई और मदमस्त कर उन्हें शय्या पर सुला दिया ॥ ७ ॥ पीर ने जब स्त्री को सोया जान लिया तो उसने उस आगन्तुक स्त्री को आँख से इशारा किया। उसकी छाती पर बैठकर उसने उसके पति के साथ कामक्रीड़ा की ॥ ८ ॥ मद में मस्त वह स्त्री सोती रही और भेद-अभेद की बात पहचान ही न सकी। उसने एक चिट्ठी लिखी और उस सोती हुई के सिर के साथ ही उसे बाँध दिया ॥ ९ ॥ जो औरतें औरतों पर ही ज्यादा ध्यान देती हैं, विधाता उनकी यही गति करता है। इसलिए हे स्त्री तुम ऐसा मत किया करो और अपना बुरा स्वभाव त्याग दो १०

॥ दोहरा ॥ केस पाँस ते छोरिकै बाँचत पतिया अंग । ता दिन ते त्रिय तजि दिया बाद त्रियन के संग ॥ ११ ॥ १॥
॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ इकिआसी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३८१ ॥ ६८७५ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ बिआसी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बिशनधुजा इक भूप सुलच्छन । बिशन पुरी जाकी दिसि दच्छिन । स्री मनिनीलमती तिह रानी । सुंदरि सकल भवन मौ जानी ॥ १ ॥ अछलीराइ एक तह छत्री । सूरबीर बलवान निछत्री । बदन प्रभा तिह जात न भाखी । जनु मुख चीर चाँद की राखी ॥ २ ॥ त्रिय की प्रीति तवन सौ लागी । जाते नींद भूखि सभ भागी । जिय ते त्रिप रोगी ठहरायो । ऊच नीच सभहीन सुनायो ॥ ३ ॥ खींध एक राजा पर धरी । उर पर राखि लोन की डरी । अगनि साथ तिह अधिक उपाई । जो कर साथ (मू०ग्रं०१३३७) छुई नहि जाई ॥ ४ ॥ चारो ओर दाबि अस लिया । मुख

॥ दोहा ॥ केशपाश को ढीला कर उसने पत्र पढ़ा और उस दिन से उसने अन्य स्त्रियों से विवाद छोड़ दिया ॥ ११ ॥ १ ॥
॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ इक्यासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३८१ ॥ ६८७५ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ बयासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ विष्णुध्वज नामक एक अच्छा राजा था जिसका विष्णुपुरी नगर दक्षिण दिशा में था । मणिनीलमती उसकी रानी थी जो सारे भुवनों में सुन्दर मानी जाती थी ॥ १ ॥ अछलीराय नामक एक क्षत्रिय वहाँ था जो शूरवीर और बलवान था । उसके मुख की प्रभा अवर्णनीय थी और ऐसी लगती थी मानों चन्द्र को चीरकर उसके मुख पर लगा दिया गया हो ॥ २ ॥ उस स्त्री (रानी) की प्रीति उससे लग गई और इससे उसकी नींद-भूख सब भाग गई । उसने राजा को रोगी करार दे दिया और ऊँच-नीच सबको कह सुनाया ॥ ३ ॥ एक रजाई राजा पर रख दी और छाती पर नमक की एक डली रख दी । फिर उसे आग से तपाया जिससे कि वह हाथ छुआ न जा सके ४ उसे

ते ताँहि न बोलन दिया । तबही तजा गए जब प्राना । भेद पुरख दूसरे न जाना ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ बिआसी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३८२ ॥ ६८८० ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ तिरासी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुनहु चरित इक अवर नरेसा । त्रिप इक झारखंड के देसा । कोकिलसैन तवन को नामा । मती कोकिला वाकी बामा ॥ १ ॥ बदलीराम शाह सुत इक तह । जिह सम सुंदरि कहूँ न जग मह । द्रिग भरि ताहि बिलोका जबहीं । रानी भई काम बसि तबहीं ॥ २ ॥ काम भोग तिह साथ कमावै । मूड़ नारि नहि ह्रिदै लजावै । जब राजै इह बात पछानी । चित महि धरी न प्रगट बखानी ॥ ३ ॥ आधी रैनि होत भी जबही । राजा दुरा खाट तर तबही । रानी भेद न वाको पायो । बोलि जार को निकट बुलायो ॥४॥ रुचि भरि भोग तवन सौ करा । खाट तरे राजा लहि परा ।

चारों ओर से दबा लिया और मुँह से बोलने भी नहीं दिया । तब राजा ने प्राण त्याग दिए और किसी अन्य को पता भी न चल सका ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ बयासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३८२ ॥ ६८८० ॥ अफजूं ॥

तीन सौ तिरासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ हे राजन् ! एक अन्य चरित्र सुनो । झाराखंड प्रदेश का एक राजा कोकिलसेन था जिसकी स्त्री कोकिलमती थी ॥ १ ॥ वहाँ एक धनी का पुत्र बदलीराम था जिसके समान संसार में अन्य कोई सुन्दर नही था । रानी ने जैसे ही उसे आँखों से देखा तो वह कामासक्त हो उठी ॥ २ ॥ वह उसके साथ कामक्रीड़ा करने लगी और तनिक भी लज्जित नहीं होती थी । राजा को जब इस रहस्य का पता चला तो उसने बात मन में रखी और किसी से नहीं कही ॥ ३ ॥ जब आधी रात हो गई तो राजा पलंग के नीचे छिप गया । रानी को रहस्य का पता न लगा और उसने यार को अपने पास बुला लिया ॥ ४ ॥ उससे रुचिपूर्वक भोग किया परन्तु साथ ही साथ पलग के नीचे राजा भी दिखाई पड़ गया वह स्त्री अब अत्यधिक

अधिक मारि मन महि डरपाई । करौ दैव अब कवन उपाई ॥ ५ ॥ सुनु मूरख तैं बात न पावैं । न्रिप नारी कह हाथ लगावैं । सुंदरि सुघरि जैसे मुर राजा । तैसो दुतिय न बिधना साजा ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जो पर नर कह पिय बिनु नारि निहारई । महाँ नरक महि ताहि बिधाता डारई । निजु पति सुंदर छाडि न तुमहि निहारिहौ । हे निजु कुल की तजि कानि न धर महि टारिहौ ॥ ७ ॥ ॥ चौपई ॥ जैसो अति सुंदर मेरो बर । तुहि वारौ वाके इक पग पर । तिह तजि तुहि कैसेहूँ न भजिहों । लोक लाज कुल कानि न तजिहों ॥ ८ ॥ सुनत बचन मूरख हरखान्यो । पतीब्रता नारी कह जान्यो । सिर पर धरि पलका पर नचा । इह बिधि जारि नारि जुत बचा ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ तिरासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३८३ ॥ ६८८९ ॥ अफजूँ ॥

डर गई और सोचने लगी कि अब मैं कौन सा उपाय करूं ? ॥ ५ ॥ वह कहने लगी कि मूर्ख ! तुम समझते नहीं हो और राजा की स्त्री को हाथ लगाते हो । मेरा राजा जैसा सुन्दर है वैसा तो विधाता ने अन्य कोई बनाया ही नहीं है ॥ ६ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ यदि कोई स्त्री पर पुरुष को देखती भी है तो विधाता उसे नर्क में डालता है । मैं अपने सुन्दर पति को छोड़कर तुम्हें नहीं देखूँगी और अपना धर्म और कुल-मर्यादा नहीं छोड़ूँगी ॥ ७ ॥ ॥ चौपाई ॥ जितना सुन्दर मेरा पति है, तुम्हें तो उसके एक पैर पर क़ुर्बान किया जा सकता है । उसे छोड़कर मैं तुमसे कदापि रमण नहीं करूँगी और लोक-लाज-कुल-मर्यादा नहीं छोड़ूँगी ॥ ८ ॥ मूर्ख यह वचन सुनकर खुश हो उठा और अपनी स्त्री को पतिव्रता स्त्री मानने लगा । वह उसे सिर आँखों पर उठा नाचने लगा और इस प्रकार वह यार स्त्री-समेत बच गया ॥ ९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ तिरासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३८३ ॥ ६८८९ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ चउरासी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सद्दा सिंघ इक भूप महाँ मुनि । सदा पुरी जाँकी पच्छिम भनि । स्री सुलंक दे ताकी नारी । जनुक चंद्र ते चीरि निकारी ॥ १ ॥ तह इक होत शाह धनवाना । निरधन करि डार्यो भगवाना । (मू०ग्रं०१३३८) अधिक चतुरि ताकी इक नारी । तिन तासौ इह भाँति उचारी ॥ २ ॥ करिहौ बहुरि तुमै धनवंता । क्रिपा करै जो स्री भगवंता । आपन भेस पुरख को धारो । राज बाट पर हाट उसारो ॥३॥ एकन दरब उधारो दियो । एकन के राखन हित लियो । अधिक आपनी पतिहि चलायो । जह तह सकल धनिन सुनि पायो ॥ ४ ॥ सोफी सूम शाह इक तहाँ । जाके घर सुनियत धन महाँ । सुत त्रिय को नहि करत बिस्वासा । राखत दरब आपने पासा ॥ ५ ॥ शाह सुई तिह नारि तकायो । अधिक प्रीत करि ताहि बुलायो । त्रिय सुत माल कहा तव खैहैं । एक दाम फिरि तुमैं न दैहैं ॥ ६ ॥ शाह माल कहूँ अनत रखाइ । सरखत ताते लेहु लिखाइ । मात पूत कोई

तीन सौ चौरासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ सदासिंह एक महान राजा था जिसका नगर सदापुरी पश्चिम में था । सुलंकदेवी उसकी स्त्री मानों चन्द्रमा में से चीरकर निकाली गई थी ॥ १ ॥ वहाँ एक धनी था जिसे भगवान ने निर्धन कर दिया था । उसकी एक स्त्री अत्यधिक चतुर थी । उसने उससे कहा ॥ २ ॥ यदि भगवान कृपा करेंगे तो एक दिन फिर तुम्हें धनवान बना देंगे । उसने अपना वेश पुरुष का बनाया और राजमार्ग पर एक दुकान बना ली ॥ ३ ॥ किसी को उसने द्रव्य उधार लिया और किसी से रखने के लिए ले लिया । उसने अत्यधिक अपनी प्रशंसा करवायी जिसे यत्र-तत्र-सर्वत्र सभी धनवानों ने सुना ॥ ४ ॥ वहाँ एक कंजूस धनी था जिसके घर अपार धन था । वह पुत्र, स्त्री किसी का भी विश्वास नहीं करता था और सारा द्रव्य अपने पास ही रखता था ॥ ५ ॥ उस स्त्री ने उसी धनी को देखा और अत्यधिक प्रेमपूर्वक उसे बुलाया । उससे कहा कि तुम्हारा माल तो स्त्री-पुत्र ही खा जायेंगे और तुम्हें दमड़ी भी नहीं देंगे ॥ ६ ॥ हे धनिक ! तुम अपना माल अन्यत्र किसी के पास रखो और उससे रसीद ले लो माता और

भेद न पावै । तुमहीं चाहहु तबै धन आवै ॥ ७ ॥ बचन बहुरि तिन शाह बखानो । तुम ते और भलो नहि जानो । मेरो सकल दरबु तैं लेहि । सरखत गुपत मुझै लिखि देहि ॥ ८ ॥ बीस लाख ताँते धन लिया । सरखत एक ताँहि लिखि दिया । बाजूबंद बीच इह रखियहु । अवर पुरख सौ भेव न भखियहु ॥ ६ ॥ दै धन शाह जबै घर गयो । भेख मजूरन को तिन लयो । धाम तिसी के किया पयाना । भेद अभेद तिन मूढ़ न जाना ॥ १० ॥ कही कि एक टूक मुहि देहु । पान भराइस गरदनि लेहु । खरच जानि थोरो तिन करो । भेद अभेद नहि नैकु बिचरो ॥ ११ ॥ जबहीं घात नारि तिन पाई । बाजू बंद लयो सरकाई । अपनो कबज काढि करि लई । सत की डारि तवन मै गई ॥ १२ ॥ कितक दिनन कहि देह रुपइया । पठै दयो इक ताँहि मनइया । एक हजार तहाँ तो ल्यावहु । आनि बनिज को काज चलावहु ॥ १३ ॥ तिन क हजार न ताको दिया । जिय मै कोप शाह तब किया । बाँधि लै गयो ताकह तहाँ । काजी कोटवार थो जहाँ ॥ १४ ॥

उसके पुत्र को कोई पता न चले और जब तुम चाहो तभी धन आए ॥ ७ ॥ तब उस धनी ने कहा कि तुमसे भला मैंने अन्य कोई नहीं देखा है। तुम मेरा सम्पूर्ण द्रव्य ले लो और गुप्त रूप से मुझे दस्तखत कर दो ॥ ८ ॥ उसने उससे बीस लाख रुपया लिया और उसे एक रसीद दे दी। उससे कहा कि तुम इसे बाजूबंद में बाँधकर रखना और अन्य किसी को रहस्य न कहना ॥ ६ ॥ धनिक जब धन देकर घर गया तो इसने मजदूर का वेश धारण कर लिया। उसने उसी के घर प्रस्थान किया और इस मूर्ख ने यह रहस्य न समझा ॥ १० ॥ उस स्त्री ने कहा कि तुम मुझे एक समय खाना दो और मुझसे सिर पर पानी भरवाओ। तुम मुझे नौकर रखकर अपना खर्चा कम करो और इसमे तनिक भी भेद-अभेद मत समझो ॥ ११ ॥ उस स्त्री ने जब अवसर देखा तो उस बाजूबंद को खिसका लिया। उसने अपनी रसीद उसमें से निकाल ली और उसमें सौ रुपये की रसीद डाल दी ॥ १२ ॥ काफ़ी दिनों बाद उसने कहा कि रुपया दो और इस कार्य के लिए एक व्यक्ति को उसके पास भेज दिया कि तुम एक हज़ार रुपया वहाँ से ले आओ और आकर व्यापार का काम चलाओ ॥ १३ ॥ उसने उसे एक हज़ार नहीं दिया जिससे वह धनिक मन में कुपित हो उठा। वह उसे बाँधकर वहाँ ले गया जहाँ क़ाज़ी कोतवाल थे १४ इसने मुझसे बीस लाख लिया है और मुझे एक हज़ार

मो ते बीस लाख इन लिया। अब इन मुझैं हजार न दिया। कही सभो सरखत तिह हेरो। इन को अबही न्याइ निबेरो ॥ १५ ॥ छोरि सरखतहि सभन निहारो। रुपया सौ इक तहाँ बिचारो। साचा ते झूठा तिह किया। सभ धनु हरो काढि तिह दिया ॥ १६ ॥ बहुरि बचन तिन नारि उचारे (मू०ग्रं०१३३९) मैं न रहत हौ गाँव तिहारे। यौ कहि आत तहाँ ते भई। सोफीयहि कूटि भंगेरी गई ॥ १७ ॥ ॥ दोहरा ॥ निरधन ते धनवंत भी करि तिह धन की हानि। सोफी कह अमलिन छरा देखत सकल जहान ॥ १८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ चउरासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३८४ ॥ ६९०७ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ पचासी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ चित्रकेत राजा इक पूरब। जिह बचित्र रथ पुत्र अपूरब। चित्रापुरी नगर तिह सोहै। जिह ढिग देव दंत पुर को है ॥ १ ॥ स्री कटिउतिम दे तिह नारी। सूरजवत तिह धाम दुलारी। जिह सम सुंदरि नारि न कोई।

भी नहीं दिया है। सबने कहा कि रसीद देखो और इनका अभी न्याय करो ॥ १५ ॥ सबने रसीद देखी और उसमें एक सौ रुपया पाया। उसे सच्चे से झूठा कर दिया और उसका सब धन ले लिया ॥ १६ ॥ फिर उस स्त्री ने उस धनी से कहा कि मैं अब तुम्हारे गाँव में नहीं रहूँगी। यह कहकर वह वहाँ से चली गई और इस तरह यह भँगेड़ी उस सोफ़ी को लूट गयी ॥ १७ ॥ ॥ दोहा ॥ उसका धन लूटकर वह निर्धन से धनवान हो गई और सारे संसार के देखते-देखते उस न पीनेवाले को नशेड़ी छल गई ॥ १८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ चौरासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३८४ ॥ ६९०७ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ पचासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ पूर्व में चित्रकेतु नामक राजा था जिसका सुन्दर पुत्र विचित्ररथ था। चित्रपुरी एक नगरी थी जिसके समान देव-दैत्य-पुरियाँ भी कुछ नहीं थीं १ श्री उसकी स्त्री थी जिसके घर में सूर्य के समान सुन्दर एक राजकुमारी थी उसके समान सुन्दर स्त्री

आगे भई न पाछे होई ॥ २ ॥ बानी राइ तहाँ इक शाहा । जिह मुखु सम सुंदरि नहि माहा । स्री गुलजार राइ सुत ताके । देव दैत कोई तुलि न वाके ॥ ३ ॥ राजसुता ताको लखि रूपा । मोहि रही मन माहि अनूपा । एक सहचरी तहाँ पठाई । जिह तिह भाँति तहाँ लै आई ॥ ४ ॥ मिलत कुअरि ता सौ सुखु पायो । भाँति भाँति मिलि भोग कमायो । चुंबन भाँति भाँति के लीए । भाँति अनिक के आसन कीए ॥५॥ तब लगि मात पिता तह आयो । निरखि सुता चित मै दुख पायो । इह छल सौ इह दुहूँ सँघारो । छत्र जार के सिर पर ढारो ॥ ६ ॥ दुहूँअन के फाँसी गरु डारी । पिता सहित माता हनि डारी । फाँस कंठ ते लई निकारी । बोलि लोग सभ ऐस उचारी ॥ ७ ॥ इन दुहूँ जोग साधना साधी । त्रिप रानी जुत पवन अराधी । बारह बरिस बीत हैं जबही । जगिहैं छाडि तारियहि तबहीं ॥ ८ ॥ तब लगि तात दिया मुहि राजा । राज साज का सकल समाजा । तब लगि ताको राज कमैहो । जब जग हैं ताकौ तब दैहो ॥ ९ ॥ इह छल तात मात कह घाई । लोगन सौ इह भाँति जनाई ।

आगे-पीछे कभी भी नहीं हुई थी ॥ २ ॥ बानीराय वहाँ एक धनी था जिसके समान चन्द्रमा भी सुन्दर नहीं था। उसका पुत्र गुलजारराय था जिसके समान कोई देव या दत्य भी नहीं था ॥ ३ ॥ राजकुमारी उसका रूप देखकर मन में उस पर मोहित हो गई। उसने एक सेविका को वहाँ भेजा जो उसे जैसे-तैसे वहाँ ले आई ॥ ४ ॥ कुँवरि उससे मिलकर अत्यंत सुखी हुई और उसने भाँति-भाँति प्रकार से उससे भोग-विलास किया। विभिन्न प्रकार से चुंबन लिये और अनेकों प्रकार से आसन किए ॥ ५ ॥ तब तक उसके माता-पिता वहाँ आ गए जिन्हें देखकर पुत्री दुखित हो उठी। उसने छल से दोनों को मार डाला और अपने यार के सिर पर छत्र झुला दिया ॥ ६ ॥ दोनों के गले में फाँसी लगाकर माता-पिता दोनों को मार डाला। फिर फाँसी उनके गले से निकाल ली और सब लोगों से कहने लगी ॥ ७ ॥ इन दोनों ने योगसाधना की है और पवन की आराधना की है। जब बारह वर्ष बीतेंगे तो ये समाधि से जगेंगे ॥ ८ ॥ तब तक के लिए पिता ने मुझे राज दिया है और राजकाज करने को कहा है। मैं तब तक राज करूँगी और जब जग जाएँगे तो राज इन्हें दे दूँगी ९ इस छल से माता-पिता को लोगों से यह कह दिया जब स्वय राज्य मे पक्की हो गई तो छत्र अपने मित्र

जब अपनो द्रिढ़ राज पकायो। छल मित्र के सीस फिरायो ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ तात मात इह भाँति हनि दियो मित्र कौ राज। सकत न कोई पछानि करि चंचलान के काज ॥ ११ ॥ १ ॥ (मू०ग्रं०१३४०)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ पचासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३८५ ॥ ६९१८ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ छिआसी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बीरकेतु इक भूप भनिज्जै। बीरपुरी तिह नगर कहिज्जै। स्री दिनदीपक दे तिह रानी। सुंदरि भवन चतुरदस जानी ॥ १ ॥ राइ गुमानी तह इक छत्री। सूरबीर बलवान धरत्री। इक सुंदर अर चतुरा महाँ। जिह सम उपजा कोई न कहाँ ॥ २ ॥ राज तरुनि जब ताहि निहार्यो। इहै चंचला चित्त बिचार्यो। कहो चरित्र कवन सो कीजै। जिह बिधि पिय सौ भोग करीजै ॥ ३ ॥ बीरमती इक सखी सयानी। कानि लागि भाख्यो तिह रानी। राइ गुमानी कौ

के सिर पर झुला दिया ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार माता-पिता को मारकर मित्र को राजपाट दे दिया। स्त्रियों के कामों की कोई भी सही पहचान नही कर सकता है ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ पचासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३८५ ॥ ६९१८ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ छियासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ बीरकेतु नामक एक राजा था जिसकी नगरी बीरपुर कही जाती थी। दिनदीपक देवी उसकी रानी थी जो चौदह भुवनों में सुन्दर मानी जाती थी ॥ १ ॥ रायगुमान नामक वहाँ एक क्षत्रिय था जो शूरवीर और बलवान तथा धैर्यवान था। वह अत्यंत सुन्दर और चतुर था जिसके समान अन्य कोई पैदा नहीं हुआ था ॥ २ ॥ राजस्त्री ने जब उसे देखा तो मन में यही विचार किया कि कौन-सा प्रपंच किया जाय जिससे प्रिय से भोग-क्रीडा हो सके ॥ ३ ॥ वीरमती एक सयानी सखी थी जिसे उस रानी ने कान में कहा कि तुम रायगुमानी को ले आओ और

लै आइ । जिह तिह बिधि मुहि देहु मिलाइ ॥ ४ ॥ सखी ब्रिथा सभ भाखि सुनाई । ज्यों रानी कहि ताहि सुनाई । जिह तिह बिधि ताकह उरझाई । आनि कुअर कौ दयो मिलाई ॥ ५ ॥ भाँति भाँति तिह साथ बिहारी । भोग करत बीती निसु सारी । तब लगि आइ गयो तह राजा । इह बिधि चरित चंचला साजा ॥ ६ ॥ तीछन खड़ग हाथ महि लयो । लै मित्तहि के सिर महि दयो । टूक टूक करि ताके अंगा । बचन कहा राजा के संगा ॥ ७ ॥ चलो भूप इक चरित दिखाऊँ । गौस मरातिब तुमैं लखाऊँ । राइ चरित कछहूँ न बिचार्यो । भ्रितक परा तिह मित्र निहार्यो ॥ ८ ॥ ताकौ गौस कुतुब करि माना । भेद अभेद न मूड़ पछाना । त्रसत हाथ ताकौ न लगायो । पीर पछानि जार फिर आयो ॥ ९ ॥ ॥ दोहरा ॥ प्रथम भोग तासौ किया बहुरो दिया सँघारि । मूढ़ भूप इह छल छला सका न भेद बिचार ॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ छिआसी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३८६ ॥ ६९२८ ॥ अफजूं ॥

जैसे-तैसे मुझे उससे मिला दो ॥ ४ ॥ उस सखी ने सारी व्यथा वैसे कह सुनाई जैसी रानी ने सुनाई थी । वह उससे उलझी और उसने आकर उसे कुँवर से मिला दिया ॥ ५ ॥ उसने भाँति-भाँति प्रकार से उसके साथ विहार किया और इस प्रकार भोग करते सारी रात बीत गई । तब तक वहाँ राजा आ गया और उस चंचल स्त्री ने यह प्रपंच किया ॥ ६ ॥ उसने एक तीक्ष्ण खड़ग हाथ में लिया और मित्र के सिर में दे मारा । उसके अंगों के टुकड़े-टुकड़े करके उसने राजा से कहा ॥७॥ हे राजन् ! चलो एक चरित्र दिखाऊँ और गौंस मरातब पीर दिखलाऊँ । राजा ने प्रपंच को नहीं समझा और वहाँ मृत पड़े मित्र को देखा ॥ ८ ॥ उसने उसे ही गौंस मरातब समझा और भेद-अभेद कुछ नहीं समझा । डरकर उसे हाथ नहीं लगाया और यार को पीर ही समझ लिया ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ पहले उससे भोग किया, फिर उसे मार दिया । उस मूर्ख को इस प्रकार छला और वह भेद न पहचान सका ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ छियासीवें चरित्र की शुभ सत समाप्ति ॥ ३८६ ॥ ६९२८ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ सतासी चरित्र कथन ।

॥ चौपई ॥ मारवार इक भूप भनिज्जै । चंद्रसैन तिह नाम कहिज्जै । स्री जगमोहन दे तिह नारि । घड़ी आपु जनु ब्रहम सुनार ॥ १ ॥ चंद्रवती इह पुरी बिराजै । नाग लोक जाकौ लखि लाजै । होड परी इक दिन तिन माँह । बचन कहा त्रिय सौ नर नाँह ॥ २ ॥ ऐसी कवन जगत मै नारी । कान न सुनी न नैन निहारी । पतिहि ढोल की ढमक सुनावै । बहुरि जार सौ भोग कमावै ॥ ३ ॥ केतक दिन बीतत (मू०ग्रं०१३४१) जब भए । त्रिय कौ बच सिमरन ह्वै गए । अस चरित्र करि पतिहि दिखाऊँ । भजौ जार अर ढोल बजाऊँ ॥ ४ ॥ तब ते इहै टेव तिन डारी । औरन त्रिय सौ प्रगट उचारी । मैं धरि सीस पानि को साज़ा । भरि ल्यैहौ जल त्रिय के काजा ॥ ५ ॥ बचन सुनत राजा हरखानो । ताकौ अति पतिब्रता जानो । निजु सिर कै रानी घट ल्यावै । आनि पानि पुनि मुझै पिलावै ॥ ६ ॥ इक दिन त्रिय पिय सोत जगाई । लै घट कौ कर चली बनाई । जब

तीन सौ सत्तासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ मारवाड़ में एक राजा था जिसका नाम चन्द्रसेन था । जगमोहन देवी उसकी स्त्री थी जिसे मानों ब्रह्मा रूपी सुनार ने स्वयं गढा था ॥ १ ॥ यह पुरी चन्द्रवती थी जिसे देखकर नागलोक भी लज्जित होता था । एक दिन उनमें आपस में बाजी लग गई और राजा ने रानी से कहा ॥ २ ॥ संसार में ऐसी कौन सी स्त्री है जिसे न तो देखा हो और न सुना हो । जो पति को ढोल की ढमक सुनाकर प्रसन्न करती हो और पुनः अपने प्रेमी के साथ भी रमण करती हो ॥ ३ ॥ कितने ही दिन जब बीत गये तब भी स्त्री को वे बातें याद रहीं । उसने सोचा कि पति को ऐसा प्रपंच दिखाऊँ कि ढोल भी बजाऊँ और यार के साथ रमण भी करूँ ॥ ४ ॥ तबसे उसने एक आदत बना ली और अन्य स्त्रियों से भी प्रकट में कहा कि मैं सिर पर पानी का बर्तन रखकर राजा के लिए जल भरकर ले आऊँगी ॥ ५ ॥ वचन सुनकर राजा हर्षित हो उठा और स्त्री को अत्यन्त पतिव्रता मानने लगा । रानी अपने सिर पर घड़ा लाती है और फिर आकर मुझे पानी पिलाती है ॥ ६ ॥ एक दिन स्त्री ने प्रिय को

तुम ढोल ढमक सुनि लीजो। तब इमि काज राज तुम कीजो॥ ७॥ प्रथम सुन्यो सभ ढोल बजायो। जनियहु रानी डोल धसायो। दुतिय ढमाक सुनो जब गाढा। जनियहु तरुनि कूप ते काढा॥ ८॥ तहिक लहौरीराइ भनिज्जै। जा संग त्रिय को हेतु कहिज्जै। लयो तिसी को तुरतु बुलाइ। भोग किया अति रुचि उपजाइ॥ ९॥ प्रथम जार जब धका लगायो। तब रानी ले ढोल बजायो। जब तिह लिंग सु भग ते काढा। त्रिय दिय ढोलढमाका गाढा॥ १०॥ तब राजै इह भाँति बिचारी। डोरि कूप ते नारि निकारी। तिन त्रिय भोग जार सौ कीना। राजा सुनत दमामो दीना॥ ११॥ प्रथम जार सौ भोग कमायो। बहुरो ढोल ढमाक सुनायो। भूप क्रिया कबहूँ न बिचारी। कहा चरित्र किया इम नारी॥ १२॥ १॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ सतासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु॥ ३८७॥ ६९४०॥ अफजूं॥

सोते से जगाया और घड़ा हाथ में लेकर चल पड़ी। हे राजन्! जब तुम ढोल की ढमक सुन लेना तो इस प्रकार करना॥ ७॥ तुम जब पहले ढोल की आवाज़ सुनो तो समझना कि रानी ने बर्तन जल में डाल दिया है। जब ढोल की दूसरी आवाज़ सुनना तो समझना कि तरुणी ने घड़ा कुएँ से निकाल दिया है॥ ८॥ वहाँ एक लाहौरीराय था जिसके साथ उस स्त्री का प्रेम था। उसने उसे बुलाया और रुचिपूर्वक भोग किया॥ ९॥ यार ने जब प्रथम प्रहार किया तो रानी ने लेकर ढोल बजाया और जब उसने लिंग को योनि में से निकाला तो स्त्री ने ज़ोर से ढोल बजाया॥ १०॥ तब राजा ने सोचा कि रानी ने कुएँ में से रस्सी अब निकाल ली है। उस स्त्री ने अपने यार के साथ भोग किया और राजा को सुनने के लिए नगाड़ा भी बजा दिया॥ ११॥ पहले तो यार के साथ रमण किया, फिर ढोल-ढमक्का भी सुना दिया। राजा ने इस क्रिया को तनिक भी नहीं समझा कि इस स्त्री ने क्या प्रपंच किया है॥ १२॥ १॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में तीन सौ सत्तासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ ३८७॥ ६९४०॥ अफजूं॥

अथ तीन सौ अठासी चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सिंघ नरिंद्र भूप इक न्रिपबर । न्रिपबरवती नगर जाको घर । स्री मद मोकल दे तिह नारी । बिधि सुनार साँचे जनु ढारी ॥ १ ॥ देह कुरूप भूप को भारा । निजु त्रिय साथ न राखत प्यारा । रैनि दिवस जोगियन बुलावै । जोग साधना चहै कि आवै ॥ २ ॥ याते नारि अधिक रिसि ठानी । सुनत जोगियन की असि बानी । ऐसा कछू उपाइ बनाऊँ । भूपति सहित आजु इन घाऊँ ॥ ३ ॥ देउँ आपनो मित्रहि राजा । जोगी हनौ भूप जुत आजा । सकल प्रजहि इन मारि दिखाऊँ । मित्र सीस पर छत्र फिराऊँ ॥ ४ ॥ जब राजा निस को ग्रहि आयो । (मू०ग्रं०१३४२) बहुरि जोगियन बोलि पठायो । तिमि तिमि नारि फाँस गर डारि । भूप सहित सभ दए सँघार ॥ ५ ॥ भूपति मारि खाट तर पायो । दुहूँ अतीतन तरे डसायो । सिंघासन पर मित्रहि राखा । बोलि प्रजा सभ सो इमि भाखा ॥ ६ ॥ जब राजा निसु को ग्रहि

तीन सौ अट्ठासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ नरेन्द्र सिंह एक श्रेष्ठ राजा था जिसका निवास नृपवरवती नगर में था। मदमोकल देवी उसकी स्त्री थी जिसे विधाता ने मानों साँचे में ढाला था ॥ १ ॥ राजा की भारी देह कुरूप थी और वह अपनी स्त्री के साथ प्रेम नहीं रखता था। रात-दिन वह योगियों को बुलाता और चाहता था कि उसे योग-साधना आ जाय ॥ २ ॥ योगियों की चर्चा सुनकर उस स्त्री ने अत्यधिक क्रोध किया और सोचा कि ऐसा कुछ उपाय बनाया जाय जिससे राजा समेत इन सबको मार डाला जाय ॥ ३ ॥ अपने मित्र को राज दे दूंगी और राजा समेत योगियों को मार डालूंगी। इन्हें मारकर सारी प्रजा को दिखाऊँगी और मित्र के सिर पर छत्र झुला दूंगी ॥ ४ ॥ राजा जब रात को घर आया तो उसने योगियों को बुलवा भेजा। जैसे-जैसे वे आते गए वैसे-वैसे उस स्त्री ने गले में फाँसी डालकर राजा समेत सबको मार डाला ॥ ५ ॥ राजा को मारकर पलंग के नीचे डाल दिया और दोनों योगियों को भी नीचे काट डाला। सिंहासन पर मित्र को बैठा दिया और सारी प्रजा से इस प्रकार कहा ६ राजा जब रात में घर आया तो उसने दोनो योगियों को

आयो । दुहूँ जोगियन निकट बुलायो । अतभुत नाग तहाँ इक निकसा । रावल हेरि तवन को बिगसा ।। ७ ।। साँपहि मारि तबै तिन लियो । फरूआ बीच डारि करि दियो । घोटि भाँग जिमि दुहूँअन पीयो । अति असथूल देह कह कीयो ।। ८ ।। ताते अधिक फूलि जब गए । कुंजर सो धारत बपु भए । द्वै घटिका बीती तब फूटे । आवन जान जगत ते छूटे ।। ९ ।। बरख बारहन के ह्वै गए । त्यागत देह पुरातन भए । स्वरग लोग कह किया पयान । त्यागि आपुनी देह पुरानि ।। १० ।। भूप निरखि चक्रित चित रहा । मुहि सेती ऐसी बिधि कहा । हम तुम आव साँप दोऊ खाँहि । देह धरे सुरपुर को जाँहि ।। ११ ।। यौं कहिकै न्रिप साँप चबायो । मैं डरते नहि ताहि हटायो । थोरा भख्यो उडा नहि गयो । ताँते तन सुंदर इह भयो ।। १२ ।। देह पुरातन त्यागन करी । औखध बल नौतन तन धरी । देह भूप की ठौर जरावहु । याके सिर पर छत्र फिरावहु ।। १३ ।। इह छल साथ जौगियन घायो । भूपति को सुरलोक पठायो । सकल प्रजा को लोथि दिखाई । देस मित्र की फेरि दुहाई ।। १४ ।।

पास बुलाया । वहाँ एक अद्‌भुत नाग निकल आया और साधु उसे देखकर प्रसन्न हो उठे ।। ७ ।। उन्होंने साँप को मार डाला और एक बर्तन में डाल लिया । उसे भाँग की तरह घोटकर पी गए और उनका शरीर एकदम मोटा हो गया ।। ८ ।। उससे वे अत्यधिक फूल गए और हाथी के समान शरीरवाले हो गए । दो घड़ी के बाद वे फट गए और आवागमन के चक्र से छूट गए ।। ९ ।। अब वे बारह वर्ष के हो गए और उन्होंने अपना पुराना शरीर त्याग दिया । अपने पुराने शरीर को त्यागकर वे स्वर्गलोक में चले गए ।। १० ।। राजा देखकर हैरान रह गया और मुझसे इस प्रकार कहने लगा । आओ हम-तुम दोनों साँप को खाएँ और सदेह स्वर्ग चले जाएँ ।। ११ ।। यह कह राजा ने सर्प को चबाया और मैंने भय-वश उसे मना नहीं किया । उसने थोड़ा खाया था इसलिए उससे उड़ा नहीं गया परन्तु उसका तन सुन्दर हो गया ।। १२ ।। पुराना शरीर उसने त्याग दिया और ओषधियों के बल पर नया शरीर धारण कर लिया । अब राजा के पुराने शरीर को जलाओ और इसके (नये शरीर के) सिर पर छत्र झुलाओ ।। १३ ।। इस छल से योगियों को मार डाला और राजा को भी स्वर्ग भेज दिया अपने मित्र का देश भर में प्रचार कर सारी

भेव प्रजा किनहूँ न पछाना । किह बिधि हना हमारा राना । किह छल सो जुगियन को घायो । मित्र सीस पर छत्र फिरायो ॥ १५ ॥ ॥ दोहरा ॥ गरबीराइ सु मित्र को दिया आपना राज । जोगन जुत राजा हना किया आपना काज ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ अठासी चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३८८ ॥ ६९५६ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ निनानवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ भूप सुबाहु सैन इक सुना । रूपवान सुंदरि बहु गुना । स्री सुबाहपुर ताको सोहै । जिह सम और नगर नहि को है ॥ १ ॥ स्री मकरधुज दे तिह रानी । सुंदरि देस देस मौ जानी । तिह समान (मू०ग्रं०१३४३) नारी नहि कोऊ । पाछे भई न आगे होऊ ॥ २ ॥ तिन देखा दिल्ली को एसा । इह बिधि ते लिखि पठ्यो सँदेसा । तुम इह ठौर आपु चढ़ि आवहु । भूपति जीति मुझै लै जावहु ॥३॥

प्रजा को राजा की लाश दिखाई ॥ १४ ॥ प्रजा ने कुछ भी रहस्य न समझा कि हमारा राजा कैसे मार डाला गया है, कैसे योगियों को मार डाला गया है और कैसे मित्र के सिर पर छत्र धारण करवाया गया है ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥ उस गरबीराय नामक मित्र को अपना राज दे दिया और योगियों समेत राजा को मारकर अपना काम कर लिया ॥ १६ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ अट्ठासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३८८ ॥ ६९५६ ॥ अफजूँ ॥

तीन सौ नवासीवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ सुबाहुसेन एक गुणज्ञ और सुन्दर राजा सुना जाता था। उसका नगर सुबाहुपुर था जिसके समान अन्य कोई नगर नहीं था ॥ १ ॥ उसकी रानी मकरध्वजदेवी देश-देशान्तरों में सुन्दर मानी जाती थी। उसके समान स्त्री न तो पहले कभी हुई थी और न आगे कभी होगी ॥२॥ उसने दिल्ली के राजा को देखा और उसे लिखकर संदेश भिजवा दिया कि तुम इस स्थान पर स्वयं चढ़ाई करो और मुझे जीतकर ले जाओ ॥ ३ ..

अकबर सुनत बैन उठि धयो पवन हुते आगे बढ़ि गयो। शाह सुना आयो त्रिपु जब ही। पति सौ बचन बखाना तब ही ॥ ४ ॥ तुम ह्याँ ते त्रिप भाजि न जैयहु। रन सामुहि ह्वै जुद्ध मचैयहु। मै न तजौगी तुमरा साथा। मरे जरोंगी तुम सौ नाथा ॥ ५ ॥ इत भूपति कह धीर बँधायो। उतै लिखा लिखि तहा पठायो। आई सैन शाह की जब ही। रहा उपाइ कछू नहि तब ही ॥ ६ ॥ राजा जूझि मरत भयो जबै। भाज चलत भी परजा तबै। रानी बाँधि लबै तिन लई। इह छल धाम मित्र के गई ॥ ७ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ निनानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३८९ ॥ ६९६३ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ नबे चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बाहुलीक सुनियत राजा अह। जिह समान कोई भयो दुतिय नह। धाम गौहरा राइ दुलारी। जिह समान नहि देव कुमारी ॥ १ ॥ तह इक हुता शाह का बेटा। जिह समान को भयो न भेटा। एक सुघर अरु सुंदर

अकबर यह सुनकर उठा और पवनवेग से आगे बढ़ चला। जब उस धनी राजा पर राजा को चढ़ आते सुना तो स्त्री ने पति से कहा ॥ ४ ॥ हे राजन्! तुम यहाँ से भाग कर मत जाना और सामने हो युद्ध करना। मैं तुम्हारा साथ नहीं छोड़ूँगी और हे नाथ! तुम्हारे साथ ही जल मरूँगी ॥ ५ ॥ इधर राजा को धैर्य बँधाया और उधर उसे लिखकर संदेशा भिजवा दिया। जब बादशाह की सेना आ गई तो कोई उपाय बाकी न बचा ॥ ६ ॥ राजा जब जूझकर मर गया तो प्रजा तत्काल भाग खड़ी हुई। उसने रानी को बाँध लिया और इस प्रकार वह अपने मित्र के घर जा पहुँची ॥ ७ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ नवासीवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३८९ ॥ ६९६३ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ नब्बेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ बाहुलीक नामक राजा के समान अन्य कोई सुनाई नहीं पड़ता था। उसके घर में गौहरराय राजदुलारी थी जिसके समान अन्य देवकुमारी भी कोई नहीं थी ॥ १ ॥ वहाँ एक धनी का पुत्र था जिसके

घनो। जनु अवतार मदन को बनो ॥ २ ॥ भूप सुता तिह निरखि लुभाई। गिरी भूमि जनु नाग चबाई। सखी एक तिह तीर पठाई। गाजि राइ कह लिया बुलाई ॥ ३ ॥ जब तिह लखा सजन घर आयो। कंठ गौहराँ राइ लगायो। बहु बिधि करे तवन सौं भोगा। दूरि करा जिय का सभ सोगा ॥ ४ ॥ भोग करत भायो अति प्यारो। छिन न करत आपन ते न्यारो। भाँति भाँति की कैफ पिलावै। सुभ्र सेज चढ़ि भोग कमावै ॥ ५ ॥ तब तह तात तवन का आयो। त्रसत देग महि ताँहि छपायो। रौजन मूँदि हौज महि धरा। एक बूँद जल बीच न परा ॥ ६ ॥ पितहि ताल ततकाल दिखायो। बीच बेरीयन डारि फिरायो। बीए जराइ बीच तिह डारे। जनु करि चढ़े रैनि के तारे ॥ ७ ॥ पितहि अचंभव ऐस दिखायो। समाधान करि धाम पठायो। मितहि काढ सेज पर लीना। काम भोग (मू०ग्रं०१३४४) बहु बिधि तन कीना ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ नवे चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३९० ॥ ६९७१ ॥ अफजूं ॥

समान कोई अन्य कभी नहीं मिला था। वह सुन्दर और चतुर मानों कामदेव का अवतार था ॥ २ ॥ राजकुमारी उसे देखकर मोहित हो धरती पर ऐसे गिर पड़ी मानों उसे साँप ने काट खाया हो। उसने एक सखी को पास बुलाया और गाजीराय को पास बुला लिया ॥ ३ ॥ जब उसने देखा कि सजन घर आ गया है तो गौहरराय ने उसे गले से लगा लिया। विविध प्रकार से उससे भोग करके उसने मन का सभी शोक दूर कर दिया ॥ ४ ॥ रमण करते वह प्रिय उसे भा गया और अब वह क्षण भर के लिए भी उसे दूर नहीं करती थी। उसे भाँति-भाँति की शराब पिलाती थी और श्वेत शय्या पर चढ़कर उससे भोग करती थी ॥ ५ ॥ तब वहाँ उसका पिता आ गया तो उसने भयभीत हो उस (प्रेमी को) देग में छिपा दिया। उसका मुँह बंद कर उसे हौज़ में रख दिया और उसमें एक भी बूँद पानी न जाने दिया ॥ ६ ॥ फिर पिता को वह ताल (हौज़) दिखा दिया और उस देग को उसी में घुमाती रही। उसके बीच (ऊपर) दीपक जला दिए मानो रात में तारे निकल आए हों ॥ ७ ॥ पिता को यह अदभुत दृश्य दिखाकर

उसका समाधान कर उसे घर भेज दिया। फिर मित्र को निकालकर शय्या पर ले लिया और उससे विभिन्न प्रकार से कामोपभोग किया ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ नब्बेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३९० ॥ ६९७१ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ इकयानवे चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बरबरीन को देस बसत जह। बरबर पुर इक नगर हुतो तह। अफकन शेर तहाँ का राजा। जिह समान बिधि दुतिय न साजा ॥ १ ॥ पीर मुहंमद तह इक काजी। देह कुरूप नाथ जिह साजी। धाम खातिमाबानो नारी। जिह समान नहि राजदुलारी ॥२॥ ॥ सोरठा ॥ सुंदर ताकी नारि अति कुरूप काजी रहै। तब तिन किया बिचारि किह बिधि बध याकौ करो ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ शाह पुत्र तिह पुर इक आयो। बाँके राइ सरूप सवायो। काजी की इस्त्री तिह लहा। बरौ इसी कह चित यौ कहा ॥ ४ ॥ मुसलमान बहु धाम बुलावत। भाँति भाँति तन दरब लुटावत। यौ कहि सभहूँ सीस झुकावै। यह काजी सुंदर ह्वै जावै ॥ ५ ॥ एक दिवस उपपतिहि बुलाई। कान लागि सभ बात सिखाई। बीच छपाइ सदन के राखा।

तीन सौ इक्यानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ बर्बर देश में बर्बरपुर एक नगर था। अफकन शेर वहाँ का राजा था, जिसके समान विधाता ने अन्य कोई राजा नहीं बनाया था ॥ १ ॥ वहाँ पीर मुहम्मद एक क़ाज़ी था जिसकी देह विधाता ने बहुत कुरूप बनाई थी। घर में खातिमाबानो स्त्री थी जिसके समान कोई राजकुमारी भी नहीं थी ॥ २ ॥ ॥ सोरठा ॥ क़ाज़ी कुरूप था और उसकी स्त्री सुन्दर थी। उस स्त्री ने सोचा कि कैसे इसका वध किया जाय ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ वहाँ एक धमिक-पुत्र आया जो रूपवान था। क़ाज़ी की स्त्री ने मन में सोचा कि इसी का वरण किया जाय ॥ ४ ॥ वह अनेकों मुसलमानों को घर बुलाती थी और विभिन्न प्रकार से उन पर द्रव्य लुटाती थी। वह सबके सामने सिर झुकाती थी कि किसी प्रकार क़ाज़ी सुन्दर हो जाय ॥ ५ ॥ एक दिन उसने अपने प्रेमी को बुलाया और

और नारि सौ भेव न भाखा ।। ६ ।। सभ मलेछ उठि फजिर बुलाए । भाँति भाँति के साथ जिवाए । कह्यो सभै मिलि देहु दुआइ । मम पति सुंदरि करै खुदाइ ।। ७ ।। सभहू हाथ तसबियै लीनी । बहु बिधि दुआइ तवन कह दीनी । भाँति भाँति तन करी सुनाइ । तव पति सुंदर करै खुदाइ ।। ८ ।। लै दुआइ त्रिय धाम सिधाई । मारि काजियहि दियो दबाई । करि काजी लैगी तिह तहाँ । पढ़त किताब मुलाने जहाँ ।। ९ ।। प्रजा निरखि ताकह हरखानी । साचु किताब आपनी जानी । हम जो याकह दई दुआइ । याते सुंदर करा खुदाइ ।। १० ।। इह बिधि प्रथम काजियहि घाई । बरत भई अपना सुखदाई । भेद अभेद न किनूँ बिचारा । इह छल बरा अपना प्यारा ।। ११ ।। ।। दोहरा ।। तुम सभ ही अति क्रिपा करि दीनी हमैं दुआइ । ताते पति सुंदर भयो कीनी मया खुदाइ ।। १२ ।। १ ।। (मू०ग्रं०१३४५)

।। इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ इकयानवे चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ।। ३९१ ।। ६९८३ ।। अफजूँ ।।

कान में उसे सब बातें सिखा दीं । उसे घर में छिपा लिया तथा अन्य किसी स्त्री से रहस्य नहीं बताया ।। ६ ।। सब म्लेच्छों को उसने प्रातः बुलाया और विभिन्न प्रकार से उनको भोजन कराया । सबसे कहा कि सब मिलकर खुदा से दुआ करो कि मेरा पति सुन्दर हो जाय ।। ७ ।। सबने हाथ में माला पकड़ी और विभिन्न प्रकार से उसको दुआएँ दीं । भाँति-भाँति प्रकार से कहा कि ख़ुदा तुम्हारे पति को सुन्दर कर दे ।। ८ ।। दुआ लेकर औरत घर में गई और क़ाज़ी को मारकर उसने दबा दिया । अपने प्रेमी को क़ाज़ी बनाकर वहाँ ले गई जहाँ मौलाना लोग किताबें पढ़ रहे थे ।। ९ ।। प्रजा यह सब देख प्रसन्न हो उठी और उन्होंने अपनी पुस्तक को सच्चा मान लिया । हम लोगों ने जो इसे दुआ दी है उससे ख़ुदा ने इसे सुन्दर बना दिया है ।। १० ।। इस प्रकार पहले क़ाज़ी को मारकर उसने सुखपूर्वक (प्रेमी का) वरण कर लिया । भेद-अभेद का किसी ने विचार नहीं किया और इस प्रकार छल से अपना प्रिय प्राप्त कर लिया ।। ११ ।। ।। दोहा ।। तुम सबने कृपा कर मुझे दुआ दी जिससे ख़ुदा ने मेहरबानी करके मेरे पति को सुन्दर बना दिया है ।। १२ ।। १ ।।

।। श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ इक्यानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ३९१ ६९८३ अफजूँ

अथ तीन सौ बानवें चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ भूप सु धरमसैन इक सुनियत । जिह समान जग दुतिय न गुनियत । चंदन दे तिह नारि भनिज्जै । जिह मुख छबि निसकर कह दिज्जै ॥ १ ॥ संदल दे दुहिता तिह सोहै । खग म्रिग जच्छ भुजंगन मोहै । अधिक प्रभा तन मो तिन धरी । मदन सुनार भरत जनु भरी ॥ २ ॥ न्रिप सुत एक सुघर तिन हेर्‌यो । मदन आनि ताका तन घेर्‌यो । सखी एक तह दई पठाई । अनिक जतन करिकै तिह ल्याई ॥ ३ ॥ आनि सजन तिन दयो मिलाई । रमी कुअरि तासौ लपटाई । अटक गयो जिय तजा न जाई । इह बिधि तिन कीनी चतुराई ॥ ४ ॥ तोप बडी इक लई मँगाइ । जिह महि बैठि मनुच्छ ते जाइ । मंत्र सकति करि ताम्रों बरी । मित्र भए इह भाँति उचरी ॥ ५ ॥ मित्र बिदा करि सखी बुलाई । इह बिधि ताहि कहा समुझाई । तोप बिखै मुहि डारि चलैयहु । इह न्रिप सुत के ग्रहि पहुचैयहु ॥ ६ ॥ जब

तीन सौ बानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ सुधर्मसेन नामक एक राजा था जिसके समान संसार में अन्य कोई नहीं था। चंदनदेवी उसकी स्त्री थी जिसकी छवि देखकर उसे चन्द्रमा ही कह दिया जाता था ॥ १ ॥ संदलदेवी उसकी पुत्री थी जो पक्षी, मृग, यक्ष, भुजंग आदि सबका मन मोहित करती थी। उसकी अत्यन्त प्रभा ऐसी लगती थी जैसे मानों कामदेव रूपी सुनार ने उसे बनाया हो ॥ २ ॥ उसने राजा के एक सुन्दर पुत्र को देखा और उसे कामदेव ने आकर घेर लिया। उसने एक सखी को भेजा जो उसे यत्नपूर्वक वहाँ ले आई ॥ ३ ॥ उसे सजन लाकर मिला दिया और वह कुँवरि उससे लिपटकर रमण करने लगी। उसका मन उसी में लीन हो गया और अब वह उससे छोड़ा नहीं जाता था। उसनें एक चतुरता की ॥ ४ ॥ उसने एक बड़ी तोप मँगाई जिसमें मनुष्य बैठ सकता था। वह यंत्र शक्ति से उसमें घुस गई और अपने मित्रों से यह कहा ॥ ५ ॥ मित्र को बिदा कर सखी को बुलाया और उसे इस प्रकार समझाकर कहा कि तोप में मुझे डालकर चलाओ और राज पुत्र क घर पर पहुँचा दो ६ जब सखी ने यह सुना

सहचरि ऐसे सुनि लई। दारू डारि आगि तिह दई। गोरा जिमि लै कुअरि चलायो। मंत्र सकति जम निकट न आयो ॥ ७ ॥ जाइ परी निजु प्रीतम के घर। पाहन जैस हना गोफन करि। निरखि मीत तिह लिया उठाई। पोछि अंगि उर साथ लगाई ॥ ८ ॥ ॥ दोहरा ॥ मीत अधिक उपमा करी धंन्य कुअरि का नेह। गोला ह्वै तोपहि उडी चिंता करी न देहि ॥ ९ ॥ ॥ चौपई ॥ इतै कुअरि मितवा के गई। उतै सखिन भूपहि सुधि दई। दारू डारि अनल हम दई। तोप बिखैं तरुनी उडि गई ॥ १० ॥ रानी भूपत सहित पुकारी। कवन दैव गति करी हमारी। खेलत आगि कुअरि इन दई। तोप बिखै ताते उडि गई ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ बानवें चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३९२ ॥ ६९८४ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ तिरानवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ अछलापुर इक भूप भनिज्जै। अछलसैन तिह नाम कहिज्जै। तहिक सुधरमी राइ शाह भनि। जानुक

तो उसमें बारूद डालकर उसे आग लगा दी। गोला के समान उसे चला दिया और मंत्रशक्ति के कारण मौत उसके पास न आ सकी ॥ ७ ॥ वह अपने प्रियतम के घर ऐसे जा पड़ी जैसे गुलेल से पत्थर मारा गया हो। मित्र ने उसे देखकर उठा लिया और उसके शरीर को पोंछकर छाती से लगा लिया ॥ ८ ॥ ॥ दोहा ॥ मित्र ने अत्यधिक प्रशंसा की और कुँवरि के स्नेह को धन्य कहा। वह गोला बनकर उड़ गई पर उसने अपने शरीर की तनिक चिंता न की ॥ ९ ॥ ॥ चौपाई ॥ इधर कुँवरि मित्र के पास गई और उधर सखी ने राजा को जाकर खबर कर दी। बारूद डालकर आग मैंने लगाई और तरुणी तोप में उड़ गई ॥ १० ॥ रानी ने राजा से कहा कि ईश्वर ने यह हमारी क्या गति कर दी है। खेल-खेल में इसने तोप को आग लगा दी और इसीलिए यह तोप में उड़ गई ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ बानवेवें, चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३९२ ॥ ६९८४ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ तिरानवेवाँ चरित्र-कथन

चौपाई अछलापुर में एक राजा था जिसका नाम अछलसेन

सभ शाहन की थो मनि ॥ १ ॥ चंपा दे तिह शाह भनिज्जै । रूपवान गुनवान कहिज्जै । तिन राजा को पुत्र निहार्यो । सुछबिराइ जिह नाम बिचार्यो ॥ २ ॥ (मू०ग्रं०१३४६) ॥ अड़िल्ल ॥ हितू जानि इक सहचरि लई बुलाइकै । सुछबि राइ के दीनो ताहि पठाइकै । कहा कोरि करि जतन तिसै ह्याँ ल्याइयो । हो जितक चहोगी दरबु तितक लै जाइयो ॥ ३ ॥ सुनत सहचरी बचन सजन के ग्रहि गई । जिमि तिमि ताहि प्रबोध तहाँ ल्यावत भई । मिलत छैलनी छैल अधिक सुखु पाइयो । हो भाँति भाँति की कैफन निकट मँगाइयो ॥ ४ ॥ किया कैफ कौ पान सु दुहूँ प्रजंक पर । भाँति भाँति तन रमे बिहसि करि नारि नर । कोकशास्त्र ते मत कौ बिहसि उचारिकै । हो आपु बीच कंधन पर हाथन डारिकै ॥ ५ ॥ अधिक जोर तन दोऊ तहाँ क्रीड़ा करैं । मन मै भए अनंद न काहूँ ते डरैं । लपटि लपटि कर जाँहि सु छिनिक न छोरही । हो सकल द्रप कंद्रप को तहाँ मरोरही ॥ ६ ॥ ॥ चौपई ॥ भोग करत तरुनी सुख पायो । करत केल रजनियहि बितायो । पहिली राति बीत जब गई ।

था। वहाँ सुधर्मीराय नामक एक धनिक था जो सब धनिकों में मणि के समान था ॥ १ ॥ चंपादेवी उस धनी की (स्त्री) कही जाती थी जो रूपवान और गुणवान थी। उसने राजा का पुत्र देखा जिसका नाम सुछविराय था ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ उसने एक हितैषिणी दासी को बुलाया और सुछबिराय के पास भेज दिया। उससे कहा कि अनेकों यत्न करके भी उसे यहाँ ले आओ, तुम्हें जितने भी द्रव्य की इच्छा हो ले जाना ॥ ३ ॥ बात सुनकर वह दासी सजन के घर गई और जैसे-तैसे उसे मनाकर वहाँ ले आई। सुन्दर और सुन्दरी ने मिलकर अपार सुख प्राप्त किया और उन्होंने विभिन्न प्रकार की मदिराएँ मँगा ली ॥ ४ ॥ दोनों ने पलंग पर मदिरा-पान किया और वे दोनों स्त्री-पुरुष विभिन्न प्रकार से प्रसन्न हो रमण करने लगे। एक-दूसरे के कंधों पर हाथ डालकर वे कोकशास्त्र के मतों का उच्चारण करने लगे ॥ ५ ॥ दोनों के शरीर में अत्यधिक बल था और निर्भय होकर आनन्दपूर्वक क्रीड़ा करने लगे। वे लिपट रहे थे और क्षण भर के लिए भी एक-दूसरे को नहीं छोड़ रहे थे तथा कामदेव का मद चूर कर रहे थे ॥ ६ ॥ ॥ चौपाई ॥ रमण-क्रीड़ा करते हुए स्त्री ने अपार सुख प्राप्त किया और इस प्रकार केलि क्रीड़ा में सारी रात बिता

पाछिल रैनि रहत सुधि लई ॥ ७ ॥ कहा कुअरि उठि राज कुअरि संग । कबहूँ छाड हमारा तैं जंग । जो कोई पुरख हमैं लहि जैहै । जाइ राव तन भेद बतैहै ॥ ८ ॥ शाहु सुता इह भाँति उचारा । बैन सुनो मम राजकुमारा । सभन लखत तुहि कैफ पिलाऊँ । तबै शाह को सुता कहाऊँ ॥ ९ ॥ तह हीं रमो तिहारे संगा । अपने जोरि अंग सौ अंगा । हमै तुमै सभ लोग निहारैं । भलो बुरो नहि भेद बिचारैं ॥ १० ॥ यों कहि कुअरि बिदा करि दीना । प्रात भेस नर को धरि लीना । किअस कुअर के धाम पयाना । भेद अभेद न किनी पछाना ॥ ११ ॥ चाकर राखि कुअरि तिह लियो । बीच मुसाहिब को तिह कियो । खान पान सभ सोई पिलावै । नर नारी कोई जानि न जावै ॥ १२ ॥ इक दिन पिय लै गई शिकारा । बीच सुराही के मद डारा । जल कै साथ भिगाइ उछारा । चोवत जात ऊवन ते बारा ॥ १३ ॥ सभ कोई लखै तवन कह पानी । कोई न समुझि सकै मद ग्यानी । जब कानन के गए मँझारा । राजकुअर सौ बाल उचारा ॥१४॥

दी । जब रात्रि का पहला भाग बीत गया और आखिरी भाग आया तो उनको होश आया ॥ ७ ॥ कुँवर ने उठकर राजकुँवरि से कहा कि अब तुम हमारा साथ छोड़ो । यदि कोई व्यक्ति हमें देख लेगा तो जाकर राजा से भेद बता देगा ॥ ८ ॥ धनिक की पुत्री ने कहा कि हे राजकुमार! तुम मेरी बात सुनो । मैं सबके देखते-देखते तुम्हें मदिरा पिलाऊँगी तभी धनिक की पुत्री कहलाने की हक़दार बनूंगी ॥ ९ ॥ तब ही मैं तुम्हारे अंगों से अंग जोड़कर तुम्हारे साथ रमण करूँगी । हमें-तुम्हें सब देखेंगे पर भले-बुरे का विचार नहीं करेंगे ॥ १० ॥ यह कहकर उसने कुँवर को विदा कर दिया और स्वयं पुरुष का वेश धारण कर लिया । उसने कुँवर के घर प्रस्थान किया और भेद-अभेद को कोई न पहचान सका ॥ ११ ॥ उसे कुँवर ने नौकर रखकर अपने मुसाहबों में स्थान दे दिया । वही अब खाना-पीना देने लगा और अन्य स्त्री-पुरुष कोई भी वहाँ नहीं जा पाता था ॥ १२ ॥ एक दिन सुराही में शराब भरकर वह प्रिय को शिकार के लिए ले गई । जल के साथ उसने मदिरा को उछाला और पानी उस सुराही से गिरता हुआ जान पड़ा ॥ १३ ॥ सब कोई उसे पानी मान रहा था और कोई भी चतुर यह न समझ सका कि वह मदिरा है । जब वे जंगल के बीच में गए तो बालिका ने राजकुमार से कहा १४

अथ तीन सौ चुरानवे चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ देवछत्र इक भूप बखनियत। स्री सुर राजवती पुर जनियत। तिहु संग चढ़त अमिति चतुरंगा। उमडि चलत जिह बिधि करि गंगा ॥ १ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ स्री अलकेसमती तिह सुता बखानियै। परी पदुमनी प्रात कि प्रक्रित प्रमानियै। कै निसुपति सुर जाइ कि दिनकर जूझई। हो जिह सम ह्वैहै नारि न पाछै है भई ॥ २ ॥ तह इक राइ सजुलफ सु छत्री जानियै। रूपवान गुनवान सुघर पहिचानियै। जिह बिलोकि कंद्रप्प द्रप्प कह खोइ है। हो जिह सम सुंदर भयो न आगो होइ है ॥ ३ ॥ राजसुता इक दिन तिह रूप निहारिकै। रही मगन ह्वै मन महि क्रिया बिचारिकै। अब कस करौ उपाइ जु याही कह बरौ। हो बिनु साजन के मिले अगनि भीतर जरौ ॥ ४ ॥ हितू सहचरी समझिक लई बुलाइकै। कहि तिह भेद कुअर तन दई पठाइकै। जु मैं तुमैं कछु कहियो सु मीतहि आखियो। हो चित महि रखियहु भेद न काहू भाखियो ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ सखी कुअर पहि दई पठाई। जिह तिह भाँति

तीन सौ चौरानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ देवछत्र नामक एक राजा था जो सुरराजवती नगर में रहता था। उसके साथ अपरिमित चतुरंगिणी सेना गंगा के समान उमड़कर चलती थी ॥ १ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ उसकी पुत्री अलिकेशमती थी उसे परी, पद्मिनी अथवा साक्षात् प्रकृति कहा जा सकता था। वह चन्द्र, सूर्य अथवा कोई देवकन्या थी। उसके समान न कोई स्त्री हुई है न होगी ॥ २ ॥ वहाँ एक राजा सजुलफ नामक क्षत्रिय था जो रूपवान, गुणवान और सुघड़ था। उसे देखकर कामदेव का भी अभिमान चूर होता था। उसके समान भी न कोई सुन्दर हुआ और न ही होगा ॥ ३ ॥ राजकुमारी एक दिन उसका रूप देखकर मन में मोहित हो मग्न हो गई। अब मैं ऐसा उपाय करूँगी कि इसी का वरण करूँगी और सजन से न मिल सकने पर आग में जल मरूँगी ॥ ४ ॥ एक हितैषिणी सखी को उसने बुलाया और उसे रहस्य समझाकर कुँवर के पास भेज दिया। जो मैंने तुमसे कहा है वही मित्र से कहना अपने चित्त में कोई भी भेद छिपा न रखना ५ चौपाई सखी को कुँवर के पास भेज दिया और

प्रबोधि लयाई। राज सुतहि तिन आन मिलायो। साजन मिलत सजनि सुख पायो ॥ ६ ॥ भाँति भाँति सेती किय भोगा। मिट गयो सकल दुहन को सोगा। भाँति भाँति तन करै बिलासा। निज पति को तजि करि कै त्रासा ॥ ७ ॥ चतुर चतुरिया दोई कलोलहि। मिलि मिलि बैन मधुर धुन बोलहि। भाँति अनिक की (मू०ग्रं०१३४८) कैफ मँगावैं। एक पलंघ पर बैठि चड़ावैं ॥ ८ ॥ आसन भाँति भाँति के लेहीं। आलिगन चुंबन दोइ देहीं। रसि रसि कसि नर केल कमाइ। लपटि लपटि तरुनी तर जाइ ॥ ९ ॥ दोइ तरुन बिजिया दुहूँ खाई। चारि टाँक अहिफेन चड़ाई। रसि रसि करि कसि कसि रति कियो। चोरि चंचला को चित लियो ॥ १० ॥ रसिगे दोऊ न छोरा जाइ। कही बात इह घात बनाइ। एक मंत्र हम ते पिय लीजै। जल के बिखै पियाना कीजै ॥ ११ ॥ जब लगु मंत्रुचार तैं करहैं। तब लगि तैं जल बीच न मरहैं। तुमरे जल ऐहै न नेरे। चारि ओर रहिहै तुहि घेरे ॥ १२ ॥ मंत्र मित्र ताते तब लियो।

वह जैसे-तैसे उसे समझाकर ले आई। राजकुमार को उससे मिला दिया और साजन से मिलकर सजनी को सुख प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥ विभिन्न प्रकार से भोग किया और दोनों के समस्त दुःख मिट गए। वह अपने पति का भय भी न मानकर भाँति-भाँति से क्रीड़ा करने लगी ॥ ७ ॥ वे चतुर स्त्री-पुरुष दोनों किल्लोल करने लगे और मिलकर मधुर ध्वनियों का उच्चारण करने लगे। विभिन्न प्रकार मदिराएँ मँगाने लगे और एक ही पलंग पर बैठकर पीने लगे ॥ ८ ॥ विभिन्न प्रकार के आसन लेने लगे और दोनों आलिगन-चुंबन लेने-देने लगे। वह पुरुष रसिकतापूर्वक केलि-क्रीड़ा करने लगा और लिपट-लिपटकर तरुणी के पास जाने लगा ॥ ९ ॥ दोनों तरुणों ने भाँग खाई और चार टाँक (एक प्रकार की तौल-इकाई) सर्प-फेन चढ़ा गए। इस प्रकार रसपूर्वक कस-कसकर रति-क्रीड़ा की और उस स्त्री का चित्त चुरा लिया ॥ १० ॥ दोनों इतने अनुरक्त हो गए कि अब एक-दूसरे को छोड़े नहीं बनता था। तब स्त्री ने अवसर देखकर एक बात कही। हे प्रिय ! मुझसे एक मंत्र लो और जल में प्रस्थान कर जाओ ॥ ११ ॥ जब तक तुम मंत्रोच्चारण करोगे, तब तक जल के मध्य तुम नहीं मरोगे। और जल तुम्हारे पास नहीं आयेगा बल्कि तुम्हें चारो ओर से घेरे रहेगा १२ तब मित्र ने मत्र लिया और

गंगा बीच पयाना कियो। जल चहूँ ओर तवन के रहा। आनि पान ताके नहि गहा ॥ १३ ॥ इह छल जल महि मीत पठायो। मात पिता तन बचन सुनायो। हो पित प्रात सुयंबर करिहौ। परम पवित्र पुरख कोई बरिहौ ॥ १४ ॥ कहे चलो तुम तात हमारे। मथहु जानवी होत सवारे। तह ते जु नर निकसि है कोई। भरता होइ हमारो सोई ॥ १५ ॥ बचन सुनत राजा हरखानो। साचु झूठु जड़ कछु न पछानो। जोरि प्रजा दै ढोल नगारे। चले सुरसुरी मथन सकारे ॥१६ ॥ बडे द्रुमन की मथनि सु धारि। मथत भए सुरसरि मो डारि। तनिक बारि कह जबै डुलायो। निकसि पुरख तह ते इक आयो ॥ १७ ॥ निरखि सजन को रूप अपारा। बरत भई तिह राजकुमारा। भेद अभेद पसु कछु न बिचरियो। इह छल नारि जार कह बरियो ॥ १८ ॥ ॥ दोहरा ॥ जिह बिधि ते मथि नीरधहि लछमी बरी मुरारि। तैसहि मथि गंगा बरा याकह राजकुमारि ॥ १९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संवादे तीन सौ चुरानवे चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३९४ ॥ ७०३३ ॥ अफजूं ॥

गंगा में प्रस्थान कर गया। जल उनके चारों ओर रहा परन्तु पानी ने उन्हें स्पर्श नहीं किया ॥ १३ ॥ इस छल से मित्र को पानी में भेज दिया और माता-पिता से कहा कि हे पिताजी ! मैं प्रातः स्वयंवर करूँगी और किसी परम पवित्र पुरुष का वरण करूँगी ॥ १४ ॥ हे पिता ! मेरा कहना मानों और प्रातः गंगा का मंथन करो। उसमें से जो व्यक्ति निकलेगा वही मेरा पति होगा ॥ १५ ॥ राजा बात सुनकर प्रसन्न हो उठा और मूर्ख कुछ भी झूठ-सच न समझ सका। वह प्रजा को एकत्र कर भोर में ही गंगा का मंथन करनेके लिए चल दिया ॥ १६ ॥ बड़े पेड़ों की मथानी बनाकर गंगा को मथने लगे। जब पानी को थोड़ा सा मथा तो उसमें से एक पुरुष निकल आया ॥ १७ ॥ सजन के स्वरूप को देखकर वह राजकुमारी उसका वरण करने लगी। मूर्ख राजा भेद-अभेद कुछ न जाना और इस प्रपंच से स्त्री ने अपने यार का वरण कर लिया ॥ १८ ॥ ॥ दोहा ॥ जिस प्रकार मुरारि विष्णु ने समुद्र-संथन कर लक्ष्मी का वरण किया उसी प्रकार इस राजकुमारी ने गंगा का मंथन कर उसका वरण कर लिया ॥ १९ ॥ १ ॥

श्री　　के त्रिया-चरित्र के मंत्री भूप सवाद मे तीन सौ चौरानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति　३९४ । ७०३३　मफ्जूं

अथ तीन सौ पचानवो चरित्र कथन ॥

॥ चौपई ॥ सरबसिंघ राजा इक सोहै। सरबसिंधु पुर गढ़ जिह कोहै। स्री दलथंभु सुजान पुत्र तिह। सुंदर अवर न भयो तुल्लि जिह ॥ १ ॥ दुशट सिंघ ताको भ्राता भनि। दुतिय चंद्र जाना सभ लोगन। रूपवान गुनवान भनिज्जै। कवन सुघर सम ताहि कहिज्जै ॥ २ ॥ (पृ०सं०१३४९) स्री सु जुलफ़ दे शाह दुलारी। जिह समान नहि देव कुमारी। राज कुअरि निरखा तिह जबहीं। लगगी लगन निगोडी तबहीं ॥ ३ ॥ हितू जानि सहचरी बुलाई। भेद भाखि तिह ठौर पठाई। राजकुअर तिह हाथ न आयो। इह बिधि उहि इह आनि सुनायो ॥ ४ ॥ शाहु सुता बहु जतन थकी करि। गयो न मीत कैसेहूँ तिह घर। बीर हाँकि इक तहाँ पठायो। सोत सेज ते गहि पटकायो ॥ ५ ॥ टंगरी भूत कबै गहि लेई। कबहूँ डारि सेज पर देई। अधिक त्रास दे ताहि पछारा। उहि डरि जिय ते मारि न डारा ॥ ६ ॥

तीन सौ पंचानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ सिंधुपुर क़िले में सरबसिंह नामक राजा शोभायमान था। दलथंभ नामक उसका सुजान पुत्र था जिसके समान सुन्दर अन्य कोई नहीं हुआ था ॥ १ ॥ दुष्ट सिंह उसका भाई था जिसे लोग दूसरा चन्द्रमा मानते थे। वह रूपवान और गुणवान था। उसके समान सुन्दर भला अन्य कौन था ॥ २ ॥ जुलफदेवी एक धनी की पुत्री थी जिसके समान कोई देवकन्या भी नहीं थी। उसने राजकुमार को जैसे ही देखा तब से ही उसकी निगोड़ी लगन उसके साथ लग गई ॥ ३ ॥ उसने एक हितैषिणी सखी को बुलाया और उसे भेद समझाकर उस स्थान पर भेज दिया। राजकुमार उसके हाथ नहीं आया और उसने आकर इस प्रकार कहा ॥ ४ ॥ धनिक-पुत्री बहुत प्रयत्न करके थक गई परन्तु वह मित्र कैसे भी उसके घर नहीं गया। तब उसने (मंत्रशक्ति से) एक "वीर" (भूत) को वहाँ भेजा जिसने उसे शय्या पर सोते हुए को पकड़कर पटक दिया ॥ ५ ॥ भूत कभी टाँग पकड़ लेता था और कभी उसे शय्या पर पटक देता था। उसे बहुत भयभीत कर उसने पछाड़ा परन्तु (मालिकिन के) डर से उसे मार नहीं डाला ६ सारी रात उसे सोने नहीं दिया

रैनि सिगर तिह सैन न दियो। न्रिप सुत कह त्रासित बहु कियो। चली खबरि राजा प्रति आई। भूत नास कर लए बुलाई ॥ ७ ॥ भूत हता इक मंत्र उचारैं। बीस मंत्र पड़ि बीर पुकारैं। किसहू पकरि चीरि करि देई। काहूँ पकरि रान तर लेई ॥ ८ ॥ जब सभ सकल मंत्र करि हारे। तब इह बिधि तन बीर पुकारे। जे गुर मोर इहाँ चलि आवै। राजकुअर तब ही सुख पावै ॥ ९ ॥ सुनत बचन राजा पग परे। बहु उसतति करि बचन उचरे। कहाँ तोर गुर मोहि बतैये। जिह तिह भाँति ताँहि ह्याँ ल्यैये ॥ १० ॥ जवन पुरख का नाम बतायो। नारि तिसी का भेस बनायो। न्रिपहि ठौर भाखत भयो जहाँ। बैठी जाइ चंचला तहाँ ॥ ११ ॥ बचन सुनत तह भूप सिधार्यो। तिही रूख तर पुरख निहार्यो। जिह तिह बिध ताँकौ बिरमायो। अपुने धाम ताहि लै आयो ॥ १२ ॥ राजकुअर ताकह दरसायो। बचन ताहि इह भाँति सुनायो। यौ इह त्रिय पतिब्रत्ता बरै। तऊ बचै यह यौन उबरै ॥ १३ ॥ करत करत बहु बचन बतायो। शाहु सुता को नामु जतायो। सो पतिब्रत्ता

और इस प्रकार राजकुमार को बहुत भयभीत किया। खबर राजा तक जा पहुँची और उसने भूतों को भगानेवाले बुला लिये ॥ ७ ॥ इधर से ओझा एक मंत्र पढ़ते थे तो वीर बीस मंत्र पढ़ देता था। वह किसी को पकड़कर चीर देता था और किसी को जाँघ के नीचे दबा लेता था ॥ ८ ॥ जब ये लोग सभी मंत्र आजमा कर हार गए तब वीर ने इस प्रकार पुकारा कि यदि मेरा गुरु यहाँ आ जाए तो राजकुमार को आराम मिल सकता है ॥ ९ ॥ बात सुनकर राजा चरणों में आ गिरा और उसकी स्तुति कर कहने लगा कि तुम्हारा गुरु कहाँ है, उसे हम जैसे-तैसे यहाँ ले आएँगे ॥ १० ॥ जिस पुरुष का उन्होंने नाम बताया उस स्त्री ने उसी का वेश धारण किया। राजा को जो जगह बताई गई थी वह स्त्री वहीं जा बैठी ॥ ११ ॥ बात सुनकर राजा चल पड़ा और उसी वृक्ष के नीचे उसने पुरुष को देखा। उसे जैसे-तैसे फुसलाया और उसे अपने घर ले आया ॥ १२ ॥ उसे राजकुमार दिखा दिया गया जिसे देखकर उस (स्त्री) ने यह कहा कि यदि यह पतिव्रता स्त्री का वरण करे तभी यह बच सकता है अन्यथा नहीं ॥ १३ ॥ करते-करते उसने बातों-बातों में धनिक की पुत्री का नाम सुझाया। यदि

ताहि बिबावहु । जौ त्रिय सुतहि जियायो चाहहु ।। १४ ।। जौ यह ताहि बयाहि लयावै । रैनि दिवस तासो लपटावै । अवर नारि के निकट न जाइ । तब यह जियें कुअरि सुभ काइ ।। १५ ।। यहै काज राजा तुम कीजै । अब ही हमहि बिदा करि दीजै । लै आग्या तिह आश्रम गई । धारत भेस नारि का भई ।। १६ ।। राज साज ब्याह कौ बनायो । शाह सुता (मू०ग्रं०१३५०) हित पूत पठायो । जब ही ब्याह तवन सौ भयो । तब ही ताहि भूत तजि गयो ।। १७ ।। राजकुअर इह छल सौ पायो । भेद अभेद न किसी बतायो । चंचलान के चरित अपारा । चक्रित रहा करि करि करतारा ।। १८ ।। १ ।।

।। इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ पचानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ।। ३९५ ।। ७०५१ ।। अफजूं ।।

अथ तीन सौ छिआनवों चरित्र कथनं ।।

।। चौपई ।। प्रिथी सिंघ इक भूप बखनियत । पिरथी पुर तिह नगर प्रमनियत । लालमती रानी तिह सोहै । सुर

राजकुमार को बचाना चाहते हो तो उस पतिव्रता से इसका विवाह करो ।। १४ ।। यदि यह उसे विवाह कर ले आए, रात-दिन उससे लिपटा रहे, अन्य स्त्री के पास भी न जाए तब यह कुँवर जीवित रह सकता है ।। १५ ।। हे राजन् ! तुम यही काम करो और अब मुझे विदा करो । आज्ञा लेकर वह अपने घर वापस चली गई और उसने स्त्री का वेश धारण कर लिया ।। १६ ।। राजा ने विवाह का उपक्रम किया और धनिक की पुत्री से विवाह के लिए पुत्र को भेज दिया । जैसे ही उसका विवाह हुआ वैसे ही भूत उसे छोड़ गया ।। १७ ।। उसने इस प्रकार प्रपंच से राजकुमार को प्राप्त किया और भेद-अभेद किसी को नहीं बताया । स्त्रियों के छल-पूर्ण चरित्र अपार हैं, जिससे परमात्मा भी चकित रहता है ।। १८ ।। १।।

।। श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ पंचानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ।। ३९५ ।। ७०५१ ।। अफजूं ।।

तीन सौ छियानबेवाँ चरित्र-कथन

।। चौपाई ।। पृथ्वीसिंह एक राजा कहा जाता था जिसका नगर पृथ्वीपुर था उसकी शोभायुक्त रानी लालमती सुर-नर-नाग स्त्रियों का

नर नारि भुजंगन मोहै ॥ १ ॥ सिंघ मेदनी सुत का नामा। थकित रहत जाकौ लखि बामा। अधिक रूप ताको बिधि करियो। जनु करि कामदेव अवतरियो ॥ २ ॥ चपला दे तह शाह दुलारी। कनक अवटि साँचे जनु ढारी। राजपुत्र जब ताहि निहारा। निरखि तरुनि ह्वै ग्यो मतवारा ॥ ३ ॥ एक सहचरी निकटि बुलाई। अमित दरब दै तहाँ पठाई। जब तैं चपलमती कौ ल्यैहैं। मुखि मँगिहै जो कछु सो पैहैं ॥ ४ ॥ बचन सुनत सहचरि तह गई। बहु बिधि ताहि प्रबोधत भई। शाह सुता जब हाथ न आई। तब दूती इह बात बनाई ॥ ५ ॥ तव पिति धाम जु नए उसारे। चलहु जाइ तिह लखौ सवारे। यौ कहि डारि डोरियहि लियो। परदन डारि चहूँ दिसि दियो ॥ ६ ॥ इह छल शाह सुता डहकाई। संग लए न्रिप सुत घर आई। तहीं आनि परदान उघारा। नारि लखा तह राजकुमारा ॥ ७ ॥ तात मात इह ठौर न भाई। इन दूती हौ आनि फसाई। राजकुअर जौ मुझै न पैहै। नाक कान कटि लीक लगैहै ॥ ८ ॥ हाइ हाइ करि

भी मन मोहित करती थी ॥ १ ॥ मेदनीसिंह नामक उसका पुत्र था जिसे देखकर स्त्रियाँ परेशान रहती थीं। विधाता ने उसे अत्यधिक रूप दिया था और ऐसा लगता था मानों वह कामदेव का अवतार हो ॥ २ ॥ वहाँ एक धनिक की पुत्री चपलादेवी थी जिसे मानों सोने के साँचे में गढ़ा गया था। राजकुमार ने जब उसे देखा तो उस तरुणी को निहारकर वह मतवाला हो गया ॥ ३ ॥ उसने एक दासी को पास बुलाया और उसे अपरिमित द्रव्य देकर वहाँ भेजा और कहा कि जब तुम चपलमती को ले आओगे तो मुँहमाँगा जो कुछ चाहोगे वह तुम्हें दिया जायगा ॥ ४ ॥ बात सुनकर दासी वहाँ गई और विभिन्न प्रकार से उसे फुसलाने लगी। परन्तु धनिक-पुत्री जब हाथ न लगी तो उसने एक अन्य घात लगाई ॥ ५ ॥ तुम्हारे पिता न जो नये महल बनवाए हैं, आओ और उसे भलीभाँति देखो। यह कहकर उसे पालकी में डाल लिया और चारों ओर पर्दे डाल दिए ॥ ६ ॥ इस प्रपंच से उसने धनिक-पुत्री को छल लिया और उसे साथ लेकर राजपुत्र के घर चली आई। वहीं आकर उसने पर्दा उठाया जहाँ उस स्त्री ने राजकुमार को देखा ॥ ७ ॥ उसने सोचा कि यहाँ तो मेरे माता-पिता आदि कोई नहीं हैं, मुझे तो इस दूती ने फँसा दिया है। अब यदि राजकुमार मुझे नहीं पा सकेगा तो नाक-कान काटकर मुझे कुरूप

गिरी धरनि पर। कटी कहा कर याहि बिछू बर। ध्रिग बिधि को मोसौ कस कीया। राज कुअर नहि भेटन दीया ॥ ९ ॥ अब मैं निजु घर कौ फिरि जैहौ। द्वै दिन कौ तुमरे फिरि ऐहौ। राजपुत्र लखि क्रिया न लई। इह छल मूँड मूँड तिह गई ॥ १० ॥ १ ॥ (मू०ग्रं०१३५१)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ छिआनवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३९६ ॥ ७०६१ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ सतानवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सगर देस सुनियत है जहाँ। सगरसैन राजा इक तहाँ। सगरदेइ तिह सुता भनिज्जै। चंद सूर लखि ताहि जु लज्जै ॥ १ ॥ गजनीराइ तवन जह लहियो। मन क्रम बचन कुअरि अस कहियो। ऐसो छैल एक दिन पैयै। जनम जनम पल पल बलि जैयै ॥ २ ॥ सखी एक तिह तीर पठाइ। जिह तिह बिधि करि लिया बुलाइ। अपन सेज पर तिह बैठारा। काम भोग का रचा अखारा ॥ ३ ॥

बना देगा ॥ ८ ॥ हाय हाय करके वह धरती पर ऐसे गिर पड़ी मानों उसे बिच्छू ने काट लिया हो। विधाता पर धिक्कार है कि उसने अभी तक मुझसे राजकुमार को मिलने नहीं दिया ॥ ९ ॥ आज मैं अभी अपने घर को वापस जाऊँगी और दो दिन बाद फिर तुम्हारे पास आऊँगी। राजकुमार इस कर्म को न जान सका और इस प्रपंच से वह उसे छलकर चली गई ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ छियानवेत्रें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३९६ ॥ ७०६१ ॥ अफजूं ॥

तीन सौ सत्तानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ जहाँ सगर देश सुना जाता है वहाँ सगरसेन नामक एक राजा था। उसकी पुत्री सगरदेवी थी जिसे देखकर चन्द्र-सूर्य भी लज्जित होते थे ॥ १ ॥ गजनीराय को जब उसने देखा तो मन-वचन एवं कर्म से उसने कहा कि यदि ऐसा छैल-छबीला एक दिन मिल जाए तो जन्म-जन्मांतरों तक पल-पल न्योछावर हुआ जाए ॥ २ ॥ एक सहेली को उसके पास भेजकर जैसे-तैसे उसे बुला लिया उसे अपनी शय्या पर

बैठ सेज पर दोइ कलोलहि। मधुर मधुर धुनि मुख ते बोलहि। भाँति भाँति तन करत बिलासा। तात मात को तजि कर त्रासा ॥ ४ ॥ पोसत भाँग अफीम मँगावहि। एक खाट पर बैठ चढ़ावहि। तरुन तरुनि उर सौ उरझाई। रसि रसि कसि कसि भोग कमाई ॥ ५ ॥ रानी सहित पिता ताकौ बर। आवत भयो दुहिता हूँ के घर। अवर घात तिह हाथ न आई। तात मात हनि दए दबाई ॥ ६ ॥ निजु आलै कह आगि लगाइ। रोइ उठी निजु पियहि दुराइ। अनल लगत दारू कह भई। रानी राव सहित उड गई ॥ ७ ॥ अवर पुरख कछु भेद न पायो। कहा चंचला काज कमायो। आपन राज देस का करा। बहुरि सुयंबर सौ तिह बरा ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ इति स्त्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ सतानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३९७ ॥ ७०६९ ॥ अफजूं ॥

बैठाया और मानों शय्या को कामभोग का अखाड़ा बना दिया ॥ ३ ॥ शय्या पर बैठकर दोनों किल्लोल कर मधुर-मधुर वाणी में मुख से बातचीत करने लगे। वे माता-पिता का भय त्याग कर विभिन्न प्रकार से विलास करने लगे ॥ ४ ॥ वे पोस्त, भाँग, अफ़ीम आदि मँगाते और एक ही पलंग पर बैठकर चढ़ाते थे। वह युवक और युवती एक-दूसरे के साथ संलग्न होकर रसिकतापूर्ण ढंग से दृढ़तापूर्वक रमण करने लगे ॥५॥ राजा रानी-समेत उस पुत्री के घर में आ गया। अब उसे अन्य कुछ न सूझा और उसने माता-पिता को मारकर वहीं दबा दिया ॥ ६ ॥ अब अपने घर को आग लगाकर वह अपने प्रिय को छिपाकर रो उठी। बारूद को आग लग गई जिससे रानी राजा-समेत उड़ गई ॥ ७ ॥ अन्य किसी व्यक्ति को कुछ पता न चला कि इस स्त्री ने क्या कर दिया है। स्वयं देश का राज करने लगी और फिर स्वयंवर में उसी (प्रेमी) का वरण किया ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ सत्तानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३९७ ॥ ७०६९॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ अठानवो चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ पलवल देस हुता इक राजा । जिह समान बिधि अवर न साजा । तड़िता दे तिह नारि भनिज्जै । चंद्र सूर जिह सम न कहिज्जै ॥ १ ॥ अलिक्रित दे तिह सुता बखनियत । अमित रूप वाके पहिचनियत । तिह ठाँ इक सौदागर आयो । जिह सम बिधि दूजो न बनायो ॥ २ ॥ राजकुअरि ताके लखि अंगा । मन क्रम बच रीझी सरबंगा । पठै सहचरी लिअसि बुलाइ । कहत भई बतिया मुसकाइ ॥ ३ ॥ अधिक भोग तिह साथ मचायो । भाँति भाँति रस केल कमायो । चुंबन और अलिगन लीनो । भाँति अनिक त्रिय को सुख दीनो ॥ ४ ॥ जब त्रिय चित तवनै हर लियो । तब अस चरित चंचला कियो । तात मात दोइ बोलि पठाए । इह बिधि तिन सौ बचन सुनाए ॥ ५ ॥ (मू०ग्रं०१३५२) मैं अब लगि महि तीरथ अन्हाई । अब तीरथ करिहौ तह जाई । जौ आइसु तुम ते मैं पाऊँ । तीरथ न्हाइ सकल फिरि आऊँ ॥ ६ ॥ पति कुरूप हम कह तुम दियो । तांते मैं

तीन सौ अट्ठानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ पलवल देश में एक राजा था जिसके समान विधाता ने अन्य किसी को नहीं बनाया था । तड़ितदेवी उसकी स्त्री थी जिसके समान चन्द्र-सूर्य भी नहीं थे ॥ १ ॥ अलिकृतदेवी नामक उनकी एक पुत्री थी जिसका रूप-सौंदर्य अपार था । वहाँ एक सौदागर आया जिसके समान विधाता ने अन्य किसी को नहीं बनाया था ॥ २ ॥ राजकुमारी उसके शरीर को देखकर मन-वचन एवं कर्म से उस पर रीझ गई । उसने सहचरी को भेजकर उसे बुला लिया और मुस्कुराकर उससे बातें करने लगी ॥ ३ ॥ उसने उसके साथ भोग की अत्यधिक धूम मचा दी और भाँति-भाँति प्रकार से रस-क्रीड़ा की । चुंबन और आलिगन लिये और अनेकों प्रकार से स्त्री को सुख दिया ॥ ४ ॥ जब स्त्री ने उसका दिल चुरा लिया तो उस स्त्री ने यह प्रपंच किया । उसने माता-पिता दोनों को बुला लिया और उनसे कह सुनाया ॥ ५ ॥ मैंने अभी तक तीर्थ-स्नान नहीं किया है, अब मैं तीर्थों पर जाकर स्नान करूँगी । यदि आपकी आज्ञा हो तो सारे तीर्थों पर नहाकर वापस आ जाऊं ६ आपने

उपाइ इमि कियो । जौ मुर पति सभ तीरथ अन्हैहै । सुंदर अधिक काइ ह्वै जैहै ॥ ७ ॥ लै आग्या पति सहित सिधाई। भाँत भाँत तीरथन अन्हाई । घात पइा करि नाथ सँघारा। ताकी ठौर मित्र बैठारा ॥ ८ ॥ अपने धाम बहुरि फिरि आई । मात पितहि इह भाँति जताई । मुर मति अति तीरथन अन्हयो । ताँ ते बपु सुंदर ह्वै गयो ॥ ९ ॥ भाँति भाँति हम तीरथ अन्हाए । अनिक बिधब तन बिप्र जिवाए । ताते दैव आपु बर दियो । मम पति को सुंदर बपु कियो ॥ १० ॥ यह काहू नर बात न पाई । कहा करम करिकै तिय आई । तीरथ महातम सभहूँ जान्यो । भेद अभेद न किनूं पछान्यो ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ अठानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ३९८ ॥ ७०७९ ॥ अफजूं ॥

मुझे कुरूप पति दिया है, इसी से मैंने यह उपाय किया है । यदि मेरा पति तीर्थों पर नहाएगा तो उसकी काया अधिक सुन्दर हो जाएगी ॥ ७ ॥ वह आज्ञा लेकर पति-समेत चल पड़ी और अनेक तीर्थों पर उसने स्नान किया । अवसर पाकर उसने पति को मार डाला और उसकी जगह उसने अपना मित्र बिठा दिया ॥ ८ ॥ फिर वह अपने घर आ गई और माता-पिता से उसने कहा कि मेरा पति अनेक तीर्थों पर नहाया है, इससे इसका शरीर सुन्दर हो गया है ॥ ९ ॥ अनेक प्रकार के तीर्थों पर हम नहाए हैं और अनेक विधवाओं तथा विप्रों को हमने भोजन खिलाया है। इसी से विधाता ने वरदान देकर मेरे पति का शरीर सुन्दर कर दिया है ॥ १० ॥ किसी भी व्यक्ति ने इस बात के भेद को नहीं समझा कि यह स्त्री कौन सा कर्म करके आई है । सभी ने इसे तीर्थ का प्रसाद समझा और भेद-अभेद को किसी ने भी नहीं जाना ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ अट्ठानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ३९८ ॥ ७०७९ ॥ अफजूं ॥

अथ तीन सौ निन्यानवों चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ घाटमपुर इक भूप भनिज्जै । नारि अलंक्रित देइ कहिज्जै । सुता सु भूखन दे घर ताके । नरी नागनी तुलि न वाके ॥ १ ॥ अति कुरूप तिह नाथ पछनियत । अति सुंदरि जिह नारि बखनियत । सुंदर अवर हुतो तह छत्री । रूपवान गुनवान धरत्री ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जब मुलतानी राइ कुअरि लखि पाइयो । निजु नाइक कह चित ते कुअर भुलाइयो । पठै सहचरी निजु ग्रहि लियो बुलाइकै । हो बचन कहे पुनि भांगि अफीम चढ़ाइकै ॥ ३ ॥ ॥ चौपई ॥ अब लपटहु मुहि आनि पयारे । हम रीझी लखि नैन तिहारे । नाहि नाहि तिन दुबिर बखानी । आखर कुअरि कही सो मानी ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ भाँति भाँति की कैफ दिवाने पी भए । भाँति भाँति अबला के आसन लेत भे । अमित भोग त्रिय पाइ रही उरझाइकै । हो निरखि सजन के नैनन गईं बिकाइकै ॥ ५ ॥ ॥ चौपई ॥ भाँति भाँति तासौ रति पाइ । आसन साथ गईं लपटाइ । रसि ग्यो मीत न छोरा

तीन सौ निन्यानबेवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ घाटमपुर में एक राजा था जिसकी स्त्री अलंकृत देवी थी । उसकी पुत्री भूषणदेवी थी, जिसके समान मनुष्य और नाग-स्त्री कोई भी नहीं थी ॥ १ ॥ पत्नी जितनी सुन्दर थी उसका पति उतना ही कुरूप था । वहाँ एक अन्य सुन्दर क्षत्रिय था जो रूपवान, गुणवान और धैर्यवान था ॥ २ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ जब उस कुँवरि ने मुलतानीराय (क्षत्रिय) को देखा तो अपने चित्त से अपने पति को विस्मृत कर दिया । उसने सहेली को भेजकर उसे अपने घर बुला लिया और भाँग, अफ़ीम चढ़ाकर उससे कहा ॥ ३ ॥ ॥ चौपाई ॥ हे प्रिय ! अब मुझसे आ लिपटो, मैं तुम्हारे नयन देखकर उन पर मोहित हूँ । दो बार उसने "नाँह-नाँह" कहा पर अन्त मे कुँवरि का कहना मान लिया ॥ ४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ विभिन्न प्रकार की मदिरा पीकर वे दीवाने हो गए और स्त्री के विभिन्न प्रकार के आसन लेने लगे । अपरिमित भोग पाकर स्त्री उलझकर रह गयी और साजन के नयनों को देखकर बिककर रह गई ॥ ५ ॥ ॥ चौपाई ॥ भाँति-भाँति प्रकार से उससे रतिदान प्राप्त कर आसनो के साथ वह उससे लिपट गई

जाई । बात भाखि तिह घात बनाई ।। ६ ।। (मू०ग्रं०१३५३)
साजन आजु तुझैं मै बरिहौ । निजु पति को निजु कर बध करिहौ । आपन साथ प्रगट तुहि लिऐहौ । मात पिता तुहि लखत हँढैहौ ।। ७ ।। निजु पति लै शिव भवन सिधाई । काटा मूँड तहाँ तिह जाई । लोगन कहि शिव नाम सुनायो । रूप हेतु पति सीस चढ़ायो ।। ८ ।। पुनि शिव अधिक क्रिपा कह कियो । सुंदर मोर पतिहि कर दियो । कौतक लखा कहा तिन करा । शिव प्रताप हम आजु बिचरा ।। ९ ।। देह म्रितक पति दई दबाई । ताको नाथ भाखि ग्रहि ल्याई । भेद अभेद न किनहूँ पायो । बिनु पानी ही मूँड मुँडायो ।। १० ।। १ ।।

।। इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे तीन सौ निन्यानवों चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ।। ३९९ ।। ७०८९ ।। अफजूं ।।

अथ चार सौ चरित्र कथनं ।।

।। चौपई ।। सूरजकिरनि इक भूप भनिज्जै । चंद किरनपुर नगर कहिज्जै । महाँ कुअरि तिह धाम दुलारी ।

वह मित्र में रम गई और वह अब छोड़े नहीं बनता था । अब उसने अवसर पाकर बात की ।। ६ ।। हे प्रिय ! आज मैं तुम्हारा वरण करूँगी और अपने पति का अपने हाथों से वध करूँगी । अब प्रकट में तुम्हें अपने साथ रखूँगी और माता-पिता के देखते-देखते तुम्हारा उपभोग करूँगी ।।७।। अपने पति को साथ लेकर वह शिवमंदिर में गई और वहाँ जाकर उसका सिर काट दिया । लोगों को शिव का नाम सुनाया और कहा कि रूप-सौंदर्य की प्राप्ति के लिए पति का शीश अर्पण किया ।। ८ ।। शिव ने फिर कृपा की है और मेरे पति को सुन्दर कर दिया है । जैसा उन्होंने कहा था वैसा कौतुक कर दिया और मैंने तो शिव के प्रताप को आज ही जाना है ।। ९ ।। पति के मृत शरीर को दबा दिया और प्रेमी को पति कहकर साथ ले आई । कोई भी भेद-अभेद न जान पाया और सभी बिना पानी के ही सिर मुँड़वा गए ।। १० ।। १ ।।

।। श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में तीन सौ निन्यानबेवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ।। ३९९ ।। ७०८९ ।। अफजूं ।।

चार सौवाँ चरित्र-कथन

चौपाई ।। सूरजकिरन नामक एक राजा था जिसका नगर

जिह समान बिधि कहूँ न सवारी ॥ १ ॥ तहिक शाह को पूत सुजाना । चंद्रसैन नामा बलवाना । महाँ कुअरि वाकी छबि लही । मन क्रम बचन थकित ह्वै रही ॥ २ ॥ पठै सहचरी लियो बुलाइ । पोसत भाँग अफीम मँगाइ । भाँति भाँति तन ताँहि पिवायो । अधिक मस्त करि गरे लगायो ॥ ३ ॥ मत्त किया मद साथ पयारो । कबहूँ करत न उर सौ न्यारो । भाँति भाँति उर सौ लपटावै । चूँबि कपोल दोऊ बलि जावै ॥ ४ ॥ रसि गयो मीत न छोरा जाइ । भाँति भाँति भोगत लपटाइ । चुंबन और अलिंगन लेई । अनिक भाँति तन आसन देई ॥ ५ ॥ रसि गई ताकौ तजा न जाइ । भाँति अनिक लपटत सुख पाइ । या संग कहा कवन बिधि जाऊँ । अब अस कवन उपाइ बनाऊँ ॥ ६ ॥ जानि बूझि इक दिज कह मारि । भूप भए इमि कहा सुधारि । अब मैं जाइ करवतहि लैहौ । पलटि देह सुरपुरहि सिधैहौ ॥ ७ ॥ हारि रहा पितु एक न मानी । रानीहूँ पाइन लपटानी । मंत्र

चन्द्रकिरनपुर था । उसकी दुलारी पुत्री महाकुंवरि थी, जिसके समान विधाता ने अन्य किसी को नहीं बनाया था ॥ १ ॥ वहाँ एक धनी का सुजान पुत्र था । उस बलवान का नाम चन्द्रसेन था । महाकुंवरि उसकी छवि देखकर मन-वचन-कर्म से व्याकुल हो उठी ॥ २ ॥ एक दासी भेजकर उसे बुलवाया और पोस्त, भाँग, अफ़ीम मँगाए और उसे विभिन्न प्रकार से मिलाकर अत्यधिक मदमस्त करके गले से लगा लिया ॥ ३ ॥ प्रिय को मदिरा से मस्त कर दिया और अब उसे कभी वह छाती से अलग न करती थी । भाँति-भाँति से वे सीने से लिपटते थे और दोनों कपोलों का चुंबन कर दोनों एक-दूसरे पर बलिहारी जाते थे ॥ ४ ॥ वह मित्र भी लीन था और उसे छोड़े नहीं बनता था और अनेकों प्रकार से लिपटकर सुख प्राप्त करते थे । दोनों परस्पर चुंबन तथा आलिंगन करते थे और भाँति-भाँति के आसन लेते थे ॥ ५ ॥ वह उसमें इतना लीन हो गयी कि छोड़ा नहीं जाता था । उससे वह अनेक प्रकार से लिपटकर सुख प्राप्त करती थी । उसने (महाकुंवरि ने) यह सोचा कि इसके साथ कैसे जाऊँ और इसके लिए कौन-सा उपाय करूँ ? ॥ ६ ॥ उसने जान-बूझकर एक ब्राह्मण को मारकर राजा से विनयपूर्वक कहा कि अब मैं करवत ले लूँगी अर्थात् काशी में आरे से कटकर शरीर बदलकर स्वर्गलोक चली जाऊँगी ७ पिता मना करता था परन्तु उसने एक नहीं मानी और

शकति करवति सिर धरा। एक रोम तिह ताहि न हरा ॥८॥ सभन लहा करवत इह लियो। द्रिशटि बंद ऐसा तिन कियो। आपन गई मित्र के धामा। भेद न लखा किसू किह बामा॥ ९ ॥ (मू०ग्रं०१३५४) ॥ दोहरा ॥ इह बिधि छलि पितु मात कह गई मित्र के संग। कबि स्याम पूरन भयो तब ही कथा प्रसंग॥ १० ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे चार सौ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ४०० ॥ ७०९९ ॥ अफजूं ॥

अथ चार सौ इक चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ पातिशाह कारूँ इक सुनियत। अमित तेज जाको जग गुनियत। जिह धन भरे चिहल भंडारा। आवत जिन का पार न वारा॥ १ ॥ तिह पुर शाह सुता इक सुनियत। जानुक चित्र पुत्रका गुनियत। निरख भूप का रूप लुभाई। एक सहचरी तहाँ पठाई॥ २ ॥ कुअरि बसंत तवनि का नामा। जिह समान भी और न बामा। सो कारूँ

रानी भी चरणों से लिपट गई। मंत्रशक्ति से ही उसने करवत (आरा) सिर पर धरा, परन्तु उसने उसका एक बाल भी बाँका नहीं किया॥ ८ ॥ उसने ऐसा दृष्टिबंध लगाया कि सबने देखा कि इसने करवत धारण किया है। स्वयं वह मित्र के घर चली गई और उस स्त्री का भेद किसी ने भी न देखा॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥ इस विधि से माता को छलकर वह मित्र के साथ चली गई और कवि श्याम के कथनानुसार यह प्रसंग भी पूर्ण हुआ॥ १० ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में चार सौवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति॥ ४०० ॥ ७०९९ ॥ अफजूं ॥

चार सौ एकवाँ चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ कारूं नामक एक बादशाह सुना जाता है, जिसका संसार में अपार तेज था। उसने धन के चालीस भंडार भरे थे जिनका कोई अन्त न था॥ १ ॥ उस नगर में एक धनिक की पुत्री रहती थी जो मानों चित्र के समान सुन्दर थी। वह राजा का रूप देखकर मोहित हो गयी और उसने एक सहेली को वहाँ भेजा। २ उस कुँवरि का नाम बसंत

की छबि लखि अटिकी। बिसरि गई सभही सुधि घटकी ॥३॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सखी सभूखन दे तह दई पठाइकै। मोरी कही सजन सौ कहियहु जाइकै। प्रणति हमारी मीत कहा सुनि लीजियै। हो जसि तव तिय ग्रहि एक दुतिय मुहि कीजियै ॥ ४ ॥ ॥ चौपई ॥ कुअरि कुअरि की बात बखानी। राजकुअरि करि एक न मानी। इमि सखि जाइ ताहि सुधि दई। कुअरि बसंत रिसाकुल भई ॥ ५ ॥ ततछिन सुरंग धाम निजु दई। त्रिप के सदन निकारत भई। चालिस गंज दरब के जेते। निजु आलै राखे लै तेते ॥ ६ ॥ मूढ़ भूप कछु बात न पाई। किह बिधि धन त्रिय लिया चुराई। छोरि भंडार बिलोकै कहा। पैसा एक न धन ग्रहि रहा ॥ ७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ अधिक दुखित ह्वै लोगन लिया बुलाइकै। भाँति भाँति तिन प्रति कह दुख बुलाइकै। ऐसा कवन कुकरम कहो हम तें भयो। हो जिह कारन ते ग्रहि चालिस का धन गयो ॥ ८ ॥ ॥ चौपई ॥ सभ लोगन इह भाँति बिचारी। प्रगट राव के साथ उचारी। दान पुंन्य तैं कछू न दयो। तिह तें ग्रहि को सभ धन गयो ॥ ९ ॥ सुनि

था जिसके समान अन्य कोई स्त्री न थी। वह कान्ह की सुन्दरता देखकर उसी में अटक गई और उसे अपने आपकी सारी होश भूल गई ॥ ३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सखी को गहने आदि देकर वहाँ भेजा और कहा कि सजन से मेरी व्यथा कह देना। हे मित्र ! हमारी विनती सुन लो और तुम्हारे घर में जैसे एक स्त्री है मुझे दूसरी को भी रख लो ॥ ४ ॥ ॥ चौपाई ॥ कुँवर से कुंवरि की बात कही परन्तु राजकुमार ने एक भी नहीं मानी। इस प्रकार सखी ने आकर बात बताई तो बसंत क्रोधित हो उठी ॥ ५ ॥ उसने उसी क्षण अपने घर से सुरंग बनाई और उसे राजा के घर में जा निकाला। द्रव्य के चालीस भंडार उसने चुराकर अपने घर में रख लिये ॥ ६ ॥ मूर्ख राजा कुछ न समझ सका कि स्त्री कैसे धन चुराकर ले गई। उसने भंडार खोलकर देखा तो घर में एक भी पैसा न बचा ॥ ७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ अधिक दुखी हो उसने लोगों को बुलाया और विभिन्न प्रकार से उनसे कहा कि मुझसे ऐसा कौन-सा कुकर्म हो गया है जिससे चालीस खजानों का मेरा धन चला गया है ॥ ८ ॥ ॥ चौपाई ॥ सब लोगों ने सोचा और राजा से कहा कि हे राजन् ! तुमने दान-पुण्य कुछ नहीं किया, इसीलिए यह सारा धन तुम्हारे घर से चला

जुहाकु पायो इह बिधि जब । धावत भलो अमित ले दल तब । छीनि लई ताकी सभ शाही । कुअरि बसंत नारि कर ब्याही ॥ १० ॥ ॥ दोहरा ॥ इह चरित्र तिन चंचला सकल दरब हरि लीन । इह बिधि कै कारूँ हना नाथ जुहाकहि कीन ॥ ११ ॥ ॥ चौपई ॥ लोग आजु लगि (मू०ग्रं०१३५५) बात न जानत । गढ़ागंज अजै लोग बखानत । ऐसे चरित चंचला करा । कारूँ मार जुहाकहि बरा ॥ १२ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे चार सौ इक चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ४०१ ॥ ७१११ ॥ अफजूं ॥

अथ चार सौ दोइ चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ चिंजी शहिर बसत है जहाँ । चिंगससैन नराधिप तहाँ । गैहरमती नारि तिह कहियत । जिह सम सुरपुर नारि न लहियत ॥ १ ॥ शहिर सुरेस्वावती बिराजै । जाकौ निरखि इंद्र पुर लाजै । बलबंड सिंघ शाह इक सुनियत ।

गया ॥ ९ ॥ यह सुनकर जुहाक बादशाह कुपति हो उठा और अपार सेना लेकर चल पड़ा । उसने उसका सब छीन लिया और कुंवरि बसत को पत्नी बना लिया ॥ १० ॥ ॥ दोहा ॥ इस छल से उस स्त्री ने ने सारा द्रव्य चुरा लिया । इस विधि से उसने कारूँ को मार डाला और जुहाक बादशाह को अपनी स्वामी बना लिया ॥ ११ ॥ ॥ चौपाई ॥ आज तक लोग बात नहीं समझ पाए और लोग उस स्थान पर खजाना अभी तक गड़ा हुआ कहते हैं । उस स्त्री ने ऐसा प्रपंच किया कि कारूँ को मारकर जुहाक बादशाह (बादशाह अज़दहाक एक बड़ा ज़ालिम बादशाह था जो फ़ारस के बादशाह जमशीद को मारकर उसके सिंहासन पर बैठा था) का वरण कर लिया ॥ १२ ॥ १ ॥

श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में चार सौ एकवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ४०१ ॥ ७१११ ॥ अफजूं ॥

चार सौ दूसरा चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ चिंजी शहर नामक स्थान पर चिंगससेन नामक एक राजा था । गैहरमती उसकी रानी थी जिसके समान देवपुरी में भी कोई स्त्री नहीं थी । १ । सुरेशावती एक शहर था जिसको देखकर इन्द्रपुरी

जिह समान जग और न गुनियत ॥ २ ॥ सदाकुअरि तिह सुता भनिज्जै । चंद्र सूर लखि जाहि अरुज्झै । अप्रमान दुति जात न कही । जानुक फूलि चँबेली रही ॥ ३ ॥ सदा कुअरि निरखा जब राजा । तब ही सील तवन का भाजा । सखी एक न्रिप तीर पठाई । यौ राजा तन कहु तैं जाई ॥४॥ मैं तव रूप निरखि उरझानी । मदन ताप ते भई दिवानी । एक बार तुम मुझै बुलावो । काम तपत करि केल मिटावो ॥ ५ ॥ जौ आपन ग्रहि मुहि न बुलावहु । एक बार मोरे ग्रहि आवहु । मो संग करियै मैन बिलासा । हम कह तोरि मिलन की आशा ॥६॥ भूप कुअरि वहु ग्रहि न बुलाई । आपु जाइ तिह सेज सुहाई । दीप दान तरुनी तिन कीना । अरघ धूप राजा कह दीना ॥ ७ ॥ सुभर सेज ऊपर बैठायो । भाँग अफ़ीम शराब मँगायो । प्रथम कहा न्रिप सौ इन पीजै । बहुरि मुझै मदनंकुस दीजै ॥८॥ सुनत बचन इह भूप न माना । जम के डंड त्रास तरसाना । कह्यो न मै तौसौ रति करिहो । घोर नरक मो भूलि न परिहौ ॥ ९ ॥ तिमि तिमि त्रिय अंचर

भी लज्जित होती थी । बलवंत सिंह एक धनी था जिसके समान जगत् में अन्य कोई नहीं था ॥ २ ॥ सदाकुँवरि उसकी एक पुत्री थी जिसे चन्द्र-सूर्य भी देखकर उलझन में पड़ जाते थे । उसकी छवि अप्रमाण थी मानों चमेली फूल उठी हो ॥ ३ ॥ सदाकुँवरि ने जब राजा को देखा तो उसका शील भाग खड़ा हुआ । उसने एक सखी राजा के पास भेजी कि तुम राजा के पास जाकर कहो ॥ ४ ॥ मैं तुम्हारा रूप देखकर उलझ गई हूँ और काम-अग्नि से पीड़ित हूँ । एक बार तुम मुझे बुलाओ और मेरी काम-अग्नि शान्त करो ॥ ५ ॥ यदि अपने घर मुझे नहीं बुलाते हो तो आप ही मेरे घर आ जाओ । मेरे साथ काम-क्रीड़ा करो । मुझे तुमसे मिलने की आशा बनी हुई है ॥ ६ ॥ राजा ने उस कुँवरि को घर न बुलाया तो वह स्वयं उसकी शय्या पर चली गई । तरुणी ने उसे दीपदान किया और राजा की अर्घ्य-धूपबत्ती से पूजा आदि की ॥ ७ ॥ उसे सुन्दर शय्या पर बैठाया और भाँग-अफ़ीम-शराब मँगाई । राजा से कहा कि पहले पियो और मुझे काम-अंकुश से प्रहारित करो ॥ ८ ॥ राजा यह सुनकर नहीं माना और यमदंड से भयभीत हो उठा । कहने लगा कि मैं तुम्हारे साथ रति-क्रीड़ा नहीं करूँगा और भूलकर भी घोर नर्क में नहीं जाऊंगा । ९ जैसे-जैसे राजा कहता था वैसे वैसे वह स्त्री गले

गरि डारै। जोरि जोरि द्रिग न्रिपहि निहारै। हाइ हाइ मुहि भूपति भजियै। काम क्रिया मोरे संग सजियै ॥ १० ॥ नहि नहि पुनि जिमि जिमि न्रिप करै। तिमि तिमि चरन चंचला परै। हहा न्रिपति मुहि करहु बिलासा। कामभोग की पुरवहु आसा ॥ ११ ॥ कहा करौ कहु कहाँ पधारौ। आप मरै कै मुझै सँघारौ। हाइ हाइ मुहि भोग न करई। ताँते जीअ हमारा जरई ॥१२॥ (मू०ग्रं०१३५६) ॥सवैया॥ आसन और अलिंगन चुंबन आजु भले तुमरे कलि लैहौ। रीझिहैं जौन उपाइ गुमानी तैं ताहि उपाइ सो तोहि रिझैहौ। पोसत भाँग अफीम शराब खवाइ तुमै तब आपु चड़ैहौ। कोट उपाव करौ क्यों न मीत पँ केल करे बिनु जान न दैहौ ॥ १३ ॥ केतियँ बात बनाइ कहौ किन केल करे बिनु मैं न टरौगी। आजु मिले तुमरे बिनु मैं तव रूप चितारि चितारि जरौगी। हार शिगार सभै घर बार सु एकहि बार बिसारि धरौगी। कै करि प्यार मिलो इक बार कि यार बिना उर फारि मरौगी ॥ १४ ॥ सुंदर केल करो हमरे संग मैं तुमरौ लखि

मे अंचल डालती थी और आँखें गड़ाकर राजा को देखती थी। हाय राजन् ! मेरे साथ रमण और कामक्रीड़ा करो ॥ १० ॥ राजा जैसे-जैसे "नहीं-नहीं" करता था वैसे-वैसे वह स्त्री उसके चरणों में गिर पड़ रही थी। हाय राजन् ! मेरे साथ विलास करो और मेरी कामोपभोग की आशा को पूर्ण करो ॥ ११ ॥ क्या करूँ और कहाँ चली जाऊँ, या तो मैं मर जाऊँ या तुम मुझे मार डालो। हाय-हाय तुम मुझसे रमण नहीं कर रहे इससे मेरा जीव जल रहा है ॥ १२ ॥ ॥ सवैया ॥ आज कसकर तुम्हारा आलिंगन और चुंबन लूंगी और तुम जिस उपाय से भी प्रसन्न होगे मैं वही उपाय करूँगी। पोस्त, भाँग, अफ़ीम, शराब आदि का सेवन तुम्हें करवाकर फिर स्वयं चढ़ाऊँगी। हे मित्र ! तुम करोड़ों उपाय क्यों न कर लो मैं तुम्हें आज केलिक्रीड़ा किए बिना जाने नहीं दूंगी ॥ १३ ॥ तुम कितनी ही बातें बनाकर बताओ पर केलिक्रीड़ा किए बिना मैं नही टलूंगी। आज तुम्हें मिले बिना मैं तुम्हारे रूप-सौंदर्य को याद कर-करके जलती रहूंगी। सभी हार-शृंगार, घर-बाहर सबकी सुधि भुला दूंगी। या तो प्यार से एक बार मिलो नहीं तो मैं यार के बिना छाती फाड़कर मर जाऊँगी ॥ १४ ॥ तुम मेरे साथ केलिक्रीड़ा करो, मैं तो तुम्हारा रूप देख

रूप बिकानी। ठाँव नहीं जहाँ जाउँ क्रिपानिधि आजु भई दुति देख दिवानी। हौ अटकी तव हेरि प्रभा तुम बाँधि रहै कसि मौन गुमानी। जानत घात न मानत बात सु जात बिहात दुहूँन की ज्वानी ॥ १५ ॥ जेतिक प्रीति की रीति की बात सु शाह सुता न्रिप तीर बखानी। चौक रहा चहूँ ओर चितै करि बाँधि रहा मुख मौन गुमानी। हाइ रही कहि पाइ रही गहि गाइ थकी गुन एक न जानी। बाँधि रहा जड़ मोनि महा ओहि कोटि कही इह एक न मानी ॥१६॥ ॥चौपई॥ जब भूपति इक बात न मानी। शाह सुता तब अधिक रिसानी। सखियन नैन सैन करि दई। राजा की बहिया गहि लई ॥१७॥ पकरि राव की पाग उतारी। पनही मूँड सात सै झारी। दुतिय पुरख कोई तिह न निहारौ। आनि राव कौ करै सवारौ ॥ १८ ॥ भूप लजत नहि हाइ बखानै। जिनि कोई नर मुझै पछानै। शाह सुता इत न्रिपति न छोरै। पनही वाहि मूँड पर तोरै ॥ १९ ॥ राव लखा त्रिय मुझै सँघारो। कोई न पहुचा सिवक हमारो। अब यह मुझै न जानै दैहै।

कर बिक चुकी हूँ। मुझे अन्य कोई स्थान नहीं है, हे कृपासागर! मैं जहाँ जाऊँ। मैं तुम्हारी छवि देखकर दीवानी हो गई हूँ। मैं तो तुम्हारे सौंदर्य मे अटकी हुई हूँ और तुम क्यों मौन साधे हुए हो। तुम न तो अवसर को पहचान रहे हो और न ही बात को मान रहे हो; दोनों की जवानी निष्फल जा रही है ॥१५॥ प्रीति की रीति की जितनी बातें थीं वे धनिक की पुत्री ने राजा के पास कीं। वह चौंककर चकित था और हाथ बाँधकर अभिमानी मुख से मौन था। वह हाय-हाय करती रही, उसके पाँव पकड़ती रही, गुण गा-गाकर थक गई पर उसने एक भी न जानी। वह मूर्ख तो मौन ही धारण किए रहा। उसने अनेकों बातें कहीं पर उस (राजा) ने एक भी न मानी ॥ १६ ॥ ॥ चौपाई ॥ राजा ने जब एक भी बात न मानी तो धनिक-पुत्री अत्यधिक क्रुद्ध हो उठी। सखियों को उसने इशारा कर दिया और राजा की भुजाएँ पकड़ लीं ॥ १७ ॥ पकड़कर राजा की पगड़ी उतार दी और सात जूते उसके सिर पर मारे। अन्य पुरुष कोई वहाँ दिखाई नहीं दे रहा था जो आकर राजा को सहारा देता ॥ १८ ॥ राजा लज्जावश हाय भी नहीं कह रहा था कि कहीं कोई व्यक्ति मुझे पहचान न ले। धनिक-पुत्री राजा को छोड़ नहीं रही थी और उसी के सिर पर जूता तोड़ रही थी ॥ १९ ॥ राजा ने देखा कि स्त्री मुझे मार डालेगी और मेरा

पनी हनत त्रित लोक पठैहै ॥ २० ॥ पनहीं जब सोरह सै परी। तब राजा की आँखि उघरी। इह अबला गहि मोहि सँघरिहै। कवन आनि ह्यां मुझै उबरिहै ॥ २१ ॥ पुनि राजा इह भाँति बखानो। मैं त्रिय तोर चरित्र न जानो। अब जूतिन सौ मुझै न मारो। जौ चाहौ तौ आनि बिहारो ॥ २२ ॥ शाह सुता जब यौ सुनि पाई। (मू०ग्रं०१३५७) नैन सैन दै सखी हटाई। आपु गई राजा पहि धाइ। काम भोग कीना लपटाइ ॥ २३ ॥ पोसत भाँग अफीम मिलाइ। आसन ता तर दियो बनाइ। चुंबन राइ अलिंगन लए। लिंग देत तिह भग मो भए ॥ २४ ॥ भग मो लिंग दियो राजा जब। रुचि उपजी तरनी के जिय तब। लपटि लपटि आसन तर गई। चुंबन करत भूपन के भई ॥ २५ ॥ गहि गहि तिह को गरे लगावा। आसन सौ आसनहि छुहावा। अधरन सौ दोऊ अधर लगाई। दुहूँ कुचन सौ कुचन मिलाई ॥ २६ ॥ इह बिधि भोग किया राजा तन। जिह बिधि रुचा चंचला के मन। बहुरौ राव बिदा करि दियो।

सेवक अभी तक कोई भी नहीं पहुँचा है। अब यह मुझे जाने नहीं देगी और मारे जूतों के मुझे मृत्युलोक पहुँचा देगी ॥ २० ॥ जब सोलह सौ जूते बरस चुके तो राजा की आँखें खुलीं। यह स्त्री यदि मुझे यहाँ मार ही डालेगी तो कौन आकर यहाँ मुझे बचाएगा ॥ २१ ॥ तब राजा ने कहा कि हे स्त्री! मैंने तुम्हारा प्रपंच नहीं समझा है। तुम अब जूतों से मुझे मत मारो और जैसा चाहो मेरे साथ आकर रमण करो ॥ २२ ॥ धनिक-पुत्री ने जब यह सुना तो आँख के इशारे से उसने सखियों को हटा दिया। आप दौड़कर राजा के पास गई और लिपटकर काम-भोग करने लगी ॥ २३ ॥ पोस्त, भाँग, अफ़ीम वग़ैर: मिलाकर उसने नीचे से बिभिन्न आसन बनाए। चुंबन-आलिंगनों का आदान-प्रदान किया और लिंग को योनि में प्रविष्ट किया ॥ २४ ॥ जब राजा ने लिंग को योनि में प्रविष्ट कराया तो तरुणी को अत्यन्त सुख प्राप्त हुआ। वह नीचे से ही लिपट-लिपटकर जाने लगी और राजा के चुंबन लेने लगी ॥ २५ ॥ पकड़-पकड़कर उसे गले से लगाया और अंग से अंग छुआ दिए। अधरों से अधर और कुचों से कुच मिला दिए ॥ २६ ॥ इस प्रकार जैसा स्त्री को अच्छा लगा राजा ने रति-क्रीड़ा की। फिर राजा को विदा कर दिया और उसने अन्य देश का रास्ता पकड़ा ॥ २७ ॥ रतिक्रीड़ा की और राजा को विदा कर

अनत देस को मारग लियो ॥ २७ ॥ रति करि राव बिदा करि दिया। ऐसा चरित चंचला किया। अवर पुरख सौ राव न भाखा। जो त्रिय किय सो जिय मो राखा ॥ २८ ॥
॥ दोहरा ॥ कितक दिनन न्रिप चंचला पुनि बहु लई बुलाइ। रानी करि राखी सदन सका न को छल पाइ ॥ २९ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे चार सौ दोइ चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ४०२ ॥ ७१४० ॥ अफजूं ॥

अथ चार सौ तीन चरित्र कथनं ॥

॥ चौपई ॥ सुन न्रिप और चरित्र बखानो। जिह बिधि किया चंचला जानो। अनदावती नगर इक सोहै। राइ सिंघ राजा तह को है ॥ १ ॥ शिवदेई तिह नारि बिचच्छन। रूपवान गुनवान सुलच्छन। राजा आपु चरित्र बनावत। लिखि लिखि पढ़ि इसत्रियन सुनावत ॥ २ ॥ शिवामती इह बिधि जब सुनी। अधिक बिहसि करि मूँडी धुनी। अस करि इसै चरित्र दिखाऊँ। याह भजो याही ते

दिया। इस प्रकार का प्रपंच उस स्त्री ने किया। राजा ने भी अन्य पुरुष से कुछ न कहा और स्त्री ने जो किया था उसे मन में ही रखा ॥ २८ ॥
॥ दोहा ॥ कितने ही दिनों बाद राजा ने उसी स्त्री को पुनः बुला लिया। उसे रानी बनाकर रखा और कोई भी इस छल को जान न सका ॥ २९ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में चार सौ दोवें चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ४०२ ॥ ७१४० ॥ अफजूं ॥

चार सौ तीसरा चरित्र-कथन

॥ चौपाई ॥ राजन् ! एक और प्रपंच सुनो जो किस प्रकार एक स्त्री ने किया। अनदावती नामक एक नगर है जहाँ का राजा राय सिंह है ॥ १ ॥ शिवदेवी वहाँ विलक्षण स्त्री थी जो रूपवान, गुणवान और सुलक्षणा थी। राजा स्वयं कहानियाँ बनाता था और लिख-लिखकर तथा पढ़कर स्त्रियों को सुनाता था ॥ २ ॥ शिवामती ने जब यह सुना तो उसने प्रसन्न होकर सिर हिलाया। अब ऐसा प्रपंच करूँगी कि इसके साथ रमण-क्रिया करूँगी और इसी से लिखाऊँगी ॥ ३ ॥ वह जैसे-तैसे राजा को फुसलाकर उसे

लिखाऊं ॥ ३ ॥ जिह तिह बिधि भूपहि फुसलाइ । मिलत भई दिन हीं कह आइ । आनि गरे ताके लपटाई । भाँति भाँति तन केल रचाई ॥ ४ ॥ भाँत भाँत जद्‌दप तिह भजा । तऊ न त्रिय आसन तिह भजा । भाँति भाँति उर सो उरझानो । निरखि भूप का रूप बिकानो ॥ ५ ॥ भोग कमाइ गई डेरै जब । सखियन साथ बखानो इम तब । इह राजै मुहि आजु बुलायो । दिन ही मो संग भोग कमायो ॥ ६ ॥ सासु ससुर जब ही सुन पाई । (मू०ग्रं०१३५८) और सुनत भी सगल लुगाई । आजु राज यासों रति मानो । बूझि गए सभ लोग कहानो ॥७॥ पुनि शिव दे इह भाँति उचारो । मैं देखत थी हियरा तिहारो । बात कहे मुहि ए क्या करिहैं । चुप करि है कि कोप करि लरिहैं ॥ ८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ दिन को ऐसो को त्रिय करम कमावई । दिखत जार को धाम नारि किमि जावई । ऐस काज करि कवन कहो किमि भाखिहैं । हो अपने चित की बात चित मो राखिहैं ॥ ९ ॥ ॥ चौपई ॥ बैन सुनत सभहिन सचु आयो । किनूं न तह इह कथहि चलायो । जो कोई ऐस करम को करिहैं । भूलि न काहू पास उचरिहैं ॥ १० ॥

दिन में ही आ मिली । आकर उसके गले से लिपट गई और विभिन्न प्रकार से उसके साथ केलिक्रीड़ा की ॥ ४ ॥ विभिन्न प्रकार से उसने उसके साथ रमण किया, फिर भी उस स्त्री ने शय्या का त्याग नहीं किया । वह तरह-तरह से उसको छाती से लिपटी रही और राजा का रूप देखकर उलझ गई ॥ ५ ॥ जब वह केलिक्रीड़ा करके घर गई तो उसने सखियों से कहा कि इस राजा ने आज मुझे बुलाया और दिन में ही मेरे साथ रतिक्रीड़ा की ॥ ६ ॥ सास-ससुर और अन्य स्त्रियों ने भी सुना कि आज राजा ने इसके साथ केलिक्रीड़ा की है । इस कहानी को सभी समझ गए ॥ ७ ॥ फिर शिवदेवी ने कहा कि मैं तो तुम लोगों का दिल देख रही थी कि बात करने पर ये लोग मुझे क्या कहते हैं । चुप रहते हैं अथवा क्रुद्ध होते हैं और मुझसे लड़ते हैं ॥ ८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ दिन में भला कौन स्त्री ऐसा कर्म कमाएगी । दिन दहाड़े भला यार के घर पर कैसे जाएगी । फिर ऐसा काम करके भला कोई कहेगा कैसे और क्या चित्त की बात चित्त में ही नहीं रखेगा ॥ ९ ॥ ॥ चौपाई ॥ बातें सुनकर सबने सच मान लिया । तब किसी ने बात आगे नहीं चलाई । सबने सोचा कि जो कोई ऐसा कर्म करता है वह भूलकर भी किसी से बात नहीं करता ॥ १० ॥ लोगों को इस प्रकार भ्रम में डालकर

लोगन कह इह बिधि डहकाइ । पिय तन पत्री लिखी बनाइ । मो पर यार अनुग्रह कीजे । इह भी चरित्र ग्रंथ लिखि लीजे ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे चार सौ तीन चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ४०३ ॥ ७१५१ ॥ अफजूँ ॥

अथ चार सौ चार चरित्र कथनं ॥

॥ सबुधि बाच ॥ ॥ चौपई ॥ सत्तिसंधि इक भूप भनिज्जै । प्रथमे सतिजुग बीच कहिज्जै । जिह जस पुरी चौदहूँ छायो । नारद रिखि तब राइ मँगायो ॥ १ ॥ सभ देवन को राजा भयो । ब्रहमा तिलक आपु तिह दयो । निहकंटक सुर कटक किया सब । दानव मार निकार दए जब ॥ २ ॥ इह बिधि राज बरख बहु किया । दीरघ दाढ़ दैंत भव लिया । दस सहस छूहनि दल लैके । चढ़ि आयो तिह ऊपर तैके ॥ ३ ॥ सभ देवन ऐसे सुनि पायो । दीरघ दाढ़ दैंत चढ़ि आयो । बीस सहस छोहनि दल लियो । वा सौ जाइ समागम कियो ॥ ४ ॥

उसनें प्रिय को पत्र लिखा कि हे प्रिय ! मुझ पर कृपा करो और अपने ग्रंथ में यह चरित्र भी दर्ज कर लो ॥ ११ ॥ १ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मंत्री-भूप-संवाद में चार सौ तीसरे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ४०३ ॥ ७१५१ ॥ अफजूँ ॥

चार सौ चौथा चरित्र-कथन

॥ सुबुद्धि उवाच ॥ ॥ चौपाई ॥ सत्यसंधि नामक एक राजा सतयुग में कहा जाता था। उसका यश चौदह लोकों में छाया हुआ था। उसनें नारद ऋषि को भी अपनें पास बुलाया था ॥ १ ॥ वह सभी देवताओं का राजा बन गया था और ब्रह्मा ने स्वयं उसे तिलक प्रदान किया था। उसने देवताओं को निर्भय बना दिया और सभी दानवों को मार निकाला ॥ २ ॥ इस प्रकार उसने बहुत वर्षों तक राज्य किया। (बहुत समय) बाद) दीर्घदाढ़ नामक दैत्य पैदा हुआ जो दस सहस्र अक्षौहिणी सेना लेकर इस पर आ चढ़ा ॥ ३ ॥ सब देवताओं ने सुना कि दीर्घदाढ़ दैत्य चढ़ आया है तो इन्होंने भी बीस सहस्र अक्षौहिणी सेना लेकर, उससे आकर मुक़ाबला किया ॥ ४ ॥ सूर्य को सेनापति बनाया और दाहिनी ओर चन्द्र को रख

सूरज कह सैनापति कीना । दहिने ओर चंद्र कह दीना । बाईं ओर कारतिके धरा । जिह पौरख किनहूँ नहि हरा ।। ५ ।। इह दिस सकल देव चढ़ि धाए । उहि दिसि तें दानव मिलि आए । बाजन भाँति भाँति तन बाजे । दोऊ दिसिन सूरमा गाजे ।। ६ ।। दै दै ढोल बजाइ नगारे । पी पी भए कैफ़ मतवारे । तीस सहस छोहनि दल राखा । रन दारुनु राचा जगनाथा ।। ७ ।। भाँति भाँति मारू जब बाजो । दीरघ दाढ़ दैंत रन गाजो । तीछन बान दोऊ दिसि बहही । जाहि लगत तिह माँझ (सू०ग्रं०१३५६) न रहही ।। ८ ।। धावत भए देवता जबही । दानव भरे रोस तन तबही । भाँति भाँति बादित्र बजाइ । खत्री उठे खिग खुनसाइ ।। ९ ।। चले बान दुहूँ ओर अपारा । बिछुआ बरछी बज्र हजारा । गदा गरिसट जवन पर झरही । स्यंदन सहित चूरन तिह करही ।। १० ।। जाके लगे अंग मै बाना । करा बीर तिह स्वरग पयाना । मच्यो बीर खेत बिकराला । नाचत भूत प्रेत बेताला ।। ११ ।। झूमि झूमि कही गिरे धरनि भट । जुदे जुदे कही अंग परे कटि । चली स्रोन की नदी बिराजै । बैतरनी जिन को लखि

लिया । बायीं ओर कार्तिकेय को रखा जिसके पौरुष का कोई भी नाश नहीं कर पाया है ।। ५ ।। इस दिशा से सभी देवगण चढ़ आए और उधर से दानव मिलकर आ पहुँचे । विभिन्न प्रकार के बाजे बजे और दोनों दिशाओं से शूरवीर गरजने लगे ।। ६ ।। ढोल नगाड़े बजाए गए और वीर मदिरा पी-पीकर मतवाले हो उठे । तीस सहस्र अक्षौहिणी दल ने, हे भगवान, भीषण युद्ध मचा दिया ।। ७ ।। विभिन्न प्रकार के जब मारू वाद्य बजने लगे तो दीर्घदाढ़ दैत्य युद्ध में आ गरजा । तीखे बाण दोनों ओर से चलने लगे और वे जिसे लगते थे उसके अंदर फँसे नहीं रहते थे ।। ८ ।। जब देवता बढ़े तो दानव भी क्रोध से भर उठे । विभिन्न प्रकार के बाजे बजाकर क्षत्रिय खड़गों को बजाकर चल पड़े ।। ९ ।। दोनों ओर से बाण, बिछुआ, बरछी और अनेकों वज्र चलने लगे । भारी गदाएँ जिस पर पड़ती थीं वे रथ-समेत चूर-चूर कर दिए जाते थे ।। १० ।। जिसके अंग में बाण लगता था वही वीर स्वर्ग प्रस्थान कर जाता था । वीरों का भीषण युद्ध मच गया और भूत-प्रेत-वेताल नाचने लगे ।। ११ ।। कहीं झूम-झूमकर वीर धरती पर गिरे थे और कहीं अलग-अलग कटे पड़े हुए अंग गिरे थे । रक्त की बहती नदियों को देखकर वैतरणी भी

लाजै ॥ १२ ॥ इह दिसि अधिक देवता कोपे । उहि दिसि पाव दानवन रोपे । कुपि कुपि अधिक ह्रिदन मो भिरे । जूझि जूझि गे बहुरि न फिरे ॥ १३ ॥ कोटिक कटक तहाँ कटि मरे । जझे गिरे अरंगनिन बरे । दोऊ दिसि मरे काल के प्रेरे । गिरे भूमि रन फिरे न फेरे ॥ १४ ॥ सत्तिसंधि देविस इत धायो । दीरघ दाढ़ उह और रिसायो । बज्र बाण बिछुआ के के ब्रण । जूझि जूझि भट गिरत भए रण ॥ १५ ॥ जोगिनि जच्छ कहूँ हरखए । भूत प्रेत नाचत कहूँ भए । कह कह कह कलि शाह सुनावत । भीखन सुनै शबद भै आवत ॥ १६ ॥ फिरैं दैत कहूँ दाँत निकारे । बमत स्रोन केते रन मारे । कहूँ शिवा सामुहि फिकराही । भूत पिसाच मास कहूँ खाही ॥ १७ ॥ सकटाब्यूह रचा सुरपति तब । क्रौंचाब्यूह कियो असुरिस जब । मचियो तुमल जुद्ध तह भारी । गरजत भए बीर बलधारी ॥ १८ ॥ जूझि गए जोधा कहीं भारे । देव गिरे दानव कहीं मारे । बीच खेत ऐसा तह परा । दोऊ दिसि इक सुभट न उबरा ॥ १९ ॥ जौ क्रम क्रम करि कथा सुनाऊँ । ग्रंथ बढन ते अधिक डराऊँ । तीस सहस

लज्जित होती थी ॥ १२ ॥ इधर देवता अत्यधिक कुपित हुए और उधर दानवों ने भी पाँव जमा लिये । वे हृदय में क्रोधःसे भरे हुए जूझ गए और फिर वापस नहीं पलटे ॥ १३ ॥ अनेकों वीर वहाँ कट मरे; वे जूझ गए और अप्सराओं ने उनका वरण कर लिया । दोनों ओर काल से प्रेरित वीर मर गए थे और भूमि पर गिर पड़े थे पर वापस नहीं घूमे ॥ १४ ॥ इधर से देवराज सत्यसंधि चला और उधर दीर्घदाढ़ क्रुद्ध हो उठा । वज्र, बाण और बिछुआ के घावों से पीड़ित वीर जूझ-जूझकर युद्धस्थल में गिर रहे थे ॥ १५ ॥ कहीं योगिनियाँ और यक्ष प्रसन्न थे और कहीं भूत-प्रेत नृत्य कर रहे थे । काल के क़हक़हों को सुनकर सबको भय लगता था ॥ १६ ॥ कहीं दैत्य दाँत निकाले घूम रहे थे और कहीं मारे हुए वीर रक्त वमन कर रहे थे । कहीं चंडिका सामने ही फुंकार रही थी और कहीं भूत-प्रेत मांस खा रहे थे ॥ १७ ॥ देवराज ने तब शकटव्यूह की रचना की जब दानवों ने क्रौंचव्यूह बना लिया । भारी तुमुल युद्ध मच गया और बलशाली वीर गरजने लगे ॥ १८ ॥ कहीं भारी-भारी योद्धा जूझ गए । कहीं देव और कहीं दानव मारे हुए गिरे पड़े थे । युद्ध में इतने वीर पड़े थे कि दोनों दिशाओं से एक भी योद्धा न बचा ॥ १९ ॥ यदि क्रमानुसार सुनाऊँ तो ग्रंथ के बढ़ जाने से डरता हूँ । जहाँ तीस हज़ार अक्षौहिणी योद्धा

छूहनि जहं जोधा। मंड्यो बीर खेत करि क्रोधा ॥ २० ॥ पतीअन सो पतीअन भिरि मरे। स्वारन के स्वारन छै करे। रथियन तह रथियन को घायो। हाथिन दंती स्वरग पठायो ॥ २१ ॥ दलपति सो दलपति लरि मूआ। इह बिधि नास कटक का हूआ। बचे भूप ते कोप बढाई। मांडत भे हठ ठानि लराई ॥ २२ ॥ रन मांडत भे बिबिध प्रकारा। दैतराट अरु देव त्रिपारा। रसना इती (मू०ग्रं०१३६०) न भाख सुनाऊँ। ग्रंथ बढन ते अति डरपाऊँ ॥ २३ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ कहा लौ बखानौ महा लोह मच्यो। दुहूँ ओर ते बीर एकै न बच्यो। तबै आनि जूटे दोऊ छत्र धारी। परा लोह गाढ़ो कपी भूमि सारी ॥ २४ ॥ जुटे राव दोऊ उठी धूरि ऐसी। प्रलै काल की अगनि को धूम्र जैसी। न हाथै पसारा तहा द्रिशटि आवै। कछू भूमि आकाश हेरो न जावै ॥ २५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तीस सहस छूहनि दल जब जूझत भयो। दुहूँ न्रिपन के कोप अधिक तबही भयो। पीसि पीसि रदनंछद बिसिख प्रहारही। हो लो जीय भीतर कोप सु प्रगट दिखारही ॥ २६ ॥ ॥ चौपई ॥ बीस बरस निसु दिन रन करा। दुहूँ न्रिपन ते एक न टरा। अंतकाल तिन दुहूँ खपायो।

थे वहाँ सब वीरों ने क्रुद्ध हो युद्ध किया ॥ २० ॥ सेनापति सेनापतियों से भिड़ मरे और सवारों को सवारों ने मार डाला। रथियों ने रथियों का सहार किया और हाथियों ने हाथियों को स्वर्ग भेज दिया ॥ २१ ॥ दलपति से दलपति लड़ मरे और इस प्रकार सेना का नाश हुआ। अब जो राजा बचे थे वे क्रुद्ध हो युद्ध करने लगे ॥ २२ ॥ दैत्यसम्राट् और देवराज अब विविध प्रकार से युद्ध करने लगे। मेरी जिह्वा कहने में असमर्थ है और मै ग्रंथ के वढ जाने से भी डरता हूँ ॥ २३ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ कहाँ तक वर्णन करूँ, भीषण युद्ध हुआ और दोनों ओर से एक भी वीर न बचा। तभी दोनों छत्रधारी आ भिड़े और भीषण युद्ध से सारी भूमि काँप उठी ॥ २४ ॥ दोनों राजा भिड़े और इतनी धूल उड़ी कि मानों प्रलयकाल की अग्नि का धुआँ हो। वहाँ पसारा हुआ हाथ भी नजर नहीं आता था और धरती-आकाश का भी भान नहीं होता था ॥ २५ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ तीस सहस्र अक्षौहिणी दल जब जूझ गया तो दोनों राजाओं का मन क्रुद्ध हो उठा। वे दाँत पीस-पीसकर बाणों से प्रहार कर रहे थे और मन के क्रोध को प्रकट दिखा रहे थे ॥ २६ ॥ ॥चौपाई॥ बीस वर्ष तक रात-दिन युद्ध किया परन्तु दोनों राजाओं

उहि को इह इह को उहि घाया ॥ २७ ॥ ॥ भुजंग छंद ॥ जबै छूहनी तीस साहस्र मारे। दोऊ रावई राव जूझे करारे। मच्यो लोह गाढो उठी अगनि ज्वाला। भई तेज तौने हुते एक बाला ॥ २८ ॥ तिसी कोप की अगनि तें बाल ह्वैकै। हसी हाथ मै शस्त्र औ अस्त्र लैकै। महा रूप आनूप ताको बिराजै। लखे तेज ताको ससी सूर लाजै ॥ २९ ॥ ॥ चौपई ॥ चारहु दिसा फिरी जब बाला। जानो नाग रूप की माला। ऐस न कतहूँ पुरख निहारा। नाथ करै जिह आपु सुधारा ॥ ३० ॥ फिर जिय मै इह भाँति बिचारी। बरौ जगत के पतिहि सुधारी। ताते करौ दीन ह्वै सेवा। होइ प्रसंन कालिका देवा ॥ ३१ ॥ अधिक सुचित ह्वै किए सुमंता। भाँति भाँति तन लिखि लिखि जंता। क्रिपा करी जगमात भवानी। इह बिध बतिया ताँहि बखानी ॥ ३२ ॥ करि जिनि शोक ह्रिदै तै पुत्री। निरंकार बरिहै तुहि अत्री। ताका ध्यान आजु निसि धरियहु। कहिहै जु कछू सोई तुम करियहु ॥ ३३ ॥ जब अस बर तिह दियो भवानी। प्रफुलित भई जगत की रानी। अति पवित्र निसि ह्वै छित सोई। जिह ठाँ और न

में से एक भी न टला। अन्त में काल ने दोनों को मार डाला। उसने इसको और इसने उसको मार डाला ॥ २७ ॥ ॥ भुजंग छंद ॥ जब तीस सहस्र अक्षौहिणी सेना मारी गई तो दोनों राजा आपस में बुरी तरह भिड़ गए। भीषण युद्ध मच गया और अग्नि की ज्वालाएँ उठने लगीं और उन्हीं ज्वालाओं में से एक स्त्री पैदा हुई ॥ २८ ॥ उसी क्रोधाग्नि से उत्पन्न हो, स्त्री हाथ में अस्त्र-शस्त्र ले हँसने लगी। उसका रूप-सौंदर्य अनुपम था जिसे देखकर चन्द्र और सूर्य भी लज्जित होते थे ॥ २९ ॥ ॥ चौपाई ॥ वह स्त्री जब चारों दिशाओं में घूमने लगी तो ऐसी लग रही थी मानों नागों की माला हो। ऐसे कोई पुरुष नहीं दिखाई दे रहा था जिसे वह अपना स्वामी बना ले ॥ ३० ॥ फिर उसने मन में विचार किया कि मैं जगत्पति का ही वरण करूँगी। इससे मै दीनतापूर्वक सेवा करूँ जिससे कालदेव प्रसन्न हो जाय ॥ ३१ ॥ उसने अधिक चैतन्य हो विचार किया और भाँति-भाँति के यन्त्र लिखे। उस पर जगत्माता भवानी ने कृपा की और उससे कहा ॥ ३२ ॥ कि हे पुत्री! तुम मन में शोक मत करो निराकार प्रभु तुम्हारा वरण अवश्य करेंगे। तुम उसका ध्यान धरो और जो वह कहे वही तुम करना ॥ ३३ ॥ जब भवानी ने उसे ऐसा वरदान दिया तो वह जगत् की रानी प्रफुल्लित हो उठी। वह

दूसर कोई ।। ३४ ।। अरध रात्रि बीतत भी जबही । आग्या भई नाथ की तबही । स्वास बीरज दानव जब मरिहैं । तिह पाछे सुंदरि मुहि ब्रिहैं ।। ३५ ।। इह बिधि तिह आग्या जब भई । दिनमनि चड़्यो रैनि मिटि गई । साजे शस्त्र चंचला तब ही । रन कौ चली साथ (मू०ग्रं०१३११) लै सबहीं ।।३६।। ।।दोहरा।। जहाँ शत्र को पुर हुतो तित कह किया पयान । बिकट असुर को बेढ़ि गढ़ दह दिस दियो निशान ।।३७।। ।। चौपई ।। दुंदभि सुना स्रवन महि जबहीं । जागा असुर कोप करि तबहीं । ऐसा कवन जु हम पर आयो । रकतबिंद मै रनहि हरायो ।। ३८ ।। इंद्र चंद्र सूरज हम जीता । रावन जिता हरी जिन सीता । एक दिवस मोसौ शिव लरा । ताहि भजायो मैं नहि टरा ।। ३९ ।। शस्त्र साज दानव रन आवा । अमित कोप करि संख बजावा । काँपी भूच गगन घहराना । अतुल बीरज किह ओर रिसाना ।। ४० ।। इति दिसि दूलहदेइ कुमारी । शस्त्र साजि रथि करी सवारी । शस्त्रन करि प्रनाम तिह काला । छाडत भी रन बिसिख कराला ।। ४१ ।। लगे

अत्यंत पवित्र होकर धरती पर सो गई और उस स्थान पर अन्य कोई नहीं था ।। ३४ ।। जब आधी रात बीत गई तभी स्वामी की आज्ञा हुई । श्वासवीर्य दानव जब मारा जायगा, उसके बाद हे सुन्दरी ! तुम मेरा वरण करोगी ।। ३५ ।। उसे जब इस प्रकार की आज्ञा हुई तो दिन चढ़ गया और रात बीत गई थी । उस स्त्री ने तभी शस्त्र सजाए और सबको साथ ले युद्ध के लिए चल पड़ी ।। ३६ ।। ।। दोहा ।। जहाँ शत्रु का नगर था उसने उस ओर प्रस्थान किया और उस विकट असुर के क़िले को घेरकर चारों तरफ़ नगाड़े बजवा दिए ।। ३७ ।। ।। चौपाई ।। जब दुंदुभियों की आवाज सुनी तो वह असुर क्रुद्ध हो जाग पड़ा । ऐसा कौन है जो मुझ पर आ चढ़ा है, मैंने तो रक्तबीज को भी युद्ध में हरा दिया था ।। ३८ ।। इन्द्र, चन्द्र, सूर्य को मैंने हराया और रावण, जिसने सीता का हरण किया था, को भी मैंने जीत लिया था । मुझसे एक दिन शिव भिड़ गया था और मैंने बिना हिले उसे भी भगा दिया ।। ३९ ।। वह दानव शस्त्रों से सुसज्जित होकर युद्ध में आ गया और अपरिमित रूप से क्रुद्ध हो उसने शंख फूँका । धरती काँप उठी और आकाश हड़बड़ा गया कि अतुलवीर्य किस पर क्रुद्ध हो उठा है ।। ४० ।। इधर दुलहदेवी कुमारी ने भी शस्त्र सजाकर रथ पर सवारी की । वह शस्त्रों को प्रणाम कर युद्ध में विकराल बाण छोड़ने लगी ।। ४१ ।। जब अंगों में करारे बाण लगे तब

बिसिख जब अंग करारे। दानव भरे कोप तब भारे। मुख ते स्वास त्रसित ह्वै काढे। तिन ते अमित असुर रन बाढे ॥ ४२ ॥ तिनका बाल बहुरि बध करा। उन का स्रोन प्रिथी पर परा। अगनित बढे तबै तह दानव। भच्छत भए पकरि करि मानव ॥ ४३ ॥ जब अबला के सुभट चबाए। दूलह दे तिह बिसिख लगाए। बुंदका परत स्रोन भुअ भए। उपजि असुर सामुहि उठि धए ॥ ४४ ॥ पुनि अबला तिन बिसिख प्रहारे। चले स्रोन के तहाँ पनारे। असुर अनंत तहाँ ते जागे। जूझत भए पैग नहि भागे ॥ ४५ ॥ ॥ भुजंग छंद ॥ जबै ओर चारौ उठे दैत बानी। कए कोप गाड़ो लए धूलि धानी। किते मूँड मुंडे किते अरध मुंडे। किते केस धारी सिपाही प्रचंडे ॥ ४६ ॥ जिते दैत उठे तिते बाल मारे। वुठे आनि बानानि बाँके डरारे। जिते स्वास छोरैं उठै दैत भारे। हठी मार ही मारि कै कै पधारे ॥ ४७ ॥ किते कोप कै बीर बाला सँघारे। जिते दैत ढूके महाँ बाहु भारे। तिन्यों का गिरा आनि कै स्रोन भूपै। उठे नेक जोधा महाँ भीम रूपै ॥ ४८ ॥

दैत्य क्रोध से भर उठे। वे थककर मुख से श्वास निकालते थे तो उससे अनेकों असुर बढ़ जाते थे ॥ ४२ ॥ स्त्री ने उनका वध किया और उनका रक्त पृथ्वी पर गिरा। फिर अनेकों दानव पैदा हो गए जो पकड़-पकड़कर मानवों का भक्षण करने लगे ॥ ४३ ॥ जब इस स्त्री के वीर चबा डाले गए तो इसने भी बाण चलाए। परन्तु रक्त की बूँदें धरती पर पड़ते ही असुर फिर पैदा हो उठकर सामने की ओर चल देते थे ॥ ४४ ॥ स्त्री ने पुनः बाणों से प्रहार किया और वह रक्त की धाराएँ बह निकलीं। अब पुनः अनन्त असुर उठ खड़े हुए जो जूझ रहे थे और क़दम भी पीछे नहीं हटा रहे थे ॥ ४५ ॥ ॥ भुजंग छंद ॥ जब चारों ओर से दैत्यों की आवाज़ें सुनाई दे रही थीं तो साथ ही वे क्रुद्ध भी हो रहे थे और धूल उड़ रही थी। कई सिर काट डाले गए और कई धड़ ही धड़ दिखाई दे रहे थे। कहीं केशधारी प्रचंड सिपाही दिखाई दे रहे थे ॥ ४६ ॥ जितने भी दैत्य उठे वे उस स्त्री ने मार डाले और भागकर आते हुओं को बाणों से भयभीत किया। वे जितने भी श्वास छोड़ते थे उतने ही भारी दैत्य उठ पड़ते थे और 'मार-मार' पुकारते हुए हठपूर्वक टूट पड़ते थे ॥ ४७ ॥ वीर बालिका ने क्रुद्ध हो दैत्यों को मारा। जितने भी भारी दैत्य वहाँ एकत्र हुए थे उन सबका खून धरती पर गिर पड़ा था। उनमें से अनेकों भीमकाय योद्धा उठ खड़े हुए ॥ ४८ ॥

॥ चौपई ॥ तिनको भूमि जु मेजा परहीं । तिन तें अमित दैत बपु धरहीं । स्रोन गिरैं तिनको धर माहीं । रथी गजी बाजी ह्वै जाही ॥ ४९ ॥ प्रान तजत स्वासा अरि तजें । तिन ते अमित असुर ह्वै भजैं । कितक असुर डारत भूअ लारैं । तिन ते अनिक दैत तन (मू०ग्रं०१३६२) धारें ॥ ५० ॥ तिन तें तजत असुर जे स्वासा । तिन तें दानव होहि प्रकाशा । कितक मरत कै तरुनि सँघारे । दसौ दिसिन महि असुर निहारे ॥ ५१ ॥ चित मों किया कालका ध्याना । दरशन दिया आनि भगवाना । करि प्रनाम चरनन उठि परी । बिनती भाँति अनिक तन करी ॥ ५२ ॥ सत्ति काल मैं दास तिहारी । अपनी जानि करो प्रतिपारी । गुन अवगुन मुर कछु न निहारहु । बाहि गहे की लाज बिचारहु ॥ ५३ ॥ हम हैं शरनि तोर महाँराजा । तुम कह बाहि गहे की लाजा । जौ तव भगत नैक दुख पैहै । दीन द्याल प्रभु बिरदु लजैहै ॥ ५४ ॥ औ कह लगि मैं करौ पुकारा । तैं घट घट की जाननिहारा । कही एक करि सहस पछिनयहु । आपु आपने बिरदहि

॥ चौपाई ॥ भूमि पर उनकी मेधा गिरी और उससे अनेकों दैत्यो ने शरीर धारण कर लिया । उनका रक्त धरती पर गिरता था और वे रथी, गजी, अश्वारोहियों के रूप में आ जाते थे ॥ ४९ ॥ शत्रु श्वास त्याग कर प्राण छोड़ते थे और उनसे अनेकों असुर पैदा होकर भागे चले आते थे। कितने ही असुर लड़ते हुए भूमि पर गिरा दिए जाते थे और उनसे अनेकों दैत्य शरीर धारण कर लेते थे ॥ ५० ॥ पुनः जो असुर प्राण त्यागते थे उनसे दानव पैदा हो जाते थे । तरुणी ने कितनों का ही संहार किया पर पुन दशों दिशाओं में असुर दिखाई देने लग जाते थे ॥ ५१ ॥ अब कालिका ने चित्त में ध्यान किया और भगवान ने उसे आकर दर्शन दिए । वह प्रणाम कर उनके चरणों में जा पड़ी और अनेकों प्रकार से विनती करने लगी ॥ ५२ ॥ हे सत्यकाल ! मैं आपकी दासी हूँ और मुझे अपना समझकर मेरी पालना करो । मेरा गुण-अवगुण न देखो और मुझ शरणागत की लज्जा पर ध्यान दो ॥ ५३ ॥ हे महाराज ! मैं आपकी शरण में हूँ और मेरी बाँह पकड़ने की लज्जा रखो । हे प्रभु ! यदि तुम्हारा भक्त तनिक भी दुख पाता है तो तुम्हारे बिरद को लाज लगती है ॥ ५४ ॥ मैं अब कहाँ तक पुकार करूँ, तुम तो घट-घट की जाननेवाले हो । हमारे एक वार कहने को आप हज़ारों गुना जानते हैं

जनियहु ॥ ५५ ॥ हड़ हड़ सुनत काल बच हसा । भगत हेत कटि सौ असि कसा । चिंत न करि मैं असुर सँघरिहौ । सकल शोक भगतन को हरिहौ ॥ ५६ ॥ अमित असुर उपजे थे जहाँ । प्रापति भयो काल चलि तहाँ । चहूँ करन करि शस्त्र प्रहारे । दैत अनेक मार ही डारे ॥ ५७ ॥ तिन ते परा स्रोन जे भू पर । असुर अमित धावत भे उठि करि । तिन ते चलत स्वास ते छूटे । अमित दैत रन कह उठि जूटे ॥ ५८ ॥ ते सभ काल तनिक मो मारे । चलत भए भुअ रुधिर पनारे । उपजि असुर ताँते बहु ठाडे । धावत भए रोस करि गाढे ॥५९॥ मारि मारि दिसि दसौ पुकारैं । तिन ते अमित असुर तन धारैं । बार चलत तिन तें जे दौरैं । तिन ते होत असुर प्रगटौरैं ॥ ६० ॥ लगे घाइ जे स्रोन बमाही । तिह तें गज बाजी ह्वै जाही । तिह ते चलित अनिल जो स्वासा । तिन ते असुर करत परगासा ॥ ६१ ॥ अनगन काल असुर तब मारे । परे भूमि पर मनहु मुनारे । मेधा ते गज बाज उठाही । स्रोनत के दानव ह्वै जाही ॥ ६२ ॥ बानन की बरखा उठि

और स्वयं अपने विरदपालक रूप को ज्यादा जानते हो ॥ ५५ ॥ यह वचन सुनकर काल हड़बड़ाकर हँस पड़ा और भक्त के लिए कमर से कृपाण कस ली। तुम चिन्ता न करो, मैं असुर का संघार करके भक्तों के समस्त शोकों को दूर करूँगा ॥ ५६ ॥ जहाँ अनेकों असुर पैदा हुए थे काल वहाँ जा पहुँचा। चारों हाथों से शस्त्र चलाकर उसने अनेकों दैत्यों को मार ही डाला ॥ ५७ ॥ उनसे जो रक्त धरती पर गिरा उससे अनेकों असुर उठकर दौड़ पड़े। अब उनके चलते साँसों से अनेकों दैत्य उठ पड़े और युद्ध में जुट गए ॥ ५८ ॥ काल ने उन सबको क्षण भर में मार डाला और धरती पर रुधिर के पनाले बहने लगे। असुर फिर पैदा होकर खड़े हो गए और क्रुद्ध हो आगे बढ़ने लगे ॥ ५९ ॥ दसों दिशाओं में वे मार-मार पुकारने लगे और उन्हीं से अनेकों असुर शरीर धारण कर रहे थे। दौड़ने पर जो और उन लोगों के कारण हवा चलती थी तो और असुर प्रकट हो जा रहे थे ॥ ६० ॥ घाव लगने से रक्त वमन होता था उनसे हाथी-घोड़े बन रहे थे। उनसे जो साँस चलती थी उससे और असुर बनते जाते थे ॥ ६१ ॥ काल ने अनेकों असुरों को मारा जो धरती पर पड़ी मीनारों के समान लग रहे थे। मेधा से हाथी-घोड़े उठ खड़े हो रहे थे और रक्त से दानव बनते जा रहे थे ॥ ६२ ॥ बाणों की वे वर्षा कर रहे थे और क्रुद्ध हो मार-मार

करही। मारि मारि करि कोप उचरही। तिन ते असुरन किया पसारा। दसे दिसान हूँ कह भरि डारा ॥ ६३ ॥ बहै कालका असुर खपाए। मारि दुबहिया धूरि मिलाए। पुनि पुनि उठैं प्रहारैं बाना। तिन ते धरत असुर तन नाना ॥ ६४ ॥ टूक टूक (मू०ग्रं०१३६३) दानव जे भए। तिन तें अनिक असुर ह्वै गए। ताही तें दानव बहु ह्वै करि। जुद्ध करें आयुध ते लै करि ॥ ६५ ॥ बहुरि काल वै दैत संघारे। तिल तिल पाइ टूक करि डारे। जेतिक गिरैं भूमि टूक ह्वैकैं। तितही उठैं आयुधन लैकै ॥ ६६ ॥ तिल तिल करि भट जितक उडाए। तेतक तहाँ असुर बन आए। तिनके टूक टूक जे कीए। तिनसे बहु दानव भव लीए ॥ ६७ ॥ केतिक तहाँ सुभैं दंती रन। सींचहि मुंड बारि ते सभ तन। दाँत दिखाइ तजैं चिघारा। गिरि गिरि परैं निरखि असवारा ॥ ६८ ॥ कहूँ भेर भीखन भभकारहि। कहूँ बीर बाजी रन डारहि। कितक सूर सैहथी फिरावत। महाकाल के सनमुख धावत ॥ ६९ ॥ केतिक बज्र बरछियन लैकै। धावत असुर कोप तन तैकै।

उच्चारण कर रहे थे। उनसे असुरों ने और प्रसार किया और दसों दिशाओं को भर दिया ॥ ६३ ॥ कालका ने राक्षसों को नष्ट कर डाला और दोनों भुजाओंवालों को धूल में मिला दिया। वे बार-बार उठकर बाण चला रहे थे और उन्हीं से असुर अनेकों शरीर धारण कर रहे थे ॥ ६४ ॥ जो दानव टुकड़े-टुकड़े हो गए थे उनसे अनेकों असुर पैदा हो गए। उन्हीं से अनेकों दानव पैदा होकर हाथ में धनुष लेकर युद्ध कर रहे थे ॥ ६५ ॥ पुनः काल ने उन दैत्यों का संहार किया और उन्हें टुकड़े-टुकड़े कर डाला। भूमि पर जितने ही टुकड़े होकर वे गिरते थे उतनी ही संख्या में वे शस्त्र लेकर उठ खड़े होते थे ॥ ६६ ॥ तिल-तिल कर जितने भी वीर काटे उतने ही वहाँ असुर बनकर आ गए। उनके जितने टुकड़े किए उतने ही दानव फिर पैदा हो गए ॥ ६७ ॥ कितने ही हाथी वहाँ युद्ध में शोभायमान हो रहे थे और सूँड़ के पानी से सबके तन सींच रहे थे। दाँत दिखाकर वे चिघाड़ रहे थे, जिसे सुनकर सवार गिर पड़ रहे थे ॥ ६८ ॥ कहीं भीषण भेरियाँ भभक रही थीं और कहीं घोड़े वीरों को गिरा दे रहे थे। कितने ही शूरवीर बर्छा घुमाते हुए महाकाल के सामने जाते थे ॥ ६९ ॥ कितने ही असुर वज्र-बरछियाँ लेकर तथा क्रुद्ध होकर टूट पड़ रहे थे। वे काल पर क्रुद्ध हो प्रहार करते ऐसे लग रहे थे मानों दीपक पर पतंग टूट

कोपि काल पर करत प्रहारा। जानुक सलभ दीप अनुहारा ॥ ७० ॥ भरे गुमान बडे गरबीले। धावत चौपि चड़े चटकीले। पीसि पीसि रदनंछद दोऊ। धावत महाँ काल पर सोऊ ॥ ७१ ॥ बाजहि ढोल स्त्रिदंग नगारा। भीखन करत भेर भभकारा। जंग मुचंग उपंग बजे रन। झालरि ताल नफीरन के गन ॥ ७२ ॥ मुरली मुरज कही रन बाजत। दानव भरे गुमानहि गाजत। ढोलन पर दै दै डमकारे। गहि गहि धवत क्रिपान कटारे ॥ ७३ ॥ दीरघ दाँत काढि कई कोसा। धावत असुर हिए करि जोसा। मारन महाँकाल कह धावैं। अनो मारत वेई मरि जावैं ॥ ७४ ॥ दानव महाँ कोप करि ढूके। मारहि मारि दसो दिसि कूके। दै दै ढोलि स्त्रिदंग नगारे। काढि काढि अरि दाँति डरारे ॥ ७५ ॥ चाहत महाँ काल कह मारो। महाँ मूरख नहि करत बिचारो। जिन सभ जग का करा पसारा। ताँहि चहत ते मूढ़ सँघारा ॥ ७६ ॥ ठोकि ठोकि भुजदंडन जोधा। धावत महाँ काल पर क्रोधा। बीस पदुम दानव तब भयो। नास करन काली को धयो ॥ ७७ ॥ छूहनि सहस असुर की सैना।

पड़ रहे हों ॥ ७० ॥ वे बड़े गुमानी थे और चटकते हुए दौड़ रहे थे। दाँत पीस-पीसकर वे महाकाल पर टूट पड़ रहे थे ॥ ७१ ॥ ढोल-मृदंग-नगाड़े बज रहे थे और भेरियाँ भभकार रही थीं। युद्ध में मुचंग-उपंग, झालर और तूतियाँ बज रही थीं ॥ ७२ ॥ युद्ध में मृदंग, मुरली बज रही थी और दानव गर्व से भरे हुए थे। ढोलों पर थाप दे-देकर वे कृपाण, कटारें पकड़कर दौड़ रहे थे ॥ ७३ ॥ लंबे दाँत कई कोसों तक निकाल कर असुर हृदय में जोश लेकर दौड़ रहे थे। वे महाकाल को मारने को चलते थे और उसे मारते-मारते स्वयं ही मर जाते थे ॥ ७४ ॥ दानव अत्यन्त क्रुद्ध हो एकत्र हुए और दसों दिशाओं से मार-मार की आवाज सुनाई पड़ रही थी। ढोल, मृदंग, नगाड़े बजा-बजाकर दाँत निकालकर वे शत्रुओं को डरा रहे थे ॥ ७५ ॥ वे महाकाल को मारना चाहते थे और मूर्खतावश कोई विचार नहीं कर रहे थे। जिसने सारे संसार का प्रसार किया है ये मूर्ख उसको मारना चाह रहे थे ॥ ७६ ॥ भुजाओं को ठोक-ठोंककर योद्धागण महाकाल पर टूट पड़ रहे थे। तब बीस पद्म अर्थात् अगणित दानव काल का नाश करने के लिए चले ॥ ७७ ॥ सहस्र अक्षौहिणी सेना आँखें लाल करके चल पड़ीं। वे अपरिमित क्रोध करके

धावत भई अछन करि मैना। धावत कोप अमित करि भए। प्रिथवी के खट पट उडि गए ॥ ७८ ॥ एकै पुर प्रिथवी रहि गई। खट पट हयन धगन उडि गई। जनु बिधि एकै रचा पयारा। गगन (मू०ग्रं०१३६४) रचे दस तीनि सुधारा ॥ ७६ ॥ महाँदेव आसन तें टरा। ब्रहमा लसत बूट महि दुरा। निरखि बिशन रन अधिक डराना। दुरासिंध के बीच लजाना ॥८०॥ कड़ा कड़ी माचा घमसाना। निरखत देव दैत जा न्हान्हा। महाँ घोर आहव तह परा। काँपी भूमि गगन थरहरा ॥ ८१ ॥ निरखि जुद्ध काँपा कमलेसा। ताँते धरा नारि का भेसा। पारबतीस लखि डरा लराई। बसा बन बिखें अतिथ कहाई ॥ ८२ ॥ कारतकेय ह्वै रहा बिहंडल। ब्रहम छाडि ग्रहि गयो कमंडल। पब्ब पिसान पगन भे तबही। जाइ बसे उत्तर दिसि सबही ॥८३॥ डगी धरनि अंबरि घहराना। बाजखुरन ते पत्थ पिसाना। अंध गुबार भयो बानन तन। हाथ बिलोक्यो जात न आपन ॥ ८४ ॥ बिछुआ बान बज्र रन बरखत। रिसि रिसि सुभट धनुख कह करखत। तकि तकि बान प्रकोप चलावैं। भेदि तान तन परैं परावै ॥ ८५ ॥

दौड़े और पृथ्वी के छः भाग (खंड) तो मानों उड़ ही गए ॥ ७८ ॥ पृथ्वी एक ही खंड रह गई और उसके छः खंड घोड़ों की टापों के कारण ही उड़ गए। जैसे विधाता ने मानों एक की ही रचना की हो और आकाश भी तेरह ही रचे हों ॥ ७९ ॥ भयभीत ब्रह्मा वृक्ष (कमल-नाल) में छिप गया। विष्णु भी युद्ध देख अत्यन्त भयभीत होकर समुद्र के बीच छिप गया ॥ ८० ॥ मारधाड़ का भीषण युद्ध हुआ जिसे देव-दैत्य सभी देख रहे थे। उस घोर युद्ध में भूमि काँप उठी और गगन थरथरा उठा ॥ ८१ ॥ युद्ध देखकर विष्णु काँप उठा और नारि का वेश धारण कर लिया। शिव भी लड़ाई देख भयभीत हो उठा और साधु बनकर वन में जा बसा ॥ ८२ ॥ कार्तिकेय भी व्याकुल हो उठा और ब्रह्मा भी अपना स्थान छोड़कर कमंडल में जा घुसा। पाँवों की रगड़ से पर्वत भी धूल बन गए और सभी भागकर उत्तर दिशा में जा बसे ॥ ८३ ॥ धरती हिल उठी और आसमान घबरा उठा। घोड़ों के खुरों से रास्ते चूर हो गए। बाणों के कारण अंधकार-सा छा गया और अपना हाथ पसारा नजर नहीं आता था ॥ ८४॥ बिछुआ, वज्र, बाण युद्ध में बरसने लगे और क्रोधित हो वीरगण धनुषों को खींचने लगे। वे निशाना साधकर क्रोधपूर्वक बाण चलाते थे जो कवचों को

जबही भए अमित रण जोधा। बाढ्यो महाँकाल कै क्रोधा। महाँकोप करि बिसिख प्रहारे। अधिक शत्र छिन माँझ सँघारे॥ ८६॥ रकत संबूह धरनि तब परा। ताते बहु दान्वन बपु धरा। एक एक सर सभहि चलाए। तिन ते असुर अनिक ह्वै धाए॥ ८७॥ आए जितक तितक तह मारे। बहे धरनि पर रकत पनारे। तिन ते अमित असुरन बपु धरा। हम ते जात बिचार न करा॥ ८८॥ डगमग लोक चतुरदस भए। असुरन साथ सकल भरि गए। ब्रहमा बिशन सभै डरपाने। महाँकाल की सरनि सिधाने॥ ८९॥ इह बिधि सभै पुकारत भए। जनु कर लूटि बनिक से लए। त्राहि त्राहि हम सरन तिहारी। सभ भै ते हम लेहु उबारी॥ ९०॥ तुम हो सकल लोक सिरताजा। गरबन गंज गरीब निवाजा। आदि अकाल अजोनि बिना भै। निरबिकार निरलंब जगत मै॥ ९१॥ निरबिकार निरजुर अबिनासी। परम जोग के तत्त प्रकासी। निरंकार नव नित्य

भेदकर दूसरी ओर जा निकलते थे॥ ८५॥ जब युद्ध में अनेकों योद्धा एकत्र हो गए तो महाकाल का क्रोध बढ़ उठा। उसने भीषण क्रोध कर बाणों से प्रहार किया और अत्यधिक शत्रुओं को क्षण भर में मार डाला॥ ८६॥ जब रक्त का अंबार धरती पर गिरा तो उससे बहुत से दानवों ने शरीर धारण कर लिया। एक-एक बाण सबने चलाया और उनसे और अधिक असुर बनकर दौड़ पड़े॥ ८७॥ जितने भी आए उन्हें वहीं मार डाला गया और धरती पर रक्त के पनाले बहने लग गए। उससे अनेकों राक्षसों ने शरीर धारण किया और उनकी गिनती का विचार मुझसे नहीं हो सकता॥ ८८॥ चौदहों लोक डगमगा उठे और असुरों के साथ भर गए। ब्रह्मा, विष्णु सभी डर गए और महाकाल की शरण को दौड़े॥ ८९॥ वे उसी तरह पुकार लगा रहे थे जैसे कोई लुटा हुआ बनिया चिल्ला रहा हो। 'त्राहिमाम्, त्राहिमाम्'' हम आपकी शरण में हैं, हमें सर्व भय से मुक्त करो॥ ९०॥ तुम सम्पूर्ण लोकों के सिरताज हो। तुम गर्व करनेवालों का नाश करनेवाले हो और गरीबनिवाज हो। आदि (पुरुष) अकाल, अयोनि और अभय तथा निर्विकार और निरालम्ब हो॥ ९१॥ तुम निर्विकार सदैव नूतन (निरजुर) और अविनाशी हो तथा परम योगी और तत्त्वप्रकाशक हो। तुम निराकार नित्य नये एवं स्वयं अपने आपसे प्रकाशित हो। तुम्हारा माता-पिता और बन्धु-बांधव कोई नहीं

सुयंभव । तात मात जह जात न बंधव ॥ ९२ ॥ शत्र बिहंड सुरिदि सुखदाइक । चंड मूंड दानव के घाइक । सति संधि सतिता निवासा । भूत भविक्ख भवान निरासा ॥ ९३ ॥ आदि (मू०ग्रं०१३६५) अनंत अरूप अभेसा । घट घट भीतर किया प्रवेसा । अंतर बसत निरंतर रहई । सनक सनंद सनातन कहई ॥ ९४ ॥ आदि जुगादि सदा प्रभु एकै । धरि धरि मूरति फिरति अनेकै । सभ जग कह इह बिधि भरमाया । आपे एक अनेक दिखाया ॥ ९५ ॥ घट घट महि सोई पुरख बयापक । सकल जीव जंतन के थापक । जाते जोति करत आकरखन । ताकह रहत म्रितक जग के जन ॥ ९६ ॥ तुम जग के कारन करतारा । घटि घटि की मति जाननहारा । निरंकार निरवैर निरालम । सभही के मन की तुहि मालम ॥ ९७ ॥ तुमहीं ब्रहमा बिशन बनायो । महाँरुद्र तुम ही उपजायो । तुमहीं रिखि कश्शपहि बनावा । दित अदित जन बैर बढावा ॥ ९८ ॥ जग कारन करुनानिधि स्वामी । कमल नैन अंतर के जामी । दयासिंधु दीनन के द्याला । हूजै

है ॥९२॥ शत्रुनाशक, सुहृदय और सुखदायक हो तथा चंड-मुंड दानवों का नाश करनेवाले हो । तुम सत्यसंधि सत्यता में निवास करनेवाले, भूत, भविष्य और वर्तमान के प्रभाव से परे हो ॥ ९३ ॥ तुम आदि, अनंत, अरूप, अवेश हो और तुमने घट-घट में प्रवेश किया हुआ है । सनक-सनंद और सनातन ने भी कहा है कि तुम हर एक के अंतर् में बसते हो और निरंतर बने रहनेवाले हो ॥ ९४ ॥ आदि-जुगादि में सदैव एक ही प्रभु-रूप में तुम अनेकों रूप धारण कर भ्रमण करते हो । सारे संसार को इस प्रकार भ्रम में डाल रखा है कि स्वयं तो एक हो पर सबको अनेकों रूपों में दिखते हो ॥ ९५ ॥ समस्त जीव-जन्तुओं के स्थापक प्रभु घट-घट में तुम्हीं व्याप्त हो । जिसमें की ज्योति जब (संसार की) ज्योति को खींचती है तो संसार के जीव मृत हो जाते है ॥ ९६ ॥ हे कर्ता ! तुम्हीं जगत् के कारण हो और घट-घट की बात जाननेवाले हो । हे निराकार, निर्वैर, निराले प्रभु ! तुम्हें सबके मन की गति मालूम है ॥ ९७ ॥ तुम्हीं ने ब्रह्मा, विष्णु और महारुद्र को बनाया है । तुम्हीं ने कश्यप ऋषि को बनाया और दिति-अदिति के वारिसों में वैर-भावना बढ़ाई ॥ ९८ ॥ हे स्वामी ! तुम जगत् के कारण, करुणानिधि, कमलनयन और अन्तर्यामी हो । दयासिन्धु, दीनदयालु कृपाणु हम पर कृपा करो ॥ ९९ ॥ हम विनती करते हुए

शस्त्र साज कोपा तब काला । धारत भयो भेस बिकराला । बान अनेक कोप करि छोरे । (मू०ग्रं०१३६६) शत्रु अनेकन के सिर फोरे ॥ १०७ ॥ हका हकी माचा संग्रामा । पठै दए बहु अरि पितु धामा । बाज खुरन भू आकुल भई । खटपट भूमि गगन उडि गई ॥ १०८ ॥ एकै रहि गयो जबै पयाला । ऐसा मचा जुद्ध बिकराला । महाँकाल कै भयो प्रसेता । डारा भूमि पौछि करि तेता ॥ १०९ ॥ भट्टाचारज रूप तब धरा । बदन प्रसेत धरनि जो परा । ढाढिसैन ढाढी बपु लयो । करखा बार उचारत भयो ॥ ११० ॥ जिह अरि काल क्रिपान प्रहारै । इक ते दोइ पुरख कै डारै । द्वै मनुखन पर करत प्रहारा । द्वै ते होत छिनिक मों चारा ॥ १११ ॥ बहुरि काल कीना घमसाना । मारत भयो दैत बिधि नाना । अधिक प्रसेत धरनि पर परियो । भूमसैन ताते बपु धरियो ॥ ११२ ॥ काढि क्रिपान धसो हुंकारा । तिन ते अमित गनन तन धारा । ढोल पटहि इक ताल बजावैं । जंग मुचंग उपंग सुनावैं ॥११३॥ गो मुख झाँझर तूर अपारा । ढोल म्रिदंग मुचंगन गारा ।

उठा और उसने विकराल वेश धारण कर लिया । उसने क्रुद्ध हो अनेकों बाण छोड़े और अनेकों शत्रुओं के सिर फोड़ दिए ॥ १०७ ॥ भागदौड़ मच गयी और संग्राम होने लगा । बहुत से शत्रुओं को मृत्युलोक पहुँचा दिया गया । घोड़ों के खुरों से धरती व्याकुल हो गई और धरती को छः भाग तो मानों आसमान को उड़ गए ॥ १०८ ॥ ऐसा भीषण युद्ध हुआ कि एक ही लोक रह गया । महाकाल को जितना भी पसीना आया वह उसने पोंछकर धरती पर गिरा दिया ॥ १०९ ॥ धरती पर जो पसीना गिरा उसने भट्टाचार्य का रूप धारण कर लिया । उसने भाट (ढाढ़ी) का रूप धारण किया और महाकाल की प्रशंसा में प्रशस्ति गाने लगा ॥ ११० ॥ काल ने जिस शत्रु पर भी कृपाण से वार किया उसे उसने एक से दो कर दिया । जब वह दो पर प्रहार करता था तो क्षण भर में वे दो से चार हो जाते थे ॥ १११ ॥ पुनः काल ने घमासान युद्ध किया और अनेकों दैत्यों को मारने लगा । जब धरती पर अधिक पसीना गिरा तो उसने भूमिसेन का रूप धारण कर लिया ॥ ११२ ॥ वह कृपाण निकाल हुंकार भरता हुआ शत्रु-सेना में धँस गया और उससे अनेकों गण पैदा हो गए । सभी ढोल, पट्टा, एक ताल बजाने लगे और चंग, मुचंग, उपंग आदि सुनाने लगे ॥ ११३ ॥ गोमुख, झाँझर, तूर, ढोल, मृदंग, मुचंग आदि बजने लगा ।

बाजत भेर भभाकहि भीखन। कसि धनु तजत सुभट सर तीछन ॥ ११४ ॥ भरि गे कुंड तहाँ स्रोनत तन। प्रगटे असुर तवन ते अनगन। मारि मारि मिलि करत पुकारा। तिन तें प्रगटत असुर हजारा ॥ ११५ ॥ तिनहि काल जब धरनि गिरावैं। स्रोन पुलित ह्वै भूमि सुहावैं। ताँते अमित असुर उठि भजहीं। बान क्रिपान सैहथी सजहीं ॥ ११६ ॥ अधिक कोप करि समुहि सिधारे। सभै काल छिन इक मों मारे। तिन ते स्रोनत परा सबूहा। साजत भए असुर तब ब्यूहा ॥ ११७ ॥ दारुन मचा जुद्ध तब झटपट। उडिगे बाज खुरन भू खटपट। ह्वैगे तेरह गगन अपारा। एकै रहि गयो तहाँ पतारा ॥ ११८ ॥ भट्टाचारज इतै जसु गावैं। ढाढि सैन करखाहु सुनावैं। तिमि तिमि कालहि बढै गुमाना। चहि चहि हनै दुबहिया नाना ॥ ११९ ॥ तिन ते मेद मास जो परहीं। रथी गजी बाजी तन धरहीं। केतिक भए असुर बिकरारा। तिन के बरनन करों सिधारा ॥ १२० ॥ एकै चरन आँखि एकै जिनि। भुजा अमित सहस द्वै के तिन।

भीषण भेरियाँ बजने लगी और वीर धनुष तान-तानकर तीक्ष्ण बाण छोड़ने लगे ॥ ११४ ॥ वहाँ रक्त के कुंड भर गए और उसमें से अनेकों असुर पैदा हो गए। सभी मिलकर मार-मार की पुकार लगाने लगे और उन्हीं में से हजारों असुर पैदा होने लगे ॥ ११५ ॥ काल जब उन्हें धरती पर गिराता था तो रक्त से पोषित हो वे पुनः धरती पर शोभायमान हो उठते थे। अनेकों असुर उनसे उठकर भाग चलते थे और बाण, कृपाण, भाले आदि से सज्जित हो जाते थे ॥ ११६ ॥ वे अधिक कुपित हो सामने आ भिड़ते थे। काल ने उन सबको एक क्षण में मार डाला। उनसे जो रक्त गिरा उसमें से असुर निकलकर व्यूह बनाने लगे ॥ ११७ ॥ तब तत्काल दारुण युद्ध मच गया और घोड़ों के खुरों से धरती उड़ने लगी। पृथ्वी के सभी खंड तेरह आकाशों में बदल गए और एक ही पाताल बाकी बचा ॥ ११८ ॥ भट्टाचार्य इधर यशोगान कर रहा था, उधर ढाढ़ीसेन प्रशस्ति सुना रहा था। साथ ही साथ काल का गुमान बढ़ता जाता था और उसने निशाना साध-साधकर दो भुजाओं वाले शत्रुओं को मारा ॥ ११९ ॥ उनके मेधा-मांस से रथी-गजी और घुड़सवार पैदा हो रहे थे। कितने भीषण असुर पैदा हुए, उनका वर्णन सुधार कर (संक्षेप में) करता हूँ ॥ १२० ॥ वे एक ही पाँव और एक ही

पाँच पाँच सै भुज के बने। शस्त्र अस्त्र हाथन मै बने ॥ १२१ ॥ (मू०ग्रं०१३६७) एक चरन एकै की नासा। एक एक भुज भ्रमत अकासा। अरध मुंड मुंडित केते सिर। केसन धरे कितक धाए फिरि ॥ १२२ ॥ एक एक मद को सर पीयै। मानव खाइ जगत के जीयै। दस सहंस भाँग के भरि घट। पी पी भिरत असुर रन चटपट ॥ १२३ ॥ ॥ दोहरा ॥ बज्रबान बिछुआ बिसिख बरखैं शस्त्र अपार। ऊच नीच कातर सुभट सभ कीने इक सार ॥ १२४ ॥ ॥ चौपई ॥ इह बिधि भयो घोर संग्रामा। लै लै अमित जुद्ध का सामा। महाँकाल कोपत भ्यो जबही। असुर अनेक बिदारे तबही ॥ १२५ ॥ महाँकाल जब ही रिसि भरा। घोर भयानक आहव करा। मारत भयो असुर बिकराला। सिंघनाद कीना ततकाला ॥ १२६ ॥ कहूँ मसान किलकटी मारैं। भैरव कहूँ ठाढ भुंकारैं। जोगनि दैत अधिक हरखाने। भूत शिवा बोलैं अभिमाने ॥ १२७ ॥ झालरि झाँझर ढोल म्रिदंगा। पटह नगारे मुरज मुचंगा। डवरू गुडगुडी कहूँ उपंगा। नाइ नफीरी

बाँह वाले थे अथवा फिर दो की जगह अनेकों भुजाएँ थीं। पाँच-पाँच सौ भुजाओं वाले अनेकों थे जिनके हाथों में अस्त्र-शस्त्र थे ॥ १२१ ॥ एक ही पाँव, एक ही नासिका थी और एक ही एक भुजाओं वाले वे आकाश में भ्रमण कर रहे थे। कितने आधे और कितने ही पूरे मूँडे हुए सिर थे और अनेकों केशों को धारण किए हुए घूम रहे थे ॥ १२२ ॥ उनमें से एक-एक मदिरा का तालाब पीकर संसार के मनुष्यों को खाकर जीवित रहनेवाला था। दस सहस्र भाँग के घड़े भरकर और उसमें से पी-पीकर सभी शीघ्रतापूर्वक आ भिड़ते थे ॥ १२३ ॥ ॥ दोहा ॥ वज्रबाण और बिछुआ आदि अस्त्र-शस्त्र अपार संख्या में बरस रहे थे और इन्होंने ऊँच-नीच अर्थात् सभी वीरों को समान रूप से कातर बना दिया था ॥ १२४ ॥ ॥ चौपाई ॥ इस प्रकार युद्ध का अपरिमित सामान लेकर घोर संग्राम हुआ। महाकाल जैसे ही कुपित हुआ उसने अनेकों असुर तत्काल मार डाले ॥ १२५ ॥ महाकाल ने क्रोध से भरकर घोर युद्ध किया। उसने विकराल असुरों को मारा और तत्क्षण सिंहनाद किया ॥ १२६ ॥ कहीं प्रेत किलकारियाँ मार रहे थे और कहीं भैरव भभक रहे थे। योगिनियाँ और दैत्य अधिक प्रसन्न थे और भूतगण तथा शिव भी अभिमानपूर्वक बोल रहे थे ॥ १२७ ॥ युद्ध में झालर, झाँझ, ढोल, मृदंग

बजत सुरंगा ।। १२८ ।। मुरली कहूँ बासुरी बाजत । कहूँ उपंग म्रिदंग बराजत । दुंदभि ढोल कहूँ शहनाई । बाजत भे लखि परी लराई ।। १२९ ।। मुरज मुचंग बजैं तुरही रन । भैरन के भभकार करत गन । हाथी घोरन के दुंदभि रन । उसटन के बाजे रन मुरधन ।। १३० ।। केतिक सुभट सरन के मारे । गिरत भए रन डील डिलारे । जदिप प्रान समुह ह्वै दए । कर ते तजत क्रिपानन भए ।। १३१ ।। चलत भई सरिता स्रोनत तह । जुद्ध भयो काली असुरन जह । सीस केस जह भए सिवारा । स्रोन प्रवाह बहत हह हारा ।। १३२ ।। बाज ब्रिछ जह बहे अनेकै । बिनु ब्रिण बीर रहा नहि एकै । स्रोन भरे पट अधिक सुहाए । चाचरि खेलि मनौ घर आए ।। १३३ ।। सूरन के जह मूँड पखाना । सोभित रंग भूम महि नाना । बहे जात जह ब्रिछ तुरंगा । बडे सैल से लसत मतंगा ।। १३४ ।। मछरी तनकि अँगुरियैं सोहैं । भुजा भुजंगन सी मन मोहैं । कहूँ ग्राह से खड़ग झमक्कहि । भक भक कर कहूँ घाइ भभक्कहि ।।१३५।।

पट्टे, नगाड़े, ढोलक, मुचंग, डमरू, डुगडुगी, उपंग और नफ़ीरी आदि भलीभाँति बज रहे थे ।। १२८ ।। कहीं मुरली, बाँसुरी, उपंग और मृदंग बजते हुए शोभायमान हो रहे थे और कहीं युद्ध होता देखकर दुंदुभि, शहनाई और ढोल बज रहे थे ।।१२९।। ढोलक, मुचंग, तुरही आदि वाद्य युद्ध में बज रहे थे और कहीं प्रेतगण भेरियों की तरह भभक रहे थे। हाथी-घोड़ों की दुंदुभियाँ और ऊँटों के वाद्य मधुर स्वर में बज रहे थे ।। १३० ।। कितने ही वीर शरण में आ गिरे। वे लंबे-चौड़े डीलडौल वाले थे। यद्यपि वे सामने आकर प्राण दे रहे थे परन्तु हाथों से कृपाणें गिरा दे रहे थे ।। १३१ ।। जहाँ काली और दैत्यों का युद्ध हुआ वहाँ रक्त की नदियाँ बह निकलीं। सिर और केश उस रक्त-प्रवाह में सेवार की तरह लग रहे थे और खून की धाराएं बह रही थी ।। १३२ ।। घोड़े और पेड़ उसमें अनेकों बह रहे थे और कोई भी घावों से अछूता न बचा। रक्त से सने वस्त्र अत्यधिक शोभायमान हो रहे थे और ऐसे लग रहे थे जैसे वे होली खेलकर वापस घर आए हों ।। १३३ ।। शूरवीरों के सिर पत्थरों की तरह पड़े हुए उस युद्धस्थल में शोभा पा रहे थे। वृक्ष और घोड़े बहते जा रहे थे और मस्त हाथी बड़े पर्वतों के सामन शोभायमान हो रहे थे ।। १३४ ।। अँगुलियाँ मछलियों के समान और भुजाएँ नागिनों की तरह लग रही थीं। कहीं मगरमच्छों की तरह खड़ग झपक रहे थे और कहीं घावों से भकभक खून बह रहा था ।। १३५ ।। ।। भुजंग छंद ।' जहाँ शत्रु वीरों

॥ भुजंग छंद ॥ जहाँ (मू०ग्रं०१२१८) बीर बैरी बडे घेरि मारे। तहाँ भूत औ प्रेत नाचे मत्यारे। कहूँ डाकनी झाकनी हाँक मारैं। उठैं नाद भारे छुटे चीतकारैं ॥ १३६ ॥ कहूँ अंगुलं त्राण काटा बिराजैं। कहूँ अंगुला काटि के रतन राजैं। कहूँ टीक टाँके कटैं कोप सोहैं। कहूँ बीर मारे गिरे भूमि मोहैं ॥ १३७ ॥ जिते स्रोन के बूँद भू पै परे हैं। तिते दानवौ रूप बाके धरे हैं। हठी ओर चारौ बिखै आनि ढूके। महाँकोप कै मार ही मारि कूके ॥ १३८ ॥ किते दैत आए तिते काल मारे। बहे स्रोन के भूम हूँ पै पनारे। उठे दैत बाँके बली शस्त्र लैकैं। दुहूँ ओर ते मार ही मारि कैकै ॥ १३९ ॥ हठी बद्धि गोपा गुलित्रान बाँके। हठीले कटीले रजीले निसाँके। गदा हाथ लैकै किते बीर गाजे। लरे आनि कै पैग द्वै कै न भाजे ॥ १४० ॥ कहूँ बीर मारे बिदारे परे है। कहूँ खेत मै खिग खत्री जरेहै। कहूँ मत्तदंती कहूँ उसट मारे। बिराजैं कहूँ नगन खंडे कटारे ॥ १४१ ॥ कहूँ खोल खाँडे गिरे भूमि सोहैं। कहूँ बीर बानी परे भूमि मोहैं। कहूँ स्वार मारे फिरै बाज छूटै। किते छैल छोरे किते दुशट लूटैं ॥ १४२ ॥ ॥ चौपई ॥ इह

को घेरकर मार डाला गया वहाँ भूत-प्रेत मतवाले हो नाच रहे थे। कहीं डाकिनियाँ हकार रही थीं और कहीं चीत्कारों का भारी नाद उठ रहा था॥ १३६ ॥ कहीं पर अंगुलित्राण कटे पड़े थे और कहीं कटी अँगुलियों से रत्न झड़े हुए विराजमान थे। कहीं कटे हुए वीर और कहीं गिरे हुए वीर शोभायमान हो रहे थे ॥ १३७ ॥ जितनी रक्त की बूंदें धरती पर गिरीं उतने ही दानव बाँके रूप धारण कर सामने प्रकट हुए हैं। हठी वीर चारों ओर से आ एकत्र हुए हैं और क्रुद्ध हो "मार-मार" चिल्लाने लगे हैं॥ १३८ ॥ जितने भी दैत्य आये उतने ही मार डाले गये। धरती पर रक्त के पनाले बहने लगे। बाँके दैत्य वीर शस्त्र लेकर उठे और दोनों ओर "मार-मार" की आवाज़ के साथ टूट पड़े॥ १३९ ॥ वीर हठी थे, बाँके थे और कवच धारण किये हुए कटीले, सजीले लग रहे थे। कितने ही वीर गदा लेकर गर्जना करने लगे और आकर लड़ने लगे तथा दो क़दम भी पीछे न हटे॥ १४० ॥ कहीं वीर मारे गये और कहीं कठोर क्षत्रिय युद्ध में खेत रहे। कहीं हाथी और कहीं ऊँट मारे गये और कहीं नंगी कृपाणें और खड़ग पड़े थे॥ १४१ ॥ कहीं खड़गों के म्यान धरती पर पड़े थे और कहीं वीर धरती पर गिरे हुए मन को मोह र

बिधि तहाँ भयो संग्रामा । निरखत देव दानवी बामा । केतिक करी करन बिनु भए । प्रापत दुसट निधन कह गए ॥ १४३ ॥ मारहि मारि महा सूर कूकहि । काढि काढि दाँतन कह हूकहि । बाजहि ढोल म्रिदंग नगारे । जंग मुचंग उपंग जुझारे ॥१४४॥ जिह तन काल बिसिख को मारै । ताकह तही चूर करि डारै । जा कर कोपि क्रिपान प्रहारत । तिह का मूँड काटि ही डारत ॥ १४५ ॥ इह बिधि भयो भयानक जुद्धा । उपजा कछुक काल के क्रुद्धा । केसन ते गहि असुर पछारे । काढि क्रिपान एक हनि डारे ॥ १४६ ॥ मारे अधिक ताहि दानव रन । टूक टूक ह्वैगे तिन के तन । तऊ मार ही मारि पुकारत । पाछे पाँव एक नहि डारत ॥ १४७ ॥ केतिक घूमि गिरत हैं घाइल । परत भए भू तर ह्वै हाइल । तऊ जुद्ध को त्यागि न भजही । जब लगि दुसट प्रान नहि तजही ॥ १४८ ॥ गुरज गोफ़नै कितक सँभारैं । केतिक कसि कसि बान प्रहारैं । किते (मू०ग्रं०१३६९) तमकि रन तुरी नचावैं । चटपट सुभट जूझि रन जावैं ॥ १४९ ॥ कितक तमकि रन तुरी नचावत ।

थे । कहीं सवारों के मृत हो जाने से घोड़े छुट्टा घूम रहे थे और कितने ही छैल, छोकरे और दुष्टों के (प्राण) लूट लिये गये ॥ १४२ ॥ ॥ चौपाई ॥ इस प्रकार का वहाँ संग्राम हुआ कि देव-दानव-स्त्रियाँ भी उसे देख रही थी । कितने ही हाथी कर्णविहीन हो गये और दुष्ट मृत्यु को प्राप्त हो गये ॥ १४३ ॥ शूरवीर "मारो-मारो" चिल्ला रहे थे और पीसे जा रहे दाँत दिखा-दिखाकर टूट पड़ रहे थे । ढोल, मृदंग, नगाड़े, चंग, मुचंग और उपंग आदि वाद्य बज रहे थे ॥ १४४ ॥ काल जिसके शरीर में भी बाण मारता था उसे वहीं चूर कर डालता था । क्रुद्ध हो जिस पर कृपाण का प्रहार करता था उसका सिर काट ही डालता था ॥ १४५ ॥ इस प्रकार भयानक युद्ध हुआ और काल को भी कुछ गुस्सा आ गया । उसने केशों से पकड़कर असुरों को पछाड़ा और कृपाण निकालकर उन्हें मार डाला ॥ १४६ ॥ वहाँ अनेकों दानव मार डाले और उनका शरीर टुकड़े-टुकड़े हो गया । वे भी "मारो-मारो" चिल्लाए जा रहे और पाँव पीछे नहीं हटाते थे ॥ १४७ ॥ कई घायल हो हाय-हाय करके घूमकर धरती पर गिर रहे थे । तब भी वे जब तक उनके प्राण-पखेरू न उड़ जाएँ युद्ध को त्यागकर नहीं जा रहे थे ॥ १४८ ॥ अनेकों ही गदा-गोफनों आदि को सँभाल रहे थे और कितने ही कस-कसकर बाणों से प्रहार कर रहे थे । कितने ही तमककर युद्ध में घोड़ों को नचा रहे

मारि मारि धुनि कितक उचावत । मंडहि महाँकाल सौ जुद्धा। ह्वै ह्वै अधिक चित्त महि क्रुद्धा ॥ १५० ॥ जेतिक सुभट कोपि करि आए । महाँकाल तेते ई खपाए । तिन को मेद मास भुअ परा । बहु असुरन ताते बपु धरा ॥ १५१ ॥ महाँकाल ते दए खपाइ । स्रोनत सों प्रिथवी रही छाइ । तिह ते अमित असुर उठि ढूके । मारहि मारि दसौ दिसि कूके ॥ १५२ ॥ केतिक की बाहन कटि डारा । करे रुंड बिनु मुंड हजारा । केतिक चीर अधो अध डारे । नाचत भूत प्रेत मतवारे ॥ १५३ ॥ जे तिनके सिरि बही क्रिपानैं । अरध अरध ह्वै जूझे ज्वानैं । गज बाजी लोटत कहूँ भू पर । सुंभन शबद सुना अवनीतर ॥ १५४ ॥ गिरि गिरि परे कहूँ घायल रन । भाजि चले कई होइ बिमन मन । झमकत कही असिन की धारा । भभकत रुंड मुंड बिकरारा ॥ १५५ ॥ ॥ भुजंग छंद ॥ तहाँ जुद्ध माचा महाँबीर खेतं । बिदारे परे बीर ब्रिंदं बिचेतं । कहूँ डामरूँ डहडहा शबद बाजै । सुने दीह दलिवान

थे और शीघ्रातिशीघ्र युद्ध की तरह दौड़ रहे थे ॥ १४९ ॥ कितने ही तमतमाकर घोड़ों को नचा रहे थे और कितने ही "मार-मार" की ध्वनि में भी ऊँघ रहे थे । वे सभी महाकाल से, मन में क्रुद्ध हो युद्ध कर रहे थे ॥ १५० ॥ जितने भी वीर क्रुद्ध होकर आये महाकाल ने उन सबको नष्ट कर दिया । उनका जो मेधा और मज्जा धरती पर गिरे उससे अन्य दैत्यों ने शरीर धारण किया ॥ १५१ ॥ महाकाल ने उनको मार डाला और सारी पृथ्वी रक्त से रँगी गई । उससे फिर अपरिमित असुर उत्पन्न हो दौड़ पड़े और मार ही मार चिल्लाने लगे ॥ १५२ ॥ कितनों की बाँहें काट डाली और हजारों ही धड़ों को मुंड-विहीन कर डाला । कितनों को बीचोंबीच से चीर डाला गया । भूत-प्रेत मतवाले होकर नाचने लगे ॥ १५३ ॥ कृपाणें जिनके सिर पर पड़ीं वे जवान दो टुकड़ों में आधे-आधे बँट गए । कहीं गज और घोड़े धरती पर लोट रहे थे और कहीं उनकी टापों की आवाज धरती पर सुनाई दे रही थी ॥ १५४ ॥ कहीं कई युद्ध में घायल हो पड़े थे और बेमन से युद्धस्थल से भाग निकले । कहीं कृपाणों की धारें झिलमिला रही थीं और कहीं विकराल रुंड-मुंडों से रक्त भभक रहा था ॥ १५५ ॥ ॥ भुजंग छन्द ॥ वहाँ उस मचे हुए भीषण युद्ध में अनेकों महावीर खेत रहे और वीरों के तो झुंडों के झुंड मारे पड़े हुए थे । डमरू की डमाडम ध्वनि को सुनकर कई दिल वालों का

को द्रप्प भाजै ॥ १५६ ॥ कहूँ संख भेरी बजैं ताल भारे । कहूँ बेन बीना पनो औ नगारे । कहूँ नाइ नाफीरियै नाद ऐसे । बजै घोर बाजा प्रलैकाल जैसे ॥ १५७ ॥ कहूँ छैन तूरैं नगारै स्रिदंगै । कहूँ बाँसुरी बीन बाजैं सुरंगै । कहूँ बगल तारंग बाजे बजावैं । कहूँ बारता रंग नीके सुहावैं ॥ १५८ ॥ कहूँ झाँझ बाजें कहूँ ताल ऐसे । कहूँ बेनु बीना प्रलैकाल जैसे । कहूँ बाँसुरी नाइ नादै स्रिदंगें । कहूँ सारंगी औ मुचंगं उपंगं ॥१५९॥ कहूँ गरजि कै कै भुजा भूप ठोकैं । कहूँ बीर बीरान की राह रोकैं । किते अस्त्र औ शस्त्र लै लै चलावैं । किते चरमलै चोट ताकी बजावैं ॥ १६० ॥ कहूँ रुंड सोहै कहूँ मुंड बाँके । कहूँ बीर मारे बिदारे निसाँके । कहूँ बाज मारे गजाराज जूझे । कहूँ उसट काटे नहीं जात बूझे ॥ १६१ ॥ कहूँ चरम बरमैं गिरे भूमि ऐसे । बगे ब्योंति डारे समैं सीत जैसे । गए जूझि जोधा जगे जोर जंगैं । मनो पान कै भंग सोए मलंगैं ॥ १६२ ॥ किते डहडहा शबद डवरू बजावैं । किते राग मारू खरे खेत गावैं । हसै (मू०ग्रं०१३७०) गरजि ठोकै भुजा पाट फाटैं । किते

भी गर्व चूर हो जाता ॥ १५६ ॥ कहीं शंख, भेरी, वेणु, बीणा और नगारे आदि बज रहे थे और कहीं नाद-नफीरियाँ ऐसे बज रही थीं जैसे मानों प्रलयकाल में वाद्य बज रहे हों ॥ १५७ ॥ कहीं छनकार करनेवाले वाद्य और कहीं तुरहियाँ, नगाड़े और मृदंग तथा कहीं बाँसुरी, वीणा आदि सुन्दर रूप से बज रहे थे । कहीं बगलतरंग बजाई जा रही थी और कहीं सुन्दर वार्ता सुनाई जा रही थी ॥ १५८ ॥ कहीं झाँझ, वेणु और वीणा का ताल-स्वर ऐसा सुनाई दे रहा था मानों प्रलयकाल में उनका स्वर हो । कहीं बाँसुरी, मृदंग बज रही थी और कहीं सारंगी और मुचंग बज रहे थे ॥ १५९ ॥ कहीं गरजकर राजागण भुजाएँ ठोंक रहे थे और कहीं वीर वीरों की राह रोक रहे थे । कहीं वे अस्त्र-शस्त्र ले-लेकर चला रहे थे और कहीं ढालों पर चोटें पड़ रही थीं ॥ १६० ॥ कहीं रुंड-मुंड शोभायमान हो रहे थे और कहीं वीरों को निःशंक मारा जा रहा था । कहीं हाथी और कहीं घोड़े जूझ गए थे और कहीं कटे हुए ऊँट पहचान में नहीं आ रहे थे ॥१६१॥ कहीं चर्म के कवच ऐसे पड़े थे मानों शीतकाल में आसमान में सफ़ेद बगुलों की पंक्तियाँ हों । युद्ध के जोर से योद्धा ऐसे जूझ गए मानों मलंग लोग भाँग खाकर सोये पड़े हों ॥१६२॥ कहीं डमरू की डमडम सुनाई दे रही थी और कहीं युद्ध में राग मारू

बीर बीरान के मूँड काटैं ॥ १६३ ॥ कहूँ चंचला चारु चीरै बनैकै । बरैं ज्वानि जोधा जुझ्यो ज्वान थ्वैकै । कहूँ बीर बीरान के पाव पेलैं । महाँ अंग जोधा लगे युद्ध सेलैं ॥ १६४ ॥ कहूँ जच्छनी किन्नरी आनि कैकै । कहूँ गंध्रबी देवनी मोद ह्वैकै । कहूँ अच्छरा पच्छरा गीत गावैं । कहूँ चंचला अंचला को बनावैं ॥ १६५ ॥ कहूँ देवकंन्या नचैं ताल दैकै । कहूँ दैत पुत्री हसैं मोद ह्वैकै । कहूँ चंचला अंचला को बनावैं । कहूँ जच्छनी किन्नरी गीत गावैं ॥ १६६ ॥ लरैं आनि जोधा महाँ तेज तै कै । गिरे पाक शाहीद याकीन ह्वैकै । कहूँ बीर बाँके नचावैं तुरंगैं । कहूँ जोग जोधा बिराजैं उतंगैं ॥ १६७ ॥ कहूँ बीर बानैत बीरै उठावैं । कहूँ खेत मै खिग्ग छत्री नचावैं । कहूँ कोप कै कै हठी दाँत चाबैं । किते मूँछ ऐठैं किते पाग दाबैं ॥ १६८ ॥ दुहूँ ओर गाजे जबै छत्रधारी । मच्चो लोह गाढ़ो परी मारि भारी । महाँकोप कै बीर बाजी उचक्कै । लगे देह मो घाइ गाढ़े भभक्कै ॥ १६९ ॥ कहूँ कुंडलाकार

गाया जा रहा था । हँसकर कहीं भुजाओं को ठोंक उन्हें फाड़ दे रहे थे और कहीं वीर वीरों के सिर काट रहे थे ॥ १६३ ॥ कहीं सुन्दर स्त्रियाँ (अप्सराएँ) सुन्दर वस्त्र धारण कर जूझे हुए जवानों का वरण कर रही थीं । कहीं वीर वीरों को ठोकरें मार रहे थे । सभी योद्धा उस महायुद्ध में लीन थे ॥ १६४ ॥ कहीं यक्षिणी, किन्नरनी, गंधर्वी और देव-स्त्रियाँ प्रसन्न हो घूम रही थीं और कहीं अप्सराएँ गीत गा रही थीं तथा स्त्रियों ने सुन्दर वस्त्र धारण कर रखे थे ॥ १६५ ॥ कहीं देवकन्याएँ ताल देकर नाच रही थीं और कहीं दैत्य-पुत्रियाँ प्रसन्नतापूर्वक हँस रही थीं। कहीं स्त्रियों ने सुन्दर वस्त्र धारण कर रखे थे और कहीं यक्षणियाँ और किन्नरनियाँ गीत गा रही थीं ॥ १६६ ॥ महातेजस्वी योद्धागण लड़ रहे थे और निश्चयपूर्वक युद्ध में शहीद हो रहे थे । कहीं बाँके वीर घोड़े नचा रहे थे और कहीं योग्य योद्धा ऊँचे स्थानों पर बैठे थे ॥१६७॥ कहीं भयानक वीर बीड़े उठा रहे थे और कहीं युद्धस्थल में क्षत्रिय खड्ग नचा रहे थे । कहीं कुपित हो हठी वीर दाँत चबा रहे थे । कई मूँछे ऐंठ रहे थे और कितने ही पाँव जमाए हुए थे ॥ १६८ ॥ जब दोनों ओर से छत्रधारी वीर गरज उठे तो भारी मार-काट हुई और भीषण युद्ध हुआ । वीर और उनके घोड़े कुपित हो उचकने लगे और उनकी देह में लगे घाव भभकने लगे ॥ १६९ ॥ कहीं कुंडलाकार सिर शोभायमान

मुंडैं बिराजैं । लखे मुंड मालाहु के मुंड लाजैं । कहूँ घूँम घूमैं परे पीर भारी । मनो सिध्य बैठे लगे जोग तारी ॥ १७० ॥ तहाँ स्रोन की कूल धारी बिराजै । लखैं अशट नद्यान को द्रप्प भाजैं । तहाँ बिंद बाजी बहे नेक जैसे । लसे मत्त दंती महाँ सैल कैसे ॥ १७१ ॥ धुजा बिछ तामों बहे जात ऐसे । लसैं डंड पत्री बिना पत्र जैसे । कहूँ छत्र तामों बहे जात काटे । मनो फेन से बारि सै बसत्र फाटे ॥ १७२ ॥ कहूँ बाहु काटो बहे जात ऐसे । मनो पंच बक्रतान के नाग जैसे । चढ़े बीर बाजी बहे जात मारे । सनाहीन के स्वार पारं पधारे ॥ १७३ ॥ कहूँ खोल खंडे बहे जात मारे । मनो एकठे कच्छ मछ ह्वै पधारे । तहाँ पाग छूटे बहे जात ऐसे । मनो तीस ब्यामान के नाग जैसे ॥ १७४ ॥ झखी झुंड जामै कटारी बिराजैं । लखे खिग बाँके बली नाग लाजैं । कहूँ चरम काटे गिरे शस्त्र अस्त्रं । कहूँ बीर बाजी बहे जात बस्त्रं ॥ १७५ ॥ हला चाल कै कै हठी दैत ढूके । चहूँ ओर गाजे महाँसूल जूके । किते

हो रहे थे जिन्हें देखकर मुंडमाल के मुंड भी लज्जित हो रहे थे । कहीं भारी पीर योद्धा घूम-घूमकर गिरे हुए थे और ऐसे लग रहे थे मानों सिद्ध-गण योगसमाधि लगाए बैठे हों ॥ १७० ॥ वहीं रक्त की धाराएँ बह रही थीं जिन्हें देखकर आठों नदियों का गर्व चूर हो रहा था । उनमें अश्वसमूह बह रहा था और मस्त हाथी पर्वतों के समान शोभायमान हो रहे थे ॥ १७१ ॥ ध्वजा और वृक्ष उसमें ऐसे बहते चले जा रहे थे जैसे मानों पत्तों के बिना डंडे हों । कहीं उसमें कटे हुए छत्र बहे जा रहे थे । झाग ऐसी लग रही थी मानों फटे हुए वस्त्र बह रहे हों ॥ १७२ ॥ कहीं भुजाएँ कटी ऐसे बहती जा रही थीं मानों पंचमुख शिव के नाग हों । कहीं वीर और अश्व मारे जा रहे थे और कवच-विहीन सवार उस ओर पार किए जा रहे थे अर्थात् मृत्युलोक पहुँचाए जा रहे थे ॥ १७३ ॥ कहीं म्यान और खड्ग ऐसे बहते जा रहे थे मानों मत्स्य और कच्छप इकट्ठे हो जा रहे हों । खुली पगड़ियाँ ऐसे बहती जा रही थीं मानों तीस हाथ लंबे नाग हों ॥ १७४ ॥ कटारें उसमें मछलियों का झुंड लगती थीं और बाँके खड्गों को देखकर बलशाली नाग भी लज्जित होते थे । कहीं चर्म काटकर अस्त्र-शस्त्र गिरे हुए थे और कहीं वीर घोड़ों एवं वस्त्रों-समेत बहते जा रहे थे ॥ १७५ ॥ आक्रमण करने के लिए हठी दैत्य आ एकत्र हुए और चारों ओर शूल लेकर

कोप कै शस्त्र अस्त्रैं चलावैं। (पू०पं०१३७१) किते संख औ भीम भेरी बजावैं ॥ १७६ ॥ कहाँ फूलि फीली नगारे बजैके। चले दुंदभी ताजियें के सुनैके। मचे कोप कै सु उसटी दमामे। मनो बाज टुट्टे लखे लाल तामे ॥ १७७ ॥ किते बीर बाँके धरे लाल बाने। किते स्याम औ सेत कीने निशाने। किते हरति यौ पीत बाने सुहाए। हठी चुंग बाधे चले खेत आए ॥१७८॥ किते ढाल ढापैं किते चोट ओटैं। सभै आनि जूझैं भजैं कोट कोटैं। किते सूल औ सैहथी खिग खेलैं। किते पास औ परस लै पाव पेलैं ॥ १७९ ॥ किते पाखरैं डारिकै ताजियौ पै। चढ़ै चारु जामे किते बाजियो पै। किते मदद दंतीनियौ पै बिराजैं। मनो बारणैसे चड़े इंद्र लाजैं ॥ १८० ॥ किते खच्चरा रोह बैरी बिराजैं। किते गरधभै पैं चढ़े सूर गाजैं। किते दानवौ पैं चड़े दैत भारे। चहूँ ओर गाजे सु दै कै नगारे ॥ १८१ ॥ किते माहिखी पै चड़े दैत ढूके। किते सूकरा स्वार ह्वै आनि झूके। किते दानवों पैं चड़े दैत भारे। चहूँ ओर ते मार मारैं पुकारे ॥ १८२ ॥ किते सरप असवार

गर्जना करने लगे। कहीं कुपित हो अस्त्र-शस्त्र चला रहे थे और शंख और भीमाकार भेरियाँ बजाई जा रही थीं ॥ १७६ ॥ हाथीवान नगाड़े बजाते और अश्वारोहियों को दुंदुभियाँ सुनाते हुए चल रहे थे। ऊँटों पर लदे नगाड़े क्रोधपूर्वक बज रहे थे और उन पर लाल वस्त्र देखकर घोड़े टूट पड रहे थे ॥ १७७ ॥ कहीं वीरों ने लाल वस्त्र पहन रखे थे और सफेद तथा काले को निशाना बनाया जा रहा था। कहीं हरे और पीले वस्त्र शोभायमान हो रहे थे और ऐसा लग रहा था कि मानों हठी मृग युद्ध मे आ गए हों ॥ १७८ ॥ कही ढाल से ढका जा रहा था और कहीं चोट से बचा जा रहा था। सभी आकर जूझ रहे थे और अनेकों भाग खड़े हो रहे थे। कहीं बर्छी-भाले और खड़्ग के साथ खेल हो रहा था और कहीं पाश और फरसा लेकर पाँव जमाए जा रहे थे ॥ १७९ ॥ कहीं घोड़ों पर जीन कसकर सुन्दर जवान चढ़ रहे थे। मदमत्त वीर हाथी पर बैठे थे जिन्हें देखकर ऐरावत पर बैठा इन्द्र भी लज्जित होता था ॥ १८० ॥ कहीं खच्चरों पर बैठे और कहीं गदहों पर सवार वीर शोभायमान हो रहे थे। कहीं भारी दानव और दैत्य चारों ओर नगाड़े बजाकर घूम रहे थे ॥१८१॥ कहीं भैंसे पर सवार और शूकरों पर सवार दैत्य आ एकत्र हुए कहीं दानवों पर ही भारी दैत्य सवार होकर चारों ओर मार मार पुकार

ह्वैकै सिधाए । किते स्वार ब्घ्यार ह्वै दुशट आए । किते चीतियौ पैं चड़े कोप कैकै । किते चीतरो पैं चढ़े तेः तैंकै ॥ १८३ ॥ किते चाक चुंघ्रा चढ़े काक बाही । अठूहाँन को स्वार केते सिपाही । किते बीर बानी चढ़े ब्रिद्ध गिद्धै । मनो ध्यान लागे लसैं सुद्ध सिद्धैं ॥ १८४ ॥ हठी बद्धि गोधा गुलित्रान बाँके । रजीले कटीले हठीले निसाँके । महाँ जुद्ध माली भरे कोप भारे । चहूँ ओर तें अभ्र ज्यों चीतकारे ॥१८५॥ बडे दाँत काढे चले कोपि भारे । लहे हाथ मै पब्ब पत्री उपारे । किते सूल सैथी सूआ हाथ लीने । मंडे आनि मारू महाँ रोस कीने ॥ १८६ ॥ हठी हाँक हाँकै उठावै तुरंगँ । महाँ बीर बाँके जगे जोर जंगें । सूआ साँग लीने अतिअत्री धरत्री । मचे आनि कै कै छके छोभ छत्री ॥ १८७ ॥ कहूँ बीर बीरें लरैं शस्त्रधारी । मनो काछ काछे नचैं त्रित्तकारी । कहूँ सूर साँगै पुऐ भाँति ऐसे । चढ़ै बाँस बाजीगरैं ज्वान जैसे ॥ १८८ ॥ कहूँ अंग भंगे गिरे शस्त्र अस्त्रैं । कहूँ बीर बाजीन के बरम बस्त्रैं । कहूँ टोप टाँके गिरे टोप टूटे । कहूँ

रहे थे ॥ १८२ ॥ कहीं सर्प की सवारी और कहीं भेड़िए की सवारी कर दुष्ट आ गए । कहीं क्रुद्ध हो चीते पर और कहीं चीतल पर सवार होकर आ गए ॥ १८३ ॥ कहीं कठफोड़वों, कछुओं, कनखजूरों पर सवार हो सिपाही चल पड़े । कहीं वीर गिद्धों पर सवार थे और ऐसे लग रहे थे मानों ध्यान लगाए बैठे हों ॥ १८४ ॥ हठी वीर अँगुलियों पर भी कवच धारण कर क्रियाशील थे और सुसज्जित दिखाई दे रहे थे । वे युद्धों के बली वीर चारों ओर से बादलों की तरह गरज रहे थे ॥ १८५ ॥ बड़े दाँत निकाले हुए क्रुद्ध हो दैत्य चले और उनके हाथों में पर्वतों के उखाड़े हुए टुकड़े थे । कही शूल, कृपाण एवं भाले आदि हाथ में लिये वीरों ने क्रुद्ध हो युद्ध प्रारम्भ कर दिया ॥ १८६ ॥ हठी वीर घोड़ों को हाँक रहे थे और महाबली युद्ध के लिए सजग हो रहे थे । भाले-बर्छे, अस्त्र-शस्त्र लेकर छत्रधारी वीरों ने युद्ध मचा दिया ॥ १८७ ॥ शस्त्रधारी वीर लड़ते ऐसे लग रहे थे मानों विभिन्न वस्त्रों में सज्जित नर्तक हों । कही वीर भालों में पिरोए ऐसे लग रहे थे मानों बाजीगर बाँस पर चढ़े हुए हों ॥ १८८ ॥ कहीं भंग अंग और अस्त्र-शस्त्र तथा कहीं वीरों और घोड़ों के कवच-वस्त्र आदि पड़े थे । कहीं शिरस्त्राण टूटे गिरे थे और कही वीर बादलों की तरह फटे पड़े थे १८९ चौपाई इस प्रकार उस

बीर अखान की भाँति फूटे ॥ १८९ ॥ ॥ चौपई ॥ इह बिधि बीर खेत (मू०ग्रं०१३७२) बिकराला । माचत भयो आनि तिह काला । महाँकाल कछुहू तब कोपे । पुहमी पाव गाढ़ करि रोपे ॥ १९० ॥ मोहनास्त्र केते सो हित करि । बरुणास्त्र भे प्रान कितन हरि । पावकास्त्र भे अधिक जराए । अमित सुभट त्रित लोक पठाए ॥ १९१ ॥ जा पर महाँकाल असि झारा । एक सुभट ते द्वै करि डारा । जौ द्वै नर पर टुक असि धरा । चारि टूक तिन द्वैकै करा ॥ १९२ ॥ केतिक परे सुभट बिललाहीं । जंबुक गिद्ध मासु लै जाँही । भैरव आनि दुहूँ भभकारैं । कहूँ मसान किलकटी मारैं ॥ १९३ ॥ केतिक सुभट आनिही ढूकैं । मारहि मारि दसो दिसि कूकैं । महाँकाल पर जे ब्रिण करही । कुंठत होइ धरनि गिर परही ॥ १९४ ॥ बहुरि कोप करि असुर अपारा । महाँकाल कह करत प्रहारा । ते बै एक रूप ह्वै जाँही । महाकाल के मध्य समाँही ॥ १९५ ॥ जिमि कोई बारि बारि पर मारैं । होत लीन तिह माँझ सुधारैं । पुनि कोई ताँहि न सकत पछानी । आगिल आहि कि मोरा पानी ॥ १९६ ॥ इह बिधि भय शसत्र जब लीना ।

समय भीषण युद्ध छिड़ गया । महाकाल ने तब कुछ क्रोधित होकर पृथ्वी पर पाँव जमा दिए ॥ १९० ॥ कितने ही मोहन-अस्त्र और वरुणास्त्र चला कर प्राणों का हरण कर लिया गया । अग्नि-अस्त्र चलाकर कितने ही वीर मृत्युलोक भेज दिए गए ॥ १९१ ॥ महाकाल ने जिस पर कृपाण चला दी उसे एक से दो टुकड़े कर दिया । जिन दो टुकड़ों पर तलवार झाड़ी उसे दो से चार टुकड़े कर दिया ॥ १९२ ॥ कितने ही वीर पड़े चिल्ला रहे थे और गीदड़-गिद्ध उनका माँस ले जा रहे थे । कहीं भैरव भभक रहे थे और कहीं प्रेतगण किलकारियाँ मार रहे थे ॥ १९३ ॥ कितने ही वीर आ एकत्र हुए और दसों दिशाओं से मार ही मार शब्द सुनाई पड़ने लगा । जो भी महाकाल पर घाव करता वह कुंठित हो स्वयं धरती पर गिर पड़ता था ॥ १९४ ॥ असुर अत्यन्त क्रुद्ध हो महाकाल पर प्रहार करते थे । वे सभी उससे एक रूप हो जाते थे और महाकाल में ही समा जा रहे थे ॥ १९५ ॥ जैसे कोई पानी में मार रहा हो वे इसी प्रकार महाकाल में ही समा जा रहे थे । तब कोई उसे पहचान न पाता था कि वह अन्य है और मिलनेवाला पानी के समान अन्य है १९६ शस्त्रों-सहित जब ऐसा हुआ तो असुर अत्यंत क्रुद्ध हो उठ

असुरन कोप अमित तब कीना । कांपत अधिक चित मो गए । शस्त्र अस्त्र लै आवत भए ।। १९७ ।। ज्वाल तजी करि कोप निसाचर । तिन ते भए पठान धनुख धर । पुनि मुख ते उलका जे काढे । ताते मुगल उपजि भे ठाढे ।। १९८ ।। पुनि रिसि तन तिन स्वास निकारे । सैयद शेख भए रिस वारे । धाए शस्त्र अस्त्र कर लैकै । तमकि तेज रन तुरी नचैकै ।। १९९ ।। खान पठान हुके रिसि कैकै । कोपि क्रिपान नगन कर लैकै । महाँकाल कौ करत प्रहारा । एक न उपरत रोम उपारा ।। २०० ।। अमित खान करि कोप सिधारे । मद करि भए सकल मतवारे । उमडे अमित मलेछन के गन । तिनके नाम कहत तुम सौ भनि ।। २०१ ।। नाहर खान झड़ाझड़ खाना । खान निहंग भड़ंग जुआना । और झड़ंग खान रन धायो । अमित शस्त्र कर लए सिधायो ।। २०२ ।। बैरम खान बहादुर खाना । बलवंड खान बडो सुर ग्याना । रुसतम खान कोप करि चलो । लीने अमित सैन संग भलो ।। २०३ ।। हसन खान हुसैन खान भन । खान मुहंमद (मू०ग्रं०१३७३) लै मलेछ गन । शमशखान समसरो खाना । चले पीस करि दाँत जुआना ।। २०४ ।। आवत ही किए बान प्रहारा । महाँकाल

वे चित्त में कांप उठे और अस्त्र-शस्त्र ले आए ।। १९७ ।। असुर ने कुपित हो ज्वाला फेंकी, जिससे धनुषधारी पठान पैदा हो गए। उन्होंने पुनः जब मुख से ज्वाला निकाली तो उससे मुगल उत्पन्न हो गए ।। १९८ ।। पुनः क्रुद्ध हो उन्होंने मुँह से श्वास निकाला और शेख-सय्यद पैदा हो गए। वे तेज घोड़े नचाते हुए अस्त्र-शस्त्र लेकर टूट पड़े ।। १९९ ।। पठान, खान नंगी कृपाणें लेकर और क्रुद्ध होकर टूट पड़े। वे महाकाल पर प्रहार करते थे पर उसका एक भी रोम न उखाड़ पाते थे ।। २०० ।। अनेकों खान कुपित हो दौड़े और सभी मदिरापान कर मतवाले थे। म्लेच्छों के अनेकों सेवक उमड़ पड़े और अब मैं उनके नाम तुम्हें बतलाता हूँ ।। २०१ ।। नाहरखान, झड़ाझड़खान, निहंग और भड़ंगखान वहाँ थे। झड़ंगखान युद्ध के लिए चला और अनेकों शस्त्र लेकर आगे बढ़ा ।। २०२ ।। वहाँ बैरमखान, बहादुरखान और बलवंडखान जैसे चतुर शूरवीर थे। रुस्तम खान कुपित होकर अपरिमित सेना साथ लेकर चल पड़ा ।। २०३ ।। हसनखान, हुसैनखान, खान मुहम्मद और शमसखान तथा शमशेरखान जवान दाँत पीसकर चल पड़े २०४ आते ही इन्होंने बाणों से

कह चहत सँघारा । महाँकाल सर चलत निहारे । टूक सहंस्र प्रिथी करि डारे ॥ २०५ ॥ डारे सत सत टूक प्रिथी करि। महाँकाल करि कोप अमित सर । इक इक सन तन बहुरि प्रहारे । गिरे पठान सु भूमि मँझारे ॥ २०६ ॥ काटि निहंगक राखा द्वै धर । मारे अमित झड़ाझड़ खाँ सर । खान भड़ंग बहुरि रन मारे । देखत चारण सिद्ध हजारे ॥ २०७ ॥ नाहर खाँ गैरत खाँ मारा । बलवंड खाँ का सीस उतारा । शेर खान कटि ते कटि डार्‌यो । बैरम खाँ गहि केस पछार्‌यो ॥ २०८ ॥ पुनि करि कोप बहादुर खाना । छाडे तबै बिसिख रिसि नाना । महाँकाल कुप बान प्रहारो । गिर्‌यो कहाँ लौ लरै बिचारो ॥ २०९ ॥ इह बिधि हठी पठानी सैना । मुगलन परा भद्धि कछु भैना । छिनकिक मों बहु सुभट गिराए । जानु इंद्र परबत से घाए ॥ २१० ॥ बैरमबेग मुगल कौ मारा । यूसफ़ खाँ कटि तें कटि डारा । ताहिर बेग टिका संग्रामा । अंत गिर्‌यो भिरिकै द्वै जामा ॥ २११ ॥ नूरमबेग बहुरि रिसि मार्‌यो । आदिलबेगहि बहुरि

प्रहार किया और महाकाल को मारना चाहा । महाकाल चलते हुए बाणों को देखता और उनके हजारों टुकड़े करके पृथ्वी पर फेंक देता था ॥ २०५ ॥ उसने सैकड़ों को टुकड़ों में बाँटकर पृथ्वी पर फेंक दिया । महाकाल ने बाणों पर अपरिमित क्रोध किया । अब उसने तान कर एक-एक बाण चलाया और पठान धरती पर गिर पड़े ॥ २०६ ॥ उसने वीरों को दो टुकड़ों में काट डाला और झड़ाझड़ खान को भी बाणों से मार डाला । चारण और सिद्धों के देखते-देखते भड़ंग खान को भी मार डाला ॥२०७॥ नाहर खाँ, गैरत खाँ को मार डाला और देखते-देखते बलवंड खाँ का सिर उतार फेंका । शेर खाँ को कमर से काट डाला और बैरम खाँ को केशों से पकड़कर पछाड़ फेंका ॥ २०८ ॥ तब बहादुर ख़ाँ ने कुपित हो अनेकों बाण छोड़े । फिर महाकाल ने कुपित हो बाण से वार किया और वह बेचारा कहाँ तक लड़ता, आखिर गिर पड़ा ॥ २०९ ॥ इस प्रकार पठानी सेना हट गई पर मुगलों में अभी कुछ भी भय न फैला । पुनः क्षण भर में अनेकों वीरों को ऐसे गिरा दिया गया मानों इन्द्र ने पर्वतों के पंख काट डाले हों ॥ २१० ॥ बैरमबेग मुगल को मार दिया और यूसुफ़ खाँ को कमर से काट डाला । ताहिरबेग युद्ध में टिका रहा पर अन्त में दो प्रहर बीतने पर वह भी गिर पड़ा २११ पुन क्रुद्ध हो नूरमबेग को मार

प्रजार्यो। त्रासित भई म्लेछी सैना। आयुध सका हाथ कोई लै ना॥ २१२॥ भजे पठान मुगल हूँ भाजे। सैयद आनि दसौ दिसि गाजे। फिरे पठान बिमन जे भए। बहुरि धनुक्ख टँकोरत गए॥ २१३॥ आवत ही हुसैन खाँ जूझा। हसन खान सनमुख ह्वै लूझा। बहुरि मुहंमद खाँ लरि मरियो। जानक सलभ दीप महि परियो॥ २१४॥ सैद हुसैन कोप करि गरजो। जाफर सैद रहा नहि बरजो। लोह प्रजंत बान तनि मारे। भए लीन नहि बहुरि निहारे॥ २१५॥ बहुरो अमित कोप कह करिकै। छाडे बिसिख धनुख कौ धरिकै। छूटत भए सलभ की जिमि सर। लीन भए नहि लखे द्रिगन करि॥ २१६॥ इह बिधि मारि सैयदी सैना। शेख फौज भाजी बिनु चैना। महाकाल जब भजे निहारे। बिसिख कोप नहि ताहि प्रहारे॥ २१७॥ बहुरौ भिरे शेख भरि लाजा। लै लै शस्त्र अस्त्र सभ साजा। जिमि म्रिग बध म्रिगपति कौ तकहीं। (मू०ग्रं०१३७४) झखि झखि गिरत मारि नहि सकहीं॥ २१८॥ शेख फरीद हना ततकाला। शेख उजैन

डाला और आदिलबेग को जला डाला। म्लेच्छ सेना भयभीत हो उठी और कोई भी हाथ में शस्त्र न पकड़ सका॥ २१२॥ पठान और मुगल भाग खड़े हुए और अब सैयद दसों दिशाओं से गर्जन करने लगे। अब बेमन हो चुके पठान भी मुड़ आए और पुनः धनुषों को खींचने लगे॥ २१३॥ आते ही हुसैन खाँ जूझ गया और हसन खाँ भी सामने होकर लड़ मरा। फिर मुहम्मद खाँ ऐसे लड़ मरा जैसे पतंगा दीपक में गिर पड़ा हो॥ २१४॥ सैयद हुसैन कुपित हो गरजने लगा और जाफ़र सैयद भी अब रुका न रह सका। उसके तन में भी लोहे के बाण मारे गए जो उसके शरीर में ही घुस गए और पुनः नहीं देखे गए॥ २१५॥ पुनः अपरिमित क्रोध करके धनुष पर बाण चढ़ाकर छोड़ दिए गए। वे पतंगों की तरह छूटे और फिर आँखों से दिखाई नहीं दिए॥ २१६॥ इस प्रकार जब सैयदी सेना मारी जा चुकी तो शेखों की फ़ौज बेचैन होकर दौड़ पड़ी। महाकाल ने जब उन्हें दौड़ते हुए देखा तो क्रोधित होकर उन पर बाण नहीं चलाए॥ २१७॥ शेख पुनः लज्जा से भरकर भिड़ने लगे और अस्त्र-शस्त्र लेकर युद्ध करने लगे। जैसे मात्र हिरन मारनेवाला शेर को देखता ही रह जाता है और झख मारकर गिर पड़ता है पर उसे मार नहीं सकता, यही सब उनका हाल था २१८ फरीद शेख और शेख

हना बिकराला । शेख अमानुल्लह पुनि मार्‌यो । शेख वली को सैन सँघार्‌यो ॥ २१९ ॥ तिल तिल पाइ सुभट कहूँ करे । चरम बरम रन मों कहूँ झरे । भखि भखि उठैं सुभट कहूँ क्रुद्धा । दारुण मच्यो ऐस तह जुद्धा ॥ २२० ॥ कहूँ कबंध फिरत सिर बिना । कहूँ सुभट गहि दाँतन त्रिना । रच्छ रच्छ कहि ताहि पुकारैं । महाँकाल जिनि हमैं सँघारैं ॥ २२१ ॥ कहूँ आनि डाकिनि डहकारैं । कहूँ मसान किलकटी मारैं । भूत पिसाच नचे बैताला । बरत फिरत बीरन कह बाला ॥ २२२ ॥ एकै अच्छ एक ही बाहा । एक चरन अरु अरध सनाहा । इह बिधि सुभट बिकट हनि डारे । पवन बली जनु रूख उखारे ॥ २२३ ॥ जिह अरि काल क्रिपान बही सिर । तिनके रही न जीव करा फिरि । जाकह काल खड़ग छ्वै गया । अरधे अरध छिनिक महि भया ॥ २२४ ॥ बही जाहि सिर सरकि सरोही । ताका रहा सीसु ह्वै दोही । जाकौ बान काल का लागा । ताके प्रान बान लै भागा ॥२२५॥ मारू बजत दोऊ दिसि ऐसे । जानुक प्रलैकाल के जैसे । गो

उज्जैन नामक विकराल वीर को तत्काल मार डाला गया । शेख अमानुल्लाह को मार डाला और शेख वली की सेना का संहार कर दिया ॥ २१९ ॥ वीरों को टुकड़े-टुकड़े कर डाला गया और युद्ध में कवच और ढालें बिखर गईं । वहाँ ऐसा दारुण युद्ध मचा कि वीर क्रोधित हो जलने लगे ॥ २२० ॥ कहीं कबंध सिर के बिना घूम रहे थे और कहीं वीरों ने दाँतों में तिनके पकड़ रखे थे (और प्राणों की भीख माँग रहे थे) । वे "रक्षा-रक्षा" की पुकार लगाते हुए महाकाल से कह रहे थे कि हमें मत मारो ॥ २२१ ॥ कहीं आकर डाकिनियाँ डकार रही थीं और कहीं प्रेतगण किलकारियाँ भर रहे थे । भूत-पिशाच-बैताल नाच रहे थे और अप्सराएँ वीरों का वरण करती घूम रही थीं ॥ २२२ ॥ वीरों की एक ही आँख, एक ही बाँह, एक ही पाँव और आधे-आधे कवच थे । इस प्रकार वीरों को मार डाला गया जैसे बली पवन ने वृक्षों को उखाड़ फेंका हो ॥ २२३ ॥ जिसके सिर पर काल की कृपाण पड़ गई उसमें फिर जीवात्मा बाकी न बची । जिसे काल का खड़्ग छू भी गया वह क्षण भर में आधे-आधे दो टुकड़ों में बँट गया ॥ २२४ ॥ जिसके सिर पर तलवार पड़ी उसका सिर दो टुकड़े हो ही गया । जिसे काल का बाण लगा उसके प्राण वही बाण ले भागा २२५ दोनों दिशाओं से मारू

मुख झाँझर तूर अपारा । ढोल म्रिदंग मुचंग हजारा ॥ २२६ ॥ घोर आयुधन इह बिधि भयो । जिह को पार न किनहूँ लयो । जेतिक असुर म्लेछुपजाए । महाँकाल छिन बीच खपाए ॥ २२७ ॥ बहुरि असुर क्रुद्धत अति भयो । अमित असुर उपराजि सु लयो । धूली करन बिदित केसी भन । घोर दाढ़ अरु स्रोनत लोचन ॥ २२८ ॥ गरधबकेत महिखधुज नामा । अरुन नेत्र उपजा संग्रामा । असिधुज निरखि असुर उपजे रन । मारत भयो दानवन के गन ॥ २२९ ॥ असिधुज कोप अधिक कह करा । सैन दानवन को रन हरा । भाँति भाँति तन शस्त्र प्रहारे । तिल तिल पाइ सुभट कटि डारे ॥ २३० ॥ इह बिधि हनी सैन असिधुज जब । काँपत भयो असुर जिय मों तब । अमित असुर रन और प्रकाशे । तिन को कहत नाम बिनु सासे ॥ २३१ ॥ गीधधुजा काक धुज राछस । उल्लूकेत बियो बड राछस । असिधुज के (मू०ग्रं०१३७५) रन समुहि सिधाए । मारि मारि चहूँ ओर उघाए ॥ २३२ ॥ बिसिखन ब्रिसटि करी कोपहि करि । जलधर ऐस बडे भूधर पर । शस्त्र अस्त्र अरि कोप प्रहारे ।

वाद्य ऐसे बज रहे थे जैसे मानों प्रलयकाल हो । गोमुख, झाँझर, तूर, ढोल, मृदंग, मुचंग आदि हज़ारों की गिनती में बज रहे थे ॥ २२६ ॥ इस प्रकार घोर युद्ध हुआ जिसका कोई भी पार न पा सका । असुरों ने जितने म्लेच्छ पैदा किए थे, महाकाल ने उन्हें क्षण भर में नष्ट कर दिया ॥ २२७ ॥ पुनः असुर क्रोधित हो उठे और उन्होंने अनेकों राक्षस पैदा कर लिये । वे धूलिकरन, केशी, घोरदाढ़ और रक्तलोचन आदि थे ॥ २२८ ॥ गर्दभकेतु, महिषध्वज, अरुणनेत्र आदि वे थे जो युद्ध में पैदा हो गए । असिध्वज (महाकाल) को दानवों को मारता देखकर युद्धस्थल मे अनेकों असुर पैदा हो गए ॥ २२९ ॥ अब असिध्वज ने अत्यधिक कुपित हो युद्ध में दानवों की सेना को समाप्त कर डाला । विभिन्न प्रकार के शस्त्रों का प्रहार कर वीरों को टुकड़ों-टुकड़ों में बाँट डाला ॥ २३० ॥ असिध्वज ने जब इस प्रकार सेना को नष्ट कर डाला तो वह असुर मन में काँप उठा । उसने अनेकों अन्य असुर युद्ध में पैदा कर लिये और अब मैं साँस रोककर उनके नाम कहता हूँ ॥ २३१ ॥ गिद्धध्वज, काकध्वज, उल्लूकेतु आदि भयानक राक्षस थे । वे असिध्वज के सामने आए और मार मार चारों ओर से चिल्लाने लगे २३२

चटपट सुभट बिकटि करि डारे ॥ २३३ ॥ हुअँ शबद असिधुजहि उचारा । तिह ते आधि ब्याधि बपु धारा । सीत ज्वरअर उसन ताप भन । छई रोग अरु संन्यपात गन ॥२३४॥ बाइ पितय कफ उपजत भए । ताते भेद अमित ह्वै गए । नाम तिनै गन प्रगट सुनाऊँ । अयुर बेदियन सभन रिझाऊँ ॥ २३५ ॥ आम पात अर स्रोनत पात । अरध सिरा अरु ह्रिदै सँघात । प्रान बाइ आपान बाइ भनि । दंत रोग अरु दाड़ पीड़ गन ॥ २३६ ॥ सूखा ज्वर तेइया चौथाया । असट दिवसयो अरु बीसाया । डेढ मासिया पुनि तप भयो । दाँत काढ दैतन पर धयो ॥ २३७ ॥ फील पाव पुनि जानू रोगा । उपजा देन दुशट दल सोगा । खई सु बादी भई मवेसी । पाँड रोग पीनस कटि देसी ॥ २३८ ॥ चिनगि प्रमेव भगिंद्र दखूला । पथरी बाइ फिरंग अधनेला । गलत कुशट उपजा दुशटन तन । सेत कुशट केतिन के भ्यो भन ॥ २३९ ॥ केते शल सूल ह्वै मरे । केते आँत रोग ते टरे । संग्रहनी संग्रह दुशट किय । जीयन को पुनि नाम न

क्रुद्ध होकर उन्होंने बाणों की वर्षा की और वे बादलों और पहाड़ों के समान लग रहे थे। शस्त्र-अस्त्रों के प्रहार कर शीघ्र ही भयानक वीर काट डाले गए ॥ २३३ ॥ असिध्वज ने "हुंअ" शब्द का उच्चारण किया जिसे आधि और व्याधि ने शरीर धारण किया। शीत ज्वर और उष्ण ताप, क्षय रोग और सन्निपात ज्वर आदि रोग पैदा हुए ॥ २३४ ॥ वायु-पित्त-कफ आदि उत्पन्न हुए और फिर आगे उनके अनेकों भेद बन गए। अब उनके नाम सुनाता हूँ और आयुर्वेद वालों को प्रसन्न करता हूँ ॥ २३५ ॥ आमपात, श्रोणितपात, अर्धशिरा और हृदयसंघात आदि थे। वे अन्य, प्राण, अपान वायु, दंत रोग, दाढ़ दर्द थे ॥ २३६ ॥ सूखा रोग और तीसरे-चौथे का ज्वर था। फिर आठ दिनों वाला तथा बीस दिनों वाले ज्वर थे। पुनः डेढ़ मासा ज्वर दाँत निकालकर असुरों पर टूट पड़ा ॥ २३७ ॥ फिर फीलपाँव रोग दुष्टों को कष्ट देने के लिए पैदा हो गया। क्षय, बादी, पांडु रोग, पीनस और कटि देशी रोग पैदा हुए ॥ २३८ ॥ चिनगि, प्रमेह, भगन्दर, पथरी, वायुफिरंग और अधनेत्र आदि रोग भी उत्पन्न हुए। पुनः गलित कुष्ट दुष्टों के शरीर में पैदा हो गया और कितनों को श्वेत कुष्ट हो गया। ॥ २३९ ॥ कितने ही शल्य शूल से और कितने ही आँत रोग से मर गए जिन दुष्टों को संग्रहणी हो

तिन लिय ॥ २४० ॥ केते उपज सीतला मरे । केते अगिनि बाव ते जरे । भरम छित्त केते ह्वै मरे । उदर रोग केते अरि टरे ॥ २४१ ॥ जब असिधुज अस रोग प्रकासे । अधिक शत्र तापत ह्वै त्रासे । जाके तन गन दई दिखाई । तिनौ जियन की आस चुकाई ॥ २४२ ॥ केतिक दुष्ट ताप तन तपै । केतिक उदर रोग ह्वै खपै । कितकन आनि काँपनी चढी । केतिक बाइ पित्त तन बढी ॥ २४३ ॥ उदर बिकार किते मरि गए । तापति किलक ताप तन भए । कितकन संन्यपात ह्वै गयो । केतिन बाइ पित्त कफ भयो ॥ २४४ ॥ केतिक मरे मूॅड की पीरा । कितक बाइ तें भए अधीरा । केतिक छई रोग छै कियो । केतन नास बाइ तें थियो ॥ २४५ ॥ दाढ़ पीड़ केते मरि गए । बाइ भए बवरे कई भए । जिन कौ आनि रोग तन ग्रासा । ताका प्रान देह तजि नासा ॥२४६॥ (मू०ग्रं०१३७१) ॥ चौपई ॥ कहा लगे मैं बरन सुनाऊँ । ग्रंथ बढन ते अति डरपाऊँ । इह बिधि भयो दानवन नासा । खड़गखेत असु किया तमासा ॥ २४७ ॥ इह बिधि तन दानव जब मारे ।

गई उन्होंने फिर जीवित रहने का नाम न लिया ॥ २४० ॥ कितने चेचक से और वायुअग्नि से मर गए । कई भ्रम के कारण ही मर गए और कितने ही शत्रु उदररोग से मर गए ॥ २४१ ॥ जब असिध्वज ने ऐसे रोग निकाले तो शत्रु अत्यधिक भयभीत हो उठे । जिसके तन पर काल के गणों ने मुँह दिखाया उसने तो जीने की आशा ही चुका दी ॥ २४२ ॥ कितने ही दुष्टों के शरीर ज्वर से तप्त थे और कितने ही उदर रोग से नष्ट हो गए । कितनों ही को कँपकँपी चढ़ गई और अनेकों की वायु और पित्त बढ़ गई ॥२४३॥ कितने ही उदर-विकार से मर गए और कितने ही ज्वर से पीड़ित हो गए । कितनों ही को सन्निपात ज्वर हो गया और कितनों ही को वायु, पित्त और कफ हो गया ॥ २४४ ॥ कितने ही सिर-दर्द से मर गए और अनेकों ही वायुरोग से अधीर हो उठे । कितनों ही को क्षयरोग हो गया और अनेकों ही वायुरोग से नष्ट हो गए ॥ २४५ ॥ दाढ़दर्द से कितने ही मर गए और कई वायु के कारण बावले हो गए । जिन्हें अन्य रोगों ने भी ग्रस लिया, उनके शरीरों ने भी प्राण त्याग दिए ॥ २४६ ॥ ॥ चौपाई ॥ कहाँ तक मैं वर्णन करके सुनाऊँ मैं ग्रंथ के बढने से घबराता हूँ । इस प्रकार दानवों का नाश हो गया देखो खड़गकेतु ने ऐसा तमाशा किया २४७ इस

पुनि असिधुज अस मंत्र बिचारे। जो इनको ह्वैहै रन आसा। मुझै दिखैहै कवन तमासा ॥ २४८ ॥ तिन कह दीन ऐस बर दाना। तुमते होहि अवखधी नाना। जिह के तन को रोग संतावै। ताँहि अवखधी बेग जियावै ॥ २४९ ॥ इह बिधि दयो जबै बरदाना। मिरतक हुते असुर जे नाना। तिन ते अधिक अवखधी निकसी। अपने सकल गुनन कह बिगसी ॥ २५० ॥ जाके देह पित्य दुख देई। सो भखि जरी बात की लेई। जिह दानव कौ बाइ सँतावै। सो लै जरी पित्य की खावै ॥ २५१ ॥ जाकी देहिह कफ दुख ल्यावै। सो लै कफनासनी चबावै। इह बिधि असुर भए बिनु रोगा। माँडत भए जुद्ध तजि सोगा ॥ २५२ ॥ अगनि अस्त्र छाडा तब दानव। जाते भए भसम बहु मानव। बारुणास्त्र तब काल चलायो। सकल अगनि को तेज मिटायो ॥ २५३ ॥ राछस पवन अस्त्र संधाना। जाते उडत भए गन नाना। भूधरास्त्र तब काल प्रहारा। सभ सिवक नको प्रान उबारा ॥ २५४ ॥ मेघ अस्त्र छोरा पुनि दानव। भीजि गए जिह ते सभ मानव। बाइ अस्त्र लै काल चलायो। सभ

विधि से दानवों को मारकर असिध्वज ने यह विचार किया कि यदि इनको जीवित रहने की आशा होगी तो तभी ये मुझे कोई तमाशा दिखा सकेंगे ॥ २४८ ॥ तब उनको ऐसा वरदान दिया कि तुम लोगों में से ही अनेकों ओषधियाँ निकल आएँ। जिनके तन को रोग सताए उन्हें ओषधि तुरन्त प्राणदान दे ॥ २४९ ॥ जब इस प्रकार उसने वरदान दिया तो जितने मृत असुर थे उनमें से अनेकों ओषधियाँ निकलीं और अपने समस्त गुणों को लेकर प्रकाशित हुईं ॥ २५० ॥ जिसको पित्त दुख देता था, वह वायु की जड़ी खा लेता था। जिस दानव को वायु सताती थी वह पित्त की जड़ी खा लेता था ॥ २५१ ॥ जिसकी देह कफ से दुखी थी वह कफनाशक जड़ी चबा लेता था। इस प्रकार असुर निरोग हो गए और शोक को त्याग फिर युद्ध करने लगे ॥ २५२ ॥ तब दानवों ने अग्निबाण छोड़ा जिससे अनेकों मानव भस्म हो गये। तब काल वरुणास्त्र चलाया और अग्नि का प्रभाव समाप्त कर दिया ॥ २५३ ॥ राक्षसों ने पवनास्त्र से निशाना लगाया जिससे अनेकों गण उड़ गये तब काल ने और सभी सेवकों के प्राण बचाये २५४ मेघास्त्र तब दानवों ने छोड़ा जिससे

मेघन तत्काल उडायो ।। २५५ ।। राछशास्त्र राछसहि चलायो । बहु असुरन ताते उपजायो । देवतास्त्र छोरा तब काला । असुर सैन कूटा दरहाला ।। २५६ ।। जच्छ अस्त्र तब असुर चलायो । गंध्रबास्त्र लै काल बगायो । ते दोऊ आपु बीर लरि मरे । टुक टुक ह्वै भू पर पुनि झरे ।। २५७ ।। चारणास्त्र जब असुर सँधाना । चारण उपज ठाढ भे नाना । सिध असत्र असि धुज तब छोरा । ताते मुख शत्रुन को तोरा ।। २५८ ।। उरग अस्त्र लै असुर प्रहारा । ताँते उपजे सरप अपारा । खगपति अस्त्र तजा तब काला । भच्छि गए नागन दरहाला ।। २५९ ।। बिच्छू अस्त्र दानवहि चलायो । बहु बिछुयन ताते उपजायो । लशिटकास्त्र असिधुज तब छोरा । सभ ही डाँक अठूहन तोरा ।। २६० ।। शस्त्र अस्त्र अस असुर चलाए । (मू०ग्रं०१३७७) खड़गकेत पर कछु न बसाए । अस्त्रन साथ अस्त्र बहु छए । जाँको लगे लीन ते भए ।।२६१।। लीन ह्वै गए अस्त्र निहारे । हाइ हाइ करि असुर पुकारे । महा मूढ फिरि कोप बढाई । पुनि असिधुज तन करी लराई ।। २६२ ।। इह बिधि भयो घोर संग्रामा । निरखत

सभी मानव भीग गये । काल ने वायु-अस्त्र चलाया और सब मेघों को तत्काल उड़ा दिया ।। २५५ ।। असुरों ने राक्षसास्त्र चलाया और उसी से अनेकों असुर पैदा किए । तब काल ने देवतास्त्र चलाया और तत्काल असुर-सेना को कूट डाला ।। २५६ ।। तक असुरों ने यक्षास्त्र चलाया और काल ने गंधर्वास्त्र चलाया । वे दोनों वीर आपस में लड़ मरे और खड-खंड होकर पुनः धरती पर गिर पड़े ।। २५७ ।। तब असुरो ने चारणास्त्र चलाया जिससे अनेकों चारण उत्पन्न हो गये । तब असिध्वज ने सिद्धास्त्र छोड़ा और उससे शत्रुओं का मुख तोड़ दिया ।। २५८ ।। असुरों ने सर्पास्त्र छोड़ा जिससे अनेकों सर्प निकल पड़े । तब काल ने गरुड़ास्त्र छोड़ा जिससे गरुड़ तत्काल नागों का भक्षण कर गये ।। २५९ ।। तब दानवों ने बिच्छू-अस्त्र छोड़ा और उससे अनेकों बिच्छू उत्पन्न हो गए । तब असिध्वज ने लस्टिकास्त्र छोड़ा और सबके ऊपर कनखजूरों को छोड़ दिया ।। २६० ।। असुरों ने ऐसे शस्त्र-अस्त्र छोड़े पर खड्गकेतु पर कुछ भी असर न हुआ । अस्त्रों के साथ अस्त्र भिड़े और जिसको लगे उसी में समा गये ।। २६१ ।। अस्त्रों को देखकर वे उन्हीं में समा गये और असुर हाय हाय पुकारने लगे महामूर्खों ने कुपित हो पुन

देह दानवी बामा। धंन्य धंन्य असिधुज को कहैं। दानव हेरि मोन ह्वै रहैं॥ २६३॥ ॥ भुजंग छंद॥ महाँ रोस कैकै हठी फेरि गाजे। चहूँ ओर ते घोर बादित्र बाजे। प्रणो संख भेरी बजे ढोल ऐसे। प्रलैकाल के काल की रात्रि जैसे॥ २६४॥ बजे संख औ दानवी भेर ऐसी। कहै आसुरी ब्रित की क्रित जैसी। कहूँ बीर बाजंत बाँके बजावैं। मनो चित्त को कोप भाखे सुनावैं॥ २६५॥ किते बीर बज्रान के साथ पेले। भरे बस्त्र लोहू मनो फाग खेले। मूए खाइकै दुष्ट केते मरूरे। सोए जान मालंग खाए धतूरे॥ २६६॥ किते टूक टूकं बली खेत होए। मनो खाइकै भंग मालंग सोए। बिराजै कटे अंग बस्त्रो लपेटे। जुमे के मनो रोज मैगौं सलेटे॥ २६७॥ कहूँ डाकनी झाकनी हाँक मारैं। उठै नाद भारे छुटैं चीतकारैं। कहूँ घूँमि भूँमैं परे खेत बाजी। निवाजे झुकैहैं मनौ काबि काजी॥ २६८॥ हठी बद्धि गोपा गुलिखाण बाँके। चले कोप

असिध्वज (महाकाल) के साथ लड़ाई की॥ २६२॥ इस प्रकार घोर सग्राम हुआ जिसे दानव-देव-स्त्रियाँ देख रही थीं। वे असिध्वज को धन्य-धन्य कह रही थीं और दानवगण यह सब देखकर चुप लगाकर रह गए थे॥ २६३॥ ॥ भुजग छंद॥ हठी वीर महारुष्ट हो गर्जने लगे और चारों ओर घोर वाद्य बजने लगे। शंख, भेरी और ढोल आदि ऐसे बजने लगे मानों प्रलयरात्रि हो॥ २६४॥ शंख और दानवाकार भेरियाँ बजकर असुरों की युद्धप्रेरक प्रवृत्ति का परिचय दे रही थीं। कहीं बीर वाद्य बजाकर मानों चित्त के कोप को भाषा देकर सुना रहे थे॥ २६५॥ कही वीर वज्रों के साथ पिले पड़े थे और उनके रक्त-सने वस्त्र मानों उनके होली खेले होने का सकेत कर रहे थे। कितने ही दुष्ट मरोड़ खाकर मर रहे थे और ऐसे लग रहे थे मानों मलंग धतूरा खाकर लेटे हों॥ २६६॥ कितने ही बली टुकड़े-टुकड़े होकर ऐसे गिरे थे मानो मलंग भाँग खाकर गिरे पड़े हों। कटे अंग वस्त्रों में लपेटे ऐसे पड़े थे मानो जुमे (शुक्र) के दिन नमाज पढ़ रहे गौंस-फकीर अंग बिखेरे नमाज पढने के लिए लेटे पड़े हों। (कितने ही मुसलमानों का विश्वास है कि गौस सम्प्रदाय के फ़क़ीर ध्यानलीन होकर अपने अंगों को बिखरा देते हैं)॥ २६७॥ कहीं डाकिनियाँ हुंकार रही थीं और भारी नाद के साथ युद्ध में चीत्कार हो रहा था। कहीं युद्धस्थल में घोड़े घूमकर गिरे पडे थे वीर ऐसे लग रहे थे मानो काबे मे नमाज पढने के लिए झुके क़ाजी

कैकै हठीले निसाँके । कहूँ चरम बरमैं गिरे भरम छेदे । कहूँ मास के गिद्ध लै गेल बेदे ॥ २६९ ॥ कहूँ बीर बाजी बजंती झरे हैं । कहूँ खंड खंड ह्वै सिपाही मरे हैं । कहूँ मत्त दंती परे हैं प्रहारे । गिरे भूमि पब्बै मनो बज्र मारे ॥ २७० ॥
॥सवैया॥ काढि क्रिपान जबै गरज्यो लखि देव अदेव सभै डरपाने । आनि प्रलै दिन सो प्रगट्यो सित साइक लै असिकेतु रिसाने । फूक भए मुख सूखि गई थुकि जोरि हथ्यार करोरि पराने । मानहु सावन के बदरा सुनि मारुति की धहरैं भहराने ॥२७१॥ डाकि अचैं कहूँ स्रोन डकाइक प्रेत पिसाच कहूँ किलकारैं । बाजत हैं कहूँ डौरू डमाँडम भैरव भूत कहूँ भभकारैं । जंग म्रिदंग उपंग बजैं कहूँ भीखन सी रन भेरि भकारैं । आनि अरे कहूँ बीर चटापट कोपि कटाकट घाइ प्रहारैं ॥ २७२ ॥ ऐसी बिलोकि कै मारि मची भट कोप भरे अरि ओर चहैं । (मू०ग्रं०१३७८) बरछे अरु बान कमान क्रिपान गदा बरछी तिरसूल गहैं । अरि पैं अरराइकैं घाइ करैं न टरैं बहु तीर सरीर सहैं । पुरजे पुरजे तन भे रन मै दुख ते तन मै मुख ते न

हो ॥ २६८ ॥ हठी वीर गोप, गुलत्राण आदि बाँधकर कुपित हो हठपूर्वक चल पड़ रहे थे । कहीं चमड़े की ढालें और कवच मर्मों के छिदने के बाद पड़े थे और कहीं गिद्ध मांस ले चले जा रहे थे ॥ २६९ ॥ कहीं वीर, घोड़े और वादक गिरे पड़े हैं और कहीं सिपाही खंड खंड हो मरे पड़े है । कहीं मदमस्त हाथी प्रहार खाकर पड़े थे और ऐसे लग रहे थे मानों वज्र का प्रहार खाकर पर्वत पड़े हों ॥ २७० ॥ ॥ सवैया ॥ जब वह कृपाण निकालकर गरजा तो देव-अदेव सभी भयभीत हो उठे । असिकेतु (महाकाल) साथ में धनुष-बाण लेकर प्रलय के दिन के समान आ प्रकट हुआ । सबका मुँह पीला पड़ गया, सबका गला सूख गया और करोड़ों हथियार जोड़कर ऐसे भागे मानों पवन के वेग के साथ सावन के बादल घहरा उठे हो ॥ २७१ ॥ कहीं डाकिनियाँ पेट भरकर रक्त पी रही हैं और कहीं प्रेत-पिशाच किलकारियाँ भर रहे हैं । डमरू डमाडम बज रहे हैं और भैरव भूत भभक रहे हैं । युद्ध में मृदंग, उपंग और भीषण भेरियाँ बज रही हैं । किधर से भी वीर आकर शीघ्रतापूर्वक अड़ जाते और कटाकर घाव प्रहार चल रहे थे ॥ २७२ ॥ ऐसी भीषण मारकाट देखकर शत्रुओं की ओर के वीरों ने बरछे बाण कमान कृपाण गदा बरछी, त्रिशूल आदि पकड़ लिये वे बिलबिलाकर शत्रु पर घाव करते थे और शरीर पर बाण

कहैं ।। २७३ ।। ।। अड़िल्ल ।। पीस पीस करि दाँत दुबहिया धावहीं । बज्रबान बिछूअन के बिसिख लगावहीं । टूक टूक ह्वै मरत न पगु पाछे टरैं । हो चटपट आनि बरंगनि तिन पुरखन बरैं ।। २७४ ।। चाबि चाबि करि ओठ दुबहिया रिसि भरे । टूक टूक ह्वै गिरे न पगु पाछे परे । जूझि जूझि रन गिरत सुभट समुहाइकै । हो बसे स्वरग मो जाइ परम सुख पाइकै ।। २७५ ।। ।। सवैया ।। कोप घना करिकै असुरारदन काढि क्रिपानन कौ रन धाए । हाँकि हथ्यारन लै उमडे रन कौ तजिकै पगु द्वै न पराए । मार ही मारि पुकारि हठी घन ज्यों गरजे न कछू डरपाए । मानहु सावन को रितु मै घन बूँदन ज्यों सर त्यों बरखाए ।। २७६ ।। धूल जटायु तें आदिक सूर सभै उमडे कर आयुध लैकै । कोप क्रिपान लए कर बान महाँ हठ ठानि बडो रिसिकैकै । चौपि चढ़े चहूँ ओरन ते बरियार बडे दोऊ नैन तचैकै । आनि अरे खड़गाधुज सौ न चले पगु द्वै बिमुखाहव ह्वैकै ।। २७७ ।। भारी प्रताप भरे मन मै

सहते हुए भी नहीं टलते थे । उनके शरीर खंड-खंड हो गये थे पर युद्ध मे वे मुख से तनिक भी नहीं कह रहे थे ।। २७३ ।। ।। अड़िल्ल ।। दो भुजाओंवाले (दानव) दाँत पीस-पीसकर दौड़ते थे और वज्र, बाण, बिछुआ आदि से वार करते थे । वे खंड-खंड होकर मर जाते थे, पर पैर पीछे नहीं हटाते थे और इन वीरों को तुरन्त आकर अप्सराएँ वरण कर ले रही थीं ।। २७४ ।। दाँत किटकिटाकर दानव फिर क्रुद्ध हो बढते और टुकड़े-टुकड़े होकर गिर पड़ते पर पाँव पीछे न हटाते । सम्मुख हो लड़नेवाले वीर जूझ-जूझकर गिर पड़ रहे थे और परम सुख को प्राप्त कर स्वर्ग में जा बस रहे थे ।। २७५ ।। ।। सवैया ।। राक्षसगण अत्यधिक क्रुद्ध हो तलवारें निकालकर युद्ध के लिए दौड़ पड़े । वे शस्त्र ले उमड़ पडे और युद्ध छोड़कर दो क़दम भी पीछे नहीं हटे । वे हठी मार-मार पुकार कर, निर्भय होकर बादल की तरह गरज रहे थे । बाण वे ऐसे बरसा रहे थे मानों सावन में बादल गरजकर जल की बूँदें बरसा रहे हों ।। २७६ ।। धूल, जटायु आदि शूरवीर हाथों में शस्त्र लेकर उमड़ पड़े । उन्होंने कुपित हो हाथों में कृपाण और बाण आदि ले लिये । बड़े-बड़े वीर दोनों आँखें फैलाकर चारों ओर से उमड़ पड़े । वे खड्गध्वज (महाकाल) के साथ आ भिड़े और दो कदम भी युद्ध से विमुख नहीं हुए २७७ मन में भारी ताप लेकर वीर विविध प्रकार के शस्त्र लेकर टूट पड़े उन्होंने

भट धाइ परे बिबिधायुध लीने । कौच क्रिपान कसे सभ साजन ओठन चाबि बडी रिसि कीने । आछे कुलान बिखै उपजे सभ कौनहूँ बात बिखै नहि हीने । जूझि गिरे खड़गाधुज सौ लरि स्रोनित सो सिगरे अंग भीने ॥ २७८ ॥ ॥ चौपई ॥ इह बिधि कोप काल जब भरा । दुशटन को छिन मै बधु करा । आपु हाथ दै साध उबारे । शत्रु अनेक छिनक मो टारे ॥ २७९ ॥ असिधुज जू कोपा जब ही रन । मारत भयो शत्रगन चुनि चुनि । सभ सिवकन कह लिओ उबारा । दुशट गनन को करा प्रहारा ॥ २८० ॥ इह बिधि हने दुशट जब काला । गिरि गिरि परे धरनि बिकराला । निज हाथन दै संत उबारे । शत्रु अनेक तनिक महि मारे ॥ २८१ ॥ दानव अमित कोप करि ढुके । मारहि मारि दसौ दिसि कूके । बहुरि काल कुपि खड़ग सँभारा । शत्र सैन पल बीच प्रहारा ॥ २८२ ॥ (मू०पं०१३७९) बहुरि कोप करि दुशट अपारा । महाँकाल कौ चहत सँघारा । जिमि गगनहि कोई बान चलावै । ताहि न लगै तिसी पर आवै ॥ २८३ ॥ भाँति भाँति बादित्र बजाइ । दानव निकट पहूचे आइ । महाँकाल तब बिरद सँभारो । संत उबारि

कवच-कृपाण सजा रखे थे और क्रोध में वे ओंठ चबा रहे थे । वे सभी अच्छे कुलों में पैदा हुए थे और किसी भी बात में हीन नहीं थे । वे खड्गध्वज से लड़कर जूझ गिरे और उनके अंग रक्त से भीगे हुए थे ॥ २७८ ॥ ॥ चौपाई ॥ इस प्रकार काल जब क्रोध से भर उठा तो उसने दुष्टों का वध कर दिया । स्वयं सहारा देकर उसने साधुओं को उबार लिया और क्षण भर में शत्रुओं को मार डाला ॥ २७९ ॥ जब असिध्वज रण में कुपित हो उठा तो उसने चुन-चुनकर शत्रुओं को मार डाला । उसने सब सेवकों को उबार लिया और दुष्टों पर प्रहार किया ॥ २८० ॥ इस प्रकार काल ने जब दुष्टों को मारा तो वे विकराल रूप से धरती पर गिर पड़े । अपने हाथों से संतों को बचा लिया और तनिक से समय में अनेकों शत्रुओं को मार डाला ॥ २८१ ॥ दानव अपरिमित क्रोध कर एकत्र हो गए और दसों दिशाओं से मार-मार चिल्लाने लगे । पुनः काल ने कुपित हो खड्ग सँभाल लिया और शत्रु-सेना पर उससे वार किया ॥ २८२ ॥ पुनः अनेकों शत्रु कुपित होकर महाकाल को मारना चाहते थे जैसे ही कोई आकाश में बाण चलाता था वह महाकाल को न लगकर उसे ही आ लगता था २८३ अनेकों

दोखियन मारो ॥ २८४ ॥ खंड खंड करि दानव मारे। तिल तिल प्राइ सकल करि डारे। पावकास्त्र कलि बहुरि चलायो। सैन असुर को सगल गिरायो ॥ २८५ ॥ बरुणास्त्र दानव तब छोरा। जाँते पावकास्त्र कहु मोरा। बास्वास्त्र तब काल चलायो। इंद्र प्रतच्छ ह्वै जुद्ध मचायो ॥ २८६ ॥ दानव निरखि ठाढ रन बासव। पीवत भयो कूप द्वै आसव। करिकै कोप अतुल अस गरजा। भूँमि अकाश शबद सुनि लरजा ॥ २८७ ॥ अमित बासवहि बान प्रहारे। बरम चरम सभ भेदि पधारे। जनुक नाग बाँबी धसि गए। भूतल भेदि पतार सिधए ॥ २८८ ॥ अमित रोस बासव तब किया। धनुख बान कर भीतर लिया। अमित कोप करि बिसिख प्रहारे। फेरि दानवन पार पधारे ॥ २८९ ॥ दानव अधिक रोस करि धाए। देव पूज रन माँझ भजाए। भजत देव निरखे कलि जबही। शस्त्र अस्त्र छोरे रन तबही ॥ २९० ॥ बानन की बरखा कलि करी। लागत सैन दानवी जरी। शत्र

वाद्य बजाते हुए दानव उसके पास आ पहुँचे। महाकाल ने तब अपने स्वभाव के अनुसार संतों को बचाया और दुष्टों को मार डाला ॥ २८४ ॥ खड-खंड कर दानवों को मार डाला और प्रायः सबको तिल-तिल कर दिया। काल ने आग्नेयास्त्र चलाकर असुरों की समस्त सेना को गिरा दिया ॥ २८५ ॥ तब दानवों ने वरुणास्त्र छोड़ा जिससे पावकास्त्र को वापस मोड़ दिया। तब काल ने बासवास्त्र चलाया जिससे इन्द्र प्रत्यक्ष होकर युद्ध करने लगा ॥ २८६ ॥ दानव इन्द्र को युद्ध में देखकर दो कुएँ आसव (शराब) पी गया। अब वह अपरिमित क्रोध करके गरजा जिसके शब्द से भूमि और आकाश काँपने लगे ॥ २८७ ॥ बासव (इन्द्र) ने अनेकों बाणों से प्रहार किया। उसके बाण कवच, ढाल सबको छेदकर पार निकल गए। मानों नाग अपनी बाँबी में धँस गए हों और भूमि को छेदकर पाताल में चले गए हों ॥ २८८ ॥ बासव ने तब अपरिमित रूप से क्रुद्ध होकर धनुष-बाण हाथ में लिया। उसने अपार क्रुद्ध हो बाणों से वार किया जो कि दानवों को फाड़कर पार निकल गए ॥ २८९ ॥ दानवों ने अत्यधिक क्रोध से आक्रमण किया और देवताओं को युद्ध में भगा दिया। काल ने जब देखा कि देवगण भाग रहे हैं तो उसने युद्ध में सारे अस्त्र छोड दिये २९० काल ने बाणों की वर्षा की जिससे दानवी सेना जल उठी अनेकों शत्रु मरे पर उनसे अनेकों फिर पैदा होकर खड़

अनेक निधन कह गए । बहुरि उपजि बहु ठाढे भए ।। २९१ ।। बहुरि काल कुपि बान प्रहारे । बेधि दानवन पार पधारे । दानव तबै अधिक करि क्रुद्धा । मंडा महाँकाल तन जुद्धा ।। २९२ ।। महाँकाल तब बान प्रहारे । दानव एक एक करि मारे । तिन ते बहु उपजित रन भए । महाँकाल के समुहि सिधए ।। २९३ ।। जेतिक धए तितक कलि मारे । रथी गजी तिल तिल करि डारे । तिनते उपजि ठाढ भे घने । रथी गजी बाजी सुभ बने ।। २९४ ।। बहुरि काल करि कोप प्रहारे । दैत अनिक म्रितु लोक पधारे । महाँकाल बहुरौ धनु धरा । सौ सौ बान एक इक हरा ।। २९५ ।। सौ सौ एक एक सर मारा । सौ सौ गिरी स्रोन की धारा । सत सत असुर उपजि भे ठाढे । असी गजी कौची बल गाढे ।। २९६ ।। रूप हजार हजार धारि कलि । गरजत भयो (मू०ग्रं०१३८०) अतुल करि कै बल । कहकह हसा काल बिकराला । काढै दाँत तजत मुख ज्वाला ।। २९७ ।। एक एक रन बान चलायो । सहस सहस दानब कह घायो । केतिक सुभट दाढ़ गहि चाबे । केतिक सुभट पाव तर दाबे ।। २९८ ।। केतक पकरि भच्छ

हो गये ।। २९१ ।। काल ने फिर कुपित हो बाण मारे जो दानवों को छेदकर पार कर गये । दानवों ने तब अत्यधिक क्रुद्ध हो महाकाल से युद्ध छेड़ दिया ।। २९२ ।। महाकाल ने तब बाणों से प्रहार कर एक-एक दानव को मार डाला । उनसे अनेकों उत्पन्न हो फिर महाकाल के सामने आ गए ।। २९३ ।। जितने भी आए उतनों को ही काल ने मार डाला और रथी, गजी सबको टुकड़े-टुकड़े कर डाला । उनसे फिर पैदा होकर रथी, गजी, घुड़सवार बन गए ।। २९४ ।। पुनः काल ने कुपित हो प्रहार किया और अनेकों दैत्य मृत्युलोक चले गए । महाकाल ने पुनः धनुष पकड़ा और सौ-सौ बाण उस पर चढ़ा लिये ।। २९५ ।। उसने सौ-सौ को एक-एक बाण मारा जिससे सौ-सौ रक्त की धाराएँ बह निकलीं । उससे फिर सौ-सौ असुर पैदा हो गए और वे अश्वारोही, गजी और कवचधारी वीर बन गए ।। २९६ ।। हज़ार-हज़ार रूप धारण कर काल अपरिमित बल धारण कर गरजने लगा । काल क़हक़हा लगाकर हँसा । उसने दाँत निकाले और मुख से ज्वाला निकालने लगा ।। २९७ ।। उसने युद्ध में एक एक बाण चलाया और हज़ार-हज़ार दानवों को मार डाला कितने ही वीरों को दाढ़ में चबा लिया और कितने ही वीरों को पाँव के

करि लयो। तिन ते एक न उपजत भयो। कितकन द्रिशटा करखन कीयो। सभहिन को स्रोनित हरि लीयो॥ २९९॥ स्रोन रहित दानव जब भयो। दैत पराजन ते रहि गयो। स्रमित अधिक ह्वै छाडत स्वासा। ताते करत दैत परगासा॥ ३००॥ पवना करख करा तब काला। घटे बढन ते अरि बिकराला। इह बिधि जब आकरखन कीया। सभ बल हरि असुरन का लीया॥ ३०१॥ मारि मारि जो असुर पुकारत। तिह ते अमित दैत तन धारत। बाचा करख काल तब कयो। बोलन तें दानव रहि गयो॥ ३०२॥ दानव जब बोलहि रहि गयो। चिंता करत चित्त मो भयो। ताही तें दानव बहु भए। सनमुख महाँकाल के धए॥ ३०३॥ शस्त्र अस्त्र करि कोप प्रहारे। महाँबीर बरियार डरारे। महाँकाल तब गरज सँभारी। बहुतन की मेधा कढि डारी॥ ३०४॥ तिन की भुअ मेजा जो परी। ताँते सैन देह बहु धरी। मारि मारि करि कोप अपारा। जागत भए असुर बिकरारा॥ ३०५॥ तिनको फोरि मूँडि कलि डरे। ताते मेधा जो भुअ परे। मारि मारि कहि असुर जगे रन।

तले दबा डाला॥ २९८॥ कितनों को ही पकड़कर खा गया और फिर उनमें से एक भी पैदा नहीं हुआ। अनेकों को दृष्टि से खींचकर उन सबका खून चूस लिया॥ २९९॥ जब दानव रक्त-विहीन हो गया तो वह दैत्य उत्पन्न करने की स्थिति में नहीं रह गया। अब वह थककर श्वास छोड़ता था जिससे दैत्य पैदा होते जाते थे॥ ३००॥ तब काल ने पवन को आकर्षित किया जिससे विकराल शत्रु बढ़ने से रुक गये। जब इस प्रकार आकर्षण किया गया तो असुरों का बल हरण कर लिया॥ ३०१॥ असुर जब मार-मार पुकारते थे तो अनेकों दैत्य शरीर धारण करते जाते थे। जब वाणी का आकर्षण किया गया तो दानव बोलने से जाता रहा॥ ३०२॥ जब दानव बोल नहीं पा रहा था तो वह चित्त मे चिंतातुर हो उठा। उसी से अनेकों दानव पैदा हुए और काल के सामने दौड़ पड़े॥ ३०३॥ वे महाबली, विकराल वीर क्रुद्ध हो अस्त्र-शस्त्र ले टूट पड़े। महाकाल ने तब गरजकर अनेकों की मेधा निकाल डाली॥ ३०४॥ उनकी मेधा जब धरती पर पड़ी तो उससे बहुत-सी सेना पैदा हुई। क्रुद्ध हो मार मार कहते विकराल दानव जग उठे ३०५ काल ने उनके सिर फोड डाले और उनमें से मेधा भूमि पर

सूरबीर बरियार महाँ मन ॥ ३०६ ॥ पुनि करि काल गदा रिसि धरी । सत्रु खोपरी तिल तिल करी । जेते टूक खोप्रियन परे । तेतिक रूप दानवन धरे ॥३०७॥ केतिक गदा पान गहि धाए । केतिक खड़ग हाथ लै आए । मारि मारि कै कोपहि सरजे । मानहु महाँकाल घन गरजे ॥ ३०८ ॥ आनि काल कह करत प्रहारा । इक इक सूर सहस हथियारा । महाँकाल कह लगत न भए । तामहि सभै लीन ह्वै गए ॥ ३०९ ॥ शस्त्र लीन लखि असुर रिसाने । शस्त्र अस्त्र लै कोपि सिधाने । अमित कोप करि शस्त्र प्रहारत । मारि मारि दिसि दसौ पुकारत ॥ ३१० ॥ मारि मारि को सुनि धुनि काना । कोपा काल शस्त्र गहि नाना । हाँकि हाँकि (मू०ग्रं०१३८१) हथियार प्रहारे । दुसट अनिक पल बीच सँघारे ॥३११॥ तिन ते मेद माँस जो परो । ता ते बहु असुरन तन धरो । मारि मारि कहि समुहि सिधाए । बाँधे चुंग चौपि तन आए ॥ ३१२ ॥ इक इक टूक सहस करि डारे । तिन तें भए असुर रन भारे । तिनके टूक टूक करि लच्छन ।

गिर पड़ी । वे शूरवीर विकराल दानव मार-मार करते हुए युद्ध में जीवित हो खड़े हो गए ॥ ३०६ ॥ पुनः काल ने क्रोधित हो गदा पकड़ी और शत्रुओं की खोपड़ी चूर-चूर कर दी । खोपड़ियों के जितने टुकड़े हुए उतने ही रूप दानवों ने धारण कर लिये ॥ ३०७ ॥ कितने ही हाथ में गदा और कितने ही हाथ में खड्ग लेकर आ पहुँचे । मार-मारकर वे कुपित होते थे और ऐसे लग रहे थे मानों महाकाल बादल के समान गरज रहा हो ॥ ३०८ ॥ एक-एक वीर हजारों शस्त्र लेकर आ-आकर काल पर प्रहार करता था । महाकाल को कुछ नहीं लगता था और सभी शस्त्र उसी में लीन हो जाते थे ॥ ३०९ ॥ शस्त्रों को लीन होते देखकर असुर क्रुद्ध हो उठे और अस्त्र-शस्त्र ले गुस्से से चल पड़े। शस्त्र लेकर अपरिमित क्रोध के साथ वे वार कर रहे थे और मार-मार दसों दिशाओं से पुकार रहे थे ॥ ३१० ॥ मार-मार की ध्वनि सुनकर काल अनेकों शस्त्र लेकर कुपित हो उठा । हाँक-हाँककर उसने शस्त्र चलाए और पल भर में अनेकों दुष्टों का संहार कर दिया ॥ ३११ ॥ उनसे जो मेदा और मांस गिरा उससे बहुत से असुरों ने शरीर धारण कर लिया । वे मार-मार कहते हुए सामने की ओर दौड़े और चौकड़ियाँ भरने लगे ३१२ एक एक के हजारों टुकड़े कर दिए गये जिनसे रण में अन्य भारी असुर

गीध पिसाच गए करि भच्छन ॥ ३१३ ॥ ते भी अमित रूप करि धाए । जे तिल तिल करि सुभट गिराए । तिनकी करी नास सभ सैना । महाँकाल कर रंचक भैना ॥ ३१४ ॥ मारि मारि जोधा कहूँ गाजहि । जंबुक गीध मास लै भाजहि । प्रेत पिसाच कहूँ लिलकारहि । डाकनि झाकि किलकटी मारहि ॥ ३१५ ॥ कोकिल काक जहाँ किलकारहि । स्रोनत के केसर घसि डारहि । जानुक ढोल बडे डफ सोहै । देव दैत दानव मन मोहै ॥ ३१६ ॥ बान जान कुंकमा प्रहारे । मूठि गुलालन बरछा भारे । ढाल मनो डफमाला बनी । पिचुकारियैं तुफंगैं घनी ॥ ३१७ ॥ इह बिधि भयो घोर संग्रामा । काँपा इंद्र चंद्र को धामा । पसु पंछी अति ही अकुलाए । छोडि धाम काननहि सिधाए ॥ ३१८ ॥ बाजी कहूँ घाइल भभकावत । उठि उठि सुभट समुह कह धावत । कहकहाट कहूँ काल सुनावैं । भीखन सुने नाम भै आवैं ॥ ३१९ ॥ सूरन के लोमा भे खरे । कातर निरखि धाम रन बरे । सोफी सूम भए बहु ब्याकुल । दसो दिसन भजि चले डराकुल ॥ ३२० ॥

पैदा हो गये । उनके लाखों टुकड़े गिद्ध-पिशाच खा गए ॥ ३१३ ॥ जो वीर तिल-तिल काट गिराए गए थे वे भी अनेकों रूप धारण कर आ उपस्थित हुए । महाकाल ने रंच मात्र भी भय न मानकर उनकी समस्त सेना का नाश कर दिया ॥ ३१४ ॥ योद्धागण कहीं मार-मार की गर्जना कर रहे थे और गीदड़, गिद्ध मांस लेकर भाग रहे थे । कहीं प्रेत-पिशाच ललकार रहे थे और कहीं डाकिनियाँ किलकारियाँ मार रही थीं ॥ ३१५ ॥ कोकिल और कौए जहाँ किलकारियाँ मार रहे थे वहाँ रक्त का केसर डाला जा रहा था । बड़ी-बड़ी डफलियाँ ढोलों के समान शोभायमान हो रही थीं और देव-दैत्य सबका मन मोह रही थीं ॥ ३१६ ॥ बाण मानों कुंकुम थे और बरछे मानों गुलाल की मुट्ठी थे । ढाल मानों डफली बन गई थी और तुफंग (बंदूक़) मानों पिचकारी बनी हुई थी ॥ ३१७ ॥ इस प्रकार घोर संग्राम हुआ और इन्द्र-चन्द्रलोक भी काँप उठा । पशु-पक्षी भी अत्यंत व्याकुल हो उठे और घरों को छोड़कर जंगल में चले गये ॥ ३१८ ॥ कहीं घायल अश्व भभक रहे थे और कहीं वीर उठ-उठकर सामने की ओर दौड़ रहे थे । कहीं काल का अट्टहास सुनाई पड़ रहा था और उसका भीषण नाम सुनने से ही भय लगता था ॥ ३१९ ॥ शूरवीरों के तो रोम बाल रोमांच के कारण खड़े हो गए और डरपोक [illegible]

केतिक सुभट पाव ले रोपैं। लै लै खड़ग नगन करि धोपैं। महाँकाल कुपि शस्त्र प्रहारे। साध उबारि दुशट सभ मारे॥ ३२१॥ ॥ भुजंग छंद॥ मचे आनि मैदान मै बीर भारे। दिखै कौन जीतै दिखै कौन हारे। लए सूल औ सेल काती कटारी। चहूँ ओर गाजे हठी बीर भारी॥ ३२२॥ बजे घोर संग्राम मों घोर बाजे। चहूँ ओर बाँके रथी बीर गाजे। लए सूल औ सेल काती कटारे। मचे कोप कै कै हठीले रज्यारे॥ ३२३॥ कहूँ धूल धानी छुटैं फील नालै। कहूँ बाज नालैं महाँ घोर ज्वालैं। कहूँ संख भेरी प्रणो ढोल बाजै। कहूँ सूर ठोकैं भुजा भूप गाजैं॥ ३२४॥ कहूँ घोर बादित्र बाजैं नगारे। कहूँ बीर बाजी गिरे खेत मारे। कहूँ खेत नाचैं पठै (पृ०ग्रं०१३८२) पक्खरारे। कहूँ सूर संग्राम सोहैं डरारे॥ ३२५॥ कहूँ बाज मारे कहूँ झूम हाथी। कहूँ फैंट भाथी जुझे बाँधि साथी। कहूँ गरजि ठोकैं भुजा भूप भारे। बमै स्रोन केते गिरे खेत मारे॥ ३२६॥ ॥चौपई॥ इह बिधि

में जा घुसे। नशेड़ी और कृपण सभी व्याकुल हो उठे और कायर दसों दिशाओं में भाग निकले॥ ३२०॥ कितने ही वीर पाँव जमाकर खड़े हो गए और नंगी तलवारों को घुमाने लगे। महाकाल ने कुपित हो शस्त्रों से प्रहार किया और संतों का उद्धार कर सभी दुष्टों को मार दिया॥३२१॥ ॥ भुजंग छंद॥ मैदान में बली वीर टूट पड़े। अब देखें कौन जीतता और कौन हारता है। शूल, काती और कटारें लेकर चारों ओर हठी वीर गर्जन करने लगे॥ ३२२॥ उस घोर संग्राम में घोर वाद्य बजने लगे और चारों ओर बाँके रथी गरजने लगे। शूल, काती, कटार लिये हठीले राजागण कुपित हो युद्ध करने लगे॥ ३२३॥ कहीं धूल उड़ाते हाथी छुट्टा घूम रहे थे। कहीं घोड़ों की टापों से अग्नि की घोर चिंगारी रूपी ज्वालाएँ उठ रही थीं। कहीं शंख, भेरी, ढोल आदि बज रहे थे और कहीं शूरवीर भुजाएँ ठोंक रहे थे और राजागण गरज रहे थे॥ ३२४॥ कहीं घनघोर वाद्य, नगाड़े आदि बज रहे थे और कहीं युद्धस्थल में वीर और उनके घोड़े गिर पड़े थे। कहीं युद्ध में अश्व नाच रहे थे और कहीं भयानक शूरवीर संग्राम में शोभायमान हो रहे थे॥ ३२५॥ कहीं घोड़े और झूमते हाथी मारे हुए पड़े थे और कहीं कमर में पट्टे बाँधे साथी वीर पड़े थे कहीं भारी राजागण गर्जना कर भुजाएँ ठोंक रहे थे और कहीं

असुर जबै चुनि मारे। अमित रोस करि और सिधारे। बाँधे फैट बिराजैं भाथी। आगै चले अमित धरि हाथी ॥ ३२७ ॥ साथ लए अनगन पखरारे। उमडि चले दै ढोल नगारे। संख झाँझ अरु ढोल बजाइ। चमकि चले चौगुन करि चाइ ॥३२८॥ डवरू कहूँ गुड़गुड़ी बाजैं। ठोकि भुजा रन यों भट गाजैं। मुरज उपंग मुरलियै घनी। भेर झाँज बाजैं रुन झुनी ॥ ३२९ ॥ कही तूँबरे बजैं अपारा। बेन बाँसुरी कहूँ हजारा। शुतरी फील नगारे घने। अमित कान्ह रे जात न गने ॥ ३३० ॥ इह बिधि भयो जबै संग्रामा। निकसी दिन दूलह ह्वै बामा। सिंघ बाहनी धुजा बिराजै। जाहि बिलोक दैत दल भाजै ॥ ३३१ ॥ आवत ही बहु असुर सँघारे। तिल तिल प्राइ रथी करि डारे। काटि दई केतिन की धुजा। जंघा पाव सीस अरु भुजा ॥ ३३२ ॥ भाँति भाँति तन सुभट प्रहारे। टूक टूक करि प्रिथी पछारे। केसन तें गहि कितन पछारा। शत्रु सैन तिल तिल करि डारा ॥ ३३३ ॥ झमकत कहीं

प्रकार चुनकर जब दैत्यों को मार डाला गया तो क्रुद्ध हो और टूट पड़े। कमर में पट्टा बाँधे तरकसधारी शोभा दे रहे थे और उनके आगे हाथी थे ॥ ३२७ ॥ उन्होंने साथ में अगणित घुड़सवार लिये और सभी ढोल-नगाड़ों को बजाते उमड़कर चल पड़े। शंख, झाँझ और ढोल बजाते हुए वे चौगुने उत्साह के साथ चमककर चल पड़े ॥ ३२८ ॥ कहीं डमरू और कहीं डुगडुगी बज रही थी और कहीं वीरगण भुजाएँ ठोंककर युद्ध मे गरज रहे थे। मुरज, उपंग, मुरली, भेरी, झाँझ आदि रुनझुन-रुनझुन युद्ध मे बज रही थीं ॥ ३२९ ॥ कहीं तुंबी (एकतारा) और कहीं हजारों बाँसुरियाँ बज रही थीं। हाथी के आकार के नगाड़े और अन्य वाद्य इतने थे कि कान से सुनकर उनका अंदाजा नहीं लगाया जा सकता था ॥ ३३० ॥ इस प्रकार जब संग्राम हुआ तो स्त्रियाँ दुल्हनें बनकर (वीरों का वरण करने के लिए) निकल पड़ीं। सिंहवाहनी ध्वजा वहाँ शोभायमान थी जिसे देखकर दैत्य-दल भाग खड़ा हो रहा था ॥ ३३१ ॥ आते ही उसने बहुत से असुरों का संहार कर दिया और सब रथियों को तिल-तिल काट डाला। कितनों की ही ध्वजा, जंघा, पाँव, शीश और भुजाएँ काट डालीं ॥३३२॥ विभिन्न प्रकार से वीरों के शरीरों पर प्रहार किया और उन्हें टुकड़े-टुकड़े कर पृथ्वी पर फेंक दिया केशों को पकड़ कर कितनों को ही पछाड़ दिया और शत्रु-सेना को तिल-तिल कर काट डाला ३३३ कहीं कृपाणों की

असिन की धारा। भभकत रुंड मुंड बिकरारा। केतिक गरजि शस्त्र कटि सजहीं। अस्त्र छोरि केते भट भजहीं ॥३३४॥ मारे परे प्रिथी पर केते। महा बीर बिकरार बिचेते। झिमि झिमि गिरै स्रोन जिमि झरना। भयो घोर रन जात न बरना ॥ ३३५ ॥ अचि अचि रुधर डाकनी डहकैं। भखि भखि मास काक कहूँ कहकैं। दारुन होत भयो तह जुद्धा। हमरे बीच न आवत बुद्धा ॥ ३३६ ॥ मारे परे दैंत कहीं भारे। गिरे काढि करि दाँत डरारे। स्रोनत बमत बदन ते एका। बीर खेत बलवान अनेका ॥ ३३७ ॥ बडे बडे जिनके सिर सींगा। चौंचै बडी भाँत जिन ढींगा। स्रोनत से सर नैन अपारा। निरख जिनै उपजत भ्रम भारा ॥ ३३८ ॥ महाँबीर तैलोक अतुल बल। अरि अनेक जीते जिन जल थल। महाँबीर बलवान डरारे। चुनि चुनि बाल (मू०ग्रं०१३८३) बरछियन मारे ॥ ३३९ ॥ केतिक सुभट अबिकटैं मारे। केतिक करन केहरी फारे। केतिक महाँकाल अरि कूटे। बादल से सभ ही दल फूटे ॥ ३४० ॥ केते बीर बरछियन मारे। टूक टूक

धारें चमक रही थीं और रुंड-मुंड विकराल रूप से भभक रहे थे। कितने ही गरजकर कमर के साथ शस्त्र सजा रहे थे और कितने ही अस्त्र छोड़कर भाग रहे थे ॥ ३३४ ॥ कितने ही महान वीर विकराल रूप से अचेत हो पृथ्वी पर मरे पड़े थे। रक्त झरने की तरह झिम-झिम गिर रहा था और उस घोर युद्ध का वर्णन नहीं किया जा सकता ॥ ३३५ ॥ डाकिनियाँ रक्त पी-पी कर डकार रही थीं और कौए आदि मांस खा-खाकर काँव-काँव कर रहे थे। वहाँ इतना दारुण युद्ध हुआ कि उसका अनुमान मेरी बुद्धि में नहीं आ रहा है ॥ ३३६ ॥ कहीं मरे हुए दैत्य दाँत निकाले गिरे पड़े थे। अनेकों वीर खेत रहे और अनेकों मुंह से रक्त वमन कर रहे थे ॥ ३३७ ॥ (दैत्य ऐसे थे) जिनके सिर पर बड़े-बड़े सींग थे और उनकी चोंचें लम्बे बाँसों के समान थीं। उनके नयन रक्त के तालाब की तरह थे जिन्हें देखकर (भयमिश्रित) भ्रम पैदा होता था ॥ ३३८ ॥ वे महान वीर त्रिलोक में बलशाली थे और उन्होंने अनेकों शत्रुओं को जल-स्थल पर जीता था। महान वीरों को चुन-चुनकर उस (देवी) ने बरछियो से मार डाला ॥ ३३९ ॥ कितने वीरों को तो उसने आसानी से मार डाला और कितनों के कान शेर ने फाड डाले कितने ही शत्रु महाकाल ने कूट डाले और सभी दल बादलो के समान फट गये ३४० कितने

केतिक करि डारे। कैसे हने खड़ग की धारा। लोह कटीले सूर अपारा ॥ ३४१ ॥ केतिक सूल सैहथी हने। सुंदर सुघर सिपाही बने। इह बिधि परे सुबीर प्रहारे। भूमि चाल मनो गिरे मुनारे ॥ ३४२ ॥ इह बिधि गिरे बीर रन भारे। जनु नगइंद्र बज्र भे मारे। टूक टूक जूझे ह्वै घने। जानुक गौस कुतब से बने ॥ ३४३ ॥ स्रोन पुलित ह्वै किते पराए। चाचरि खेलि मनो घर आए। भाजत भए बिमन ह्वै ऐसे। दरब हराइ जुआरी जैसे ॥ ३४४ ॥ जो जूझे सनमुख असधारा। तिनका पल मों भयो उपारा। इह जग ते बिलखत नहि भए। चढ़ि बिवान सुरलोक सिधए ॥ ३४५ ॥ सोफी जेते भजत प्रहारे। ते लै बडे नरक मों डारे। सामुहि ह्वै जिनि दीने प्राना। तिन नर बीर बरंगनि नाना ॥ ३४६ ॥ केतिक बिधे बज्र अरु बाना। गिरि गिरि परे धरन पर नाना। महाँरथी बानन कौ बाँधे। गिरि गिरि परे रहे पुनि साँधे ॥ ३४७ ॥ सूर बडे रन मचे बिकट अति। धाइ धाइ कर परे बिकट मति। मारि मारि करि सकल पुकारा।

ही वीरों को बरछियों से मार डाला और कितनों को ही टुकड़े-टुकड़े कर डाला। कितने ही कटीले शूरवीरों को खड्ग से काट डाला ॥ ३४१ ॥ कितनों सुन्दर सिपाहियों को शूल, कृपाण आदि से मार डाला। इस प्रकार युद्ध में भारी वीर ऐसे पड़े थे मानों भूचाल में बड़ी मीनारें गिरी पड़ी हों ॥ ३४२ ॥ वीर ऐसे गिरे पड़े थे मानों पर्वत वज्र की मार से पड़े हो। टुकड़े-टुकड़े ऐसे जूझे पड़े थे मानों गौंस कुतुब फ़क़ीर पड़े हों ॥ ३४३ ॥ रक्त से सने ऐसे भाग रहे थे मानों होली खेलकर वापस घर आए हो। बेमन हो कई ऐसे भाग रहे थे मानों जुआरी द्रव्य हारकर भगा हो ॥३४४॥ जो तलवार की धार के सामने जूझता था उसका तो पल भर में उद्धार हो जाता था। वे अब इस जगत् में व्याकुल नहीं होते थे अपितु विमान पर चढ़कर सुरलोक चले जाते थे ॥ ३४५ ॥ इन प्रहारों के कारण जितने परहेज़गार भाग खड़े हुए वे सब बड़े नर्क में डाल दिए गए। जिसने सामने होकर प्राण त्यागे उन्होंने अनेक अप्सराओं का वरण किया ॥ ३४६ ॥ कितने ही वज्र और बाण से बिंधे धरती पर अनेकों प्रकार से पड़े थे। महारथी बाणों को बाँधे हुए धरती पर गिरे पड़े थे परन्तु फिर भी निशाना लगाए हुए थे ॥ ३४७ ॥ बड़े शूरवीरों ने बिकट युद्ध मचा रखा था और विकट रूप से चतुर वीर टूट पड़ रहे थे बड़-बड़ ढोल, नगाड़े

दुंदभि ढोल दमामो भारा ॥ ३४८ ॥ हाँकि हाँकि हथियार प्रहारे । बीनि बीनि बानन तन मारे । झुकि झुकि हने सैहथी घाइन । जूझै अधिक दुबहिया चाइन ॥ ३४६ ॥ कहीं परे हाथिन के मुंडा । बाजी रथी गजन के मुंडा । झुंड परे कहीं जूझि जुझारे । तीर तुफंग तुपन के मारे ॥ ३५० ॥ बहु जूझे इह भाँति सिपाही । भाँति भाँति धुजनी रिपु गाही । उत कीय सिंघ बाहनी कोपैं । इत असिधुज लै धायो धोपैं ॥३५१॥ कहूँ लसैं रन खड़ग कटारी । जानुक मच्छ बँधे मधि जारी । सिंघ बाहनी शत्र बिहंडे । तिल तिल प्राइ असुर करि खंडे ॥ ३५२ ॥ कहूँ पाखरैं कटी बिराजैं । बखतर कहूँ गिरे नर राजै । कहूँ चलत स्रोनत की धारा । छूटत बाग मो जनुक फुहारा ॥ ३५३ ॥ कहूँ डाकनी स्रोनत पीयैं । झाँकनि कहूँ मास भखि (मू०ग्रं०१३८४) जीयैं । काकनि कहूँ फिरै कहकाती । प्रेत पिसाचन डोलत माती ॥ ३५४ ॥ हसत फिरत प्रेतन की दारा । डाकनि कहूँ बजावत तारा । जोगनि

बज रहे थे और सभी मार-मार पुकार रहे थे ॥ ३४८ ॥ हाँक-हाँक कर शस्त्र चला रहे थे और चुन-चुनकर शरीर पर बाण मार रहे थे। झुक-झुककर कृपाणों के घावों से मार डाले। युद्ध में दोनों भुजाओं वाले वीर अत्यधिक उत्साह के साथ जूझ रहे थे ॥ ३४९ ॥ कहीं हाथियों के सूंड़ और घोड़ों पर सवारी करनेवालों, रथियों और हाथी पर सवारी करनेवालों के सिर पड़े हुए थे। कहीं जूझे हुए वीरों के झुंड तीरों-बंदूकों और तोपों के मारे हुए पड़े थे ॥ ३५० ॥ इस प्रकार अनेकों सिपाही इस तरह जूझ गये और वीरों ने शत्रु-सेना का मंथन किया। उधर सिंह-वाहिनी कुपित हो उठी और इधर असिध्वज सीधी तलवार हाथ में लेकर टूट पड़ा ॥ ३५१ ॥ युद्ध में कहीं खड्ग-कटारें ऐसे शोभायमान हो रही थीं मानों किसी बाँध में मछलियों को बाँध लिया गया हो। सिंहवाहिनी ने शत्रुओं का नाश कर दिया और शत्रुओं को टुकड़े-टुकड़े कर डाला ॥३५२॥ कहीं लौहत्राण और कटे हुए बख्तरों-समेत राजागण विराजमान थे। कहीं रक्तधारा ऐसे चल रही थी मानों बाग में फुहारा छूटा हुआ हो ॥ ३५३ ॥ कहीं डाकिनियाँ रक्त पीती थीं और कहीं गिद्ध मांस का भक्षण कर जी रहे थे। कहीं क़हक़हे लगाती काकिनियाँ फिर रही थीं और कहीं प्रेत पिशाच मदमस्त घूम रहे थे ३५४ प्रेत स्त्रियाँ हँसती खलती घूम रही थीं और कहीं डाकिनियाँ ताली बजा रही

फिरैं कहूँ मुसकाती। भूतन को इस्त्री मदमाती ॥ ३५५ ॥ फिरत डकार कहूँ रन डाकनि। मास अहार करत कहूँ ज्ञाकनि। प्रेत पिसाच हसे किलकारैं। कहूँ मसान किलकटी मारैं ॥ ३५६ ॥ कहै दैत रन दाँत बिहारत। भूत प्रेत ताली कह मारत। उलका पात होत आकासा। असुर सैन इह बिधि भयो नासा ॥ ३५७ ॥ बहत अमित रन पवन प्रचंडा। दिखियत परे सुभट खंड खंडा। काकनि कुहकि मानवति ताती। फागुन जानु कोकिला माती ॥ ३५८ ॥ इह बिधि स्रोन कुंडि भरि गयो। दूसर मान सरोवर भयो। हेत छत्र तह हंस बिराजें। अनत साज जल जिय से राजैं ॥ ३५९ ॥ टूक टूक दंती कहूँ भए। तिल तिल प्राइ सुभट ह्वै गए। स्रोनत धारि बही इक बारा। भई धूरि रन की सभ गारा ॥ ३६० ॥ नेज बाज बहु बीर सँघारे। प्रोए बरा सीख भटियारे। टूक टूक भट रन ह्वै रहे। जिनके घाव सरोहिन बहे ॥ ३६१ ॥ इह बिधि अमित कोप करि काला। काढत भयो दाँत बिकराला। छिप्र हने छिन माँझ छताले। सूरबीर

थी। योगिनियाँ कहीं मुस्कुराती हुई घूम रही थीं और भूतों की स्त्रियाँ भी मदमाती घूम रही थीं ॥ ३५५ ॥ युद्ध में कहीं डाकिनियाँ डकारती घूम रही थीं और कहीं गिद्ध मांस का आहार कर रहे थे। प्रेत, पिशाच हँसकर किलकारियाँ मार रहे थे और कहीं भूतगण अट्टहास कर रहे थे ॥ ३५६ ॥ दैत्य युद्ध में दाँत निकाले घूम रहे थे और कहीं भूत-प्रेत ताली मार रहे थे। आकाश से उल्कापात होने लगा और इस प्रकार असुर-सेना का नाश हो गया ॥ ३५७ ॥ युद्ध में प्रचंड वायु चल रही थी और वीर खंड-खंड होते दिखाई दे रहे थे। काकिनियाँ ऐसे कुहुक रही थीं मानों फागुन के महीने में मदमस्त कोकिला हो ॥ ३५८ ॥ रक्त का कुंड इस प्रकार भर गया और दूसरा मानसरोवर लगता था। वहाँ श्वेत छत्र हंसों के समान एवं अन्य साज-सामान कमलों के समान लगते थे ॥ ३५९ ॥ हाथी टुकड़े-टुकड़े और वीर तो तिलों के समान हो गए। रक्त की धारा बहने से युद्धस्थल की धूल कीचड़-रूप में परिणित हो गई ॥ ३६० ॥ भाला चलानेवालों ने बहुत से वीर मार डाले और श्रेष्ठ वीरों को शलाकाओं में पिरो दिया। वीर युद्ध मे टुकड़े-टुकड़े हो रहे थे और उनके घावों से रक्त बह रहा था ३६१ इस प्रकार अपरिमित रूप से क्रुद्ध हो काल दाँत निकालने लगा उसने

महाराज दैतन का राजा । आँतौ गीध गगन लै गए । बाहत बिसिख तऊ हठि भए ॥३७०॥ असुर अमित रन बान चलाए । निरखि खड़गधुज काटि गिराए । बीस सहस्र असुर पर बाना । स्री असिधुज छाडे बिधि नाना ॥ ३७१ ॥ महाँकाल पुनि जिय मै कोपा । धनुख टँकोरि बहुरि रन रोपा । एक बान तैं धुजहि गिरायो । दुतिय शत्रु को सीस उडायो ॥३७२॥ दुहूँ बिसिख करि द्वै रथ चक्क । काटि दए छिन इक मै बक्क । चारहि बान चार हूँ बाजा । मार दए सभ जग के राजा ॥ ३७३ ॥ बहुरि असुर का काटसि माथा । स्री असिकेति जगत के नाथा । दुतिय बान सौ दोऊ अरि कर । काटि दयो असिधुज नर नाहर ॥ ३७४ ॥ पुनि राछस का काटा सीसा । स्री असिकेत जगत के ईसा । पुहपन ब्रिसटि गगन तैं भई । सभहिन आनि बधाई दई ॥ ३७५ ॥ धंन्य धंन्य लोगन के राजा । दुशटन दाह गरीबनिवाजा । अखल भवन के सिरजनहारे । दास जानि मुहि लेहु उबारे ॥ ३७६ ॥ ॥ कब्यो बाच बेनती ॥ ॥ चौपई ॥ हमरी करो हाथ दै रच्छा । पूरन होइ चित्त की

वह दैत्यराज एक पाँव भी पीछे हटाकर युद्ध से न भागा । उसकी अंतड़ियाँ चाहे गिद्ध आकाश में ले गए परन्तु वह फिर भी बाण चलाता रहा ॥३७०॥ असुर ने अनेकों बाण चलाए परन्तु खड़गध्वज (परमात्मा) ने उन सबको देखते ही काट गिराया । तब श्री असिध्वज ने बीस हज़ार बाण उस असुर पर छोड़े ॥ ३७१ ॥ महाकाल ने पुन: क्रुद्ध हो धनुष की टंकार देकर युद्ध जमा दिया । एक बाण से उसने ध्वज गिरा दिया और दूसरे से शत्रु का सिर उड़ा दिया ॥ ३७२ ॥ दो बाणों से उसने रथ के पहिये क्षण भर में काट दिए । चार बाणों से उस जगत्-राजन् (असिध्वज) ने चारों घोड़ों को मार डाला ॥ ३७३ ॥ फिर असुर का उस जगन्नाथ ने माथा काट डाला । दूसरे बाण से उस असिकेतु नर नाहर ने उस शत्रु के दोनों हाथ काट डाले ॥ ३७४ ॥ जगत के स्वामी असिकेतु (जिसके झंडे पर कृपाण का निशान है) ने अन्तत: राक्षस का सिर काट लिया । उसी समय गगन से पुष्पवर्षा हुई और सबने आकर बधाई दी ॥ ३७५ ॥ हे लोकों के राजन् ! तुम धन्य हो । तुम दुष्टों के दाहक और गरीबों की रक्षा करनेवाले हो । तुम समस्त भुवनों के सर्जक हो, मुझे दास जानकर मेरी रक्षा करो ॥ ३७६ ॥

कवि उवाच बिनती चौपाई मेरी अपने हस्त के द्वारा रक्षा करे

इच्छा। तव चरनन मन रहै हमारा। अपना जान करो प्रतिपारा॥ ३७७॥ हमरे दुशट सभै तुम घावहु। आपु हाथ दै मोहि बचावहु। सुखी बसै मोरो परिवारा। सेवक सिखय सभै करतारा॥ ३७८॥ मो रच्छा निजु कर दै करियै। सभ बैरिन कौ आज सँघरियै। पूरन होइ हमारी आसा। तोरि भजन की रहै पियासा॥ ३७९॥ तुमहि छाडि कोई अवर न ध्याऊँ। जो बर चाहौ सु तुमते पाऊँ। सेवक सिखय हमारे तारियहि। चुन चुन शत्रु हमारे मारियहि॥ ३८०॥ आपु हाथ दै मुझै उबरियै। मरन काल का त्रास निवरियै। हूजो सदा हमारे पच्छा। स्री असिधुज जू करियहु रच्छा॥ ३८१॥ राखि लेहु मुहि राखनहारे। साहिब संत सहाइ पियारे। दीनबंधु दुशटन के हंता। तुमहो पुरी चतुरदस कंता॥ ३८२॥ काल पाइ ब्रहमा (मू०ग्रं०१३८६) बपु धरा। काल पाइ शिवजू अवतरा। काल पाइ करि बिशन प्रकाशा। सकल काल का किया तमाशा॥ ३८३॥ जवन काल जोगी शिव कीयो।

ताकि मेरे चित्त की इच्छा पूर्ण हो सके। मेरा मन आपके चरणो मे लीन रहे; मुझे अपना समझकर मेरा उद्धार करो॥ ३७७॥ मेरे सभी शत्रुओं का संहार करो और अपना हाथ देकर मुझे बचाओ। मेरा परिवार— सेवक, शिष्य सभी सुखी रहें॥ ३७८॥ अपना हाथ देकर मेरी रक्षा करो और सभी शत्रुओं का संहार कर दो। मेरी यह आशा पूर्ण हो कि मुझे सदैव तुम्हारी भक्ति की प्यास बनी रहे॥ ३७९॥ मै तुम्हें छोड़ अन्य किसी का स्मरण न करूँ और जो इच्छा करूँ तुम्ही से उसका वरदान प्राप्त करूँ। मेरे सेवकों और सिक्खों को तार लो और चुन-चुनकर हमारे शत्रुओं को मार डालो॥ ३८०॥ अपने कृपाहस्त से मेरा उद्धार करो और मृत्यु के भय का निवारण करो। आप सदैव हमारे पक्ष में रहो और हे श्री असिध्वज जी! आप हमारी रक्षा करो॥ ३८१॥ हे रक्षक! मेरी रक्षा करो। तुम संतों के सहायक और प्रिय हो। तुम दीनों के बंधु और दुष्टों के नाशक हो। तुम चौदह पुरियों के स्वामी हो॥ ३८२॥ काल की परिधि में ही ब्रह्मा शरीर धारण करता है और काल के वशीभूत शिव अवतरित होता है। काल में ही विष्णु प्रकाशित होता है। परन्तु (हे महाकाल!) तुमने सारे कालों का तमाशा बना दिया है अर्थात् तुम्हारे सामने काल भी कुछ नहीं है॥ ३८३॥ तुमने जिस काल में शिव को योगी बनाया और ब्रह्मा को वेद-सम्राट

बेद राज ब्रह्मा जू थीयो। जवन काल सभ लोक सवारा। नमशकार है ताहि हमारा ॥ ३८४ ॥ जवन काल सभ जगत बनायो। देव दैत जच्छन उपजायो। आदि अंति एकै अवतारा। सोई गुरू समझियहु हमारा ॥ ३८५ ॥ नमशकार तिस ही को हमारी। सकल प्रजा जिन आप सवारी। सिवकन को सवगुन सुख दीयो। शत्रुन को पल मो बध कीयो ॥ ३८६ ॥ घट घट के अंतर की जानत। भले बुरे की पीर पछानत। चीटी ते कुंचर असथूला। सभ पर क्रिपा द्रिशटि करि फूला ॥ ३८७ ॥ संतन दुख पाए ते दुखी। सुख पाए साधन के सुखी। एक एक की पीर पछानै। घट घट के पट पट की जानै ॥ ३८८ ॥ जब उदकरख करा करतारा। प्रजा धरत तब देह अपारा। जब आकरख करत हो कबहूँ। तुम मै मिलत देह धर सभहूँ ॥ ३८९ ॥ जेते बदन स्रिशटि सभ धारै। आपु आपुनी बूझि उचारै। तुम सभ ही ते रहत निरालम। जानत बेद भेद अरु आलम ॥ ३९० ॥ निरंकार

बनाया तथा सारे लोकों का निर्माण किया उस समय को मेरा प्रणाम है ॥ ३८४ ॥ तुमने जिस काल में विश्व की रचना की और देवों-दैत्यों को बनाया (उसे भी मेरा प्रणाम है)। जो आदि-अन्त में प्रकाशित है वही मेरा गुरु है ॥ ३८५ ॥ मेरा उसी को प्रणाम है जिसने सारी प्रजा को बनाया है। सेवकों को तुमने सौ गुना अधिक सुख दिया है और शत्रुओं का पल भर में वध कर दिया है ॥ ३८६ ॥ तुम प्रत्येक के हृदय की बात जानते हो और भले-बुरे सबका दुख पहचानते हो। चींटी से लेकर विशालकाय हाथी तक पर तुम प्रसन्नतापूर्वक कृपादृष्टि करते हो ॥ ३८७ ॥ संत दुखी होते हैं तो तुम दुखी होते हो और साधु जब सुख पाते हैं तो तुम भी सुखी होते हो। तुम प्रत्येक की पीड़ा को पहचानते हो और घट-घट की आंतरिक बात भी जानते हो ॥ ३८८ ॥ जब हे कर्ता! तुम उत्कर्षण करते हो अर्थात् फैलते हो तो यह सारी प्रजा आकार ग्रहण करती है। जब तुम आकर्षण-क्रिया अर्थात् विलीनीकरण की क्रिया करते हो तो सभी आकर तुझमें लीन हो जाते हैं ॥ ३८९ ॥ सृष्टि ने जितने भी मुख धारण किए हैं सब अपनी समझ के अनुसार (तुम्हारे गुणों का) उच्चारण करते हैं। तुम सबसे निर्लिप्त और निराले रहते हो, परन्तु फिर भी सारे विश्व का ज्ञान और रहस्य तुम जानते हो ३९० तुम निराकार निर्विकार और [illegible] हो

न्रिबिकार न्रिलंभ। आदि अनील अनादि असंभ। ताका मूढ़ उचारत भेदा। जाको भेव न पावत बेदा॥ ३९१॥ ताकौ करि पाहन अनुमानत। महाँ मूढ़ कछु भेद न जानत। महाँदेव कौ कहत सदाशिव। निरंकार का चीनत नहि भिव॥ ३९२॥ आपु आपुनी बुधि है जेती। बरनत भिन भिन तुहि तेती। तुमरा लखा न जाइ पसारा। किह बिधि सजा प्रथम संसारा॥ ३९३॥ एकै रूप अनूप सरूपा। रंक भयो राव कहीं भूपा। अंडज जेरज सेतज कीनी। उतभुज खानि बहुरि रचि दीनी॥ ३९४॥ कहूँ फुलि राजा ह्वै बैठा। कहूँ सिमटि भयो शंकर इकैठा। सगरी स्त्रिशटि दिखाइ अचंभव। आदि जुगादि सरूप सुयंभव॥ ३९५॥ अब रच्छा मेरी तुम करो। सिख्य उबारि असिख्य सँघरो। दुशट जिते उठवत उतपाता। सकल मलेछ करो रण घाता॥ ३९६॥ जे असिधुज तव शरनी परे। तिन के दुशट दुखित ह्वै मरे। (मू०ग्रं०१३८७) पुरख जवन पगु परे तिहारे। तिन के

तुम आदि, अनादि, अनश्वर और किसी के द्वारा प्रकाशित नहीं हो। जिसका रहस्य वेद भी नहीं जान सके हैं मूर्ख लोग उसके रहस्य को जानकर उसके उच्चारण करने का दावा करते हैं॥ ३९१॥ मूर्ख कुछ नहीं समझते और उसे पत्थर मानते है। उस महादेव को शिव कहते है (और उसको सीमित करते हैं) और उस निराकार प्रभु का रहस्य नहीं पहचानते॥ ३९२॥ जिसकी जितनी अपनी बुद्धि होती है वह उसी प्रकार से उसका वर्णन करता है। तुम्हारे प्रसार को देखा नहीं जा सकता और यह भी नहीं जाना जा सकता कि तुमने सर्वप्रथम संसार कैसे बनाया॥ ३९३॥ सुन्दर स्वरूपों में तुम एक ही अनुपम हो। तुम ही कहीं राजा हो और कहीं निर्धन हो। तुम ने ही अंडज, जेरज, स्वेदज और उदभिद् नामक चार जीवन-स्रोतों (खानों) की रचना कर दी है॥ ३९४॥ कहीं तुम फूल-फल के रूप में सृष्टि के सम्राट् बने बैठे हो और कहीं सिमटकर शंकर (पत्थर) के रूप में सिमट गए हो। तुम्हारी समस्त सृष्टि एक अचम्भा है, जिसमें तुम आदि-जुगादि से प्रकाशित हो॥ ३९५॥ अब तुम मेरी रक्षा करो और शिष्यों को उबार कर स्वेच्छाचारियों का संहार करो। जितने भी दुष्ट उठकर उत्पात मचाएँ उन सब मलेच्छों का युद्ध में संहार कर दो॥ ३९६॥ हे असिध्वज! जो तुम्हारी शरण में आए हैं, उनके शत्रु दुखी होकर मर जाते हैं। जो

तुम संकट सभ टारे ॥ ३९७ ॥ जो कलि कौ इक बार धिऐहै । ता के काल निकटि नहि ऐहै । रच्छा होइ ताहि सभ काला । दुशट अरिष्ट टरें ततकाला ॥ ३९८ ॥ क्रिपा द्रिशटि तन जाहि निहरिहो । ताके ताप तनक महि हरिहो । रिद्धि रिद्धि घर मों सभ होई । दुष्ट छाह छ्वै सकै न कोई ॥ ३९९ ॥ एक बार जिन तुमैं सँभारा । काल फास ते ताहि उबारा । जिन नर नाम तिहारो कहा । दारिद दुशट दोख ते रहा ॥ ४०० ॥ खड़गकेत मैं शरनि तिहारी । आपु हाथ दै लेहु उबारी । सरब ठौर मो होहु सहाई । दुशट दोख ते लेहु बचाई ॥ ४०१ ॥ क्रिपा करी हम पर जगमाता । ग्रंथ करा पूरन सुभ राता । किलबिख सकल देह को हरता । दुशट दोखियन को छै करता ॥ ४०२ ॥ स्री असिधुज जब भए दयाला । पूरन करा ग्रंथ ततकाला । मन बांछत फल पावै सोई । दूख न तिसै बिआपत कोई ॥ ४०३ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सुनै गुंग जो याहि सु रसना पावई । सुनै मूढ़

भी पुरुष तुम्हारे चरणों में आ पड़ा उसके तुमने समस्त संकट दूर कर दिए हैं ॥ ३९७ ॥ जो कलि (रूपी महाकाल) का एक बार भी स्मरण करेंगे काल उनके पास भी नहीं आ सकेगा अर्थात् वे समय की मार से बचे रहेंगे और सदैव अमर रहेंगे । उसकी सभी कालों में रक्षा होगी और उसके भयानक दुश्मन भी तत्काल टल जाएँगे ॥ ३९८ ॥ तुमने कृपादृष्टि से जिसे भी देख लिया उसके समस्त ताप क्षण भर में हर लिये जाएँगे । उसके घर में सभी ऋद्धियाँ-सिद्धियाँ होंगी और दुष्टों की छाया भी उसे छू नहीं सकेगी ॥ ३९९ ॥ एक बार भी जिसने तुम्हारा स्मरण कर लिया उसका तो कालपाश से उद्धार हो गया । जिस व्यक्ति ने तुम्हारा नाम स्मरण किया वह दरिद्रता, दुष्टों और रोगों से बच गया ॥ ४०० ॥ हे खड़गकेतु ! मैं तुम्हारी शरण में हूँ, तुम स्वयं अपने हाथों से मेरा उद्धार करो । सभी स्थानों पर मेरी रक्षा करो और दुष्ट दोषों से मुझे बचा लो ॥ ४०१ ॥ जगत को माँ के समान पालनेवाले प्रभु ने मुझ पर कृपा की और मैंने इस शुभ रात्रि में यह ग्रंथ पूर्ण किया है । वह प्रभु समस्त व्याधियों का हरण करनेवाला है और दुष्टों तथा ईर्ष्यालुओं का संहारक है ॥ ४०२ ॥ जब श्री असिध्वज दयालु हुए तभी यह ग्रंथ पूर्ण हो सका उसे चाहनेवाला मनोवांछित फल प्राप्त करता है और उसे कोई भी दुख नहीं होता ४०३ अड़िल्ल । इसे

चित लाइ चतुरता आवई । दूख दरद भौ निकट न तिन नर के रहै । हो जो याकौ एक बार चौपई को कहै ॥ ४०४ ॥ ॥ चौपई ॥ संबत सत्रह सहस भणिज्जै । अरध सहस फुनि तीनि कहिज्जै । भाद्रव सुदी अष्टमी रवि वारा । तीर सतुद्रव ग्रंथ सुधारा ॥ ४०५ ॥ (मू०ग्रं०१३८८)

॥ इति स्री चरित्र पख्याने त्रिया चरित्रे मंत्री भूप संबादे चार सौ चार चरित्र समापतम सतु सुभम सतु ॥ ४०४ ॥ ७५५५ ॥ अफजूं ॥

गूंगा भी सुनेगा तो उसे जुबान मिल जाएगी, मूर्ख भी सुनेगा तो चतुर हो जाएगा । जो एक बार चौपाई को कहेगा, दुख-दर्द उसके पास नहीं आएँगे और वह तातार देश के निवासियों (याकियों) के समान बलिष्ठ हो जाएगा ॥ ४०४ ॥ ॥ चौपाई ॥ संवत् सत्रह सौ कहकर पुनः आधा सौ अर्थात् पचास तथा पुनः तीन का उच्चारण करो । संवत् सत्रह सौ तिरपन, भादों सुदी अष्टमी, रविवार को सतलज के किनारे सुधार कर इस ग्रंथ की रचना की ॥ ४०५ ॥

॥ श्री चरित्रोपाख्यान के त्रिया-चरित्र के मन्त्री-भूप-संवाद में चार सौ चौथे चरित्र की शुभ सत् समाप्ति ॥ ४०४ ॥ ७५५५ ॥ अफजूं ॥

१ ओं हुक्म सत्ति

स्री वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

ज़फ़रनामह स्री मुखवाक पातिसाही १० ॥

कमाले करामात क़ाइम करीम। रज़ा बख़्श राज़िक रिहाकुन रहीम ॥ १ ॥ अमाँ बख़्श बख़्शिंदह ओ दसतगीर। ख़ता बख़्श रोज़ी दिहिंदे दिल पज़ीर ॥ २ ॥ शहिनशाहि ख़ूबी दिहो रहनमूँ। कि बेगूँन बेचूँन चूँ बेनमूँ ॥ ३ ॥ न साज़ो न बाज़ो न फ़ौजो न फ़रश। ख़ुदावंद बख़शिन्दए ऐश अरश ॥ ४ ॥ जहाँ पाक ज़बरदसत ज़ाहिर ज़हूर। उता मी दिहो हम चु हाज़िर हज़ूर ॥ ५ ॥ अता बख़शओ पाक परवरदिगार। रहीम अस्तु रोज़ी दिहो हर दियार ॥ ६ ॥ कि साहिब दियार अस्तु अज़मत अज़ीम। कि हुसनुल जमाल

पातशाही दसवीं (गुरु गोबिंद सिंह) द्वारा उच्चरित ज़फ़रनामा (विजयपत्र)

वह दयालु प्रभु करामातों में पूर्ण, सदैव अचल, कृपालु, आज्ञा मे चलनेवाले पर मेहरबान, आजीविका प्रदान करनेवाला मुक्तिदाता है ॥ १ ॥ वह सुखदायक क्षमाशील और हाथ थामनेवाला है। वह गुनाह माफ़ करने वाला, रोज़ी देनेवाला और सबको मनचाहे पदार्थ देनेवाला है ॥ २ ॥ वह सम्राटों का सम्राट् और सबका पथ-प्रदर्शक है और रंग-रूप एवं विहारो से परे है ॥ ३ ॥ साज-समान, बाज़ सेना, धरती से विहीन लोगों को भी (कृपा करके) भगवान ऐश्वर्य और स्वर्ग प्रदान करनेवाला है ॥ ४ ॥ वह जगत्-प्रपंचों से पवित्र, साक्षात् प्रकट रूप में सबको दान देनेवाला (ख़ुदा) है ॥ ५ ॥ वह सबकी परवरिश करनेवाला पवित्र है। वह दयावान और प्रत्येक को आजीविका प्रदान करनेवाला है ॥ ६ ॥ वह महानों का महान् ख़ुदा देश-देशान्तरों का स्वामी है। सुन्दरता का सौंदर्य वही है और वह दयालु और रोज़ी देनेवाला है ७ वह मालिक स्वय चातुर्य से युक्त

असतु राज़क रहीम ॥ ७ ॥ कि साहिब शऊर असतु आजिज़ निवाज़ । ग़रीबुल प्रसतो ग़नीमुल गुदाज़ ॥ ८ ॥ शरीअत प्रसतो फ़ज़ीलत मआब । हक़ीकत शनासो नबीउल किताब ॥ ६ ॥ कि दानिश पियूहसतु साहिब शऊर । हक़ीकत शनाशसतु ज़ाहर ज़हूर ॥ १० ॥ शनासिंदहए इलमि आलम खुदाइ । कुशाइंदहए कारि आलम कुशाइ ॥ ११ ॥ गुज़ारिंदहए कारि आलम क़बीर । शनासिंदहए इलमि आलम अमीर ॥ १२ ॥

दासतान ॥ हिकायत पहिली ॥

मरा इअतबारे बरी क़सम नेसत । कि एज़द गवाहसतु यज़दाँ यकेसत ॥ १३ ॥ न क़तरह मरा इअतबारे बरोसत । कि बख़शी व दीवाँ हमाँकिज़ब गोशत ॥ १४ ॥ कसे क़उलि कुरआँ कुनद इअतबार । हमा रोज़ि आख़िर शवद मरद ख्वार ॥ १५ ॥ हुमा रा कसे सायह आयद बज़ेर । बरी

है, अनाथों का बड़प्पन प्रदान करनेवाला ग़रीबपरवर और दुष्टों को गला देनेवाला है ॥ ८ ॥ वह न्याय-प्रिय, बड़प्पन से परिपूर्ण, सत्यतत्त्व को पहचान लेनेवाला तथा सभी धर्मग्रंथों द्वारा महान् माना जानेवाला परमात्मा है ॥ ६ ॥ वह दानाई का क़द्रदान, विवेक का स्वामी, सच्चाई की पहचान करनेवाला और सर्वत्र प्रकाश-रूप में प्रकट है ॥ १० ॥ वह खुदा सर्वविद्याओं का जानकार, संसार के कार्यों के भेदों को खोलनेवाला, सभी कार्यों को तरतीब देकर उन्हें क्रम से करनेवाला है ॥ ११ ॥ वह स्वामी संसार के बड़े कामों को चलानेवाला महान् है। समस्त विद्याओं का ज्ञाता, विद्वान् और संसार का नायक है ॥ १२ ॥

दास्तान (वार्त्ता) पहली

तुम्हारे यह कहने पर कि भगवान एक है और हमारी-तुम्हारी बातचीत मे गवाह है, मुझे ज़रा भी विश्वास नहीं है ॥ १३ ॥ मुझे तुम्हारी क़सम पर रत्ती भर भी यक़ीन नहीं है। तेरे कारिंदे, दीवान आदि (जो तुम्हारा पैग़ाम मेरे पास लाए थे) सब झूठ बोलनेवाले थे ॥ १४ ॥ क़ुरान की तुम्हारी खायी क़सम पर भरोसा करनेवाला भी आख़िरी दिन अर्थात् मौत के दिन लज्जित और ख्वार ही होगा ॥ १५ ॥ हुमा पक्षी अर्थात परमात्मा की परछाई कृपा के नीचे आ जानेवाले का दिलेर से दिलेर कौआ कुछ नहीं

दसत दारद न जागो दलेर ॥ १६ ॥ कसे पुशत उफ़तद पसे शेरि नर। नगीरद बुज़ो मेशो आहू गुज़र ॥ १७ ॥ कसम मुसहफे ख़ुफ़ीयह गरईं ख़ुरम। न फ़उजे अज़ीं ज़ेर सुम अफ़कुनम ॥ १८ ॥ गुरसनह चिकारे कुनद चिहल नर। कि दह लख बरायद बरो बेख़बर ॥ १९ ॥ (मू०ग्रं०१३८९) कि पैमा शिकन बेदरंग आमदंद। मियाँ तेग़ तीरो तुफ़ंग आमदंद ॥२०॥ ब लाचारगी दर मियाँ आमदम। ब तदबीरि तीरो तुफ़ंग आमदम ॥ २१ ॥ चु क़ार अज़ हमह हीलते दर गुज़शत। हलाल असतु बुरदन ब शमशेर दसत ॥ २२ ॥ चि क़समे कुरां मन कुनम इअतबार। वगर नह तु गोई मनईं रह चि कार ॥ २३ ॥ न दानम कि ईं मरद रोबाह पेच। गर हरगिज़ीं रह न यारद बहेच ॥ २४ ॥ हर आँकस कि क़उले कुराँ आयदश। नज़ो बसतनो कुशतनो बायदश ॥ २५ ॥ बरंगे मगस स्याहपोश आमदंद। ब यक बारगी दर ख़रोश

कर सकता अर्थात् तेरे सैनिक उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते जो परमात्मा की छत्रछाया में है ॥ १६ ॥ यदि कोई शेर के पीछे खड़ा हो बकरी और हिरण का उस व्यक्ति को पकड़ना तो दूर, कोई उस ओर से गुज़रना भी पसंद नहीं करता ॥ १७ ॥ यदि तुम्हारी क़ुरान की क़सम जैसा धोखा मैं भी मन मे रखता तो मैं अपनी प्यारी फ़ौज को लँगड़ा न करवा लेता अर्थात् व्यर्थ ही न मरवा देता ॥ १८ ॥ पेट से भूखे चालीस व्यक्ति उस समय क्या कर सकते हैं, जो उन पर दस लाख (सैनिक) अचानक ही टूट पड़ें ॥ १९ ॥ कटार को तोड़नेवाले अविलम्ब आ पहुँचे। वे तलवारों, तीरों और बंदूक़ों-समेत आ पहुँचे ॥ २० ॥ तब मजबूरी में मैं युद्ध में आया। तीरों-बंदूक़ों से सुसज्जित होकर आ पहुँचा ॥ २१ ॥ जब कार्य के लिए सभी उपाय समाप्त हो जाएँ तो तलवार-सहित हाथ उठाना धर्मसम्मत है ॥ २२ ॥ मैं क़ुरान की क़सम का विश्वास कैसे करूँ अन्यथा तुम ही बताओ, भला मुझे इस (युद्ध के) रास्ते पर क्यों चलना था ? ॥ २३ ॥ मैं नहीं जानता था कि यह पुरुष (औरंगज़ेब) लोमड़ी की तरह मक्कार है अन्यथा मैं किसी भी तरह इसकी क़सम को मानने के रास्ते पर न आता ॥ २४ ॥ उस हर व्यक्ति को, जो क़ुरान की क़सम पर है, उसे घायल करना अथवा मार डालना उचित नहीं है ॥ २५ ॥ काले कपड़े पहने वे मक्खियों के समान (अगणित संख्या में आ पहुँचे और एक ही बार में उत्तेजित हो टूट पड़े २६ जो भी व्यक्ति

आमदंद ।। २६ ।। हर आँकस ज़ि दीवार आमद बिरूँ । बख़ुरदन यके तीर शुद ग़रक़ि ख़ूँ ।। २७ ।। कि बेरूँ नयामद कसे ज़ाँ दिवार । न ख़ुरदंद तीरो न गशतंद ख़ुआर ।। २८ ।। चु दीदम कि नाहर बियामद ब जंग । चशीदह यके तीरि मन बेदरंग ।। २६ ।। हमा ख़र गुरेज़द बजाए मसाफ़ । बसे ख़ानह ख़ुरदंद बेरूँ गज़ाफ़ ।। ३० ।। कि अफ़ग़न दीगर बयामद बजंग । चु सैले रवाँ हम चु तीरो तुफ़ंग ।। ३१ ।। बसे हमलह करदंद ब मरदानगी । हम अज़ होशगी हम ज़ि देवानगी ।। ३२ ।। बसे हमलाह करदो बसे ज़ख़म ख़ुरद । दु कस रा सख़ाँ कुशत हम जाँ सपुरद ।। ३३ ।। कि आँ ख़्वाजह मरदूद सायह दिवार । नयामद ब मैदाँ ब मरदान वार ।।३४।। दरेगा अगर रूइ ओ दीदमे । ब यक तीर लाचार बख़शीदमे ।।३५।। हमाख़र बसे ज़ख़मि तीरो तुफ़ंग । दो सूए बसे कुशतह शुद बेदरंग ।। ३६ ।। बसे बार बारीद तीरो तुफ़ंग । ज़िमी गशत हम चूँ गुले लालह रंग ।। ३७ ।। सरोपाइ अंबोह

दीवार की ओट से बाहर आया, वह हमारा एक ही तीर खाकर रक्त में डूब गया ।। २७ ।। जो भी दीवार की ओट से बाहर नहीं आया, उसने न तो तीर खाया और न ही उसे लज्जित होना पड़ा ।। २८ ।। जब मैंने देखा कि नाहर ख़ाँ जंग में आया है तो तुरन्त एक तीर उसने अपने शरीर पर खाया ।। २९ ।। पीछेवाले सैनिक भाग गए जो पठान (युद्धस्थल से) बाहर अत्यधिक शेखी बघारते हैं ।। ३० ।। एक अन्य पठान युद्ध के लिए आया था जो नदी की बाढ़ की तरह आया था अथवा तीर या बंदूक़ की गोली की तरह आया था ।। ३१ ।। बहुत से आक्रमण बहादुरी के साथ किए । कुछ बुद्धिमानी से भी किए और कुछ पागलपन से भी किए ।। ३२ ।। बहुत से हमले हुए, बहुतों ने घाव खाए । (हमारे पक्ष के) दो आदमियों (गुरुजी के पुत्र अजीत सिंह और जुझार सिंह) को मार दिया और (आक्रमणकारी) स्वयं भी जान दे गये ।। ३३ ।। परन्तु वह जलील और मरदूद ख्वाजा दीवार की ओट से निकलकर बहादुरों की तरह युद्धस्थल में आया ही नहीं ।। ३४ ।। काश ! यदि मैं उसका चेहरा देख पाता तो उसको भी एक तीर बख्श कर (मौत के घाट उतार) देता ।। ३५ ।। अंततः तीरों और बंदूक़ों के बहुत से घाव खाकर दोनों पक्षों के बहुत से आदमी तुरन्त ही मर गए ।। ३६ ।। तीरों और गोलियों की भीषण वर्षा हुई जिससे धरती "गुले लाला" के समान लाल रंग की ही हो

चंदाँ शुदह् । कि मैदाँ पुर अज़ गूओ चौगाँ शुदह् ॥ ३८ ॥ तरंकारि तीरो तरंगि कमाँ । बरामद यके हाओ हू अज़ जहाँ ॥ ३९ ॥ दिगर शोरिशि कैबरि कीनह् कोश । ज़ि मरदानि मरदाँ बिरूँ रफ़्त होश ॥ ४० ॥ हम आख़िर चि मरदी कुनद कारज़ार । कि बर चिहल तन आयदश बे शुमार ॥ ४१ ॥ चिराग़ि जहाँचूँ शुदह् बुरकह् पोश । शहे सब बरामद हमह् जलवह् जोश ॥ ४२ ॥ हर आँकस (गु०ग्रं०१३९०) बक़ौले क़रा आयदश । कि यज़दाँ बरो रहिनुमा आयदश ॥ ४३ ॥ न पेचीदह् मूए न रंजीदह् तन । कि बेरूँ खुदावुरद दुशमन शिकन ॥ ४४ ॥ न दानम कि ईं मरदि पैमाँ शिकन । कि दउलत परसत असतु ईमा फ़िकन ॥ ४५ ॥ न ईमाँ परसती न अउज़ाइ दीं । न साहिब शनासी न महम्मद यकीं ॥ ४६ ॥ हरआँकस कि ईमाँ परसती कुनद । न पैमा खुदश पेशो पसती कुनद ॥ ४७ ॥ कि ईं मरद रा ज़र्रह्

गई ॥ ३७ ॥ सिरों और पैरों का इतना जमाव हो गया कि लड़ाई का मैदान मानों कन्दुक-क्रीड़ा के लिए गेंदों और छड़ियों से भर गया हो ॥ ३८ ॥ तीरों की सनसनाहट और कमानों की कड़कड़ाहट के फलस्वरूप सारे संसार में एक "हाय-हाय" की आवाज़ ही प्राप्त होती थी ॥ ३९ ॥ फिर मारक तीरों के शोर-शराबे में बहादुर से बहादुर वीरों की भी बुद्धि चकरा गई ॥ ४० ॥ परन्तु अन्ततः लड़ाई में वीरता भी क्या कर सकती है, जहाँ चालीस पर अगणित (सैनिक) टूट पड़ें ॥ ४१ ॥ जब जगत का दीपक (सूर्य) पर्दे में छिप गया और रात का स्वामी (चन्द्र) अपने पूरे जलवे मे उदित हो गया ॥ ४२ ॥ जिस किसी को भी क़ुरान की क़सम पर भरोसा होता है, खुदा स्वयं उसका पथ-प्रदर्शक बन जाता है ॥ ४३ ॥ न (मेरा) बाल बाँका हुआ और न ही मेरे शरीर को कोई कष्ट हुआ। शत्रुओं को मारनेवाले मुझको खुदा सशरीर बाहर ले आया ॥ ४४ ॥ मुझे नहीं पता था कि यह व्यक्ति क़रारनामे को तोड़नेवाला, दौलत का पुजारी और ईमान को परे धकेल देनेवाला है ॥ ४५ ॥ यह न तो धर्म को पूजा करता है, न ही इसकी कोई धर्म मानने की आचरण-संहिता है, और न ही इसे खुदा की पहचान और मुहम्मद पर यक़ीन है ॥ ४६ ॥ जो कोई व्यक्ति अपने धर्म में विश्वास रखता है तो वह अपने दिए वचन से पीछे नहीं हटता ४७ इस पुरुष का कुरान की कसम खाना अथवा भगवान

इअतबार नेसत। कि क़समे कुरानसतु यज़दाँ यकेसत ॥ ४८ ॥ चु क़समे कुराँ सद कुनद इख़तियार। मरा कतरह् नायद अज़ो इअतबार ॥ ४९ ॥ अगरचि तुरा इअतबार आमदे। कमर बसत पेशवा आमदे ॥ ५० ॥ कि फ़रज़सतु बर सर तुरा ईं सुख़न। कि क़उले ख़ुदा असतु कसमसतु मन ॥ ५१ ॥ अगर हज़रते ख़ुद सितादह् शवद। ब जानो दिले कार वाज़िह शवद ॥५२॥ शुमा रा करज़सतु कारे कुनीं। बमूजब नविशतह् शुमारे कुनीं ॥ ५३ ॥ नविशतह् रसीदो बगुफ़तह् जुबाँ। बिबायद कि ईं कार राहत रसाँ ॥ ५४ ॥ हमूँ मरद बायद शवद सुख़नवर। न शिकमे दिगर दर दहानि दिगर ॥ ५५ ॥ काज़ी मरा गुफ़त बेरूँ मयन। अगर रासती ख़ुद बियारी कदम ॥ ५६ ॥ तुरा गर बबायद ब कउले कुराँ। बनिज़दे शुमा रा रसानम हुमा ॥ ५७ ॥ कि तशरीफ़ दर क़सबह् काँगड़ कुनद। वज़ाँ पस मुलाकात बाहम शवद ॥ ५८ ॥ न ज़र्रह् दरीं राह ख़तरह् तुरासत। हमह् कौमि बैराड़ हुकमि

एक है कहने पर भी मुझे इसका विश्वास नहीं ॥ ४८ ॥ यदि यह अब कुरान की सौ क़सम भी खा ले तो मुझे उस पर एक कतरे जितना भी विश्वास नहीं ॥ ४९ ॥ यदि तुम्हें अपनी ही बातों पर यक़ीन होता तो कमर बाँधकर तुम स्वयं मेरे सामने आ जाते ॥ ५० ॥ इस बात को पूरा करने का कर्त्तव्य तेरे सिर पर बाक़ी है, क्योंकि तूने मुझसे ख़ुदा के वचन (कुरान) की क़सम खाई थी ॥ ५१ ॥ बादशाह, यदि तुम ख़ुद यहाँ मौजूद होओ तो दिलोजान से मेरे किए कामों का तुम्हें पता लग जाए ॥ ५२ ॥ अब तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम अपने काम को पूरा करो। लिखे हुए के अनुसार करो ॥ ५३ ॥ तेरा लिखा हुआ (पत्र) मिल गया और (संदेशवाहक द्वारा) भेजा ज़ुबानी संदेश भी प्राप्त हो गया है। अच्छा हो यदि यह काम सबके लिए सुखदायक हो ॥ ५४ ॥ सभी मर्दों का बात का धनी होना चाहिए। मन में कुछ और और मुँह में कुछ और नहीं (होना चाहिए) ॥ ५५ ॥ जो क़ाज़ी कहता है, मुझे उसी के अनुसार जानो (उससे) भिन्न मत मानो। अब अगर तुममें सच्चाई है तो ख़ुद चलकर यहाँ आ ॥ ५६ ॥ यदि वचन लिखा हुआ क़ुरान (शरीफ़) तुम्हें चाहिए (जो तुमने कसम खाते समय मेरे पास भेजा था) तो मैं वह भी तुम्हारे पास भेज सकता हूँ ॥ ५७ ॥ यदि बादशाह कांगड नामक गाँव में आना चाहे तो हम लोगों की आपस में मुलाकात हो जाएगी ५८ इस रास्ते पर तुम्हें तनिक भी

मरासल ॥ ५९ ॥ बिया ता बमन खुद जुबानी कुनेम । बरूए शुमा मिहरबानी कुनेम ॥ ६० ॥ यके असप शाइसतए यक हज़ार । बिया ता बगीरी ब मन ईं दियार ॥ ६१ ॥ शहिनशाहि रा बंदहे चाकरेम । अगर हुकम आयद ब जाँ हाज़रेम ॥ ६२ ॥ अगरचे बिआयद ब फुरमान मन । हज़ूर त बियायम हमह जान तन ॥ ६३ ॥ अगर तो बयज़दाँ परसती कुनी । ब कारे मरा ईं न सुसती कुनी ॥ ६४ ॥ (पृ०ग्रं०१३६१) बिबायद की यज़दाँ शनासी कुनी । न गुफ़तह कसे करा ख़राशी कुनी ॥ ६५ ॥ तु मसनद नशीं सरवरे काइनात । कि अजब असतु इनसाफ़ ईं हम सफ़ात ॥ ६६ ॥ कि अजब असतु इनसाफ़ो दीं परवरी । कि हैफ़असतु सद हैफ़ईं सरवरी ॥६७॥ कि अजबसतु अजबसतु तकवा शुमाँ । बजुज़ रासती सुख़न गुफ़तन्न ज़याँ ॥ ६८ ॥ मज़न तेग़ बर खूँन कस बेदरेग़ । तुरा नीज़ खूँ असत बा चरख तेग़ ॥ ६९ ॥ तु गाफ़ल म सौ मरद यज़दाँ हिरास । कि ओ बेनिआज़ असतु ओ बे

भय नहीं है, क्यों सारी बैराड़ जाति मेरी आज्ञा में है ॥ ५९ ॥ तुम आओ ताकि मैं खुद तुमसे बात करूँ और तुम्हारे ऊपर मेहरबानी करूँ ॥ ६० ॥ (तुम्हारा यह कहना कि) एक हज़ार रुपए की क़ीमत का एक सुन्दर घोड़ा ले आओ और मेरे पास से यह इलाक़ा (जागीर-रूप से) हासिल कर लो (तुम इस बात को ध्यान में रखो) ॥ ६१ ॥ सम्राटों के सम्राट् (परमात्मा) का मैं बंदा हूँ और ग़ुलाम हूँ। यदि उसकी आज्ञा हो जाएगी तो जान समेत मैं हाज़िर हो जाऊँगा ॥ ६२ ॥ यदि उसकी आज्ञा हो गई तो मैं जानोमाल-समेत आ जाऊँगा ॥ ६३ ॥ अगर तुम खुदा की पूजा करते हो तो मेरे इस काम में देरी मत करना ॥ ६४ ॥ तुम्हें चाहिए कि तुम परमात्मा को पहचानो और किसी के पिछलग्गू बनकर किसी को दुःखी मत करो ॥ ६५ ॥ तुम बादशाह की गद्दी पर बैठे हो, आम जनता के सरदार हो (पर) जो न्याय तुम करते हो वह भी आश्चर्य है और तुम्हारी विशेषताएं भी अजीब हैं ॥ ६६ ॥ तेरा न्याय अजीब है, ग़रीबपरवरी भी अजीब है। मुझे इस पर अफ़सोस है और तुम्हारी सरदारी पर तो मुझे सौ बार अफ़सोस है ॥ ६७ ॥ तेरी धर्म की व्यवस्था (फ़तवा) अजीब है। सच्चाई के बिना कुछ कहना ही अपराध है ॥ ६८ ॥ किसी का ख़ून करने के लिए निस्संकोच होकर तलवार मत चला। आकाशीय तलवार से तेरा रक्त भी (फैलना) है ६९ हे मनुष्य तू लापरवाह मत हो और खुदा से डरो वह

सुपास ॥ ७० ॥ कि ऊ बे मुहाबसतु शाहानि शाह । ज़िमीनो ज़मां सच्चए पातिशाह ॥ ७१ ॥ खुदावंदि ईज़द ज़मीनो ज़मां । कुनिंदसत हर कस मकीनो मकाँ ॥ ७२ ॥ हमअज़ पीर मोरह हमअज़ फ़ील तन । कि आजज़ निवाज़ असतो गाफल शिकंन ॥ ७३ ॥ कि ऊ राचु इसम असतु आजज़ निवाज़ । कि ऊ बे सुपास असत ऊ बे नियाज़ ॥ ७४ ॥ कि ऊ बे नगूँ असतु ऊ बे चगूँ । कि ऊ रहिनुमा असतु ऊ रहिनमूँ ॥ ७५ ॥ कि बर सर तुरा फरज़ कसमि कुराँ । ब गुफतह शुमह कार खूबी रसाँ ॥ ७६ ॥ बिबायद तु दानश परसती कुनी । बकारे शुमा चेरह दसती कुनी ॥ ७७ ॥ चिहा शुद कि चूँ बच्चगाँ कुशतह चार । कि बाकी बमाँदसतु पेचीदह मार ॥ ७८ ॥ चि मरदी कि अख़गर ख़मोशाँ कुनी । कि आतिश दमाँ रा फरोज़ा कुनी ॥७९॥ चि खुश गुफ़त फिरदौसीए खुश ज़ुबाँ । शिताबी बवद कारि आहरमना ॥ ८० ॥ कि मा बारगहि हज़रत आयद शुमाँ । अज़ाँ रोज़ बाशेव शाहिद शुमाँ ॥ ८१ ॥ बगर ना तु ईं रा फरामुश कुनद । तुरा हम

बेपरवाह है, खुशामदों से परे है ॥ ७० ॥ वह जो डर से रहित है, बादशाहों का भी बादशाह है । वही धरती और आकाश का सच्चा बादशाह है ॥ ७१ ॥ जो कीड़ा से लेकर हाथी का भी (भला) करनेवाला है, बच्चे से लेकर बुड्ढे का भी काम करनेवाला है ॥ ७२ ॥ वह बेसहारों को बड़प्पन प्रदान करनेवाला और लापरवाहों का नाश करनेवाला है ॥ ७३ ॥ उसका नाम ग़रीबनिवाज़ है और सब आवश्यकताओं से परे और बेपरवाह है ॥ ७४ ॥ वह रूप-रंग से रहित और चक्र-चिह्नों से परे है । वह जो मार्ग बतानेवाला है, वही उस मार्ग पर ले चलनेवाला भी है ॥ ७५ ॥ तुम्हारे ऊपर कुरान की क़सम का बोझ है, इसलिए तुम अपने दिए वचन के अनुसार काम को भलीभांति करो ॥ ७६ ॥ (इस समय) तुझे बुद्धिमत्ता से कार्य करना चाहिए और हाथ के कामों को पक्के तौर पर करना चाहिए ॥ ७७ ॥ क्या हुआ यदि चार पुरुषों को मार दिया है । अभी कुंडलाकार सर्प तो (जीवित) मौजूद है ॥ ७८ ॥ यह कैसी बहादुरी है जो चिंगारियों को तो बुझाती है और जो आग धू-धू करके जल रही है उसे तू और भी तेज़ कर रहा है ॥ ७९ ॥ सुंदर ज़ुबान वाले फ़िर्दौसी ने कैसी सुन्दर बात (शहनामा में) कही है कि जल्दबाज़ी शैतानों का काम है ॥ ८० ॥ खुदा की कचहरी में मैं आऊंगा और उस दिन वजीद ख़ां के कुकर्मों के लिए तुम्हें गवाही देनी

फ़रामोश यज़्दाँ कुनद ॥ ८२ ॥ अगर कारि ईं बर तू बसती कमर । ख़ुदावंद बाशद तुरा बह्‌र बर ॥ ८३ ॥ कि ईं कार नेकअसतु दी परवरी । चु यज़्दाँ शनासी बजाँ बरतरी ॥८४॥ तुरा मन न दानम कि यज़्दाँ शनास । बरामद ज़ि तू कारहा दिल ख़रास ॥ ८५ ॥ शनासद हमीं तू न यज़्दाँ करीम । न ख़्वाहद हमी तू बदौलत अज़ीम ॥ ८६ ॥ अगर सद क़ुराँ रा बख़ुरदी कसम । मरा इअतबारे न ईं ज़रह दम ॥ ८७ ॥ (मू०ग्रं०१३६२) हज़ूरी न आयम न ईं रह शवम । अगर शह बख़्वाहद मन आँ जा रवम ॥ ८८ ॥ ख़ुशश शाहि शाहान औरंगज़ेब । कि चालाक दसतु असतु चाबुक रकेब ॥ ८९ ॥ चि हुसनुल जमालसतु रौशन ज़मीर । ख़ुदावंद मुलकअसतु साहिब अमीर ॥ ९० ॥ बरतीब दानश ब तदबीर तेग़ । ख़ुदावंदि देग़ो ख़ुदावंदि तेग़ ॥ ९१ ॥ कि रौशन ज़मीर असतु हुसनुल जमाल । ख़ुदावंद बख़शिंदहे मुलक माल ॥ ९२ ॥ कि बख़शिश कबीर असतु दर जंग कोह ।

होगी (और उसके द्वारा की गई निर्दोष हत्याओं का लेखा-जोखा देना होगा) ॥ ८१ ॥ अगर तुम इन बातों को भुलाने की कोशिश करोगे तो ख़ुदा तुझे भी भुला देगा ॥ ८२ ॥ अगर तूने इस काम को पूरा करने के लिए कमर बाँध ली तो ख़ुदावंद तुझे ख़ुशनसीब बना देगा ॥ ८३ ॥ यह कार्य अच्छा है, धर्म के नाम का है, ईश्वर को जानने का है और प्राणों के लिए भलाईकारक है ॥ ८४ ॥ मैं तुम्हें ख़ुदा की पहचान करनेवाला नहीं मानता, क्योंकि तुम बहुत से दिल दुखी करनेवाले काम कर चुके हो ॥ ८५ ॥ वह दयालु प्रभु भी तुम्हें नहीं पहचानता और तुम्हारी बड़ी दौलत को नही जानता ॥ ८६ ॥ (अब) यदि तुम क़ुरान की सौ क़समें (भी) खा लो तो मुझे रत्ती भर विश्वास नहीं ॥ ८७ ॥ मैं तेरे दरबार में भी नहीं आऊँगा और न ही इस रास्ते पर चलूँगा । अगर बादशाह कोई स्थान तय करे तो मैं भी नहीं जाऊँगा ॥ ८८ ॥ औरंगज़ेब तू (अपने आपको) शहंशाह (मानकर) ख़ुश है । तू चालाक और दृढ़ शासक (अपने आपको मानता) है ॥ ८९ ॥ तू सुन्दर-स्वरूप, बुद्धि का मालिक (मानता) है । देश का स्वामी और अमीरों का मालिक (मानता) है ॥ ९० ॥ तुम युक्ति और तलवार से दे[illegible] को काबू कर रहे हो । इसीलिए देग़ और तेग़ के मालिक (मानते हो ९१ तुम प्रबुद्ध हो प्र और सुन्दर स्वरूप वाले प्रजा के

मलायक सिफ़त चूँ सुरय्या शकोह ॥ ९३ ॥ शहिनशाहि औरंगज़ेब आलमी । कि दाराइ दौर असतु दूर असत दीं ॥ ९४ ॥ मनम कुशतहअम कोहियाँ बुत परसत । कि आँ बुत परसतंदु मन बुत शिकसत ॥ ९५ ॥ बबीं गरदशे बेवफ़ाए ज़मा । पसे पुशत उफ़तद रसानद ज़ियाँ ॥ ९६ ॥ बबीं कुदरते नेक यज़दानि पाक । कि अज़ यक बदह लख रसानद हलाक ॥ ९७ ॥ कि दुशमन कुनद मिहरबाँ असतु दोसत । कि बखशिंदगी कार बखशिंदह ओसत ॥ ९८ ॥ रिहाई दिहो रहिनुमाई दिहद । ज़ुबाँ रा बसिफ़त आशनाई दिहद ॥ ९९ ॥ खसम रा चु कोरऊ कुनद बकति कार । यतीमाँ बिरूँमे बुरद बेअज़ार ॥ १०० ॥ हराँकस कि ओ रासतबाज़ी कुनद । रहीमे बरो रहमसाज़ी कुनद ॥ १०१ ॥ कसे खि़दमत आयद बसे कलबो जाँ । खुदावंद बखशीद बर वै अमाँ ॥ १०२ ॥ चि दुशमन बहाँ हीलहसाज़ी कुनद । कि बर

स्वामी और देश को दौलत देनेवाले हो ॥ ९२ ॥ तुम बड़े मेहरबान हो, युद्ध में पर्वत के समान अडिग हो, फ़रिश्तों के समान कलापूर्ण हो और तुम्हारा प्रताप आकाश की ऊँचाई तक फैला हुआ (माना जाता) है ॥ ९३ ॥ तुम सम्राट् हो, जगत् के सिंहासन की शोभा से युक्त हो। धरती के चक्र को सँभालनेवाले हो, पर धर्म से विहीन और दूर हो ॥ ९४ ॥ मैं धूर्त पहाडी राजाओं का नाशक हूँ, क्योंकि वे मूर्तिपूजक हैं। वे मूर्तिपूजक हैं और मै मूर्ति-भंजक हूँ ॥ ९५ ॥ देखो, ज़माने की बेवफ़ाई का हाल, यह जिसके पीछे पड़ जाता है उसे नुक़सान पहुँचाता है ॥ ९६ ॥ परन्तु दूसरी तरफ उस नेक खुदा की क़ुदरत को भी देख जो दूसरी ओर दस लाख (असंख्य) को भी मौत देता है ॥ ९७ ॥ शत्रु क्या कर सकता है, अगर दोस्त मेहरबान हो। उस दाता (खुदा) का काम ही कृपा करना है ॥ ९८ ॥ वह मुक्तिदाता पथ-प्रदर्शक है और जीभ को उसकी स्तुति की पहचान देता है ॥ ९९ ॥ शत्रु को बुरा कर्म करते समय अंधा कर देता है और अनाथों को काँटे जितना घाव लगे बिना ही वह (शत्रु के) घेरे से बाहर निकाल लेता है ॥ १०० ॥ उस प्रत्येक व्यक्ति से जो (संसार में)सत्य की कमाई करता है, दयालु परमात्मा रहम का बर्ताव करता है ॥ १०१ ॥ अगर कोई दिलोजान से उसकी सेवा में आता है तो वह खुदावंद प्रभु उस पर सुख शांति की कृपा करता है १०२ शत्रु उसके साथ चलाकी क्या कर सकता है जिस पर

वै ख़ुदा रहमसाज़ी शबद ॥ १०३ ॥ अगर यक बरायद दहो दह हज़ार । निगहबान ऊ रा शवद किरदगार ॥ १०४ ॥ तुरा गर नज़र हसत लशकर व ज़र । कि मारा निगह असतु यज़दाँ शुकर ॥ १०५ ॥ कि ऊ रा ग़रूर असत बर मुलकु माल । व मारा पनाह असतु यज़दाँ अकाल ॥ १०६ ॥ तु ग़ाफ़ल मशौ ज़ी सिपंजी सराइ । कि आलम बगुज़रद सरे जा बजाइ ॥ १०७ ॥ बबीं गरदशि बेवफ़ाए ज़माँ । कि बर हर बुगुरज़द मकीनो मकाँ ॥ १०८ ॥ तु गर ज़बर आजज़ ख़राशी मकुन । क़सम रा ब तेशह तराशी मकुन ॥ १०९ ॥ चुहक यार (पृ०पं०१३९३) बाशद चि दुशमन कुनद । अगर दुशमनीरा ब सद तन कुनद ॥ ११० ॥ ख़सम दुशमनी गर हज़ार आवुरद । न यक मूइ ऊ रा अज़ार आवुरद ॥ १११ ॥

अगंजो अभंजो अरूपो अरेख । अगाधो अबाधो अभरमो अलेख ॥ ११२ ॥ अरागो अरूपो अरेखो अरंग । अजनमो अबरनो अभूतो अभंग ॥ ११३ ॥ अछेदो अभेदो अकरमो

मार्गदर्शक खुदा खुश हो ॥ १०३ ॥ यदि एक अकेले पर दस हज़ार दुश्मन चढ़ाई कर दे तो भी कर्त्ता-पुरुष उसका रक्षक होता है ॥ १०४ ॥ तुम्हारी नजर अगर (अपनी) फ़ौज की तरफ़ है (तो) मेरी नजर भी परमात्मा का धन्यवाद करने की ओर है ॥ १०५ ॥ जो अहंकार उसे अपनी सल्तनत और दौलत पर है वैसे ही मुझे अकालपुरुष के आश्रय पर फ़ख़्र है ॥१०६॥ तू इस नाशवान दुनिया में बेख़बर मत हो, क्योंकि जगत निरन्तर परिवर्तनशील एवं चलायमान है ॥ १०७ ॥ इस परिवर्तनशील ज़माने को देख जो हर मकान और मकान में रहनेवाले पर अधिकार जमाए जा रहा है ॥ १०८ ॥ तुम अगर बलवान हो तो ग़रीबों को दु:खी मत करो और क़समों के औज़ारों से लोगों को मत छीनो ॥ १०९ ॥ अगर ख़ुदा दोस्त है, तो दुश्मन क्या कर लेगा; चाहे शत्रु सैकड़ों लोगों को एकत्र कर ले ॥ ११० ॥ शत्रु अगर शत्रुता निभाने के लिए हज़ार व्यक्ति भी चढ़ा लाए तो भी एक बाल टूटने जितना दु:ख भी नही ला सकता ॥ १११ ॥ परमात्मा गणनाओं से परे, नष्ट न होनेवाला, रूप-रेखा से परे, अगाध, भ्रमों से परे, और सभी हिसाबों से दूर है ॥ ११२ ॥ वह राग, रूप, रेखा और रंग से विहीन है । वह अजन्मा है, वर्णों से परे है भूतातीत है तथा विनष्ट होनेवाला नही है ११३ वह अछेद्य अभेद अकर्म और कामनाओ से विहीन है वह शोक से दूर अभेदनशील

अकाम । अखेदो अभेदो अभरमो अभाम ॥ ११४ ॥ अरेखो अभेखो अलेखो अभंग । ख़ुदावंद बख़शिंदहे रंग रंग ॥ ११५ ॥ १ ॥

॥ हिकायत पहिली समापतम ॥

हिकायत दूसरी ॥

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

हिकायत शुनीदेम राजहि दिलीप । निशसतह बुबह निज़द मानो महीप ॥ १ ॥ कि ओरा हमी बूद पिसरे चहार । कि दर रज़म दर बज़म आमुख़तह कार ॥ २ ॥ ब रज़म अंदराँ हम चु अज़ शेर मसत । कि चाबक रिकाबसतु गुसताख़ दसत ॥ ३ ॥ चहारो शहे पेश पिसराँ बुख़ाँद । जुदा बर जुदा कुरसीए ज़र निशाँद ॥ ४ ॥ बि पुरशीद दानाइ दउलत परसत । अज़ो अंदरूँ बादशाही कस असत ॥ ५ ॥ शुनीद आँ रु दानाइ दानश निहाद । ब तसकीन पासख अलम बर कुशाद ॥ ६ ॥ ब गुफ़तंद ख़ुश दीन दानाइ नग़ज़ । कि यज़दाँ

भ्रमातीत और (भावातीत) है ॥ ११४ ॥ वह आकार, वेश, लेख से दूर अभजनशील, कृपालु, रंगों का रंग, ख़ुदावन्द है ॥ ११५ ॥ १ ॥

॥ दास्तान पहली समाप्त ॥

दास्तान दूसरी

मैंने राजा दिलीप की कहानी सुनी है, जो राजा मांधाता के पास बैठा हुआ था ॥ १ ॥ उसके चार पुत्र थे जो युद्धविद्या और सभा का शिष्टाचार सीखे हुए थे ॥ २ ॥ वे लड़ाई में मगरमच्छ और मस्त शेर की तरह शत्रु-दल पर टूट पड़नेवाले थे और पक्के घुड़सवार, तलवारबाज़ और मजबूत बाजुओं वाले थे ॥ ३ ॥ चारों पुत्रों को राजा ने पास बुलाया और उन्हें सोने के आसनों पर बैठा दिया ॥ ४ ॥ राजगद्दी के बारे में चतुर वजीरों से पूछा कि इन चारों में से राज्यसत्ता के योग्य कौन है ॥ ५ ॥ जब बुद्धिमान वजीर ने यह सुना तो उत्तर देने के लिए उसने झंडा उठाया अर्थात् कहना शुरू किया ॥ ६ ॥ वह कहने लगा कि हे राजन् ! तुम अच्छे धर्म वाले, बुद्धिमान और चतुर हो ८ की पहचान वाले और स्वतन्त्र बुद्धि

शनासअसतु आज़ाद मग़ज़ ॥ ७ ॥ मरा कुदरते नेसत ईं गुफ़त नीसत । सुखन गुफ़तनो बिकर जाँ सुफ़त नीसत ॥ ८ ॥ अगर शहि बिगोयद बिगोयम जवाब । नुमायम ब तो हाल ईं बा सवाब ॥ ९ ॥ हराँ कस कि यज़दान यारी दिहद । ब कारे जहाँ कामगारी दिहद ॥ १० ॥ कि ईं रा ब अकल आज़माई कुनेम । वज़ाँ पस ब कार आज़माई कुनेम ॥ ११ ॥ यके रा दिहद फ़ील दहि हज़ार मसत । हमह मसतीओ मसत ज़ंजीर बसत ॥ १२ ॥ दिगर रा दिहद असप पाँ सद हज़ार । ज़ि ज़र साख़तह ज़ीन चूँ नउ बहार ॥ १३ ॥ सियम रा दिहद शुतर सि सद हज़ार । हमह नुकरह बारो हमह ज़र निगार ॥ १४ ॥ चुअम रा दिहद मुंग यक (मू०ग्रं०१३९४) नुख़द नीम । अज़ाँ मरद आज़ाद आकल अज़ीम ॥ १५ ॥ बियावुरद पुर अकल ख़ानह कज़ाँ । दिगर नीम नुख़दश ब बसतन अज़ाँ ॥ १६ ॥ हमी ख़ाशत को तुख़ न रेज़ी कुनद । ख़िरद आज़मायश बरेज़ी कुनद ॥ १७ ॥ दफ़न करद हरदो ज़िमी अंदराँ । नज़र करद बर शुकर साहिब गिराँ ॥ १८ ॥ चु

वाले हो ॥ ७ ॥ यह कहने की मुझमें शक्ति नहीं, क्योंकि यह कहना मानों कुँवारी कन्या को मुसीबत में डालना है ॥ ८ ॥ राजन् ! यदि आज्ञा हो तो मैं उत्तर दूँ और मैं भली प्रकार से इस बात का विस्तार कर दिखाऊँ ॥ ९ ॥ वह व्यक्ति जिसकी परमात्मा सहायता करता है, संसार के सभी कामों में सफलता प्राप्त कर लेता है ॥ १० ॥ यदि पहले इनकी बुद्धि-परीक्षा कर ली जाय तो बाद में इनके काम की भी जाँच की जा सकती है ॥ ११ ॥ एक पुत्र को दस हज़ार मस्त हाथी दे दो जो सभी ही मस्ती में मस्त और जंजीरों के साथ बँधे हुए हों ॥ १२ ॥ दूसरे को राजा पाँच लाख घोड़े दे दे, जिनकी ज़ीन आदि सामान सोने का, नई ऋतु के समान बनाया हुआ हो ॥ १३ ॥ तीसरे को राजा तीन लाख ऊँट दे दे जो सभी चाँदी के भार से लदे हुए और सोने से सजाए हुए हों ॥ १४ ॥ राजा चौथे पुत्र को एक दाना मूँगी और आधा दाना चने का दे दे, क्योंकि वह स्वतन्त्र विचारों वाला और परम बुद्धिमान है ॥ १५ ॥ वह जो अक़्ल का भंडार (राजकुमार) था वह यह घर ले आया और फिर उसने आधे चने के बराबर एक अन्य साबूत दाना ले लिया ॥ १६ ॥ वह बीज को बोना चाहता था और इससे भाग्य अथवा अपनी बुद्धि की परीक्षा ले लेना चाहता था ॥ १७ ॥ वे दोनों बीज उसने धरती में दबा दिये और बड़े ‹ का › करते हुए

शश माहि गुशतंद दरां दफ़नवार । पदीद आमदह सबज़हे नउ बहार ॥ १९ ॥ बरेज़ीद दहि साल तुख़मे कज़ां । ब परवरदह ओरा बुरीदन अज़ाँ ॥ २० ॥ बरेज़ी दहे बीसत बारश अज़ो । बसे गशतह खरवार दानह अज़ो ॥ २१ ॥ चुना जियादह शुद दउलते दिल करार । कज़ो दानह शुद दानहाए अंबार ॥ २२ ॥ खरीदह अज़ाँ नकद दहि हज़ार फ़ील । चु कोहे रवाँ हम चु दरीआइ नील ॥ २३ ॥ बगीरद अज़ो असप पाँसद हज़ार । हमह ज़र व ज़ीनो हमह नुकरहवार ॥ २४ ॥ खरीदंदसे सद हज़ारो शुतर । हमह ज़रह बारो हमह नुकरह पुर ॥ २५ ॥ वज़ाँ दाल नउ शहिर आज़म बुबसत । कि नामे अज़ाँ शहिर दिहली शुदसत ॥ २६ ॥ दिगर दानह रा बसत मूँगीपटन । चु दोसताँ पसंदसतु दुशमन फ़िकन ॥ २७ ॥ बगुज़रीद दह दो बर ईं नमत साल । बसे गशत जो दउलते बे ज़वाल ॥ २८ ॥ चु बिनशसत बर तख़त मानो महीप । बपुरशस दरामद सहे हफ़त दीप ॥ २९ ॥ बिगोयद

उसने उस पर आशा टिका दी ॥ १८ ॥ जब धरती में बोये उसे छः महीने बीत गये, तो नये मौसम में उसे हरा रंग नज़र आया अर्थात् उन बीजों से नये पौधे उगे दिखने लगे ॥ १९ ॥ दस साल तक उसने बोया और जो बीज उससे हुआ उसको पाला और उससे पैदा हुई खेती को काटा ॥ २० ॥ जब दस-बीस बार उसको बोया तो उससे अनाज के बहुत से ढेर पैदा हो गये ॥ २१ ॥ उसकी इतनी अधिक दौलत हो गई कि उसके दिल की संतुष्टि हो। उन दानों से अनाज के ढेर लग गये ॥ २२ ॥ उसने उस धन से दस हज़ार हाथी मोल लिये जो पर्वतों के समान बड़े शरीर वाले और नील नदी के समान धीमे-धीमे मस्ती से चलनेवाले थे ॥ २३ ॥ उसने उस धन से पाँच लाख घोड़े मोल लिये जो सारे ही सोने की ज़ीनों वाले और चाँदी की लड़ियों वाले थे ॥ २४ ॥ उसने तीन लाख ऊँट मोल लिये जो सारे ही सोने से लदे हुए और चाँदी से सुसज्जित थे ॥ २५ ॥ उस दाल के दाने (की आमदनी) से एक बहुत बड़ा नया शहर भी बना जिसका नाम दिल्ली कहा जाने लगा ॥ २६ ॥ दूसरे मूँग के दाने से मूँगीपट्टन नामक नगर बना जो मित्रों को अच्छा लगनेवाला और दुश्मनों के दिल को तोड़नेवाला है ॥ २७ ॥ इसी प्रकार बारह वर्ष बीत गये और उसके पास अक्षय भंडार धन का जमा हो गया २८ जब सिंहासन पर बैठा और वज़ीर

बपेशीन कागज़ बियार । चि बख़शीदअम मन ब पिसराँ चहार ॥ ३० ॥ दबीरे कलम बर कलम जन गिरिफ़त । जवाबे सुख़न रा अलमबर गरिफ़त ॥ ३१ ॥ बगुफ़ता चि बख़शीद ऐशाँ हज़ार । ब कागज़ बुबीं ताँ ज़ुबानस बियार ॥ ३२ ॥ ब कागज़ बुबीं ता बिगोयद ज़ुबाँ । चि बख़शीद शुद बख़श हरकस अज़ाँ ॥ ३३ ॥ चु बिशनीद सुख़न अज़ महीपान मान । फ़रिशतह सिफ़त चूँ मलायक मकान ॥ ३४ ॥ बयारी मरा पेश बख़शीदह मन । चरागे जहाँ आफ़ताबे यमन ॥ ३५ ॥ बिगोयद कि मुरदंद बाजे मुहिम । कि मा हम बसा फ़ील बख़शीदह अम ॥ ३६ ॥ दिगर रा बपुरशीद (मू०ग्रं०१३९५) असप सच करद । कि बाजे बबख़शीद बाजे बिमुरद ॥ ३७ ॥ सिअम रा बपुरशीद शुतराँ नुमाँ । कुजा तो बबख़शीद ए जान माँ ॥ ३८ ॥ बगुफ़ता कि बाज़े बकार आमदंद । बबख़श अदरूँ बेशुमार आमदंद ॥ ३९ ॥ चुअम रा बपुरशीद कि ए नेक बख़त । सज़ावार देहीम सायान तख़त ॥ ४० ॥ कुजा गशत बख़शश तुमारा फ़हीम । यके दानह मुंगो दिगर नुख़द

उसके पास आया तो उसनें सातों द्वीपों के राजाओं के बारे मे पूछा ॥ २९ ॥ (राजा ने वज़ीर से कहा) कि पहला कागज़ लाओ और देखो कि मैंने पुत्रों को क्या दिया था । गिनती करके बताओ ॥ ३० ॥ क़लम चलानेवाले मुंशी ने क़लम हाथ में पकड़ ली और फिर उत्तर देने के लिए उसने झंडा खड़ा किया ॥ ३१ ॥ राजा ने कहा कि कागज़ पर से पढ़कर फिर मुझे बताओ कि मैंने इन्हें कितने हज़ार दिया है ? ॥ ३२ ॥ कागज पर देखो और ज़ुबान से बताओ कि एक-एक को क्या मिला है ? ॥ ३३ ॥ महाराज मांधाता की बात, जो कि देवताओं की पदवी और गुणों वाला था, सबने सुनी ॥ ३४ ॥ जगत के दीपको और यमन देश के सूर्यो, मैंने जो कुछ तुम्हें दिया था उसे मेरे सामने लाओ ॥ ३५ ॥ (बड़े लड़के ने) कहा कि हाथी लड़ाई में मारे गए हैं । जो बचे वे मैंने लोगों और सेवकों को दान कर दिए हैं । (अब मेरे पास कुछ नहीं है ।) ॥ ३६ ॥ दूसरे पुत्र से राजा ने पूछा कि उसने घोड़ों का क्या किया ? उसने भी कहा कि कई तो मैंने दान कर दिए और कई मर गए हैं ॥ ३७ ॥ तीसरे पुत्र से पूछा कि ऊँट कहाँ हैं ? मुझे दिखाओ । हे मेरे प्राण, उन्हें कहाँ दिया है ? ॥ ३८ ॥ उसने कहा कि कई एक तो लड़ाई मे मारे गए अनेको दान मे काम आ गए और इस समय मेरे पास एक भी ऊँट बाक़ी नहीं है जो आपको दिखाया

नीम ॥ ४१ ॥ शबद गर हुकम ता बियारेम पेश । हमह फ़ीलु असपो अज़ो शुतर बेश ॥ ४२ ॥ नज़र करद फ़ीले दो दहि हज़ार मसत । पुर अज़ज़र बारो हमह नुकरह बसत ॥ ४३ ॥ हुमाँ असप पाँसद हज़ार आवरीद । हुमाँ ज़रज़ीन बेशुमार आवरीद ॥ ४४ ॥ हमह ख़ोद ख़ुफ़तान बरगशतवाँ । बसे तीरु शमशेर कीमत गिराँ ॥ ४५ ॥ बसे शुतर बगदाद ज़र बफ़त बार । ज़रो जामह नीम आसतीं बेशुमार ॥ ४६ ॥ कि दहि नीलु दहि पदम दीनार ज़रद । कज़ो दीदह शुद दीदहे दोसत सरद ॥ ४७ ॥ कि यक मुंग यक शहिर ज़ो काम शुद । कि मूँगीपटन शहिर ओ नाम शुद ॥ ४८ ॥ कि नीमि नुख़दरा दिग़र शहिर बसत । कि नामे अज़ो शहिर दिहली शुद असत ॥ ४९ ॥ ख़ुश आमद ब तदबीर मानो महीप । ख़िताबश ब दो दाद राजह दलीप ॥ ५० ॥ कि पैदा अज़ो मरद शाहन शही । सज़ावार तख़त असतु ताज़ो महो ॥ ५१ ॥ बज़ेबद

जा सके ॥ ३९ ॥ चौथे पुत्र से पूछा कि हे भाग्यशाली, हे छत्र के योग्य और राजगद्दी के लायक ॥ ४० ॥ मेरा दिया हुआ कहाँ गया ? तुम मुझे समझाओ कि एक दाना मूंग और आधा दाना (जो मैंने तुम्हें दिया था) कहाँ है ? ॥ ४१ ॥ उसने कहा कि यदि आज्ञा हो तो मैं सामने ले आऊँ, उनसे जो हाथी, घोड़े और ऊँट बन गए हैं ॥ ४२ ॥ उसने बारह हज़ार हाथी लाकर राजा को भेंट किए जो सभी सोने से लदे और चाँदी में जड़े हुए थे ॥ ४३ ॥ वह दस लाख घोड़े भी ले आया और साथ ही असख्य सोने की ज़ीन भी ले आया ॥ ४४ ॥ वह लौह-टोप, सुनहरी ज़िरहबख्तर, सुनहरी झालरें, बहुत से तीर और तलवारें ले आया ॥ ४५ ॥ बहुत से बगदाद के ऊँट (उसने दिए) जो रेशम से लदे हुए और सोने-कपड़े आदि से लदे थे ॥ ४६ ॥ दस नील, दस पदम पीले रंग की मुहरें थीं जिन्हें देखकर दोस्तों की आँखें ठंडी होती हैं ॥ ४७ ॥ एक मूँगी के दाने से एक बड़ा शहर तैयार हुआ है जिसका नाम मूँगीपट्टन प्रसिद्ध है ॥ ४८ ॥ जो आधा चने का दाना था उससे दूसरा शहर बसाया है जिसका नाम दिल्ली है ॥ ४९ ॥ मांधाता राजा को चौथे पुत्र की युक्ति अच्छी लगी, उसने उसे राजा दिलीप की पदवी से बिभूषित कर दिया अर्थात् उस दिन से उसका नाम दिलीप रख दिया ॥ ५० ॥ उससे जो राजसी प्रताप प्रकट हुआ उससे वह धरती पर सिंहासन और ताज के योग्य हो गया ॥ ५१ ॥ ऐसे मर्द को छत्र, चँवर और मुहर शोभा देती है और उसकी बुद्धि भी

अज़ो मरद ताज़ौ नर्गी । बर अकलु तदबीर हज़ार आफ़रीं ॥ ५२ ॥ सि ओ असत बेअकल आलूदह मग़ज़ । न रफ़तार खुशतर न गुफ़तार नग़ज ॥५३॥ हमी खासत कि ओरा बशाही दिहम । ज़ि दउलत खुदशरा अगाही दिहम ॥ ५४ ॥ बज़े बद कज़ो रंग शाहनशही । कि साहिब शऊर असत व मालक मही ॥ ५५ ॥ ख़िताबश कज़ो गशत राजह् दलीप । खिलाफ़त बबख़शीद मानो महीप ॥ ५६ ॥ सि पिसरां दिगर शाहि आज़ाद करद । न दानश परसतो न आज़ाद मरद ॥५७॥ कि ओरा बरो ज़र सिंघासन्न निशाद । कलीदे कुहन गंजरा बर कुशाद ॥ ५८ ॥ बदो दाद शाही खुद आज़ाद गशत । बपोशीद दलकश रवां शुद बदसत ॥ ५९ ॥ बिदिह साकीया सागरे (मू०ग्रं०१३९६) सबज़ रंग । की मारा बकार असत दर वकत जंग ॥ ६० ॥ ब मन दिह कि बख़त आज़माई कुनम । ज़ि तेग़े खुदश कारवाई कुनम ॥ ६१ ॥ २ ॥

॥ हिकायत दूसरी समापतम ॥

युक्ति पर हज़ारों शत्रु क़ुर्बान होते हैं ॥ ५२ ॥ (बाक़ी के) तीनों (पुत्र) ही मूर्ख और बददिमाग़ हैं । उनकी न तो बोली और न ही गति प्यारी है अर्थात् न तो उन्हें बात करने की तमीज़ है और उन्हें न ही किसी कार्य को पूरा करना आता है ॥ ५३ ॥ इस (राजा) ने सोचा कि मैं इसे गद्दी दे दूं और अपनी दौलत के बारे में भी इसे बता दूं ॥ ५४ ॥ (अब) राजा (दिलीप) राजगद्दी पर शोभा देता है जो (स्वयं) बुद्धिमानों और धरती का मालिक है ॥ ५५ ॥ राजा दिलीप उसकी पदवी हो गई है और राजा मांधाता ने उसे बादशाही बख्श दी है ॥ ५६ ॥ बाक़ी के तीनों पुत्रों को राजा ने देश से निकाल दिया, क्योंकि न तो वे बुद्धिमान थे और न ही विकारों से मुक्त थे ॥ ५७ ॥ उसे सोने के सिंहासन पर बैठा, कुंजी से पुराना खज़ाना खोलकर दे दिया ॥ ५८ ॥ राजा मांधाता ने उसे राज्य दे दिया और स्वयं गृहस्थ के बंधनों से आज़ाद हो गया । फ़क़ीरों वाली गुदड़ी धारण कर ली और जंगल की ओर चलता बना ॥ ५९ ॥ हे साक़ी ! मुझे (प्रभु के नाम का) हरे रंग वाला प्याला दे, जिसकी मुझे युद्ध में भी ज़रूरत है ॥ ६० ॥ मुझे दो, ताकि मैं अपने भाग्य की परीक्षा कर सकूं और अपनी तलवार का काम शुरू कर सकूं ॥ ६१ ॥ २ ॥

दूसरी समाप्त

हिकायत तीसरी ॥

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

खुदावंद दानश दिहो दादगर । रज़ा बख़श रोज़ी दिहो हर हुनर ॥ १ ॥ अमाँ बख़श बख़शिंद ओ दसतगीर । कुशायश कुनो रहिनुमायश पज़ीर ॥ २ ॥ हिकायत शुनीदम यके नेक मरद । कि अज़ दउर दुशमन बरावुरद गरद ॥ ३ ॥ खसम अफ़कनो शाहि चीं दिलफ़राज़ । ग़रीबुल निवाज़ो ग़नीमुल गुदाज़ ॥ ४ ॥ जि रज़मो ब बज़मो हमह बंदुबसत । कि बिसयार तेग़ असत हुशयार दसत ॥ ५ ॥ निवालह पियालह जि रज़मो ब बज़म । तु गुफ़ती कि दीगर यले शुद ब बज़म ॥ ६ ॥ ज़ि तीरो तुफ़ंग हम चु आमुख़तह शुद । तु गोई कि दर शिकम अंदोख़तह शुद ॥ ७ ॥ चु मालश गिरानश मतायश अज़ीम । कि मुलकश बसे असत बख़शश करीम ॥८॥ अज़ो बादशाही ब आख़र शुदसत । निशसतंद वज़ीरान ओ पेश

दास्तान तीसरी

ख़ुदा बुद्धिदाता, न्याय देनेवाला है। आनंददायक एवं अन्न तथा समस्त विद्याओं का दाता है ॥ १ ॥ वह सुखदायक, उदार एवं सहायक है। वह बंधनों को दूर करनेवाला, पथ-प्रदर्शक एवं मनभावन है ॥ २ ॥ एक भले पुरुष की हमने कहानी सुनी है, जिसने शत्रु के प्रभाव की धूल उड़ा दी अर्थात् जिसने शत्रु को मारकर मिट्टी में मिला दिया ॥ ३ ॥ चीन का बादशाह शत्रुओं का नाशक और दिल का दानी था। वह ग़रीबों की बड़ाई करनेवाला और शत्रु को गला डालनेवाला था ॥ ४ ॥ वह युद्ध और सभा में सब प्रबंध करनेवाला था और तलवार चलाने में फुर्तीले हाथों वाला था ॥ ५ ॥ खाने-पीने में, युद्ध और सभा (दोनों स्थानों) में किसी से कम नहीं था। तुम तो यही कहोगे कि सभा में वह दूसरा (ही) पहलवान था ॥ ६ ॥ तीर और बंदूक़ में ऐसा निपुण था कि तुम (यही) कहोगे कि यह तो माँ के पेट में से ही सीखकर आया है ॥ ७ ॥ धन, माल एवं पदार्थ उसके पास बहुत थे। उसके पास देश भी बहुत थे और दान देने में वह दयालु था ॥ ८ ॥ जब उसके राज का अंतिम समय आ गया तो मंत्री उसके आगे-पीछे आकर बैठ गए ९

पसत ॥ ९ ॥ कि तो पस किरा बादशाही दिहम । किरा ताज इकबाल बर सर निहम ॥ १० ॥ किरा मरद अज़ खानह बेरूँ कुनद । किरा बखत इकबाल बर सर निहद ॥ ११ ॥ ब होश अंदर आमद कुशादो दु चशम । बगुफ़ता सुख़न शाहि पेशीन रसम ॥ १२ ॥ न पाओ न दसतो न चशमो ज़ुबाँ । न होशो न हिंमत न हैबत कसाँ ॥ १३ ॥ न हउलो न हिंमत न हीलह् न होश । न बीनी न बीनायगी हर दु गोश ॥ १४ ॥ हराँ कस कि हसत आज़मायश बवद । वज़ाँ दउर दी बादशाहश बवद ॥ १५ ॥ अजबमाँद दानाइ दउर ईं जवाब । सुख़नबाज़ दीगर कुनद बा सवाब ॥ १६ ॥ बकिंगश दर आमद दिरंगश गिरिफ़त । जवाबे सुख़न रा बरंगश गिरिफ़त ॥ १७ ॥ चपोरासतश करद चरखे ज़ुबाँ । बरा बुरद सुख़ने चु कैबर कमाँ ॥ १८ ॥ कि ए शाहि हुशियार आज़ाद मग़ज़ । चिरामे तु गोई दरीं कार नग़ज़ ॥ १९ ॥ (मू०ग्रं०१३९७) कसे रा शवद कार ईं दर ज़माँ । वज़ाँ हसत ऐब असत ज़ाहर

(और पूछने लगे— हे सम्राट् !) तुम्हारे बाद यह राज्य किसे दिया जाय ? किसके सिर पर यह प्रतापी छत्र-चँवर झूले ? ॥ १० ॥ किस मर्द को हम घर (के सुखों) से वंचित करें (और यह उत्तरदायित्व दें) ? किसके सिर पर यह भाग्यशाली छत्र रखें ? ॥ ११ ॥ (मंत्रियों की बातें सुनकर बादशाह) होश में आया (और उसने) आँखें खोलीं और फिर राजा ने मर्यादा की बात कही ॥ १२ ॥ जिसके पैर, हाथ, आँखें और जिह्वा नहीं; जिसे होश-हिम्मत और लोगों का दबाव नहीं ॥ १३ ॥ जिसे भय नहीं, हिम्मत, यत्न, सुरति नहीं; जिसे नाक नहीं, नजर और दो कान भी नहीं है ॥ १४ ॥ जो इस तरह की परीक्षा में पूरा हो उसी की आज्ञा में चलने से धर्म का राज्य होगा ॥ १५ ॥ समय के विद्वान इस उत्तर को सुनकर हैरान रह गए। फिर दूसरी बार वे भली प्रकार से बात करना चाहने लगे ॥ १६ ॥ (मंत्री) सलाह करने के लिए सभा में आया और उसने कुछ देर लगाई और फिर बात के उत्तर को बड़ी अच्छी तरह कहने लगा ॥ १७ ॥ वह बाएँ-दाएँ करता हुआ जीभ को कमान के तीर की तरह निशाने पर ले आया ॥ १८ ॥ हे राजन् ! तुम बहुत चतुर और अलौकिक बुद्धि वाले हो। (परन्तु) तुमने क्या कहा है, इस बात पर मैं हैरान हूँ ॥ १९ ॥ जिस किसी का संसार में यह हाल हो उसके हाथ सारे जगत् को सौंप देना वास्तव मे बुरा है ॥ २० ॥ हे धरती और समुद्र के

जहाँ ॥ २० ॥ कि ई हसत ऐबो तु गोई हुनर । कि ए शाह शाहान हमह बहर बर ॥ २१ ॥ न दर जंग पुशतो न दुशनाम दाद । न अंगुशतबर हरफ़ दुशमन निहाद ॥ २२ ॥ न आराम दुशमन न आज़ार दोसत । जवाबे गदारा अदूरा बपोसत ॥२३॥ न वी शिदह रा जा न हरफ़ो निहद । सुखन रा बहक जाइ शरफ़ो बिहद ॥ २४ ॥ न उसताद रा दाद जाए सुखन । फ़रामोशगी चूँ बकारे कुहन ॥ २५ ॥ बबद मसलिहत कस न दादन दिग़र । बिहस नाम ओ चूँ तु गोयद हुनर ॥ २६ ॥ न बीनद दिगर ज़न ब चशमो ख़ुदश । न बद कार कस करद नज़रे बदश ॥ २७ ॥ नज़र करद कस बर न हरफ़े हराम । निगह दाशत बरशुकर यज़दाँ मुदाम ॥ २८ ॥ नज़र रा बबदकार दीगर बबसत । शनासी तु तहकीक ओ कोर हसत ॥ २९ ॥ कदन रा न दारद बबदकार कार । न दर जंग पसपाउ पुशते बरार ॥ ३० ॥ न दरकार दुज़दी न दिल बिशकनी । न ख़ानह ख़ुरमबाज़

स्वामी ! जो तुम कह रहे हो, दुनिया इसे अवगुण कहेगी, परन्तु तुम इन्हें गुण बना रहे हो ॥ २१ ॥ (तुमने) आज तक युद्ध में न पीठ दिखाई है, न किसी को गाली दी है और न ही शत्रु के लिखे (सुलहनामा) पर कभी अंगुली रखी है अर्थात् हस्ताक्षर किए हैं ॥ २२ ॥ शत्रु को तुमने सुखी नहीं बैठने दिया, मित्र को दुखी नहीं होने दिया । याचक को जवाब नहीं और दुश्मन को खाल खींचे बिना जाने नहीं दिया ॥ २३ ॥ लेखक को बुरा लिखने का मौक़ा नही दिया और सत्य बात कहनेवाले को बड़प्पन के स्थान पर रखा ॥ २४ ॥ आज तक गुरु को बात कहने का मौक़ा नहीं दिया, पर अब पुराने कार्य को क्यों भूल गए हो ? ॥ २५ ॥ बुरी सलाह तो किसी पराए को भी नहीं देनी चाहिए । तुम्हारे जैसा (सयाना राजा) उस बुराई का नाम गुण (कैसे) कह सकता है ॥ २६ ॥ (जो) अपनी आँखों से किसी औरत की तरफ़ बुरे भाव से नहीं देखता है और न ही किसी अन्य के काम पर बुरी नज़र रखता है ॥ २७ ॥ जो किसी के दुर्वचनों पर ध्यान नही देता, सदैव परमात्मा का धन्यवाद करने को तत्पर रहता है ॥ २८ ॥ जिसने अपनी दृष्टि को दूसरे के बुरे कामों की ओर से बाँध रखा है, वास्तव में अंधा (अर्थात् दूसरे को बुराई न चाहनेवाला) वही है ॥ २९ ॥ जो क़दमों को बुरे कामों में रखता नहीं और न ही हज़ारों के पीछे लगकर युद्ध में से पाँव पीछे हटाता है ३० जो चोरी कर्म में नही जाता न ही किसी का दिल दुखाता है

नह रहज़नी ॥ ३१ ॥ बनाकस दुआए न गोयद सुख़न । ब ख़ाहश ख़राशी न जोई सुख़न ॥ ३२ ॥ ब बदकार कस दर न दारंद पाइ । कि ओ पाइ लंग असतु गोईं बजाइ ॥ ३३ ॥ ब दुज़दी मतारा न आलूदह् दसत । ब ख़ुरशे हरामो कुशायद न दसत ॥३४॥ बख़ुद दसत ख़ाहंद न गीरंद माल । न रइयत ख़राशी न आजज़ ज़वाल ॥ ३५ ॥ दिगर ज़न न ख़ुद दसत अंदाख़तन । रईयत ख़ुलासह् न बर ताख़तन ॥ ३६ ॥ बख़ुद दसत रिशवत न आलूदह् करद । कि अज़ शाहि दुशमन बरावुरद ग़रद ॥ ३७ ॥ न जाए अदूरा दिहद वकत जंग । बुबारश दिहद तेग़ तरकश ख़तंग ॥ ३८ ॥ न रामश दिहद असप रा वक़त कार । न जायश अदूरा दिहद दर दियार ॥ ३९ ॥ कि बे दसत ओ हसत गो पुर हुनर । ब आलूदगी दर न बसतन कमर ॥ ४० ॥ न गोयद कसे बद सुख़न ज़ीं ज़ुबान । कि ओ बे ज़ुबानसत ज़ाहर जहान ॥ ४१ ॥ शुनीदन न बद सुख़न कसरा बगोश । (मू०ग्रं०१३९८) कि ओ हसत बेगोश गोई

न शराबी के घर जाता है और न ही डाका मारता है ॥ ३१ ॥ जो बददुआ नहीं देता और जो दूसरों को दुखानेवाली बात ढूँढ़ने का भी इच्छुक नही है ॥ ३२ ॥ जो किसी का बुरा करने के लिए क़दम नहीं उठाता, वह पाँव से लूला है और यह मैंने सही कहा है ॥ ३३ ॥ जिसने किसी की पूँजी चुराने में हाथ गंदा नहीं किया है और हराम का खाना खाने के लिए हाथ नहीं पसारा है ॥ ३४ ॥ जो अपने हाथ से पराया सामान पकड़ना नहीं चाहता। प्रजा को दुखी नहीं करता और न ही ग़रीबों-मुहताजों का नुक़सान करता है ॥ ३५ ॥ जिसने पराई औरत पर हाथ नहीं डाला और प्रजा की स्वतन्त्रता पर भी धावा नहीं बोला है ॥ ३६ ॥ जिसने अपना हाथ रिश्वत से गंदा नहीं किया अपितु हाथ से राजा के शत्रु (रिश्वत देनेवाले) को ख़ाक में मिला दिया है ॥ ३७ ॥ जो युद्ध में शत्रु को वार करने का मौक़ा नहीं देता, जो तलवारें चलाता है और तरकस में से तीरों की बरसात कर देता है ॥ ३८ ॥ जो काम के वक़्त घोड़े को (भी) आराम नहीं करने देता और शत्रु को रहने का ठिकाना नहीं देता ॥ ३९ ॥ गुणवान पुरुष उसे हस्त-विहीन अर्थात् लुंज कहते हैं। वह हाथ से बुरा काम करने की कमर नही बाँधता ॥ ४० ॥ जो व्यक्ति इस ज़ुबान से बुरा वचन नहीं कहता वह प्रत्यक्ष ही जगत में गूँगा है ४१ जो कानो से किसी की बुरी बातें नही

बहोश ॥ ४२ ॥ कि पस परदह चुगली शुनीदन न कस । बजाँ खुद शनासी कि गोईं शहस ॥ ४३ ॥ कसे कार बदरा न गीरद बोइ । कि ओ हसत बे बीनिओ नेक ख़ोइ ॥ ४४ ॥ न हउलो दिगर हसत जुज़बा खुदाइ । कि हिंमत बरां दा दरारद ज़ि पाइ ॥ ४५ ॥ ब होश अंदर आमद हमह वक़त जंग । कि कोशश कुनद पाइ ब तीरो तुफ़ंग ॥ ४६ ॥ कि दरकार इनसाफ ओ हिंमत असत । कि दर पेश गुरबाइओ आजज़ असत ॥ ४७ ॥ न हीलह कुनद वक़त दर कार ज़ार । न हैबत कुनद दुशमना बेशुमार ॥ ४८ ॥ हरां कस कि जीं हसत गाज़ी बवद । ब कारे जहाँ रज़म साज़ी कुनद ॥ ४९ ॥ कसे रा कि ईं कार आयद पसंद । बजाँ शाहि बाशद जहाँ अरज़मंद ॥ ५० ॥ शुनीद ईं सुख़न दउर दाना वज़ीर । कि आकल शनास असत पोज़श पज़ीर ॥ ५१ ॥ कसे रा शनासद ब अक़ले बिही । मरो रा बिदिह ताजु तख़तो मही ॥ ५२ ॥ ब बख़शीद ओरा मही तख़त ताज । गर ओरा शनासी रईयत निवाज़ ॥ ५३ ॥ ब हैरत दरआमद बपिसराँ चहार । कसे

सुनता, वह पुरुष सच में ही बहरा है। यह बात विज्ञ पुरुषों ने कही है ॥ ४२ ॥ जो पीठ पीछे किसी की चुगली नहीं सुनता उसे ही अपना राजा पहचानो और कहो ॥ ४३ ॥ जो किसी के बुरे काम की गंध भी नहीं लेता वह नाक के बिना है और अच्छे स्वभाव वाला है ॥ ४४ ॥ जिसे खुदा के सिवा किसी अन्य का डर नहीं है; जो हिम्मत वालों को आटे की तरह कर देता है अर्थात् बलवानों को पीस देता है ॥ ४५ ॥ जो युद्ध में सदा चैतन्य होकर आता है और तीरों-बंदूकों के साथ युद्ध करता है ॥ ४६ ॥ जो न्याय के कामों मे जुटा रहता है; जो गरीबों के सामने भी अपने आपको मुहताज ही समझता है ॥ ४७ ॥ जो युद्ध के समय कोई बहाना नहीं ढूँढ़ता और असंख्य शत्रु-सेना को देखकर भयभीत नहीं होता ॥ ४८ ॥ जो कोई इस तरह का गाजी (वीर) हुआ है और जो जगत्-कार्यों में भी युद्ध की तैयारी करता है ॥ ४९ ॥ जिस किसी व्यक्ति को यह सब पसन्द होगा उसी व्यक्ति के राजा बनने से जगत सम्मान प्राप्त करेगा ॥ ५० ॥ समय के चतुर वजीर ने इस बात को सुना और समझा कि राजा चतुर, विज्ञ और प्रार्थना को माननेवाला है ॥५१॥ जिस किसी को तुम अच्छी अक़लवाला समझते हो, ठीक उसे ही राजगद्दी और छत्र-चँवर दे दो ॥ ५२ ॥ तुम धरती गद्दी और ताज दे दो। यदि तुम उसे प्रजा का पोषण करनेवाला मान लो ५३ यह सुनकर राजा के चारे

गोइ गीरद हमह वक़त कार ॥ ५४ ॥ हराँ कस कि रा अक़ल यारी दिहद । ब कारे जहाँ कामगारी कुनद ॥ ५५ ॥ बिदिह साक़ीया सागरे सबज़ रंग । कि मारा बकार असत दर वक़त जंग ॥ ५६ ॥ बिदिह साकीया सागरे नैन पान । कुनद पीर सद सालह रा नउ जवान ॥ ५७ ॥ ३ ॥

॥ हिकायत तीसरी समापतम ॥

हिकायत चौथी ॥

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

कि रोज़ी दिहंद असतु राज़क़ रहीम । रहाई दिहो रहिनुमाए करीम ॥ १ ॥ दिल अफ़ज़ाइ दानश दिहो दादगर । रज़ा बख़श रोज़ी दिहो हर हुनर ॥ २ ॥ हिकायत शुनीदम यके नेक ज़न । चु शमशाद कद्दे ब जोए चमन ॥ ३ ॥ कि ओ रा पदर राजहे उत्तर देश । ब शीरी ज़ुबाँ हुस्न च इख़लास केश ॥ ४ ॥ कि आमद बराए हमह ग़ुसल गंग । चु कंबर

पुत्र हैरानी में आ गए। कौन भला चाहता था राज्य रूपी गेंद न पकड़ूँ ॥ ५४ ॥ जिस किसी व्यक्ति को बुद्धि सहायता प्रदान करती है वह संसार के कामों में उसकी इच्छा पूरी करती है ॥ ५५ ॥ हे साक़ी, मुझे हरे रंग का प्याला ला दो जो मुझे युद्ध में भी काल देनेवाला है ॥ ५६ ॥ हे साक़ी, आँखों को रंगीन करनेवाला, प्याला मुझे दो जो सौ वर्षों के बूढ़ों को जवान कर देता है ॥ ५७ ॥ ३ ॥

॥ दास्तान तीसरी समाप्त ॥

दास्तान चौथी

जो रोज़ी देनेवाला, हुक्म चलानेवाला और दयालु है। वह छुटकारा देनेवाला और पथ-प्रदर्शक कृपालु है ॥ १ ॥ जो दिल को उत्साहित करनेवाला, अक्ल देनेवाला, न्याय करनेवाला, ख़ुशी देनेवाला, अन्नदाता और सभी गुणों से युक्त है ॥ २ ॥ हमने एक नेक औरत की कहानी सुनी है जो देवदार के पेड़ की तरह ऐसी लम्बी थी मानों नदी के किनारे पर बगीचे में लम्बा देवदार खड़ा नज़र आता हो ॥३॥ उसका पिता पहाड़ी देश का राजा था जो चीनी की तरह मीठी ज़ुबान वाला और धर्म तथा प्यार वाला था ४ ।

कमाँ हम चु तीरे तुफ़ंग ॥ ५ ॥ (मू०ग्रं०१३९९) हमी ख़ासत कि ओरा स्वयंबर कुनम । कसे ई पसंद आयद ओरा दिहम ॥ ६ ॥ बिगोयद सुख़न दुख़तरे नेक तन । कसे तो पसंद आयद ओरा बकुन ॥ ७ ॥ निशादंद बरकाख़ ओ हफ़त ख़न । चु माहे महो आफ़ताबे यमन ॥ ८ ॥ दहाने दुहदरा दहन बर कुशाद । जवाबे सुख़न रा उज़र बर निहाद ॥ ९ ॥ कि ई राजहे राजहा बेशुमार । कि वक्ते तरद्दद बिआमुख़-तहकार ॥ १० ॥ कसे तो पसंद आयदत ईं जमाँ । वज़ाँ पस ब दामादी आयद हुमाँ ॥ ११ ॥ नुमादंद ब ओ राजहाँ बेशुमार । पसंदश नियामद कसे कार बार ॥ १२ ॥ हम आख़र यके राजहे सुभट सिंघ । पसंद आमदश हम चु गुररा निहंग ॥ १३ ॥ हमह उमदहे राजहा पेश ख़ाँद । जुदा बर जुदा दउर मजलस निशाँद ॥ १४ ॥ ब पुरशीद कि ए दुख़तरे नेक खोइ । तुरा कस पसंद आयद अज़ीहाँ बजोइ ॥ १५ ॥ ख़्वाँ करदु जनार दारान पेश । बिगोयद कि ई राजहे उत्तर देश ॥ १६ ॥ कि ओ नाम बसतश बछतरामतो । चु माहे

वह सारे परिवार को साथ लेकर गंगा-स्नान करने के लिए इस तरह आया जैसे कमान से तीर और बंदूक से गोली निकली हो ॥ ५ ॥ राजा की यह इच्छा भी है कि लड़की का स्वयंवर करूँ। यदि कोई लड़का पसन्द आ जाए तो उसे मैं लड़की दे दूँ ॥ ६ ॥ राजा ने कहा कि हे पवित्रात्मा पुत्री ! जो पुरुष तुम्हें पसंद आ जाए उसे पति बना लो ॥ ७ ॥ उस लडकी को सात छतरों वाली अट्टालिका पर बैठा दिया । वह पूर्णिमा के चन्द्र और सूर्य के समान प्रकाशमान थी ॥ ८ ॥ पहले राजा ने ढोल बजवाया, फिर (विनम्रता से) लड़की से कहा ॥ ९ ॥ हे नेक पुत्री ! देखो ये असख्य राजागण यहाँ एकत्र हुए हैं जो युद्धकला में पूर्णतः प्रवीण हैं ॥ १० ॥ जो भी व्यक्ति इस समय तुझे पसन्द आएगा वही फिर मेरा दामाद बनकर आएगा ॥ ११ ॥ उसे अनेकों राजा दिखाए गए पर व्यवहार से उसे कोई भी राजा पसन्द नहीं आया ॥१२॥ अन्त में सुभटसिंह नामक एक राजा उसे पसन्द आया जो घड़ियाल की तरह गर्जना करनेवाला था ॥१३॥ सभी अच्छे राजागण आगे बुला लिये गये और सभा में चारों ओर उन्हें अलग-अलग सिंहासनों पर बिठा दिया गया ॥ १४ ॥ (राजा ने पूछा—) हे नेक स्वभाव वाली पुत्री ! इन सबमें से तुम्हें कौन सा व्यक्ति पसन्द आया है ? १५ राजा ने ब्राह्मणों

फ़लक आफ़ताबे मही ॥ १७ ॥ अज़ी राजहाँ कस नियामद नज़र । वज़ाँ पस अज़ी हाँ बुबीं पुर गुहर ॥ १८ ॥ नज़र करद बर राजहा नाज़नीं । पसंदश नियामद कसे दिल नगीं ॥ १९ ॥ स्वयंबर वजाँ रोज़ मउकूफ़ गशत । कि नाज़म बु बरख़ासत दरवाज़ह बसत ॥ २० ॥ कि रोज़े दिगर शाहि ज़र्रीं सिपहर । बर अउरंग बरामद चु रउशन गुहर ॥ २१ ॥ दिगर रोज़ हे राजहा ख़ासतंद । दिगर गूनह बाज़ार आरासतंद ॥ २२ ॥ नज़र कुन बरोए तु ए दिलरुबाइ । किरा तो नज़र दर बियायद बजाइ ॥ २३ ॥ ब पहिन अंदर आमद गुले अंजमन । कि ज़र आब रंग असतु सीमाब तन ॥ २४ ॥ रवाँ गशत दर राजहा बेशुमार । गुले सुरख़ चूँ गुंबज़े नउ बहार ॥ २५ ॥ ब दुज़दीद दिल राजहा बेशुमार । बिअफ़तद ज़िमी चूँ यले कारज़ार ॥ २६ ॥ बिज़द बाँग बर वै कि ख़ातून ख़ेश । कि ई उमदहे राजहा उत्तर

को आगे भेजा । उन्होंने कहा कि यह उत्तर देश का राजा है ॥ १६ ॥ उसकी पुत्री का नाम बछत्रामती है जिसकी सुन्दरता चन्द्र-सूर्य की तरह है ॥ १७ ॥ इन राजाओं में से कोई भी नज़र में चढ़ा नहीं है । तत्पश्चात् उससे कहा कि हे गुणों में पूर्ण ! इनमें से भी देख लो ॥ १८ ॥ उस कोमल शरीर वाली ने (इन) राजाओं पर भी नज़र फेंकी पर उसे कोई आदमी भी पसन्द न आया जो उसके दिल का मोती होता ॥ १९ ॥ उस दिन स्वयंवर स्थगित कर दिया । प्रबंधक उठ खड़े हुए और दरवाज़ा बंद हो गया ॥ २० ॥ दूसरे दिन सुनहरी ढाल वाला राजा अपने श्रेष्ठ सिंहासन पर बैठा और मोती की तरह प्रकाशमान हुआ ॥ २१ ॥ दूसरे दिन भी राजाओं को बुला लिया गया और दूसरे ढंग से सभा को सँवारा गया ॥ २२ ॥ (राजा ने फिर कहा) हे मन को मोहित करनेवाली प्यारी पुत्री ! तुम इन सबके चेहरों पर निगाह डालो । तुम्हारी नज़र में कौन ठीक है ? ॥ २३ ॥ वह सभा के फूल के समान सामने आ गई । उसके शरीर की आभा पारे जैसी और रंग सुनहरा है ॥ २४ ॥ पिता की आज्ञा पाकर बछत्रामती अनेकों राजाओं के बीच से घूम गई । ऐसी लगती थी मानों वसंत ऋतु में वह गुलाब के फूलों की मीनार हो ॥ २५ ॥ अनेकों राजाओं का दिल उसने चुरा लिया । वे सब विमोहित होकर धरती पर ऐसे गिर गए जैसे शूरवीर रणभूमि में गिरे पड़े हों ॥ २६ ॥ ब्राह्मण ने उन राजाओं से कहा यह जो अत्यन्त सुन्दर है यह उत्तर देश के

देश ॥ २७ ॥ वजाँ दुख़तर हसत ईं बछतरामती । चु माहे (मू०ग्रं०१४००) फ़लक हम चु हूरो परी ॥२८॥ स्वयंबर दरामद चु माहे फ़लक । फ़रिशतह सिफ़त ओ चु ज़ातश मलक ॥२९॥ किरा दउलत इकबाल यारी दिहद । कि ईं माहरो कामगारी दिहद ॥ ३० ॥ पसंद आमद ओ राजह सुभटसिंघ नाम । कि रउशन तबीयत सलीख़त मुदाम ॥ ३१ ॥ रवाँ करद बर वै बकीलस गिराँ । कि ए शाह शाहान रउसन ज़माँ ॥ ३२ ॥ कि ईं तरज़ लालाइ बरगे समन । कि लाइक सुमान असत ईं रा बकुन ॥ ३३ ॥ बिगोयद यके ख़ानह बानू मरासत । कि चशमे अज़ो हरदू आहू तरासत ॥ ३४ ॥ कि हरगिज़ मन ईं रा न करदम कबूल । कि कउले कुराँ असत कसमे रसूल ॥ ३५ ॥ ब गोश अंदर आमद अज़ीं न सुख़न । बजुंबश दरामद ज़ने नेक तन ॥ ३६ ॥ कसे फ़तह मारा कुनद वकत कार । वज़ाँ शाहि मारा शवद ईं दियार ॥ ३७ ॥ ब कोशीद मैदान जोशीद जंग । बकोशीद

राजा की पुत्री है ॥ २७ ॥ बछत्रामती नामक उसकी पुत्री है। यह आकाश के चन्द्रमा की तरह प्रकाश-पुंज और परी की तरह नाजुक शरीर वाली है ॥ २८ ॥ आकाश के चन्द्रमा की तरह यह स्वयंवर के पंडाल में आई है। यह फ़िरिश्ते के गुणों वाली और देवताओं जैसे शरीरवाली है ॥ २९ ॥ (अब देखो) प्रतापी भाग्य किसकी'मदद करता है। जो भाग्यशाली है उसे ही यह प्राप्त होकर उसकी इच्छा पूरी करेगी ॥ ३० ॥ सुभटसिंह नामक राजा उसे पसद आया। जो प्रकाशित बुद्धि वाला और सदैव मुस्कुरानेवाला था ॥ ३१ ॥ उसने उसके पास बड़े-बड़े वकील भेज दिए जो (सुभटसिंह से) कहने लगे, हे राजाओं के राजन् और समय के प्रकाश अर्थात् समय को समझनेवाले ! ॥ ३२ ॥ यह इस तरह की खूबसूरत है, मानों लाले का फूल और चमेली का पत्ता हो। यह हर प्रकार से आपके लायक है ॥ ३३ ॥ (सुभटसिंह ने) कहा कि मेरे घर में एक स्त्री है जिसकी दोनों आँखें मानों हिरण के बच्चों के समान हैं ॥ ३४ ॥ मैं इसे कभी भी क़बूल नहीं कर सकता, क्योंकि क़ुरान का हुक्म है और रसूल की क़सम है ॥ ३५ ॥ जब इस तरह की बात उसके कानों में पड़ी तो उस पवित्र शरीर वाली स्त्री (कन्या) के मन में जोश आ गया ॥ ३६ ॥ (उसने कहा—) जो कोई मुझे युद्ध में जीतेगा वह ही मेरा और इस मुल्क का मालिक बनेगा ३७ युद्ध के लिए उसने

ख़ुफ़तान पोलाद रंग ॥ ३८ ॥ निशसतह बर आँ रथ चु माहे मुनीर । बुबसतंद शमशेर जुसतंद तीर ॥ ३९ ॥ ब मैदाँ दरआमद जु गुररीद शेर । चु शेर असत शेर अफ़कनो दिल दलेर ॥ ४० ॥ ब पोशीद ख़ुफ़तान जोशीद जंग । ब कोशीद मैदान तीरो तुफ़ंग ॥ ४१ ॥ चुनां तीर बारा कुनद कारज़ार । कि लशकर बकार आमदश बे शुमार ॥ ४२ ॥ चुनां बान बारीद तीरो तुफ़ंग । बसो मरदमाँ मुरदह शुद जाइ जंग ॥ ४३ ॥ सहे नाम गजसिंघ दरामद बजंग । चु कैबर कमा हम चु तीरो तुफंग ॥ ४४ ॥ बजुंबश दरामद चु अफ़रीत मसत । यके गुरज़ अज़ फ़ील पैकर ब दसत ॥ ४५ ॥ यके तीर ज़द बानूए पाक मरद । कि गजसिंघ अज़ असप आमद ब गरद ॥ ४६ ॥ दिगर राजह रनसिंघ दरामद ब रोश । कि परवानहे चूँ दरामद बजोश ॥ ४७ ॥ चुनां तेग़ ज़द बानुए शेर तन । बियफ़ताद रनसिंघ चु सरवे चमन ॥ ४८ ॥

बहुत शीघ्रता की और बड़े ज़ोर-शोर से युद्ध किया। उसने शरीर पर फ़ौलाद का बख़्तर पहन लिया ॥ ३८ ॥ पूर्णिमा के चाँद की तरह (बछत्रामती) रथ में बैठ गई। कमर के साथ उसने तलवार बाँध ली और कमान हाथ में पकड़ लिया ॥ ३९ ॥ दहाड़ते हुए शेर की तरह वह युद्धभूमि में आ गई। वह शेर जैसी है, पर शेर को भी पटक फेंकनेवाली है। वह दिल से दिलेर है ॥ ४० ॥ लौहकवच को गले में पहन उसने भारी जोश के साथ जंग शुरू कर दी और वीरों को बंदूकों के साथ मैदान जीतने की कोशिश की ॥ ४१ ॥ लड़ाई में उसने तीरों की ऐसी बारिश की कि (सुभट सिंह की) बहुत सी फ़ौज मारी गई ॥ ४२ ॥ तीरों और गोलियों की इस तरह की बारिश की कि लड़ाई में बहुत से लोग मुर्दा हो गए ॥ ४३ ॥ गजसिंह नामक राजा युद्धभूमि में ऐसे आया जैसे कमान में से तीर और बंदूक में से गोली आती है ॥ ४४ ॥ वह मतवाले दैत्य के समान क्रोधित होकर युद्ध में आया। उसने एक हाथ में हाथी के शरीर जैसी (बहुत बड़ी) गदा पकड़ रखी थी ॥ ४५ ॥ उस नेक औरत ने उस मर्द को एक ही तीर में मार डाला, जिससे गजसिंह घोड़े पर से मिट्टी में आ गिरा ॥ ४६ ॥ दूसरा राजा रनसिंह भी क्रोधित हो युद्ध में आया था जो युद्ध रूपी दीपक पर पतंगे की तरह जोश में भरकर आया था ॥ ४७ ॥ शेर जैसे बलवान शरीर वाली स्त्री ने जब तलवार मारी तो बाग़ के देवदार

यके शहिर अंबेर दिगर जोधपुर। खरामीदह बानो चु रख़्शिंदह दुर ॥ ४९ ॥ बिज़द तेग़ बा ज़ोर बानो सिपर। ब बरखेज़ शोलह बसे चूँ गुहर ॥ ५० ॥ सियम राजह बूँदी दर (मू०ग्रं०१४०१) आमद दलेर। चु बर बच्चह आहू चु गुररीद शेर ॥ ५१ ॥ चुना तीर ज़द हर दो अबरू सिकंज। बिअफ़ताद अमरसिंघ चु शाखे तुरंज ॥५२॥ चुअम राजह जैसिंघ दरआमद मुसाफ। बजोश अंदरों शुद चु अज़ कोहकाफ़ ॥ ५३ ॥ हुमाँ ख़ुरद शरबत कि यारे चुअम। ज़ि जैसिंघ पसे यक निआमद कदम ॥ ५४ ॥ यको शहि फिरंगो पिलंदे दिगर। ब मैदा दरामद चु शेरे बबर ॥ ५५ ॥ सियम शाहि अंगरेज चूँ आफ़ताब। चुअम शाहि हबशी चु मगरे दर आब ॥ ५६ ॥ यके रा बिज़द नेफह मुशते दिगर। सियम रा ब पाओ चुअम रा सिपर ॥ ५७ ॥ चुना से बिअफ़तद न बरख़ासत बाज़। सूए आसमाँ जान परवाज़ साज़ ॥ ५८ ॥ दिगर कस नियामद तमंनाइ जंग। कि पेशे

वृक्ष की तरह रनसिंह (कटकर) धरती पर गिर पड़ा ॥ ४८ ॥ एक आमेर और दूसरा जोधपुर का राजा दोनों एक साथ ही मैदान में आए। वह चमकीले शरीरवाली स्त्री फुर्ती के साथ इनके सामने आ गई ॥ ४९ ॥ जब उन्होंने तलवार का ज़ोरदार वार किया तो उस (स्त्री) ने उसे ढाल पर रोका। ढाल में से चिंगारियां निकलीं जो मोतियों जैसी चमकनेवाली थीं ॥ ५० ॥ तीसरा बूंदी शहर का राजा हिम्मत के साथ आया मानो शेर दहाड़ता हुआ हिरन के बच्चों पर टूट पड़ता हो ॥ ५१ ॥ दोनों भृकुटियों में ऐसा तीर मारा जिससे वह राजा अमरसिंह डाली से टूटे नींबू की तरह धरती पर आ गिरा ॥ ५२ ॥ चौथा राजा जयसिंह रणभूमि में आया जो अंदरूनी जोश में कोहकाफ़ पहाड़ की तरह ऊँचा हो गया था ॥ ५३ ॥ चौथे ने भी मित्रों वाला वही (मौत का) शरबत पिया। जयसिंह के बाद फिर कोई पुरुष एक क़दम आगे आया ॥ ५४ ॥ तीसरा सूर्य के समान तेजवान अंग्रेज आया। एक फिरंग (देश) और दूसरा पलंदर (देश) का (राजा) बब्बर शेर की तरह रणभूमि में आ पहुँचे ॥ ५५ ॥ चौथा हब्शी कौम का राजा ऐसे टूट पड़ा जैसे पानी में मगरमच्छ टूट पड़ता है ॥ ५६ ॥ एक को बरछा और दूसरे को मुक्का मारा, तीसरे को पैरों से कूट दिया और चौथे का मुँह ढाल से कुचल दिया ॥ ५७ ॥ वे चारों ऐसे गिर गए कि फिर उठ न सके उनके प्राण आकाश की ओर उड़

नियामद दिलावर निहंग ॥ ५९ ॥ शबेशहि शबिसता चूँ दर आमद बफ़उज । सिपह खानह आमद हमह मउज मउज ॥ ६० ॥ ब रोजे दिगर रउशनीअत पनाह । बअउरंग दर आमद चु अउरंग शाह ॥ ६१ ॥ दु सूए यलाँ हमह बसतंद कमर । ब मैदान जुसतंद सिपर बर सिपर ॥ ६२ ॥ बगुररीद आमद दु अबरे मुसाफ़ । यके गशतह घायल यके गशत जाफ़ ॥ ६३ ॥ चकाचाक बरखासत तीरो तुफ़ंग । खताखत दरामद हमह रंग रंग ॥ ६४ ॥ जि तीरो जि तोपो जि तेगो तबर । जि नेजह व नाचख व नावक सिपर ॥ ६५ ॥ यके देव आमद कि जागो निशां । चु गुररीद शेर हम चु पीले दमाँ ॥ ६६ ॥ कुनद तीरो बाराँ चु बाराँन मेग । बरखश अंदराँ अबर चूँ बरक तेग ॥ ६७ ॥ ब जोश अंदर आमद दहाने दुहल । चु पुर गशत बाजार दाए अजल ॥ ६८ ॥ हराँ कस कि पररा शवद तीर शसत । बसद पहिलूए पील

गए ॥ ५८ ॥ फिर अन्य किसी व्यक्ति को युद्ध करने की इच्छा नहीं हुई। हिम्मतवाला संसार का कोई भी व्यक्ति सामने नहीं आया ॥ ५९ ॥ रात का राजा चन्द्रमा रात में जब अपनी (किरणों की) फ़ौज समेत आ गया तो सबकी सेना अपने ठाठ अर्थात् दरिया की लहरों की तरह टकराकर अपने घर वापस आ गयी ॥ ६० ॥ दूसरे दिन प्रकाश का आश्रय सूर्य अपनी गद्दी पर आ गया, जैसे राजा अपने तख्त पर बैठता है ॥ ६१ ॥ दोनों ओर के शूरवीर कमर कस करके एकत्र हो गए और ढालों पर ढालें पकड़कर मैदाने जंग की तरफ़ चले गए ॥ ६२ ॥ लड़ाई के दो बादल (दोनों ओर से आये) और गरजने लग गए। उनमें से एक जखमी हो गया और एक दूर हो गया अर्थात् मर गया ॥ ६३ ॥ तीरों की सनसनाहट उठी और बंदूकों की कड़कड़ाहट की आवाज़ आने लगी। इस प्रकार सब ओर से रंगारंग आवाज़ें आ रही थीं ॥ ६४ ॥ तीरों, तोपों, तलवारों, कुल्हाड़ों, बरछों के साथ और तीरों-ढालों के साथ युद्ध हुआ ॥ ६५ ॥ एक दैत्य आया जो कौवे के समान काला था। वह शेर की तरह गुर्राने लगा। वह हाथी के समान मतवाला था ॥ ६६ ॥ वह वर्षा के समान तीर बरसाता है, और अपनी तलवार बादलों की बिजली के समान चमकाता है ॥ ६७ ॥ ढोल के मुँह को भी जोश आ गया और युद्ध-स्थल में मौत का जमाव हो गया ६८ (राजकुमारी के धनुष में से जो भी तीर चला वह बड़े डील डौल वाले शूरवीरो की सौ पसलियों में से पार हो

मरदाँ गुज़शत ॥ ६९ ॥ हुमाँकस बसे तीर जद बर कज़ाँ । बिअफ़ताद देवे चु करखे गिराँ ॥ ७० ॥ दिगर देव बरगशत बियामद बजंग । चु शेरे अज़ीमो हम चु बराँ पिलंग ॥ ७१ ॥ चुना ज़ख़म गोपाल अंदाखत सखत । बिअफ़ताद दानो चु बेख अज़ दरख़त ॥ ७२ ॥ दिगर कस नियामद अज़ो आरज़ो । कि आयद बजंगे चुनी माहरो ॥ ७३ ॥ सहे चीन सर ताज (मू०ग्रं०१४०२) रंगी निहाद । बलाए गुबारश दहन बर कुशाद ॥ ७४ ॥ शब आमद यके फ़उज रा साज़ करद । ज़ि दीगर वदह बाज़ी आग़ाज़ करद ॥ ७५ ॥ कि अफ़सोस अफ़सोस हैहात हात । अज़ीं उमर वज़ीं ज़िंदगी ज़ी हयात ॥७६॥ ब रोज़े दिगर रउशनीयत फ़िकर । बर अउरंग दरामद चु शाहे दिगर ॥ ७७ ॥ सियहि सूदु बरख़ासत अज़ जोश जंग । रवाँ शुद ब हर गोशह तीरो तुफ़ंग ॥ ७८ ॥ रवाँरव शुदह कैबरे कीनह कोश । कि बाज़ूए मरदाँ बरावुरद जोश ॥ ७९ ॥ चु लशकर तमामी दरामद ब काम । यके माँद ओ रासत सुभटसिंघ नाम ॥ ८० ॥

गया ॥ ६९ ॥ उसने भी उस पर बहुत से तीर मारे जिससे वह दैत्य ऊँचे महल की तरह गिर पड़ा (और मर गया) ॥ ७० ॥ एक अन्य दैत्य गिद्ध के समान था वह भी युद्ध के लिए आया । वह शेर के समान बड़ा था और पलंग के समान उड़नेवाला था ॥ ७१ ॥ राजकुमारी ने खींचकर गुलेल उसे मारा जिससे वह दैत्य इस तरह गिर पड़ा जैसे जड़ से उखड़ा वृक्ष गिर पड़ता है ॥ ७२ ॥ फिर किसी ने भी उसके सामने आने की इच्छा ज़ाहिर नहीं की जो चन्द्रमुखी जंग करने के लिए आई हुई थी ॥ ७३ ॥ चीन के राजा ने सिर से रंगीन ताज उतारकर रख दिया । काली चुड़ैल (रात) ने अपना मुँह खोल दिया है ॥ ७४ ॥ एक फ़ौज की तरह रात आ गयी । उसने दूसरी क़िस्म का खेल शुरू कर दिया ॥ ७५ ॥ (बख्तामती ने कहा—) हाय ! हाय ! अफसोस है; इस उम्र और इस ज़िंदगी पर ॥ ७६ ॥ दूसरे दिन रोशनी का प्रबंध करनेवाला (सूर्य) अपने आकाश रूपी सिंहासन पर राजा की तरह आ गया ॥ ७७ ॥ तब दोनों ओर की फ़ौजें दिल के उत्साह के साथ युद्ध के लिए उठ खड़ी हुईं । सभी कोनों में तीर और गोलियाँ चलना शुरू हो गईं ॥ ७८ ॥ बुरा करनेवाले तीर खूब चलने लगे और मर्दों की भुजाओं में जोश आ गया ७९ जब सारी फ़ौज मर गई

बिगोयद कि ए शाह रुसतम जमाँ । तु मारा बिकुन या बिगीरी कमाँ ॥ ८१ ॥ बगज़ब अंदर आमद चु शेरे जिआँ । न पुशते दिहम बानूए हम चुना ॥ ८२ ॥ बपोशीद खुफ़तान जोशीद जंग । बकोशीद चूँ शेर मरदाँ निहंग ॥ ८३ ॥ ब जायश दरामद चु शेरे अज़ीम । ब कैबर कमाँ कारद बारश करीम ॥ ८४ ॥ चपो रासत ओ करद खम करद रासत। गरेवे कमाँ चरख चीनी बिखासत ॥ ८५ ॥ हरांकस कि नेज़ह बिअफ़ताद मुशत । दुता गशत मुशते हमी चार गशत ॥ ८६ ॥ बियावेखत बा दीगरे बाज़ पर । चु सुरख अज़दहा बर हमी शेर नर ॥ ८७ ॥ चुना बान अफ़ताद तीरो तुफ़ंग । ज़मी कुशत गानश शुदह लालह रंग ॥ ८८ ॥ कुनद तीर बारान रोजे तमाम । कसे रा न गशतीद मकसूद काम ॥ ८९ ॥ अज़ो जंग ज़ो माँदगी माँदह गशत । बिअफ़ताद हरदो दर आ पहिन दसत ॥ ९० ॥ शहिनशाहि रूमी सिपर

तो पीछे एक ही बचा, जिसका नाम सुभटसिंह था ॥ ८० ॥ (बछत्तामती ने) कहा कि हे समय के रुस्तम राजा ! तुम मेरा वरण करते हो या हाथ मे धनुष पकड़ते हो ? ॥ ८१ ॥ (यह सुनते ही सुभटसिंह) क्रोधित हो शेर के समान भयानक होकर कहने लगा कि हे स्त्री ! मैं इस तरह लड़ाई मे पीठ नहीं दिखाऊँगा ॥ ८२ ॥ फिर उसने लौह-कवच पहन लिया और युद्ध मचा दिया। उस शेर मर्द ने मगरमच्छ की तरह का उपक्रम किया ॥ ८३ ॥ वह शेर की तरह चलता हुआ युद्ध में आ गया। धनुष से तीरों की बड़ी भीषण वर्षा कर दी ॥ ८४ ॥ उसने दाएँ-बाएँ वार किया फिर टेढ़ा सीधा मुक़ाबला किया। चीन देश के धनुष की आवाज़ आकाश तक गूँजी (अर्थात् सुभटसिंह के हाथ में चीन की कमान थी, जिसकी आवाज़ आकाश तक गूँजी) ॥ ८५ ॥ (बछत्तामती के) हाथ का बरछा जिस पर भी गिरा वह दो हो गया अथवा चार हिस्सों में भी बँट गया ॥ ८६ ॥ फिर पीछे की ओर से होकर दूसरे पर इस तरह झपट पड़ी, जैसे अजगर शेर पर टूट पड़ता है ॥ ८७ ॥ तीरों और गोलियों की ऐसी चोटें पड़ीं और मुर्दा लोगों के खून से धरती लाल रंग की हो गई ॥ ८८ ॥ दोनों तरफ़ से सारा दिन तीरों की बारिश हुई, परन्तु किसी की भी कामना पूरी न हो सकी ॥ ८९ ॥ लड़ाकू योद्धा उस युद्ध की थकान से दुखी हो गए और दोनों पक्षों के लोग उस उजाड़ मैदान मे गिर पड़े ९० रूम के शहनशाह ने अपने चेहरे पर ढाल रख ली

चुना जंग करदंद सुबह ताब शाम। बि अफ़ताब मुरछत न खुरदंद तआम ॥ १०२ ॥ ज़ि खुद माँदह शुद हरदु दर जाइ जंग। चुशेरो यीआनो चु बाज़ा पिलंग ॥ १०३ ॥ चु हबशी बरुद दुज़द दीनार ज़रद। जहाँ ग़शत चूँ गुंबज़े दूदगरद ॥ १०४ ॥ सियम रोज़ चौगाँ बिबुरद आफ़ताब। जहाँ ग़शत चूँ रउशनश माहिताब ॥१०५॥ बु बरख़ासत हरदो अज़ीं जाइ जंग। रवाँ करद हर सूइ तीरो तुफ़ंग ॥ १०६ ॥ चुना गरम शुद आतशे कारज़ार। कि फ़ीले दु दह हज़ार आमद ब कार ॥ १०७ ॥ ब कार आमदह असप हफ़त सद हज़ार। हमह ज्वान शाइसतहे नामदार ॥ १०८ ॥ ज़ि सिंधी व अरबी व ऐराक राइ। बकार आमदह असप चूँ बादु पाइ ॥ १०९ ॥ बसे कुशतह सरहंग शाइसतह शेर। बे वकते तरद्दद बकारे दलेर ॥ ११० ॥ ब गुररीदन आमद दुअबरे सियाह। नमे खून माही लको तेग़माह ॥ १११ ॥ बजंग अंदरूँ गउग़हे गाज़ीयाँ। ज़िमीं तंग शुद अज़ सुमे ताज़ीयाँ ॥ ११२ ॥ सुमे बाद पायान फ़ौलाद नाल। ज़िमी

तक भीषण युद्ध किया। रोटी भी न खायी और बेहोश होकर गिर पड़े ॥ १०२ ॥ वे दोनों स्वयं ही थक गए, क्योंकि उन्होंने युद्धभूमि में दो डरावने शेरों, बाज़ों और दो चीताओं की तरह लड़ाई की ॥ १०३ ॥ जब सोने की मुहर अर्थात् दिन के सूर्य को हब्शी अर्थात् अँधेरा चुराकर ले गया तो संसार धुएँ और गर्द के ढेर की तरह हो गया ॥ १०४ ॥ जब तीसरे दिन सूर्य बाज़ी मार ले गया अर्थात् निकला तो चन्द्रमा की तरह सारा जहान रोशन हो गया ॥ १०५ ॥ उस समय दोनों ओर के शूरवीर युद्ध में उठ खड़े हुए। सभी तरफ़ तीर और गोलियाँ चलना शुरू हो गयीं ॥ १०६ ॥ लड़ाई जब आग की तरह गर्म हो गई अर्थात् ज़ोर पकड़ गई तो हज़ारों हाथी मारे गए ॥ १०७ ॥ सात सौ हज़ार घोड़े मारे गए और सभी सुन्दर जवान और नामी योद्धागण भी मारे गए ॥ १०८ ॥ सिंधु देश, अरब देश, इराक देश के और हवा से तेज़ चलनेवाले अर्थात् सादे घोड़े मारे गए ॥ १०९ ॥ बहुत से सुन्दर, शेरों जैसे सिपाही मारे गए जो वक़्त पड़ने पर युद्ध के काम में बड़े हौसले वाले थे ॥ ११० ॥ दो गरजते हुए काले बादल आ गए। खून की बूंदें मछलियों तक और तलवारों की चमक चाँद तक पहुँच गई ॥ १११ ॥ जंग में योद्धाओं का घोर शराबा हो रहा है और घोड़ों की टापों से धरती

ग़शत पुशते पिलंगी मिसाल ॥ ११३ ॥ चराग़े जहाने खुमह बादह खुरद । सरे ताज दीगर बिरादर सपुरद ॥ ११४ ॥ बरोज़े चहारम तपीद आफ़ताब । ब जिलवह दर आवेख़त ज़र्रीं तनाब ॥ ११५ ॥ दिगर रवश मरदाँन बसतंद कमर । यमानी कमर दासत बररो सिपर ॥ ११६ ॥ चु होश अंदर आमद ब जोशीद जंग । ब रोस अंदर आमद चु कोशश पिलंग ॥ ११७ ॥ चुअम रोज़ कुशतंद दहि हज़ार फ़ील । दु दहि हज़ार असपो चु दरयाइ नील ॥ ११८ ॥ बकार आमदह पियादह सी सद हज़ार । जमाँ मरद शेरान (मू०ग्रं०१४०४) अज़मूदह कार ॥ ११९ ॥ कुनद ज़र्रहे रथ चहारो हज़ार । बशेर अफ़कनो जंग आमुख़तह कार ॥ १२० ॥ कि अज़ चार तीर असप कुशतश चहार । दिगर तीर कुशतश सरे बहिलदार ॥ १२१ ॥ सियम तीर ज़द हरदो अबरू शिकंज । कि मारे ब पेचीद ज़ि सउदाइ गंज ॥ १२२ ॥ चहारम बिज़द तीर ख़बरश नियाफ़त । कि भरमश ब बरख़ासत धरमश

दुखी हो रही है ॥ ११२ ॥ पवन-वेग से चलनेवाले घोड़ों की टापों पर जो लोहे की नालें लगी हैं, उनकी मार से धरती चीते की पीठ जैसी चितकबरी हो गई है ॥ ११३ ॥ जहान के चिराग़ (सूर्य ने) शराब का घड़ा लिया (और बेहोश होकर सो गया)। उसने अपने सिर का ताज अपने दूसरे भाई (चाँद) को सौंप दिया ॥ ११४ ॥ चौथे दिन सूर्य तपना शुरू हुआ और सज-धजकर उसने अपनी लगामें खींच लीं अर्थात् किरणें फैला दीं ॥ ११५ ॥ फिर शूरवीरों की तरह कमर कस ली। उसने यमन देश की बनी कमान हाथ में पकड़ ली और चेहरे पर ढाल की ओट कर ली ॥ ११६ ॥ जब होश आया तो क्रोधित होकर चीते की तरह कोशिश कर युद्ध करने लगे ॥ ११७ ॥ चौथे दिन दस हजार हाथी मारे गए, बारह हज़ार घोड़े मारे गए जो दरिया नील की तरह तेज चलनेवाले थे ॥ ११८ ॥ तीन सौ हजार पैदल फ़ौज मारी गई जिसमें शेरों की तरह जवान और आजमाए हुए थे ॥ ११९ ॥ चार हज़ार रथों को छोटे-छोटे टुकड़े कर फेंके। वे वीर जो लड़ाई में शेरों को मार फेंकनेवाले थे वे योद्धा रथों में ही मार डाले गए ॥ १२० ॥ चार तीरों के साथ चार घोड़े मार गिराए और दूसरा वीर सारथी के सिर में मारा १२१ तीसरा तीर दोनों भृकुटियों के बीच मारा जिसके कारण वह ऐसे तड़फड़ाया जैसे ख़ज़ाने

न ताफ़त ॥ १२३ ॥ बिज़द चूँ चुअम कौबरे नाज़नीं। बखुरदंद शहिरगा बिअफ़तद ज़िमीं ॥ १२४ ॥ बिदानिसत कि ईं मरद पथ मुरदह गशत । बिअफ़ताद बूम हम चुनी शेर मसत ॥ १२५ ॥ कि अज़ रथ बियामद बरामद ज़िमी। खरामीदह शुद पै करे नाज़नी ॥ १२६ ॥ बयक दसत बरदाशत यक प्यालह आब । बनिज़दे शहि आमद चु परा उक़ाब ॥१२७॥ बिगोयद कि ए शाहि आज़ाद मरद। चिरा खुफ़तह हसती तु दर खून गरद ॥ १२८ ॥ हुमा जानजानी तुअम नौजवाँ। बदीदन तुराँ आमदम ईज़माँ ॥ १२९ ॥ बिगोयद कि ए बानूए नेक बखत। चिरा तो बियामद दरीं जाइ सखत ॥ १३० ॥ अगर मुरदह बाशी दियारेम लास। व गर ज़िंदह हसती ब यज़दाँ सुपास ॥ १३१ ॥ अज़ाँ गुफ़तनीहाँ खुश आमद सुखन। बिगोयद कि ए नाज़नी सीम तन ॥ १३२ ॥ हरांकस कि खाही बिगो मन दिहम। कि ए शेर दिल मन गुलामे तुअम ॥ १३३ ॥ खुदावंद बाशी तु ए कार सखत।

की चिता में साँप तड़पता है ॥ १२२ ॥ (बछत्रामती ने) चौथा तीर मारा तो उसे (सुभटसिंह को) होश ही न आई। उसका भ्रम दूर हो गया और अपना धर्म याद ही न रहा ॥ १२३ ॥ कोमल शरीरवाली बछत्रामती ने जब चौथा तीर मारा तो वह (सुभटसिंह की) शाह रग में लगा जिससे वह धरती पर गिर पड़ा ॥ १२४ ॥ वह समझ गई कि यह पुरुष अधमरा हो गया है और मतवाले शेर की तरह धरती पर गिर पड़ा है ॥ १२५ ॥ वह रथ से बाहर निकली और धरती पर आई। वह कोमल शरीरवाली पुतली चल पड़ी ॥ १२६ ॥ उसने पानी का प्याला एक हाथ में उठाया और उकाब पक्षी की तरह उड़कर (बहुत फुर्ती से) सुभटसिंह के पास आ गई ॥ १२७ ॥ (आकर उसने कहा—) हे शूरवीर राजन् ! तुम खून और मिट्टी में क्यों सोए पड़े हो ॥ १२८ ॥ हे नौजवान प्रिय, मैं वही तुम्हारी दासी हूँ। तुम्हारा दर्शन करने के लिए इस समय यहाँ आई हूँ ॥ १२९ ॥ हे भाग्यशाली स्त्री, तुम इस भयानक स्थान पर क्यों आई हो ? ॥ १३० ॥ (बछत्रामती ने कहा—) अगर मर गए हो तो लाश ले आऊँ और अगर ज़िंदा हो तो खुदा का शुक्रिया अदा करूँ ॥ १३१ ॥ उसके मुँह से कही बातें (सुभटसिंह को) अच्छी लगी। उसने कहा कि चाँदी के वदन वाली कोमलांगी ! ॥१३२॥ जो तुम चाहती हो मुझे बताओ मैं तुम्हें दूँ। हे शेर दिल राजकुमारी

कि मारा बधक बार कुन नेक बख़्त ।। १३४ ।। बिज़द पुशत पाओ कुशादश ब चशम । हमह स्वश शाहान पेशीन रशम ।। १३५ ।। बिअफ़ताद बर रथ बिआवुरद जाँ । बिज़द नओबतश शाहि शाहे जहाँ ।। १३६ ।। बहोश अंदर आमद दु चशमश कुशाद । बिगोयद किरा जाइ मारा निहाद ।। १३७ ।। बिगोयद तुरा जफ़र जंग याफ़तम । ब कारे शुमा कत ख़ुदा याफ़तम ।। १३८ ।। पशेमा शबद सुख़न गुफ़तन फ़ज़ूल । हरांकस तु गोई कि बर मन कबूल ।।१३९।। बिदिह साकीया जाम फ़ेरोज़ह फ़ाम । कि मारा बकार असत रोज़े तमाम ।। १४० ।। तु मारा बिदिह ता शवम ताज़ह दिल । कि गौहर बिआरेम आलूदह गिल ।। १४१ ।। ४ ।। (मू०ग्रं०१४०५)

।। हिकायत चौथी समापतम ।।

मै तुम्हारा ग़ुलाम हो गया हूँ ।। १३३ ।। (बछत्रामती ने कहा—) हे कठोर कार्य करनेवाले शूरवीर ! तुम मेरे स्वामी बन जाओ और मुझे भी एक बार भाग्यशालिनी अर्थात् सुहागिन हो जाने दो ।। १३४ ।। उसने दोनों आँखे खोलीं और पश्चात्ताप से धरती पर पाँव मारा (कि मैंने इसे इच्छा पूरी करने का वचन ही क्यों दिया), परन्तु फिर उसने वही तरीक़ा अपनाया जो पहले राजा-महाराजागण अपनाया करते थे ।। १३५ ।। (वह) रथ पर लेट गया और वह उसे घर ले आई । जगत के सम्राटों के सम्राट् (बछत्रामती के पिता) ने उसी समय ख़ुशी का नगाड़ा बजवाया ।। १३६ ।। (जिस समय सुभटसिंह) होश में आया तो उसने दोनों आँखें खोलीं और कहा कि मुझे किसके घर में ले आए हो ? ।। १३७ ।। (बछत्रामती ने कहा—) तुम्हें मैंने लड़ाई में जीता है और तुम्हें पति के तौर पर प्राप्त किया है ।। १३८ ।। अपने व्यर्थ कहे वचन को याद कर राजा ने मन मे शर्मिंदा होते हुए कहा कि अब जो तुम कहो मुझे मंजूर है ।। १३९ ।। हे साक़ी ! मुझे हरी रंगत वाला प्याला दो जिसकी मुझे सब दिनों ज़रूरत है ।। १४० ।। तुम मुझे दो, ताकि मेरा मन ख़ुश हो । फिर मैं कीचड़ में सना मोती ले आऊँगा अर्थात् अच्छे गुणों को अपना लूँगा ।। १४१ ।। ४ ।।

चौथी समाप्त

हिकायत पंजवीं ॥

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

तुई रहिनुमाओ तुई दिल कुशाइ । तुई दसतगीर अंदर हर दो सराइ ॥ १ ॥ तुई राज़ रोज़ी दिहो दसतगीर । करीमे ख़ता बख़श दानश पज़ीर ॥ २ ॥ हिकायत शुनीदम यके काज़ीअश । कि बरतर न दीदम कज़ो दीगरश ॥ ३ ॥ यके खानह ओ बानूए नउजवाँ । कि कुरबाँ शवद हरकसे नाज़दाँ ॥ ४ ॥ कि शोसन सरे रा फ़रो मेज़दह । गुले लालह रा दाग बर दिल शुदह ॥ ५ ॥ कज़ाँ सूरते माहि रा बीम शुद । रशक शोखतह अज़ मियाँ नीम शुद ॥ ६ ॥ बकार अज़ सूए खानह बेरूँ रवद । ब दोशे ज़ुलफ शोर संबल शवद ॥ ७ ॥ गर आबे ब दरीया बशोयद रुख़श । हमह ख़ार माही शवद गुल रुखश ॥ ८ ॥ बख़म ओ फ़ितादह हुमा

दास्तान पाँचवीं

तुम ही मार्गदर्शक, चित्त को प्रसन्न करनेवाले और दोनों लोको मे हाथ पकड़नेवाले हो अर्थात् सम्पूर्ण संसार का आश्रय हो ॥ १ ॥ तुम ही धन और रोज़ी देनेवाले और सहारा देनेवाले हो । तुम ही कृपालु, भूलों को क्षमा करनेवाले, अंतर्यामी हो ॥ २ ॥ मैंने एक कहानी सुनी है कि एक क़ाज़ी था । उससे अच्छा अन्य कोई नहीं था ॥ ३ ॥ उसके घर में एक नवयौवना स्त्री थी । नख़रे की पहचान वाला हर व्यक्ति उस पर क़ुर्बान हो जाता था अर्थात् उसके हाव-भाव पर सभी मोहित थे ॥ ४ ॥ (उसके रूप को देखकर) सूसन (एक फूल का नाम) भी सिर फेर लेता था और लाले के फूल के दिल में भी दाग़ पड़ जाता है ॥ ५ ॥ चन्द्रमा भी उसकी शक्ल को देखकर डरता था और ईर्ष्या की आग में जलकर आधा हो गया था ॥ ६ ॥ जब वह स्त्री काम के लिए घर से बाहर निकलती थी, तब दोनों कंधों पर लटकती ज़ुल्फो को देखकर इश्क़ भी चीत्कार कर उठता था ॥ ७ ॥ यदि वह दरिया के पानी में मुँह धोती थी तो सारी मछलियों के काँटे भी फूल बन जाते थे ॥ ८ ॥ उसके मुँह की परछाई घड़े के पानी पर पड़ गई जिससे घड़े का पानी नशे वाला हो गया और उसका नाम नरगिस शराब प्रसिद्ध

सायह आब । ज़ि मसती शुवह् नाम नरग़श शराब ॥ ९ ॥ बदीदश यके राजहे नउजवाँ । कि हुसनल जमाल असतु ज़ाहर जहाँ ॥ १० ॥ बगुफ़ता कि ए राजहे नेक बखत । तु मारा बिदिह जाइ नज़दीक तखत ॥ ११ ॥ नखुशती सरे काज़ी आवर तुरासत । वज़ाँ पस कि ईं खानह् मा अज़ तुरासतु ॥ १२ ॥ शुनीद ईं सुखन रा दिल अंदर निहाद । न राज़े दिगर पेश अउरत कुशाद ॥ १३ ॥ ब वकते शौहर रा चु खुश ख़ुफ़तह् दीद । बिज़द तेग़ खुद दसत सर ओ बुरीद ॥ १४ ॥ बुरीदह् सर ओरा रवाँ जाइ गशत । दराँ जा सबलसिंघ कि बिनशसतह् असत ॥ १५ ॥ तु गुफ़ती मरा हम चुनी करदह्अम । बपेशे तु ईं सर मन आवुरदह्अम ॥१६॥ अगर सर तु खाही सर तुमे दिहम । ब जानो दिले बर तु आशक शुदम ॥ १७ ॥ कि इम शब कुन आँ अहिद तो बसतई । ब गमज़ह् चशम जान मन कुशतई ॥ १८ ॥ चु दीदश सरे राजहे नउजवाँ । ब तरसीद गुफ़ता कि ए बद निशाँ ॥ १९ ॥ चुना बद तु करदी खुदावंद ख़ेश । कि मारा चियारी अज़ीं

हो गया ॥ ९ ॥ उस लड़की ने एक नौजवान राजा को देखा, जो बहुत ही सुन्दर स्वरूपवान और जगत्प्रसिद्ध था ॥ १० ॥ (उसने) कहा— "हे भाग्यशाली राजा ! तुम मुझे तख्त पर पास बैठने के लिए स्थान दो अर्थात् मुझे रानी बना लो" ॥ ११ ॥ (राजा ने कहा—) "पहले तुम अपने पति क़ाज़ी का सिर काटकर ले आओ, फिर मेरा यह घर तुम्हारा है" ॥ १२ ॥ यह बात सुनकर स्त्री ने मन बना लिया और किसी अन्य के सामने यह रहस्य प्रकट न किया ॥ १३ ॥ जब उसने पति को वक़्त पर सुख की नींद सोया हुआ देखा तो अपने हाथों से तलवार चलाई और उसका सिर काट लिया ॥ १४ ॥ सिर काटकर चल पड़ी और ठिकाने पर आ पहुँची । जहाँ उसका प्रियतम सबलसिंह बैठा हुआ था ॥ १५ ॥ (जाकर कहने लगी) "प्रिय ! जैसा तुमने मुझसे कहा था, मैंने वैसा ही किया है । यह सिर तुम्हारे सामने है ॥ १६ ॥ अगर तुम मेरा सिर भी चाहो तो मैं काटकर दे दूँ, क्योंकि मन से मैं तुम पर आशिक़ हो गई हूँ ॥ १७ ॥ (पुनः कहने लगी—) जो वादा तुमने किया है, इस रात को उसे पूरा करो । तुमने आँखों के कटाक्ष से मेरे प्राणों को बेध दिया है" ॥ १८ ॥ जब उस नौजवान राजा ने क़ाज़ी के सिर की तरफ़ देखा तो डर गया और कहने लगा कि हे कुलक्षिणी ॥ १९ ॥ जब तुमने

कार बेश ॥ २० ॥ जि तो दोसती मन ब बाज़ आमदम। ज़ि करदह (पृ०ग्रं०१४०६) तु मन दर नियाज़ आमदम ॥ २१ ॥ चुनी बद तु करदी खुदावंद कार। मरा करदह बाशी चुनी रोज़गार ॥ २२ ॥ बिअंदाख़त सररा दराँ जा ज़ि दसत। बरे सीनह ओ सर बिज़द हर दु दसत ॥ २३ ॥ मरा पुशत दादी तुरा हक दिहद। वज़ाँ रोज़ मउलाइ काज़ी शबद ॥ २४ ॥ बिअंदाख़त सर खानह आमद बुबाज़। बआँ लाश काज़ी बखुशपीद दराज़ ॥ २५ ॥ बिअंदाख़त बर सर ज़ि ख़ुद दसत खाक। बिगुफ़ता कि खेज़ेद यारान पाक ॥ २६ ॥ कि बदकार करद ईं कसे शोर बख़त। कि काज़ी ब जाँ कुशत यक ज़खम सख़त ॥ २७ ॥ ब हर जा कि याबेद ख़ूँनश निशाँ। हुमा राह गीरंद हमह मरदुमाँ ॥ २८ ॥ ब आँ जा जहाँ ख़लक इसतादह करद। बजाए कि सर काज़ी अफ़तादह करद ॥ २९ ॥ बिदानिशत हमह अउरतो मरदुमाँ। कि ईं रा ब कुशत असत राजह हुमाँ ॥ ३० ॥ गिरफ़तंद ओरा

अपने पति का सिर काटने में देरी नहीं लगाई तो यार के लिए तुमसे कौन-सी भली आशा की जा सकती है ॥२०॥ तुम्हारी दोस्ती से मैं बाज आया। तेरे इस कारनामे को देखकर मैं चाहता हूँ कि तू मुझ पर कृपा कर (और अपना यह प्यार किसी अन्य को जता) ॥ २१ ॥ जैसा सलूक तुम अपने खाविंद के साथ अभी करके आई हो और अभी मुझे भी अपना पति बनाना चाहती हो, किसी दिन मेरे साथ भी यही बर्ताव होगा ॥ २२ ॥ उसने हाथ में सिर वहीं गिरा दिया और अपनी छाती और सिर को हाथों से पीटना शुरू कर दिया ॥ २३ ॥ (फिर कहने लगी—) तूने मुझे पीठ दी है, खुदा तुम्हें उस दिन पीठ देगा जिस दिन न्याय (कियामत का दिन) होगा ॥ २४ ॥ सिर को उसने वहीं फेंक दिया और खुद वापस घर आ गई। वहाँ आकर वह क़ाज़ी की लाश के पास लेट गई ॥ २५ ॥ अपने हाथ से उसने सिर में मिट्टी डाल दी और (चिल्लाती हुई) कहा, हे पवित्र सज्जनो ! उठो ॥ २६ ॥ किसी बुरे व्यक्ति ने यह क्या बुरा काम किया है कि एक ही चोट से क़ाज़ी को जान से मार डाला है ॥ २७ ॥ जिस तरफ़ खून के निशान पड़े थे, सभी आदमियों ने उसी रास्ते को पकड़ लिया ॥ २८ ॥ सारे लोगों को ले जाकर (उसने) वहाँ खड़ा कर दिया जहाँ उसने क़ाज़ी का सिर फेंका था २९ सब औरतों, आदमियों ने जान लिया कि राजा ने ही उसे

बुबसतंद सख़त । कि जाए जहाँगीर बिनशसतह तख़त ।।३१।। बि गुफ़तंद कि ईं रा हवालह कुनद । ब दिल हरचि दारद सजायश दिहद ।। ३२ ।। बि फरमूद जल्लादरा शोर बख़त। कि ईं सर जुदा कुन ब यक्क ज़खम सख़त ।। ३३ ।। चु शमशेर रा दीद आँ नउजवाँ । ब लरज़ह दरामद चु सरवे गिराँ ।।३४।। बगुफ़ता कि मन कार बद करदहअम । ब कारे शुमाँ तउर खुद करदहअम ।। ३५ ।। नमूसूदह इशारत बि चशमे बिआँ । कि ए बानूए सरवरे बानूआँ ।। ३६ ।। बहुकमे शुमा मन खता करदहअम । कि कार ईं बबे मसलहत करदहअम ।।३७।। ख़लासम बिदिह अहद करदम कबूल । कि अहिदे खुदा असत कसमे कसूल ।। ३८ ।। गुनहबखश तो मन ख़ता करदहअम । कि ए जिगर जाँ मन गुलामे तुअम ।। ३९ ।। ब गुफ़ता ग़र ईं राजह पाँ सद कुशम । न काज़ी मरा ज़िंदह दसत आमदम ।। ४० ।। कि ओ कुशतह गशतह चरा ईं कुशम । कि ख़ूने अज़ी बर सरे खुद कुनम ।। ४१ ।। चि ख़ुशतर कि

कत्ल किया है ।। ३० ।। लोगों ने उसे पकड़ लिया और कसकर बाँध लिया । जहाँ जहाँगीर तख्त पर बैठा था उसे वहाँ ले गए ।। ३१ ।। (जहाँगीर ने) कहा कि इसको मैं क़ाज़ी की औरत के हवाले करता हूँ । वही दिल में जो चाहती होगी इसे सजा देगी ।। ३२ ।। (उस औरत ने) जल्लाद को आदेश दिया कि इस बदक़िस्मत का सिर तलवार के एक ही वार से धड़ से अलग कर दो ।। ३३ ।। जब उस नौजवान ने तलवार को देखा तो हवा में पेड़ की तरह काँप उठा ।। ३४ ।। उसने कहा कि मैंने बहुत बुरा किया है जो तुम्हारे साथ किए वादे को खुद नहीं निभाया है ।। ३५ ।। (फिर) एक आँख से उसे इशारा किया (और कहा) कि हे स्त्रियों की सिरताज ! ।। ३६ ।। तेरे हुक्म से जो मैंने इन्कार किया है, वह गुनाह किया है । यह काम मैंने सोचे-विचारे बिना किया है ।। ३७ ।। मुझे छोड़ दो, मैं तुम्हारी बात स्वीकार करता हूँ । जो मैंने कहा है, इसमें खुदा और रसूल गवाह है ।। ३८ ।। तू मेरा गुनाह माफ़ कर, मैंने भूल की है । हे मेरी प्राण-प्रिय ! मैं तेरा गुलाम हूँ ।। ३९ ।। वह कहने लगी कि यदि इस तरह के पाँच सौ राजा भी मैं मार दूँ, तब भी जीवित क़ाज़ी मेरे हाथ नहीं लग सकता ।। ४० ।। जब वह मर ही गया है तो मैं भला इसे क्यों मारूँ ? क्या इसे मारने का (भी पाप अपने सिर पर स्वय ले लूँ ४१ कितना अच्छा हो कि

ईं रा खलासी दिहम। व मन हज़रते काबह अल्लह रवम ॥ ४२ ॥ बगुफ़त ईं सुख़न राव करदश खलास। (मू०ग्रं०१४०७) ब ख़ानह ख़ुद आमद चमे करद ख़ास ॥ ४३ ॥ बुबसतंद बारो तयारी कुनद। कि एज़द मरा कामगारी दिहद ॥ ४४ ॥ दरेग़ अज़ क़बायल जुदा मे शवम। अगर जिंदह् बाशम बबाज़ आमदम ॥ ४५ ॥ मताए नक़द जिनस रा बार बसत। रवानह सूए काबह तअल्लह शुद असत ॥ ४६ ॥ चु बेरूँ बरामद दु से मंज़लश। बयाद आमदह् खानह जा दोसतश ॥ ४७ ॥ बुबाज़ आमदह् नीम शब खानअ हाँ। चि निआमत अज़ीमो चि दउलत गिराँ ॥ ४८ ॥ बिदानिसत आलम कुजाँ जाइ गशत। चि दानद कि कस हाल बर सर गुज़शत ॥ ४९ ॥ बिदिह साकीया प्यालह फ़ेरोज़ फ़ाम। कि मारा बकार असत दर वक़त तुआम ॥ ५० ॥ बमन दिह कि खुशतर दिमाग़ो कुनम। कि रउशन तबै चूँ चराग़ो कुनम ॥ ५१ ॥ ५ ॥

॥ हिकायत पंजवीं समापतम ॥

इसे छुटकारा दे दूँ और मैं खुद अल्लाह के घर हज़रत काबा चली जाऊँ ॥ ४२ ॥ यह कहा और उसे छोड़ दिया। फिर अपने घर आ गई और खास-खास आदमियों और सामान को इकट्ठा किया ॥ ४३ ॥ सामान बाँध लिया और चलने की तैयारी कर ली। वह कहने लगी, खुदा मेरी कामना पूरी करे ॥ ४४ ॥ (फिर कहने लगी, मुझे इस बात का) अफ़सोस है कि मैं अपने भाईचारे से अलग हो रही हूँ। लेकिन अगर मैं ज़िंदा रही तो (जल्दी ही) वापस आ जाऊँगी (और अगर मर गई तो खुदा हाफ़िज़) ॥ ४५ ॥ ज़ेवर, रुपए, मुहरें, सोना, चाँदी तथा अन्य अच्छे पदार्थों की गठरियाँ बाँध लीं और खुदा के घर मक्का की तरफ़ चल पड़ी ॥ ४६ ॥ जब वह शहर से बाहर दो-तीन पड़ाव तक आ गई तो उसे उस यार के घर की याद आ गई ॥ ४७ ॥ आधी रात के वक्त वह उस दोस्त के घर वापस आ गई। बड़ी भेंटें, धन, माल और पदार्थ साथ ले आई ॥ ४८ ॥ संसार तो जानता था कि वह किस जगह गई है। कोई क्या जानता था कि वक़्त कैसा बीत रहा है ॥४९॥ हे साक़ी! मुझे हरे रंग का प्याला दे जो मुझे खाने के वक़्त चाहिए ॥५०॥ मुझे दो ताकि मैं अच्छा विचार कर सकूँ, जो चित्त को दीपक की तरह प्रकाशित कर दे ॥ ५१ ॥ ५ ॥

दास्तान पाँचवीं समाप्त

हिकायत छेवीं ॥

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

खुदावंद बख़शिंदए दिल कुशाइ । रज़ा बख़श रोज़ी दिहो रहिनुमाइ ॥ १ ॥ न फ़उजो न फ़रशो न फ़र्रो न फ़ूर । खुदावंद बख़शिंदह ज़ाहर ज़हूर ॥ २ ॥ हिकायत शुनीदेम दुख़तर वज़ीर । कि हुसनल जमाल असत रउशन ज़मीर ॥ ३ ॥ वज़ाँ कैसरो शाहि रूमी कुलाह । दरख़शिंदह शबशो चु रख़सिंदह माह ॥ ४ ॥ यके रोज़ रउशन बरामद शिकार । हमह यूज़अज़ बाज़ व बहरी हज़ार ॥ ५ ॥ ब पहिन अंदर आमद बनख़ज़ीर गाह । बिज़द गोर आहू बसे शेरशाह ॥ ६ ॥ दिगर शाह मग़रब दरआमद दलेर । चु रख़सिंदह माहो चु गुर्रिंदह शेर ॥ ७ ॥ दु शाहे दरामद यके जाइ सख़त । किरा तेग़ यारी दिहद नेक बख़त ॥ ८ ॥ किरा रोज़ इकबाल यारी दिहद । कि यज़दाँ किरा

दास्तान छठी

खुदा चित्त को प्रसन्न करने की कृपा करता है। रज़ा में चलाता है, रोज़ी देता है और सभी का पथ-प्रदर्शक है ॥ १ ॥ न उसकी फ़ौज है, न फ़र्श है, न पदार्थों को इकट्ठा करके रखनेवाले भंडार हैं और न ही उसके नौकर-चाकर हैं, फिर भी वह कृपालु प्रभु सर्वव्यापक है ॥ २ ॥ हमने एक वज़ीर की लड़की की कहानी सुनी है, जो बहुत ही खूबसूरत और बुद्धिमती थी ॥ ३ ॥ रूमी टोपी वाला उसका राजा चक्रवर्ती था; जो सूरज के समान चमकते हुए चेहरे वाला और चन्द्रमा की तरह शान्त स्वभाव वाला है ॥ ४ ॥ एक दिन रोशनी होते ही वह शिकार के लिए आया। बाज़, बहरी आदि सभी शिकारी जानवर उसके साथ थे ॥ ५ ॥ वह उजाड़ शिकारगाह में आ गया। राजा ने नीलगाय, हिरन और बहुत से शेर भी मार लिये ॥ ६ ॥ पश्चिम का एक अन्य राजा भी उस शिकारगाह में आ गया जो चन्द्रमा की तरह प्रकाश देनेवाला और शेर की तरह गरजनेवाला था ॥ ७ ॥ इस कठिन स्थान पर दोनों राजा आ गए, जो अच्छे भाग्यवाला होगा तलवार उसी का साथ देगी ॥ ८ ॥ तेज प्रताप से युक्त दिन किसे देगा और देखो परमात्मा लड़ाई में जीत

कामगारी दिहद ॥ ९ ॥ बर्जुबश दरामद दु शाहे दलेर। कि बर आहूए यक बरामद दु शेर ॥ १० ॥ बगुररीदन आमद दु अबरे सियाह। सनाने बियंदाख़त नेज़ह चु काह ॥ ११ ॥ चुना तीर बारान परां शुदह। ज़िमी आसमा पर आँ ज़िकरश शुदह ॥ १२ ॥ (मू०ग्रं०१४०८) चका चाक बरख़ासत नेके सिनाँ। यके रुसत ख़ेज़ अज़ बरामद जहाँ ॥१३॥ चु सूरे सराफ़ील दम मेज़दह। कि रोज़े क़ियामत बहम मेज़दह ॥१४॥ गुरेज़श करामद ब अरबी सिपाह। ब ग़ालब दरामद हुमाँ गरब शाह ॥ १५ ॥ कि तनहा बिमांद असत शाहे अरब। ब वक़्ते चु पेशीन शमश चूँ गरब ॥ १६ ॥ चु ताबश नुमानद शवद दसतगीर। चु दुज़बे शवद वकत शब रा असीर ॥ १७ ॥ बु बसतंद बुरदंद शहि निज़द शाह। चु माह अफ़कनो हम चु बुरदंद माह ॥ १८ ॥ ब ख़ानह ख़बर आँमदह शाहि बसत। हमह कार दुज़दी व मरदी गुज़शत ॥ १९ ॥ निशसतंद ब मजलस ज़ि दानाइ दिल। सुख़न रांद पिनहाँ

किसे देगा ॥ ९ ॥ दोनों ही बलवान राजा गुस्से में आ गए हैं। ऐसा लग रहा था मानों दो शेर एक ही हिरन पर टूट पड़े हों ॥ १० ॥ अथवा दो काले बादल गरजते हुए आ गए हों। उन्होंने घास की तरह बरछों के वार एक-दूसरे पर फेंके ॥ ११ ॥ उड़नेवाले तीरों की ऐसी बारिश हुई कि धरती और आकाश गिद्धों से भर गया ॥ १२ ॥ बरछों की नोकें भिड़ने से खचाखच की आवाज उठ रही है और ऐसा लग रहा है मानों संसार में प्रलय हो रही हो ॥ १३ ॥ इश्राफ़ील फ़िरिश्ता, जो क़ियामत के दिन तुरही बजाता है, तुरही के माध्यम से ललकार रहा है ॥ १४ ॥ अरब फौज में भगदड़ मच गई। उसका राजा हार गया और पश्चिम का जीत गया है ॥ १५ ॥ अरब का राजा अकेला रह गया। अब संध्या का समय हुआ और सूर्य अस्त हो गया ॥ १६ ॥ जब उसमें ताब न रही तो वह क़ैदी हो गया। रात को भाग निकलने का भी मौक़ा जब न मिला तो वह क़ैदी हो गया ॥ १७ ॥ अरब के राजा को पश्चिमी सेना ने बाँध लिया और अपने राजा के पास उसे पकड़कर ऐसे ले गए जैसे चन्द्रमा को राहु ग्रस लेता है ॥१८॥ घर में यह ख़बर आ पहुँची कि राजा शत्रु के हाथों पकड़ा गया है। (उसे छुड़ाने के लिए) चोरी और बहादुरी के सभी काम किए जा चुके हैं १९ पढ़े लिखे विद्वान् सभा के रूप मे एकत्र हो गए सभी लज्जित व्यक्तियों

वज़ाँ शहि खिज्ल ॥ २० ॥ चु बिसनीद ईं खबर दुखतर वज़ीर । ब बसतंद शमशेर जुसतंद तीर ॥ २१ ॥ ब पोशीद ज़र बफ़त रूमी क़बाइ । बज़ीं बर निशसतो बिआमद बजाइ ॥ २२ ॥ रवाँ शुद सूए शाहि मग़रब चु बाद । कमाने क़ियानी ब तरकश निहाद ॥ २३ ॥ बपेशे शहे मग़रब आमद दलेर । चु गुररीदह अबरो चु दर्रिदह शेर ॥ २४ ॥ दुआ करद कि ए शाहि आज़ाद बख़त । सज़ावार देहीमु सायान तख़त ॥ २५ ॥ मरा काहीया आमद अज़ बहरकाह । दो से सद सवारो यक अज़ शकल शाहि ॥ २६ ॥ कि बिहतर हुमानसत आँ रा बिदिह । वगर नह खुदश मउत बर सर बिनिह ॥ २७ ॥ शुनीदे ज़ि मन शाहि गर ईं सुख़न । हुमाना तुरा बेख बरकंद बुन ॥ २८ ॥ शुनीद ईं सुख़न शाहि फ़ौलाद तन । ब लरज़ीद बर ख़ुद चु बरग़े समन ॥ २९ ॥ चुना जंग करदंद ईं काहीयाँ । न दानम मग़र शाहि बाशद

ने राजा की बात छेड़ी ॥ २० ॥ जब यह बात वज़ीर की लड़की ने सुनी तो उसने तलवार बाँधा और ढूँढ़कर तीर तरकस में भर लिये ॥२१॥ फिर उसने रूम देश जैसी ज़री वाली पोशाक पहन ली और घोड़े की काठी पर बैठकर युद्ध वाले स्थान पर आ गई ॥ २२ ॥ वह पश्चिम देश के राजा की ओर हवा की तरह चल पड़ी । उसने कंधे पर कियानी खानदान वाली कमान, तीरों से भरा तरकस रखा हुआ था ॥ २३ ॥ वह पश्चिम देश के राजा के सामने वैसे ही शूरवीरतापूर्वक आ गई जैसे गरजनेवाला बादल और काट खानेवाला शेर हो ॥ २४ ॥ पहले उसने सलामी की और फिर कहा, हे उत्तम भाग्यशाली राजा ! तुम छत्र-चंवर की शोभा वाले हो और सिंहासन पर बैठने के लायक हो ॥ २५ ॥ हे राजन् ! मेरे घसियारे घास लेने के लिए जंगल में आये थे । वे सभी दो-तीन सौ घोड़ों पर सवार हैं और उनमें से एक की शक्ल राजा के समान है ॥ २६ ॥ अच्छा हो अगर आप मेरे घास काटनेवालों को (जिन्हें आपने क़ैद किया है) वापस कर दें अन्यथा अपनी मौत को सिर पर खड़ी देख लो ॥ २७ ॥ अगर यह बात राजा को पता लग गई तो वह हक़ीक़त में तुम्हारी जड़ उखाड़ फेंकेगा ॥ २८ ॥ फ़ौलादी शरीर वाले राजा ने जब यह बात सुनी तो अपनी जगह पर ही चमेली की पत्ती की तरह काँपने लग गया ॥ २९ ॥ (राजा) मन में सोचने लगा जब इन घसियारों ने ऐसी लड़ाई की है तो मैं समझ नहीं सकता कि इनका

जवाँ ॥ ३० ॥ न दानम कसे शाहि हसतश जवाँ। कि मारा बिगीरद जि मायंदरों ॥ ३१ ॥ जि पेशीनहे शद वजीरां बुखाँद। सुखन हाइ पोशीदह बा ओ बिरांद ॥ ३२ ॥ तु दीदी चुना काहीया जंग करद। कि अज मुलक यजदां बरावुरद गरद ॥ ३३ ॥ मुबादा कुनद ताखत बर मुलक अखत। दिहम काहीया रा अजाँ नेक बखत ॥ ३४ ॥ हुमाँ शाहि महिबूसीया पेश खाँद। हवालह नमूदश कि ओरा निशाँद ॥ ३५ ॥ तु आजाद गशती अजो सहिल चीज। बिगीरए (मू०ग्रं०१४०६) बिरादर तु अज जाँ अजीज ॥ ३६ ॥ जने पेच दसतार रा ताब दाद। दिगर दसत बर मुशत तेगश निहाद ॥ ३७ ॥ बिजद ताजीयानह ब हर चार चार। बगुफ़ता कि ए बे खबर बे मुहार ॥ ३८ ॥ कि आमद दरीं जा वजा काह नेसत। कि एजद गदाह असत यजदां यकेसत ॥ ३९ ॥ दरोगे मरा बर गफूरे गुआहसत। बिगोयद

राजा कितना बलवान होगा ॥ ३० ॥ अगर इनका राजा इतना बलवान योद्धा है तो हो सकता है वह मुझे मेरे देश (मायंदर) से भी पकड़ लाये ॥ ३१ ॥ राजा ने उसी वक्त अपने वजीरों को सामने बुला लिया और भेद-भरी बातें उन्हें बताते हुए बात चला दी ॥ ३२ ॥ आप सबने देखा है कि इन घसियारों ने कैसी लड़ाई की है और इस संसार को खाक में मिला दिया है ॥ ३३ ॥ खुदा न करे अगर राजा चढ़ाई कर दे तो मुल्क पर मुसीबत आ जाएगी। (बेहतर है) मैं उस भाग्यशाली को उसके घसियारे वापस कर दूँ ॥ ३४ ॥ राजा ने बाँधे हुए क़ैदियों को पास बुला लिया और फिर इन्हें उनके हवाले कर दिया और उसे पास बैठाकर कहा ॥ ३५ ॥ तुमने आसानी से काम निपटा लिया है। लो इन्हें सँभालो। हे भाई! तुम मुझे जान से भी प्यारे हो ॥ ३६ ॥ उस स्त्री (वजीर की पुत्री) ने एक हाथ पगड़ी के पेंच को कसकर बाँध लिया और दूसरा हाथ उसने तलवार की मूठ पर रख लिया ॥ ३७ ॥ फिर उसने हर एक को चार-चार कोड़े मारे और कहा कि हे ठीक रास्ते पर न चलनेवालो! तुम लोगों को किसी बात की खबर ही नहीं है ॥३८॥ (तुम) जो इस जगह पर आए हो (क्या) उस स्थान पर घास नहीं है ? वह एकमेव अद्वितीय प्रभु इस बात का साक्षी है ॥ ३९ ॥ उसने कहा कि मेरे झूठ को क्षमाशील (खुदा) जानता है। वही गवाह है क्योंकि

कि मारा पनाहे ख़ुदासत ॥ ४० ॥ रिहाई बिहंदह ख़ुदावंद तख़त । विदा गशत ज़ो मंज़लो जाइ सख़त ॥ ४१ ॥ बिदिह साक़ीया सागरे सबज़ पान । कि साहिब शऊर असत ज़ाहर जहान ॥ ४२ ॥ बिदिह साक़ीया जाम फ़ीरोज़ह रंग । कि दर वक़त शब चूँ ख़ुशे रोज़ जंग ॥ ४३ ॥ ६ ॥

॥ हिकायत छेवीं समापतम ॥

हिकायत सतवीं ॥

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

ख़ुदावंद बख़शिंदए बेशुमार । कि ज़ाहर ज़हूर असत साहिब दियार ॥ १ ॥ तबीअत बहालसत हुसनल जमाल । चु हुसनल जमालो फ़ज़ीलत कमाल ॥ २ ॥ कि इसफ़ंदयार अज़ जहाँ रख़त बुरद । नसब नामहे ख़ुद ब बहिमन सपुरद ॥ ३ ॥ अज़ाँ दुख़तरे हम चु परते हुमाइ । चु हुसनल जमाल असत दउलत फ़िज़ाइ ॥ ४ ॥ चु बहमन शह अज़ ईं

वही मेरा आसरा और पनाह है ॥ ४० ॥ अपने सिंहासन के मालिक अर्थात् राजा को उसने इस तरह छुटकारा दिलाया और फिर उस कठोर स्थान से विदा हुई ॥ ४१ ॥ "हे साक़ी ! (मुझे) हरे रंग का प्याला प्रदान कर, (ताकि यह स्पष्ट हो सके कि) वह स्वामी समझनेवाला और जगत में प्रकट है" ॥ ४२ ॥ हे साक़ी ! (ख़ुदा) मुझे केवल प्यार का जाम दो जिससे ज्ञान मिलता है और रात-दिन ख़ुशी मिलती है ॥४३॥६॥

॥ दास्तान छठी समाप्त ॥

दास्तान सातवीं

ख़ुदा अनंत रूप से देनेवाला दाता है। वह प्रकट है, प्रकाश-रूप और (सभी) देशों का मालिक है ॥ १ ॥ वह चित्तवृत्ति का ठिकाना और सुन्दर स्वरूप वाला है। जैसा उसका महान सुन्दर स्वरूप है, उसी तरह उसकी बुद्धि भी परम प्रवीण है ॥ २ ॥ जब असफ़ंदयार जहान से साजो-सामान ले गया अर्थात मर गया तो वह राजगद्दी अपने बेटे बहमन को सौंप गया । उसकी एक लड़की हुमाय (अनल पक्षी के समान सुन्द

जहाँ बुरद रख़त । ब दुख़तर सपुरदंद आँ ताज तख़त ॥ ५ ॥ नशसतंद बर तख़त रूमी हुमाइ । कि बुसताँ बहार असतु सूरत फ़िज़ाइ ॥ ६ ॥ चु बुग़ज़शत बर वै ज़ि दह साल चार । कि पैदा शुदह सबज़हे नउ बहार ॥ ७ ॥ बहारे जवानी ब नउबत रसीद । चु बुसताँ गुले सुरख़ बेरूँ कशीद ॥ ८ ॥ ब हुसन आमदश तूतीए नउ बहार । चु माहे कि बरख़ुद कुनद नउ बहार ॥९॥ मिज़ाजश ज़ि तिफ़ली बरूँ दर रसीद । जवानी ज़ि आगाज़ बरवै कशीद ॥ १० ॥ विदा शुद अज़ो हाल तिफ़ली मिज़ाज । बहारे जवानी दरामद बुबाज़ ॥ ११ ॥ कि बिनशसत बर तख़त शाहन शही । बकलम अंदर आवेख़त काग़ज़ मही ॥ १२ ॥ नज़र करद बर बचह गौहर निगार । कि बुरद अंदरूँन शब वकते गुबार ॥ १३ ॥ बिआवेख़त बा ओ दु से चार माह । कि शिकम श फ़रोमाँद अज़ तुख़मि शाह ॥ १४ ॥ चु नह माह गशतह ब आँ बिसतनी ।

स्वरूप वाली और उत्तम भाग्य की दौलत की मालिक थी ॥ ४ ॥ जब बहमन भी इस संसार से चला गया तो वज़ीरों ने ताज और तख़्त उसकी पुत्री को सौंप दिया ॥ ५ ॥ 'हुमाय' पक्षी जैसी सुन्दरी रूम की गद्दी पर बैठी, वह मानों वसंत ऋतु की फुलवाड़ी के रूप-सौंदर्य को बढ़ानेवाली थी ॥ ६ ॥ जब वह चौदह वर्ष की हुई तब उसके शरीर में नई ऋतु की हरियाली पैदा हो गई अर्थात् जवानी के आसार नज़र आने लगे ॥ ७ ॥ जब जवानी का उल्लास देनेवाली अवस्था पहुँच गई तब उसकी सुन्दरता ऐसी हो गई जैसे बाग में गुलाब का फूल खिला हो ॥ ८ ॥ उसके हुस्न रूपी तोते के लिए वसंत ऋतु आ गई । उसका स्वरूप ऐसा हो गया मानो चन्द्रमा अपने पर नयी बहार लाता है ॥ ९ ॥ बचपना उसके स्वभाव से बाहर हो गया और उस पर जवानी की आमद के निशान उभरने लगे ॥ १० ॥ बालापन का ढंग और स्वभाव उससे विदाई ले गया और उस पर जवानी का मौसम आ गया ॥ ११ ॥ जब राजकीय सिंहासन पर बैठी तो दरबार में सरदारी के काग़ज़ातों पर दस्तख़त करने लगी ॥ १२ ॥ उस वक्त उसकी निगाह जौहरी के एक लड़के पर पड़ी जिस पर वह मोहित हो गयी । वह अंधेरे में उसे अपने महल के अन्दर ले गई ॥ १३ ॥ दो, तीन, चार महीनों तक उसके प्यार में लवलीन रही और उसे उस साहूकार से गर्भ रह गया १४ जब गर्भ को नौ महीने हो गए तो उस सुन्दरी की प्रसूता

बकोशश दरामद रगे ख़ुशतनी ॥ १५ ॥ (मू०ग्रं०१४१०) तवल्लद शुदश कोदके शीर ख़ार । कि ख़ुद शाहि व शाह् अफ़कुनो नामदार ॥ १६ ॥ कि जाहर न करदंद सिररे जहाँ । ब संदूक ओरा निगह दाशत आँ ॥ १७ ॥ ज़ि मुशको फ़ितर अंबर आवेख़तंद । बरो ऊद अज़ जाफ़राँ रेखतंद ॥ १८ ॥ बदसत अंदरूँ दाशत ओरा अक़ीक । रवाँ करद संदूक दरया अमीक ॥ १९ ॥ रवाँ करद ओरा कुनद जामह चाक । नज़र दाशत बरु शुकर यज़दान पाक ॥ २० ॥ नशसतंद बर रोद लबे गाज़राँ । नज़र करद संदूक दरीया रवाँ ॥ २१ ॥ हमी ख़ासत कि ओरा बदसत आवरंद । कि संदूक़ बसतह शिकसत आवरंद ॥ २२ ॥ चु बाज़ू बकोशश दरामद अज़ाँ । ब दसतं बरामद मताए गिराँ ॥ २३ ॥ शिकसतंद मुहरश बराए मता । पदीद आमदह् जाँ चु रख़शिदह् माह ॥ २४ ॥ बज़ाँ गाजराँ ख़ानह् कोदक चु नेसत । ख़ुदा मन्न पिसर दादई हसब सेसत ॥ २५ ॥ बियावुरद ओरा गिरिफ़त आँ अकीक ।

नाड़ी फड़कने लगी ॥ १५ ॥ दूध पीनेवाला एक लड़का पैदा हुआ जो ख़ुद राजाओं और उनके शत्रुओं में मशहूर हो गया ॥ १६ ॥ लेकिन संसार में उसने वह भेद प्रकट नहीं किया । उस लड़के को संदूक़ में डालकर अपनी निगाह में रखा ॥ १७ ॥ कस्तूरी, अंबर और इत्र आदि का उस पर लेप किया । केसर और ऊद नामक सुगंधित लकड़ी को घिसकर उस पर छिड़का ॥ १८ ॥ उसके हाथ में एक लाल रख दिया और संदूक़ को नदी के गहरे पानी में छोड़ दिया ॥ १९ ॥ उसे नदी में बहा दिया और दुखी होकर अपने कपड़े फाड़ डाले । फिर उसने परमात्मा का ध्यान किया और उसी के ध्यान में मग्न हो गई ॥ २० ॥ नदी के किनारे पर धोबी बैठे थे, उन्होंने दरिया में बहकर आते (संदूक़) को देखा ॥ २१ ॥ उन्होंने उसे पकड़ना चाहा और उस बंद संदूक़ को तोड़ना चाहा ॥ २२ ॥ जब बाज़ुओं के साथ कोशिश की तब उसमें से उनको क़ीमती सामान हाथ लगा ॥ २३ ॥ धोबियों ने जब धन-पदार्थ आदि के लिए उसकी सील तोड़ी तो उसमें से चन्द्रमा के समान चमकनेवाला (बालक) प्रकट हुआ ॥ २४ ॥ उन धोबियों के घर में कोई पुत्र नहीं था । (लड़के को देखकर धोबी ने कहा—) ख़ुदा ने मुझे पुत्र दिया है । अब यही हमारे लिए काफ़ी है ॥ २५ ॥ उसे वह गहरे पानी में से पकड़कर लाये थे और बच्चे के साथ लाल भी उनके हाथ लगा था,

शुकर करद यज़दान आज़म अमीक ।। २६ ।। कुनद परवरिशरा चु पिसरे अज़ीम । बयादे खुदा क़िबलह काबह करीम ।।२७।। चु बुगज़शत बर वै दु से साल माह । कज़ो दुखतरे खानह आवुरद शाह ।। २८ ।। नज़र करद बर वै हुमाए अज़ीम । बयाद आमदश पिसर गाज़र करीम ।। २९ ।। बपुरशीद ओरा कि ए नेक ज़न । कुजा याफ़ती पिसर खुश खोइ तन ।। ३० ।। बिदानेम खानेम शनासेम मन । यके मन शनाशम न दीगर सुखन ।। ३१ ।। दवीदंद मरदम बुखादंम कज़ो । कि अज़ खानहे गाज़रानश अज़ो ।। ३२ ।। बुखादंद ओरा बुबसतंद सखत । बपुरशीद ओरा कि ए नेक बखत ।। ३३ ।। बिगोयम तुरा हम चु ईं याफ़तम । नुमायम ब तो हाल चूं साखतम ।। ३४ ।। कि साले फ़लाँ माह दर वकत शाम । कि ईं काररा करदअम मन तमाम ।। ३५ ।। गिरिफ़तेम संदूक दरीया अमीक़ । यके दसत जो याफ़तम ईं अक़ीक ।।३६।। बदीदंद गउहरि गिरफ़तंद अज़ाँ । शनासद कि ईं

इसलिए उन्होंने खुदा का शुक्रिया अदा किया ।। २६ ।। पुत्र की तरह प्यार से उसे पाला और काबा, मक्का और दयालु खुदा का भी ध्यान किया ।।२७।। जब उस बात को दो-तीन वरस बीत गये तो धोबी की लड़की एक दिन उस लडके को बादशाह के घर ले गई ।। २८ ।। 'हुमाए अज़ीम' नामक राजपुत्री ने उसकी तरफ देखा जो करीम नाम वाला धोबी का लड़का था । तब उस राजकुमारी को अपने लड़के की याद आ गई (जिसे उसने दरिया में बहा दिया था) ।। २९ ।। फिर उसने उस धोबी की लड़की से पूछा— हे भली औरत ! यह खूबसूरत लड़का कहाँ से लिया है ? ।। ३० ।। (मन में ही कहने लगी—) इस लड़के को मैं जानती हूँ और पहचानती हूँ । दूसरा कोई भी इस बात को नहीं जानता ।। ३१ ।। लोग उन धोबियों के घर की तरफ़ दौड़े । वे चाहते थे कि लड़का ले लें ।। ३२ ।। उस धोबी को बुला लिया गया और पक्की तरह से बाँधकर पूछा गया कि ऐ खुशक़िस्मत ! यह लड़का तुमने कहाँ से पाया है ? ।। ३३ ।। उसने कहा— बताता हूँ कि इसे हमने कैसे पाया है तुम्हें वह बात सुनाता हूँ कि जैसी कोशिश से हमने इसे पाया है ।। ३४ ।। फलाँ साल, फ़लाँ महीनें, शाम के वक़्त यह काम हुआ था ।। ३५ ।। दरिया के गहरे पानी में से एक संदूक़ मैंने पकड़ा था और इसके एक हाथ में से यह अक़ीक लाल मुझ मिला है ३६ उसने मोती पकड़ा देखा औ

पिसर हसत आँ हुमाँ ॥३७॥ बरो ताजह शुद शीर (मू०ग्रं०१४११) पिसताँ अज़ो । बिजद सीनह खुद हरदो दसताँ अज़ो ॥ ३८ ॥ शनासद अज़ो हर दु लब बर कुशाद । कि ज़ाहर न करदश दिल अंदर निहाद ॥ ३९ ॥ दिगर रोज़ रफ़तंद ज़उजह फलाँ । मरा ख़ाद दादह बज़ुरगे हुमाँ ॥ ४० ॥ तुरा मन कि फ़रज़ंद बख़शीदहअम । चरागे कयारा दरख़शीदह-अम ॥ ४१ ॥ जि गंजो ज़र श गउहरो तख़त दाद । बज़ाँ पिसर रा ख़ानहे ख़ुद निहाद ॥ ४२ ॥ ब गुफ़तश कि ईं रा ज़ि दरीयाफ़तम । कि दाराब नामश अज़ो साख़तम ॥ ४३ ॥ कि शाही जहाँ रा बदो मे दिहंम । बज़ाँ ताज इकबाल बर सर निहंम ॥ ४४ ॥ मरा खुश तर आमद अज़ाँ सूरतश । कि हुसनल जमाल असत खुश सूरतश ॥ ४५ ॥ कि अज़ शाहि ओ चूँ ख़बर याफ़तश । कि दाराब नामे मुकररा शुदश ॥ ४६ ॥ अज़ाँ शेर शुद शाहि दाराइ दीं । हकीकत शनासअसतु ऐनुल यकी ॥ ४७ ॥ बिदिह साकीया सागरे सुरख़ फ़ाम । कि मारा बकार असत वकते मुदाम ॥ ४८ ॥

पहचान लिया और जान लिया कि यह मेरा ही लड़का है ॥ ३७ ॥ उसी वक्त उसके स्तनों में दूध उतर आया पर उसने अपनी छाती पर दोनों हाथों को रख लिया ॥ ३८ ॥ (लड़के को) पहचानते ही उसके दोनों ओंठ खुल गए अर्थात् वह मुस्कुरा उठी पर उसनें यह रहस्य किसी पर प्रकट नहीं किया, दिल में ही रखा ॥ ३९ ॥ दूसरे दिन धोबी की पत्नी गई और कहने लगी कि मुझे स्वप्न में बुज़ुर्ग ने दर्शन दिया है ॥ ४० ॥ और कहा है कि मैंने जो पुत्र तुम्हें बख्शा, मैंने "कैआँ" खानदान का दीपक जलाया है ॥ ४१ ॥ उसे ख़ज़ाना, मोती, सोना और राजगद्दी दे दी गई और उस लड़के को अपने घर में रख लिया गया ॥ ४२ ॥ उसने कहा, मैंने इसे दरिया में से पाया है इसलिए इसका नाम दाराब रख दिया है ॥ ४३ ॥ दुनिया का राज्य उसे मैं देती हूँ। प्रतापी छत्र और चँवर मैं इसके सिर पर रखती हूँ ॥४४॥ मुझे इसकी सूरत प्यारी लगी है, क्योंकि उसका स्वरूप तेजस्वी और प्रतापी है ॥ ४५ ॥ जब उसे पता लगा कि वह राजा बना है और उसका नाम दाराव रखा गया है तो वह बहुत खुश हुआ ॥ ४६ ॥ उसी शूरवीर राजा से धर्मराज हुआ। वह धर्म का रक्षक, हक़ को पहचान करनेवाला और दृढ निश्चय वाला है ४७ हे स की मुझ लाल रग का जाम दे जिसकी

बिदिह् पियालह फ़ेरोज़ रंगीन रंग। कि मारा ख़ुश आमद बसे वकत जंग ॥ ४६ ॥ ७ ॥

॥ हिकायत सतवीं समापतम ॥

हिकायत अट्ठवीं ॥

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

ख़ुदावंद बख़्शिदहे दिल करार। रज़ा बख़्श रोज़ी दिहो नउ बहार ॥ १ ॥ कि मीर असत पीर असत हर दो जहाँ। ख़ुदावंद बख़्शिदह हर यक अमाँ ॥ २ ॥ हिकायत शुनीदेम शाहे अज़ीम। कि हुसनल जमाल असतु साहिब करीम ॥ ३ ॥ कि सूरत जमाल असतु हुसनल तमाम। हमह रोज़ आशायशे रोद जाम ॥ ४ ॥ कि सरहंग दानश जि फ़रज़ानगी। कि अज़ मसलिहत मउज मरदानगी ॥ ५ ॥ वज़ाँ बानूए हम चु माहे जवाँ। कि कुरबाँ शवद हर कसे नाज़दाँ ॥६॥ कि ख़ुश रंग ख़ुश ख़ोइ ओ ख़ुश जमाल। ख़ुश

मुझे हमेशा ज़रूरत है ॥ ४८ ॥ हे साक़ी ! मुझे फ़ीरोज़ी रंग वाला प्याला दे जो मुझे लड़ाई के वक़्त के लिए बहुत अच्छा लगता है ॥ ४६ ॥ ७ ॥

॥ दास्तान सातवीं समाप्त ॥

दास्तान आठवीं

ख़ुदा ही चित्त को स्थिरता देनेवाला है, अन्नदाता और आनंददाता है ॥ १ ॥ परमात्मा ही सम्राट्, पीर, लोक-परलोक में हर एक को सुख देनेवाला है ॥ २ ॥ (फ़ारस देश के) अज़ीम शाह की कहानी हमने सुनी है, जो बहुत ही सुन्दर स्वरूपवान और दानी मालिक था ॥ ३ ॥ उसकी शक्ल तेजस्वी और पूर्ण रूप से सुन्दर थी। उसका सारा दिन संगीत सुनने और जाम पीने में ही बीतता था ॥ ४ ॥ वह शूरवीर और बुद्धिमान था जो शूरवीरता के ठाट में पूरी तरह शोभायमान था ॥ ५ ॥ उसकी एक पुत्री पूर्णिमा के चाँद की तरह थी। सौंदर्य के पारखी उस पर क़ुर्बान जाते थे ॥ ६ ॥ वह अच्छे रंग-रूप वाली, अच्छे स्वभाव वाली, अच्छी गंध वाली अच्छी आवाज वाली और अच्छे पदार्थों को भोगनेवाली तथा अच्छे विचार

आवाज़ ख़ुश ख़्वारगी ख़ुश ख़ियाल ॥ ७ ॥ ब दीनन कि ख़ुश खोइ ख़ूबी जहाँ । जि हरफ़ात करदन ख़ुशो ख़ुश ज़ुबाँ ॥ ८ ॥ (मू०ग्रं०१४१२) दु पिसरश अज़ाँ बूंद चूँ शमश माह । कि रउशन तबीयत हकीकत गवाह ॥ ९ ॥ कि गुसताख़ दसत असत चालाक जंग । बवकते तरद्दद चु शेरो निहंग ॥ १० ॥ दु पील अफ़कनो हम चु शेर अफ़कन असत । ब वकते वगा शेर रोईं तन असत ॥ ११ ॥ यके ख़ूब रोइ ओ दिगर तन चु शीम । दु सूरत सज़ावार आज़म अज़ीम ॥ १२ ॥ वज़ाँ मादरे बरकस आसुफ़तह गशत । चु मरदसत गुल हम चुनो गुल परसत ॥ १३ ॥ शबं गाह दर ख़ाबगाह आमदंद । कि ज़ोरावराँ दर निगाह आमदंद ॥ १४ ॥ बुखादंद पस पेश ख़ुरदो कलाँ । मयो रोद रामश गिराँ रा हुमाँ ॥ १५ ॥ बिदानिसत कि अज़ मसतीयश मसत गशत । बिज़द तेग़ ख़ुद दसत हर दो शिकसत ॥ १६ ॥ बिज़द हर दो दसतश सरे खेश ज़ोर । ब ज़ुंबश दरामद ब करदंद शोर ॥ १७ ॥ बिगोयद कि ए मुसलमानान पाक । चिरा चूँ कि कुशती

वाली थी ॥७॥ दिखने में वह अच्छी और मीठी वाणी बोलनेवाली थी ॥८॥ उसके दो पुत्र सूर्य और चन्द्र-जैसे हुए जो प्रसन्नचित्त और सत्य की परख करनेवाले थे ॥ ९ ॥ वे फ़ुर्तीले हाथों वाले और लड़ाई मे तीखी बुद्धि वाले थे। युद्ध के समय में शेर और मगरमच्छ जैसे थे ॥ १० ॥ दोनों ही हाथी और शेर को पटक देनेवाले थे। युद्ध के समय तो वे लोहे के शरीर वाले शेर थे ॥ ११ ॥ एक तो चेहरा सुन्दर और दूसरे शरीर चाँदी के समान चमकता था। दोनों सूरतें महान शोभा वाली थी ॥ १२ ॥ उनकी माँ किसी पर मोहित हो गई। वह मर्द भी फूल के समान है और उसकी औरत भी फूल की पूजा करनेवाली है ॥ १३ ॥ रात के समय वे दोनों सोने वाली जगह पर आ गए। (माँ की नज़र में) दोनों बलवान पुत्र खटकने लगे ॥१४॥ माँ ने छोटे-बड़े पुत्रों को आगे-पीछे बुलाया, फिर गायकों से संगीत सुना और उनको शराब पिलाकर बेहोश कर दिया ॥ १५ ॥ जब उसने देखा कि शराब के साथ मतवाले हो गए हैं तो उसने तलवार से वार किया और अपने हाथ से दोनों को काट डाला ॥ १६ ॥ फिर उसने दोनों हाथों से सिर पीटा और काँपते हुए चीखने-चिल्लाने लगी ॥ १७ ॥ कहने लगी कि हे मुसलमानो कपड़ो को टुकड़े करने की तरह किसी ने क्यो मेरे पुत्रों को मार डाला

अज़ो जामह् चाक ।। १८ ।। बिखुरदंद मय हरदु आँ मसत गशत । गिरफ़तंद शमशेर पौलाद दसत ।। १९ ।। कि ईं रा बिज़द आँ बई आँ जदंद । ब दीदह मरा हरदुईं कुशतह अंद ।। २० ।। दरेगा मरा जा ज़िमी हम न दाद । न दहलीज़ दोजख़ मरा रह कुशाद ।। २१ ।। दु चशमे मरा ईं चि गरदीद ईं । कि ईं दीदहे ख़ून ईं दीद ईं ।। २२ ।। बिहज़ मन तने तरक दुनीया कुनम । फ़कीरे शवम मुलक चीं मे रवम ।। २३ ।। बि गुफत ईं सुख़न रा कुनद जामह चाक । रवाँ शुद सूए दसतख़त चाक चाक ।। २४ ।। कि ओ जा बदीदंद ख़ुश ख़ाबगाह । निशसतह असतु बर गाउ बा ज़न चु माह ।। २५ ।। ब पुरशीद ओरा कि ए नेक ज़न । हुमांयू दरख़ते चु सरवे चमन ।।२६।। कि हूरो परी तो चु नूरे जहाँ । कि माहे फ़लक आफ़ताबे यमाँ ।।२७।। न हूरो परीअम न नूरे जहाँ । मनम दुख़तरे शाहिज़ाँ बिलसिताँ ।। २८ ।। ब पुरशश दरामद परसतश न मूद । बनिज़दश ज़ुबा राँ ब फ़ुरसत कसूद ।। २९ ।।

है ।। १८ ।। दोनों ने शराब पी और मस्त हो गए थे । फ़ौलादी तलवारें हाथों में पकड़ ली थीं ।। १९ ।। इसने उसे और उसने इसे मार डाला है । मेरे देखते-देखते दोनों क़त्ल हो गए हैं ।। २० ।। हाय, मुझे धरती ने जगह न दी (नहीं तो मैं धरती में ही ग़र्क़ हो जाती), न ही दोजख़ के राह का दरवाजा खुला जो मैं छलाँग लगाकर उसमें जा गिरती ।। २१ ।। मेरी दोनों आँखों के देखते-देखते यह क्या हो गया ? इन आँखों ने कैसे इनका ख़ून होते देखा ।। २२ ।। बच्चो ! तुमने मुझे छोड़ दिया है अब मैं भी यह दुनिया छोड़ जाऊँगी और फ़क़ीर बनकर चीन देश की तरफ चली जाऊँगी ।। २३ ।। यह कहकर उसने कपड़ों को फाड़कर टुकड़े-टुकड़े कर दिया और 'चकमाकचाक' निर्जन प्रदेश की ओर चल पड़ी ।। २४ ।। उस जगह पर जाकर उसने सोने की अच्छी जगह को देखा पर वहीं उसने बैल पर बैठे व्यक्ति को देखा, जिसके साथ चाँद के समान सुन्दर स्त्री थी ।। २५ ।। उन्होंने उसे पूछा कि ऐ नेक औरत ! बगीचे में लंबे पेड़ की तरह ख़ूबसूरत तुम कौन हो ? ।। २६ ।। तुम हूर हो, परी हो, संसार को रौशन करनेवाली हो, आकाश का चाँद हो या संसार का सूरज हो ? ।। २७ ।। उसने कहा कि न मैं हूर हूँ, न परी हूँ, न ही संसार का प्रकाश हूँ; मैं तो ज़ाबलिस्तान के राजा की पुत्री हूँ ।। २८ ।। (जब उस व्यक्ति ने) पूछा तो पहले उसने नमस्कार की और फिर धैर्यपूर्वक अपनी ज़ुबान खोली २९ उस व्यक्ति ने कहा तुझे देखते ही मैं

ब दीदन तुरा मन बस आजुरदह अम। बिगोई तु हर चीज़ बखशीदह अम ॥ ३० ॥ ब हंगाम पीरी जवां मे शवम। (मू०ग्रं०१४१३) ब मुलके हुमाँ यार मन मेरवम ॥ ३१ ॥ बदानश तु दानी अगर ईं वफ़ा। बयाद आमदश बदतर ईं बेवफ़ा ॥ ३२ ॥ वजाँ जा बिआमद बगिरदे चुचाह। कजा जा अज़ो बूद नखज़ीर गाह ॥ ३३ ॥ बसेरे दिगर रोज़ आमद शिकार। चु मिन काल अज़ बाशहे नउ बहार ॥ ३४ ॥ कि बरखाशत पेशश गवजने अज़ीम। रवाँ करद असपश चु बादे नसीम ॥ ३५ ॥ बसे दूर गशतश न माँदह दिगर। न आबो न तोसह न अज़ खुद खबर ॥ ३६ ॥ वजाँ ओ शवद बा तने नउजवाँ। न हूरो परी आफ़ताबे जहाँ ॥ ३७ ॥ ब दीदन वजाँ शाहि आशुफतह गशत। कि अज़ खुद खबर रफ़त व अज़ होश दसत ॥ ३८ ॥ कि क़शमे खुदा मन तुरा मे कुनम। कि अज़ जान जानी तु बरतर कुनम ॥ ३९ ॥ उजर करदउ चूँ दुसे चार बार। हम आखर बगुफ़तम वज़ाँ करद कार ॥ ४० ॥ बुबीं गरदशे बेवफ़ाई जमाँ। कि

बहुत दुखी हुआ हूँ। अगर तुम कहो तो मैं सारी वस्तुएँ तुम्हें प्रदान कर दूं ॥ ३० ॥ (उसने जवाब दिया—) वृद्धावस्था से मैं जवान हो जाऊं और उसी यार के देश में चली जाऊँ ॥ ३१ ॥ उस व्यक्ति ने कहा कि अगर तुम्हारी बुद्धि ने इसे ही अच्छा समझा है, तो ऐसा ही हो जाए, परन्तु यह बहुत ही बुरा खयाल तुम्हारे दिमाग में आया है ॥ ३२ ॥ वहाँ से वह उस कुएँ के पास गई जो उसके मित्र की शिकारगाह में था ॥ ३३ ॥ दूसरे दिन शेर के शिकार के लिए उसका यार आया जो वसंत ऋतु में शिकारी पक्षी "बाशा" की चोंच के समान लाल था ॥ ३४ ॥ उसके आगे एक बड़ी नीलगाय भाग निकली। उसने भी सुबह की हवा की तरह घोड़ा उसके पीछे लगा दिया ॥ ३५ ॥ वह बहुत दूर निकल गया और उसके साथ दूसरा कोई न रहा। न पानी, न खाद्य और न ही उसे अपने आप की खबर रही ॥ ३६ ॥ वह उस नौजवान शरीर के साथ चल पड़ी जिसके जैसा न सूरज और न कोई हूर अथवा परी है ॥ ३७ ॥ उसे देखते ही राजा मोहित हो गया और उसका अपना होश भी अपने हाथ से जाता रहा ॥ ३८ ॥ मैं खुदा की क़सम खाकर कहता हूँ कि मैं अपनी जान से भी ज्यादा प्यार तुम्हें करता हूँ ३९ पहले उस औरत ने तीन-चार बार नही की पर अन्त में

ख़ूने सितादश न मांदश निशाँ ॥ ४१ ॥ कुजा शाहि कै ख़ुसरवो ज़ाम ज़म । कुजा शाहि आदम मुहंमद ख़तंम ॥४२॥ फ़रेदूं कुजा शाहन इसफ़ंदयार । न दाराबदारा दरामद शुमार ॥ ४३ ॥ कुजा शाहि असकंदरो शेरशाह । कि यक हम न मांद असत ज़िंदह ब जाह ॥ ४४ ॥ कुजा शाह तैमूर बाबर कुजासत । हुमायूँ कुजा शाहि अकबर कुजासत ॥४५॥ बिदिह साक़ीया सुरख़ रंगे फ़िरंग । ख़ुश आमद मरा वकत ज़द तेग़ जंग ॥ ४६ ॥ ब मन दिह कि ख़ुद रा पयोरस कुनम । बतेग़ आज़माईश कोहस कुनम ॥ ४७ ॥ ८ ॥

॥ हिंकायत अट्ठवीं समापतम ॥

उसके कहने के मुताबिक़ ही काम किया ॥ ४० ॥ ज़माने की बेवफ़ाई के चक्र को देखो । "सिआवश" मारा गया और उसका निशान भी बाक़ी न बचा ('सिआवश' एक राजपूत शूरवीर का नाम है जो अपने पिता "कैकाउस" के साथ नाराज हो घर छोड़कर "अफ़रा सिआब" के पास चला गया । उसने पहले तो इसका आदर किया और अपनी पुत्री का विवाह इससे कर दिया, पर अन्त में इसे बिना किसी दोष के ही मरवा डाला) ॥ ४१ ॥ कहाँ है 'कै' (राजा), ख़ुसरो, जमशेद और उसका प्याला कहाँ है ? आदम कहाँ है और मुहम्मद कहाँ है ? ॥ ४२ ॥ फिरेदूं बहमन और असफ़ंद यार कहाँ है ? न दाराब है, न दारा है । इतने राजा थे उनकी गणना नहीं की जा सकती ॥ ४३ ॥ सिकंदर बादशाह और शेरशाह कहाँ है ? जो भी हुए उनमें से एक भी जीवित नहीं बचा है ॥ ४४ ॥ तैमूर वादशाह, बाबर, हुमायुँ और अकबर बादशाह जैसे कहाँ हैं ? ॥ ४५ ॥ हे साक़ी ! फ़िरंग देश का लाल रंग का प्याला मुझे दे जो लड़ाई में तलवार मारते समय अच्छा लगता है ॥ ४६ ॥ मुझे दे जो मैं अपने निजस्वरूप का विचार कर सकूँ। तलवार चलाता हुआ मैं (कामादिक अवगुणों को) दबाऊँ ॥ ४७ ॥ ८ ॥

॥ दास्तान आठवीं समाप्त ॥

हिकायत नौवीं ॥

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

कमालश करामात आजम करीम । रज़ा बख़श राज़क रहाको रहीम ॥ १ ॥ ब जाकर विहंद ईं ज़मीनो ज़मान । मलूको मलायक हमह आँ जहान ॥ २ ॥ हिकायत शुनीदेम शाहे फ़िरंग । चु बा ज़नि निशसतंद पुशते पलंग ॥ ३ ॥ नज़र करद बर बचह ग्रउहर निग़ार । ब दीदन हुमायूँ जवाँ उसतवार ॥४॥ ब वकते शब ओरा बुख़ादंद पेश । (सू०ग्रं०१५१४) ब दीदन हुमायूँ बबालाइ बेश ॥ ५ ॥ बिआ वेख़त बा ओ हमह यक दिगर । कि ज़ाहर शवद होश हैबत हुनर ॥ ६ ॥ यके मूइ चीं रा बुख़ादंद पेश । कि अज़ मूइ चीनी बराबुरद रेश ॥ ७ ॥ बरो हरकि बीनद न दानद सुख़न । कि अज़ रोइ मरदे शुदह शकल ज़न ॥ ८ ॥ बिदानंद हरकस कि ईं हम ज़न असत । कि दर पैकरे चूँ परी रोशन असत ॥ ६ ॥ ब दीदंद ओरा यके रोज़ शाह । कि मकबूल सूरत चु

दास्तान नौवीं

वह करामातों में पूरा, बड़ा कृपालु, हुक्म देनेवाला, रोज़ी देनेवाला, मुक्तिदाता और दयालु है ॥ १ ॥ जो उसका ध्यान करता है उसे वह इस धरती के राजाओं और आकाश के देवताओं का भी सिरताज बना देता है ॥ २ ॥ मैंने फ़िरंग देश के राजा की कहानी सुनी है। वह स्त्री-समेत पलग पर बैठा था ॥ ३ ॥ रानी की नज़र मोतियों के पारखी जौहरी के पुत्र पर पड़ी और वह उसे सुन्दर और बलशाली लगा ॥ ४ ॥ रात के समय उसने उसे अपने सामने बुला लिया। वह उसे सुन्दर ऊँचा जवान लगा ॥ ५ ॥ सभी आप में एक-दूसरे के साथ घुल-मिल गए। उनका हुनर-चातुर्य सब कुछ एक-दूसरे पर प्रकट हो गया ॥ ६ ॥ एक नाई को पास बुलाया गया ताकि वह उस्तरे से बाल साफ़ कर दे ॥ ७ ॥ अब जो कोई भी उसको देखता, पहचानता नहीं था, क्योंकि अब उसका चेहरा औरतों वाला हो गया था ॥ ८ ॥ सबने यही जाना कि यह भी स्त्री है और शरीर में परी की तरह चमकीली है ९ एक दिन राजा ने उसे देखा कि वह

रख़शिंदह माह ॥ १० ॥ बि पुरशीद ओरा कि ए नेक बख़त। सज़ावार शाह असतु शायान तख़त ॥११॥ कि ज़न तो कदामी किरा दुख़तरी। कि मुलके किरा रो किरा ख़्वाहरी ॥ १२ ॥ ब नज़र अंदरूँ बहरमंद आमदश। ब दीदन शहे दिल पसंद आमदश ॥ १३ ॥ कनीज़क यके रा बुख़ादंद पेश। शबं गाहि बुरदश दरूँ ख़ानह ख़ेश ॥ १४ ॥ बिगुफ़ता कि ए सरव क़द सीम तन। चराग़े फ़लक आफ़ताबे यमन ॥ १५ ॥ बज़ाँ बहर मारा ब तपशीद दिल। कि माही बिअफ़ताद अज़ आब गिल ॥ १६ ॥ बुरोए शबा पंक गुलज़ार माँ। कि दर पेश यारे वफ़ादार माँ ॥ १७ ॥ तु गर पेश ओरा बियारी मरा। कि बख़शेम सरबसतह गंजे तुरा ॥ १८ ॥ रवाँ शुद कनीज़क शुनीद ईं सुख़न। बिगोयद सुख़न रा ज़ि सर ताब बुन ॥ १९ ॥ ज़ुबानी कनीज़क शुनीदीं सुख़न। ब पेचीद बर ख़ुद ज़ि पोशाक ज़न ॥ २० ॥ कि ज़ाहर कुनानीद असबाब ख़ेश। कि दीदन जहाँ रा ब किरदार ख़ेश ॥ २१ ॥ बख़ाहद मरा शाहि ए यार मा। मरा मसलिहत दिह वफ़ादार

पूनम के चाँद की तरह प्यारी सूरत वाली है ॥ १० ॥ राजा ने उससे कहा कि ऐ भाग्यशालिनी! तुम बादशाह और तख़्त के लायक हो ॥ ११ ॥ तुम किसकी स्त्री और पुत्री हो? तुम्हारा देश कौन-सा है अथवा तुम किसकी बहिन हो? ॥ १२ ॥ वह देखने में भाग्यशालिनी दिखती थी। राजा ने उसे देखा और वह उसे पसंद आ गई ॥ १३ ॥ रात में राजा उसे अपने घर ले आया और एक दासी को अपने पास बुलाया ॥१४॥ राजा ने कहा कि देवदारु के समान लंबे क़द वाली आकाश के दीपक चाँद के समान, यमन के सूरज के समान प्रकाशित करनेवाली ॥ १५ ॥ उस स्त्री के लिए मेरा वैसे ही दिल तड़प रहा है जैसे मछली पानी में से मिट्टी में गिर पड़े तो तड़पती है ॥ १६ ॥ ऐ मेरे दिल की फुलवाड़ी! तुम फ़ुर्ती से जाओ और अपनी वफ़ादारी दिखाओ अर्थात् उसे ले आओ ॥ १७ ॥ अगर तुम उसे मेरे पास ले आओ तो मैं लबालब भरा खज़ाना तुम्हें दे दूँगा ॥ १८ ॥ दासी यह बात सुनते ही चल पड़ी और उसे जाकर शुरू से आख़ीर तक कह सुनाया ॥ १९ ॥ जब दासी के मुँह से उसने यह बात सुनी तो अपने औरत के पहरावे पर उसे गुस्सा आया ॥ २० ॥ अब उसने समझा कि मेरा भेद खुल गया है। अब देर क्या होता है २१ राजा मुझे चाहता है हे मेरे यार अब मुझे वफ़ादारी

मा ।। २२ ।। तु गोई मनईं जा गुरेज़ा शवम । कि इस रोज़ अज़ जाइ ख़ेज़ा शवम ।। २३ ।। न तर सो इलाजे तुरा मन कुनम । ब दीदन वज़ा चार माहे निहम ।। २४ ।। चु खुशपीद यक जाइ चूँ बे खबर । ख़बर गशत शुद शाह ओ शेर नर ।। २५ ।। दहाने कनीज़क शुनीद ईं सुख़न । बज़ुंबश बलरज़ीद सर ताब बुन ।। २६ ।। बियामद कज़ो जाइ ओ खुफ़तह दीद । ज़ि सरता कदम हम चु मिहरश तपीद ।।२७।। बिदानदकि ईं रा ख़बरदार शुद । ब रोज़ (मू०ग्रं०१४१५) अज़ा ईं ख़बरदार शुद ।। २८ ।। बिख़ुशपीद यक जा यके ख़ाब गाह । मरा दाव अफ़तद न यज़दाँ गवाह ।। २९ ।। जुदागर बुबीनम अज़ ईं ख़ाब गाह । यके जुफ़त बाशम चु खुरशेद माहु ।। ३० ।। वज़ाँ रोज़ गशतह बियामद दिगर । हमाँ खुफ़तह दीदं यके जा बबर ।। ३१ ।। दरेग़ा अज़ीं गर जुदा याफ़तम । यके हमलह चूँ शेर नर साख़तम ।। ३२ ।। दिगर रोज़ रफ़तश सियम आमदश । ब दीदंद यक जाइ

से सलाह दो, मैं क्या करूँ ? ।। २२ ।। तुम कहो तो मैं यहाँ से ग़ायब हो जाऊँ या इस जगह से आज ही उठकर कहीं अन्यत्र चला जाऊँ ।। २३ ।। (औरत ने यार से) कहा, डरो मत, तुम्हारा इलाज मैं करती हूँ । उसके देखते-देखते ही मैं तुझे चार महीने पास रखूँगी ।। २४ ।। यह कहकर दोस्त को साथ लेकर वे एक ही जगह सोए और बेहोश-से हो गए । तब शेर के समान राजा को खबर लग गई कि जिसे मैं चाहता हूँ, उसे ख़बर हो चुकी है ।। २५ ।। जब उसने दासी के मुँह से सारी बात सुनी, तो वह क्रोध में फिर से पाँव तक काँपने लगा ।। २६ ।। उस जगह पर आया और दोनों को इकट्ठे सोते देखा । अब वह सिर से लेकर पाँव तक सूरज की तरह तप गया ।। २७ ।। उसने सोचा कि इसे मेरे आशिक़ होने की ख़बर मिल गई है, इसी से यह ख़बरदार होकर अब अकेली नहीं सोती है ।। २८ ।। एक ही सोनेवाले कमरे में दोनों एक साथ ही सोती हैं, इसलिए मेरा दाँव नहीं लग पा रहा है ।। २९ ।। (फिर मन में कहा—) अगर इसे पलंग पर अकेली सोती हुई पा जाऊँ तो चाँद-सूरज के जोड़े की तरह मैं भी अपना जोड़ा बना दूँ ।। ३० ।। वह उस दिन चला गया और दूसरे दिन आया पर फिर उसने उन्हें आलिंगनबद्ध सोते देखा ।। ३१ ।। फिर कहने लगा, अफ़सोस है, अगर इसे उससे अलग पा जाता तो शेर की तरह झपट पड़ता ।। ३२ ।। दूसरे दिन

बर ताफ़तश ॥ ३३ ॥ ब रोजे चुआमद ब दीदंद जुफ़्त। ब हैरत फ़रो रफ़्त बा दिल बिगुफ़्त ॥ ३४ ॥ कि हैफ़असत आँ रा जुदा याफ़्तम। कि तीरे कमा अंदरूँ साख़्तम ॥३५॥ न दीदेम दुशमन न दोज़न बतीर। न कुशतम अदूरा न करदम असीर ॥ ३६ ॥ शशम रोज़ आमद ब दीदह् बजाँ। ब पेचश दरावख़्त गुफ़्त अज़ ज़ुबाँ ॥ ३७ ॥ न दीदेम दुशमन कि रेज़ेम ख़ूँ। दरेगा न कैबर कमाँ अंदरूँ ॥ ३८ ॥ दरेगा ब दुशमन न आवेख़्तम। दरेगा ना बा यक दिगर रेख़्तम ॥ ३९ ॥ हक़ीक़त शनाशद न हाले दिगर। कि मायल बसे गशत ओ ताब सर ॥ ४० ॥ बुबीं बेख़बर रा चकारे कुनद। कि कारे बदश इख़्तयारे कुनद ॥ ४१ ॥ बुबीं बे ख़बर बद खराशी कुनद। कि बेआब सर ख़ुद तराशी कुनद ॥ ४२ ॥ बिदिह् साकीया जाम सबज़े मरा। कि सरबसतह् मन गंज बख़शम तुरा ॥ ४३ ॥ बिदिह् साकीया

गया और फिर उन्हें एक ही जगह पर देखकर वापस आ गया। तीसरे दिन भी उन्हें एक ही जगह देखकर मुड़ आया ॥ ३३ ॥ चौथे दिन आया और फिर उन्हें इकट्ठा सोते देखा। वह हैरान होकर चला गया और दिल मे कहने लगा ॥ ३४ ॥ अफ़्सोस है, अगर मैं उसे अकेली पा लेता तो ज़रूर उसकी कमान में अपना तीर टिका देता ॥ ३५ ॥ (फिर कहने लगा कि अफ्सोस है) न मैं दुश्मन को देख पाया, न उसे तीर मारा, न ही मैंने किसी बुरे आदमी को क़ैद किया या मारा (फिर मैं भला कैसा बादशाह हूँ) ॥३६॥ छठवें दिन भी उसने उसको वैसे ही देखा पर फिर कुलबुलाने लगा और कहने लगा ॥ ३७ ॥ न मैंने शत्रु को देखा जो उसके टुकड़े-टुकड़े करता। अफ़्सोस, मै कमान में तीर न डाल सका ॥ ३८ ॥ अफ़सोस, मेरी दुश्मन के साथ भी मुठभेड़ नहीं हो रही। अफ़्सोस है कि एक-दूसरे के साथ आलिंगनबद्ध होकर गिरे भी नही हैं ॥ ३९ ॥ मैंने सत्यस्वरूप को पहचाना नहीं है और इस तरह मोहित हो रहा हूँ ॥ ४० ॥ इस पागल जीव की तरफ़ देखो, क्या काम कर रहा है। जो काम बुरा है उसे ज़रूर ज़ोर से कर रहा है ॥ ४१ ॥ ऐ होश से विहीन जीव ! देख, तू किस तरह से बुरा काम कर रहा है और बिना पानी के ही सिर मुडवा रहा है ४२ हे साक़ी मुझ हरे रंग का

सागरे सब्ज फ़ाम। कि खसम अफ़कनो वकतह् सलश ब काम ॥ ४४ ॥ ६ ॥

॥ हिकायत नौवीं समापतम ॥

हिकायत दसवीं ॥

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

ग़फ़ूरो गुनह् बखश ग़ाफ़ल कुश असत। जहाँ रा तुईं बसतु ईं बंदुबसत ॥ १ ॥ न पिसरो न मादर बिरादर पदर। न दामादु दुशमन न यारे दिगर ॥ २ ॥ शुनीदम सुखन शाहि मायंदराँ। कि रउशन दिलो नाम रौशन ज़माँ ॥ ३ ॥ कि नामश वज़ीरसत साहिब शऊर। कि साहिब दिमाग़ (मू०ग्रं०१४१६) असत ज़ाहर ज़हूर ॥ ४ ॥ कि पिसरे अज़ाँ बूद रउशन ज़मीर। कि हुसनल जमालअसत साहिब अमीर ॥ ५ ॥ कि रउशन दिले शाहि ओ नाम बूद। अदूरा ज़िमरदी बर आवुरद दूद ॥६॥ वज़ीरे यके बूद ओ होशमंद।

जाम दो, मैं तुम्हें भरा-पूरा खज़ाना दे दूंगा ॥ ४३ ॥ हे साक़ी ! मुझे सब्ज रग का प्याला दे जो दुश्मन को पटक फेंकने के वक़्त काम आता है ॥४४॥६॥

॥ दास्तान नौवीं समाप्त ॥

दास्तान दसवीं

दयालु ख़ुदा गुनाह माफ करनेवाला, ग़ाफ़िल (ख़ुदा के ध्यान से चूके हुए) को मारनेवाला है। हे ख़ुदा ! संसार का बंदोवस्त तूने ही बाँधा हुआ है ॥ १ ॥ न तू किसी का पुत्र है, न तेरी माँ है, न पिता है, न दामाद है न दुश्मन है, न दोस्त है। न ही तेरे जैसा अन्य कोई है ॥ २ ॥ हमने माजिदर देश के राजा की एक वार्त्ता सुनी है जो रौशन-दिमाग़ था और दुनिया उसक नाम लेती थी ॥ ३ ॥ उसके बुद्धिमान वज़ीर का नाम 'साहिब' था, ज अच्छे दिमाग़ का मालिक और प्रकट रूप से प्रतापी था ॥ ४ ॥ रौशनज़मी नामक उसका पुत्र पैदा हुआ जो बहुत ही सुन्दर स्वरूपवान और अमीरो क मालिक था ॥ ५ ॥ उस राजा का नाम रौशनदिल था। उसने अपनी बहादुरी से दुश्मनों का मानों धुआँ निकाल दिया था अर्थात् उन्हें तहस-नहस कर दिया था ६ उसका एक वज़ीर बहुत अक़्ल वाला था जो प्रजा

रईयत निवाज़असलु दुशमन गजंद ॥ ७ ॥ वज़ाँ दुखतरे हसत रउशन चराग़ । कि नामे अज़ाँ बूद रउशन दिमाग़ ॥८॥ ब मकतब सपुरदंद हर दो तिफल । कि तिफ़लश बसे रोज़ ग़शतंद खिज़ल ॥ ९ ॥ निशसतंद दानाइ मउलाइ रूम । कि दिरमश बबखशीद आँ मरज़ बूम ॥ १० ॥ निशसतंद दर आँ जाइ तिफ़ले बसे । बुखाँदे सुख़न अज़ किताब हर कसे ॥ ११ ॥ ब बगल अंदर आरंद हर यक किताब । ज़ि तउरेत अंजील वजहे अदाब ॥ १२ ॥ दु मकतब कुनानीद हफ़त अज़ ज़ुबाँ । यके मरद बुखाँदंद दीगर ज़नाँ ॥ १३ ॥ कि तिफ़ला बुखाँदंद मुलाँ खुशश । ज़नारा बुखाँदंद ज़ने फ़ाज़लश ॥ १४ ॥ वज़ाँ दरमियाँ बूद दीवार ज़ीं । यके आँ तरफ़ बूद यके तरफ़ ईं ॥ १५ ॥ सबक बुरद हरदो ज़ि हर यक हुनर । इलम कशमकश करद बा यक दिगर ॥ १६ ॥ सुख़न हर यके राँद हर यक किताब । ज़ुबाँ फरश अरबी बिगोयद जवाब ॥ १७ ॥ इलम रा सुखन राँद बा यक

पालक और शत्रुओं को दुखी करनेवाला था ॥ ७ ॥ उसकी एक लड़की दीपक की लौ के समान थी उसका नाम रौशनदिमाग़ी था ॥ ८ ॥ दोनो बच्चों को स्कूल में डाल दिया गया, क्योंकि पहले वे बच्चे आवारा ही घूमते रहे थे ॥९॥ वे रूम देश के सयाने मौलाना विद्वान के पास पढ़ने के लिए बैठे । राजा ने उसे नक़द दौलत और ज़मीन की जागीर बख़्श दी ॥ १० ॥ वहाँ दूसरे भी बहुत से लड़के पढ़ने के लिए बैठे थे । सब कोई किताब मे से अपना सबक़ पढ़ते थे ॥ ११ ॥ हर एक लड़का किताब को बग़ल मे दबाकर ले आता था । तौरेत और इंजील आदि भी लाये जाते थे ॥ १२ ॥ सात बोलियों के लिए दो स्कूल बनाए गए जिनमें एक मे आदमी और एक में औरतें पढ़ती थीं ॥ १३ ॥ उन बच्चों को बहुत अच्छा एक मुल्ला पढ़ाता था और उन लड़कियों को एक विद्वान स्त्री पढ़ाती थी ॥ १४ ॥ उनके बीच एक दीवार बनी हुई थी, इसलिए एक तरफ एक और दूसरी तरफ़ दूसरे पढ़ते थे ॥ १५ ॥ हर एक गुण सीखने मे दोनों ही बढ़े-चढ़े थे, क्योंकि विद्या पढ़ने में वे एक-दूसरे से होड़ लगाते रहते थे ॥ १६ ॥ हर कोई हर एक किताब की वार्त्ता को पढ़ता था और फ़ारसी-अरबी ज़ुबान में एक-दूसरे से बातचीत करते थे ॥ १७ ॥ एक ने दूसरे के साथ विद्या की बात छेड़ दी अर्थात् मूर्ख और विद्वान मे

दिगर। ज़ि कामल ज़ि जायल ज़ि नारद सियर ॥ १८ ॥ कि शमशेर इलमो अलमबर कशीद। बहारे जवानी ब हरदो रशीद ॥ १९ ॥ बहारश दर आमद गुले बोसताँ। बजुंबश दराँमद सहे चीसताँ ॥ २० ॥ बरख़श अंदर आमद शहिनशाहि चीं। बख़ूबी दराँमद तने नाज़नीं ॥२१॥ ब ख़ूबी दर आमद गुले बोसताँ। ब ऐश अंदर आमद दिले दोसताँ ॥ २२ ॥ ज़ि देवार जो अंदरूँ मूस हसत। ज़ि देवार ओ हम चूँ सूराख गशत ॥ २३ ॥ ब दीदन अज़ाँ अंदरूँ हर दुतन। चराग़े जहाँ आफ़ताबे यमन ॥ २४ ॥ चुना इशक आवेख़त हर दो निहाँ। कि इलमश रवद दसत होश अज़ जहाँ ॥ २५ ॥ चुना हर दु आवेख़त बाहम रशेब। कि दसत अज़ इना रफ़त पॉ अज़ रकेब ॥ २६ ॥ ब पुरशीद हरदो कि ए नेक खोइ। कि ए (मू०ग्रं०१४१७) आफ़ताबे जहाँ माह रोइ ॥ २७ ॥ कि ईं हाल गुज़रद ब आँ हर दो तन। बि पुरशीद अख़वंद व अख़वंद ज़न ॥ २८ ॥ चराग़े फ़लक आफ़ताबे जहाँ। चरा

बातचीत शुरू हुई ॥ १८ ॥ उन्होंने तलवार की विद्या में झंडा ऊँचा उठा लिया अर्थात् विद्या प्राप्त कर ली। दोनों अर्थात् राजा का लड़का और वज़ीर की लड़की जवानी के मौसम पर आ पहुँचे ॥ १९ ॥ उसकी फुलवाड़ी पर फूलों की वसंत ऋतु आ गई और इधर चीन देश के राजा अर्थात् कामदेव ने भी हलचल शुरू कर दी ॥ २० ॥ चीन का शहनशाह (काम) अपनी चमक-दमक में आ गया। नाज़नीन के शरीर मे भी सुन्दरता आ गई ॥ २१ ॥ लड़का और लड़की सुन्दरता में आकर दोस्तों के साथ मिलकर रंगरेलियाँ मनाने लगे ॥ २२ ॥ उस दीवार में एक चूहा रहता था जिसके कारण दीवार में एक छेद जैसा हो गया था ॥ २३ ॥ संसार का दीपक (लड़की) और यमन का सूरज (लड़का) उस छेद में से एक-दूसरे को देखा करते थे ॥ २४ ॥ इस तरह चोरी-चोरी दोनों को इश्क़ हो गया जिससे उनकी विद्या और संसार की होश जाती रही ॥ २५ ॥ दोनों आपसी प्यार की तीव्र लालसा मे ऐसे फंस गए कि दोनों के हाथ से लगाम और पाँवों से रकाब निकल गई ॥ २६ ॥ दोनों ने (एक-दूसरे से) पूछा कि हे अच्छे स्वभाव वाले सूरज और चन्द्रमुखी ! तुम्हारा क्या हाल है ? ॥२७॥ उन दोनों का यह हाल है इस बात का अध्यापकों को पता लग गया तब दोनों से उन्होंने पूछा २८। हे आकाश के दीपक और ससार के सूर्य तुम लोग

लागरी गशत वजहे नुमाँ ॥ २९ ॥ चि आजार गशतह बुगो जानमा । कि लाग़र चरा गशती ए जान मा ॥ ३० ॥ अज़ारश बुगो ता इलाजे कुनम । कि मरज़े शुमारा खिराज़े कुनम ॥ ३१ ॥ शुनीद ईं सुखन रा न दादश जवाब । फ़रो बुरद हर दो तने इशक ताब ॥ ३२ ॥ चु गुज़रीद बरवै दु से चार रोज़ । बरामद दु तन हर दो गेती फ़रोज़ ॥ ३३ ॥ बरो दूर गशतंद तिफ़ली गुबार । कि मुहरश बर आवुरद चूं नउ बहार ॥ ३४ ॥ वज़ाँ फ़ाज़लश बूद दुखतर यके । कि सूरत जमाल असत दानश बसे ॥ ३५ ॥ शनासीद ओरा ज़ि हालत वज़ाँ । बगुफ़तश दरूँ खिलवतश खुश ज़ुबाँ ॥३६॥ कि ए सरव क़द माह रो सीम तन । चरागे फ़लक आफ़ताबे यमन ॥ ३७ ॥ जुदाई मरा अज़ तुरा कतरह नेसत । ब दीदन दु क़ालब ब गुफ़तम यकेसत ॥ ३८ ॥ ब मन हाल गो ता चि गुज़रद तुरा । कि सोज़द हमह जान जिगरे मरा ॥३९॥ कि पिनहाँ सुखन करद याराँ खतासत । अगर रास गोई तु बर मन रवासत ॥ ४० ॥ कि दीगर बगोयम मरा रासत गो ।

दुर्बल क्यों होते जा रहे हो, क्या कारण है ? ॥२९॥ मेरी जान ! बताओ तुम्हें क्या दुख है ? तुम दुर्बल क्यों हो रहे हो ? ॥ ३० ॥ दुख बताओ तो मैं उसका इलाज करूँ और आपके दर्द की दवा करूँ ॥ ३१ ॥ उन्होंने इस बात को सुना पर कोई जवाब न दिया और दोनों ने इश्क़ की ताब में गर्दनें झुका लीं ॥ ३२ ॥ जब दो-चार दिन उन पर ऐसे ही बीत गए तो वे दोनों संसार के सामने प्रकट हो गए ॥ ३३ ॥ बचपन का अँधेरा दूर हो गया और जवानी का नया मौसम उन पर छा गया ॥३४॥ विद्वान् की एक लड़की थी जो बहुत ही सुन्दर स्वरूप वाली और चतुर थी ॥ ३५ ॥ उसने उन्हें उनके हालात से पहचान लिया और एकान्त में ले जाकर उन्हें मीठी ज़ुबान से कहा ॥ ३६ ॥ हे देवदारु जैसे क़द, चन्द्रमा जैसे मुँह और चाँदी जैसे शरीरवाले, आसमान के दीपक और यमन देश के सूरज ! ॥ ३७ ॥ मुझे तुमसे बिछुड़ना एक पल भर के लिए भी अच्छा नहीं लगता । देखने में तेरा-मेरा अलग-अलग शरीर है, पर कहना इसे एक ही चाहिए ॥ ३८ ॥ तुम मुझे अपना हाल बताओ कि तुम्हारे साथ क्या बीत रही है ? (तुम्हें इस तरह देखकर) मेरी जान और दिल हमेशा जलता रहता है ॥ ३९ ॥ दोस्तों से बात छिपानेवाला भूल करता है अगर तू मुझे सच कह दे तो यह तेरे

कि अज़ खून जिगरे मरा तो बिशो ॥ ४१ ॥ सुखन दुज़दगी करद यारां खतासत । अमीरान दुज़दी वज़ीरां खतासत ॥४२॥ सुखन गुफ़तने रासत गुफ़तन खुश असत । कि हक गुफ़तनो हम चु साफ़ी दिल असत ॥ ४३ ॥ बसे बार गुफ़तश जवाबो न दाद । जवाबे ज़ुबां सुखन शीरी कुशाद ॥ ४४ ॥ यके मजलस आरासत बा रोद जाम । कि हम मसत शुद मजलसे ओ तमाम ॥ ४५ ॥ ब कैफ़श हमह हम चु आवेखतंद । कि ज़खमे जिगर बाज़ुबां रेखतंद ॥ ४६ ॥ सुखन बा ज़ुबां हम चु गोयद मुदाम । न गोयद बजुज़ सुखन महबूब नाम ॥ ४७ ॥ दिगर मजलस आरासत बा रोद चंग । जवानान साइशतहे खूब रंग ॥ ४८ ॥ हमह मसत खो शुद हमह खूब मसत । इनाने फ़ज़ीलत बरूं शुद ज़ि दसत ॥ ४९ ॥ हरां कस कि अज़ (मू०ग्रं०१४१८) इलम सुखनश बिरांद । कि अज़ बेखुदी नाम हरदो बुखांद ॥ ५० ॥ चु इलमो फ़ज़ीलत फरामोश गशत । बुखादंद बा यक दिगर नाम मसत ॥ ५१ ॥

और मेरे लिए ठीक है ॥ ४० ॥ मैं अन्य किसी को नहीं बताऊँगी, तू मुझे सच बता दे । तू मेरे जिगर पर से खून को धो दे (और मुझे सब बता दे) ॥ ४१ ॥ मित्रों से चोरी रखना भारी भूल है और राजाओं का वज़ीरों से चोरी रखना भी भूल है ॥ ४२ ॥ मित्रों को सच बताना अच्छा होता है । सच कहना दिल को साफ़ करने की तरह है ॥ ४३ ॥ उसने बहुत बार कहा पर उसने जवाब नहीं दिया । जवाब लेने के लिए ही वह मीठी-मीठी बातें कर रही थी ॥ ४४ ॥ फिर उसने एक सभा बुलाई जिसमें संगीत का कार्यक्रम हुआ । प्याला बाँटा गया और सभा में आए सभी लोग मस्त हो गए ॥ ४५ ॥ शराब के नशे में वे सभी ऐसे हो गए कि जिगर के ज़ख्मों को ज़ुबान के रास्ते से बाहर निकालने लगे ॥ ४६ ॥ बाकी सब तो हमेशा जैसी ही बातें कर रहे थे पर ये दोनों अपने-अपने प्रिय के अलावा कुछ नहीं बोल रहे थे ॥ ४७ ॥ (मौलाना की लड़की ने) दूसरी सभा बाजों और सारंगियों से की । यह सुन्दर नौजवानों के लिए थी ॥ ४८ ॥ सभी मस्त स्वभाव वाले मस्त हो गए और विद्या की लगाम से बाहर हो गए ॥ ४९ ॥ जिस किसी ने भी उनके साथ विद्या की बात छेड़ी उसे कोई जवाब न देकर दोनों के नाम ही मस्ती में बोले जा रहे थे ॥ ५० ॥ जब विद्या और बुद्धि की चतुराई भूल गई, तब मस्ती मे वे एक-दूसरे का नाम ही

हरा कस कि देरीनह रा हसत दोसत। ज़ुबाँ ख़ुद कुशायिदह अज़ नाम ओसत ॥ ५२ ॥ शनाशिद कि ईं गुल मुख़न आशक असत। ब गुफ़तन हुमायूँ मुबक तन ख़ुश असत ॥ ५३ ॥ कि अज़ इशक अज़ मुशक अज़ ख़मर ख़ूँ। कि पिनहाँ न मांद असत आमद बरूँ ॥ ५४ ॥ ब शहिर अंदरूँ गशत शुहरत पज़ीर। कि आज़ादहे शाहु व दुख़तर वज़ीर ॥ ५५ ॥ शुनीद ईं सुख़न शहि दु किशती बुख़ाँद। जुदा बर जुदा हरदु किशती निशाँद ॥ ५६ ॥ रवाँ करद ओरा ब दरीया अज़ीम। दु किशती यके शुद हमह मउज बीम ॥ ५७ ॥ दु किशती यके गशत ब हुकमे अलाह। ब यक जा दराँमद हुमा शमश माह ॥ ५८ ॥ बुबीं कुदरते किरदगारे अलाह। दु तन रा यके करद अज़ हुकम शाहि ॥ ५९ ॥ दु किशती दराँमद ब यक जा दु तन। चरागे जहाँ आफ़ताबे यमन ॥ ६० ॥ बि रफ़तंद किशती ब दरीयाइ गार। ब मउज अंदर आमद चु बरगे बहार ॥ ६१ ॥ यके अज़दहा बूद आ जाँ निशसत।

पढ़ते जाते थे ॥ ५१ ॥ जो जिसका कोई पुराना मित्र था वह उसी का नाम लिये जा रहा था ॥ ५२ ॥ इस तरह की बातों से पता चल गया कि यह लड़का आशिक़ हो गया है। वह बोलने में शुभ लगनेवाला, कोमल तन वाला और अच्छा है ॥ ५३ ॥ लोग कहा करते हैं कि इश्क़-मुश्क़ (खाँसी-खुजली, खैर) तथा ख़ून, शराब और पान छिपाने से भी छिपते नहीं ॥ ५४ ॥ सारे शहर में यह बात प्रकट हो गई कि राजा का लड़का और वज़ीर की लड़की एक-दूसरे से प्यार करते हैं ॥ ५५ ॥ इस बात को सुनते ही राजा ने दो कश्तियाँ मँगवाईं। उन दोनों को अलग-अलग कश्ती पर बैठा दिया ॥ ५६ ॥ फिर उन दोनों कश्तियों को दरिया के गहरे और तेज़ धार पानी में चला दिया। आखिर में लहरों की वजह से दोनों कश्तियाँ एक हो गईं ॥ ५७ ॥ अल्लाह के हुक्म से दोनों कश्तियाँ जुड़कर एक हो गईं। वह सूरज और चाँद एक जगह पर इकट्ठे हो गए ॥ ५८ ॥ उस कर्ता परमात्मा की कुद्रत देखो, राजा के हुक्म ने दोनों शरीरों को इकट्ठा कर दिया ॥ ५९ ॥ दोनों कश्तियों में आते हुए दोनों शरीर अर्थात् अरब का दीपक और यमन का सूरज एक जगह पर इकट्ठे हो गए ॥ ६० ॥ कश्ती चल पड़ी और नदी के गहरे पानी में आ गई। बसन्त ऋतु के पत्तों की तरह नाव लहरों में आ गई ६१ उस जगह पर एक बड़ा

ब खुरदन दरॉमद बजॉं करद जसत ॥ ६२ ॥ दिगर पेश तर बूद कहरे बला । दु दसतश सतूं करद बे सर नुमा ॥ ६३ ॥ मियाँ रफत शुद किशतीए हर दु दसत । बनेसे दमानद अज़ो मार मसत ॥ ६४ ॥ गरिफ़तंद ओरा बदसत अंदरूँ । ब बख़शीद ओरा न खुरदंद ख़ूँ ॥ ६५ ॥ चुना जंग शुद अज़दहा बा बला । कि बेरूँ निआमद ब हुकमे खुदा ॥ ६६ ॥ चुना मउज खेज़द जि दरीया अज़ीम । कि दीगर न दानिसत जुज़ यक करीम ॥ ६७ ॥ रवाँ गशत किशती ब मउजे बला । बराहे खलासी ज़ि रहमत खुदा ॥ ६८ ॥ ब आख़र हम अज़ हुकम परवरदिगार । कि किशती बरआमद ज़ि दरीया किनार ॥ ६९ ॥ कि बेरूँ बरॉंमद अजाँ हर दु तन । निशसतह लबे आब दरीया यमन ॥ ७० ॥ बरामद यके शेर दीदन शिताब । ब खुरदन अज़ाँ हर दु तन रा (मू०ग्रं०१४१९) कबाब ॥ ७१ ॥ ज़ि दरीया बर आमद ज़ि मग़रे अज़ीम । खुरम हर दुतन रा ब हुकमे करीम ॥ ७२ ॥ बजाइश दरामद ज़ि शेरे शिताब । ग़ज़ंदश हमी बुरद बर रोद आब ॥ ७३ ॥

अजगर बैठा हुआ था । वह इन्हें खाने के लिए झपटा ॥ ६२ ॥ दूसरी तरफ़ से उनको एक डरावनी चुड़ैल नज़र आई । उसने अपने दोनों हाथ खम्भे की तरह ऊपर किये । वह (दोनों हाथ) सिर के बिना आदमी दिखाई दे रहे थे ॥ ६३ ॥ उनकी नाव उन दोनों हाथों के बीच से चली गयी । वे मदमस्त सर्प के डसने से बच गए ॥ ६४ ॥ उस बला ने उन्हें अपने हाथों में पकड़ लिया । पर खुदा ने मेहरबानी की और उसने उनका खून न पिया ॥ ६५ ॥ अजगर और डायन की आपस में ऐसी लड़ाई हुई कि खुदा के हुक्म से कोई भी दरिया से बाहर न आया ॥ ६६ ॥ बड़े-बड़े दरियाओं से ऐसी लहरें उठती हैं जिन्हें उस कृपालु के अलावा कोई नहीं जान सकता ॥ ६७ ॥ बड़ी-बड़ी लहरों मे नाव चल पड़ी । उससे छुटकारा पाने के लिए वे खुदा से दया की भीख माँगते थे ॥ ६८ ॥ पोषण करनेवाले प्रभु की आज्ञा से आखिर में नाव दरिया के किनारे आ लगी ॥ ६९ ॥ उस नाव से उतरकर दोनो यमन दरिया के किनारे पर बैठ गए ॥ ७० ॥ एक शेर उन्हें देखकर तुरन्त उनके शरीरों का कबाब खाने के लिए तुरन्त आ गया ॥ ७१ ॥ उस दरिया में से एक बडा मगरमच्छ उन्हें खाने के लिए आ गया ॥ ७२ ॥ उसी जगह पर शेर आ गया उसने नदी पर छलांग लगा दी ७३

ब पेचीद सर ओ ख़ता गशत शेर। ब दहने दिगर दुशमन अफ़तद दलेर ॥ ७४ ॥ ब गीरद मगर दशत शेरो शिताब। ब बुरदंद ओरा कशीदह दर आब ॥ ७५ ॥ बुबीं कुदरते किरदगारे जहाँ। कि ईं रा ब बखशीद कुसतश अजाँ ॥ ७६ ॥ बि रफ़तंद हरदो ब हुकमे अमीर। यके शाहज़ादह ब दुख़तर वज़ीर ॥ ७७ ॥ बि अफ़ताद हरदो ब दसते अज़ीम। न शायद दिगर दीद जुज़ यक करीम ॥ ७८ ॥ ब मुलके हबश आमद आ नेक खोइ। यके शाहज़ादह दिगर ख़ूब रोइ ॥७९॥ दर आँ जा बिआमद कि बिनशसतह शाह। नशसतंद शब रंग ज़रीं कुलाह ॥ ८० ॥ ब दीदंद ओरा बुख़ादंद पेश। ब गुफ़तंद कि ए शेर आज़ाद केश ॥ ८१ ॥ ज़ि मुलके कदामी तु ब मन बगो। चि नामे किरा तो ब ईं तरफ़ जो ॥ ८२ ॥ वगर नह मरा तो न गोईं चु रासत। कि मुरदन शिताब असत एज़द गवाहसत ॥ ८३ ॥ शहिनशाहि पिसरे ममायंदरां। कि दुख़तर वज़ीर असत ईं नउजवाँ ॥ ८४ ॥ हक़ीक़त ब

उन लोगों के द्वारा सिर फिरा लिये जाने के कारण शेर का हमला निष्फल हो गया। बल्कि वह दिलेर खुद ही दूसरे दुश्मन के मुँह में गिर पड़ा ॥ ७४ ॥ मगरमच्छ ने शेर का हाथ पकड़ लिया और उसे खींचकर पानी में ले गया ॥७५॥ खुदा की क़ुद्रत देखो कि उसने जिंदगी बख्श दी और उसने उसे मार दिया ॥ ७६ ॥ खुदा के हुक्म में दोनों चल पडे। एक राजा का पुत्र और दूसरी वज़ीर की लड़की थी ॥ ७७ ॥ दोनो ही एक उजाड़ रास्ते पर चल पड़े जहाँ सिर्फ़ एक परमात्मा के सिवा अन्य कोई दिखाई न पड़ता था ॥ ७८ ॥ दे अच्छे स्वभाव वाले हब्शी मुल्क मे आ गए। वह एक तो राजपुत्र है और दूसरी सुन्दर चेहरेवाली वज़ीर की लड़की है ॥ ७९ ॥ वे वहाँ आ गए जहाँ हब्शी राजा बैठा हुआ था। वह ऐसा था मानों रात का काला रंग बैठा हुआ हो। परन्तु उसके सिर पर सुनहरा ताज था ॥ ८० ॥ उसने इन्हें देखा और पास बुला लिया। फिर कहा कि हे आज़ाद शूरवीर ! ॥ ८१ ॥ तुम्हारा देश कौन सा है ? मुझे बताओ, तुम्हारा नाम क्या है और इस तरफ़ किसे ढूंढते फिर रहे हो ? ॥ ८२ ॥ और अगर तूने मुझे सच न बताया तो खुदा गवाह है, तुम्हारी मौत नजदीक है ॥ ८३ ॥ उसने कहा कि मायंदरा शहनशाह का मैं बेटा हूँ और यह नवयुवती उसके वज़ीर की पुत्री है ८४ उसने पहली बात और बाद मे गुज़री मुसीबतो की कहानी

गफ़तश ज़ि पेशीनह हाल। कि बरत्रै चु बुगज़शत चंदीं ज़वाल ॥ ८५ ॥ ब मिहरस दरामद बगुफ़त अज़ ज़ुबाँ। मरा ख़ानह जाए ज़ि खुद खानह दाँ ॥ ८६ ॥ वज़ारत खुदश रा तुरामे दिहम। कुलाहे मुमालक तु बर सर निहम ॥८७॥ ब गुफ़तंद ईं रा व करदंद वज़ीर। कि नामे वज़ाँ बूद रौशन ज़मीर ॥ ८८ ॥ ब हर जा कि दुशमन शनासद अज़ीम। दवीदंद बरवै ब हुकमे करीम ॥ ८९ ॥ कि ख़ूनश बरेज़ीद करदंद ज़ेर। दिगर जा शुनीदे दवीदे दलेर ॥ ९० ॥ ब हर जा कि तरकश बरेज़ंद तीर। ब कुशते अदूरा ब करदे असीर ॥ ९१ ॥ ब मुद्दत यके साल ता चार माह। दरिख़शिदह आमद चु रख़शिदह माह ॥ ९२ ॥ बदोज़ंद दुशमन बसोज़ंद तन। बयाद आमदश रोज़गारे कुहन ॥ ९३ ॥ ब गुफ़तश यके रोज़ दुख़तर वज़ीर। (मू०ग्रं०१४२०) कि ए शाह शाहान रउशन ज़मीर ॥ ९४ ॥ ब यक बार मुलकत फ़रामोश गशत। कि अज़ मसत मसती हमह होश गशत ॥९५॥ तु आँ मुलक पेशीनहरा याद कुन। कि शहरे पदर रा तु

भी उससे कह दी ॥ ८५ ॥ सुनकर उसके मन मे मोह जाग पड़ा। तब उसने कहा कि जो भी घर-मकान है, वह सब तुम अपना ही समझो ॥ ८६ ॥ मैं तुम्हें अपनी वज़ीरी देता हूँ और बहुत से मुल्कों के प्रबंध का छत्र तुम्हारे सिर पर रखता हूँ ॥ ८७ ॥ यह कहा और उसे अपना वज़ीर बना दिया जिसका नाम रौशनज़मीर था ॥ ८८ ॥ फिर उसने जहाँ कहीं भी राजा का बड़ा या छोटा दुश्मन देखा उस परमात्मा के हुक्म में उस पर आक्रमण कर दिया ॥ ८९ ॥ उसने अपना खून बहाया और शत्रुओं को अपने अधीन कर लिया। फिर दूसरी जगह कोई सुना तो दिलेर होकर वहाँ भी धावा बोल दिया ॥ ९० ॥ वह अपने तरकस में से जहाँ कहीं भी तीर फेंकता था दुश्मन को मार गिराता या कैद कर लेता था ॥ ९१ ॥ एक साल चार महीने में ही वह चमकनेवाला चाँद की तरह चमक उठा ॥ ९२ ॥ जिन दुश्मनों को तीरों में पिरोता था उनके शरीर को आग में जला देता था। इसी तरह करते उसे पुराना समय याद आ गया ॥ ९३ ॥ एक दिन उसे वज़ीर की लड़की ने कहा कि हे राजा रौशनज़मीर ! ॥ ९४ ॥ तुम्हें एक बार में ही अपना देश भूल गया है। तुम मस्ती में ऐसे मस्त हुए हो कि तुम्हारा होश ही जाता रहा है ९५ तुम पहले अपने देश को याद करो जो तुम्हारे पिता का शहर

आबाद कुन ॥ ९६ ॥ निगह दाशत अज़ फ़उज लशकर तमाम । बसे गंज बख़शीद बर वै मुदाम ॥ ९७ ॥ यके लशकर आरासत चूँ नउ बहार । ज़ि ख़ंजर व गुरजो व बकतर हज़ार ॥ ९८ ॥ ज़िरह खोद ख़ुफ़तान बरगशतवान । ज़ि शमशेर हिंदी गिराँ ता गिरान ॥ ९९ ॥ ज़ि बंदूक मसहद व चीनी कमान । ज़िरह रूम शमशेर हिंदोसतान ॥ १०० ॥ चि अज़ ताज़ी असपान फ़ौलाद नाल । हमह जू बदह फ़ीलान अजिश बे मसाल ॥ १०१ ॥ हमह शेर मरदाँ व ज़ोरावराँ । कि शेर अफ़कना रा बशफ़ अफ़कनाँ ॥ १०२ ॥ बरज़म अंदरूँ हमचु पील अफ़कन असत । बबज़म अंदरूँ चरब चालाक दसत ॥ १०३ ॥ निशाँ मे दिहद नेज़ह रा नोक ख़ूँ । कशीदंद अज़ तेग़ ज़हिर आब गूँ ॥ १०४ ॥ यके फ़उज आरासतह हम चु कोह । जुवानान शाइसतहे यक गरोह ॥ १०५ ॥ बपोशीद दसतार दुख़तर वज़ीर । ब बसतंद शमशेर जुसतंद तीर ॥१०६॥ ब सरदारीए करद पेशीनह फ़उज । रवाँ करद

है। उसे फिर आबाद करो ॥ ९६ ॥ वह पैदल और घुड़सवार सेना का सदैव खयाल रखता था और उनमें बहुत से खज़ाने बाँटा करता था ॥ ९७ ॥ वसत ऋतु की तरह उसने फ़ौज को हर तरह से तैयार किया। हज़ारों कटारें, गदा और लौह-कवच तैयार करवाए ॥ ९८ ॥ उसने ज़िरहबख्तर, टोप और हिन्दुस्तानी तलवारें, जो अत्यधिक क़ीमती थीं, ले लीं ॥ ९९ ॥ मशहद की बंदूकें, चीन की कमानें, रूम के तनत्राण और हिन्दुस्तान की तलवारें इकट्ठी कर लीं ॥ १०० ॥ अरबी घोड़े, जिनके लोहे के खुर लगे थे और मदमस्त काले रंग के हाथी उन्होंने ले लिये ॥ १०१ ॥ सभी इस प्रकार महान बलवान योद्धा थे जो शेरों को मारनेवाले शूरवीरों की क़तार की क़तार को गिरा देनेवाले थे ॥ १०२ ॥ ऐसे शूरवीर जो युद्ध में हाथी गिरा देनेवाले, सभा में मीठा बोलनेवाले और हाथों से फुर्तीले थे ॥१०३॥ बरछे की नोक का खून दुश्मन के मरने का पता देता था। निकली हुई तलवारें ज़हर में डूबी हुई थीं ॥ १०४ ॥ उसने पहाड़ के समान एक सेना तैयार की जिसमें सजीले जवानों के जत्थे थे ॥ १०५ ॥ वज़ीर की लड़की ने भी सिर पर पगड़ी बाँध ली। कमर से तलवार बाँध ली और तरकस को तीरों से भर लिया ॥ १०६ ॥ फौज की सरदार इस लड़की को बना दिया और दरिया की लहरों की तरह यह फौज रवाना कर दी १०७ । बादल की काली घटा की

ग़रीक ॥ ११८ ॥ ब आवाज़ तोपो तमाचह तुफ़ंग । ज़िमी ग़शत हम चूँ गुले लालह रंग ॥ ११९ ॥ बमैदाँ दरामद कि दुखतर वज़ीर । ब यक दसत चीनी कमाँ दसत तीर ॥१२०॥ ब हरजा कि परराँ शवद तीर दसत । ब सद पहिलूए पील मरदाँ गुज़शत ॥ १२१ ॥ चुना मउज ख़ेज़द ज़िदरीयाब संग । बरख़श अंदर आमद चु तेग़ो निहंग ॥ १२२ ॥ ब ताबश दरामद यके ताब नाक । बरख़श अंदर आमद यके ख़ून ख़ाक ॥ १२३ ॥ बताबश दरामद हमह हिंद तेग़ । बगुररीद लशकर चु दरीयाइ मेग़ ॥ १२४ ॥ वचरख़ अंदर आमद ब चीनी कमाँ । ख़ताब आमदश तेग़ हिंदोसताँ ॥ १२५ ॥ ग़रेवह बबावुरद चंदी करोह । ब लरज़ीद दरयाब दररीद कोह ॥ १२६ ॥ बरख़श अंदर आमद ज़िमीनो ज़माँ । ब ताबश दरामद चु तेग़े यमाँ ॥ १२७ ॥ बतेज़ आमदो नेज़हे बाँससीं । बजुंबश दरामद तने नाज़नी ॥ १२८ ॥ बशोरश दरामद नफ़र हाइ कुहिर । ज़ि तोपो व नेज़ह बपोशीद

लेकर पाँव तक लोहे से ढके हुए थे ॥ ११८ ॥ तोपों, बंदूकों और पिस्तौलों की आवाज़ होने लगी और लड़ाई का मैदान "लाले" के फूल की तरह लाल हो गया ॥ ११९ ॥ वज़ीर की लड़की जंग के मैदान में आई। उसने एक हाथ में चीन की कमान और दूसरे में तीर पकड़ा हुआ था ॥ १२० ॥ जहाँ कहीं से भी उसका तीर उड़ता वह सैकड़ों हाथी और मर्दों की पसलियों के बीच में से निकल जाता ॥ १२१ ॥ जैसे दरिया की लहरें पत्थर से टकराकर उछलती हैं उसी तरह सूरमाओं की तलवारें चमकने लगीं ॥ १२२ ॥ एक चमकीला खड़ग चमका तो ख़ून और मिट्टी एक ही रंग में चमकने लगे ॥ १२३ ॥ सभी तरफ़ हिन्दुस्तानी तलवारें चमकने लगीं । मूसलाधार वर्षा करनेवाले बादल की तरह फ़ौज गूँजने लगी ॥ १२४ ॥ चीनी कमान चमकने लगी और हिन्दुस्तानी तलवार भी चमकने लगी ॥ १२५ ॥ कई कोसों तक कोलाहल होने लगा जिससे दरिया काँप उठा और पहाड़ भी फट गया ॥ १२६ ॥ धरती और आकाश भी चमकने लग गये । यमन देश की तलवारों से चमक निकली ॥ १२७ ॥ बाँस की छड़ वाला बरछा तेज़ी में आया और नाज़नीन (सुन्दरी) के मन में भी क्रोध आ गया ॥ १२८ ॥ सैनिकों ने क्रोध में आकर शोर शराबा कर दिया उस समय संसार तोपों और

दहिर ॥ १२९ ॥ ब जुंबश दरामद कमानो कमंद । दरख़शाँ शुदह तेग़ सीमाब तुंद ॥ १३० ॥ ब जोश आमदह खंजरे ख़्वार ख़ूँ । ज़ुबाँ नेज़ह मार स बरामद बरूँ ॥ १३१ ॥ ब ताबश दरामद लको ताब नाक । यके सुरख़ गोगिरद शुद ख़ूँन ख़ाक ॥ १३२ ॥ दिहा दिह दराँमद ज़ि तीरो तुफ़ंग । हया हय दरामद निहंगो निहंग ॥ १३३ ॥ चका चाक बरख़ासत तीरो कमाँ । बरामद यके रुसत ख़ेज़ अज़ जहाँ ॥ १३४ ॥ न पोयिंदर रा बर ज़िमी बूद जा । न परिंदह रा दर हवा बूद राह ॥ १३५ ॥ चुना तेग़ बारीद मियाने मुसाफ़ । कि अज़ कुशतगाँ शुद ज़िमी कोहकाफ़ ॥१३६॥ कि पाओ सर अंबोह चंदाँ शुदह । कि मैदाँ पुर अज़ गोइ चउगाँ शुदह ॥ १३७ ॥ रवा रउ दरामद ब तीरो तुफ़ंग । कि पारह शुदह खोद ख़ुफ़तान जंग ॥ १३८ ॥ चुना तेग़ ताबश त पीद आफ़ताब । (मू०ग्रं०१४२२) दरख़ताँ शुदह ख़ुशक ब दरयाइ आब ॥ १३९ ॥ चुनाँ तीर बाराँ शुदह हम चु

बरछों में छिप गया ॥ १२९ ॥ कमान और फंदे हिलने लग गए और हिन्दुस्तान की चमकीली तलवार मारकाट करने लगी ॥ १३० ॥ खून पीनेवाली कटार गुस्से में आ गई और साँप की जीभ जैसा बरछा भी बाहर निकल आया ॥ १३१ ॥ चमकीले शस्त्रों का प्रकाश भी चमकने लग गया । लहू और मिट्टी एक ही होकर लाल रंग की गंधक बन गई ॥ १३२ ॥ तीरों और बंदूकों से धाँय-धाँय की आवाज़ आने लगी और मगरमच्छ जैसे शूरवीरों की तरफ़ से हाय-हाय की आवाज़ आने लग गई ॥ १३३ ॥ तीरों और कमानों से "खचाखच" की आवाज़ उठी । ऐसा मालूम पड़ता था जैसे संसार में प्रलय आ गया हो ॥ १३४ ॥ पैदलों को (लाशों के कारण) धरती पर जगह नहीं मिलती थी और पक्षियों को (तीरों के कारण) आसमान में जगह नहीं मिलती थी ॥१३५॥ युद्ध में ऐसी निस्संकोच तलवार चली कि धरती मुर्दों का पहाड़ बन गई ॥ १३६ ॥ पैरों और सिरों का इतना बड़ा ढेर लग गया मानों गेंद और डंडों से मैदान भर गया हो ॥ १३७ ॥ तीर और बंदूक़ ऐसे चले कि युद्ध में पहने हुए शिरस्त्राण टुकड़े-टुकड़े हो गए ॥ १३८ ॥ सूरज की गर्मी की तरह ऐसे तप गई कि वृक्ष और दरियाओं का पानी भी सूख गया १३९ तीरों की वर्षा ऐसी बिजली गिरने

बरकु। बिअफ़ताद शुद फील चूँ फ़रक फ़रक ॥ १४० ॥ ब हरव अंदर आमद वज़ीरे चु बाद। यके तेग़ मायंदरानी कुशाद ॥ १४१ ॥ दिगर तरफ़ आमद ब दुख़तर अज़ाँ। बरहिने यके तेग़ हिंदोसताँ ॥ १४२ ॥ दरख़शाँ शुदह आँ चुना तेग़ तेज़। अदूरा अज़ो दिल शवद रेज़ रेज़ ॥ १४३ ॥ यके तेग़ ज़द बर सरे ओ समंद। ज़िमीनश दरामद चु कोहे बिलंद ॥ १४४ ॥ दिगर तेग़ ओरा बिज़द करद नीम। बिअफ़ताद बूमस चु करखे अज़ीम ॥ १४५ ॥ दिगर मरद आमद चु प्ररां उकाब। बिज़द तेग़ ओरा ब करदश ख़राब ॥ १४६ ॥ चुकारे वज़ीरश बराहत रसीद। दिगर मिहनते सियम आमद पदीद ॥ १४७ ॥ सियम देव आमद बगलतीद ख़ूँ। ज़ि दहलीज़ दोज़ख़ बरामद बरूँ ॥ १४८ ॥ बकुशतंद ओरा दु करदंद तन। चु शेरे यिआँ हम चु गोरे कुहन ॥ १४९ ॥ चहारम दरामद चु शेराँ बजंग। चु बर बचहे गोर ग़ररां पिलंग ॥ १५० ॥ चुना तेग़ बर वै बिज़द

की तरह हुई कि हाथी गिर पड़े, क्योंकि उनके सिर ही सिर दिखाई पड रहे थे ॥ १४० ॥ एक वजीर हवा की तरह लडाई में आया जिसने एक हाथ में मायिंदराँ की बनी हुई तलवार पकड़ी हुई थी ॥ १४१ ॥ दूसरी तरफ उसी की लड़की आई जिसने एक हाथ में हिन्दुस्तान की नगी तलवार पकड़ी हुई है ॥ १४२ ॥ उनकी तेज तलवारें ऐसी चमकने लगी कि उन्हें देखते ही शत्रु का दिल टुकड़े-टुकड़े हो रहा था ॥ १४३ ॥ घोड़े के सिर पर ऐसी तलवार मारी जिससे वह ऊँचे पहाड़ की तरह जमीन पर आ गिरा ॥ १४४ ॥ दूसरी तलवार उसे मारी गई और उसे दो टुकड़ों में बाँट दिया। वह ऊँचे महल की तरह धरती पर आ गिरा ॥ १४५ ॥ एक और मर्द उकाब की तरह युद्धभूमि में आया। उसे भी तलवार मारी और नष्ट कर दिया ॥ १४६ ॥ जब उसे वज़ीर को मारकर कुछ राहत महसूस हुई, और दूसरे को मारकर सुख मिला तो तीसरी विपत्ति आ हाजिर हुई ॥ १४७ ॥ तीसरा दैत्य आया जो ख़ून से सना हुआ था। वह मानों नर्क के दरवाज़े से निकलकर आया था ॥ १४८ ॥ बड़े शेर की तरह अथवा नीलगाय की तरह मारकर दो टुकड़े कर दिया ॥ १४९ ॥ चौथा भी शेर की तरह शूरवीर लड़ाई मे आया। वह ऐसे आया जैसे नीलगाय के बच्चों पर चीता दहाड़ता हुआ आता है १५० वज़ीर की पुत्री मे उस पर ऐसी तलवार मारी कि

नाज़नी । कि अज़ पुशत असपश दरामद ज़िमीं ॥ १५१ ॥ कि पंचम दरामद चु देवे अज़ीम । यके ज़खम ज़द करद हुकमे करीम ॥ १५२ ॥ चुना तेग़ ज़र बै ज़दाँ ख़ूब रंग । ज़ि सर ता कदम्न आमदह ज़ेर तंग ॥ १५३ ॥ शशम देव आमद चु अफ़रीत मसत । ज़ि तीरे कमाँ हम चु कबज़ह गुज़शत ॥ १५४ ॥ बिज़द तेग़ ओरा कि ओ नीम शुद । कि दीगर यला रा अज़ो बीम शुद ॥ १५५ ॥ चुनीता बमिकदार हफ़ताद मरद । ब तेग़ अंदर आवेख़त खास अज़ नबरद ॥ १५६ ॥ दिगर कस निआमद तमंनाइ जंग । कि बेरूँ नियामद दिलावर निहंग ॥ १५७ ॥ बहरब आमदश शाहि मायंदराँ । बतावश तपीदन दिले मरदमाँ ॥ १५८ ॥ चु अबरस ब अंदाखत दउरे यलाँ । बरखश अंदर आमद ज़िहे आसमाँ ॥ १५९ ॥ बतावश दरामद ज़िमीनो ज़मन । दरख़शाँ शुदह तेग़ हिंदी यमन ॥ १६० ॥ चला (मू०ग्रं०१४२३) चल दरामद कमानो कमंद । हया हय दरामद ब गुरज़ो गज़ंद ॥ १६१ ॥ चका चाक बरख़ासत तीरो तुफ़ंग । ज़िमी

वह घोड़े की पीठ से धरती पर गिर पड़ा ॥ १५१ ॥ जब पाँचवाँ सबसे बड़ा दैत्य आया तो उस कृपालु प्रभु के हुक्म से उसे एक ही चोट में मार दिया ॥ १५२ ॥ उस सुन्दरी ने उस पर ऐसी तलवार मारी, जो सिर से पाँव तक (उसके साथ घोड़े को भी) चीर दिया ॥ १५३ ॥ मतवाले दैत्य जैसा छठा दैत्य वैसे ही आया जैसे कमान में से तीर जाता था ॥ १५४ ॥ उसे तलवार मारी वह ठीक आधा-आधा हो गया । दूसरे शूरवीर भी इससे डर गए ॥ १५५ ॥ इस तरह सत्तर की गिनती तक के खास-खास शूरवीर मारकर तलवार में लटका लिये गये ॥ १५६ ॥ अब अन्य किसी को लड़ाई का विचार नहीं आता । बड़े-बड़े दिलावर शूरवीर भी मैदान मे बाहर नहीं आते ॥ १५७ ॥ फिर मायिंदरा (ईरान के उत्तर की ओर का प्रदेश) का राजा खुद युद्ध में आया । उस समय शूरवीरों का हृदय क्रोध से तपने लगा ॥ १५८ ॥ जब उसके घोड़ों ने शूरवीरों के चारों ओर छलाँगें लगाईं, तब धरती और आकाश भी चक्कर में आ गए अर्थात् घूमने लग गए ॥ १५९ ॥ जब युद्धभूमि में हिन्दुस्तानी और यमन की तलवारें चमकीं, उसी समय धरती और आकाश में चमक हुई १६० कमानों और कवंधों की चलाने की आवाजें आने लगीं । गदाओं की चोट खानेवालों की हाय-हाय की आवाज आने लगीं १६१

लाल शुद चूँ गुले लालह रंग ॥ १६२ ॥ हुहा हू दरामद चुपह नंद रूँ । दिहा दिह शुदह खंजरे खार खूँ ॥ १६३ ॥ बरखश अंदर आमद यके ताब रंग । बरखश अंदर आमद दु चालाक जंग ॥ १६४ ॥ बशोरश दरामद सराफ़ील सूर । बरखश अंदर आमद तने खास हूर ॥ १६५ ॥ ब शोरश दरामद ज़ि तन दर खरोश । ब बाजूइ मरदाँ बरा वुरद जोश ॥ १६६ ॥ यके फ़रश आरासत सुरख अतलसे । बुखानद चु मकतब जुबा पहिलूए ॥ १६७ ॥ ब मरदम चुना कुशत शुद कारज़ार । ज़ुबाँ दर गुज़ारम नियामद शुमार ॥ १६८ ॥ गुरेज़ा शवद शाहि मायंदराँ । ब कुशतंद लशकर गिराँ ता गिराँ ॥१६९॥ कि पुशतश बिअफ़ताद दुख़तर वज़ीर । बि बसतंद ओरा कि करदंद असीर ॥ १७० ॥ बनिज़दे बियावुरद जो शाह खेश । बिगुफ़तह कि ए शाह शाहान वेश ॥ १७१ ॥ बिगोयद कि ईं शाह मायंदराँ । बिबसतह बियावुरद निज़दे शुमाँ ॥ १७२ ॥ अगर तो बिगोई

तीरों और बंदूक़ों की बारिश हुई । धरती लाले के फूल की तरह लाल रंग की हो गई ॥१६२॥ जब खून पीनेवाली कटार के चलने से "खचाखच" की आवाज़ हुई तो रणभूमि मे से हाय-हाय की आवाज़ आई ॥ १६३ ॥ जब फुर्तीले योद्धागण घोड़ों पर चढ़कर युद्ध में आए तो (शस्त्रों का) चमकीले रंग का प्रकाश हो गया ॥ १६४ ॥ जब उस अप्सरा ने घोड़े पर सवारी की तो इस्राफ़ील नामक फ़िरिश्ते की तुरही बजनी शुरू हो गई अर्थात् शत्रु के लिए क़ियामत का दिन आ गया ॥ १६५ ॥ जब शरीरों में क्रोध जगा और युद्धभूमि से शोरशराबा उठा तो शूरवीरों की भुजाओं में भी उछाल आ गया ॥ १६६ ॥ लाल रंग का रेशमी फ़र्श (खून का) धरती पर बिछा दिया गया है और ऐसा लग रहा है कि योद्धा (बच्चे) स्कूल में पहलवी बोली पढ़ रहे हैं ॥ १६७ ॥ लड़ाई में इतने आदमी मारे गए हैं जिनकी गिनती जीभ से हो नहीं पाती ॥ १६८ ॥ मायिंदरा का राजा युद्धभूमि से भागा क्योंकि उसकी बहुत फ़ौज लड़ाई मे मारी गई थी ॥ १६९ ॥ वज़ीर की लड़की उसके पीछे पड़ गई, उसे पकड़ लिया और क़ैद कर लिया ॥ १७० ॥ उसे अपने राजा अर्थात् पति के पास ले गई । उसने कहा कि हे राजन् ! ॥ १७१ ॥ इस मायिंदरा के राजा को बाँधकर तुम्हारे पास ले आई हूँ १७२ अगर तुम कहो तो इसे जान से मार दू और कहो तो ताला लगाकर कैद कर

ब ज़ाँ ईं बुरम । वग़र तो बिगोई ब ज़िंदा दिहम ॥ १७३ ॥ बज़िंदाँ सपुरदंद ओरा अज़ीम । सितानद अज़ो ताज शाही कलीम ॥ १७४ ॥ शहिनशाहगी याफ़त हुकमो रज़ाक । कसे दुशमनारा कुनद चाक चाक ॥ १७५ ॥ चुना करद शुद कसद मिहनत कसे । कि रहमत बबख़शीद जो रहमते ॥ १७६ ॥ कि ओह शाह बानू शुदो मुलक शाह । कि शाही हमी याफ़त हुकमे इलाह ॥ १७७ ॥ बिदिह साकीया सागरे सबज़ आब । कि बेरूँ बिअफ़ताद परदह नकाब ॥ १७८ ॥ बिदिह साकीया सबज़ रंगे फ़िरंग । कि वकते बकार असत अज़ रोज़ जंग ॥ १७९ ॥ १० ॥ (मू०ग्रं०१४२४)

॥ हिकायत दसवीं समापतम ॥

हिकायत यारवीं ॥

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

तुईं दसतगीर असत दर माँदगाँ । तुईं कारसाज़ असत बेचारगाँ ॥ १ ॥ शहिनशाहि बख़शिंदए बे निआज़ ।

लूं ॥ १७३ ॥ उसे बड़ी जेल में भेज दिया। उससे देश का राज्य (सिंहासन), छत्र और चँवर छीन लिया ॥ १७४ ॥ उस परमात्मा के हुक्म से चक्रवर्ती राज्य प्राप्त कर लिया है और बहुत से दुश्मनों को टुकड़े-टुकड़े कर दिया है ॥ १७५ ॥ जो इस तरह के कष्टकारक आक्रमण को सह लेता है, उस पर दयालु परमेश्वर दया करता है ॥ १७६ ॥ वह रानी बन गई और वह राजा बन गया। परमात्मा के हुक्म से उन्होंने राज्य प्राप्त कर लिया ॥ १७७ ॥ हे साक़ी ! मुझे हरे रंग का प्याला दो जिससे घूंघट हट जाय और प्रियतमा का मुँह साफ़ दिखाई देने लगे ॥१७८॥ हे साक़ी, हरे रंग का प्रेम दो जो युद्ध के दिन और युद्ध के समय चाहिए ॥ १७९ ॥ १० ॥

॥ दास्तान दसवीं समाप्त ॥

दास्तान ग्यारहवीं

हे परमात्मा ! तुम ही थके-हारों को सहारा देनेवाले. बेचारे निरुपायों के काम बनानेवाले हो १ हे कृपालु प्रभु तुम बिना

ज़िमीनो ज़माँ रा तुईं कारसाज़ ॥ २ ॥ हिकायत शुनीदेम शाहे कलिंजर । कुना लोह यक दर चु अज़ कोह मंजर ॥ ३ ॥ यके पिसर ओ बूद हुसनुल जमाल । कि लायक जहाँ बूद अज़ मुलक माल ॥ ४ ॥ यके शाहि ओ जाव दुखतर अज़ो । कि दीगर न जन बूद समन बर कज़ो ॥ ५ ॥ बज़ाँ दुखतरे शाह आँ पिसर शाह । शुद आशुफ़तह बर वै चु बर शमश माह ॥ ६ ॥ बिगोयद कि ए शाह मारा बिकुन । कि दहिशत कसे मरद दीगर मकुन ॥ ७ ॥ शुनीदम कि दर शाहि हिंदोसताँ । कि नामे बज़ा शेर शाहे वज़ाँ ॥ ८ ॥ चुनाँ नशत दस्तूर मुलके खुदा । बयक दान बेमान रेज़द जुदा ॥९॥ बिगीरंद शाही बि अफ़ताद तुरग । बपेशे गुरेज़द चु अज़ बाज़ मुरग ॥ १० ॥ बिगीरद अज़ो हरदु असपे कलाँ । कि मुलको अराकश बिआमद अज़ाँ ॥ ११ ॥ बि बखशीद ओ रा बसे ज़र दु फ़ील । कि बेरूँ बिआवुरद दरीयाइ नील ॥ १२ ॥ यके नाम राहो सुराहो दिगर । चु आहू कलाँ पाइ अज़ोमे

माँगे ही चक्रवर्ती राज्य दे देनेवाले हो और धरती तथा आकाश के काम करनेवाले हो ॥ २ ॥ हमने कालिंजर शहर के राजा की कहानी सुनी है, जिसने पहाड़-जैसा बड़ा दर्शनीय दरवाज़ा बनवाया था ॥ ३ ॥ उसका एक पुत्र बहुत ही सुन्दर, स्वरूपवान था, जो देश और दौलत के हिसाब से हर तरह से संसार के योग्य था ॥ ४ ॥ उस स्थान पर एक धनिक की लड़की थी, जो चमेली के पत्र की तरह कोमल थी और उसके बराबर अन्य कोई स्त्री नहीं थी ॥ ५ ॥ धनिक की लड़की उस राजपुत्र पर ऐसे मोहित हो गई जैसे सूरज पर चाँद मोहित है ॥ ६ ॥ उसने कहा— हे राजकुमार ! मुझसे शादी कर लो, किसी दूसरे मर्द से मत डरो ॥ ७ ॥ हमने सुना है कि हिन्दुस्तान में एक राजा है और उस बलवान राजा का नाम शेरशाह है ॥ ८ ॥ खुदा के मुल्क का यह तरीक़ा है कि दूसरे का हक़, चाहे वह दाने के भी बराबर हो, उसे अलग रखते हैं ॥ ९ ॥ राज्य लेने के लिए जिसके पीछे भी उसने घोड़ा लगाया वह आगे-आगे ऐसे भागा जैसे बाज़ से डरकर मुर्ग़ा भागता है ॥ १० ॥ उसके पास से उसने वह दोनों घोड़े लिये जो इराक देश से उसके पास आये थे ॥ ११ ॥ उसे बहुत-सा सोना और हाथी दिए जिन्हें वह दरिया नील के पार से लाया था १२ एक घोड़ का नाम राहु और दूसरे का सुराह था वे भागने में हिरन और अक़्ल में आदमियों की तरह

दु नर ॥ १३ ॥ अगर असप हर दो अजा मे दिहद । वजाँ पस तुरा खानह बानूं कुनद ॥ १४ ॥ शुनीद ईं सुखन रा हमी शुद रवाँ । बियामद ब शहर शाह हिंदोसताँ ॥ १५ ॥ निशसतंद बर रोद जमना लबआब । बिखुरदंद बादह कुरदंद कबाब ॥ १६ ॥ पसे दो बरामद शबे चूँ सियाह । रवाँ करद आवस बसे पुशतकाह ॥ १७ ॥ ब दीदंद ओरा बसे पासबाँ । बतुंदी दरामद बताबश हुमाँ ॥ १८ ॥ बसे बर वै बंदूक बाराँ कुनद । चु बा बरक अबरस बहाराँ कुनद ॥ १९ ॥ हमी बजह करदंद दु सै चार बार । हम आखर कुनद खाब खुफ़त इखतीयार ॥ २० ॥ बिदानद कि खुफ़तह शवद पासबाँ । बपय मुरद शुद हम चु जखमे यलाँ ॥ २१ ॥ रवाँ करद ओ जा बिआमद अजाँ । कि बुन गाह (मू०ग्रं०१४२५) अज शाह करखे गिराँ ॥ २२ ॥ घरी रा बिकोबद घरीया घरीयार । वजाँ मेख कोबद ब पुशते दिवार ॥ २३ ॥ चुना ता बरामद दिगरे अजीम । दु असपश नजर करद हुकमे करीम ॥ २४ ॥ यके रा बिजद

थे ॥ १३ ॥ (राजकुमार ने कहा—) अगर तुम वह दोनों घोड़े मुझे ला दो तो मैं बाद में तुमसे शादी करूँगा और तुम्हें अपनी स्त्री बनाऊँगा ॥ १४ ॥ उसने इस बात को सुना और चल पड़ी। वह हिन्दुस्तान के एक राजा के शहर में आ गई ॥ १५ ॥ यमुना नदी के किनारे पर बैठ गई। वहाँ उसने शराब पी और कबाब खाए ॥ १६ ॥ जब रात दो पहर बीत गई तो उसने पानी में बहुत से घास के गट्ठर ठेल दिए ॥ १७ ॥ उन गट्ठरों को पहरेदारों ने देखा और गुस्से में भडक उठे ॥ १८ ॥ उन्होंने उन पर बहुत सी गोलियों की ऐसी बौछार की जैसी बादल बिजली समेत वर्षा में बरसा करते हैं ॥ १९ ॥ इसी तरह दो-तीन बार किया। अन्त में पहरेदारों ने नींद का समय गँवाना उचित न समझा और सो-गए ॥ २० ॥ जब उसने जान लिया कि पहरेदार सो गए और घायल शूरवीरों की तरह थके-हारे पड़े हुए हैं ॥ २१ ॥ अब वह चली और वहाँ आ पहुँची जहाँ राजा के महल की नींव थी ॥ २२ ॥ घड़ियाल बजानेवाला जब-जब घड़ियाल बजाता था, तब-तब वह क़िले की दीवारों में कीलियाँ ठोकती जाती थी ॥ २३ ॥ इसी तरह उन कीलियो पर चढ चढ़कर वह ऊंची दीवार के ऊपर तक आ गई २४ एक को उसने मारा और आधा कर दिया

ता अज़ो नीम करद । दरे पासबाने बर अज़ नीम करद ॥२५॥ दिगर रा बिज़द ता जुदा गशत सर । सियम रा बिकुशतन शवद खूँन तर ॥ २६ ॥ चुअम रा जुदा करद पंजम बकुशत । शशम रा बकुशतंद जमदार मुशत ॥ २७ ॥ शशम चौकोअस कुशद आमद अज़ाँ । कि हफ़तश गिराँ बुद चौकी गिराँ ॥२८॥ कि हफ़तम हमी कुशत ज़खमे अज़ीम । कि दसतश कुनद रखश हुकमे करीम ॥ २९ ॥ चुना ताज़ी आनह् बिज़द ताज़ीअश । कि बाला बियामद ब ज़मन अंदरश ॥ ३० ॥ बगशतन दराबे ब बेरूँ अज़ाँ । कि हैरत बिमाँदंद शाहे जहाँ ॥ ३१ ॥ कि दंदा खुरद दसत अज़ शेरशाह । ब हैरत हमी रफ़त आलम पनाह ॥ ३२ ॥ कि मारा कुजा बुरद असपे अज़ीम । बि बखशीद ओ हम चु कसमे करीम ॥ ३३ ॥ दरेगा अगर रूइ ओ दीदमे । ब सद गंज सरबसत बखशीदमे ॥ ३४ ॥ कि हैफ़सत गरो दीदए याफ़तम । ब जाए दिगर दिल नज़ो ताफ़तम ॥ ३५ ॥ कि दीदार बखशंद अगर ओ मरा । कि सद गंज सरबसत बखशम वरा ॥ ३६ ॥ चु शुहरत कुनानीद शहर अंदरूँ । कि बखशीद मम खूँन अज़

पहरेदारों के दो टुकड़े कर दिया ॥ २५ ॥ दूसरे को खड़ग मारा जिससे उसका सिर अलग हो गया । तीसरे को मारा और वह खून में लथपथ हो गया ॥ २६ ॥ चौथे का सिर अलग किया, पाँचवें को मारा और छठे को कटार भोंकी ॥ २७ ॥ छठे को मारकर वह आगे आई ताकि सातवें को मार सके जो बड़ी चौकी पर (खड़ा) था ॥ २८ ॥ सातवें को भी बडा घाव किया । खुदा के करम से उसने घोड़े की तरफ़ हाथ बढाया ॥ २९ ॥ घोड़े पर चढ़कर उसे ऐसा चाबुक मारा कि घोडा दीवार से छलाँग लगाकर यमुना नदी में आ गया ॥ ३० ॥ पानी मे गिरते ही घोड़ा पानी से बाहर आ गया । राजा यह देखकर हैरान रह गया ॥ ३१ ॥ शेरशाह ने गुस्से से अपने हाथ में दाँत काट लिया और हक्का-बक्का रह गया ॥ ३२ ॥ कौन सा आदमी मेरा घोड़ा कहाँ ले गया है ? ऐसे शूरवीर को मैं माफ़ करता हूँ ॥ ३३ ॥ अफ़सोस यदि मैं उस बहादुर को देख लूं तो उसे मैं मुँह तक भरा खजाना दे दूंगा ॥ ३४ ॥ अगर मैं उसको देख लेता तो कम से कम प्यार से हटकर गुस्से की तरफ़ न जाता ॥ ३५ ॥ अगर वह आप ही मुझे दर्शन दे तो मैं उसे भरा हुआ खजाना बख्श दूंगा ३६ उसने शहर मे ढिंढोरा पिटवा

ख़ुआर ख़ूँ ॥ ३७ ॥ बि बसतंद दसतार अज़ जाम ज़र । ब पेशे शह आमद चु ज़ररी सिपर ॥ ३८ ॥ बगोयद कि शेर अफ़कनो शेरशाह । कि अज़ राह रा मन बिबुरदंद राह ॥ ३९ ॥ अजबमाँद साहिब ख़िरद ईं जवाब । दिगर बार गोयद कि बा वै सवाब ॥ ४० ॥ कि नक्ल स नुमाईं मरा शेर तन । ब वजहे चरा बुरदा असपे कुहन ॥ ४१ ॥ निशसतंद अज़ाँ वजहे बर रोद आब । बि बुरदंद बादह बखुरदन कबाब ॥ ४२ ॥ रवाँ करद अव्वल बसे पुशत काह । दग़ा मे दिहद पासबानान शाह ॥ ४३ ॥ वज़ाँ पस ब कोशश कुनानीद लख़त । ब पैरश दराँमद जि दरीयाइ सख़त ॥४४॥ वज़ाँ बिशकुनानीद ओ गिरद शुद । ब दीदन अज़ो शाह पय (मू०ग्रं०१४२६) मुरदह शुद ॥ ४५ ॥ गड़ी यक बिमादंद ग़रूब आफ़ताब । बज़ाँ जा बियामद कुशायद तनाब ॥ ४६ ॥ लग़ामश बिदादंद स्वारे शुदसत । बिज़द ताज़ीआँनह चु अफ़रीत मसत ॥ ४७ ॥ चुना असप ख़ोज़ीद बरतर जि शाह ।

दिया कि मैं उस खूँखार डकैत का दोष माफ़ करता हूँ (अगर वह मेरे सामने आ जाए) ॥ ३७ ॥ तब उस (लड़की) ने सुनहरी पगड़ी बाँध ली और सुनहरी ढाल की तरह राजा के सामने आ गई ॥ ३८ ॥ और कहा कि हे शेर को मार डालनेवाले शेरशाह ! तेरे राहु नामक घोड़े को युक्ति से मैं ले गया हूँ ॥ ३९ ॥ बुद्धिमान राजा उसकी बात सुनकर हैरान रह गया और उसने दूसरी बार जल्दी से कहा ॥ ४० ॥ हे शेर की तरह शूरवीर ! मुझे उसकी नक़ल करके दिखाओ कि तुम कैसे घोड़े को ले गए हो ॥ ४१ ॥ वह नदी के किनारे वैसे ही बैठ गई । फिर उसने शराब पी और भुना हुआ मांस खाया ॥ ४२ ॥ फिर उसने पहले की तरह बहुत से घास के गट्ठर नदी में बहा दिए और राजा के चौकीदारों को धोखा देती रही ॥ ४३ ॥ उसके बाद फिर थोड़ी सी कोशिश की और उस कठिन दरिया से तैरकर पार हो गई ॥ ४४ ॥ उसने उसी तरीक़े से (पहरेदार) मारे और भाग निकली । उसे देखकर राजा हैरानी से हक्का-बक्का रह गया ॥ ४५ ॥ फिर सूरज डूबने में जब एक घड़ी का वक़्त बाक़ी था तो वह वहाँ आ गई और उसने दूसरे घोड़े के आगे-पीछे के रस्से खोल दिए ॥ ४६ ॥ उसे लगाम दे दी और सवार हो गई । फिर दैत्य जैसे मतवाले घोड़े को चाबुक मार दी ॥ ४७ ॥ घोड़ा ऐसा कूदा कि राजा के ऊपर से ही ऊँचाई पर होता हुआ दरिया

ज़ि बाला बियामद ब दरीयाइ गाह ।। ४८ ।। ब पैरश दरामद ज़ि दरीया अज़ीम । कि पारस हमी गशत हुकमे करीम ।।४९।। फ़रोद आमदश असप करदस सलाम । बिगोयद सुखन शाहि अरबी कलाम ।। ५० ।। तु अकलश चरा गशत ए शाह शाह । कि मा राह बुरदन तु दादन सुराह ।। ५१ ।। कि गुफ़तश चुनी ता रवाँ करद रखश । ब याद आमदो एज़दे दाद बखश ।। ५२ ।। बिअफ़ताद पुशत असपहा बेशुमार । कि ओरा न हम बर कुनद कस स्वार ।। ५३ ।। बिज़द मरद दसतारहा पेश शाह । कि ए शाह शाहान आलम पनाह ।।५४।। बिगीरद कसे हरदु आहू बुराक । तु ओरा बिबखशीद खुद दसत ताक ।। ५५ ।। चरामे कुनद कारहा बेखुदी । कि राहा अज़ो मन सुराहा तुई ।। ५६ ।। बिबुरदश अज़ो असप हरदो अज़ीम । बज़ाँ रा बि बख़शीद हुकमें रहीम ।। ५७ ।। कि ओरा दरावुरद खानह निकाह । कि कउले कुनद मुसतक़ीम हुकम शाह ।। ५८ ।। बिदिह साक़ीया सागरे कोकनार । दरे वक़त जंगश बियामद बकार ।। ५९ ।।

मे ठिकाने पर आ पहुँचा ।। ४८ ।। फिर उस बड़े दरिया में से तैरता हुआ खुदा के हुक्म से पार निकल गया ।। ४९ ।। फिर वह घोड़े से नीचे उतरी, उसे सलाम किया और राजा के साथ अरबी में बातचीत की ।। ५० ।। हे शेरशाह ! तूने अपनी अक्ल खुद ही क्यों मार ली है। मैं तो राहु घोड़ा ले गया था पर सुराहु घोड़ा तूने खुद ही मुझे दे दिया है ।। ५१ ।। उसे इस तरह कहा और घोड़ा रवाना कर दिया। उस समय उसने परमात्मा का स्मरण किया ।। ५२ ।। अनेकों घुड़सवार उसके पीछे पड़ गए पर कोई भी सवार उसे पकड़ न सका ।। ५३ ।। शूरवीरों ने पगड़ियाँ उतारकर राजा के सामने फेंक दी और कहा कि हे आलमपनाह ! ।। ५४ ।। भला हिरन की चालवाले उन दोनों घोड़ों को कौन पकड़ सकता है ? आपने अपने हाथों से उसे एक दे दिया है ।। ५५ ।। यह नासमझी क्यों की ? राहु तो उसने चुराया था, सुराहु उसे खुद ही दे दिया ।। ५६ ।। वह दोनों ही घोड़े राजा से ले गई और दयालु परमात्मा के हुक्म के अनुसार दोनों घोड़े उसने अपने मित्र को दे दिये ।। ५७ ।। अब वह उससे निकाह करके उसे अपने घर ले आया और अपना दिया हुआ वचन पूरा किया ।। ५८ ।। हे साक़ी ! मुझे पोस्ते के रस (के समान नशा करनेवाला) प्याला दो क्योंकि यह युद्ध के समय

कि खूबसत दर वक़त खसम अफ़कनी । कि यक कुरतयस फ़ील रा पैकनी ॥ ६० ॥ ११ ॥

॥ हिकायत यारवीं समापतम ॥

हिकायत बारहवीं ॥

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

रज़ा बखश बखशिंदए बेशुमार । रिहाई दिहो पाक परवरदगार ॥ १ ॥ रहीमो करीमो मकीनो मकाँ । अज़ीमो फ़हीमो ज़मीनो ज़माँ ॥ २ ॥ शुनीदम सुखन कोह कैंबर अज़ीम । कि अफ़गाँ यके बूद ओ जा रहीम ॥ ३ ॥ यके बानूए बूद ओ हम चु माह । कुनद दीदन शरिशत गरदन ज़ि शाह ॥ ४ ॥ दो अबरू चु अबरे बहाराँ कुनद । बमियगाँ (मू०ग्रं०१४२७) चु अज़ तीर बाराँ कुनद ॥ ५ ॥ रुखे चूँ खलासी दिहद माह राँ । बहारे गुलिसताँ दिहद शाह राँ ॥ ६ ॥ ब अबरू कमाने शुदा नाज़नीं । ब चशमश

काम आता है ॥ ५९ ॥ जो दुश्मन को गिराने के लिए अच्छा है । उसका एक घूंट हाथी को पछाड़ देता है ॥ ६० ॥ ११ ॥

॥ दास्तान ग्यारहवीं समाप्त ॥

दास्तान बारहवीं

आनंददाता अगणित रूप से कृपा करनेवाला है । वह पवित्र पोषक है और मुक्ति-प्रदाता है ॥ १ ॥ वह दया करने और कृपा करनेवाला है । वह मकानों में बड़ा मकान, धरती और आकाश के रहस्य को जाननेवाला है ॥ २ ॥ खैबर नामक बड़े पहाड़ की हमने एक बात सुनी है । वहाँ रहीम नामक एक पठान रहता था ॥ ३ ॥ चाँद-जैसी उसकी एक औरत थी जिसका देखना ही राजाओं के गले का फंदा बन जाता था ॥ ४ ॥ उसकी दोनों भौंहें बरसाती बादलों की तरह बनी हुई थीं । पलकों की कमान से वह नज़रों के कटाक्ष रूपी बाणों की बारिश किया करती थी ॥ ५ ॥ उसके मुखड़े का दर्शन ही चन्द्रमा को भुला देता था और राजाओं के मन की फुलवाड़ी को बसंत की तरह खिला देता था ॥ ६ ॥

जनद कँवरे कहरगीं ॥ ७ ॥ ब मसती दिहद हम चुनी रूइ मसत । गुलिसताँ कुनद बूम शोरीक दसत ॥ ८ ॥ खुशे खुश जमालो कमालो हुसन । ब सूरतज़ बानसत फ़िकरे कुहन ॥९॥ यके हसन खाँ बूद ओ जा फ़गाँ । बदानश हमी बूद अकलश जवाँ ॥ १० ॥ कुनद दोसती बा हमह यक दिगर । कि लैली व मजनूँ खिजल गशत सर ॥ ११ ॥ चु बा यक दिगर हम चुनी गशत मसत । चु पा अज़ रकाबो इना रफ़त दसत ॥ १२ ॥ तलब करद ओ खानए खिलवते । मियाँ आमदश जो बदन शहवते ॥ १३ ॥ हमीं जुफ़त खुरदंद दु से चार माह । खबर करद जो दुशमने निजद शाह ॥ १४ ॥ ब हैरत दराँमद फ़गाने रहीम । कशीदन यके तेग़ गररा अज़ीम ॥ १५ ॥ चु खबरश रसीदो कि आमद शौहर । हुमाँ यार खुद रा बिज़द तेग़ सर ॥ १६ ॥ हमहि गोशते देग़ अंदर निहाद । मसालय थिअंदाखत आतश बिदाद ॥ १७ ॥ शौहर रा खुरानीद बाकी बिमाँद । हमह नौकराँ रा जिआफ़त

उस नाज़ुक औरत की दोनों भौंहें कमान बनी हुई थीं, जिससे वह उन आँखों में से क्रोध से भरे हुए तीर मारती थी ॥ ७ ॥ चेहरे की मस्ती से शराब के भी होश भुला देनेवाली थी और (उसके न दिखाई देने से) फुलवाड़ी भी उजाड़ बियाबान हो जाती थी ॥ ८ ॥ बहुत अच्छे स्वरूप वाली, हद दर्जे की सुन्दर और समझ में काफ़ी आगे बढ़ी हुई थी ॥ ९ ॥ वहाँ हुसनखाँ नामक एक पठान था । वह जवाँ अक्ल का मालिक था अर्थात् काफ़ी होशियार था ॥ १० ॥ वे एक-दूसरे को प्यार किया करते थे । उनके प्यार को देखकर तो लैला-मजनूं भी सिर झुका लेते थे ॥ ११ ॥ उन्हें एक-दूसरे से ऐसा प्यार हो गया कि उनके पैरों से रकाब और हाथों से लगाम निकल गई अर्थात् वे प्रेम में बेबस हो गए ॥ १२ ॥ उसने अकेले घर में बुलाया । उसके आते ही वह कामातुर हो उठी ॥ १३ ॥ इस तरह इकट्ठे खाते-पीते दो-तीन-चार महीने गुज़र गए । तब एक दुश्मन ने राजा को खबर कर दी ॥ १४ ॥ रहीम खाँ पठान हैरान हो उठा । वह तलवार को म्यान से खींचकर गरजा ॥ १५ ॥ जब उसे खबर लग गई कि मेरा खाविंद आ रहा है तो उसने अपने यार के सिर में तलवार मार दी (और उसका सिर काट लिया) । १६ ॥ उसका मांस देग़ में डाल दिया मसाले डालकर नीचे आग जला दी १७

कुनाद ॥ १८ ॥ चु ख़ुश गशत शौहर न दीदश चु नर। बकुशताँ कसे रा कि दादश ख़बर ॥ १६ ॥ बिदिह साकीया सागरे सबज़ गूँ। कि मारा बकारसत जंग अंदरूँ ॥ २० ॥ लबालब बकुन दम बदम्म नोश कुन। ग़मे हर दु आलम फ़रामोश कुन ॥ २१ ॥ १२ ॥ (मू०ग्रं०१४२८)

॥ हिकायत बारहवीं समापतम ॥

पहले अपने खाविंद को खिलाया और बाक़ी जो बच रहा वह सभी नौकरों को प्रीत-भोज में खिला दिया ॥ १८ ॥ उसने जब किसी भी पुरुष को वहाँ न देखा तो पति खुश होकर चला गया और उस आदमी को मार डाला, जिसने आकर ख़बर दी थी ॥ १९ ॥ हे साक़ी! मुझे हरे रंग का प्याला दे जिसकी मुझे लड़ाई में जरूरत है ॥ २० ॥ हे साक़ी! प्याला लबालब भर दे और हे मेरे मन! तू उस प्याले को हर साँस के साथ पीता रह और दोनों लोकों की चिंता भुला दे ॥ २१ ॥ १२ ॥

॥ दास्तान बारहवीं समाप्त ॥

१ ओं स्री भगउती जी सहाइ ॥

अथ असफोटक कवित लिख्यते ॥

॥ सवैया ॥ छबि ऊतम आक्रिति छाजति है लख लाजति कंज प्रभा मुख की। म्रिग बाल ते नैन बिसाल से है सभ जानित रास मनो सुख की। जिह हेरि सभै जल जंमुन मै तिह हेरित प्यास कहाँ भुख की। कबहूँ हम सो नही कान्ह हसे सखी का कहो अंतर के दुख की ॥ १ ॥ ॥ सवैया ॥ ब्रिज नारि निहारि कै नंद कुमार बिसार सँभारह की मन मै। कहूँ हार परे कहूँ बार गिरे कहूँ नैक न सुद्ध रही तन मै। झखकेत के बानन पीड़त भी मन जाइ रह्यो मन मोहन मै। मनो दीप के भेद सुने सुरनाद म्रिगीगन जाइ बिधी बन मै ॥ २ ॥ ॥ सवैया ॥ मल्ल भिरे कहूँ मत्त मतंग उतंग कहूँ मिल उशट

स्फुट कवित्तों की रचना

॥ सवैया ॥ शोभायमान आकृति की उत्तम छवि और मुख की प्रभा को देखकर कमल भी लजाते हैं। मृगशावकों के समान सुन्दर नयन हैं और सभी उसे सुख का भंडार मानते हैं। जिसे सभी यमुना के जल में ढूंढते हैं, उसे ही मैं भूख-प्यास की परवाह किए बिना ढूंढ रही हूँ. हे सखी ! कृष्ण कभी भी मुझसे हँसे नहीं हैं, मैं तुम्हें अपने मन का दुःख क्या बताऊँ ? ॥ १ ॥ ॥ सवैया ॥ नंदकुमार कृष्ण को देखकर ब्रज की सभी स्त्रियाँ मन की सँभाल करना भूल गयीं। कहीं किसी के हार पड़े हैं, कहीं बाल खुले पड़े हैं। किसी को तन की तनिक भी सुधि नहीं रही। सभी काम के बाणों से पीड़ित हो उठी और सबका मन मनमोहन में अटक गया है। वे सभी ऐसी बिंधी पड़ी हैं मानों मृगी जंगल में संगीत का मार्मिक स्वर भेद सुनकर बिंध गयी हो २ सवैया कही मदमस्त पहलवान, कहीं हाथी और कहीं ऊँचे ऊंचे ऊँट लधाए आ रहे हैं कहीं

लरावै । महिख कहूँ कहूँ आंके से ओक कहूँ म्रिग लै म्रिग सो बहिसावै । सांपन निउरन अउर चकोरन हैन कहूँ हैराज लरावै । भौर भिरैं फुल हाथन सों कहूँ देखनहार सभै सुख पावै ।। ३ ।। ।। सवैया ।। नाचत है नचवार कहूँ कहूँ गावत है कहूँ बीन बजावै । खेलत है कहूँ चौपर चारु बदै कछु होड हीयो परचावै । बाजत भेर म्रिदंग कहूँ कहूँ भात कबित्तन बार न पावै । पंडत पुंज पुरान पड़ै कहूँ जीत के गीत बनाइ सुनावैं ।। ४ ।। ।। सवैया ।। ब्रिजनाथ के साथ सखी सभ ही उमगी ग्रहि ते चित चउप चढै । न हटै अति हाठी हठी मन मै कोऊ सामुहि आवै क्रिपान कढै । थहरात लगे पटमारत के कलधौत के भूखन साथ मढै । मनो लीलत लाट दवानल कान लसै लहरै अति तेज बढै ।। ५ ।। ।। सवैया ।। जिह देखके देखत ही रहीये किय न्यारो न भावत नैकु कबै । मुरझाइ परी छित मै तिय इउ सु (मू०ग्रं०उ) लगियो मनो चेटक बांन अबै । तेऊ दौर चली लख पौरन को निज ठौर ते जे निकसी न कबै । लखि स्याम को रूप अनूपम सुंदर रीझ रही रिझवार सभै ।। ६ ।।

सुन्दर भैंसे, कहीं बकरे और कहीं मृग मृग से विवाद कर रहा है । कहीं सांप-नेवला की लड़ाई हो रही है, कहीं चकोर हैं और कहीं घोड़े लड़ाए जा रहे हैं । भौंरे फूल रूपी हाथियों से भिड़ रहे हैं और सभी देखने वालों को सुख प्राप्त होता है ।। ३ ।। ।। सवैया ।। कहीं नर्तक नाच रहे हैं, कहीं गा रहे हैं और कहीं बीन बजा रहे हैं । कहीं चौपड़ खेला जा रहा है और बाजियाँ लगाकर मन बहलाया जा रहा है । भेरी, मृदंग आदि वाद्य बज रहे हैं और कबित्त पढ़नेवालों की बारी नहीं आ रही है । कहीं पंडितों के झुंड पुराण पढ़ रहे हैं और जीत के गीतों को गाकर सुना रहे हैं ।। ४ ।। ।। सवैया ।। मन में उत्साहित होकर सभी सखियाँ कृष्ण के साथ घर से निकलीं । सामने से कोई कृपाण निकालकर भी यदि आ जाए तो भी ये हठ वाली हटती नहीं । उनका सोने और रेशम से मढ़ा हुआ शरीर उसके प्रेम में थरथराने लगता है । ऐसे लग रहा है मानों कृष्ण दावानल को पी रहे हों और लहरें तेज-तेज बढ़ रही हों ।।५।। ।। सवैया ।। जिसे देखकर देखते ही रह जाना पड़ता है उससे अलग होना तनिक भी अच्छा नहीं लगता । स्त्रियाँ उसे देखकर मूच्छित हो धरती पर ऐसे गिर पड़ती हैं, मानों उन्हें बाण लगा हो । उसके चरणों को देखकर वे भी घर से भाग निकली हैं जो कभी भी घर से नहीं निकली थीं

॥ सवैया ॥ ब्रिखभान कुमार को साथ लिए जमुना तट कान बिराजत है। सभ हूँ तन चंदन चिल किए छबि गंड प्रचंडन छाजत है। जिह हेरत भूख भजै मन की लखि जाहि घनो अघ भाजत है। हरि राधे को रूप निहार मनै रति अउ रतिनाथ हूँ भाजत है॥ ७॥ ॥ सवैया ॥ ब्रिखभान कुमार शिंगार सजै अति ही करि कै सु हुलास हियो। कहूँ कोकिल कीर करी अहि केहरि मान मनोज को छीन लियो। ब्रिजराज के भेटन काज चली सुभ रोरी को भाल मै टीको दियो। मनो चंद के मंडल मै कवि स्याम सुहाग के भाग प्रकाश कियो॥ ८॥ ॥ सवैया ॥ खेलत कुंज गरीन के बीच लखे हरि जाइ तु तै पठई री। बाँकी सी बान सो हेरत है हरि एक ही हेरन होहूँ हरी री। लेत है मोल मनोजहू को उपमा मुहि ते नहि जात कही री। मोहे है मीन म्रिगा गिनती कहि कान के नैन कि बान सखी री॥ ९॥ ॥ सवैया ॥ जानत ग्वार गवार कहाँ जति ते सभ ग्वारन मै कह ऐहैं। चउदह लोक म्रिजे जिनके

श्याम के सुन्दर अनुपम रूप को देखकर सभी रीझ उठी हैं॥ ६॥ ॥ सवैया ॥ वृषभानु की कुमारी अर्थात् राधा को साथ लेकर कृष्ण यमुना तट पर विराजमान हैं। सबने तन पर चंदन लगा रखा है और सुन्दर छवि शोभा पा रही हैं। जिसको देखकर मन की भूख भाग जाती है और घने पाप भी नष्ट हो जाते हैं। राधा और कृष्ण का रूप देखकर तो मानों रति कामदेव भी भाग रहे हैं॥ ७॥ ॥ सवैया ॥ वृषभानु-कुमारी (राधा) ने उल्लसित होकर श्रृंगार किया है और ऐसा लग रहा है कि उसने कोयल, तोता, हाथी, नागिन, शेर, कामदेव आदि सबको गर्वहीन कर उनका स्वाभिमान छीन लिया हो। वह माथे में रोली का टीका लगाकर ब्रजराज को मिलने के लिए चल दी है। कवि श्याम के कथन के अनुसार ऐसा लगता है कि उसी ने चन्द्रमा को भी प्रकाशित किया हो॥ ८॥ ॥ सवैया ॥ तुमने मुझे भेजा और मैंने कुंजगलियों मे खेलते हुए कृष्ण को देखा। वह बाँकी चितवन से देखता है और उसके देखने से मानों मुझे उसने चुरा लिया हो। वह तो कामदेव को भी मोल ले लेने की शक्ति रखता है और उसकी उपमा कही नहीं जा सकती। उसने तो मछली और मृग सबको मोहित कर लिया है। हे सखी! कृष्ण की आँखें हैं या बाण हैं॥ ९॥ ॥ सवैया ॥ ये गंवार ग्वाले नही जानते हैं कि वे कृष्ण भला गंवारों मे क्यों आएँगे? जिसने

तुमको हरि तौ न कहा सुख पैहैं। चिंत उठी चित यो करि ए ब्रिजराज को केल के खेल सभै हैं। इउ नही जानत मूड़ ब्रिया घहरात घटा सुन कै दुख पैहैं ॥ १० ॥ ॥ दूती बाच नाइका प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ तेरो तरीफ सदीव करै मुख तेरी कथा नित गावत है। हित तेरे शिंगार सजे सजनी हित तेरे ही बेन बजावत है। हित तेरे ही चंदन अउ घनसार दोऊ घसि अंग लगावत है। हरि को मन स्री ब्रिखभान कुमार हरियो कहूँ जान न पावत है ॥ ११ ॥ ॥ सवैया ॥ हउ तुहि ल्यावनि काज पठाई री बेग चलो ब्रिजराज चितारी। तेरो ही धिआन रहै धरि कै जुवती सभ अउ चितहूँ ते बिसारी। अउ हठ तैं तनको न तजै रजनी बितई सु भई उजिआरी। मान मनावनहार तजियो तजै तूँ किउ न मान दई की सवारी ॥ १२ ॥ ॥ सवैया ॥ गोप को बेख कबै धरिहै हरि कुंजगरी कबि आन बसैहै। मोरपखो अन को धरिहै कब गवारन के ग्रहि (मू०ग्रं०अ) गोरसि खैहै। बेन बजैहै कबै बन मै कब मोहि बुलावन तोहि पठैहै। मान कहियो हमरो हरि पै चल

चौदह लोकों का सृजन किया है, वह हरि तुम लोगों में रहकर क्या सुख प्राप्त करेगा। मन सोचता है कि ये सब तो ब्रजराज के खेल और लीलाएं है। ये मूर्ख नहीं जानते कि घहराते हुए बादलों की बात सुनकर उसे कितना दुख होगा ॥ १० ॥ ॥ दूती उवाच नायिका के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ हे सखी ! वह हमेशा तुम्हारी ही प्रशंसा करता है और तेरी ही कहानी कहता रहता है। तेरे ही लिए वह श्रृंगार करता है और तेरे ही लिए बाँसुरी बजाता है। तेरे ही लिए वह कपूर और चंदन को घिसकर अंगों में लगाता है। कृष्ण का मन तो राधा ने हर लिया है अतः वह कहीं भी नहीं जा पाता है ॥ ११ ॥ ॥ सवैया ॥ तुम्हें कृष्ण ने याद किया है और मुझे तुम्हें लेने के लिए भेजा है। वह तेरे ही ध्यान में लगा हुआ है और उसने बाक़ी सब युवतियों को मन से विस्मृत कर दिया है और तुम हो कि हठ को छोड़ नहीं रही हो; इधर सारी रात बीत गयी और उजाला हो गया है। हे भाग्यवान ! उस मनाने योग्य कृष्ण ने तो अपना मान त्याग दिया है फिर तू अपना मान क्यों नहीं छोड़ती ॥ १२ ॥ ॥ सवैया ॥ अब भला कब वे गोप-वेश में कुंजगली में आएँगे ? मोरपंख धारण कर ग्वालिनों के घर में दूध पिएँगे ? कब वेणु बजाएँगे और मुझ बुलाने के लिए तुझ भेजेंगे ? हे सखी मेरा कहना

री बहुरो हरि हाथ न ऐहै ॥ १३ ॥ ॥ सवैया ॥ कहो जसुधा के सु ऐहै कबै हरि कुंज गरीन कबै बसि है। कबि कान कहाइ है आपन को तेरो रूप की रास कबै रसि है। ब्रिज नारि गवारि तूँ रार करे हरि जानत इउ हमरे बसि है। तजि अउहठि स्याम पै बेग चलो नही तोहि सभै चतुरा हसि है ॥१४॥ ॥ नायका बाच दूती प्रति ॥ ॥सवैया॥ जिह गोरस काज गवार गवारनि आप गरीन मै जाइ गही है। सैंकड़े स्याम सखा लिए संग हनी मटकी दिओ डार दही है। काहे कहो अपने मुख ते कहु कान की क्रित न जात कही है। नेह कहा करबो तिह सो सखी ग्वारन की जिन नार सही है ॥ १५ ॥ ॥ सवैया ॥ वाक सी बीन सीगार अगार से ताल म्रिदंग क्रिपान कटारे। ज्वाल सी जउन जुडाई सी जेब सखी घनसार कि सार किआरे। रोग से राग बिराग से बोल बारद बूंद कि बान बिसारे। हूल से हाव हुलास सो हेर बहारन होहि भुजंगम कारे ॥ १६ ॥ ॥ सवैया ॥ काटे से काजर क्रांत

मानो और कृष्ण के पास चली चलो, अन्यथा वे हाथ नहीं आएँगे ॥ १३ ॥ ॥ सवैया ॥ यशोदा से पूछो कि कृष्ण कब आएँगे और कब कुंजगलियों मे बसेंगे ? कृष्ण कब हमारा अपना कहलाएगा और कब तुम्हारी रूप-राशि दिखाई पड़ेगी ? हे व्रज-स्त्री ! तू गँवार है और बेकार ही झगड़ा कर रही है। तू समझ रही है कि कृष्ण तुम्हारे ही बस में हैं। तुम अपना हठ त्यागकर जल्दी चलो अन्यथा सभी चतुर स्त्रियाँ तुम्हारे पर हँसेंगी ॥ १४ ॥ ॥ नायिका उवाच दूती के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ जिसे दूध के लिए अनेक ग्वालों और ग्वालिनों ने पकड़ा है। श्याम ने सैकड़ो सखाओं को साथ लेकर मटकियाँ फोड़ी हैं और दही गिरा दिया है। अब अपने मुँह से क्या कहें, कृष्ण की करनी कही नहीं जा सकती है। जिसने (सब) ग्वालों की स्त्रियों से अपना काम ठीक कर रखा है, भला उससे क्या प्रेम किया जाय ॥ १५ ॥ ॥ सवैया ॥ वीणा मात्र चिल्लाहट, शृंगार अंगारों की तरह और ताल-मृदंग कृपाण-कटारों की तरह लगते हैं। यौवन ज्वाला-जैसा, पायजेब बुखार की कँपकपी-जैसी और कपूर लोहे के समान लगता है। संगीत रोग के समान और बोल प्यार से विहीन लगते हैं। ये बादलों की बूंदें हैं अथवा बाण छोड़े गए हैं। हाव-भाव शूल के समान और बहारें साँपों जैसी दिखाई दे रही हैं ॥१६॥ ॥ सवैया ॥ काजल काँटे के समान, कांति कृपाण की तरह और ठंडी

क्रिपान सी सूख बियाधि बियार बहीरी। कालि सी कोकिल कूक कराल म्रिनाल कि ब्याल घरी कि छुरी री। भार सों भउन भयानक भूखन जउन की ज्वाल सों जात जरीरी। बान सी बीन बिना ब्रिजराज बसंत को अंत कि अंत सखी री ॥१७॥ ॥ सवैया ॥ बादर बीर सनाहि सजे घहरात घटा सुनिहै हिह नारी। दादिर चात्रिक मोरन शोर क्रिपानि की बिद्दुलता चमकारी। बान सी बूंद बलाइ सी ब्यार बंदूक सी ओरन की बरखारी। स्रोनत बार झखी जैसे दारद खेत रहो ब्रिजराज बिना री॥ १८ ॥ ॥ सवैया ॥ बान सी ब्यार बिलाप सों बोलब बाँक सी बीन बजंत्र बिथारे। जंग से जंग मुचंग दुखंग अनंग कि अंक से अंक किआरे। चाँदनी चंद चिता चहूँ ओर ते कोकिल कूक की हूक सी मारे। भार सो भउन भयानक भूखन फूलन फूल फनी फ़नवारे॥ १९ ॥ ॥ सवैया ॥ राई रमू जर जाई री माई रनाई रमानज नैक रिझैबो। दाँनि कि कांन को साथ पयाँन सयाँन सो रूप की रास रसैबो। मउजसो

हवा सूखे रोग के समान दिखायी देती हैं। कोयल काल के समान, कमल सर्प के समान और समय छुरी के समान लग रहा है। यह भवन एक बोझ और ये आभूषण भयानक लगते हैं। यौवन की ज्वाला से मैं जली जा रही हूँ। बीन मुझे बाण के समान और ब्रजराज कृष्ण के बिना बसंत का अब मानों अंत ही अंत है॥ १७ ॥ ॥ सवैया ॥ बादल मानों कवचधारी वीर हैं और हे स्त्री! सुनो, घटाएँ घहरा रही हैं। मेढक, चातक और मोरों का शोर हो रहा है। कृपाणें हैं कि बिजली चमक रही है। बूँदें बाणों के समान, हवा बला के समान है और बंदूकों की चारों ओर से वर्षा हो रही है। खून पानी के समान है और हे सखी! कृष्ण के बिना तो वैसे ही मर जाने को जी चाहता है॥ १८ ॥ ॥ सवैया ॥ बाणों-सी हवा, बोलना विलाप-जैसा, वीणा बाँक की तरह और वाद्य व्यर्थ से लगते हैं। शंख बेकार लगता है और मुचंग अंगों को दुखा रहा है, काम है कि मेरी छाती पर हल चला रहा है। चन्द्रमा की चाँदनी चिता के समान और कोयल की कूक दिल में हूक-सी खींचती है। यह संसार बोझ लगता है, आभूषण भयानक और फूल फन वाले सर्प की तरह लगते हैं॥ १९ ॥ ॥ सवैया ॥ हे माँ! मेरा वैभव जल जाए, अगर मै उस रमापति कृष्ण को जरा-सा भी रिझा सकूँ। काश! मैं कृष्ण के साथ जा सकी होती और रास रचाती मौज भी उसके बिना मार के समान

मार हजार (मू०ग्रं०इ) सो हार नन्नो शुभ गीत शिगार सुहैबो। हेम पहार सों हेर बयार कहो री से हास हुलास चितैबो ॥ २० ॥
॥ सवैया ॥ खंजन से मन रंजन है दुख भंजन स्याम सो अंजनिआरे। बानन से म्रिग बारन से त्रिदसेस ते ऐसे न जाहि सवारे। खंजन से सम कंजन की त्रित लोचन भामन के कजरारे। नेह रँगे कि रँगे रंग काहू के कान्ह के नैन लखी मतवारे ॥ २१ ॥
॥ सवैया ॥ सीसे सहाब की फूल गुलाब कि मत्ति किधो मदरा कि से प्यारे। बानन से मतवारन से तरवारन से कि बिखी बिख वारे। नारिन के कजरारन के दुख टारन स्याम सों नींद निवारे। हेरे से लाज सबै छुट जात है कान्ह के नैन की बान बिसारे ॥ २२ ॥ ॥ सवैया ॥ वारी हउँ नंदकुमार के रूप पै जाँ पर कोट मनोज सवारे। नारद से सुक सारद से जिनके जस को कहि कै फुनि हारे। सेख सहंस्र धरे मुख याँही ले बीत गए जुग पार न पारे। सुन री सखि कान्ह बसे सभ ठाँ कजरा बिन नैन भए कजरारे ॥ २३ ॥
॥ सवैया ॥ कबहूँ हमरी सुधहूँ लहिहैं हरि काहू के हाथ संदेस

और हार-शृंगार भी शोभा नहीं देता है। सोने के पहाड़ और सुन्दर हवा भला (उसके बिना) हास-विलास की याद आने दे सकती है ॥ २० ॥
॥ सवैया ॥ खंजन के समान मन को प्रसन्न करनेवाले और दुख के नाशक श्याम के अंजन लगे नेत्र है। बाणों के समान, मृग-शावकों के समान है जो तीनों लोकों के स्वामी से भी नहीं बनाए जा सकते। खंजन के समान, कमल के समान और स्त्रियों के मन को चुरानेवाले हैं। वे श्याम के नेत्र रंग में रँगे हैं, स्नेह में रँगे हैं या प्रेम में मतवाले हो रहे है ॥ २१ ॥ ॥ सवैया ॥ शीशे के समान चमकीले, या गुलाब के फूल के समान या मदिरा के प्रिय मस्त हैं। बाणों से, तलवारों से या विष-बाणों के समान हैं। नींद में अधमुँदे श्याम के नेत्र स्त्रियों के नयनों के दुखों को दूर करनेवाले हैं। देखने से ही लज्जा छूट जाती है— ये कृष्ण के नयन हैं या बाण हैं ॥ २२ ॥ ॥ सवैया ॥ मैं नंदकुमार के रूप पर बलिहारी हूँ, जिस पर करोड़ों कामदेव न्योछावर हैं। उसके यश का गायन करते हुए नारद, शारदा, शुकदेव सभी हार गए हैं। शेषनाग ने उसकी प्रशंसा करने के लिए हजारों मुख धारण किए हैं। हे सखी ! सुनो, कृष्ण तो सभी स्थानों पर बसते हैं और मेरे नयन तो बिना काजल के ही कजरारे हो गए हैं २३ सवैया क्या कभी हमारी सुधि लेंगे

पठैहैं । गोकल यादि कबै करिहैं कब कातिक की रुति रास मचैहैं । मोहन फाग कबै मंड है हमरो कब शोक बिदा करि दैहैं । चित्त की बात कबै सजनी कहु री कहु री ब्रिजराज कबैहैं ॥ २४ ॥ ॥ अथ स्री क्रिशन जी की उसतत ॥ ॥ कबित्त ॥ देवकी तनय्या कहो मुसली के भय्या कहो राधा के रमय्या कहो मुर के मरय्या हैं । संतन सहय्या कहो दैतन दलय्या कहो बारन बचय्या कहो संकट कटय्या हैं । कारन करय्या कहो रमाँ के रिझय्या कहो सागर मथय्या कहो बिस्व के बनय्या हैं । बेदन बनय्या कहो द्वारका बसय्या कहो कौसतभ तरय्या पांतजंन के बजय्या हैं ॥२५॥ ॥कबित्त॥ धेन के चरय्या कहो बेंन के बजय्या कहो गोकल बसय्या कहो ब्रिज के रहय्या हैं । माखन भखय्या कहो गोरसु लुटय्या कहो चीरन चुरय्या कहो गुआरन हरय्या हैं । आनंद दिवय्या कहो सारिंग धरय्या कहो पूतना मरय्या कहो ताल के कलय्या हैं । नाग के नथय्या कहो ब्याध के बधय्या कहो भीखम तनय्या को कनय्या जू हरय्या है ॥ २६ ॥ ॥ कबित्त ॥ कंस के बधय्या कहो केसी के मरय्या

और किसी के हाथों संदेश भिजवाएँगे ? क्या कभी वे गोकुल को याद करेंगे और कार्तिक की ऋतु में रास रचाएँगे ? मोहन (कृष्ण) कब फाग खेलेंगे और हमारे मन का शोक मिटाएँगे ? हे सजनी ! चित्त की बात कहूँ कि ब्रजराज कब आएँगे ? ॥ २४ ॥ ॥ श्रीकृष्ण जी की स्तुति प्रारम्भ ॥ ॥ कवित्त ॥ वह देवकी-पुत्र, बलराम का भाई, राधा से रमण करनेवाला और मुर राक्षस को मारनेवाला कहा जाता है । वह संतों का सहायक, दैत्यों को नष्ट करनेवाला, बच्चों को बचानेवाला और संकट को काटनेवाला कहा जाता है । वह कारणों का भी कारण, लक्ष्मी को रिझानेवाला, सागर का मंथन करनेवाला और विश्व का रचयिता कहा जाता है । वह वेदों का बनानेवाला, द्वारिका बसानेवाला, कौस्तुभ मणि लानेवाला और पांचजन्य शंख बजानेवाला भी है ॥२५॥ ॥कवित्त॥ वह गउओं को चरानेवाला, बाँसुरी को बजानेवाला, गोकुल को बसानेवाला और ब्रज का रहनेवाला है । वह माखन खानेवाला, दूध लुटानेवाला, वस्त्र हरण करनेवाला और ग्वालिनों को चुरा ले जानेवाला है । वह आनन्ददायक, सारंग नामक धनुष धारण करनेवाला, पूतना को मारनेवाला और ताल वृक्षों को काट गिरानेवाला है वह नाग को नाथनेवाला व्याध के हाथों वध होनेवाला, विषम तन वाला कन्हैया है २६

कहो कारी के हनय्या कहो कुंजन भ्रमय्या हैं। साहन के साह कहो संतन सनाह कहो (मू०पं०स) करी करि बाह कहो राम जू के भय्या हैं। चौदाँ लोक नाह कहो साचो पातिसाहि कहो दुज्जन के दाह कहो दैंतन दलय्या हैं। अरिन को आर कहो संतन सहार कहो दीन हूँ की धार कान्ह केसव कनय्या हैं॥ २७॥ ॥ कबित्त ॥ बंसी के बजय्या कहो ब्रिज के रहय्या कहो ब्याधि के बधय्या कहो बिस्व के बनय्या हैं। बेदनो चरय्या कहो बारन बचय्या कहो बुद्धि के बढय्या बलरामजू के भय्या हैं। बीर बिचरय्या कहो बैरन हनय्या कहो बिख के बटय्या ब्रिज बनता लभय्या हैं। बन के भ्रमय्या कहो बछरा चरय्या कहो जाको सभ लेत कवि कोविद बलय्या हैं॥ २८॥ ॥ अथ बियोगनी॥ ॥ सवैया॥ बैरी सी ब्यार बियोग सों बीचन बाँक सों बोल बजंत्र बिथारे। बादर बूँद बिसारे से बान सु बारन मत्त बुरे बिकरारे। बाग बनियो बन सों बिस बैठक जाँ दिन ते ब्रिजनाथ बिसारे। ब्याधि सी बीन बिनाँ ब्रिजबालम बौरी न होहि बिखी बिखयारे॥ २९॥ ॥ कबित ॥ चिता

॥ कवित्त ॥ उसे कंस का वध करनेवाला, केशी को मारनेवाला, कालिय नाग का हनन करनेवाला तथा कुंजों में घूमनेवाला कहते हैं। उसे सम्राटों का सम्राट्, संतों का कवच, हाथी को भी चला मारनेवाला तथा बलराम का भाई कहते हैं। उसे चौदह लोकों का स्वामी, सच्चा पातशाह, दुर्जनों का दहन करनेवाला और दैत्यों का दलन करनेवाला कहते है। शत्रुओं को चीरनेवाला, संतों का आश्रय, दीनों का आधार उसे कान्ह, केशव और कन्हैया कहते हैं॥ २७॥ ॥ कवित्त ॥ वह बंशी बजाने वाला, व्रज का रहनेवाला, व्याधियों का नाशक और विश्व को बनानेवाला है। वह गायों को चरानेवाला, बच्चों को बचानेवाला, बुद्धिवर्द्धक और बलराम का भाई है। वीरों में विचरण करनेवाला, शत्रुओं को मारने वाला, उनके लिए विष-वृक्ष है, और ब्रज की स्त्रियों को लूट लेनेवाला है। वह वन में भ्रमण करनेवाला, गाय-बछड़ों को चरानेवाला है और सभी कवि, विद्वान उस पर न्योछावर जाते हैं॥ २८॥ ॥ अथ वियोगिनी॥ ॥ सवैया॥ वियोग में पवन भी शत्रु लगती है और बोली भी टेढ़े शस्त्र की तरह लगती है तथा बाद्य भी व्यर्थ लगते हैं। बादलों की बूँदें बाणों की तरह विकराल लग रही हैं। बाग़ अब जंगल की तरह और बैठक भी उस दिन से विषमय लगती है जिस दिन से ब्रजनाथ ने हम भुला दिया है

जैसो चंदन चराग लागे चिता सम चेटक सो चित्र चायु चाबुक कुसैल सी। चिता जैसो चीर चपला सी चितवन लागै चीरबे सी चौपखा सुहात न रुचैलसो। चंगल सी चौंप सर चाँप जैसो चामी करि चोट सी चिनौती लागै सीरी लागै सैलसी। चटक चपेट सी लगत चिता साथ बिन चाबक सौ चेर लागै चाँदनी चुरैल सी ॥ ३० ॥ ॥ सवैया ॥ हउ इत धूँमत प्रेम छकी अति घोरत है उहि घाघनकारो। कउन हूी घात मिलो घन स्याम को घोर करै हम पै घर वारो। मो घट ते घिरि जात सखी मनो बीतत एक घरी जुग सारो। घाइल कै घनस्याम गए घर ऐहै कबै सखी मोहन प्यारो ॥३१॥ ॥सवैया॥ बैठी इतै हौं शिगार सजै भई सैन समै घनस्याम न आए। खोजत बाट न पाई किधो घन घोख सुनियो घर ते नसि धाए। घोर किधो ब्रिज लोगन को सुनिकै मन मै सु घने डरपाए। स्याम न आए सखी कहूँ काहे ते काहूँ सु बैरनिहूँ बिरमाए ॥३२॥ ॥ कबित ॥ बैठी हुती सज्ज हौं शिगार सभ सखिन मो एही

ब्रजप्रिय (श्रीकृष्ण) के बिना बीन भी रोग-जैसी लगती है और बीड़ा (पान का) भी विष के समान लगता है ॥ २९ ॥ ॥ कवित्त ॥ चंदन चिता के समान, दीपक चिता के समान, सुन्दर चित्र मात्र लकड़ी के डंडे लगते हैं। वस्त्र चिता के समान और चितवन बिजली के समान तथा सुन्दर पंखा तनिक भी नहीं सुहाता है। सारा प्यार अब एक फंदा-सा और चँवर धनुष-बाण जैसा घातक तथा दूध भी पत्थर की तरह लगता है। उसका स्मरण भी उस स्वामी के बिना चोट के समान लगता है और चुड़ैल के समान चाँदनी प्रतीत होती है ॥ ३० ॥ ॥ सवैया ॥ इधर मैं प्रेम में सराबोर घूम रही हूँ उधर काले बादल घहरा रहे हैं। अगर किसी भी तरीके से घनश्याम से मिल लिया जाय तो मैं उस पर सारा घरबार न्योछावर कर दूं। मेरा मन चक्कर काट रहा है और हे सखी! एक घड़ी एक युग के समान व्यतीत हो रही है। वह घनश्याम घायल करके चला गया है, पता नही वह मोहन प्यारा अब कब आएगा! ॥ ३१ ॥ ॥ सवैया ॥ मैं इधर श्रृंगार करके बैठी हूँ; सन्ध्या हो गई पर श्याम नहीं आए हैं। खोजने पर भी उसका रास्ता नही मिला और बादलों का घोष सुनकर सभी भागे आए हैं। ब्रज के लोग बादलों के गर्जन को सुनकर मन में बहुत डर गए हैं। हे सखी! श्याम आये नही हैं कहीं किसी बैरन ने तो उनको नही भुला दिया है ३२

बीच कान जू दिखाई मुहि दै गयो। तबही ते सभन की सुद्धि मै बिसार दई चेटक चलाइ मानो चेरी मोहि कै गयो। कहा करो का पै जाऊँ जरो किधो बिख खाऊँ (मू०ग्रं०ह) जानत हों बीस बिस्वे बिछू सो डसै गयो। चखन चितौन सो चुराइ चित मेरो लीनो लटपटी पाग सों लपेट मनु लै गयो ॥ ३३ ॥ ॥ सवैया ॥ ब्याकुल है ब्रिखभान सुता ब्रिज बालम को बिललावत है। जब बांके बिहारी ह्वै जाइ तबै कहि कै ब्रिज नारि बुलावत है। इह भांत बियोग बडे बसि ह्वै मन ते न कबै बिसरावत है। ब्रिज बीथन ते बन ते ब्रिजबीथन द्योस निसा बिरमावत है ॥ ३४ ॥ ॥ सवैया ॥ बहु ब्याकुल ह्वै बन बीथन मै कबहूँ नही बेन बजावत है। बहिक्यो सु फिरै बिन चैन बलाइ ल्यो बोलत हूँ बिललावत है। नही बेग सो काहूँ की बात सुनै बथुवा बर बिसरावत है। ब्रिज नारि चलो बनि कै ब्रिज ते बन मै ब्रिजनाथ बुलावत है ॥ ३५ ॥ ॥ अथ नेत्र सोभा की क्रिशन जी के कथित ॥ ॥ सवैया ॥ सोहत सुद्ध सुधारे से सुंदर जोबन जोत सो भाइ भरे हैं। सारस सोम सुरा अरु

॥ कवित्त ॥ मैं सखियों के बीच श्रृंगार करके बैठी थी कि मुझे कृष्ण दिखायी दे गए। तब से मैंने सबकी सुधि-बुधि भुला दी है। वह मानो जादू करके मुझे दासी बना गया है। क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, क्या जहर खा लूँ ? ऐसा लगता है मानों मुझे बिच्छू डँस गया हो ! अपनी आँखों की चितवन से उसने मेरा चित्त चुरा लिया है और अपनी पगड़ी में मानो मेरा मन लपेटकर ले गया है ॥ ३३ ॥ ॥ सवैया ॥ वृषभानुसुता (राधा) व्याकुल हो श्रीकृष्ण के लिए विलाप कर रही है। वह कृष्णरूपा ही हो गई है और ब्रज की स्त्रियाँ उसे इसी नाम से पुकारती हैं। इस प्रकार बड़ी वियोगिनी होकर वह उसे मन से कभी नहीं भुला रही है। ब्रज की गलियों से वन तक और वन से ब्रज की गलियों तक ही दिन-रात वह चक्कर लगाती रहती है ॥ ३४ ॥ ॥ सवैया ॥ अब वह व्याकुल हो कभी वन में और गलियों में बाँसुरी नहीं बजाता है। वह भी चैन-रहित हो वन में बहकता हुआ घूम रहा है। वह शीघ्रता में किसी की बात भी नहीं सुनता और सबको मानों भुला बैठा है। हे ब्रज की स्त्रियो ! सज-धजकर चलो, वन में ब्रजनाथ बुला रहे हैं ॥ ३५ ॥ ॥ श्रीकृष्ण जी के नेत्र शोभा में कबित्त प्रारम्भ ॥ ॥ सवैया ॥ यौवन से भरे सुन्दर, ज्योति और प्रेम से भरे हुए हैं इन्होंने सारस, चन्द्र, मदिरा, कमल और हिरन

स्री ससि कंज कुरंगन क्रांत हरे है। खंजन औ मकरंध्वज मीन निहार सभै मुन लाज मरे है। लोचन स्री नंदनंदन के बिधि मानहु बान बनाइ धरे है ॥ ३६ ॥ ॥ सवैया ॥ रीझ भरे रस रीत भरे अति रूप भरे सुख पय्यत हेरे। चार चकोर सरोरहु सारस मीन करैं म्रिग खंजन चेरे। भाग भरे अनुराग भरे सु सुहाग भरे मन मोहत मेरे। मान भरे सुख खाँन जहान के लोचन सी नंद नंदन तेरे ॥ ३७ ॥ ॥ दोहरा ॥ अति अनूप आनद भरे सुंदर सुख के दैन। मोहत मन मेरो सदा मीत तिहारे नैन ॥ ३८ ॥ ॥ कबित्त ॥ रूप भरे राग भरे सुंदर सुहाग भरे म्रिग औ ममोलन की मानो यहि खान हैं। मीन हीन कीने छीन लीने है बिधूप रूप चंचल चपल चारु चंद्रमा समान हैं। लोको के उजागर हैं सुखहूँ के सागर हैं गुनन के नागर हैं सोभा के निधान हैं। साहिबी की सीरी भरे चेटक की चोरी पढ़े आली तेरे नैन सी सी इंद्र के से बान हैं ॥ ३९ ॥ ॥ कबित ॥ अखिआँ दुहाँ दे विच्च सुरमे कूँ पाइ प्यारी छतिआँ दुहाँ दे विच्च चंदन लगावणा। बिंदी बिंदीबेसर बणाइ बाजूबंदाँ ताईं सीस उते भोरा सीस फूल भी छकावणा। भंग कू चढ़ाइ कै

की कांति चुरा ली है। ये खंजन और मकरध्वज के समान हैं। इन्हें देखकर सभी मुनिगण भी लज्जित होते हैं। श्री नंदनंदन कृष्ण के नेत्र मानों बाण बनाकर रखे हुए हैं ॥३६॥ ॥सवैया॥ प्यार और रस से भरे हुए हैं इन्हें देखकर सुख प्राप्त होता है। चकोर, कमल, सारस, मछली, मृग और खंजन को भी इन्होंने दास बना लिया है। ये भाग्य से भरे, प्रेम से भरे और शुभम् से भरे मेरे मन को मोहनेवाले हैं। हे नंद-नंदन कृष्ण! तुम्हारी आँखें मान से भरी हुई और सुख की खान हैं ॥ ३७ ॥ ॥ दोहा ॥ अति अनुपम, आनंद से भरे हुए, सुख देनेवाले और सदा मन को मोहित करनेवाले हे मित्र! ये तुम्हारे नयन हैं ॥ ३८ ॥ ॥ कबित्त ॥ रूप भरे, प्रेम भरे मानों ये मृगों और खंजनों की खान है। इन्होंने मीन को भी हीन कर दिया है और ये सुन्दर चंचल शोभायुक्त चन्द्रमा के समान हैं। लोकों को प्रकाशित करनेवाले, सुख के सागर, गुणज्ञ और शोभा का समुद्र हैं। ये साहिबी का दम भरनेवाले, जादू करनेवाले, हे सखी! तुम्हारे नयन मानों इंद्र के बाण हैं ॥ ३९ ॥ ॥ कवित्त ॥ हे प्यारी! दोनों आँखों में सुरमा डालकर दोनों छातियों के बीच चंदन लगाना बिंदी, बाजूबंद लगाकर सिर पर जरा फूल भी

अफीम घणी खाइ के खुशाल ह्वै कै (मू०ग्रं०क) खेल सारी रात का मचावणा। छपि नहीं जावणा रिझावणाँ याराँ नूँ वति यारड़ी जरूर साथे आवणा ही आवणा ॥ ४० ॥ ॥ दोहरा ॥ प्रीत अधिक प्रदेस पति ब्यापत अधिक अनंग। तन ईहा मो मन चल्यो पिया तिहारे संग ॥ ४१ ॥ ॥ कबित ॥ स्वेतता भिभूत अरु मेखली नमेख संदी अंजन दी सेली दा सुभाउ सुभ भाखणा। भगवा सु भेस साडे नैणाँ दी ललाई सईयो यारड़े दा धिआन एहो कंद मूल चाखणा। रोदन दा मज्जन पुती पत्र गीत गीता देखणे दी भिच्छ दुक्खु धूआ आगे राखणा। ऊधो एनाँ गोपीआँ दे अखीआँ दा जोग सारा नंद के कुमार नूँ जरूर जाइ आखणा ॥ ४२ ॥ ॥ अथ बीर रस दे कबित ॥ हल का हजार हाले हय नह बोले हाली हाँक गिर हाल्यो हक मारे गिर हालियो। हला हलधर हाल्यो हाल्यो भुअ लोक सभ हरी हूँ समेत हरिजूह आप चालियो। महाँ हाल चाल मै हिरास भैं न संगो आन ऐसे तैं हिरौलन को हाँक हाँक दालियो। हिंगुला हिमालै हाल्यो हबस हरेव हाल्यो हेम गिर हाल्यो हठी

लगाना। भाँग-अफ़ीम खाकर खुश होकर सारी रात का खेल मचाना। हे प्रिय ! छिप नहीं जाना और यारों को रिझाना तथा हमारे साथ जरूर आना ॥ ४० ॥ ॥ दोहा ॥ जब पति परदेस में हो तो प्रीति अधिक बढ़ती है और काम का अधिक प्रभाव होता है। तन तो मेरा यहाँ है पर हे प्रिय ! मन तुम्हारे साथ ही चला गया है ॥४१॥ ॥कवित्त॥ श्वेतता भभूत के समान और निमिष मात्र पलक न झपकना मानों मेखला और अजन मानों सेली टोपी धारण करना है। हमारे नयनों की लालिमा मानों हमारा भगवा वेश है और यार का ध्यान करना मानों कन्द-मूल खाना है। रुदन का मज्जन और विरह-गीत मानों गीता-पाठ तथा देखने की इच्छा मानों भिक्षा और धुएं का जलाना है। हे उद्धव ! इन गोपियों के आँखों की योग-व्यथा तुम नंदकुमार कृष्ण को अवश्य जा कहना ॥ ४२ ॥ ॥ वीर रस के कवित्त प्रारम्भ ॥ हज़ारों प्रदेश हिल गए, घोड़े भी धीरे नहीं हिनहिना रहे हैं। पर्वत को भी हाँककर हिलाकर गिरा दिया है। आक्रमण से हलधर (बलराम) भी हिल गया, सारा भूलोक हिल गया, विष्णु-समेत शिव आदि भी हिल गए। इस यहाँ भीषण वातावरण में भी हे संगो (शाह) ! तुम नहीं डरे और तूने मानों सबको हिंडोले के समान हिला-हिलाकर मार डाला हिंगलाज, हिमालय, हिरात, हब्शी देश,

तै न हठ हाल्यो ॥ ४३ ॥ ॥ सवैया ॥ संगो सँभार कै साँग भली करि औ कटि पै चट बाँधि क्रिपानी । मार ही मार पुकार पर्यो अरि सैन के सामुहि शंक न मानी । मार दए सिरदार बडे करि कोप फिर्यो इह भाँत कँपानी । सूर डुले सिरदार सभै न डुलियो रण ते बसुधाहूँ डुलानी ॥ ४४ ॥ मय के पिए मद मत्त महामत पीलन पेल चहूँ दिस ढूके । मारि ही मार हजार सुवार उधार हथिआर सभै मिल कूके । छोर बिचार कर्यो सुभ बार इही बटपार तबै घर फूके । मारे परे अरि भारे मही परि हाथ लगे अरि हासी हनूँ के ॥ ४५ ॥ ॥ सवैया ॥ मारू बजे महाँ मारि मचे पिय मय के महीप महाँ मतवारे । क्योहूँ न भाजत गाजत है रण ढोल म्रिदंग बजाइ नगारे । मार ही मार पुकार सभै भट आन परे हथिआर उघारे । भारे परे अरि मारै मही पर हाथ लगै हनवंत तिहारे ॥ ४६ ॥ ॥ सवैया ॥ हाँक हजार हिमालय से हल काहनि कै हठि वार हनूँ के । हेरन हेति महाँ हव मै भट लाल

हिमगिरि (हिमालय) सभी हिल गये, पर हे हठी वीर ! तुम नहीं हिले ॥ ४३ ॥ ॥ सवैया ॥ संगो शाह (गुरू गोविंद सिंह जी की बुआ का पुत्र) ने भली प्रकार बरछी सँभाली और शीघ्र ही कमर से कृपाण बाँध ली । वह मार-मार पुकारता हुआ शत्रु-सेना में निःशंक घुस पड़ा । बड़े-बड़े सरदारों को कुपित हो मार डाला और सबको कँपानेवाला वह वीर घूमने लगा । सभी सरदार, शूरवीर डोल गए, धरती हिल गई, पर यह वीर (संगो) न हिला ॥ ४४ ॥ मद्य पीकर मदमस्त वीर हाथियों को आगे ठेलकर चारों दिशाओं से टूट पड़े । सभी शस्त्रों को निकालकर मार-मार पुकारते हुए चिल्लाने लगे । इसने सोच-विचार छोड़कर वार किया और इस प्रकार इस बटमार ने सभी घरों को फूंक दिया । जो भी हनुमान के हाथ लग गए वे भारी वीर भी धरती पर मारे हुए पड़े थे ॥ ४५ ॥ ॥ सवैया ॥ मारू रणवाद्य बजने लगे, मार मचने लगी और मद्य पीकर राजागण मतवाले हो उठे । कोई भी भागता नहीं है और वीर ढोल-मृदंग-नगाड़े बजाकर गर्जना कर रहे हैं । सभी वीर मारो-मारो की पुकार के साथ खुले हथियार लेकर आ गये । हे हनुमान ! जो भी तुम्हारे हाथ लगे वे मरे हुए धरती पर पड़े हैं ॥४६॥ सवैया हनुमान के हठी वारों ने हजारों हिमालय हाँक लिये वीरों

हथिआर हहा कहि टूटे। हाल उठियो गिरहे महरेव हूँ हैरत लाग (पृ०ग्रं०ब) हरी हरि जू के। हार गिरे बिन हार रहे अरि हाथ लगे अरि हासी हनूं के ॥ ४७ ॥ ॥ प्रिथी बाच ॥ ॥ सवैया ॥ मधुकैटभ के महिखासर के मनु के नल के चलते न चल्यो गउँ। रावन को रघु को अजु को नहीं साथ दयो रघुनाथ बली कउँ। संग रही अब लौ कहु कौन के साच कहो अघ ओघ दली सउँ। चेत रे चेत अजो चित मै चढ़ काहूँ के संग हली न चलीहउँ ॥ ४८ ॥ ॥ कबियो बाच ॥ ॥ सवैया ॥ कागज दीप सभै करिहों अरु सात महारण की मसु कैहों। काट बनासपती सिगरी लिखबे हू के लेखन काज बनैहों। सारस्वती बकता करकै जुग चारि गनेश के हाथ लिखैहों। कोट कबित्तन जौ करिहों तुम कौ न तऊ प्रभ नैक रिझैहों ॥ ४९ ॥

के शस्त्रों ने युद्ध देखा और टूट गए। धरती-पर्वत चकित हो गए और शिव-विष्णु भी हैरानी में आ गए। हँसते हुए हनुमान के हाथ हारे हुए गिरे शत्रु लग रहे हैं ॥ ४७ ॥ ॥ पृथ्वी उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ मैं मधु-कैटभ, महिषासुर, मनु, नल के साथ भी नहीं चली। रावण, रघु, अज और बली, रघुनाथ का भी साथ नहीं दिया। सच बता रही हूँ कि भला मैं किस अघ ओघ के काटनेवाले के साथ रही हूँ। हे मूर्ख ! तू सावधान हो जा, मैं भला आज तक किसी के साथ चली हूँ ? ॥ ४८ ॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ सभी द्वीपों का कागज बनाऊँ और सातों समुद्रों की स्याही बनाऊँ। सारी वनस्पति को काटकर लेखनी बनाऊँ। सरस्वती को वक्ता बनाकर चार युगों तक गणेश के हाथों लिखवाऊँ और करोड़ों कवित्तों की भी रचना करूँ तो भी हे प्रभु ! मैं तुम्हें तनिक-सा भी प्रसन्न नहीं कर सकता ॥ ४९ ॥

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ।।

माझ स्री मुखवाक पातिशाही १० ।।

लक्खी जंगल खालसा दीदार आइ लगा तब उचार होइआ ।।

लक्खी जंगल खालसा आइ दीदार कीतो ने ।
सुण कै सद्दु माही दा मेही पाणी घाहु मुतो ने ।
किसे नाल न रलीआ काई कोई शौक पयो ने ।
.इआ फिराकु मिलिआ मितु माही ताहीं शुकरकीतो ने ।। १ ।।

१ ओं वाहिगुरू जी की फ़तह ।।

[सिखी रहित]

स्री मुखवाक पातिशाही १० ।।

निशाने सिखी ईं हरूफ पंज काफ ।
हरगिज न बाशद ईं पंज मुआफ ।। १ ।।

लक्खी जंगल में जब खालसा दीदार के लिए आ पहुँचा तब उच्चारण किया

लक्खी जंगल में खालसा ने आकर दर्शन किया। प्रियतम का लावा सुनकर भैंसों ने खाना-चरना छोड़ दिया। उनको कोई ऐसा ौक सवार हुआ कि कोई किसी के साथ नहीं मिल रही अर्थात् सभी लक्षण हैं। वे माही (चरवाहे) से मिल गई हैं, उनका सभी फ़िक्र रम हो गया है और उन्होंने परमात्मा का शुक्र किया है ।। १ ।।

सिक्खी नियम

सिक्ख (धर्म) के चिह्न ये पाँच 'क' अक्षर हैं इन पाँचों के पालन सबंध मे किसी भूल को क्षमा नहीं किया जा सकता । या

कड़ा कारदो कच्छ कंघा बिदाँ ।
बिला केस हेच असत जुमलह निशाँ ॥ २ ॥

हरफ हाइ कात असत ई पंजकाफ ।
बि दानंद बावर न गोयम खिलाफ़ ॥ ३ ॥

हुक्का हजामत हलालो हराम ।
बाचीशे हिनाँ करदरू स्याह फाम ॥ ४ ॥ (मू॰ग्रं॰ग)

॥ स्री दसम गुरूग्रन्थ साहिब समापतम ॥

जान लो कि ये कड़ा, कृपाण, कच्छ, कंघा हैं और केशों के बिना ये सभी चिह्न व्यर्थ हैं ॥ २ ॥ पांच "क" ऊपर बताए गए हैं जो कि महत्त्वपूर्ण हैं । जो मैंने कहा है, वह मान्य विश्वास के प्रतिकूल नहीं है ॥ ३ ॥ हुक्का, हजामत एवं (इस्लाम के अनुसार) हलाल-हराम (सिक्ख-धर्म में) मान्य नहीं है । मेंहदी से बाल रँगना मानों अपना मुँह आप काला करना है ॥ ४ ॥

॥ श्री दसम गुरूग्रन्थ साहिब समाप्त ॥